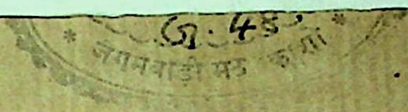
65

45
G.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

O15,1RAM,1 65
NA
Ram Krishna Verma.
Kathasaritsagar.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

SRI ... U VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI,
Acc. No. ... 65

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

कथापीठ नाम पहिला लम्बक।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालविनैबल पाई ।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई ॥
प्रेम समेत पिये जो कोई बलबीर भनै बलि ईस दुहाई ।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ो बिबुधाई ॥

प्रथम तरङ्ग।

नीलकण्ठ को कण्ठघन बरसै मोद अपार ।
गौरीभुजा बिराजती जहां तड़ित अनुहार ॥
विघनहरन नाशैं विघन सन्ध्यान्त्य-उछाहिँ ।
सीतकार सीकर रचे नव तारे नभ माहिँ ॥
सरस्वतिहिँ परनाम करि सोमदेव कविराइ ।
वृहत्कथा के सार को संग्रह रचेउ बनाइ ॥
ताकों पुनि भाषा कियो कवि बलबीर सुधारि ।
बुधजन आदर देइहैं इह भरोस उर धारि ॥

आरम्भ में कथापीठ, फिर कथामुख, तदुपरान्त लावानक नाम तीसरा लम्बक है। इसके अनन्तर नरबाहनदत्त के जन्म की कथा है फिर पांचवें लम्बक में चतुर्दारिका और छठवें लम्बक में मदन-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मञ्जुका का वृत्तान्त है। इसके आगे सातवां लम्बक रत्नप्रभा का और आठवां सूर्य्यप्रभा का है। तदुपरान्त नवां दसवां और ग्यारहवां लम्बक क्रम से अलङ्कारवती, शक्तियश और बेला का है। १२ वें लम्बक में शशाङ्कवती और १३ वें में मदिरावती का वृत्तान्त है। चौदहवां पञ्चलम्बक, पन्द्रहवां महाभिषेक, सोलहवां सुरतमञ्जरी, सत्रहवां पद्मावती और अठारहवां विषमशील लम्बक है। जैसा मूल ग्रन्थ में है वैसाही यहां भी लिखा गया है कुछ कमती बढ़ती नहीं है पर हां भाषा मात्र का भेद है। केवल उचित अन्वय के ध्यान से अथवा जिसमें कथा का रस न बिगड़े, कहीं कहीं काव्य की थोड़ी बहुत योजना की गई है। हमारा यह उद्योग कुछ पाण्डित्य दिखाने के अभिप्राय से नहीं है किन्तु यह परिश्रम इसलिये है कि पाठकगण इस कथा का विलक्षण चमत्कार देखें।

श्रीगणेशाय नमः।

सभी लोग जानते हैं कि भारतवर्ष देश के उत्तर में हिमाचल नाम पर्वतों का राजा है, जहां गन्धर्व किन्नर और विद्याधर निवास करते हैं। उस पर्वतराज की बड़ाई और उसका माहात्म्य बस इतनेही से जान लेना चाहिये कि त्रिलोकजननी श्रीपार्वतीदेवीजी ने उसके घर में सुताभाव से जन्म लिया है। उस पर्वत के उत्तर ओर कैलाश नाम महागिरि है जिसका विस्तार कई सहस्र योजन का है। वह अपनी शुभ्रता से मानो इस बात पर ठट्ठा मारता है कि मन्दर पर्वत तो समुद्र मथने पर भी सुधा की श्वेतता को प्राप्त नहीं हुआ था किन्तु मैं बिना किसी प्रकार का यत्न कियेही शुक्ल हो रहा हूं। उस पर्वतराज के शिखर पर विद्याधर सिद्धों से सेवित चराचर के गुरु साक्षात् भवानीपति महादेवजी निवास करते हैं, जिनके पिशङ्ग ऊंचे जटाजूट पर विराजमान द्वितीया का नवीन चन्द्रमा उस सुख को धारण करता है, जिसे वह सन्ध्या समय पिशङ्ग रंग के पूर्व पर्वत पर उगने से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाता है । देखो शङ्कर भगवान् का कैसा विलक्षण चमत्कार है कि उन्होंने अन्धकासुर के हृदय में एक शूल मारकर त्रिजगत् के हृदय से शूल दूर कर दिया । जिस समय प्रणाम करनेवाले देवताओं के मस्तकों पर इनके चरण के नखों की आभा पड़ती है तो यही जान पड़ता है कि मानो भगवान् चन्द्रशेखर की प्रसन्नता से उन लोगों ने भी एक एक अर्द्धचन्द्र अपने अपने मस्तक पर प्राप्त किया है ।

इस प्रकार उसी कैलाश पर्वत पर श्रीशिवजी महाराज एक दिन एकान्त में बैठे थे कि श्रीजगज्जननी माता पार्वतीजी उनके पास आ उपस्थित हुईं और हाथ जोड़कर अनेक प्रकार स्तुति करने लगीं । प्रसन्न होकर श्रीशम्भु भगवान् ने कहा "हे प्रिये ! हम तुम्हारे इन अमृत सरीखे बचनों से अत्यन्त प्रसन्न हुए हैं, कहो क्या चाहती हो ? तब श्रीगिरिजाजी ने बहुतही नम्रता से निवेदन किया कि हे जगत्प्रभो ! यदि आप मुझ पर सन्तुष्ट हुए हैं तो मुझे कोई ऐसी नवीन मनोहर कथा सुनाइये जो आज लों किसी को भी विदित न हुई हो । ऐसा सुन श्रीचन्द्रशेखरजी ने कहा कि हे प्यारी ! इस संसार में जो कुछ भूत वर्तमान वा भविष्य है वह तो सभी तुम जानती हो क्या तुमसे कोई बात छिपी है ? भवानी ने विनीत भाव से निवेदन किया कि हे नाथ ! आपका यह कहना उचितही है, किन्तु फिर भी मेरे मन की तुष्टि के लिये कोई मनोरञ्जक उपदेशयुक्त कथा कहिये । आप सदाही से मेरी बात रखते आये हैं, अतएव मुझे विश्वास है कि मेरी इस प्रार्थना को भी आप स्वीकार करेंगे । गौरी के ऐसे मृदु मनोहर वाक्यों को सुन श्रीशङ्करजी ने उन्हीं की कथा को संक्षेप से यों वर्णन करना आरम्भ किया,—

हे प्रिये ! एक समय की बात है कि श्रीब्रह्माजी और नारायणजी दोनों पृथ्वी पर घूमते घूमते मुझसे भेंट करने की इच्छा से हिमाचल पर्वत के निकट आये । उन दोनों ने वहां मेरे ज्वालालिङ्ग को देखा और उसका अन्त ढूंढ़ने की इच्छा से एक तो ऊपर को गये और दूसरे नीचे पाताललोक को पधारे । जब उन दोनों को उस ज्वालालिङ्ग का अन्त कहीं न मिला तो लौट आये और कई सहस्र वर्ष लों कठिन तपस्या कर मुझे प्रसन्न किया । तब मैंने प्रगट होकर कहा कि मैं प्रसन्न हूं कहो क्या वर मांगते हो ? ब्रह्मा ने कहा कि आप हमारे पुत्र होवें किन्तु वह लिङ्ग के अतिरोहण के कारण अपूज्य हो गये अतएव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनकी पूजा जगत् में कोई नहीं करता। नारायणजीने मुझसे यह वर मांगा कि हे भगवन्! आपकी अति दृढ़ भक्ति मेरे हृदय में हो और सदा मैं आपकी सेवा में तत्पर रहूं। इस कारण वे मेरे शरीर हो गये। जो नारायण हैं, वही तू मुझ शक्तिमान् की शक्ति है, और तू मेरी पूर्व समय की पत्नी भी है। जब शिवजी ने ऐसा कहा तो पार्वतीजी ने पूछा कि मैं आपकी पूर्वपत्नी कैसे हूं सो सुनाइये।

तब महेश्वरजी ने यों कहा कि हे देवि! पूर्वकाल में दक्षप्रजापति के घर में तुम्हारा तथा और अनेक कन्याओं का जन्म हुआ था। उन्होंने तुम्हारा विवाह तो मेरे साथ किया और दूसरी कन्याओं का उद्वाह धर्म इत्यादि के साथ। जब उन्होंने यज्ञ किया तो सब जामाताओं को तो निमन्त्रण दिया किन्तु मुझे न बुलाया। तुम्हारे कारण पूछने पर उन्होंने अपमानपूर्वक उत्तर दिया कि तेरा पति तो कपालों की माला पहिनता और श्मशान में रहता है उसे क्या बुलाते। उनका ऐसा भाषण हे प्रिये तुम्हें अत्यन्त अनुचित जान पड़ा, और तुमने यह विचार कर कि ऐसे पापी पिता द्वारा उपजे हुए शरीर से क्या लाभ है, क्रोध से देहत्याग किया। इस पर हमने कोप करके दक्ष का वह समस्त यज्ञ ध्वंश कर दिया, और इधर तुमने हिमाचल के घर जन्म लिया मानो समुद्र से चन्द्रकला उत्पन्न हुई। फिर उस बात को स्मरण करो कि जब मैं हिमाचल पर तप करने आया था और तुम्हारे पिताजी ने मुझ अतिथि की सेवा सत्कार के लिये तुम्हीं को नियत किया था और तारकासुर के नाश करने के निमित्त मुझसे पुत्र उत्पन्न कराने की इच्छा से देवताओं ने कामदेव को भेजा था तो वह मेरे द्वारा नाश किया गया था। वह सब बातें तुम्हें स्मरण हैं न? फिर तुमने मेरे हेतु बड़े२ कष्ट उठाये। बड़ी कड़ी तपस्या करके मानो मुझे मोलही ले लिया। ऐसे तुम मेरी पूर्वपत्नी हो, लो अब और जो पूछो सो कहूं। इतना कह श्रीमहादेवजी चुप हो रहे। यह देख पार्वतीजी ने प्रणयकोप करके कहा कि "आपने तो बड़ी धूर्तता की, मैंने प्रार्थना भी करी तिसपर भी आपने कोई मनोहर कथा न सुनाई। यह तो मैं जानतीही हूं कि आप मेरी सौत गङ्गा को सदा सिर पर चढ़ाये रहते हो, क्या मैं आपको नहीं चीन्हती?" यह सुन श्रीशिवजीने अत्यन्त मीठे बचनों से रूठी हुई पार्वती को मना लिया और फिर उस मनोहर कथा को कहना आरम्भ किया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीपार्वतीजी का भी मान जाता रहा और उन्होंने यह कहा कि अब यहां कोई आने न पावे। इस आज्ञा को सुन "नन्दी" गण ने द्वार बन्द कर दिये और स्वयं पहरे पर बैठ गया। इधर श्रीमृत्युञ्जय देवदेव महादेवजी ने कथा आरम्भ कर दी और पार्वतीजी ध्यानपूर्व्वक सुनने लगीं।

श्रीशिवजी ने कहा कि हे प्रिये! देवता लोग तो सदाही सुखी रहते हैं और मनुष्य लोग नित्य रात दिन दुःखही दुःख भोगते हैं इससे इन दोनों के वृत्तान्त से दूसरों का कोई हानि लाभ नहीं है इसलिये मैं तुम्हें विद्याधरों की कथा सुनाता हूं। अभी इतनीही बात महादेवजी ने कही थी कि पुष्पदन्त नामक उनका अत्यन्त मुँहलगा गण द्वार पर पहुँचा और अन्दर आने लगा। नन्दी ने द्वारही पर रोका और कहा कि आज किसी को भी अन्दर जाने की आज्ञा नहीं है। यह सुन पुष्पदन्त को मनमें वड़ा कुतूहल हुआ कि भई आज क्या विशेष बात है कि मेरी भी मनाही है सो वहां से तो वह उस समय टल गया, परन्तु आड़ में जा योगबल से अत्यन्त सूक्ष्म रूप धारण कर अन्दर जा पैठा और जो कुछ कथा श्रीशिवजी ने सात विद्याधरों की कही, सब उसने सुनी और घर आकर निज स्त्री जया को भी ज्यों की त्यों सुना दी। भला स्त्रियों के पेट में बात कहां पचती है! वह जया प्रतिहारी श्रीभवानीजी के समीप जाकर उस अपूर्व कथा को आद्यन्त सुना आई। उस पुष्पदन्त गण ने इस नीतिवाक्य पर कुछ भी ध्यान न दिया कि "को बनितासुख बन्धन नाखे।" अस्तु शिवा भवानी इसे सुन अत्यन्त कुपित हुईं और हर के समीप आ क्रोध से कहने लगीं कि तुम धूर्जटि नहीं धूर्तराज हो, कैसी पुरानी सड़ी हुई कथा मुझे सुनाई जिसे हमारी जया भी जानती है। महादेवजी ने जो योगबल से विचारा तो सभी जान गये। कहने लगे "प्रिये क्रोध मत करो, जब मैं तुम्हें कथा सुना रहा था तो पुष्पदन्त गण योगबल से अलक्ष्यरूप धारण कर अन्दर पैठ आया और उसने सब कथा सुनकर अपनी भार्य्या जया को जा सुनाया। नहीं तो हे प्रिये इस कथा को और कौन जान सकता है।" इतनी बात सुन श्रीपार्वतीजी ने उसी क्षण पुष्पदन्त को बुलवा भेजा, और जब वह सन्मुख आ उपस्थित हुआ तो कोप से यों शाप दिया कि "क्यों रे अविनीत! तुझे किञ्चित् भी हमारा भय न हुआ, जा तू मनुष्य रूप में जन्म ले।" रुद्राणी चण्डिका का ऐसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शाप सुन अभाग का मारा माल्यवान गण पुष्पदन्त का पक्षपात करने लगा; इसपर कोपवती उमा ने उसे भी वही शाप दे दिया । फिर वे दोनों जया सहित भवानी के चरणों पर गिर पड़े और नाक रगड़ २ कर प्रार्थना करने तथा शाप का अन्त क्योंकर होगा पूछने लगे । तब तो भवानी ने शान्त होकर यों कहा कि अच्छा सुनो, कुबेरजी के शाप से सुप्रतीक नामक एक यक्ष पिशाच हो गया है और विन्ध्याचल के जंगल में रहता है। नाम उसका काणभूति है। उसे देखकर पुष्पदन्त को अपने इस जन्म की कथा स्मरण हो जायगी और जब यह उस काणभूति को इस कथा को सुनावेगा तब शाप से इसकी मुक्ति होगी। फिर काणभूति से इस कथा को जब माल्यवान् सुनेगा तब काणभूति की मुक्ति होगी और जब माल्यवान् इस कथा को लोक में प्रकाशित करेगा तब वह शाप से मुक्त होगा। इतना कह शैलतनया चुप हो गईं और वे दोनों उसी क्षण विद्युद्वेग की नाईं दृष्टि से लोप हो गये और इस संसार में कहीं उन लोगों ने जन्म ग्रहण किया।

यौंही कुछ समय बीत जाने के उपरान्त एक दिन पार्वतीजी को दया जो आई सो उन्होंने श्रीशङ्करजी से पूछा कि हे नाथ! कृपा कर यह तो कहिये कि जिन दो प्रमथों को मैंने शाप दिया था वे मनुष्यलोक में कहां उत्पन्न हुए और अब क्या करते हैं? उत्तर में श्रीचन्द्रमौलि ने कहा कि हे सुन्दरि! कौशाम्बी नाम की एक महानगरी है, वहां वह पुष्पदन्त तो बररुचि नाम से जन्मा है और दूसरा जो माल्यवान् था वह सुप्रतिष्ठ नामक नगर में गुणाढ्य नाम से प्रसिद्ध है।"

यों कहि शङ्कर चुप रहे पारवती सुनि हाल ।
प्रमथन सोचतही रही बीति गयो बहु काल ॥

दूसरा तरङ्ग।

इधर पुष्पदन्त भी मनुष्यदेह में जन्म लेकर इधर उधर भ्रमण करता फिरता था। इस शरीर में उसका नाम वररुचि वा कात्यायन प्रसिद्ध था। समस्त विद्याओं का पारङ्गत होकर और चिरकाल तक नन्द राजा के मन्त्री-पद पर आरूढ़ रह कर सांसारिक व्यवहारों से बहुत दुःखित हो वह विरक्त सा हो गया था और इसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कारण श्रीविन्ध्यवासिनी देवी के दर्शनों को आया था। उसने देवी के स्थान पर रह कर बड़ी तपस्या की; माता देवी ने प्रसन्न हो उसे स्वप्न में आदेश दिया कि तू विन्ध्यपर्वत के जङ्गल में जा वहां काणभूति नामक पिशाच से भेंट कर। तदनुसार वह उस जंगल में गया और उस घनघोर बन में जहां अनेक व्याघ्र भालु इत्यादि हिंसक जन्तु घूमते फिरते थे, उसने एक बृहत् बट का वृक्ष देखा। उसके समीपही उसने काणभूति नामक पिशाच को जो आकार में शाल वृक्ष की नाईं बड़ा और दृढ़ था सैकड़ों पिशाचों के बीच घूमते पाया। काणभूति ने भी उसे देखा और खा जाने के निमित्त मुंह बायकर दौड़ा। वररुचि अर्थात् कात्यायन स्थिरभाव से वहीं बैठ गया और उसके ब्रह्मतेज के कारण वह पिशाच समीप न आ सका किन्तु दूरही खड़ा रह गया। कात्यायन ने उससे पूछा कि तुम तो बड़े भले लोग थे तुम्हारी यह दशा क्योंकर हुई? यह सुन काणभूति के हृदय में भी कुछ स्नेह उत्पन्न हुआ और उसने उत्तर दिया कि मुझे तो यह बात कुछ विदित नहीं है, किन्तु श्रीमहादेवजी से मैंने जो उज्जयिनी के श्मशान में सुना है सो तुमसे कहता हूं सुनो। एक समय श्रीपार्वतीजी ने शङ्करजी से यह पूछा कि हे नाथ! श्मशान और कपाल से आपको इतनी प्रीति क्यों है? तब भगवान भूतनाथ ने उत्तर दिया कि पूर्व समय में जब प्रलय हुआ और समस्त जगत् जलमय हो गया तो हमने हृदय से रक्त का एक विन्दु निकाला और उसे जल में डाल दिया वह अण्डवत् हो गया, फिर उसके दो टुकड़े किये तो उसमें से एक पुरुष निकल आया, तदनन्तर हमने सृष्टि के निमित्त प्रकृति को उत्पन्न किया। फिर उन सभों ने धीरे धीरे समग्र सृष्टि को सिरजा। इसीलिये वह पुरुष जगत् में पितामह कहलाया। फिर उसी अनुताप के कारण मैंने महाव्रत धारण किया और इसी कारण मेरे हाथ में सदा कपाल रहता है और मुझे श्मशान से इतनी प्रीति रहती है। और हे देवि! यह कपालात्मज जगत् सदा मेरे हाथ में रहता है और वेही पूर्वोक्त अण्ड-कपाल के दो टुकड़े रोदस् कहलाते हैं। ऐसी कथा श्रीशिवजी कह रहे थे और मैं भी बड़े कौतुक से बैठा सुन रहा था कि इतने में श्रीशिवाभवानी ने पूछा कि हे प्राणनाथ! वह पुष्पदन्त कबतक फिर हमलोगों के पास आवेगा? यह सुन श्रीमहादेवजी ने मेरी ओर अंगुली दिखाकर कहा कि यह जो पिशाच साम्हने

२० वीं लाइन के बाद को छूट—इस प्रकार चराचर की सृष्टि करने से उस पुरुष को बड़ा अहङ्कार हो गया इस कारण मैंने उसका सिर काट डाला।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बैठा है कुबेरजी का सेवक है इसकी मित्रता स्थूलशिरा नामक यक्ष से हो गई थी उस पापी के साथ इसको मिला हुआ देखकर धनदेश्वर कुबेर ने इसे शाप दिया कि "जा तू विन्ध्याचल के बन में पिशाच हो जा।" जब इसके भाई दीर्घजङ्घ ने कुबेरजी के पावों पर गिरकर बहुत विनती करके शाप का अन्त क्योंकर होगा पूछा तो धनाधिप ने यों कहा कि पुष्पदन्त नामक गण से जो पार्वतीजी के शाप से मनुष्ययोनि में हुआ है यह महाकथा को सुनेगा और उस कथा को माल्यवान् के प्रति सुनावेगा तब उन दोनों गणों के साथही साथ इसकी मुक्ति भी शाप से होगी। इस प्रकार कुबेरजी ने इसके शाप का अन्त निर्धारित किया है। और हे प्रिये! स्मरण करो कि तुमने भी तो पुष्पदन्त के शाप का उद्धार योंही स्थिर किया है न? ऐसा शिवजी का बचन सुनकर मैं यहां चला आया हूं। सो मेरा शाप तबतक है जबतक पुष्पदन्त न आवै। इतना कह जब काणभूति चुप हुआ तो वररुचि को उसी समय अपने प्राचीन जन्म की कथा स्मरण हो आई। वह मानों स्वप्न से चौंक उठा और काणभूति से बोला कि हे मित्र वह पुष्पदन्त तो मैंही हूं मुझसे तुम उस महाकथा को सुनो। ऐसा कहकर वररुचि अर्थात् कात्यायन ने सात लाख श्लोकोंवाली महाकथा काणभूति को सुनाई जिसे सुनकर उसने कहा कि हे देव! आप तो साक्षात् रुद्र भगवान् के अवतार हैं, और कौन इस महाकथा को जान सकता है, आपकी कृपा से वह शाप मानो मेरे शरीर से अभीही निकल गया। अब आप कृपा कर अपना वृत्तान्त जन्म से लेकर मुझे सुनाइये और यदि वह मुझसे छिपाने के योग्य न हो तो उससे विदित कर मुझे पवित्र कीजिये। तब वररुचि ने उसका ऐसा प्रेममय विनीतभाव देखकर अपनी सारी कथा जन्म के आरम्भ से लेकर उसे यों सुनाई कि—

कौशाम्बी नाम नगरी में सोमदत्त नामक एक बड़े महात्मा ब्राह्मण रहते थे, जिनका दूसरा नाम अग्निशिख भी था उनकी भार्य्या का नाम वसुदत्ता था। वह मुनिकन्या थी, शापवश मनुष्य का अवतार उसने धारण किया था। शाप पाने के उपरान्त इन्हीं माता पिता से मेरा जन्म हुआ। जब मैं बहुतही छोटा था मेरे पिताजी का स्वर्गवास हो गया और मेरी माता बड़े कष्ट और परिश्रम से मेरा लालन पालन करने लगी। एक समय की बात है कि मेरे घर के द्वार पर दो ब्राह्मण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहीं से आये और मार्ग के परिश्रम से थक जाने के कारण एक रात्रि के लिये टिकने का स्थान मांगने लगे। माता ने उन्हें स्थान दे दिया। इतने में बाहर बाजा बजने लगा और मेरी माता निज पति को स्मरण कर शोक से विह्वल होगई। फिर मुझे पास बुलाकर कहने लगी कि बेटा यह देखो तुम्हारे पिता का मित्र नन्द नामक नट नृत्य करता है। मैंने माता से कहा कि हे अम्ब! मैं जाकर अभी देख आता हूं और ज्यों का त्यों तुम्हें आकर सुना देता हूं। मेरी इस बात को सुनकर उन दोनों ब्राह्मणों को बड़ा आश्चर्य हुआ। माता ने उनसे कहा कि हे पुत्रो! इसमें कुछ सन्देह मत करो, यह बालक जिस बात को एक बेर सुन लेता है चट उसे हृदय में धारण कर लेता है। परीक्षा के लिये उन लोगों ने मेरे साम्हने प्रातिशाख्य पढ़ कर सुनाया और मैंने भी उसी क्षण उन दोनों के साम्हने ज्यों का त्यों दुहरा दिया। फिर उन दोनों के साथ मैं बाहर जाकर नाट्य देख आया और घर में आकर मैंने वैसाही माता के साम्हने कर दिखाया। एकही बेर के सुनने से सब बातें याद कर लेता है ऐसा मुझे देखकर उन दोनों में से एक जिसका नाम व्याड़ी था मेरी माता को प्रणाम करके यों कहने लगा कि हे मातः! हमलोगों का तनिक हाल सुनिये,—

वेतस नामक एक उत्तम पुरी है, वहां देवस्वामी और करम्भक नाम दो भाई जाति के ब्राह्मण हुए हैं, उन दोनों में बड़ीही प्रीति थी। मेरा यह इन्द्रदत्त नामक भाई देवस्वामी का पुत्र है और करम्भक का पुत्र मैं व्याड़ी नामा हूं। कुछ दिनों के उपरान्त मेरे पिताजी का देहान्त हो गया और उन्हीं के शोक में इन्द्रदत्त के पिता का भी स्वर्गवास हुआ। ऐसी आपत्ति के पड़ने पर मेरी ताई और मेरी माता, दोनों का हृदय शोक से फट गया और वे लोग भी स्वर्गधाम को पधारीं। इस प्रकार हम दोनों अनाथ हो गये और पास में कुछ भी धन न होने के कारण इधर उधर भीख मांगने लगे। विचार किया कि चलो श्रीस्वामिकार्त्तिक जी के पास चलकर तपस्या करें। ऐसा विचार हम दोनों ने वहां जाकर घोर तपस्या की और श्रीस्वामिकार्त्तिकजी को प्रसन्न कर लिया, सो प्रभु ने हम दोनों को स्वप्न में आज्ञा दी कि नन्द राजा की पुरी में जो पाटली पुत्र नाम से प्रसिद्ध है वर्ष नामक एक ब्राह्मण रहते हैं तुम दोनों उनके पास जाओ। उनसे तुमको समस्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्या प्राप्त होगी। हमलोग पाटलपुरी को गये और वहां पूछने पर लोगों ने कहा कि हां इस नगर में वर्ष नामक एक महामूर्ख ब्राह्मण रहता तो है। यह सुनतेही हमलोगों का चित्त डमाडोल हो गया पर किसी प्रकार उसके घर पर जा पहुँचे। देखते क्या हैं कि टूटी सी झोपड़ी है जिसकी भीतियां महा जर्जर हो रही हैं, घर के अन्दर चूहों ने सहस्रों छेद कर रक्खे हैं और दीमकों की तो कुछ गिनतीही नहीं कि के सहस्र भरे हैं। उसका घर क्या था मानो संसार भर की आपत्तियों का जन्मस्थान था। यह भी देखा कि उसी जर्जर गृह के एक कोने में वर्ष बैठा है। द्वार पर हमलोगों को उपस्थित देख उसकी पत्नी ने आकर बहुत कुछ सत्कार किया। उसकी दशा जो निहारी तो उसे साक्षात् दुर्गति का अवतारही पाया। शरीर दुर्बल और धूसर हो रहा है देह पर मैले कुचैले चीथड़े वस्त्र लटक रहे हैं। हमलोगों ने पहिले उसे प्रणाम किया और फिर अपना सब वृत्तान्त कह सुनाया और जिस प्रकार उसके पति की मूर्खता की बात सुनी थी वह सब भी कह दी। उसने कहा कि तुम मेरे पुत्र हो तुमसे क्या लज्जा है सुनो मैं कहती हूं। इतना कह उस पतिव्रता ने अपनी कथा यों सुनाई, कि इस नगर में शङ्करस्वामी नामक एक बहुत सुयोग्य ब्राह्मण हो गये हैं, उनके दो पुत्र थे, एक तो मेरे भर्ता (वर्ष) और दूसरे उपवर्ष। यह तो मूर्ख और दरिद्र हुए किन्तु इनके छोटे भाई उपवर्ष विद्वान् और धनी थे। इसी कारण उनकी भार्य्या गृहस्थी का सब काम काज देखने पर नियुक्त हुई थीं।

अब मेरे पति का हाल सुनिये। यहां की यह चाल है कि वर्षा ऋतु में स्त्री लोग मालपूआ बनाती हैं और किसी मूर्ख ब्राह्मण को खोजकर उसे देती हैं, उनका ऐसा विश्वास है कि ऐसा करने से जाड़े में शीत और गरमी में धूप, देनेवाले को नहीं सताती। बस मेरी देवरानी ने तदनुसार मालपूआ बनाकर मेरे पति को मूर्ख पा दक्षिणा के सहित दे दिया और ये उसे लिये हुए मेरे पास आये। मैंने यह देखकर इन्हें ऊँचा नीचा समझाया और ये भी अपनी उस मूर्खता पर बहुत पछताये। दुखी होकर ये श्रीस्वामिकुमारजी के चरणों में जा पड़े और इनकी तपस्या से प्रसन्न हो उन्होंने समस्त विद्या इन पर प्रगट कर दी, और यह आज्ञा दी कि जब कोई ऐसा ब्राह्मण तुम्हें मिले कि एकही बेर के सुनने से याद कर ले तो उसकी

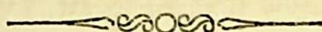
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

साम्हने यह सब विद्या प्रकाश कर देनी। इतना सुन ये प्रसन्नतापूर्वक वहां से चले आये और इन्होंने मुझसे सब हाल कहा। उसी दिन से ये ध्यान जप में अकेले बैठे रहते हैं। इसलिये आप दोनों जन कृपा कर किसी ऐसे ब्राह्मण को खोज कर ले आइये जो एकही बेर के सुनने से सब विद्या स्मरण कर ले तो आपलोगों की सर्वार्थ-सिद्धि हो इसमें सन्देह नहीं। ऐसा उस वर्षपत्नी से सुन कर उसकी गरीबी हटाने के लिये हम दोनों सौ अशर्फी उसे देकर इस खोज में निकले कि किसी वैसे श्रुतधर ब्राह्मण को ढूंढ़ निकालें। सारी पृथिवी घूमते घूमते हमलोगों को कोई भी वैसा श्रुतधर ब्राह्मण न मिला। आज भाग्यवश आपके घर पर आ निकले हैं और आपके इस बालक को इच्छानुसार श्रुतधर पाते हैं। सो कृपा कर इन्हें दीजिये कि इन्हें हमलोग वहां ले जाकर अपना मनोरथ सिद्ध करें। व्याड़ी का ऐसा वचन सुन कर मेरी माता ने कहा कि यह आश्चर्य तो आप लोगों ने निज आखों ही से देखा है; जिस समय इसका जन्म हुआ था उसी समय यह आकाशबाणी हुई थी कि यह श्रुतधर उत्पन्न हुआ है और वर्ष नामक ब्राह्मण से इसे विद्या प्राप्त होगी, और यह सारे संसार में व्याकरण में प्रतिष्ठा पावेगा। इसका नाम वररुचि रक्खो। इतना कहकर आकाशबाणी चुप हो गई थी। इसलिये ज्यों ज्यों यह बालक सयाना होता जाता था त्यों त्यों मुझे रात दिन यह चिन्ता बढ़ती जाती थी कि वह वर्ष नामक ब्राह्मण कहां मिलेंगे। आज आप लोगों के मुख से यह वृत्तान्त सुनकर मुझे परम सन्तोष हुआ। सो यह आप लोगों का भाई है इसे साथ ले जाइये मुझे इसमें कुछ भी वक्तव्य नहीं है। मेरी माता के ऐसे वचन सुन कर व्याड़ी और इन्द्रदत्त परम हर्षित हुए और वह सारी रात उन दोनों ने जागतेही बिताई। दूसरे ही दिन वेद की योग्यता प्राप्त कराने के निमित्त सब व्यय अपने पास से देकर व्याड़ी ने मेरा यज्ञोपवीत-संस्कार भी करा दिया। तब चलती समय माता ने मुझे गोद में बैठाकर बड़े प्रेम से मेरा मुख चुम्बन किया और गद्गद कण्ठ से आशीर्वाद देकर उन दोनों ब्राह्मणों के साथ विदा किया। वे दोनों भी अपने मनोरथानुसार सब बातों को देखकर मुझे अपने साथ ले नगर के बाहर हुए। चलते चलते कुछ दिनों के उपरान्त हमलोग वर्ष के घर पर आ उपस्थित हुये और उनने भी मुझे बड़ेही सत्कार से बैठाया। दूसरे दिन उन वर्ष नामक उपाध्याय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ने पवित्रभूमि पर बैठकर और हमलोगों को आगे बैठाकर ओङ्कार का उच्चारण किया। साथही उन्हें समस्त वेद अङ्गों सहित उपस्थित हो गये और वे भी हमलोगों को पढ़ाने लगे। मैंने तो एकही बेर के सुनने में सब याद कर लिया, मुझ से दूसरी बेर सुनने पर व्याड़ी ने और उससे तीसरी बेर सुनकर इन्द्रदत्त ने भी सब स्मरण कर लिया। इस प्रकार उस गृह से जो वेदों की दिव्य ध्वनि हुई तो उसे सुनतेही आसपास के सभी ब्राह्मण लोग आश्चर्य से वहां एकत्र हो गये कि यह क्या हो रहा है और इस वृत्तान्त को देख प्रणाम कर करके वर्ष उपाध्याय की स्तुति अनेक प्रकार से करने लगे। ऐसा विचित्र कौतुक देखकर उपवर्ष को भी बड़ी प्रसन्नता हुई और पुरवासियों ने सारे नगर में इस महोत्सव का हर्ष मनाया। राजा नन्द भी श्रीस्कन्दजी का ऐसा प्रबल प्रभाव देखकर वर्ष के घर पर आन उपस्थित हुए और प्रसन्न हो उनके घर को धन धान्य से भरपूर कर दिया।

निरखि शम्भुनन्दनकृपा राजा नन्द उदार।
आदर कीन्हों वर्ष को दै धन धान्य अपार॥



तीसरा तरङ्ग।

इस प्रकार वररुचि ने उस घोर जङ्गल में बैठ काणभूति पिशाच को यह कथा सुनाई और वह भी एकाग्रचित्त होकर सुन रहा था। काणभूति ने पूछा कि फिर क्या हुआ? तब वररुचि कहने लगा कि जब हमलोग सब विद्या पढ़ चुके तो एक दिन जब उपाध्याय वर्ष महाशय अपनी सन्ध्या पूजा से निवृत्त होकर बैठे थे कि हमलोगों ने हाथ जोड़कर पूछा कि हे गुरो! यह तो कृपा कर बताइये कि यह नगर सरस्वती तथा लक्ष्मी का घर क्योंकर हो गया? यह सुन उन्होंने कहा कि तुम लोगों ने बहुत उत्तम प्रश्न किया, अच्छा अब इसकी कथा सुनो।

श्रीपतितपावनी गङ्गाजी के तट पर कनखल नाम एक पवित्र तीर्थ है, जहां काञ्चनपात नामक देवदन्ती ने उशीनर पर्वत की चोटी फाड़कर श्रीभगवती जाह्नवी को प्रगट किया है। वहां एक दाक्षिणात्य ब्राह्मण अपनी स्त्री के साथ तपस्या करते हुए रहते थे, और वहीं पर उन्हें तीन पुत्र उत्पन्न हुये। जब उन बालकों के

माता पिता का स्वर्गवास हो गया तो वे तीनों विद्याप्राप्ति के निमित्त राजगृह नामक स्थान को गये । वहां से पूरी विद्या पढ़कर अनाथ होने के कारण दुःखित हो, वे तीनों श्रीस्वामिकार्त्तिकजी के दर्शनों के निमित्त दक्खिन को गये, जहां वे लोग समुद्र के किनारे चिञ्चिनी नगर में भोजिक नामक एक ब्राह्मण के घर में रहने लगे । उस ब्राह्मण को तीन कन्याओं के अतिरिक्त और कोई सन्तति न थी, सो वह अपनी तीनों कन्याओं का इन तीन ब्राह्मणपुत्रों से विवाह कर अपनी कुल सम्पत्ति इन्हें दे तपस्या करने के निमित्त गङ्गाजी के तट पर कहीं चला गया । वे तीनों अपनी भार्य्याओं के सहित ससुराल में सुखपूर्वक रहने लगे । एक समय की बात है कि देश में अनावृष्टि हुई और बड़ा भारी अकाल पड़ा, सारी प्रजा अन्न न होने से भूखी मरने लगी । इस कारण वे तीनों उन साध्वी स्त्रियों को वहीं छोड़ किसी दूसरे देश को चले गये, ठीकही है खलों के हृदय में अपने बन्धु बान्धवों का प्रेम कहां ? उस समय बिचली स्त्री को गर्भ था, वे बिचारी तीनों पतिपरित्यक्ता स्त्रियां अपने पिता के मित्र यज्ञदत्त नामक ब्राह्मण के घर में रहने लगीं । इस प्रकार अपने अपने भर्त्ताओं की चिन्ता करती हुईं, उन बिचारी तीनों स्त्रियों का समय, महाकष्ट से बीतने लगा । शास्त्र में बहुतही उचित लिखा है कि उत्तम कुल की स्त्रियां भारी से भारी आपत्ति पड़ने पर भी क्या कभी निज सतीव्रत को परित्याग करती हैं ? समय पाकर उस बिचली स्त्री को एक पुत्ररत्न पैदा हुआ, और माता के अतिरिक्त ताई चाची का स्नेह भी दिनोदिन उस बालक पर बढ़ने लगा । एक समय की बात है कि भगवान् पार्वतीपति निज भार्य्या स्कन्दजननी के साथ विमान पर बैठे आकाशमार्ग से वायुसेवनार्थ कहीं जा रहे थे कि जगज्जननी की दृष्टि उस बालक पर पड़ी । उनके कोमल हृदय में अत्यन्त दया उत्पन्न हुई, सो उन्होंने महादेवजी से कहा कि हे नाथ! इधर देखिये ये तीनों स्त्रियां कैसा अपूर्व स्नेह इस बालक के साथ इस आशा से कर रहीं हैं कि यह सयाना होने पर हमारा पोषण करैगा । सो मेरी यह प्रार्थना है कि आप इन स्त्रियों तथा इस बालक को दीर्घजीवी कर दें जिसमें इनका मनोरथ सुफल हो । श्रीजगदम्बा का ऐसा निवेदन सुनकर श्रीशिवजी ने वैसाही बरदान दे दिया और कहा कि हे प्रिये! इसपर तो मेरा स्नेह पहिलेही से है क्योंकि इसने पूर्वजन्म में सस्त्रीक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कठिन तपस्या करके मुझे प्रसन्न किया था, सो इसकी वह स्त्री भी महेन्द्रवर्म्मा राजा के घर में उत्पन्न हुई है, उसका नाम पाटली है और उसी के साथ इसका विवाह इस जन्म में भी होगा। ऐसा कहकर श्रीशम्भुजी ने उन तीनों स्त्रियों को स्वप्न में आज्ञा दी कि तुम लोग इस बालक का नाम पुत्रक रखना। जब यह सो कर उठा करेगा तो लाख स्वर्णमुद्रा की थैली आपसे आप इसके सिरहाने आ जाया करैगी और यह बड़ा राजा होगा। वे तीनों नींद से चौंक उठीं और जब वह बालक सोकर उठा तो उसके सिरहाने लाख स्वर्णमुद्रा की थैली पा कर यज्ञदत्त की वे तीनों पतिव्रता कन्यायें बड़ीही प्रसन्न हुईं। इसी प्रकार धन की सम्पत्ति दिनोदिन बढ़ती गई और वह पुत्रक नामक बालक राजा हो गया, ठीकही है सम्पत्ति भी तपस्या के अधीन रहती है। एक दिन यज्ञदत्त ने पुत्रक को एकान्त में पाकर यों कहा कि हे राजन्! आपके पिता और ताया चाचा लोग दुर्भिक्ष से पीड़ित होकर न जाने कहां चले गये हैं सो आप अन्न और धन का सदाव्रत यहां खोल दीजिये कि जिसे सुनकर वे लोग भी यहां आ जावैं, क्योंकि ब्रह्मदत्त ने भी ऐसाही किया था सो मैं आपसे कहता हूं सुनिये।

श्रीकाशीपुरी में ब्रह्मदत्त नाम एक राजा हुए हैं उन्होंने रात्रि के समय देखा कि हंस का एक जोड़ा आकाश में उड़ा जाता है जिसके शरीर में सोने की सी झलक है और सैकड़ों राजहंस उस जोड़े को चारो ओर से यों घेरे हैं मानो श्वेत बादलों का समूह विद्युत्पुञ्ज के चारों ओर मण्डल बाँधे हो। राजा को उस जोड़े के पुनः देखने की ऐसी उत्कण्ठा बढ़ी कि उनका मन महल के सुखों में किसी प्रकार न लगता था। मन्त्रियों की सलाह से उन्होंने एक परम सुन्दर स्वच्छ तलाव वहां बनवाया और इस बात की डुग्गी फिरवा दी कि हमारे राज्य में प्राणीमात्र को अभयदान दिया गया। कुछ दिनों के उपरान्त हंसों का वह जोड़ा लौट आया। राजा उन्हें देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और जब उन हंसों को भी अभय का विश्वास हो गया तो समीप आकर बैठ गये। राजा ने पूछा कि आप लोगों का शरीर सोने सा क्योंकर हुआ? तो वे दोनों मनुष्य-वाणी से यों कहने लगे कि हे राजन्! हम दोनों पूर्व जन्म के कौवे हैं, बलि (भोजन) के निमित्त लड़ते लड़ते एक पवित्र शिवालय के शिखर पर गिर के मर गये; इसी कारण इस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जन्म में हंस हुए और शिवालय में मरने के कारण हमारे शरीर में सुवर्ण की सी चमक हो गई और हमें अपने पूर्व जन्म की कथा भी स्मरण रही। ऐसी उनकी बात सुन राजा बहुत प्रसन्न हो गये और चिरकाल तक उन्हें देखकर परम सन्तुष्ट हुए। इसीलिये कहता हूं कि अन्न और धन का सदाव्रत खोल देने से आप अपने खोये हुये पिता तथा ताया चाचा को पा जावेंगे। यज्ञदत्त का ऐसा उपदेश सुन पुत्रक राजा ने सदाव्रत खोलने की आज्ञा उसी क्षण दे दी । इस दान की चारों ओर धूम मच गई जिसे सुनकर वे ब्राह्मण लोग भी लौट आये और निज भार्य्याओं-द्वारा पहिचाने जाकर धन धान्य से सुखी हो रहने लगे । आश्चर्य्य की बात है कि मूर्खता की पट्टी आंख में बांधनेवाले दुष्टों को अपना अनुभव किया हुआ दारिद्र-कष्ट भी सम्पत्ति पाने पर भूल जाता है! कुछ दिनों के उपरान्त उन सभों को ऐसी इच्छा हुई कि पुत्रक को मारकर स्वयं राज्य छीन लेवें, सो श्रीविन्ध्याचलवासिनी देवी के दर्शन कराने के बहाने से पुत्रक को साथ लेकर वे लोग चल पड़े । इधर उन लोगों ने क्या किया कि देवीजी के मन्दिर के अन्दर बधकों को नियत कर रक्खा और पुत्रक से कहा कि प्रथम तुम्ही अन्दर जाकर देवीजी का दर्शन करो, हमलोग पीछे दर्शन करेंगे । उनकी बात पर विश्वास करके ज्योंही उस विचारे ने मन्दिर के अन्दर प्रवेश किया कि बधकों ने उसे धर लिया। उन्हें खड्गहस्त देखकर पुत्रक ने उनसे पूछा कि भई मुझ निरपराधी को क्यों मारते हो तो उन सभों ने कहा कि तुम्हारे ताया चाचा और पिता ने हमें द्रव्य देकर इस काम पर नियुक्त किया है कि पुत्रक को आतेही बलि चढ़ा देना। भगवती कल्याणकारिणी देवी का सिंहासन यह अनर्थ देख डोल गया सो उन्होंने बधकों की बुद्धि मोह ली और पुत्रक को ऐसी प्रज्ञा दी कि उसने बधकों से कहा कि भाई यदि तुम लोग मुझे छोड़ दो तो मैं ये सब पहिरे हुये रत्नकी भूषण तुम्हें दे दूं और कहीं दूरदेश को चला जाऊँ और श्रीदेवीजी के साम्हने प्रतिज्ञा करता हूं कि तुम्हारा यह भेद किसी पर प्रगट भी न करूँगा। व सब इस बात पर सम्मत हो गये और पुत्रक ने अपने सब अलङ्कार उतारकर उन्हें दे दिये। उन बधकों ने बाहर आकर पुत्रक के ताया चाचा से झूठही कह दिया कि हमने बलिदान चढ़ा दिया हमारा पुरस्कार दीजिये। बस इधर से भी पुरस्कार ले पुत्रक को छोड़ वे लोग अ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पने घर गये और वे सब भी अपने को सुफलमनोरथ मान खुशी खुशी राज्य को लौट आय, इधर बुद्धिमान् मन्त्री लोग भी ताड़ गये कि ये लोग राज्यद्रोही हैं; भला कृतघ्नों का भी कभी कल्याण हुआ है ? उधर वह सत्यप्रतिज्ञ राजा पुत्रक, बधकों के हाथ से छुट कर और अपने बन्धुओं की ऐसी नीयत देख उदासी से विरक्त हो विन्ध्याचल के जङ्गल में चला गया। घूमते घूमते उसने देखा कि एक स्थान पर दो पुरुष आपस में कुश्ताकुश्ती कर रहे हैं, इनने पूछा कि भद्र तुमलोग कौन हो और क्यों आपस में लड़ते हो ? उन्होंने कहा कि हमलोग मायासुर के पुत्र हैं और यह धन हम दोनों का है, यह देखो यह थाली, यह लाठी और ये दोनों खड़ाऊं रक्खे हैं। इसी के निमित्त हम दोनों की लड़ाई है, जो जीतेगा सो यह धन लेगा। पुत्रक ने हँस कर कहा कि भला इस तुच्छ सी वस्तु के लिये तुम लोग क्यों नाहक लड़ कर अपने प्राण गँवाते हो ? उन दोनों ने कहा इन्हें तुच्छ मत समझिये खड़ाऊँ में तो यह गुण है कि जो इन्हें पहिन लेवे वह पक्षी की नाईं आकाश में उड़ सकता है. लाठी से जो कुछ लिख दिया जाय वह सब बात सत्य हो जाती है और थाली में यह गुण है कि चाहे जो वस्तु भोजन की इससे मांगो सब उसी क्षण देती है। पुत्रक ने कहा तो लड़कर मरने से क्या होगा तुम लोग यह शर्त लगाओ कि दौड़ने में जो जिसके आगे बढ़ जावे वह इस धन का स्वामी हो। दोनों ने कहा अच्छी बात है, इतना कह वे दोनों मूर्ख दौड़ पड़े। इधर पुत्रक ने थाली और लाठी उठा खड़ाऊँ पहिन आकाश का रास्ता लिया और वे दोनों मुंह ताकते रह गये। क्षण भर में वह बहुत दूर निकल गया, देखता क्या है कि आकर्षिका नाम एक बहुत सुन्दर नगरी है वहीं पर वह आकाश से उतर पड़ा और विचारने लगा कि वेश्यायें तो सदाही ठग होती हैं और ब्राह्मण तो हमारे ताया चाचा जैसे हैं और बणिक् सदा धन के लोभी होते हैं सो मैं किसके घर में टिकूं। ऐसा विचार वह राजा इधर उधर घूमने लगा देखता क्या है कि एक टूटा फूटा पुराना सा घर है उसमें एक बुढ्ढी अकेली बैठी है। इसने जाकर पहिले तो उस बुढ्ढी को कुछ द्रव्य दिया जिससे उसने इनका बड़ा आदर किया और फिर यह पुत्रक नाम राजा उसी बुढ्ढी के पुराने टूटे झोपड़े में रहने लगा। एक दिन उस बुढ्ढी ने प्रसन्न होकर कहा कि हे पुत्र ! मुझे इस बात की चिन्ता है कि जैसे तुम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुन्दर हो वैसो तुम्हारे योग्य भार्य्या कहीं नहीं दीख पड़ती, परन्तु एक बात है कि यहां के राजा की एक कन्या परम सुन्दरी है, उसका नाम पाटली है, और बाहर भीतर से उसकी रक्षा अनमोल रत्न की नाईं की जाती है। बुड्ढी की इस बात को पुत्रक ने बड़े ध्यान से सुना और उसी क्षण कामदेव ने भी उसके हृदय में प्रवेश किया। उसने यह विचारा कि जैसे हो आज मैं अवश्यही उस राजपुत्री को देखूंगा। बस रात्रि होतेही खड़ाऊँ पहिन वह आकाश में उड़ा और पर्वतशृङ्ग समान ऊँचे महलों को डाँकता हुआ वह उस स्थान पर पहुँचा जहाँ पाटली निद्रा में बेसुध पड़ी सो रही थी। उसके सारे शरीर में चन्दन लगा हुआ था। वह सुन्दरी सोई हुई ऐसी शोभायमती हो रही थी मानो कामदेव की थकी हुई साक्षात् शक्ति पलङ्ग पर पड़ी हो। वह विचारताही था कि इस परम सुन्दरी कोमलाङ्गी को क्योंकर जगाऊँ कि इतने में बाहर पहरेवाला जाग उठा। कवि लोगों का यह वचन बहुतही संगत है कि जो युवा लोग सुन्दरी कोमलाङ्गी नायिका को एकान्त में मधुर हुङ्कृतिपूर्वक आलिङ्गन कर निद्रा से धीरे से जगाते हैं वेही युवावस्था के सुख को प्राप्त होते हैं। सो पहरेवाले के पैर की आहट पातेही राजा पुत्रक के रोयें खड़े हो गये और उनका सारा शरीर काँप उठा। ज्योंही उन्होंने धीरे से उस कान्ता को हृदय से लगाया कि वह भी चौंक कर जाग उठी और लज्जा तथा कौतुक से राजा की ओर देखने लगी। दोनों की चार आंखें होतेही परस्पर कुछ ऐसी प्रीति बढ़ी कि दोनों चित्रलिखित से ज्यों के त्यों रह गये। परस्पर बातचीत होने से उन लोगों का प्रेम और भी अधिक हुआ और फिर दोनों ने गान्धर्व विवाह की सम्मति ठहराई। जब थोड़ी सी रात बाकी रह गई तो राजा ने निज प्रिया से बिदाई मांगी। यह सुन वह भी अत्यन्त दुःखित हुई किन्तु कोई वश न देख उसने आंखों में आंसू भर और पुनः भेंट करने की प्रतिज्ञा कराकर उन्हें प्रेमपूर्वक आलिङ्गन कर बिदा किया। राजा भी उसी बुड्ढी के स्थान पर आ पहुँचे। योंही नित्य का आना जाना होते होते एक दिन यह गुप्त भेद पहरेदारों पर प्रगट हो गया। उन सबों ने जाकर उसके पिता से यह वृत्तान्त निवेदन किया और उन्होंने भी पूरा हाल जानने के लिये स्त्रियों को गुप्तरूप से अन्तःपुर में नियत किया। दूसरे दिन रात के समय राजा आये और ज्योंही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निद्रा में सो गये त्योंही उन सबों ने पहिचान के लिये उनके वस्त्र में महावर का चिन्ह कर दिया। सबेरे राजा से यह सब निवेदन किया गया और उन्होंने अन्तःपुर के पैठे हुये चोर का पता लगाने के लिये दूतों को भेजा। खोजते खोजते कुछ लोग उसी बुड्ढी के मकान में जा पहुंचे और चिन्ह को पहिचान पुत्रक को राजा के समीप धर लाये। पुत्रक ने राजा को कुपित देख खड़ाऊँ पहिन आकाश का रास्ता लिया और अन्तःपुर में पैठ राजपुत्री से कहा कि प्रिये! उठ खड़ी होओ, हमलोगों का भेद खुल गया। इतना कह पाटली को गोद में ले खड़ाऊँबल से राजा आकाशमार्ग से उड़ चले। कुछ दूर जाकर एकान्त गङ्गातट पर किसी जङ्गल में उतरे और उस थाली के प्रभाव से अनेक प्रकार के स्वादिष्ट भोजनों का स्वाद प्रिया सहित लेकर राजा ने विश्राम किया। उनका ऐसा प्रभाव देखकर रानी पाटली ने निवेदन किया कि हे नाथ! जब आपके हाथ में ऐसी बिलक्षण शक्ति है तो हमलोग क्यों वृथा कष्ट उठावें। प्रिया के ऐसे बचन सुन राजा ने चतुरङ्गिनी सेना लाठी से नगर के चारो ओर लिख दी। सब बातें क्षण उपस्थित हो गई और राजा पुत्रक अपने ससुर को जीत पाटली सहि इससे समुद्रान्त पृथ्वी का राज्य सुख से करने लगे। इस प्रकार इस दिव्य नगरी ग. हाल है और इसी कारण इसका नाम पाटलीपुत्र हुआ, और यह सरस्वती तथा लक्ष्मी का मानो निवासस्थान हो गया। यों वर्ष उपाध्यायजी के मुख से इस विचित्र कथा को सुनकर हमलोगों को बड़ा कौतुक हुआ। सो हे मित्र काणभूति! हमलोग प्रसन्नतापूर्वक बहुत दिनों तक उसी नगर में रहते और आनन्द करते रहे।

पढ़े लिखे रहिवे लगे वर्ष गुरू के पास।
जहां न कछु हमकों कमी सबही भांति सुपास॥

चौथा तरङ्ग।

इस प्रकार विन्ध्याचल के जङ्गल में काणभूति की यह कथा सुनाकर वररुचि ने पुनः अपना वृत्तान्त कहना आरम्भ किया और बोला कि हे काणभूति! यों ही व्याड़ी और इन्द्रदत्त के साथ वर्ष उपाध्यायजी के स्थान पर रहकर मैंने समस्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्या प्राप्त की और बालकावस्था को व्यतीत कर यौवनावस्था में पैर धरा। एक समय की बात है कि हमलोग उस नगर में इन्द्रोत्सव नामक मेले को देखने के लिये निकले, वहां एक कन्या परम सुन्दरी ऐसी दीख पड़ी कि उसे कामदेव का साक्षात् अस्त्रही कहना चाहिये। उसे देखतेही मैंने इन्द्रदत्त से पूछा कि मित्र यह कौन है? क्या तुम इसे जानते हो? उसने उत्तर दिया कि यह उपवर्ष की कन्या है और इसका नाम उपकोशा है। उसने भी मुझे देख अपनी सहेलियों से मेरा पता पूछा और जान लेने पर प्रेमभरी दृष्टि से कुछ ऐसा कटाक्ष किया कि मैं तो बेसुध सा हो गया और मेरा मन हाथ से जाता रहा। वह चन्द्रवदनी, नीलकमल-लोचनी, मृणालभुजलतिका, कपोतकण्ठी, कुन्दरू के समान ओष्ठाधरवाली, मत्त-गजगामिनी मुझे यों घायल करके चली गई और मुझे सारी रात उसी की चिन्ता में निद्रा न आई। प्रात:काल के समय कुछ ज़री सी झपकी आ गई, स्वप्न में क्या देखता हूं कि एक दिव्य स्त्री सिर से पैर तक सुन्दर स्वेत वस्त्र धारण किये सिरहाने खड़ी यों कह रही है कि "हे पुत्र! उठ खड़ा हो चिन्ता छोड़ दे यह उपकोशा तेरी पूर्वजन्म की गुणज्ञा पत्नी है तेरे अतिरिक्त किसी दूसरे को पतिरूप से नहीं चाहती। मैं तेरे शरीर के अन्दर बसनेवाली सरस्वती हूं, तेरा दु:ख किसी प्रकार नहीं देख सकती, सो तू चिन्ता मत कर"। तब तो मैं जाग पड़ा और कुछ देर के उपरान्त अपनी प्यारी के घर के समीप जो अमराई थी उसमें जा बैठा। देखता क्या हूं कि उसकी सखी साम्हने से चली आती है। उसने आतेही मुझसे कहा कि, हमारी सखी आपके विरह में अत्यन्त व्याकुल है उसे किसी प्रकार जीवदान दीजिये। तब तो मेरा वह उत्साह द्विगुणित हो गया और मैंने सखी से कहा कि मेरा भी वैसाही प्रेम उन पर है किन्तु विना गुरुजन की सम्मति से उनसे कैसे भेंट कर सकता हूं। संसार में अकीर्ति से तो मृत्यु अच्छी है अतएव यदि तुम्हारी सखी का हृदयभाव गुरुजन जानकर निज सम्मति देवें तो हमलोगों का मनोरथ पूर्ण हो सकता है। सो हे भद्रे! तुम ऐसा कोई उपाय करो कि तुम्हारी सखी का तथा मेरा दोनों का जीवन हो। ऐसा सुन वह चली गई और उपवर्ष की स्त्री के समीप जाकर उसने सब वृत्तान्त निवेदन किया। उसने अपने पति को सारा हाल सुनाया और उनने अपने भाई वर्ष से इसकी चर्चा छेड़ी जिनने हर्षपूर्वक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस सम्बन्ध को स्वीकार किया। श्रीवर्षाचार्य्यजी की आज्ञा से व्याड़ी जाकर कौशाम्बी से मेरी माता को ले आया और विधिवत् विवाह करके मैं निज माता और पत्नी के साथ सुखपूर्वक वहां रहने लगा। उधर गुरु वर्ष जी के शिष्यों की संख्या बहुत अधिक बढ़ गई उनमें पाणिनि नामा एक महा जड़ और मूर्ख विद्यार्थी भी था। चिरकाल तक गुरुजी की सेवा करते२ वह थक गया परन्तु उसे कुछ भी विद्या न आई, तब वर्ष की भार्य्या ने उससे कहा कि तू विद्याप्राप्ति के निमित्त हिमालय जाकर शिवजी की तपस्या कर। उसने भी वैसाही किया और घोर तपस्या करके भगवान् इन्दुशेखर की प्रसन्नता से सर्व विद्याओं की आद्य विद्या व्याकरण शास्त्र को प्राप्त किया। जब वह लौट कर आया तो मुझे शास्त्रार्थ के लिये ललकारने लगा इसपर सात दिन तथा सात रात्रि हम दोनों का घोर शास्त्रार्थ हुआ किन्तु कोई भी परास्त न हुआ। आठवें दिन मैंने उसे जीत लिया। इतनेही में आकाशस्थित शम्भु भगवान् ने ऐसा महाघोर हुङ्कार किया कि इन्द्र से प्राप्त मेरा वह व्याकरण संसार से नाश हो गया, और हम सब पाणिनी से परास्त होकर पुनः मूर्ख के मूर्ख हो गये। इस बात से मुझे परम खेद हुआ! सो निज गृहस्थी के निमित्त अपना धन हिरण्यगुप्त नामक बनिये के हाथ में सौंप और उपकोशा से सब वृत्तान्त कह मैं निराहार तपस्या से श्रीशङ्करजी को प्रसन्न करने के लिये हिमालय को चला गया। इधर उपकोशा भी मेरी भलाई की चिन्ता रात दिन विचारती हुई अपने घर में रहने लगी। नित्य गङ्गा का स्नान करना और नियमपूर्वक रहनाही उसने अपना प्रण ठान लिया। यद्यपि वह इन व्रतों के कारण अत्यन्त दुबली हो गई थी किन्तु उसका मनोहर स्वरूप द्विगुणित प्रकाशमान् हो रहा था और वह द्वितीया की चन्द्रकला की नाईं लोगों के नेत्र को आनन्द देनेवाली हो रही थी। एक समय चैत्र के महीने में वह श्रीगङ्गाजी के स्नान को गई थी कि कहीं राजा के पुरोहित, तथा कोतवाल और मन्त्री के पुत्र ने उसे देख पाया, बस देखतेही सब के सब मुग्ध हो गये और दैवसंयोग से उसे भी उस दिन स्नान करने में अधिक विलम्ब लगा। लौटती समय सन्ध्या की बेला हो गई थी, सो मन्त्रीपुत्र ने उसे मार्ग में रोका और अपनी काम-वासना प्रगट की। उस पतिव्रता ने देखा कि यह बड़ी कठिनता हुई, सो उसने हृदय में धूर्तता को स्थान देकर उससे कहा कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे भद्र मेरी भी ऐसीही इच्छा है किन्तु मैं भले कुल की पुत्री हूं और इस समय मेरा पति विदेश को गया है, तो यह बात क्योंकर बने ऐसा न हो कि कोई देख ले तो मेरी तथा आपकी दोनों की प्रतिष्ठा नाश हो । इसलिये ऐसा करिये कि जब नगर के सब लोग इस मधूत्सव से थक कर सो जावें तो कल रात्रि के समय पहिले पहर आप मेरे घर पर आइये। इस प्रकार उससे छुटकारा पाकर ज्योंही आगे चली कि राजपुरोहित ने धरा, उसी रात्रि को दूसरे पहर उससे भी निज घर पर आने का समय नियत कर वह आगे चली, अभी कुछही दूर गई होगी कि कोतवाल ने रोका। उससे मिलने के लिये भी उसी रात तीसरे पहर का सङ्केत स्थिर कर अपनी जान छुड़ा आगे बढ़ी, और कांपती हुई घर पहुँची । दासियों को बुलाकर मार्ग का सब वृत्तान्त सुनाया कि आज ऐसा ऐसा हुआ है और मैंने इस प्रकार सङ्केत स्थिर कर अपनी जान छुड़ाई है । सो हे सखी! शास्त्र में लिखा है कि चाहे कैसीही अवस्था क्यों न हो कुलस्त्रियों का मर जाना अच्छा है, किन्तु पर लोकों के दृष्टि का "निशाना" बनना अच्छा नहीं। इसी प्रकार की चिन्ता में मुझे स्मरण करती हुई उस पतिव्रता ने उस रात कुछ भी भोजन न किया और सवेरा हो गया। उस दिन उसे ब्राह्मणपूजा के निमित्त कुछ खर्च की आवश्यकता जो हुई तो उसने दासी को हिरण्यगुप्त बनिये के पास यह कह कर भेजा कि मेरे पति का जो धन उसके पास रक्खा है उसमें से कुछ मांग ला। बनिया स्वयं चला आया और एकान्त में कहने लगा कि मेरे साथ प्रेम करो तो मैं तुम्हारे पति का रक्खा हुआ धन दूँ। ऐसा सुनकर उसने विचारा कि इस बात का कोई भी साक्षी नहीं है कि मेरे पति ने इसके यहां धन रक्खा है और बनियें की ऐसी कामातुर दशा देख वह अत्यन्त दुःखित और चिन्तित हुई। सो उसके लिये भी उसने उसी रात के अन्तिम पहर में सङ्केत नियत किया । बनियां प्रसन्नतापूर्वक अपने घर चला गया। इधर इसने दासियों से कहा कि एक कटोरे में बहुत सा कस्तूरी तेल और काजल साथही पीसकर तयार रक्खो । फिर उसने एक बहुत बड़ा सन्दूक केंवड़ेदार तयार कराया और उनमें उस काजल को चारो ओर भली प्रकार पोत दिया, और बहुत सा बचा भी रक्खा। जब दूसरे दिन वसन्तोत्सव का मेला समाप्त हुआ तो पहिले पहर रात को खूब उत्तम उत्तम वस्त्राभूषण पहिन कर मन्त्री-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुत्र चुपचाप उसके घर पर अकेला आ गया। उसे आया देख उपकोशा ने अत्यन्त शिष्टाचार किया और कहा कि प्रथम आप उपटन लगाकर स्नान कर लीजिये फिर पलङ्ग पर बैठियेगा। उसने कहा बहुत अच्छा, सो एक दासी को उसने अपने वस्त्राभूषण दे दिये और दूसरी दासी पास की अन्धकारमय कोठरी में उसे ले गई जहां ऐसा घोर अँधेरा था कि हाथ को हाथ न सूझता था। उसी अन्धकारमय कोठड़ी में दासी ने उसके सारे शरीर में उबटन के बहाने से वह काजल खूब मला जिसको कस्तूरीमय सुगन्धि के कारण वह पहिचान न सका, इतनेही में दूसरे पहर का समय हुआ और राजपुरोहित ने धीरे से घर में पैर धरा। दासी ने मन्त्रीपुत्र से कहा यह तो बड़ी कठिनता हुई बाहर वररुचिजी के मित्र राजपुरोहित जी आ गये हैं ऐसा न हो कि आपको देख लें। मन्त्रीपुत्र ने कहा कि जल्दी मुझे कहीं छिपाओ। दासी ने कहा कि इसी बड़ी सन्दूक में पैठ जाओ, बस तुरन्त उसे नंगेही सन्दूक के अन्दर बन्द किया और बाहर से ताला लगा दिया। उसी प्रकार पुरोहित महाशय के शरीर में भी स्नान के बहाने से उपटन लगाया गया और कोतवाल के आने पर वे भी उसी भांति उसी सन्दूक में बन्द किये गये। दासियों ने कोतवाल के भी वस्त्रेत्यादि उसी बहाने से उतार कर उन्हें भी उपटन लगा बनियें के आने पर नङ्गाही उसी बड़े सन्दूक में बन्द किया। वे तीनों अन्ध-तामिस्र नरक में जाने के लिये मानों अभी से उस अन्धकारमय सन्दूक में अभ्यास करने लगे और एक दूसरे से पहिचाने जाने के भय से धक्काधुक्की होने पर भी आपस में न बोलते थे। इतने में उपकोशा ने उस घर में दीपक बाल दिया और बनिये को अन्दर लाकर कहने लगी कि पहिले मेरे पति का रक्खा हुआ धन दे दीजिये तब पलँग पर आपको बैठने दूंगी। कोठड़ी को शून्य देख उस शठ ने कहा कि जब कहही चुके हैं तब क्या! तुम्हारे पति ने जो धन मेरे पास रक्खा है वह हम कल तुम्हें लौटा देंगे। उपकोशा ने सन्दूक की ओर हाथ बढ़ा कर कहा कि हे देवता लोग! आप हिरण्यगुप्त की बात सुन लीजिये इसने इस बात की प्रतिज्ञा करी है कि यह कल मेरे पति का वह धन जो इसके पास रक्खा है लौटा देगा। इतना कह उसने दीपक बुझवा दिया और स्नान उपटन के बहाने से उसके शरीर में भी वही तेल मिला हुआ कज्जल पोतवा दिया। तब उपकोशा ने उससे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहा कि आज तो सबेरा हो गया अब तुम घर जाओ कल फिर आना । वह कुछ हुज्जत जो करने लगा तो दासियों ने उसे गर्दनिया दे बलपूर्वक घर के बाहर निकाल दिया । इस प्रकार एक चीथड़ा लपेटे और सारे शरीर में तेल कज्जल पोते जो उसे नगर के कुत्तों ने देखा तो ह्वांव ह्वांव करके उसके पीछे पड़ गये, आगे आगे वह दौड़ता जाता था और पीछे पीछे कुत्ते भूंकते थे । किसी २ प्रकार वह अपने घर पहुँचा, नौकर लोग बड़े परिश्रम से उसका तेल कज्जल साबुन से धो धोकर छुड़ाने लगे परन्तु वह जल्दी छूटता न था । मारे लज्जा के वह भूमि में धँसा जाता था, सत्यही है जो ऐसा अनुचित काम करता है उसकी ऐसीही दुर्दशा होती है । सबेरा होतेही उपकोशा दासी को साथ लेकर नन्द राजा के द्वार पर दोहाई देने लगी कि "महाराज मेरी रक्षा कीजिये, हिरण्यगुप्त नामक बनिये के यहां मेरे पति ने बहुत सा धन धरोहर रक्खा था सो वह नहीं देता, सब का सब खा जाया चाहता है । दुहाई है महाराज की !" राजा ने यह सुनतेही उस बनिये को राजसभा में बुलवा भेजा । पूछने पर उसने उत्तर दिया कि महाराज यह झूठी है इसका पति मेरे यहां कुछ नहीं रख गया । यह मुझ पर मिथ्या कलङ्क लगाती है । उपकोशा ने कहा कि महाराज मेरे तीन गवाह हैं । विदेश जाती समय मेरे पति सन्दूक में गृहदेवता को बन्द कर गये थे उन्हीं देवताओं के सन्मुख इस बनिये ने अपने मुँह से स्वीकार किया है कि मेरे पति का रखा हुआ सब धन यह मुझे कल देगा आप उस सन्दूक को यहां मँगाकर स्वयं साक्षी लीजिये । राजा को यह सुन बड़ा आश्चर्य्य हुआ दूतों को तुर्त आज्ञा दी कि उस सन्दूक को यहां ले आओ । दस बारह "पेशराज" गये और सन्दूक को "सेंगरा बरही" लगा राजसभा में ले आये । तब उपकोशा ने कहा कि "हे देवता गण जो कुछ इस बनिये ने आप लोगों के साम्हने कहा हो सो सच सच कह दीजिये फिर अपने अपने घर को जाइयेगा, नहीं तो मैं अभी सन्दूक खोल आप लोगों को सभा में बाहर निकालती हूं ।" इतना सुनतेही वे सब मारे डर के सन्दूक के अन्दरही से कहने लगे "सच है इस बनिये ने हमलोगों के साम्हनेही धन का धरोहर रखना स्वीकार किया है ।" तब तो बनिया निरुत्तर हो राजा के पैरों पर गिर पड़ा । राजा ने उपकोशा से कहा कि इन गृहदेवताओं के दर्शन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करने की मुझे बड़ी इच्छा है कृपा कर ताला खोलो। उपकोशा ने ताला खोल कर ज्योंही ढकना उठाया कि उसके अन्दर से तीन मनुष्य पिशाच की नाईं काले काले नङ्गे निकल आये, सबको बड़ा आश्चर्य हुआ कि ये भूत इसके अन्दर कैसे आये। अन्त बड़े परिश्रम से राजा और मन्त्री ने उन्हें पहिचाना। सारी सभा हँसती हँसती लोटपोट हो गई। राजा ने उपकोशा से पूछा कि यह क्या कौतुक है इसका भेद कहो, तब तो उस पतिव्रता ने सारा हाल आदि से अन्त तक सुना दिया। निस्सन्देह कुलस्त्रियों के पवित्र चरित्र अत्यन्त विचित्र और अचिन्त्य हैं। इस प्रकार सभी सभासद लोग उपकोशा की प्रशंसा करने लगे। तब तो उन परस्त्रीलोलुपों को राजा ने सन्दूक से बाहर खड़ा कर उनका सर्वस्व हरण कर लिया और अपने देश से निकाल दिया, यथार्थही है ऐसे अनीति आचरण करनेवालों की क्या कभी उन्नति हो सकती है ?। इसके उपरान्त राजा ने उपकोशा से कहा कि, हे भद्रे ! तू हमारी बहिन है किसी बात की चिन्ता मत कर, तब उसे बहुत सा धन दे घर पहुंचा दिया। जब बर्ष और उपवर्ष को इसका हाल विदित हुआ तो उन लोगों ने उस पतिव्रता की बड़ी प्रशंसा की, नगर में जो इस बात को सुनता वही हँसते २ लोट जाता था। इधर मैंने भी हिमाचल पर घोर तपस्या करके श्रीआशुतोष बरदाई पार्वतीपति को प्रसन्न कर लिया और परम सन्तुष्ट होकर उन्होंने वह पाणिनीय व्याकरण शास्त्र मुझ पर भी प्रकाश किया और मैंने उनके अनुग्रह से सब स्मरण कर लिया। फिर तो चन्द्रशेखर भगवान् के मौलि पर वर्तमान इन्दु के किरणों से मानो शीतल होता हुआ मार्ग के परिश्रम से बिना थकेही मैं आनन्दपूर्वक घर को लौट आया। माता तथा गुरुजन के चरणों में प्रणाम करके जब मैं स्वस्थ होकर बैठा तो मैंने भी उपकोशा का यह अद्भुत वृत्तान्त सुना जिसे जानकर मुझे परम आनन्द और विस्मय हुआ तथा मेरा सहज स्नेह उपकोशा पर बहुत आदर मान के साथ बढ़ गया। बर्ष उपाध्याय ने भी मेरे मुख से उस नवीन व्याकरण के सुनने की इच्छा की और तदनन्तर श्रीस्वामिकुमारजी ने उन पर सब प्रकाश कर दिया। कुछ दिनों के उपरान्त व्याड़ी और इन्द्रदत्त ने बर्ष उपाध्याय से निवेदन किया कि आप हमसे गुरुदक्षिणा कहिये, गुरुजी ने कहा कि एक कोटि स्वर्णमुद्रा मुझे देओ। बहुत अच्छा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कह के उन दोनों ने मुझ से कहा कि हे मित्र ! चलो राजा नन्द के पास चलकर गुरुदक्षिणा मांग लावें क्योंकि वे ९९ करोड़ स्वर्णमुद्रा के स्वामी हैं, इतना धन दूसरे स्थान पर कहां मिलेगा। फिर वे बचन से आपकी पत्नी उपकोशा को बहिन बना चुके हैं तो तुम्हारे साले लगते हैं इस नाते से अवश्यही गुरुदक्षिणा के लिये उपयुक्त धन प्राप्त हो जायगा। ऐसा विचार हम तीनों ब्रह्मचारी का रूप धर नन्द महाराज की सेना में जो उस समय अयोध्या में थी जा पहुँचे। होनहार की बात है कि ज्योंही हमलोग वहां पहुँचे त्योंही राजा का अचानचक स्वर्गवास हो गया, सारे नगर में महा कोलाहल मच गया और शोकसागर उमड़ आया। हमलोगों के दुःख का कोई अन्त न रहा। इतने में इन्द्रदत्त ने हमलोगों से कहा कि मुझे योगविद्या आती है मैं योगबल से इस मृतक राजा के शरीर में प्रवेश करता हूं। फिर जब तुम (वररुचि) मांगने आओगे तो मैं तुम्हें गुरुदक्षिणा दूंगा और जब तक मैं लौटकर अपने शरीर में न आऊं तबतक व्याड़ी मेरे शरीर की रक्षा करें। इतना कह इन्द्रदत्त अपना शरीर छोड़ नन्द राजा के शरीर में योगबल से पैठ गया और राजा जी उठा; सारे नगर में उत्सव छा गया और समग्र प्रजा में प्रसन्नता हो गई। इधर एक शून्य मन्दिर में इन्द्रदत्त के शरीर को रख कर और व्याड़ी को उसकी रक्षा में नियत कर मैं राजसभा में गुरुदक्षिणा मांगने के लिये पहुँचा, जातेही मैंने स्वस्तिवाचन कर राजा योगनन्द से गुरुदक्षिणा के लिये निवेदन किया। उसी क्षण उनने शकटाल को जो सत्यनन्द का मन्त्री था आज्ञा दी कि "इसे एक करोड़ स्वर्णमुद्रा अभी देओ"। "बहुत अच्छा महाराज अभी देता हूं" ऐसा कह वह मन्त्री विचारने लगा कि अभी राजा के उठते देर न हुई कि यह याचक आ खड़ा हुआ और राजा ने भी बिना कुछ सोचे समझे इतना धन देने की आज्ञा दे दी इसमें अवश्य कोई भेद है। सोचते विचारते वह यथार्थ भेद को जान गया क्योंकि बुद्धिमानों से कोई बात छिपी नहीं रहती। फिर मन्त्री ने विचारा कि राजा नन्द का पुत्र अभी बालक है और राज्य के अनेक शत्रु चारो ओर भरे पड़े हैं ऐसा करना चाहिये कि अब जो यह राजा जी उठा है तो ऐसाही बना रहै कहीं फिर यह अपने पहिले शरीर में न लौट जावे। यह विचार शकटाल मन्त्री ने यह आज्ञा प्रचार कर दी कि नगर में जितने मुर्दे हैं सब जल्दी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जला दिये जावें। दूतों ने खोजते २ व्याड़ी को भी धर पाया कि वह एक शून्य मन्दिर में एक मुर्दा लिये बैठा है, उन लोगों ने व्याड़ी को बलपूर्वक हटा कर मृतक (अर्थात् इन्द्रदत्त के शरीर) को जला दिया। इधर राजा मन्त्री से जल्दी मचा रहा था कि शीघ्र इस ब्राह्मण को धन देओ। मन्त्री कहता था कि महाराज आपके चङ्गे हो जाने के कारण सारे नगर में हर्ष मनाया जा रहा है, लोग मुझे चारो ओर से घेरे हुये हैं मैं इस काम से छुट्टी पाकर अभी इस ब्राह्मण को आज्ञानुसार धन देता हूं। इतनेही में योगनन्द राजा के साम्हने आकर व्याड़ी रोने पीटने लगा कि "महाराज बड़ा अन्धेर आपके राज्य में है, एक ब्राह्मण योग तपस्या कर रहा था और प्राणायाम धारण किये था कि आपके सिपाहियों ने उसे अनाथ का मुर्दा कह के बलपूर्वक जला दिया। दोहाई है महाराज की।" इतना सुनतेही मारे शोच के योगनन्द की तो अवस्थाही दूसरी हो गई। जब मन्त्री ने यह भली प्रकार निश्चय कर लिया कि इन्द्रदत्त का शरीर जला दिया गया तो उसने मुझे गुरुदक्षिणा का धन दे दिया। तब तो योगनन्द ने अकेले में व्याड़ी को बुलाकर कान में कहा कि अब क्या किया जाय, मैं ब्राह्मण होकर भी इस शूद्र राजा के शरीर में पैठने से शूद्र हो रहा हूं, यह धन सम्पत्ति मेरे किस काम की!। यह सुन व्याड़ी ने समयोचित यों उत्तर दिया कि अब जो होना था सो हो गया उसे जाने दीजिये, इस शकटाल मन्त्री ने आपको पहिचान लिया है इसका बहुत अधिकार है ऐसा न हो कि यह आपको मरवा डाले और सच्चे नन्द के पुत्र चन्द्रगुप्त को राजा बना देवे। अतएव आप वररुचि को अपना मन्त्री बनाइये और राजकाज उसी की सम्मति के अनुसार कीजिये क्योंकि वह बुद्धिमान् और अनुभवशील है। इतना कहकर व्याड़ी जब चला गया और मुझे भी गुरुदक्षिणा मिल गई तो योगनन्द राजा ने मुझे अपने सन्मुख बुलवा कर मुख्य मन्त्री के पद पर स्थापन किया। एक दिन मैंने राजा से कहा कि आपका ब्राह्मणत्व तो नाश हो गया है सो जबतक शकटाल अपने पद पर रहेगा तबतक आप का राज्य स्थिर नहीं हो सकता। अतएव इसे किसी प्रकार मरवा डालिये। जब मैंने योगनन्द राजा को यों समझाया तो उसने शकटाल मन्त्री को यह दोष लगा कर अन्धे कूये में "कैद" करवा दिया कि इसने जीते ब्राह्मण को मुर्दा कह जलवा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिया है । फिर उसके सौ पुत्रों को भी उसी कूप में फेंकवा दिया । राजा ने एकही कटोरा सत्तू और एकही कटोरा पानी नित्य शकटाल तथा उसके पुत्रों के लिये नियत कर दिया । शकटाल ने अपने बेटों से कहा कि हे पुत्रो ! इतने सत्तू पानी से तो एक का जीना भी कठिनता से हो सकता है हम सबों का कौन कहै । सो तुम लोगों को उचित है कि एकही को भोजन कराके बचाओ और ईश्वर चाहेगा तो वही हम सबों का बदला लेगा । उन सभों ने कहा कि आप सब में बुद्धिमान् और समर्थ हैं आपही खाइये और जीवित रहकर हम सभों का बदला लीजिये । सत्यही किसी कवि ने कहा है कि निज शत्रु से बदला लेने की इच्छा धीर लोगों को अपने प्राण समर्पण करके भी होती है । इस प्रकार उन सौ पुत्रों ने अपने पिता शकटाल ही को खिलाना पिलाना आरम्भ किया और स्वयं भूखे प्यासे रहकर प्राण परित्याग करने लगे । सच है बदला लेनेवाले बड़े कठिन होते हैं; जो अपने देश वा कुल की भलाई चाहते हैं, वे तब लों उन्नति नहीं कर सकते जब लों स्वार्थसाधन न परित्याग करें । इस प्रकार उस अन्धे कूयें में पड़ा हुआ शकटाल रात दिन विचारता और अपनी आखों से निज प्यारे पुत्रों का भूखे प्यासे एक एक करके मरना देखने लगा । कुछ दिन में देखतेही देखते वे सब पुत्र मर गये और केवल वही अकेला हाड़ पञ्जर मात्रावशिष्ट सांस लेता रहा । इधर योगनन्द राज्य में दृढ़तापूर्वक स्थिर हो गया, तब से व्याड़ी भी उपाध्यायजी को गुरुदक्षिणा देकर लौट आया और योगनन्द से कहने लगा कि हे भाई ! ईश्वर करे आप चिरकाल तक राज्य का सुख भोग करें किन्तु मुझे आज्ञा दीजिये मैं तप करने के हेतु कहीं जङ्गल में जाया चाहता हूं, मेरा चित्त विरक्त हो गया है । यह सुन योगनन्द ने गद्गदकण्ठ से कहा कि मित्र तुम मेरे राज्य में रहकर सब प्रकार का सुख करो मुझे छोड़कर बन में मत जाओ । व्याड़ी ने कहा, हे राजन् ! यह शरीर क्षणभङ्गुर है इस असारभूत देह में जो लिप्त रहता है वह बुद्धिमान् नहीं कहलाता । लक्ष्मी यथार्थ में मृगतृष्णा की नाईं अस्थाई है इसलिये मुझे क्षमा कीजिये मैं तपस्या के हेतु बन को अवश्य जाऊँगा । इतना कह वह भाई से विदा होकर किसी बन को न जाने कहां चला गया ।

इसके उपरान्त राजा योगनन्द भी अपनी राजधानी पाटलिपुत्र को चले आये

और हे काणभूति ! सकल सेना सहित मेरे साथ रहकर वे अनेक प्रकार के सुखों का रस लेने लगे। मैं भी अपने गुरु वर्षाचार्य्य, माता और पत्नी (उपकोशा) से आकर मिला और राज्यमन्त्री के कार्य्य को भली प्रकार निर्वाह करता हुआ लक्ष्मी-सम्पन्न हो सुख से वहीं रहने लगा। मेरे शरीर में जो सरस्वती बसती थी वह सदा मुझे बता दिया करती थी कि अमुक काम को इस भांति करना चाहिये और मैं भी वैसाही करता रहा, सो वह सदा मुझ से सन्तुष्ट कर मुझे धनधान्य से प्रसन्न रखती थी।

मेरे हिय की सरसुती जैसी देति बताय।
तैसोही कारज करौं जासों वह हरखाय॥

पांचवा तरङ्ग।

इतना सुना वररुचि ने पुनः कहना आरम्भ किया कि कुछ दिनों के उपरान्त राजा योगनन्द कामदेव के वश में हो गया, और उन्मत्त गजेन्द्र की नाईं ऐसा पागल हो उठा कि उसे भला बुरा कुछ भी न सूझता था। ठीकही है अचानचक प्राप्त भई हुई लक्ष्मी किसे उन्मत्त नहीं कर देती। मैंने विचारा कि राजा तो महा उन्मत्त हो गया है और उसके कार्य्य की चिन्ता करते २ मेरे धर्म्म में भी बाधा पड़ने लगी। अतएव मैंने सोचा कि उस शकटाल से कुछ सहायता लूं देखूं उसकी क्या दशा है। यदि वह विरुद्धाचरण भी करेगा तो मेरे रहते क्या हानि कर सकता है। ऐसा निश्चय कर मैंने राजा की आज्ञा ले उसे उस अन्धे कूयें से बाहर निकलवाया और उससे सब वृत्तान्त कहा। उसने भी मन में सोचा कि जब लों यह वररुचि वर्तमान है तब लों तो योगनन्द पर मेरा कोई वश नहीं चलता किन्तु समय की प्रतीक्षा करने और इसकी नौकरी कर लेने में क्या बुराई है। ऐसा विचार वह बुद्धिमान् शकटाल मेरी इच्छा से पुनः सहकारी मन्त्री के पद पर काम करने लगा।

एक समय की बात है कि राजा नन्दयोग कहीं नगर के बाहर गये थे कि उनकी दृष्टि एक ऐसे हाथ पर पड़ी जो पांचों अंगुली एकत्र किये हुआ गङ्गाजी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में हिला रहा था। उनने उसी क्षण मुझे बुलाकर पूछा कि यह क्या है और क्या कहता है ? मैंने उसी दम अपनी दो अँगुलियां एकत्र कर उस हिलते हुये हाथ की ओर दिखा दीं। यह देख वह हाथ लोप हो गया और राजा योगनन्द को बड़ा विस्मय हुआ, मुझ से पूछने लगा कि इसका भेद बतलाओ, मैंने कहा राजन् यह हाथ अपनी पांचो अंगुली मिलाकर यह पूछता था कि यदि पांच जन मिल जाँय तो जगत् में ऐसा कौन काम है जो असाध्य है ? मैंने अपनी दो अंगुलियां दिखाकर उसे उत्तर दे दिया कि हम दोही एकचित्त हो रहे हैं तौभी कुछ अ-साध्य नहीं है। ऐसा गूढ़ बचन सुन कर राजा प्रसन्न हो चुप रहे। शकटाल मेरी ऐसी विलक्षण बुद्धि देखकर चकित हो गया। दूसरे समय की बात है कि कोई अतिथि ब्राह्मण राजमहल के नीचे से जा रहा था, राजा ने देखा कि रानी झ-रोखे में से उसको देख रही है, ब्राह्मण विचारा भी साधारण भाव से ऊपर दे-खता हुआ चला जाता था। बस इतनीही बात से कुपित हो राजा ने उस ब्राह्मण के बध की आज्ञा दे दी, ठीकही विद्वानों ने कहा है कि ईर्षा को आंख नहीं होती। जब बधिक लोग उस ब्राह्मण को मारने के लिये बधभूमि को लिये जाते थे तो रास्ते में एक मरी हुई मछली उसे देख हँसने लगी। राजा ने यह जानतेही उसका मारा जाना रोक दिया और मुझे बुलाकर मछली के हँसने का कारण पूछा। मैंने उत्तर दिया कि मैं इसका पता लगाकर कहूंगा। ऐसा कह मैं वहां से चला आया और इसी चिन्ता में अकेला बैठा था कि इसका क्या उत्तर दूं कि मेरी शरीरस्था सरस्वती मुझसे बोली कि इस ताड़ के वृक्ष के ऊपर आज रात को तू छिप कर बैठ जा तुझे मछली के हँसने का कारण विदित हो जायगा। यह सुन मैं वहां जाकर रात्रि के समय ताड़ पर चढ़ बैठ गया, देखता क्या हूं कि एक महा भयावनी राक्षसी अपने पुत्रों के साथ उस ताड़ वृक्ष के नीचे आई। बच्चे उससे खाने को मांगने लगे तब उसने कहा कि ठहरो मैं सबेरे तुम्हें मनुष्य का मांस खाने को दूंगी, देती तो आजही, पर आज वह ब्राह्मण मारा नहीं गया। जब उन बच्चों ने पूछा कि आज वह क्यों नहीं मारा गया ? तो राक्षसी बोली कि आज उसे देखकर मरी हुई मछली हँस पड़ी। वह क्यों हँसी ? इस प्रकार पूछी जाने पर राक्षसी कहने लगी कि राजा के राजमहल से रानी तो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सब निकल गई हैं तमाम अन्तःपुर में पुरुष लोग स्त्रियों का रूप धर पैठे हैं, विचारे ब्राह्मण की जान निरापराधही मारी जाती है, यही सोच मछली हँसी थी, यह तुम लोग जान रक्खो कि राजा की जब बड़ी भारी मूर्खता होती है तब चराचर जीव मात्र के हृदय में उसकी अज्ञता और जड़ता पर हँसी आती है। जब वे सब चले गये तो मैं भी वृक्ष पर से उतर आया और सबेरे आते ही मैंने राजा से मछली के हँसने का कारण कह सुनाया। राजा ने जो अन्तःपुर में खोज कराई तो उन स्त्रीरूपधारी पुरुषों को पाया, तब तो उनने प्रसन्न हो ब्राह्मण को छोड़ दिया और मुझे बहुत मानने लग गया। राजा का ऐसा पागलपन देखते २ मैं परम दुःखित हो गया। एक दिन की बात है कि एक नवीन चित्रकार कहीं से आया और राजा के आज्ञानुसार उसने उनकी पटरानी महादेवी की तस्वीर लिखी। उसने ऐसा अपूर्व चित्र बनाया कि बस केवल जीव डालने की कसर शेष थी और सब ज्यों का त्यों उसने बना दिया। राजा ने प्रसन्न होकर उसे बहुत कुछ पुरस्कार दिया और उस चित्र को अपने शयनगृह में लटका दिया। एक दिन मैं जो उस शयनगृह में चला गया तो चित्र देखतेही मैंने मन में कहा कि यह तो साक्षात् हमारी रानी का चित्र है और सब लक्षणों को देखकर मैंने स्थिर किया कि इसके जांघ पर एक तिल अवश्य होना चाहिये सो मैंने लेखनी से जांघ पर तिल बनाकर उस तस्वीर को सम्पूर्ण लक्षण-संयुक्त कर दिया और बाहर चला आया। जब राजा वहां गये तो उन्होंने चित्र में तिल बना हुआ देखा, पहरेदारों से पूछा कि यह तिल इसमें किसने बनाया। सभों ने मेरा नाम बतला दिया। तब तो राजा सोचने लगा कि रानी के गुप्त स्थान का यह तिल मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं जानता, बररुचि ने कैसे जाना कि रानी के जांघ पर तिल है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह महल में चुपके से आता जाता है और तभी उसने स्त्रीरूपधारी पुरुषों का हाल भी जाना था। ऐसा विचारता हुआ राजा योगनन्द क्रोध से आग बबूला हो गया, सचही है मूर्खों के साथ भलाई करते भी बुराई उठानी पड़ती है। उसने चुपके से शकटाल को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम बररुचि का सिर काट लाओ क्योंकि वह रानी के साथ फँसा हुआ है। शकटाल यह कह कर बाहर चला आया कि "जो महाराज की आज्ञा" और विचारने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लगा कि मुझ में वररुचि के मारने की शक्ति नहीं है, दूसरी बात यह है कि उसकी दिव्य बुद्धि है, और वह जाति का ब्राह्मण है तथाच सब से भारी बात यह है कि उसने आपत्ति से मेरा उद्धार किया है, अतएव उत्तम होगा कि मैं इसे चुपके छिपा रक्खूं—ऐसा निश्चय कर शकटाल ने उस अकारण-क्रोधी राजा से जाकर झूठेही कह दिया कि मैंने वररुचि को मरवा दिया, और फिर मुझ से बोला कि हे मित्र ! मैं किसी बकरे सकरे का रुधिर उसे दिखा दूंगा आप मेरे घर में छिप कर रहिये और जब कभी यह क्रोधी राजा मुझ पर बिगड़ेगा तो आप मेरी रक्षा कीजियेगा। इस प्रकार शकटाल का बचन मान मैं छिपकर उसके घर में रहने लगा और उसने भी मेरा बध किया जाना प्रसिद्ध करने के लिये रात के समय किसी बकरे को मार राजा को रुधिर दिखा दिया। इस प्रकार उसकी चातुरी देख प्रसन्न हो मैंने कहा हे मित्र ! केवल आपही मन्त्री शब्द के योग्य हैं क्योंकि आपने बहुत उचित किया जो मेरे मारने की नीयत न की। जो सच पूछिये तो मुझे कोई भी नहीं मार सकता, क्योंकि एक राक्षस मेरा मित्र है जो स्मरण करते मात्र अभी आ सकता है और सारे संसार को खा जा सकता है। मैं तो इस राजा को ही मार डालता परन्तु यह इन्द्रदत्त नाम मेरा सखा है इसलिये मैं इसे छोड़े जाता हूं। यह सुन शकटाल ने कहा कि तनिक मैं भी तो देखूं कि वह राक्षस कैसा है। ज्योंही मैंने ध्यान किया कि वह राक्षस आ खड़ा हुआ और मैंने उसे शकटाल को दिखा दिया उसे देखतेही वह डर कर विस्मित हो गया। जब राक्षस अन्तर्धान हो गया तो शकटाल ने पूछा कि इस राक्षस से आप की मैत्री क्योंकर हुई ? मैंने कहा कि पूर्व समय की बात है कि इस नगर में जो कोई कोतवाल होकर नगर की रक्षा के लिये रात को "गश्त" करने निकलता था वही सबेरे मरा पाया जाता था। यह दशा देख राजा ने मुझे कोतवाली के पद पर नियत किया, मैं भी नियमानुसार जो नगर भ्रमण के लिये रात्रि के समय निकला तो यही राक्षस मुझे एक स्थान पर मिला और पूछने लगा कि "बता इस नगर में सब से अधिक सुन्दर स्त्री कौन है ?" मैंने हँसकर उत्तर दिया कि "अरे मूढ़ जो जिसके हृदय में भा जाय वही उसके लिये सब से अधिक सुन्दरी है"। यह सुन राक्षस ने कहा कि बस तूही एक ऐसा मिला जिसने मुझे जीत

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिया। मैं सारे देश में घूमता फिरता यही प्रश्न करता हूं और जो मेरे प्रश्न का ठीक उत्तर नहीं देता मैं उसे मार डालता हूं सो तू उचित उत्तर देकर बध से बच गया है। अब एक बात सुन, मैं प्रसन्न होकर तुझसे यह प्रतिज्ञा करता हूं कि तू आज से मेरा मित्र हुआ जब कभी तू मुझे स्मरण करेगा मैं तेरे पास आ उपस्थित होऊंगा और जो तू कहेगा सोई पूरा कर दूंगा।" यह सुन मैं राजी खुशी लौट आया और मुझे जीता जागता देख नगरनिवासियों को बड़ा आश्चर्य हुआ। अस्तु इस भांति यह राक्षस मेरा मित्र हो गया। ऐसा कहकर जब मैं चुप हो गया तो पुनः शकटाल से प्रार्थना किये जाने पर मैंने ध्यान को बांधा तो साक्षात् श्रीगङ्गाजी आन उपस्थित हुईं और मैंने शकटाल को भगवती का दर्शन करा दिया। मैंने देवी को स्तुति से सन्तुष्ट किया और उनके तिरोधान होने पर शकटाल आश्चर्य और प्रीति से मेरे पैरों पर गिर पड़ा और उसी दिन से मेरा परम सहायक हो गया।

एक समय की बात है कि मैं एकान्त में रहते २ अत्यन्त खिन्न हो गया और दुःखित हृदय से अकेला बैठा था कि मन्त्री शकटाल ने मुझे उदास देख कर कहा कि हे मित्र! क्यों सोच करते हैं आपतो सर्वज्ञ हैं वृथा शरीर क्यों गलाते हैं क्या आप नहीं जानते कि राजाओं की बुद्धि क्षण क्षण पर बदलती रहती है? सो शीघ्रही आपकी छुट्टी हो जायगी। सुनिये मैं आपको एक कथा सुनाता हूं।

इस नगर में पहिले कोई आदित्यवर्म्मा नाम राजा हो गये हैं उनके मन्त्री का नाम शिववर्म्मा था जो अत्यन्तही प्रवीण और बुद्धिमान् था। उस राजा की एक रानी को एक बेर गर्भ रहा, यह सुन राजा ने पहरेवालों से पूछा कि मैं तो दो वर्ष से इस रानी के अन्तःपुर में गयाही नहीं बतलाओ इसे गर्भ कैसे हुआ? उन लोगों ने कहा कि महाराज यहां तो आपके अतिरिक्त एक मच्छड़ की भी पैठ नहीं है, दूसरे पुरुष की कौन कहे, किन्तु हां आपके मन्त्री महाशय शिववर्म्मा जी के लिये कोई रोकटोक नहीं है क्योंकि आपही की ऐसी आज्ञा हो चुकी थी। यह सुन राजा ने सोचा कि यह काम अवश्य शिववर्म्मा का ही है किन्तु प्रकाश में यदि वह मारा जायगा तो मेरे माथे बड़ा अपवाद लगेगा। ऐसा विचार उसने शिववर्म्मा को किसी काम के बहाने से अपने मित्र राजा भोगवर्म्मा के पास एक दू-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सरे देश में भेजा और इधर एक पत्र चुपके से लिखकर एक पत्रवाहक को भी राजा भोगवर्म्मा के पास भेज दिया, जिसमें राजा ने लिखा था कि जब शिववर्म्मा आप के पास पहुँचे तो उसे मार डालना और हमें सन्देश भेज देना। जब मन्त्री शिववर्म्मा को गये एक सप्ताह बीत गया तो इधर रानी ने यह हाल सुना, सो अपने यार के साथ जो स्त्री रूपही में महल में आया जाया करता था निकल भागी, किन्तु मार्ग में ही वे दोनों पकड़ लिये गये और सब भेद खुल गया। जब राजा आदित्यवर्म्मा को यह हाल जान पड़ा तो वह अत्यन्त दु:खी हुआ कि मैंने निरापराधही अपने परम बुद्धिमान् मन्त्री का बध करवा डाला। इतने में शिववर्म्मा भी उधर राजा भोगवर्म्मा के पास पहुँचा और पत्रवाहक भी राजा का पत्र लिये उपस्थित हुआ। राजा का पत्र बाँच कर भोगवर्म्मा ने विधिवश शिववर्म्मा से कह दिया कि इसमें तो आपके बध की आज्ञा है। परम बुद्धिमान् शिववर्म्मा मन्त्री ने कहा कि ठीक है आप मुझे शीघ्र मार डालिये नहीं तो मैं आपही अपने को मार लूंगा। यह सुन भोगवर्म्मा को परम आश्चर्य हुआ, और उनने शिववर्म्मा से पूछा कि आप स्वयं अपनी मृत्यु क्यों चाहते हैं?। उनने कहा कि हे राजन् बात यह है कि जिस देश में मैं मारा जाऊँगा वहां १२ वर्ष तक मेघवृष्टि न होगी। यह सुन राजा भोगवर्म्मा ने निज मन्त्रियों के साथ सलाह की कि अब क्या करना चाहिये। सभों की मन्त्रणा से यह निश्चय हुआ कि वह राजा बड़ा दुष्ट है, उसने इस बहाने से हमलोगों का तथा हमारे देश का नाश करना विचारा है। क्या उसके देश में बधिक न थे कि इसे वहां मरवा डालता? इसलिये इस मन्त्री को न मारना चाहिये प्रत्युत ऐसी रक्षा करनी चाहिये कि कहीं यह आत्मघात न कर लेवे। ऐसा विचार, राजा भोगवर्म्मा ने उस मन्त्री को पहरेदारों की रक्षा में कर उसे राजा आदित्यवर्म्मा के पास यह कहकर लौटा दिया कि इसे आपही मारिये हमलोग सब भेद समझ गये। इस प्रकार वह मन्त्री अपनी चतुराई से जीता जागता पुन: अपने देश में आ गया, और इधर राजा ने भी उसे छोड़ दिया। इसीलिये कहता हूं कि धीरज धरिये, धर्म की सदा जय है। हे वररुचि! आपकी छुट्टी ईश्वर चाहेगा तो कुछ दिनों में हो जायगी और राजा योगनन्द अपने किये पर अन्त एक दिन पछतावेगा। इस प्रकार शकटाल ने जब मुझे आश्वासन दिया तो मैं भी अवसर की प्रतीक्षा करता हुआ उसके घरमें छिपकर पुन: रहने लगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक समय की बात है, मित्र काणभूति ! कि राजा योगनन्द का पुत्र कुमार हिरण्यगुप्त मृगया के निमित्त जङ्गल में गया, और एक हरिण के पीछे घोड़ा फेंकता हुआ दूर घोर बन में अकेला ही जा पड़ा। सूर्य्य-भगवान् अस्ताचल को पधारे और चारो ओर अन्धकार छा गया सो रात विताने के लिये राजकुमार एक ऊँचे वृक्ष पर चढ़ बैठ गया। इतने में किसी सिंह ने भालू को दौड़ाया, वह भी भय के मारे भागता हुआ दैववशात् उसी वृक्ष पर आ चढ़ा। राजकुमार उसे देखतेही काँपने लगा। भालू ने मानुषी भाषा में उससे कहा कि कुमार! मतडरो मैं तुम्हें नहीं मारूँगा, तुम मेरे मित्र हो क्योंकि हम दोनों ने इस सिंह के भय से एकही वृक्ष की शरण ली है। सो पहिले दो पहर तक तुम सोओ मैं पहरा देता हूं और आधी रात के उपरान्त जब मैं सोऊँगा तो तुम पहरा देना। भालू का ऐसा बचन सुन राजकुमार निश्चिन्त हो सो रहा, और भालू उसके सिरहाने बैठ पहरा देने लगा। जब राजकुमार घोर निद्रा में अचेत हो गया तो नीचे से सिंह ने कहा कि हे भालू तू इस मनुष्य को नीचे फेंक दे मैं भूखा हूं इसे खाकर अपना पेट भर चला जाऊँ, किन्तु भालू ने उत्तर दिया कि अरे पापी मैं कदापि मित्रघात न करूँगा, तू योंही भूखा चला जा। सिंह यह सुन वहीं बैठ रहा; जब आधी रात हुई राजकुमार जागा, भालू ने कहा कि अब तुम्हारी पारी है, मैं सोता हूं और तुम पहरा देओ। इतना कह रीछ तो सो गया और कुमार पहरा देने लगा। सिंह ने कहा कि हे मनुष्य! जब तू सो गया था तो यह भालू कहता था कि जब मैं सोकर उठूंगा तो इस आदमी को खा जाऊँगा अतएव तू इसे नीचे ढकेल दे मैं इसे खाकर अपने घर चला जाऊँ। यह सुन कुमार ने सिंह को प्रसन्न करने तथा अपने को बचाने के निमित्त उस भालू को ढकेल दिया, किन्तु भाग्यवश वह नीचे न गिरकर जागतेही एक डाल से लिपट गया। उसने झट ऊपर आकर शाप दिया कि, "हे मित्रद्रोहिन्! जा तू उन्मत्त हो जा, और तबलग उन्मत्त रह जबलग तेरा यह वृत्तान्त कोई तुझे न सुनावै—मैं तो तुझे अभी खा जाता किन्तु क्या करूँ मैं तुझे अपना मित्र कह चुका हूँ।" बस वह राजकुमार घर आतेही उन्मत्त हो गया, राजा योगनन्द उसकी वैसी दशा देख परम दुःखित हुआ। फिर कहने लगा! कि हाय! यदि आज वररुचि होता तो वह अवश्य बतला

देता कि यह क्योंकर पागल हुआ और इसकी क्या औषधि है, धिक्कार है मुझे जो मैंने शीघ्रता कर उसे मरवा डाला। यह सुन शकटाल मनमें विचारने लगा कि वररुचि के प्रकाश करने का यह अच्छा अवसर है। ऐसे समय में उसे प्रकाश करने से राजा मुझ पर क्रोध न करेगा प्रत्युत प्रसन्न होगा और उसको यह विश्वास होगा कि यह सदा मेरी भलाई चाहता है। ऐसा विचार उसने हाथ जोड़ प्रार्थना की कि हे जीवनदाता! यदि मुझे अभयदान दिया जाय तो मैं कुछ निवेदन करूँ। राजा ने कहा "तू बेखटके कह, क्या कहा चाहता है, मैंने तुझे जीवदान दिया"। तब तो शकटाल ने अत्यन्त नम्रता से करबद्ध हो प्रार्थना की कि हे राजन्! आप कुछ खेद न करिये वररुचि अब लों जीता है। योगनन्द ने प्रसन्न होकर आज्ञा दी कि अच्छा उसे शीघ्र उपस्थित कर—तब तो शकटाल मुझे योगनन्द के सन्मुख ले गया, उसने देखतेही मुझे सादर प्रणाम किया और मेरे आशीर्वाद देने पर मुझे राजसिंहासन के समीपही आसन दिया गया। लोग राजकुमार को मेरे सन्मुख ले आये और पूछे जाने पर मैंने उसी सरस्वती देवी के प्रसाद से कह दिया कि हे राजन्! इसने मित्रद्रोह किया है। फिर इसके उपरान्त मैंने सारी कथा आद्यन्त कह सुनाई कि क्योंकर जङ्गल में राजकुमार की सिंह और भालू से भेंट हुई थी और क्योंकर इसने उस भालू के साथ धोखा किया था। इतना सुनतेही राजकुमार का वह शाप छूट गया और वह मेरी स्तुति करने लगा। राजा योगनन्द ने मुझसे पूछा कि यह सब वृत्तान्त तुमने कैसे जाना?। मैंने निवेदन किया कि राजन् लक्षण और अनुमान से मैंने सब जान लिया क्योंकि प्रज्ञावान् लोगों की बुद्धि, प्रतिभा से सब बातें जान लेती है। यह सुन राजा चुप रहा, मैं बिना सत्कार पायेही अनादृत हो घर चला आया। इतनेही में एक सेवक दौड़ा हुआ आया और मेरे साम्हने रोने लगा। मैंने विस्मित होकर पूछा कि तू क्यों रोता है? उसने कहा कि आपके ससुर उपवर्षजी आये हैं, वे महादुःखद वृत्तान्त सुनाते हैं। मैंने उन्हें सन्मुख बुलाकर पूछा कि क्या हाल हैं; तो वे कहने लगे कि जब उपकोशा ने यह सुना कि राजा ने तुम्हारा बध करवा दिया तो वह बलती हुई अग्नि में कूदकर जल मरी और तुम्हारी माता का हृदय शोक से फट गया। इतना सुनतेही इस नवीन दुःख से मैं बेसुध होकर कटे हुये वृक्ष की नाईं भूमि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर गिर पड़ा और पागलों की नाईं रोने लगा, सत्यही है प्रियबन्धुओं की वियोग-रूपी शोकाग्नि किसे नहीं जलाती ! फिर उपाध्याय वर्षाचार्य्य भी आ गये और मुझे यों समझाने लगे कि हे पुत्र ! इस समग्र असार संसार में केवल एक अनित्यताही नित्य है सो इस ईश्वरी माया को जानकर भी तुम क्यों मोह को प्राप्त होते हो। उनके ऐसा समझाने पर मुझे कुछ कुछ धीरज बँधने लगा, फिर दो चार दिनों के बीतने पर विरक्त हो जाने के कारण मैं समग्र बन्धनों को तोड़ और शान्ति को हृदय में धारण कर तपोवन को चला आया। कुछ दिनों के उपरान्त उसी तपोवन में एक ब्राह्मण श्रीअयोध्याजी से आया और मेरीही कुटी में ठहरा, उससे मैंने पूछा कि राजा योगनन्द का अब क्या हालचाल है और राजकाज क्योंकर चलता है ?। उसने शोक के साथ उत्तर दिया कि सुनिये, जब आप वहां से चले आये तो शकटाल पूर्ण रीति से मन्त्री के पद पर स्थिर हो गया। वह रात दिन इसी चिन्ता में लगा रहता था कि कौन सी ऐसी युक्ति निकालूं कि योगनन्द का बध किया जाय। उसने एक दिन देखा कि जङ्गल की पगडण्डी में एक ब्राह्मण कुशा की जड़ खोदकर उसमें चूने का पानी डाल रहा है। शकटाल ने उससे पूछा कि आप यह क्या कर रहे हैं। उसने कहा कि इस तीव्र कुशा ने मेरा पैर काट डाला है सो मैं इसकी जड़ खोदकर चूने का पानी इस कारण डालता हूं कि यह पूर्णतया नाश हो जाय। यह सुन मन्त्री ने विचारा कि बस ऐसे क्रूर और क्रोधी ब्राह्मण से मेरा काम निकलेगा। फिर उसका नाम पूछ कर उसने कहा कि हे ब्राह्मणदेवता आप मेरे साथ चलिये मैं आपको राजा योगनन्द के गृह में त्रयोदशीश्राद्ध दूंगा। वहां आपको एक लक्ष सुवर्णमुद्रा दक्षिणा में मिलेगी और आप सबके ऊपर रहेंगे।" ऐसा कह शकटाल उस चाणक्य नाम ब्राह्मण को अपने घर ले आया और श्राद्धवाले दिन राजा के सम्मुख ले जाकर उनकी आज्ञा से उसे समस्त श्राद्धकार्य्य में शिरोमणि नियत किया। बस शकटाल सबसे आगे हो श्राद्धकार्य्य करने लगा। वहीं पर सुबन्धु नाम एक ब्राह्मण रहता था। उसकी इच्छा थी कि सबके ऊपर मैं नियत किया जाऊँ, सो शकटाल ने जाकर राजा से उसका वृत्तान्त कहा। राजा ने आज्ञा दी "हां हां ठीक है सुबन्धु के समान कोई सुयोग्य नहीं है इसी को शिरोमणि बनाओ"। शकटाल ने चाणक्य के सम्मुख आकर हाथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जोड़ नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि हे ब्रह्मदेव ! मेरा इसमें कोई अपराध नहीं है, राजा की आज्ञाही ऐसी है । यह सुनतेही उस क्रोधी चाणक्य ब्राह्मण ने जिसका तेज अग्निपुञ्ज के समान था अपनी चोटिया खोल यह प्रतिज्ञा की कि मैं सात दिन के अन्दर इस नन्द राजा को नाश करूँगा तब अपनी चोटिया बाँधूंगा। योगनन्द ने जब ऐसा सुना तो वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और उसके भय से चाणक्य ब्राह्मण भागा किन्तु मन्त्री ने उसे अपने घरमें छिपाकर रख छोड़ा और उसे पुरश्चरण करने का सब सामान ला दिया । चाणक्य ने वहीं रहकर पुरश्चरण करना आरम्भ किया, जिसके बल से राजा योगनन्द को बड़ा भयानक ज्वर चढ़ा और सातवें दिन वह काल के गाल में चला गया। इस प्रकार योगनन्द को मरवा कर शकटाल ने पूर्व नन्द के पुत्र चन्द्रगुप्त को राज्य पर स्थापन किया और गुरु बृहस्पति के समान बुद्धि रखनेवाले उस चाणक्य को उनका मन्त्री बना, अपना बदला योगनन्द से चुका मान, पुत्रों के मृत्यु से खिन्न हो वह न जाने किस महा बन को चला गया । इस प्रकार उस ब्राह्मण के मुख से योगनन्द तथा शकटाल का अन्तिम परिणाम सुन हे मित्र काणभूति ! मैं संसार को चञ्चल देख परम दुःखित हुआ । उसी खेद से खिन्न हो मैं श्रीविन्ध्यवासिनी देवी का दर्शन करने यहां चला आया और उनकी कृपा से तुम्हें देख मुझे अपने पूर्व जन्म की कथा हे सखे ! स्मरण हो गई, और दिव्य विज्ञान को पाकर मैंने तुम्हें वह महाकथा सुनाई । अब मेरा वह शाप क्षीण हो गया, सो मैं इस शरीर को अब परित्याग करूँगा । तुम भी यहां तबतक रहो जबतक कि गुणाढ्य नामा विप्र तीन भाषाओं का परित्याग करनेवाला शिष्यों के सहित तुम्हारे पास न आवे । यह वही माल्यवान् नामक गणोत्तम है जो मेरा पक्षपात करने के कारण श्रीपार्वतीजी से शाप पाकर मनुष्यदेह में अवतरा है । श्रीमहेश्वरजी की कही हुई यह महाकथा तुम उसे सुनाना, तब तुम्हारी और उसकी दोनों की मुक्ति शाप से हो जायगी ।

इस प्रकार वररुचि काणभूति को समझाकर बदरिकाश्रम की ओर निजदेह को परित्याग करने के निमित्त चला गया । मार्ग में जाती समय उसने गङ्गातट के किनारे देखा कि एक मुनि ऐसे बैठे हैं जो केवल शागही खाकर रहते हैं। वररुचि के साम्हनेही कुशा लगने से उस मुनि की अँगुली में रुधिर निकल आया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जिसे अपनी शक्ति से वररुचि ने उस मुनि के अहङ्कार की परीक्षा करने के निमित्त हरे रङ्ग का कर डाला। यह देख मुनि को अहङ्कार हो गया कि मैं तो सिद्ध हो गया, मैंने यहां तक साग खाया कि मेरा रुधिर पर्यन्त हरा हो गया है। तब वररुचि ने उससे हँसकर कहा कि मैंने केवल परीक्षा के निमित्त तेरा रुधिर शाग के रस सा कर दिया है, किन्तु हे मुनि! तुमने अभी तक अहङ्कार परित्याग नहीं किया। ज्ञानमार्ग में अहङ्कार ही अत्यन्त कठिन रोक है और चाहे सैकड़ों व्रत करो बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं होती। मोक्ष चाहनेवाले लोगों के चित्त को यह क्षय होनेवाला स्वर्ग नहीं लुभाता, अतएव हे मुनि! अहङ्कार को छोड़कर ज्ञान पाने का यत्न करो। इस प्रकार उस मुनि को समझाकर और उसके द्वारा स्तुति किये जाने पर वह वररुचि सीधे बदरिकाश्रम को चला गया।

वहां पहुँचकर वह इस मानुषी देह को परित्याग करने की इच्छा से अत्यन्त भक्तिपूर्वक श्रीदेवीजी के शरणापन्न हुआ। श्रीभगवती ने उसे दर्शन देकर आज्ञा दी कि तू स्वयं अग्नि बाल कर उसमें प्रवेश कर। इस प्रकार उधर वररुचि अपने इस शरीर को भस्म कर निज दिव्य गति को प्राप्त हुआ और इधर काणभूति गुणाढ्य के आने के आसरे से जङ्गल में रहने लगा।

यों वररुचि तनु त्यागि कै गमन कियो सुरधाम।
आगम लखत गुणाढ्य को काणभूति सब याम॥

छठवां तरङ्ग।

इधर मानुषी शरीर धारण किये हुआ माल्यवान् भी जिसका नाम गुणाढ्य विख्यात था, राजा सातवाहन की सेवा छोड़ दुःखितचित्त हो श्रीभगवती विन्ध्यवासिनी के दर्शनों को वन में घूमता हुआ आ पहुँचा। यह वही गुणाढ्य है जिसने राजा सातवाहन के सम्मुख अपनी प्रतिज्ञा के कारण संस्कृत इत्यादि तीन भाषा परित्याग कर दी थीं। देवीजी की आज्ञा पाकर वह भी काणभूति से मिलने के लिये आया और उसे देखतेही इसे अपने पूर्व जन्म की कथा स्मरण हो गई और यह मानो स्वप्न से जाग उठा। सो तीनों भाषा से विलक्षण पैशाची भाषा में काण-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भूति को अपना नाम बतलाकर वह यों कहने लगा कि हे सखे! पुष्पदन्त से जो तुमने दिव्य महाकथा सुनी है सो मुझे शीघ्र सुनाओ जिसमें हमारी तुम्हारी दोनों की मुक्ति हो।

यह सुन परम प्रसन्न हो काणभूति उसे प्रणाम कर कहने लगा कि हे प्रभो! आइये मैं तो आपही के आसरे में बैठा हूं। मैं उस कथा को अभी सुनाता हूं किन्तु मुझे बड़ा कौतुक हो रहा है कि आप हम पिशाचों की भाषा कैसे जानते हैं, सो अनुग्रहपूर्वक अपना जीवनवृत्तान्त जन्म से लेकर आज तक का मुझे सुनाइये। काणभूति की ऐसी प्रार्थना सुन गुणाढ्य कहने लगा कि प्रतिष्ठान में सुप्रतिष्ठित नामक एक नगर है वहां सोमशर्म्मा नामक एक ब्राह्मण रहते थे। हे मित्र! उनके दो पुत्र थे, एक का नाम वत्स और दूसरे का नाम गुल्मक था, उन्हें एक कन्या भी थी जिसका नाम श्रुतार्था था। कुछ दिनों उपरान्त उन ब्राह्मणदेवता का स्वर्गवास भार्य्या सहित हो गया और वे दोनों पुत्र अपनी बहिन का पालन करते हुये अनाथ रह गये। ऐसा हुआ कि यौवन प्राप्त होने पर वह श्रुतार्था गर्भवती हुई तब तो दोनों भाइयों को एक दूसरे पर सन्देह होने लगा। उन्होंने विचारा कि यहां तो किसी तीसरे पुरुष की गन्ध तक नहीं है फिर यह गर्भ होने की बात कैसी? श्रुतार्था ने भाइयों के मन की बात ताड़ ली सो वह उनसे कहने लगी कि हे भाइयो! आप लोग एक दूसरे पर पापशङ्का मत करो सुनो मैं तुम्हें यथार्थ हाल सुनाती हूं कि नागराज वासुकी के भतीजे का नाम कुमार कीर्तिसेन है उन्होंने मुझे एक दिन जब कि मैं सखी के साथ स्नान करने जाती थी देख पाया, सो कामव्यथा से अत्यन्त पीड़ित हो वे मेरे पास आये और अपने नाम तथा कुल का परिचय दे मुझसे गान्धर्व-विवाह की इच्छा प्रगट की। मैं भी इस पर सम्मत हो गई और हम दोनों का विवाह हो गया सो मेरा यह गर्भ ब्राह्मण के बीज से है। बहिन का ऐसा भाषण सुन उन दोनों भाइयों ने कहा कि तेरी इस बात का कौन विश्वास करेगा। इतना सुन उसने एकान्त में उन नागकुमार का स्मरण किया जो झट आन उपस्थित हुये और वत्स तथा गुल्मक से कहने लगे कि आप लोगों की यह बहिन पूर्व जन्म की अप्सरा है, शाप के कारण इसका यहां जन्म हुआ है और आप दोनों भी शापहीवश यहां जन्मे हैं। आपकी बहिन से मेरा वि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वाह हुआ है सो इसे निस्सन्देह पुत्ररत्न उत्पन्न होगा तब आप लोगों की तथा इसकी भी शाप से मुक्ति होगी। इतना कहकर वह नागकुमार तो अन्तर्धान हो गये और कुछ दिनों के उपरान्त श्रुतार्था के कोख से जिस पुत्र का जन्म हुआ वह मैंही हूं। मेरे जन्मतेही आकाशवाणी हुई कि यह बालक महादेवजी के गण का अवतार हुआ है, इस ब्राह्मणपुत्र का नाम गुणाढ्य रखना। तब तो मेरी माता तथा दोनों मामाओं का शाप क्षीण हो गया और वे लोग अपना २ देह परित्याग कर स्वर्गलोग को चले गये, मैं अकेला रह गया और अत्यन्त अधीर हो उठा किन्तु कुछ दिनों में उस शोक को परित्याग कर मैं यद्यपि अभी बालकही था तथापि विद्याप्राप्ति के निमित्त दक्षिणदेश को चला गया। कुछ दिनों में वहां पहुँच कर मैंने सब विद्याओं को प्राप्त किया और निज गुणों को दिखाता हुआ अपने देश को लौट आया। चिरकाल के उपरान्त जो मैं उस सुप्रतिष्ठित नगर में शिष्यों के सहित आया तो मुझे वहां की शोभा अपूर्वही सी प्रतीत हुई। देखता क्या हूं कि कहीं छन्द गानेवाले विधिपूर्वक सामवेद गा रहे हैं, कहीं वेदों के निर्णय के लिये ब्राह्मणों में शास्त्रार्थ हो रहा है। एक कहता है कि इस संसार में जो जूआ खेलने जानता है उसी के हाथ में धन रहता है। दूसरा कहता है कि व्यापार के आगे जूआ सूआ क्या तुच्छ पदार्थ है। योंही सब अपने २ विषय की प्रशंसा और चर्चा कर रहे थे। एक बनिया कहने लगा कि अजी कोई धनवान् होकर अधिक धनोपार्जन कर ले तो उसने क्या आश्चर्य किया, मैंने तो विना धनही लक्ष्मी प्राप्त की है। जब मैं गर्भही में था तो मेरे पिता मर गये और मेरे पापी गोत्रवालों ने माता का सर्वस्व धन हर लिया था। उस समय वह विचारी उन लोगों के डर के मारे भागकर निज गर्भस्थ बालक की रक्षा करती हुई निज पिता के मित्र कुमारदत्त के घर में रहने लगी। जब उस साध्वी से मेरा जन्म हुआ तो वह बड़े बड़े कष्ट और परिश्रम से मेरा पालन पोषण करने लगी। देने को तो उसके पास कुछ थाही नहीं सो उस विचारी ने उपाध्यायजी के हाथ पैर जोड़ कुछ साधारण लिखना पढ़ना और गणित करना मुझे सिखला दिया था। फिर माता ने मुझसे कहा कि हे वत्स! तू वणिक्पुत्र है सो वाणिज्य कर, सुन, इस देश में विशाखिल नाम एक बड़ा धनाढ्य बनिया रहता है, वह दरिद्र कुलीनों के नाम बही खाते में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिख रुपया उधार देता है सो तू भी उसके पास जाकर रुपया उधार माँग ला। इतना सुन मैं माता से विदा हो उस वणिक् के पास पहुँचा, देखा कि वह एक दूसरे वणिक्पुत्र को डाँट कर यों कह रहा है कि तुझे कुछ भी बुद्धि नहीं है। जो चतुर और कुशल होता है वह इस मरे हुये चूहे से भी जो तेरे साम्हने पड़ा है बाजार में दो पैसे पैदा कर सकता है और तुझ मूढ़ को मैंने कई बेर अनेक दीनारें (स्वर्णमुद्रा) दीं सो उनकी वृद्धि करना तो दूर रहे तू उनकी रक्षा भी न कर सका। ऐसा सुन, मैंने उस मरे हुये चूहे को उठा लिया और सहसा उसी विशाखिल बनिये से कहा कि यह चूहा आप मेरे नाम लिखिये, सो उसने लिख लिया, और मैं भी उसकी बही पर हस्ताक्षर कर चूहे को उठा चला आया। मेरा ऐसा साहस देख वह बनिया हँसने लगा। मैं जो उस चूहे को लेकर चला तो देखा कि किसी बनिये को भूखी बिल्ली म्यांव म्यांव कर रही है। मेरे हाथ में चूहा देख वह उछलने कूदने लगी, सो उस बनिये ने मुझे दो अँजुली चना देकर वह चूहा अपनी बिल्ली के लिये मोल ले लिया। उन चनों को भुँजवा कर और एक घड़ा पानी ले. मैं नगर के बाहर जाकर शीतलछाया में एक चौराहे पर बैठ गया। उस मार्ग से लकड़ी बेचनेवाले प्रायः आया जाया करते थे, सो जब वे अपना बोझा वहां रख कर थकावट दूर करने को बैठ जाते तो मैं उन्हें वह ठंडा पानी और भूना चना देता; वे भी प्रसन्न होकर मुझे दो दो लकड़ी देने लगे, उन लकड़ियों को लेकर मैंने बाजार में बेच डाला। योंही पुनः चने खरीद कर मैं रोज वहां जा बैठता और चना खिला तथा ठंढा पानी पिला नित्यही प्रत्येक लकड़हारे से दो दो लकड़ी लेने और बटोरने लगा। धीरे धीरे जब कुछ धन एकत्र हो गया तो मैं वही दाम देकर उन लकड़हारों की कुल लकड़ियां तीन दिन तक बराबर खरीदता रहा। अकस्मात् पानी जो बरसने लगा तो लकड़ी बहुत महँगी हो गई, मैंने अपनी सब लकड़ी खूब कड़े दामों पर बेच डाली और कई रुपये मेरे पास हो गये। उन्हीं रुपयों से मैं हेरफेर करने लगा, होते होते मेरे पास बहुत सा धन हो गया। तब तो मैंने सोने का एक चूहा बनवाकर उस विशाखिल बनिये की भेंट की। मेरी इस बुद्धिमानी को देख वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने अपनी पुत्री का विवाह मेरे साथ कर दिया। इसी कारण संसार

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में मेरा नाम 'मूसा साहु, प्रसिद्ध हो गया। सो इस प्रकार बिना एक कौड़ी लगाये मैंने यह लक्ष्मी प्राप्त की है। ऐसा सुन वे सब बनिये बड़े आश्चर्य से उसका मुँह देखने लगे। इतनेही में एक सामवेदी ब्राह्मण जिसने कहीं से आठ मासा सोना दान में पाया था, वहां आ निकला। उससे एक बनिये ने कहा कि तू जाति से ब्राह्मण है, सो भोजन तो तुझे मिलही जाता है, अब इस सोने से विदग्धता (चालाकी) सीख। जब उस मूढ़ ने पूछा कि यह मुझे कौन सिखलावेगा? तो उस बनिये ने कहा कि तू चतुरिका नाम वेश्या के घर चला जा। "वहां जाकर क्या करना होगा?" जब उस मूर्ख ने ऐसा पूछा तो बनिये ने कहा कि कुछ नहीं यह स्वर्ण उसे दे देना और साम सुनाकर पहिले उसे प्रसन्न करना फिर कहना कि मुझे कुछ चतुरई सिखा दो। इतना सुन वह सामवेदी ब्राह्मण चतुरिका वेश्या के घर पहुँचा और जाकर वहां बैठ गया। चतुरिका ने भी आइये आइये कहके उसका शिष्टाचार किया। फिर स्वर्ण उसे देकर कहने लगा कि मुझे लोकयात्रा (चतुरई) सिखा दो। वहां जो और लोग बैठे थे वे यह देख हँसने लगे, सो वह कुछ सोच विचार अपने एक हाथ को गौ के कान सदृश बना और उसीकी केहुनी को दूसरे हाथपर टेक तारस्वर से सामवेद गाने लगा। सब के सबजो वहां बैठे थे यह देख खूब ठट्ठा उड़ाने लगे और बोले कि यह सियार कहां से आ फँसा, शीघ्रही इसे गर्दनिया दो। उसने समझा कि अब ये मेरा सिर काट लेंगे सो यह कहता हुआ भागा कि मैंने लोकयात्रा सीख ली। फिर उस बनिये के पास आ जिसने इसे चतुरिका के पास भेजा था सब वृत्तान्त सुना गया। उसने कहा अरे मूढ़! मैंने तुझसे सामवेद गाने को नहीं कहा था मैंने तो कहा था कि उसे साम सुनाना अर्थात् उससे लल्लोपत्तो की बातें करना। भला उस विचारे वेदपाठी ब्राह्मण को इन सांसारिक बातों की क्या खबर? उसका वृत्तान्त सुन वह बनिया हँसता हुआ उस वेश्या के यहां गया और कहने लगा कि यह दो पैरवाला पशु है इस विचारे का वह सोना तू इसे दे दे। उसने भी हँसते हुये वह सोना दे दिया और वह मूढ़ ब्राह्मण अपना नया जन्म मान घर चला आया। इस प्रकार के कौतुक नगर में देखता हुआ मैं राजा के राजभवन पर पहुँचा, जो साक्षात् इन्द्रदेव का महल जान पड़ता था। शिष्योंद्वारा सूचना देकर मैं आज्ञा पा अन्दर गया; देखता क्या हूं कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजा सातवाहन एक ऊँचे सिंहासन पर शोभायमान हैं और शर्ववर्मा इत्यादि मन्त्री उनके आसपास बैठे हैं, ऐसा जान पड़ता था कि मानो रत्नसिंहासन पर विराजमान इन्द्रदेव अमरगण के बीच शोभा पा रहे हैं । जब मैंने स्वस्तिवाचन पढ़ा तो राजा ने सादर मुझे सिंहासन के समीप बैठने की आज्ञा दी और शर्ववर्म्मा इत्यादि मन्त्री कहने लगे कि हे महाराज ! जिन सर्व विद्याविशारद ब्राह्मण देव का नाम आप सुनते थे सो येही गुणाढ्य नामक विद्वान् हैं इनका जैसा नाम है वैसेही ये गुणों की खान हैं । मन्त्रियों की ऐसी स्तुतिवाणी मेरे विषय में सुन, राजा सातवाहन ने मेरा विशेष आदर कर मुझे मन्त्री के पद पर नियुक्त किया । मैं भी राजकाज को देखता भालता, निज शिष्यों को पढ़ाता, विवाह कर वहीं सुखपूर्वक रहने लगा ।

एक समय की बात है कि मन्द मन्द मैं गोदावरी तट पर टहल रहा था कि एक परमरमणीक बाग मुझे दिखाई पड़ा । ऐसी जनश्रुति थी कि इस बाग को साक्षात् श्रीदेवीजी ने बनाया था । मैंने देखा कि यह बाग बहुतही सुन्दर है मानो इन्द्रदेव का नन्दन बनही इस भूमि पर उतर आया हो, सो मैंने माली तथा उद्यानपालों से पूछा कि यह परमरम्य उद्यान यहां किसने बनाया है ? उन्होंने कहा कि हे स्वामिन् ! बड़े बूढ़ों द्वारा ऐसा सुना जाता है कि कभी पूर्व समय में कोई निराहारी मौनी ब्राह्मण यहां आये थे । उन्होंने इस स्वच्छ उद्यान में अपना डेरा लगाया और नगर के अनेक ब्राह्मण लोग आने लगे । बातचीत होते होते उन लोगों ने उस ब्राह्मण से उनका हाल पूछा—वे कहने लगे कि श्रीनर्मदाजी के तट पर भरुकच्छ नामक एक स्थान है, वहीं पर ब्राह्मणकुल में मेरा जन्म हुआ किन्तु मैं ऐसा दरिद्री और आलसी था कि मुझे कोई भिक्षा भी न देता था, सो अपने जीवन से विरक्त हो घर छोड़ मैं अनेक तीर्थों में घूमता हुआ श्रीविन्ध्यवासिनी देवीजी के दर्शनों को गया । श्रीभगवती के दर्शन कर मैंने यह विचारा कि लोग पशु का बलिदान देकर देवी को सन्तुष्ट करते हैं सो मैं भी तो मूर्ख पशुही हूं मैं आत्मबलिदान करके इस वरदायिनी भगवती को क्यों न प्रसन्न करूँ, इतना निश्चय कर मैं खड्ग उठा अपना शिर काटने पर उद्यत हो गया । उसी क्षण देवी जी ने प्रसन्न हो मुझसे कहा कि हे पुत्र ! तू सिद्ध हो गया, अपने को मत मार,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तू मेरे निकट रहा कर। इस प्रकार श्रीदेवीजी का वरदान पाने पर मुझे दिव्यता प्राप्त हो गई, और उसी चण से मेरी भूख प्यास दोनों जाती रही। एक बेर श्री देवीजी ने मुझे आज्ञा दी कि हे पुत्र ! तू प्रतिष्ठान में जाकर एक परमोत्तम दिव्य बाग की रचना कर। ऐसा कह उन्होंने मुझे स्वर्गीय बीज दिये और मैंने यहां आकर उनके प्रभाव से यह उत्तम बगीचा लगाया। अब आप लोग इसकी रचा करना, ऐसा कह वह तो अन्तर्धान हो गया—वस यही कथा श्रीदेवीजी के बनाये हुये बगीचे की है।

इस प्रकार उद्यानपाल से देवी का अनुग्रह उस देश पर सुन, मैं अपने घर को लौट आया। जब गुणाढ्य ने यों हाल सुनाया तो काणभूति ने पूछा, कि हे प्रभो! यह तो कहिये कि उस राजा का नाम सातवाहन कैसे हुआ ? गुणाढ्य ने कहा अच्छा सुनो, मैं इसकी कथा तुमसे कहता हूं—

प्राचीन समय में दीपकर्णि नाम कोई बड़े पराक्रमी राजा हुये हैं, जिनकी प्राण समान प्यारी भार्य्या का नाम रानी शक्तिमती था। वह एक दिन अपने पति से विहार कर उद्यान में सोई थी कि किसी सर्प ने उसे काट लिया। जब रानी का देहान्त हो गया तो राजा ने उसके वियोग में यद्यपि उन्हें कोई पुत्र न था तथापि ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण किया अर्थात् फिर दूसरा विवाह न किया। परन्तु उन्हें सदा इस बात की चिन्ता रहती थी कि मेरे राज्य का सम्हालनेवाला कोई सुयोग्य पुत्र नहीं है। सो एक दिन भगवान् इन्दुशेखर ने उन्हें स्वप्न में आज्ञा दी कि हे राजन् ! तुम कुछ चिन्ता न करो। जब तुम बन में भ्रमण करने जाओगे तो तुम्हें सिंह पर चढ़ा हुआ एक बालक मिलेगा उसे लेकर तुम अपने घर को चले आना, वही तुम्हारा पुत्र होगा।" राजा की आंख खुल गई और स्वप्न की बात स्मरण कर वे अत्यन्त प्रसन्न हुये। एक दिन मृगया खेलते खेलते राजा घोर जङ्गल में निकल गये, दोपहर की बेला हुई, देखते क्या हैं कि निकटही एक सुन्दर तालाव है जिसमें रङ्गविरङ्गे कमल फूले हैं, उसी के तट की ओर एक बालक सूर्य्य के समान तेजस्वी, सिंह पर चढ़ा चला आता है। सिंह ने उस बालक को सरोवर के किनारे उतार दिया और आप तालाव में पानी पीने के लिये गया। राजा को स्वप्न की बात याद आई, उसी चण उन्होंने तरकस से तीर निकाला और एकही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाण में सिंह को मार गिराया। मरतेही वह सिंह मनुष्यरूप में उठ खड़ा हुआ; राजा को परम आश्चर्य हुआ सो उन्होंने पूछा कि यह क्या कौतुक है कहो तुम कौन हो? वह कहने लगा कि हे राजन्! मैं श्रीकुबेरजी का मित्र सात नामक यक्ष हूं, मैंने एक दिन एक ऋषिकन्या को गङ्गाजी में स्नान करती हुई देखा। वह भी मुझे देख मोहित हो गई, सो हम दोनों ने गान्धर्व रीति से विवाह कर लिया। जब यह बात उसके बान्धवों ने सुनी तो क्रोध से यह शाप दिया कि "हे पापियो! क्योंकि तुम दोनों स्वेच्छाचारी हो इसलिये जाओ सिंह का जन्म लो।" फिर विनय करने पर, मुनि लोगों ने यह आज्ञा दी कि सिंहनी का यह शाप तबतक रहेगा जब लों उसे पुत्र न हो, और मेरे शाप का अन्त उन लोगों ने आपके बाण से मारे जाने तक का नियत किया।" फिर हम दोनों सिंह सिंहनी के स्वरूप में पैदा हुये। कुछ दिनों के उपरान्त सिंहनी गर्भिणी हुई और इस पुत्र के उत्पन्न होतेही वह तो मर कर शाप से छूट गई। रह गया मैं, सो मैं दूसरी सिंहनी के दूध से इस बालक को पालने लगा, आज आपके बाण से मारा जाकर मैं भी उस शाप से मुक्त हुआ। सो आप इस महाप्रतापी बालक को ग्रहण कीजिये, मैं इसे आपको देता हूं क्योंकि उस समय उन मुनि लोगों की भी ऐसीही आज्ञा हुई थी। ऐसा कह कर जब वह सात नामा गुह्यक अन्तर्धान हो गया और राजा उस बालक को लेकर अपने राजमहल में चले आये। फिर उस बालक का नाम सातबाहन रक्खा गया क्योंकि सातनामा गुह्यक उसका बाहन बना था। फिर उचित समय पर राजा दीपकर्णि उस पुत्र को राज्यभार देकर आप तो बन को चले गये और इधर राजा सातबाहन सार्वभौम राजा हुये। इह प्रकार काणभूति के पूछने पर सातवाहन नाम का कारण समझा। गुणाढ्य पुनः अपनी कथा को कहने लगा कि,—

एक समय की बात है कि उसी राजा सातवाहन ने बसन्तोत्सव के दिनों में आनन्द विहार के लिये रानियों सहित आकर उसीं देवीनिर्मित बाग में अपना डेरा लगवा दिया। एक दिन राजा को जलक्रीड़ा की इच्छा हुई, सो उस नन्दन सरीखे बाग में जो बावली थी उसमें पैठ रानियों के साथ खेलने लगे। राजा रानियों पर छींटा डालते थे और रानियां राजा को छींटे से तराबोर कर देती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

थीं। इसी प्रकार खेलते खेलते रानियों का सब कज्जल छूट गया और उनके नेत्र भी लाल हो गये, झीने वस्त्र अङ्ग में ऐसे सट गये कि अङ्ग प्रत्यङ्ग बाहर झलकने लगा। रानियों के शरीर का सब शृङ्गार धो गया और उनके पुष्प के सब गहने भी टूट गये। योंही क्रीड़ा हो रही थी कि राजा की एक परम कोमलाङ्गी रानी जो अपनेही स्तनभार से नम्र हुई जाती थी थक कर कहने लगी कि, हे नाथ! मैं बहुत थक गई हूं मुझे "मोदकैः परिताड़य" † इतना सुनतेही राजा ने बहुत से मोदक अर्थात् लड्डू उसी क्षण मँगवाये। यह देख रानी ने हँस कर कहा कि हे राजन्! यहां जल में लड्डुओं का क्याकाम है, मैंने तो आप से कहा था कि मा अर्थात् मत, उदकैः अर्थात् जल से परिताड़य अर्थात् मारिये। सो आप तो मा और उदक शब्द की सन्धि मात्र भी नहीं जानते और न प्रकरण से समझते हैं कि यहां जलक्रीड़ा में मोदक अर्थात् लड्डुओं का क्या काम है, सो आप बड़े मूर्ख जान पड़ते हैं। इस प्रकार जब शब्दशास्त्र के जाननेवाली उस रानी ने कहा तो सब की सब रानियां अहा हा करके ठठ्ठा मारने लगीं और राजा अत्यन्त लज्जित हुये। उसी क्षण वे जल के बाहर निकल आये और अपना मुँह छिपा चुपचाप राजमन्दिर में जा बैठे। फिर तो उन्हें ऐसी चिन्ता हुई कि उन्होंने खाना पीना सब छोड़ दिया, न किसी से हँसना बोलना और न किसी से बात करना, यदि कोई कुछ पूछता भी था तो उसके प्रश्न का उत्तर न देते थे। और यही रात दिन विचारते थे कि या तो पाण्डित्य या मृत्यु दो में एक की शरण लूंगा, सो आठो पहर पलङ्ग पर पड़े रहना और इसी सोच में शरीर को गलाना मानो उनका काम था। रानी लोगों ने जब अकस्मात् उनकी ऐसी दशा देखी तो घबड़ा गईं और आसपास के सभी लोग चिन्ता करने लगे कि यह आकस्मिक क्या बात हुई। क्रमशः राजा की इस रुग्णावस्था का वृत्तान्त मेरे तथा शर्ववर्मा के कान तक पहुंचा। दिन बीत चुका था उस समय अस्वस्थ राजा से मिलना उचित न होगा, ऐसा विचार हम दोनों ने महाराज के राजहंस नाम मुख्य सेवक को बुलवा भेजा, उससे जो पूछा तो उसने कहा कि महाराज की ऐसी दुःखित अवस्था कभी देखने में न आई थी। दूसरी रानियां कुपित होकर ऐसा कहती हैं कि विष्णुशक्ति

† मा उदकैः परिताड़य = मत जल से मारिये।

की बेटी जो रानी है उसी ने अपनी मिथ्या-पण्डिताई का घमण्ड दिखाकर राजा को दुःखित किया है। उस राजसेवक के मुख से ऐसी बात सुन मैं और शर्ववर्मा दोनों सन्देह से यों विचारने लगे कि यदि महाराज को कोई रोग हुआ है तो राजवैद्यों को बुलाकर दिखाना चाहिये और जो यदि कोई मानसिक पीड़ा है तो उसका कोई कारण प्रतीत नहीं होता, क्योंकि इस अकण्टक राज्य में महा-राज का कोई शत्रु नहीं दिखलाई पड़ता और प्रजा भी सब प्रकार प्रसन्न है और महाराज से प्रेम रखती है । तो फिर हमारे प्रभु को यह अचानचक खेद कैसे हुआ। हमलोग ऐसी चिन्ता कर रहे थे कि बुद्धिमान् शर्वशर्म्मा ने कहा कि मैं अनुमान करता हूं कि राजा का मौन धारण करना अपनी मूर्खता के पछतावे से है वह चाहते हैं कि जबतक पाण्डित्य न हो तबतक मैं बोलकर अपनी मूर्खता संसार में प्रगट न करूँगा। पहिले भी एक बेर मैंने इनका ऐसा आशय पाया था सो अब रानीद्वारा अपमानित होकर इनने यह मौन व्रत धारण किया है । इस प्रकार हम दोनों ने विचार कर उस रात्रि को तो किसी प्रकार विताया, और प्रातःकालही महाराज के सन्मुख जा उपस्थित हुये। यद्यपि द्वार पर अनेक लोगों ने रोकना चाहा किन्तु मैं चलाही गया और मेरे पीछे शर्ववर्म्मा भी आ गया। समीप बैठकर मैंने निवेदन किया कि हे महाराज! आप अकारणही ऐसे क्यों उदास और खिन्न हो रहे हैं । यह सुन राजा सातवाहन ने कुछ भी उत्तर न दिया, चुपचाप पड़े रहे। तब शर्ववर्म्मा ने यह अद्भुत बात कही कि हे राजन्! आज रात को मैंने एक स्वप्न देखा है सो सुनिये। मैंने क्या देखा कि मानो आ-काश से एक कमल गिरा है जिसे किसी दिव्य कुमार ने खिला दिया उसमें से एक दिव्य श्वेतवस्त्रधारिणी स्त्री निकली, और हे नाथ! निकलतेही वह आपके मुख में पैठ गई। इतना देखतेही मैं जाग उठा, सो मैं विश्वास करता हूं कि वह सरस्वती निस्सन्देह आपके मुख में बस गई है। जब शर्ववर्म्मा ने यों अपने स्वप्न की बात सुनाई तो राजा ने मौनभाव परित्याग कर मुझसे पूछा कि यदि कोई परि-श्रम के साथ पढ़ना चाहे तो पूरा पण्डित कितने दिनों में हो सकता है?। मुझे बिना विद्या के यह लक्ष्मी अच्छी नहीं जान पड़ती, क्योंकि मूर्ख का विभव ऐसा है जैसे कोई काठ के गहने पहिने हो। मैंने निवेदन किया कि हे राजन्! सब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्याओं का मुख, व्याकरणशास्त्र, बारह वर्ष में भली प्रकार आ सकता है किन्तु मैं आपको छ ही वर्ष में सिखला सकता हूं। इतना सुन शर्व्ववर्म्मा ने डाह खाकर कहा कि भला सुख से रहनेवाला मनुष्य इतने काल तक कैसे कष्ट उठा सकता है, सो हे देव! मैं आपको व्याकरण छ महीने में सिखा दूंगा। यह सुन मैंने क्रोध से उससे कहा कि यह असम्भव है, हे राजन्! यदि यह छ महीने में आपको व्याकरणशास्त्र सिखा दे तो मैं आपके साम्हने प्रतिज्ञा करता हूं कि संस्कृत प्राकृत और देशभाषा जिनमें मनुष्य बोल सकता है मैं तीनों परित्याग कर दूंगा। शर्व्ववर्म्मा ने कहा बहुत अच्छा यदि मैं छ महीने में व्याकरण न सिखा दूं तो बारह वर्ष तक तुम्हारे खड़ाऊँ अपने सिर पर धारण करूँ। इतना कह वह तो अपने घर गया और मैं भी राजा से विदा हो अपने गृह को आया, और राजा दोनों ओर से अपनी मनोकामना की सिद्धि मान प्रसन्न हुये। उधर शर्व्ववर्म्मा ने अपनी इस कठिन प्रतिज्ञा से घबड़ाकर सब वृत्तान्त अपनी भार्य्या से जाकर कह सुनाया। उसने भी दुःखित होकर कहा कि हे नाथ! इस महासङ्कट में बिना स्वामिकुमार के और कोई सहायक नहीं दीख पड़ता। सो वह भी यही निश्चय ठान रात के पिछले पहर निराहार घर से बाहर निकल पड़ा और श्रीस्वामिकुमारजी की शरण में चला। भेदियों के मुख से मैंने भी इसका पता पाकर महाराज से सब वृत्तान्त जा सुनाया और वह भी चिन्ता करने लगे कि अब देखा चाहिये क्या होता है। इतने में राजकुमार सिंहगुप्त ने कहा कि हे पिताजी! जिन दिनों में आप खिन्न हो रहे थे मुझे अत्यन्त कष्ट आपका दुःख देखकर होता था तो आपके कल्याण के निमित्त मैंने यह विचारा कि मैं जाकर देवी के आगे अपना सिर चढ़ा दूं। ऐसा सोच मैं नगर के बाहर गया और ज्योंही मैंने अपना सिर काटना चाहा कि यह आकाशबाणी हुई कि हे पुत्र! तू अपना सिर मत चढ़ा, राजा की इच्छा अवश्य पूरी होगी। सो हे देव! मैं जानता हूं कि आपकी मनोकामना सिद्ध होगी, आप कुछ चिन्ता न करें। इस प्रकार राजा को समझाकर सिंहगुप्त ने शीघ्रही दो गुप्त दूतों को शर्व्ववर्म्मा के पीछें दौड़ाया। उधर वह मन्त्री केवल वायु के भोजनाधार पर मौन व्रत धारण किये हुआ श्रीस्वामिकुमार की शरण में जा पहुँचा। अपने शरीर की कुछ भी चिन्ता न कर उसने कठिन तपस्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से श्रीपार्वतीनन्दन स्कन्दजी को प्रसन्न कर लिया और उनसे इच्छानुसार वरदान प्राप्त कर लौटा । आतेही उसने उन दूतों के द्वारा जिन्हें सिंहगुप्त ने भेजा था राजा के पास निवेदन कराया। यह सुन मेरी तथा राजा की दशा खेद और हर्ष से ऐसी हुई जैसे मेघ के आने पर हंस और चातक की होती है । राजसभा में उपस्थित होकर शर्ववर्म्मा ने श्रीकार्तिकेयजी के वरदान से राजा सातवाहन को समस्त विद्या क्षण भर में सिखा दी । ठीकही है परमेश्वर की कृपा से मनुष्य क्या नहीं कर सकता । फिर तो राजा प्रसन्नमुख होकर राजकाज करने लगे और सारे नगर में आनन्दबधाई बजने लगी, स्थान स्थान पर तोरण ध्वजा पताका से पुर सजाया गया और सर्वत्र मङ्गल बाजे की ध्वनि छा गई । राजा ने उत्तमोत्तम रत्नाभूषणों से शर्ववर्म्मा गुरु की पूजा कर उन्हें प्रणाम किया और नर्मदातट पर जो भरुकच्छ नामक प्रदेश था उसका पूर्ण स्वामी उसे बना दिया । फिर दूतों के मुख से षण्मुख द्वारा वरप्राप्ति का हाल सुनकर प्रसन्न हो राजा ने सिंहगुप्त को लक्ष्मी देकर अपने समान श्रीपति कर दिया और विष्णुभक्ति की बेटी जो रानी थी, उसे अपनी विद्याप्राप्ति का मुख्य कारण समझ सब रानियों का शिरोमणि बना सुख से राज्य करने लगे ।

यों सब विद्या सीखि के राजा पण्डित होय ।
राजकाज करिवे लगे हर्षित भे सब लोय ॥

सातवां तरङ्ग ।

तब तो मैं मौन धारण कर राजसभा में पहुँचा। वहां किसी ब्राह्मण ने आकर निज रचे हुये श्लोक महाराज को सुनाये और महाराज ने भी संस्कृत-वाणी में उसको उत्तर दिया । यह देख सभी सभासद लोग प्रसन्न हो उठे । तब तो शर्ववर्म्मा से राजा ने विनयपूर्वक पूछा कि हे गुरो ! यह तो कहिये कि भगवान् स्वामिकार्तिकजी ने क्योंकर आप पर ऐसा अनुग्रह किया ? । यह सुन शर्ववर्म्मा ने कहा कि हे राजन् ! जब मैं भूखा प्यासा यहां से चला तो मुझे एक धुन भगवान् के दर्शनों तथा अपनी प्रतिज्ञा के पूर्ण करने की लगी थी। चलते चलते मैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दुर्बल हो गया और एक दिन थक कर मार्ग में बेसुध हो गिर पड़ा । मुझे ऐसा जान पड़ा कि कोई दिव्यदेव हाथ में शक्ति धारण किये मेरे सिरहाने खड़े यों कह रहे हैं कि हे पुत्र ! उठ खड़ा हो, तेरी इच्छा पूर्ण होगी । फिर ऐसा जान पड़ा कि उन्होंने मानो मुझे अमृत की धार से सिञ्चन कर दिया, इतने में मैं जाग उठा और यद्यपि मैं भूख प्यास से अत्यन्त क्षीण हो गया था परन्तु मुझे शरीर में पूर्ण बल जान पड़ने लगा। फिर मैंने वहां पहुंच स्नान कर भगवान् के मन्दिर के अन्दर पैठ उत्साहपूर्वक उनका दर्शन किया । दर्शन होतेही सरस्वती मेरे मुख में पैठ गई। तब तो श्रीस्कन्दजी ने स्वयं अपने छओ मुख से यह सूत्र उच्चारण किया, "सिद्धोवर्णसमाम्नाय"। मैं मानुषी चपलता के कारण आगेवाला सूत्र स्वयं बनाकर बोल उठा। तव तो सेनानी भगवान् ने कहा कि यदि तू स्वयं कुछ न बोलता तो यह व्याकरण पाणिनीय व्याकरण को भी दबा देनेवाला होता, तेरे बोलने से कुछ कमी इसमें रह गई सो यह कातन्त्र नाम से होगा और मेरे वाहन कलापक के नाम से इसका नाम कालापक होगा। इस प्रकार उन्होंने एक छोटा नवीन व्याकरण मुझ पर प्रगट किया जिसे मैंने उनकी कृपा से स्मरण कर लिया । फिर भगवान् ने कहा कि तुम्हारा यह राजा पूर्वकाल का ऋषि है इसका नाम कृष्ण था, यह भरद्वाजमुनि का शिष्य है । एक समय एक मुनिकन्या से इससे कहीं देखादेखी हो गई और दोनों परस्पर कामदेव के बाणों से पीड़ित हुये, सो मुनियों के शाप से वे दोनों राजा रानी के रूप में यहां उत्पन्न हुये हैं। इस प्रकार तुम्हारे यह सातवाहन राजा ऋषि के अवतार हैं, तुमसे भेंट होने पर तुम्हारी इच्छा से सब विद्या को प्राप्त करेंगे। कहा है कि महात्मा लोगों को उत्तम अर्थ विना क्लेशही प्राप्त होते हैं क्योंकि पूर्व जन्म के संस्कार से सर्वसिद्धि स्वयं प्राप्त हो जाती है। इतना कह जब भगवान् अन्तर्धान हुये, तो मैं भी बाहर निकल आया और वहां के पुजारियों ने मुझे कुछ अक्षत (चावल) दिये। फिर तो हे राजन्! मैं वहां से लौटा। आश्चर्य्य की बात है कि मैं सारे मार्ग में उन्हीं चावलों को खाता आया किन्तु वे ज्यों के त्यों बने रहे, कुछ भी न घटे । इस प्रकार अपना वृत्तान्त सुनाकर जब शर्ववर्म्मा चुप हुआ तो राजा सातवाहन भी स्नान करने के लिये उठे। मैंने तो मौन धारण कियाही था, इसलिये जिह्वा से कुछ बोल न सकता था

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सो राजा को प्रणाम कर बाहर चला आया यद्यपि राजा ने मुझे बहुत कुछ कह सुनकर वहां रखना चाहा परन्तु मैंने वहां रहकर अपमानित होना उचित न समझा सो दो शिष्यों को साथ लेकर मैं नगर के बाहर निकल पड़ा और तपस्या करना जी में ठान श्रीविन्ध्यवासिनी जी के दर्शनों को यहां आया । स्वप्न में श्रीभगवती ने मुझे आज्ञा दी कि तू जंगल में जाकर काणभूति से भेंट कर। सो मैं तुमसे मिलने की इच्छा से इस वन में आया। जंगली लोगों से पता लगाते लगाते मैं किसी प्रकार यहां तक पहुँचा, देखा तो झुण्ड के झुण्ड पिशाच यहां घूम रहे हैं। वे जब एक दूसरे से बात करते थे तो मैं दूर से छिपकर उनकी बातें सुनता था। सुनते सुनते कुछ दिनों में मैंने पिशाचीभाषा सीख ली, जो मेरे मौनव्रत के छोड़ने का कारण हुआ। जब मैं इस प्रकार पिशाची भाषा को सीख चुका तो यहां तुम्हें खोजने लगा, विदित हुआ कि तुम उज्जयिनी को गये हुये हो सो यहीं पर ठहरकर तुम्हारे लौटने का आसरा देखने लगा । तुम्हें देखतेही मैंने चौथी भाषा अर्थात् भूतभाषा में तुम्हारा स्वागत किया, जिसके साथही साथ मुझे अपने पूर्व जन्म की कथा स्मरण हो आई। सो हे मित्र काणभूति! यह मेरे इस जन्म का वृत्तान्त है जो मैंने तुम्हें सुनाया । जब गुणाढ्य ऐसा कह चुका तो काणभूति ने कहा कि तुम्हारे यहां आने का हाल मुझे जैसे विदित हुआ सो सुनो।

भूतिवर्म्मा नाम एक दिव्यदृष्टि राक्षस मेरा मित्र है, सो मैं उज्जयिनी में एक दिन उसके घर बगीचे में गया । वहां मैंने उससे पूछा कि मेरे शाप का अन्त क्योंकर होगा? उसने कहा कि दिन के समय हमलोगों का प्रभाव नहीं रहता, तुम यहीं ठहरो, मैं रात के समय तुम्हें बतलाऊँगा। मैं बहुत अच्छा कहकर वहीं रह गया, सन्ध्या होतेही देखता क्या हूं कि सब भूत पिशाच मारे हर्ष के नाच रहे हैं और आपस में बड़ा कोलाहल मचा रहे हैं । मैंने प्रसङ्गवश भूतिवर्म्मा से इसका कारण पूछा तो उसने कहा कि दिन के समय ये लोग सूर्य्य भगवान् के तेज से दबे रहते हैं, इनका प्रभाव कुछ भी नहीं चलता, इसी कारण ये यक्ष रक्ष पिशाच रात को बड़े प्रसन्न रहते हैं । जहां देवता वा ब्राह्मणों की पूजा सादर नहीं होती अथवा जहां विधिपूर्वक भोजन नहीं किया जाता वहीं ये लोग प्रबल हो जाते हैं । जहां मांस न खानेवाले लोग रहते हैं अथवा जहां प्रतिव्रता स्त्री

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamawadi Math, Varanasi
65
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निवास करती हैं वहां ये लोग नहीं जाते और पवित्र, शूर तथा चैतन्य पर ये लोग आक्रमण नहीं करते। ऐसा सुनकर भूतिवर्म्मा ने मुझसे कहा कि अब तुम जाओ, तुम्हारे शाप-मोक्ष का कारण गुणाढ्य आ गया है। इतना सुन, हे प्रभो! मैं वहां से चला आया और तुमसे देखादेखी हुई। अब मैं उस कथा को कहता हूं जो मैंने पुष्पदन्त से सुनी है। किन्तु मुझे इस बात का कौतुक है कि उनका तथा आप का नाम पुष्पदन्त और माल्यवान् क्योंकर हुआ?। काणभूति का इतना पूछना था कि गुणाढ्य ने उससे कहा कि,—

श्रीभागीरथीजी के तट पर बहुसुवर्णक नाम एक नगर है। वहां कोई गोविन्ददत्त नामक ब्राह्मण वेदवेदाङ्गों के जाननेवाले रहते थे, उनकी पतिव्रता भार्य्या अग्निदत्ता भी वहीं उनके पास रहती थी। समय पाकर उन ब्राह्मणदेवता को उस पत्नी के गर्भ से क्रमशः पांच पुत्र उत्पन्न हुये। वे पांचो स्वरूपवान् तो थे किन्तु बड़े मूर्ख और अभिमानी हुये। एक समय गोविन्ददत्तशर्म्मा के घर पर वैश्वानर नामक कोई अतिथि जो तेज में वैश्वानर (अग्नि) के समान थे आये। उस समय पण्डित गोविन्ददत्तजी किसी काम से घर के बाहर गये थे सो उस ब्राह्मण ने आकर उनके पुत्रों का अभिवादन किया। वे सब उस अतिथि को देखकर हँस कर ठट्ठा उड़ाने लगे। यह देख ब्राह्मण क्रोध से लौट चला, इतनेही में गोविन्ददत्तजी आ गये। उन्होंने देखा कि एक ब्राह्मण क्रोधाविष्ट हो हमारे घर से जा रहा है सो कारण जानने पर गोविन्ददत्त ने बड़े विनीतभाव से उन्हें प्रसन्न कर लिया। ब्राह्मण ने कहा कि तुम्हारे सब पुत्र पतित और मूर्ख हैं और उनके सम्पर्क से तुम भी वैसेही हो; सो मैं तुम्हारे घर में भोजन न करूंगा नहीं तो मुझे भी प्रायश्चित्त लगेगा। तब गोविन्ददत्त ने शपथपूर्वक उस ब्राह्मण से कहा कि, हे कृपानिधान! मैं तो इन कुपूतों को छूता भी नहीं, और जब उनकी स्त्री अग्निदत्ता नें भी आकर वैसाही कहा, तब उस ब्राह्मण ने किसी किसी प्रकार उनका आतिथ्य स्वीकार किया। अपने पिता की ऐसी घृणा अपने पर देख गोविन्ददत्त के पुत्र देवदत्त को बड़ा खेद और पश्चात्ताप हुआ, उसने विचारा कि धिक्कार है मुझे, जो माता पिता दोनों मुझे बुरा समझते हैं सो इसी खेद के कारण वह तपस्या के विचार से वदरिकाश्रम को चला गया। कुछ दिनों तक तो वह केवल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वृक्षों की पत्तियां खाकर तपस्या करता रहा फिर उन्हें भी छोड़ वह केवल धुआं पीकर तप करने लगा। चिरकाल उसे योंही बीता, तब तो शम्भु भगवान् ने सन्तुष्ट हो उसे दर्शन दिया और कहा कि वर मांग। उसने कहा कि मैं यही मांगता हूं कि मैं आपका अनुचर अर्थात् गण होकर आपके समीप रहूं। श्रीशिवजी ने कहा कि प्रथम तू विद्या प्राप्त कर इस पृथ्वी के समस्त भोगों को भोग ले फिर जैसी तेरी इच्छा है वह पूर्ण की जायगी। तब तो वह विद्या पढ़ने के निमित्त पाटलिपुत्र नगर में वेदकुम्भ नामक उपाध्यायजी के पास गया। अभी उसे वहां रहते थोड़ेही दिन हुये कि उपाध्यायजी की पत्नी कामातुर हो उससे अपना अभिप्राय कहने लगी। ठीकही कहा है कि स्त्रियों की चित्तवृत्ति सदा चञ्चल रहती है, उसका कोई ठिकाना नहीं कि कब कैसी रहे। देवदत्त ने देखा कि यहां अनङ्ग का घोर उपद्रव है, सो वह उस देश को परित्याग कर उसी क्षण प्रतिष्ठान को चला गया। वहां एक बूढ़े उपाध्याय मन्त्रस्वामी नामक अपनी वृद्धा-भार्य्या के साथ रहते थे उन्हीं की सेवा करके उसने समस्त विद्या को प्राप्त किया। इस प्रकार जब वह पूर्ण पण्डित हो गया तो एक दिन वहां के राजा सुशर्म्मा की पुत्री श्री ने उसे देखा। जिस प्रकार श्री (लक्ष्मी) विष्णुभगवान् को देखकर मोहित हुई थी उसी प्रकार यह श्री (राजपुत्री) भी देवदत्त को देखकर मुग्ध हो गई। देवदत्त ने भी उस चन्द्रवदनी, कोमलाङ्गी को झरोखे में से झाँकती देख पाया। बस उसी क्षण वे दोनों कामदेव की बेड़ी से ऐसे बँध गये कि एक भी पग वहां से टर न सके। अन्त राजकुमारी ने एक अंगुली के इशारे से उसे अपने समीप बुलाया। जब वह उसके निकट गया तो राजकुमारी ने एक पुष्प, दन्त से उठाकर महल के नीचे उसकी ओर फेंक दिया। वह कुछ भी न समझा कि राजसुता ने इससे क्या सङ्केत किया सो वह उस पुष्प को उठाकर अपने उपाध्यायजी के पास चला आया। उसे बोलने की कुछ भी सामर्थ्य न थी सो वह विरह से व्याकुल हो भूमि में लोटने लगा। बुद्धिमान् उपाध्यायजी ने कामदेव के चिन्हों को देखकर चट अनुमान कर लिया, सो उससे पूछा कि तू अपना यथार्थ हाल मुझे सुना कि तुझे क्या हुआ है?। उसने भी सब वृत्तान्त ज्यों का त्यों सुना दिया। यह सुन परम प्रवीण उपाध्यायजी ने कहा कि दन्त से पुष्प छोड़कर उसने यह संज्ञा की है कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस समय जाओ फिर पुष्पदन्त के देवमन्दिर में मुझसे भेंट करना । इस प्रकार उसके इशारे का अभिप्राय समझ उसने शोक परित्याग किया और उस देवमन्दिर में जाकर अन्दर बैठ रहा। दूसरे दिन अष्टमी थी सो वह राजकुमारी वहां दर्शनों के निमित्त गई और अकेलेही मन्दिर के अन्दर पैठी । उस समय वहां देवदत्त के अतिरिक्त और कोई न था। उसने झट उठकर अपनी प्यारी को गले से लगाया। राजकुमारी ने पूछा कि मुझे इस बात का आश्चर्य्य है कि तुमने वह इशारा क्योंकर समझा। देवदत्त ने कहा कि मैंने तो नहीं समझा था किन्तु मेरे गुरुजी ने उसका तात्पर्य्य मुझे बतलाया था। इतना सुनतेही राजकन्या ने कहा "मुझे छोड़ दे, तू गवइ है इस गुप्तभेद को जो तू ने दूसरे पर प्रकाश कर दिया सो ठीक नहीं किया।" ऐसा कह वह क्रोधित हो घर को लौट आई। देवदत्त अपनी प्रिया को एकान्त में पाकर भी गँवा बैठा, सो विरहाग्नि से जलता हुआ घर में आकर भूमि में लोटने लगा। श्रीशिवजी महाराज को तो उसने पहिलेही प्रसन्न कर रक्खा था, सो इस समय उसकी ऐसी दशा देख उन्होंने अपने पञ्चशिख नामक गण को आज्ञा दी कि जाकर उसकी सहायता करे । वह गण देवदत्त के पास आकर उसे बहुत समझाने लगा और बोला कि जो युक्ति मैं बतलाऊँ उसके अनुसार काम कर तो अभिप्राय की सिद्धि हो। देवदत्त ने कहा कि जो आप आज्ञा देंगे मैं वैसेही करूँगा। तब तो पञ्चशिख ने उसे स्त्री का रूप बना दिया और आप वृद्ध ब्राह्मण का रूप धर उस सुलोचनी राजकुमारी के पिता राजा सुशर्म्मा के पास पहुँचा। प्रणाम आशीर्वाद के अनन्तर वृद्ध ब्राह्मण ने कहा कि हे राजन्! मेरा पुत्र कहीं विदेश को गया है, मैं उसे खोजने के निमित्त जाता हूं, मेरा यहां और कोई सम्बन्धी नहीं है सो मेरी इस पुत्रबधु को अपने यहां रक्षापूर्वक रखिये जबतक मैं पुत्र को लेकर आपके पास न आऊँ । ऐसा कह पञ्चशिख तो चला गया और राजा ने उस स्त्रीरूपधारी देवदत्त को अपने राजभवन में कुमारी के पास भेज दिया कि वहां रहने से दोनों का जी लगा रहेगा । एक दिन उसने अवसर पाकर अपने तईं राजकन्या पर प्रकाश किया फिर तो उन दोनों ने गान्धर्व रीति से अपना विवाह कर लिया । जब राजकन्या को गर्भ रह गया तो एक दिन स्मरण करतेही मात्र शिवजी का वह गण आन उपस्थित हुआ और देव-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दत्त को इस प्रकार राजमहल से निकाल ले गया कि किसी ने भी न देखा। दूसरेही दिन उसका स्त्रीवेष दूर कर और स्वयं वैसाही वृद्धब्राह्मण का रूप धर देवदत्त को साथ ले पञ्चशिख राजा सुशर्म्मा की राजसभा में पहुँचा और कहने लगा कि हे राजन्! यह देखिये मेरा वह पुत्र मिल गया, अब आप कृपाकर मेरी पुत्रबधु को दीजिये। राजा ने जो उसकी पुत्रबधु को राजमहल में खोजवाया तो कहीं पता नहीं! बड़ा आश्चर्य्य सबको हुआ कि अभी रात्रि तक तो वह महलही में थी आज कहां उड़ गई! जब यह वृत्तान्त राजा को विदित हुआ तो उन्होंने शापभय से मन्त्रियों से सलाह की कि यह साधारण ब्राह्मण नहीं जान पड़ता, यह कोई देवता है मुझे जांचने के लिये आया है क्योंकि प्राचीन समय में भी ऐसाही हुआ है।

पवित्र पुरी काशीजी में एक समय एक बड़ेही दानी और धीर राजा शिवि नामक हो गये हैं, जिनके राज्य में मसल है कि बाघ बकरी एक घाट पानी पीते थे। उनको जांचने के लिये एक समय इन्द्र ने बाज़ का रूप धारण किया और धर्म्म ने कपोत का रूप लिया। बाज नें कपोत को झपेटा, वह माया-कपोत भागता भागता राजा शिवि की गोद में आ छिपा और त्राहि त्राहि चिल्लाने लगा। बाज भी झपटता हुआ आ पहुँचा और मानुषी बोली में बोला कि हे राजन्! मैं बड़ाही भूखा हूं और यह कपोत मेरा भक्ष्य है सो आप कृपाकर इसे छोड़ दीजिये नहीं तो मारे भूख के मेरे प्राण निकल जांयगे तो फिर आपका धर्म्म कहां रहेगा। राजा शिवि ने कहा कि हे बाज़! यह मेरी शरण आया है तू इसे खाने में "बाज" आ—मैं इस शरणागत को नहीं दे सकता, इसी के बराबर तू दूसरा मांस ले ले। बाज ने कहा यदि ऐसाही है तो फिर अपने शरीर का मांस इसके बराबर तौल दीजिये। राजा ने कहा बहुत अच्छा, तब तो वह बाज अत्यन्त प्रसन्न हुआ। इधर राजा ने तराजू मँगा कपोत को एक पलड़े पर बैठाया और अपने शरीर से मांस का एक टुकड़ा काटकर दूसरी ओर पलड़े पर रक्खा। कपोत का पलड़ा नीचेही रहा, ज्यों ज्यों राजा अपना मांस काट काटकर पलड़े पर चढ़ाते जाते थे त्यों त्यों वह कपोतवाला पलड़ा पृथ्वी ही को मानो धरता जाता था। तब तो राजा ने अपने तईं उस पलड़े में सब का सब डाल दिया!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसी क्षण आकाश से पुष्पवृष्टि होने लगी और धन्य धन्य कर आकाशवाणी हो उठी। इधर इन्द्र और धर्म्म ने बाज और कपोत का रूप परित्याग कर अपना अपना रूप धारण किया और राजा का समग्र शरीर कञ्चन सा कर कहा कि महाराज हम दोनों इन्द्र और धर्म्म हैं आपके दान और धर्म की परीक्षा करनेही के लिये यह माया रची गई थी सो आप धन्य हैं, फिर अनेक बरदान देकर वे दोनों देव अपने अपने लोक को चले गये। इसी से कहता हूं कि यह भी विप्रवेष में कोई देवता मेरी परीक्षा करने को आये हैं। इस प्रकार मन्त्रियों से धीरे धीरे कह राजा सुशर्म्मा ने हाथ जोड़ नम्रतापूर्वक उस बूढ़े ब्राह्मण से कहा कि हे देव! हमलोग तो अत्यन्तही रक्षापूर्वक आपके पुत्रबधु की रक्षा करते रहे, किन्तु न जाने कल रात्रि से वह कहां गुम हो गई, सो आप क्षमा कीजिये। तब तो उस ब्राह्मणरूपधारी गण ने बड़ा क्रोध किया किन्तु फिर राजा की बहुत नम्रता और विनीतभाव देखकर मानो दया करके बोला "हे राजन्! अपराध तो तुमने बहुत किया है अच्छा तुम मेरे पुत्र को अपनी पुत्री दे दो तो मैं तुम्हें क्षमा कर दूं।" यह सुन राजा ने उसी क्षण अपनी राजकुमारी को ब्राह्मणपुत्र के हवाले किया और तब पञ्चशिख ने भी वहां से प्रस्थान किया। इस प्रकार प्रकाश्यरूप से निज भार्य्या को प्राप्त कर देवदत्त भी श्वशुर के घरही में सुखपूर्वक रहने लगा। राजा सुशर्म्मा को भी कन्या के अतिरिक्त और कोई सन्तति न थी सो उन्होंने जामाता कोही निजपुत्रवत् माना। कुछ काल के अनन्तर जब राजा का नाती महीधरशर्म्मा सयाना हुआ तो उसे समस्त राजकाज सौंप सुशर्म्मा ने बन का मार्ग लिया। देवदत्त ने भी निजपुत्र को राज्य पर देख अपने को कृतार्थ माना और तब निजभार्य्या सहित जङ्गल का रास्ता लिया। वहां जा पुन: शिवजी की तपस्या कर इस मनुष्य-देह को परित्याग, उनने महादेवजी के मुख्य गण का पद पाया, और उनकी भार्य्या ने पार्वतीजी के प्रतिहारी का पद प्राप्त किया वहां उसका नाम जया पड़ा। अपनी प्यारी के पुष्प को दन्त से छोड़ा हुआ पाकर भी जो उसने इशारा न समझा इसी से उसका नाम पुष्पदन्त हुआ। यह तो उसकी कथा हुई, अब मेरा हाल सुनो कि मेरा नाम माल्यवान् क्यों हुआ।

देवदत्त के पिता जो गोविन्ददत्तजी थे, उन्हीं का दूसरा पुत्र सोमदत्त नामक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मैं था। उसी मूर्खता के पश्चात्ताप के कारण तथा माता पिता की उस घृणा को अपने पर देख मैं भी हिमाचल में जाकर श्रीशिवजी के प्रसन्नतार्थ तपस्या करने लगा और बहुत सी रङ्ग विरङ्ग की मालायें नित्य बनाकर मैं उन पर चढ़ाता था। तब तो श्रीशङ्कर भगवान् ने प्रसन्न होकर मुझसे कहा कि वर मांग। मैंने कहा हे भगवन् मुझे सांसारिक भोगों की कुछ भी वासना नहीं है, आप मुझे अपना गण बनाइये। यह सुन भगवान् इन्दुशेखर ने आज्ञा दी कि—

मोहिँ प्रसन्न जो तू कियो विविध माल्य दै दान।
यातें तेरो नाम अब माल्यवान गण जान॥
तेहि अवसर नरदेह तजि गयउँ तुरत कैलास।
माल्यवान गण नाम धरि शम्भु दियो तहँ बास॥
पुनि गिरिजा के शाप तें काणभूति सुनु हाल।
मानुष रूप गुणाढ्य मम नाम पर्‌यो इहि काल॥
तातें हर की वह कथा मोहि सुनावहु मीत।
मुक्ति होइ हम दुहुन की यह हिरदै परतीत॥

आठवां तरङ्ग।

इस प्रकार गुणाढ्य के बचन सुन काणभूति ने अपनी भाषा में सात कथा-वाली वह दिव्य महाकथा कह सुनाई। फिर गुणाढ्य ने भी उस कथा को ७ वर्ष में उसी पिशाची भाषा में सात लाख श्लोकों में बनाकर प्रस्तुत की, और इस अ-भिप्राय से कि इसको कहीं विद्याधर न उठा ले जाँय, उस महाकवि ने उसी ज-ङ्गल में स्याही न मिलने के कारण अपने रुधिर सेही लिख डाली। उस कथा के सुनने के लिये सिद्ध और विद्याधर आने लगे, क्रमशः इतनी भीड़ एकत्र होने लगी कि आते जाते लोगों से आकाश छा जाता था। जब गुणाढ्य की वह महा-कथा लिखकर तयार होगई तो काणभूति भी शाप से मुक्त हो निज गति को प्राप्त हुआ; जो पिशाच लोग वहां रहते थे तथा और भी जो उनके सहचारी थे सब

उस कथा को सुन सुनकर दिव्यगति को प्राप्त हो गये। फिर गुणाढ्य ने विचारा कि श्रीपार्वतीजी ने जब मेरे शाप का अन्त कहा था तो यही आज्ञा दी थी कि इसे जगत् में प्रचार करने से तेरी मुक्ति होगी सो अब मैं इसे किसके समर्पण करूँ। तब उसके शिष्यों में से दो ने जिनका नाम गुणदेव और नन्दिदेव था, अपने उपाध्याय (गुणाढ्य) से यों कहा कि हे देव! इसके समर्पण के योग्य केवल सातवाहन राजा हैं; वे बड़े रसज्ञ हैं। जैसे पवनदेव पुष्प के गन्ध को चारो ओर फैलाते हैं वैसेही वे भी इस कथा के रस को चहुँओर प्रकाश करेंगे, सो यदि आप आज्ञा दें तो हमलोग इस पुस्तक को उनके समीप ले जावें। गुणाढ्य ने भी इस बात को स्वीकार किया और उस पुस्तक को उन दोनों गुणशाली शिष्यों के हाथ राजा सातवाहन के पास भेजा; और स्वयं भी जाकर उसी देवीनिर्मित उद्यान में ठहरे रहे। उन दोनों शिष्यों ने राजा सातवाहन के पास जाकर उस पुस्तक को दिखलाया और कहा कि हमारे उपाध्याय गुणाढ्यजी ने इसे रचा है। राजा ने जब सुना कि पिशाचभाषा में इसकी रचना है और उन दोनों शिष्यों की भी विलचणही आकृति देखी तो विद्यामद से असूया-सहित यों कहा कि प्रथम तो यह सात लाख ग्रन्थ नीरस पिशाची भाषा में लिखा है, दूसरे इसकी लिखाई रुधिर से की है। ऐसी पिशाच कथा को हम नहीं देखा चाहते। इसे हमारे यहां से ले जाओ। वे शिष्य लोग जैसे आये थे वैसेही पुस्तक को उठा चल दिये और गुणाढ्य के पास आकर उन्होंने सब वृत्तान्त कह सुनाया। यह सुन गुणाढ्य को परम खेद हुआ, ठीकही है तत्वज्ञ पुरुष से अपमान पाकर किसे दुःख नहीं होता? तब तो गुणाढ्य ने दोनों शिष्यों के सहित एक पर्वत की शिखा पर जाकर एकान्त में एक अग्नि-कुण्ड बनाया और मृग तथा पचियों को एक एक पत्ता सुनाकर उसी अग्निकुण्ड में भस्म करने लगा। शिष्य विचारे चुपचाप आँखों में आँसू भर यह कौतुक देखने लगे। जब उन्होंने बहुतही नम्रता से प्रार्थना की तो उनके निमित्त नरवाहनदत्त का वृत्तान्त जिसमें था वह एक लाख श्लोकवाला ग्रन्थ उनने अग्नि में डालने से बचा लिया। जिस समय गुणाढ्य उस परम-रमणीय कथा को पढ़ पढ़कर अग्नि में जलाते जाते थे उस समय पशुपचीगण खाना पीना भूलकर आंखों में आंसू भर निरन्तर रात दिन बड़े प्रेम से उसे सुना करते थे। हजारों लाखों हरिण, वाराह और म-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

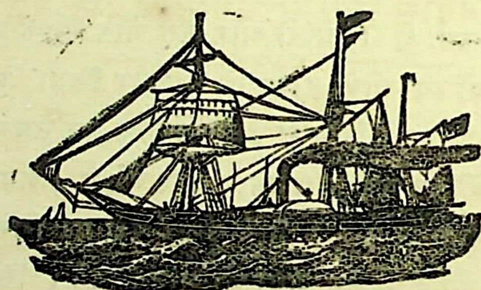
हिष वहां एकत्र हो मण्डल बांध उस दिव्य महाकथा को सुनते थे। इसी बीच में राजा सातवाहन कुछ अस्वस्थ हुये (बीमार पड़े); वैद्य लोगों ने निदान का निश्चय करके कहा कि यह रोग आपको सूखा मांस खाने के कारण हुआ है। रसोंई पकानेवालों को जब बुलाकर पूछा गया तो उन्होंने हाथ जोड़कर निवेदन किया कि महाराज शिकारी लोग आजकल ऐसाही सूखा मांस लाकर हमें देते हैं हमारा कुछ दोष नहीं है। जब शिकारियों से पूछा गया तो उन्होंने विनयपूर्वक कहा कि धर्म्मावतार ! हमलोग क्या करें इस पर्वत के समीपही एक ब्राह्मण आया है वह न जाने क्या पढ़ पढ़कर एक एक पत्रा अग्नि में डाला करता है और तमाम जङ्गल के जीव जन्तु उसकी कथा सुनने में ऐसे मग्न हो जाते हैं कि उन्हें खाने पीने की सुधि नहीं रहती, इसीसे वे सब भूख प्यास के मारे ऐसे दुर्बल हो गये हैं कि उनका मांस सूखा होता है। व्याध लोगों का ऐसा बचन सुन उनको साथ ले राजा सातवाहन गुणाढ्य के पास पहुँचे। देखते क्या हैं कि वह बड़ी बड़ी जटा बढ़ाये बैठे हैं और अग्नि को उन्होंने उसी क्षण शान्त किया है जिसका धुआं चारो ओर छा रहा है। चारो ओर मृग और अनेक प्रकार के पशु पक्षी उन्हें घेरे हैं सो उन्हें पहिचानतेही राजा ने नमस्कार किया और समस्त वृत्तान्त पूछा। उनने भी पुष्पदन्त की कथा से लेकर तबतक का समस्त वृत्तान्त भूतभाषा में कह सुनाया कि क्योंकर वह महाकथा तयार हुई थी। जब राजा को यह विदित हुआ कि ये गणावतार हैं तब तो वे उनके पैरों पर गिर पड़े और बहुतही विनयपूर्वक शङ्करजी की कही उस कथा को मांगने लगे। फिर गुणाढ्य ने सातवाहन से कहा कि हे राजन् ! छः लाख श्लोकों की छः कथा तो मैंने जला दी ! केवल एक लाख श्लोक की यह एक कथा बची है सो आप भलेही ले लीजिये, और मेरे ये दोनों शिष्य आपको इसकी व्याख्या करके समझा देवेंगे। इस प्रकार बातचीत कर योगबल से उस शरीर का परित्याग कर गुणाढ्य भी शाप से छूट कर दिव्यगति को प्राप्त हुआ—

दोहा।

माल्यवान की वह दई पुस्तक राजा लेइ ।
आयौ निज घर को बहुरि यतनन राखी सेइ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वे दोऊ गुणदेव अरु नन्दिदेव हूक सङ्ग ।
राजभवन-महँ सुख सहित बसे नृपति के सङ्ग ॥
तिनकों सादर राखि कै राजा ऋषि-अवतार ।
निजभाषा महँ रचि लई सरस कथा अनुसार ॥
परम विचित्र सुरम्य वह कथा आपही आप ।
फैलि गई सब जगत में श्रीशङ्कर-परताप ॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri



॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

कथामुख नाम दूसरा लम्बक।

सवैया।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर बासुकि वालविनैबल पाई ।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई॥
प्रेम समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस दुहाई ।
पावहि सो जगदीस-कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ी बिबुधाई॥

पहिला तरङ्ग।

गौरीआलिङ्गनजनित हरतनु-स्वेद दिपैनु ।
नैनदहनभयभीत जनु वारुणास्त्र किय मैनु॥
सो रच्छा तुमरी करै टारै सकल वियाध ।
गङ्गाजल जैसे करै दूरि सकल अपराध ॥

अब हमारे पाठकगण. ध्यानपूर्वक उस अपूर्व कथा को सुनैं जिसे श्रीशङ्करजी के मुख से कैलासपर्वत पर पुष्पदन्त गण ने सुना था और फिर जिसे पुष्पदन्त से काणभूति ने, काणभूति से गुणाढ्य ने और गुणाढ्य से राजा सातवाहन नें पाया।

पृथ्वी पर वत्स नामक एक परम सुन्दर प्रदेश है, जिसे ब्रह्मा ने मानो स्वर्ग का दर्प तोड़ने के लिये संसार में रचा है। उस महाप्रदेश के मध्य भाग में कौशाम्बी नाम एक अतीव रमणीक नगरी थी जिसे लक्ष्मी की विलासभूमि कहना चाहिये। उस पुरी में परीक्षित राजा के पौत्र अर्थात् जन्मेजय राजा के पुत्र पाण्डववंशभूषण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजा शतानीक राज्य करते थे। वे अभिमन्यु के प्रपौत्र थे जिनके आदि पुरुष श्री-अर्जुनजी हो गये हैं। श्रीत्रिपुरारि शम्भु भगवान् की कृपादृष्टि से राज्य में सदा मङ्गल रहता था और शत्रु कहीं नाममात्र को भी न दिखाई देते थे। राजा की दोही रानियां थीं–एक तो वसुन्धरा (पृथ्वी) जो अनेक रत्नों को जनती थी और दूसरी रानी विष्णुमती जिसे कोई भी पुत्र न था। एक समय आखेट करते हुये राजा घोर जङ्गल में जा निकले, वहां उनसे शाण्डिल्यमुनि से परिचय हो गया। राजा को पुत्रार्थी देखकर वे अत्यन्त कृपा कर कौशाम्बीपुरी में आये और मन्त्रवल से कुछ लड्डू पवित्र कर रानी को खिला गये जिसके प्रभाव से राजा को एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सहस्रानीक रक्खा गया। राजा शतानीक उस पुत्र को पाकर ऐसे शोभित हुये जैसे विनय को पाकर गुण शोभित होता है। कुछ काल के अनन्तर राजा शतानीक ने अपने सुयोग्य पुत्र को राज्य का भार सौंप दिया और आप भूभार की चिन्ता छोड़ संसार का सुख करने लगे। समय पाकर उधर इन्द्र और असुरों में युद्ध आरम्भ हुआ; सो राजा शतानीक से सहायता पाने की इच्छा से इन्द्र ने अपने दूत मातलि को उनके पास भेजा। तब तो राजा ने युगन्धर नाम मुख्य मन्त्री तथा सुप्रतीक नाम मुख्य सेनापति के हाथ में पुत्र तथा राज्य को सौंप असुरों को रण में बध करने के लिये मातलि के साथ इन्द्रपुरी अमरावती को प्रस्थान किया। वहां जा इन्द्र से मिल वे रणभूमि को पधारे जहां यमदंष्ट्रा आदि बड़े बड़े राक्षसों को इन्द्र के सन्मुखही मारकर राजा भी समरही में मृत्यु को प्राप्त हुये। जब मातलि उनकी देह को रानी विष्णुमती के समीप ले आया तो उनके साथही साथ रानी ने भी इस संसार को परित्याग किया और राज्यलक्ष्मी ने पूर्ण रीति से राजा सहस्रानीक पर कृपा दिखाई।

आश्चर्य्य तो यह है कि ज्योंही राजा सहस्रानीक ने अपने पुरखाओं के सिंहासन पर पैर रक्खा त्योंही आसपास तथा दूर दूर के समस्त राजाओं ने आकर उनके चरणों पर अपना अपना मस्तक झुकाया। उधर इन्द्र की भी रण में जीत हुई और अमरावती में बड़ा भारी उत्सव मनाया गया, सो पुरन्दर ने भी अपने मित्र के सुत राजा सहस्रानीक को मातलि के हाथ निमन्त्रण भेजा और राजा ने वहां जा उत्सव में योग दिया। वहां उन्होंने देखा कि नन्दनवन में अनेक देवता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लोग अपनी अपनी भार्य्याओं को लेकर आनन्दक्रीड़ा कर रहे हैं, सो राजा को इस बात का बड़ा शोक हुआ कि मुझे कोई अनुरूप स्त्री नहीं मिली। जब इन्द्र ने इस अभिप्राय को समझा तो कहा कि हे राजन्! आप कुछ चिन्ता न करें आपकी इच्छा शीघ्रही पूरी होगी, आपकी होनहार भार्य्या संसार में उत्पन्न हो चुकी है सो उसका वृत्तान्त सुनिये मैं कहता हूं।

पूर्व समय की बात है कि मैं पितामह श्रीब्रह्माजी से भेंट करने के लिये एक समय उनकी सभा में गया और मेरा एक वसु विधूम नामक मेरे पीछे पीछे था। मैं वहां जाकर ब्रह्माजी के पास बैठाही था कि अलम्बुषा नाम एक अप्सरा किसी काम से उनके समीप आई, जिसके सुन्दर स्वरूप को देखतेही मेरा वह वसु परम कामातुर हो गया और वह अप्सरा भी उस रूपवान् वसु को देख मोहित हो गई। यह देख कमलासन ब्रह्माजी ने मेरे मुख की ओर देखा सो मैंने उनका अभिप्राय समझ दोनों को क्रोध से शाप दिया कि "हे अविनीतो! जाओ तुम दोनों मर्त्य-लोक में जन्म लो और वहां भार्य्या और पति होओ।" हे सहस्रानीक राजन्! आप उसी विधूम नामक वसु के अवतार हैं जो चन्द्रकुलभूषण राजा शतानीक के पुत्र होकर जन्मे हैं और वह अप्सरा श्रीअयोध्याजी में राजा कृतवर्म्मा के घर में पुत्री होकर उत्पन्न हुई है, उसका नाम मृगावती है, वही आपकी पत्नी होगी। राजा के हृदय में कामदेव की ज्वाला तो बलही रही थी, इन्द्र भगवान् के इस बचन-रूपी पवन से और भी अधिक भभक उठी, इसके उपरान्त इन्द्र ने उनका बहुत सत्कार कर अपने रथ पर सवार करा विदा किया और राजा सहस्रानीक मातलि के साथ निजपुरी कौशाम्बी को आ पहुँचे। चलती समय तिलोत्तमा अप्सरा ने कहा कि हे राजन्! मैं तुमसे कुछ कहा चाहती हूं, तनिक ठहरकर मेरी बात सुन लो; किन्तु राजा अपनी प्यारी मृगावती के ध्यान में ऐसे मग्न थे कि उन्हें तिलोत्तमा का कहना सुन न पड़ा। तिलोत्तमा यह देख अत्यन्त लज्जित हुई और उसने क्रोध से शाप दिया कि "जिसके ध्यान में मग्न होकर तुमने मेरी बात पर कान न दिया उससे तुम्हारा १४ वर्ष का वियोग होवै"। मातलि ने इस शाप को सुन लिया किन्तु राजा का मन अयोध्यापुरी में था और शरीर मानो कौ-शाम्बी में आन पहुँचा। यहां उन्होंने युगन्धरादि मन्त्रियों से उस सब हाल को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कह सुनाया जो मृगावती के बारे में इन्द्र से सुना था । राजा को एक दिन, एक वर्ष के समान बीतता था सो उन्होंने अयोध्या के राजा क्षतवर्म्मा के पास मृगावती के विवाह का सन्देशा दूतोंद्वारा कहला भेजा। राजा क्षतवर्म्मा ने यह सन्देश अपनी प्यारी रानी कलावती को हर्ष सहित सुनाया जिसके उत्तर में उनने यही कहा कि हे नाथ! मृगावती का विवाह राजा सहस्रानीक से अवश्यही करिये, मुझे भी स्वप्न में यही बात मानो किसी ब्राह्मण ने कही है। दूत लोग भी मृगावती का अनूठा रूप तथा उसकी समस्त चातुरी देख अत्यन्त प्रसन्न हुये और राजा सहस्रानीक से वहां का सब हाल आकर निवेदन किया । तदुपरान्त सब बात पक्की हो जाने पर उन दोनों का विवाह शास्त्ररीति से विधानपूर्वक हो गया। कुछ दिनों के उपरान्त राजा के मन्त्रियों के पुत्र उत्पन्न हुये, युगन्धर को यौगन्धरायण पैदा हुआ। सुप्रतीक के पुत्र का नाम रुमण्वान् और उसके मित्र के पुत्र का नाम वसन्तक रक्खा गया। समय पाकर रानी मृगावती को भी गर्भ रहा। राजा ज्यों ज्यों रानी को देखते थे त्यों त्यों नेत्रों की तृषा बढ़तीही जाती थी। एकदा रानी ने राजा से कहा कि मेरी इच्छा होती है कि मैं रुधिरभरे तालाब में नहाऊँ। राजा तो अत्यन्त धार्मिक थे सो उन्होंने रानी की इच्छा पूरी करने के लिये महावर के रङ्ग से तालाब भरवा दिया वह ठीक रुधिरही से पूर्ण जान पड़ने लगा। रानी जो उस तालाब में स्नान करने लगीं तो उनका सर्वाङ्ग महावर के रङ्ग से लालोलाल हो गया, उधर आकाश मार्ग से गरुड़ के वंश का कोई बहुत भारी पक्षी उड़ा जाता था। वह मांसपिण्ड के धोखे में रानी को अपने पञ्जों में पकड़ ले उड़ा। राजमहल में चारोंओर हाहाकार मच गया, राजा तो बेसुध हो कर धरणी पर गिर पड़े और सहस्रों आदमी रानी की खोज में भेजे गये। कुछ देर के उपरान्त राजा को किञ्चित् सुधि जो आई तो इतने में इन्द्र के यहां से मातलि आन कर उपस्थित हुआ। उसने राजा को अनेक प्रकार से समझाबुझा कर धीरज बँधाया और जैसा हुआ था तिलोत्तमा का शाप और उसकी अवधि का वृत्तान्त उन्हें बतला आकाश का मार्ग लिया। इतना सुन राजा सहस्रानीक यह कह बहुत विलाप करने लगे "कि हा प्रिये! आज उस क्रुद्धा तिलोत्तमा की छाती ठण्ढी हुई, आज उसके सभी मनोरथ पूर्ण हुए।" जब मन्त्रियों को भी इस शाप

का हाल विदित हुआ तो उनलोगों ने बहुत समझाया, इस प्रकार धीरज पा पुन: चौदह वर्ष के उपरान्त भेंट होने की आशा से राजा ने जीवन धारण किया। उधर उस मृगावती रानी को जो पक्षीन्द्र ले उड़ा था सो उसे उदयाचल पर ले गया किन्तु जीती देखकर वहीं छोड़ उड़ भागा। रानी भय से बहुतही व्याकुल हो गई थीं। उस पक्षी के चले जाने पर उठकर इधर उधर घूमने लगीं। शरीर पर वही स्नान करती समय का लाल वस्त्र पड़ा था। रानी अकेली अनाथ बन में रोती फिरती थी कि एक बड़ा भारी अजगर उसे निगल जाने के लिये मुँह बाय कर दौड़ा। उसी क्षण एक दिव्य पुरुष न जाने किधर से निकल आया; उसने आतेही उस अजगर को मार गिराया और उस बिचारी को जिसके गर्भ से अमूल्यरत्न उत्पन्न होनेवाला था बचाकर स्वयं लोप हो गया। रानी अत्यन्त दु:खित हो अब आपही मरने पर उद्यत हो गई सो एक भयानक जङ्गली हाथी के आगे जो सम्मुख से आ रहा था जा गिरी परन्तु वह मुंह मोड़ दूसरी ओर को चला गया। बन के जितने हिंसक जन्तु मिलते थे सभी उसे बचाकर हट जाते थे, ठीकही है "जाको राखै साइयां मार न सक्के कोय। लख बैरी सिर फिरैं तउ इक बाल न बीका होय।" इस प्रकार वह बिचारी अनाथिनी जङ्गल में चारोंओर भटकती भटकती थक गई सो एक शिला पर बैठ मुक्तकण्ठ हो रोने लगी। उसका रोना सुन एक मुनिपुत्र जो जङ्गल में फल मूल लेने आये थे उधर आ निकले देखते क्या हैं कि मानो साक्षात् शोक की मूर्त्ति रो रही है। दयावान् ऋषिपुत्र ने विनयपूर्वक पूछा कि हे माता! तुम कौन हो और इस भयानक बन में कैसे आई तथा क्यों इस प्रकार फूट फूट कर रो रही हो? रानी ने जब अपना समस्त वृत्तान्त उन्हें सुनाया तो वे उसे धीरज दे जमदग्नि ऋषि के आश्रम में ले आये। रानी ने देखा कि श्रीजमदग्निजी साक्षात् धीरज की मूर्त्ति की नाईं ध्यान लगाये आसन पर बैठे हैं। उनके तेज से उदयाचल यों प्रकाशमान हो रहा है मानो बालसूर्य्य का उदय हुआ हो। रानी जाते ही ऋषि के चरणों पर गिर पड़ी और उन्होंने दिव्यदृष्टि से सब वृत्तान्त जानकर उस वियोगदु:खिनी को धीरज दे कहा कि हे पुत्रि! तू कुछ चिन्ता मत कर तुझे अत्यन्त प्रतापशाली पुत्र उत्पन्न होगा जो अपने पितरों का वंश चलावेगा और तेरे भर्त्ता से तेरी भेंट भी होगी! मुनि का ऐसा भाषण सुन रानी मृगावती धैर्य्य

बाँध वहीं ऋषि के आश्रम में पुनः पतिमिलाप की आशा से रहने लगी। कुछ दिनों के उपरान्त, उसे जैसे सत्सङ्गति से आचार जन्म लेता है एक पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ, और उसी समय यह आकाशवाणी भी हुई कि "हे पुत्रि! तेरे गर्भ से महा यशस्वी यह उदयन नाम राजा उत्पन्न हुआ है और इसका पुत्र सर्वविद्याधरों का स्वामी बड़ाही विद्वान् और प्रतापी होगा।" रानी मृगावती को यह आकाशवाणी सुन बड़ा हर्ष और आनन्द हुआ। क्रमशः वह उदयन नामक बालक उसी तपोवन में ज्यों ज्यों सयाना होने लगा त्यों त्यों उसके सद्गुण भी बढ़ते गये। श्रीजमदग्नि ऋषि ने उसके सब क्षत्रियोचित संस्कार धीरे धीरे कर दिये और तब उसे अनेक विद्याओं तथा धनुर्वेद का पूर्ण पण्डित बना दिया। रानी मृगावती ने बड़े स्नेह-पूर्वक अपने हाथ का एक कड़ा उसे पहिना दिया जिसपर उसने अपनेही हाथों से राजा सहस्रानीक का नाम खोदा था। एक दिन आखेट खेलते खेलते उदयन ने देखा कि एक सँपेरे ने जङ्गल में एक बहुतही सुन्दर सर्प पकड़ा है। सर्प का सुन्दर स्वरूप देख उसे दया आई सो उसने उस व्याध से कहा कि मेरे कहने से तू इस सर्प को छोड़ दे। सँपेरे ने कहा कि हे प्रभो मेरी यही जीविका है मैं अत्यन्त दरिद्री हूं इसी प्रकार सर्पों को पकड़ ले जाता हूं और इनसे अपनी जीविका च-लाता हूं। मेरा पहिलेवाला सर्प मर गया है सो सारे जङ्गल में खोजते खोजते बड़े परिश्रम से मैंने मन्त्र और औषधियों के बल से इसे पकड़ा है। यह सुन उस बालक ने अपनी माता का दिया हुआ वह कड़ा उस सँपेरे को दे दिया और उस ने भी सर्प को छोड़ एक ओर का मार्ग लिया। व्याध के चले जाने पर उस सर्प ने नम्रतापूर्वक प्रणाम कर उस बालक से यों कहा कि हे वत्स मैं वासुकि नाग का बड़ा भाई वसुनेमि हूं, क्योंकि तुमने मेरी रक्षा की है इसलिये मैं प्रसन्न होकर तुम्हें कुछ देता हूं तुम इस वीणा को लेओ जो बजने में परमोत्तम और सब गुणों से युक्त है तथा इस ताम्बूली को भी ग्रहण करो और उस युक्ति को भी सीख लो जिससे न मुर्झानेवाली माला और तिलक बनाया जाता है। इस प्रकार इन वस्तुओं को लेकर उदयन जमदग्निजी के आश्रम को चला आया जहां माता बड़ी उत्सुकता से उसका मार्ग देख रही थी। वह उसे लौटा देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। उधर वह सँपेरा जङ्गल में निकल घूमता घूमता विधिवश उस कड़े को बेचने के लिये बाजार

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में पहुँचा और एक सुनार को उसने वह कड़ा दिखाया, उसपर राजा का नाम खुदा देखकर सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और स्वयं राजाही के सम्मुख ले गये। राजा सहस्रानीक ने उससे पूछा कि यह कड़ा तूने कहां से पाया। तब तो उस संपेरे ने उदयाचल पर जिस प्रकार सर्प को पकड़ा था तथा जैसे यह कड़े की जोड़ी पाई थी सब वृत्तान्त सविस्तर कह सुनाया। यह समाचार सुन तथा अपनी प्यारी रानी के हाथ के कड़े को पहिचान राजा सहस्रानीक बड़े ध्यान के साथ बिचारने लगे कि इतने में आकाशवाणी हुई कि हे राजन् तुम्हारा शाप अब छूट गया तुम्हारी रानी मृगावती पुत्र के सहित उदयाचल पर श्रीजमदग्नि ऋषि के आश्रम में वर्त्तमान है। इतना सुनतेही राजा मारे हर्ष के गद्गद हो गये।

वह दिन ज्यों त्यों बीतिगो दूजे दिन परभात।
उत्कण्ठित सेना सहित नृपति चल्यो हरषात॥
प्रिया पुत्र तें मिलन हित संग लिये वह भील।
सुभ साइत डङ्का दियो गवने सुमति सुशील॥

दूसरा तरङ्ग।

रास्ते में कुछ दूर जाकर राजा ने एक जङ्गल में किसी तालाब के किनारे डेरा लगा दिया। जब सोने का समय हुआ तो सेवा निमित्त कहानियों का कहनेवाला सङ्गतक नाम व्यक्ति आन उपस्थित हुआ। राजा ने उससे कहा कि मुझे रानी मृगावती के दर्शनों की बड़ी इच्छा हो रही है सो मेरे चित्तविनोद के लिये कोई मनोहर कथा सुनाओ। सङ्गतक ने कहा कि हे नरदेव! आप कुछ चिन्ता न करें आपका शाप अब क्षीण हो गया है सो शीघ्रही आपकी भेंट रानी से होगी। संयोग वियोग तो मनुष्य को संसार में हुआही करते हैं सो मैं इसकी कथा श्रीमान् को सुनाता हूं सुनिये। प्राचीन समय की बात है कि मालव देश में यज्ञसोम नाम कोई ब्राह्मण रहते थे उनके दो बेटे अत्यन्तही जनप्रिय थे। एक का नाम कालनेमि और दूसरे का नाम विगतभय था। जब उनके माता पिता का देहान्त हो गया तो युवावस्था प्राप्त होने पर वे दोनो भाई विद्याप्राप्ति करने के लिये पाटलिपुत्र नगर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को गये। जब वे दोनों पढ़कर पूर्ण विद्वान् हो गये तो उपाध्याय देवशर्म्मा ने अपनी दोनों कन्यायें उन दोनों शिष्यों के साथ ब्याह दीं, वे दोनों भी साक्षात् विद्या की मूर्त्तिही थीं। कालनेमि ने देखा कि उसके पड़ोस के गृहस्थ लोग खूब धन से सन्तुष्ट और प्रसन्न हैं सो उसने डाह खाकर होम करना आरम्भ किया और लक्ष्मी को वश में कर लिया। लक्ष्मीजी ने सन्तुष्ट होकर उससे कहा कि तुझे बहुत धन प्राप्त होगा और तेरा पुत्र राजा होगा किन्तु अन्त में तेरा बध चोर की नाईं किया जायगा कारण यह है कि तूने डाह से दूषित होकर अग्नि में होम किया है। लक्ष्मीजी इतना कहकर अन्तर्धान हो गईं और क्रमशः कालनेमि को भी बहुत धन प्राप्त होने लगा और कुछ दिनों के उपरान्त उसे एक पुत्र भी उत्पन्न हुआ। पिता का मनोरथ पूर्ण हुआ और क्योंकि वह पुत्र श्रीजी के बरदान से प्राप्त हुआ था इसलिये कालनेमि ने उसका नाम श्रीदत्त रक्खा। धीरे धीरे श्रीदत्त भी सयाना होने लगा और यद्यपि वह ब्राह्मण था तौभी अस्त्रविद्या और मल्लविद्या (कुश्ती) में बेजोड़ही था। कालनेमि के भाई विगतभय की भार्य्या को सर्प ने डस लिया सो उसकी मृत्यु के उपरान्त वह तीर्थ करने के अभिप्राय से परदेश को चला गया, इधर गुणज्ञ राजा वल्लभशक्ति ने श्रीदत्त को अपने पुत्र विक्रमशक्ति का सखा बना राजसभा में रख लिया। फिर अवन्तिकादेशोत्पन्न दो क्षत्रियपुत्रों से जिनका नाम बाहुशाली और वज्रमुष्टि था इसकी मैत्री हो गई। जितने दाक्षिणात्य थे सभों को इसने बाहुयुद्ध में जीत लिया था, और मन्त्रिपुत्र भी सब के सब इसके सुहृत् हो गये। महाबलशाली व्याघ्रभट और उपेन्द्रबल तथा निष्ठुरक ने भी इससे मैत्री कर ली। एक समय राजा का पुत्र अपने सेवकों के सहित, तथा श्रीदत्त अपने मित्रों के साथ जान्हवीतट पर वर्षा की ऋतु में विहार करने निकले। सेवकों ने मिल कर अपने उस राजपुत्र को राजा बनाया और मित्र लोगों ने श्रीदत्त को राजा बनाया। बस इतनेही में राजपुत्र ने क्रुद्ध होकर श्रीदत्त को युद्ध के लिये ललकारा। श्रीदत्त झट तयार हो गया और उसने बाहुयुद्ध में राजकुमार को जीत लिया तब तो राजा के पुत्र ने इस प्रकार कलङ्कित होने पर मन में ठाना कि इसे मार डालना चाहिये। श्रीदत्त ने भी उसका अभिप्राय समझ लिया सो वह अपने मित्रों के सहित उसके साम्हने से टल गया और परदेश का रास्ता लिया। जाते हुये क्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखता है कि श्रीगङ्गाजी के प्रवाह में एक परम सुन्दर स्त्री बही जाती है जिसका स्वरूप ऐसा था मानो सागर की लक्ष्मी हो। सो वह अपने छओ मित्र बाहुशाली इत्यादि को किनारे बैठा उस स्त्री को बचाने के लिये जल में कूद पड़ा कुछ दूर जाकर उस स्त्री को उसने केश से पकड़ा और किनारे लाने के उद्योग में बिचारा साँस टूट कर स्वयं भी गोते खाकर डूब गया। थाह पर जाके आँखें जो खोलीं तो क्या देखता है कि न तो वह जल है न वह स्त्री है, किन्तु एक परम सुन्दर उद्यान है और बीच में एक दिव्य शिव-मन्दिर है। यह देख उसे बड़ा आश्चर्य्य हुआ, सो उसने मन्दिर में जा शिवजी को प्रणाम किया और उसी बगीचे से कुछ फल इत्यादि तोड़ आहार किया और रात वहीं बिताई। प्रातःकाल वही सुन्दरी श्रीशङ्करजी के पूजन के निमित्त आई, उसका स्वरूप साचात् मूर्त्तिमयी श्रीजी के रूप सा था। वह इन्दुमुखी पूजा करके अपने घर को गई और श्रीदत्त भी उसके पीछे २ वहां पहुँचा। देखा कि उसका गृह देवताओं के मन्दिर के समान विशाल सुन्दर और स्वच्छ है। वह उसके अन्दर पैठी और जातेही अपनी सहेलियों से, जिनकी संख्या एक सहस्र से कम न होगी, बिना कुछ बोलेही पलँग पर लेट रही। श्रीदत्त भी साहस कर जाके उसके समीप बैठ गया। इतने में अकस्मात् वह साध्वी रोने लगी और बड़े बड़े मोतियों सरीखे अश्रुविन्दु उसके ऊँचे कुचमण्डल से होकर भूमि पर गिरने लगे। यह देख श्रीदत्त का हृदय करुणा से फटने लगा, सो उसने पूछा कि आप कौन हैं और क्या दुःख आपको है जो ऐसा रोती हैं? हे सुन्दरि! मुझसे इसका हाल कहिये, यदि मुझसे हो सकेगा तो मैं उस दुःख के दूर करने का यत्न करूँगा। यह सुन उसने किसी किसी प्रकार अपना रोना रोक कर कहा कि हे वीर! हमलोग दैत्यपति बलि राजा की एक सहस्र पौत्रियां हैं जिनमें से ज्येष्ठा मैं हूं, मेरा नाम विद्युत्प्रभा है। हमारे पितामह को विष्णु भगवान् ने बांध दिया और हमलोगों के पिता युद्ध में उन्हीं के द्वारा मारे गये। इसके अनन्तर हम सब अपने नगर के बाहर निकाल दी गईं और जिसमें फिर न लौट कर आ जावें, द्वार पर मार्ग रोकने के लिये १ सिंह बैठा दिया गया। उधर हमारा मार्ग रोका गया इधर हमारा हृदय दुःख से छा उठा, यह सिंह वह यक्ष है, सो श्रीकुबेरजी के शाप से सिंह हो गया है। जब हमलोगों ने विष्णु

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् से निजपुरी में प्रवेश पाने का उपाय पूछा तो उन्होंने कहा कि जब यह सिंह किसी मनुष्यद्वारा हराया जायगा तब इसका शाप छूटेगा। हे वीर! मैं आपको यहां इसलिये ले आई हूं कि हमलोगों के शत्रु उस सिंह को आप जीतिये। उसका पराभव करने पर आप उसके पास से मृगाङ्क नामक खड्ग को पावेंगे, जिसके प्रभाव से आप इस पृथिवी को जीत कर राजा होवेंगे—यह सुन श्रीदत्त ने कहा बहुत अच्छा। वह दिन तो किसी किसी प्रकार बीता, दूसरे दिन उन दैत्यकन्याओं को आगे कर वह उस उद्धत सिंह के साम्हने पहुँचा और उसे बाहुयुद्ध में जीत लिया। वह सिंह उसी क्षण शाप से छूट मनुष्याकार हो गया और प्रसन्न हो श्रीदत्त को खड्ग दे आकाशमार्ग से उड़ लोप हो गया। दैत्यकन्यायें यह तमाशा देख अत्यन्त प्रसन्न हुईं और विद्युत्प्रभा अपनी सब बहिनों के साथ निजपुरी में आई। यहां उसने श्रीदत्त को एक ऐसी अंगूठी दी जिसमें विष नाश करने की शक्ति थी, वहां रहते २ उस युवा व्यक्ति का चित्त उस पर आ गया। यह देख उसने एक युक्ति निकाली, श्रीदत्त से कहा कि प्रथम तुम इस खड्ग को हाथ में लेकर इस तालाब में स्नान कर लो, खड्ग हाथ में रहने से तुम्हें ग्राह इत्यादि का भय न रहेगा। उसके कहने के अनुसार श्रीदत्त ने आँख मूंद ज्योंही गोता मारा, देखता क्या है कि वह उसी जगह गङ्गातट पर खड़ा है जहां से वह स्त्री के उद्धार के निमित्त कूदा था। अपने तईं खड्ग और अंगूठी सहित पाताल से उठा हुआ पाकर उसे खेद और आश्चर्य्य एक साथही हुआ, उसने समझ लिया कि असुरकन्या ने मुझे ठग लिया है। तब तो वह वहां से अपने उन छओं मित्रों की खोज में निज घर की ओर चला, थोड़ी दूर जाने पर देखता क्या है कि साम्हने से उसका वही निष्ठुरक नामक मित्र चला आता है। वह झट उसके समीप पहुँच प्रणाम कर उसे एकान्त में ले जाकर अपने शेष मित्रों का हाल पूछने लगा निष्ठुरक ने कहा कि मित्र जब तुम गङ्गाजी में डूब गये तो हमलोगों ने विचारा कि अब मित्र के बिना हमलोग जीकर क्या करेंगे सो ज्योंही अपना सिर काटने को हमलोग उद्यत हुये कि यह आकाशवाणी हुई कि "हे पुत्रो! तुम लोग मत घबड़ाओ तुम्हारा वह सखा प्रसन्नतापूर्वक कुछ दिनों में लौट आवेगा"। हमलोग तुमारे पिताजी से यह वृत्तान्त सुनाने जा रहे थे कि रास्ते में एक पुरुष ने आ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर हमलोगों से कहा कि अब नगर में मत जाना क्योंकि वह बल्लभशक्ति राजा तो मर गया और मन्त्री लोगों ने उसके पुत्र विक्रमशक्ति को मिलकर राजा बना दिया है। राज्य पाकर दूसरेही दिन वह कालनेमि के घर पर जा पूछने लगा कि तेरा पुत्र श्रीदत्त कहां है? उनने उत्तर दिया कि मुझे नहीं खबर कि वह कहां चला गया। राजा ने कहा कि इसी ने अपने पुत्र को कहीं छिपा रक्खा है बस क्रोध से उसने कालनेमि को चोरों की नाईं सूली पर खिंचवा दिया। यह देख उसकी भार्य्या का हृदय दुःख के मारे फट गया, ठीकही है दुष्टों का एक कर्म्म कई एक पापों का कारण होता है। अब वह विक्रमशक्ति राजा, श्रीदत्त तथा उसके मित्रों को मार डालने की खोज में है सो आप लोग नगर में मत जाइये. कहीं दूसरी जगह भाग जाइये। ऐसा उस पुरुष का भाषण सुन शोक से परम दुःखित हो बाहुशाली इत्यादि तुम्हारे पांचो मित्र अपने देश उज्जयिनी को चले गये और मुझसे कह गये कि तुम यहीं छिपकर रहा करो, सो हे मित्र! चलो अब उज्जयिनी चलकर अपने मित्रों से मिलें। यों निष्ठुरक का बचन सुन माता पिता की मृत्यु पर शोच करते हुये श्रीदत्त ने बदला लेने का विचार ठान अपने खड्ग की ओर बार बार दृष्टि डाली। फिर अवसर की प्रतीक्षा करता हुआ वह निष्ठुरक के सहित अपने मित्रों से मिलने के लिये उज्जयिनीपुरी की ओर चला। मार्ग में अपने मित्र से सब वृत्तान्त गङ्गा में डूबने से लेकर तालाब में गोता मारने तक वह कहने लगा। इतनेही में साम्हने जो दृष्टि उठी तो एक अबला रास्ते में रोती हुई दिखाई पड़ी। पूछने पर उसने कहा कि मैं रास्ता भूल गई हूं, मुझे मालवा तक कोई पहुँचा दे तो बड़ा उपकार हो। श्रीदत्त ने दया करके कहा अच्छा हमलोग वहीं जाते हैं हमारे सङ्ग चली चलो। वह साथ हो गई, चलते २ एक दिन किसी उजाड़ नगर में पहुंचे, सो बाहरही किसी अकेले स्थान में उन लोगों ने डेरा लगा दिया और नींद में सो गये। श्रीदत्त की निद्रा जो अचानचक खुली तो उसने देखा कि वह स्त्री निष्ठुरक को मारकर उसका मांस बड़ी प्रसन्नता से खा रही है। यह देखतेही वह मृगाङ्क तलवार खींच उठ खड़ा हुआ वह स्त्री भी घोर राक्षसी रूप से साम्हने खड़ी हो गई। ज्योंही उस राक्षसी को मारने के लिये श्रीदत्त ने उसके बाल पकड़े त्योंही वह दिव्यरूप में होकर कहने लगी कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे महाभाग वीर ! तू मुझे मत मार, छोड़ दे, मैं राक्षसी नहीं हूं, मुझे श्रीविश्वामित्र ऋषिजी से ऐसाही शाप हुआ था। एक समय की बात है कि श्रीकौशिकमुनिजी कुबेरजी का पद प्राप्त करने की इच्छा से तपस्या करने लगे, सो धनाधिप ने मुझे विघ्न करने के लिये भेजा। मैं अपने मनोहर रूप से उन्हें मोह न सकी, सो लज्जित होकर महाभयानक रूप धर उन्हें भय दिखाने लगी। यह देख ऋषिजी ने मेरे स्वरूप के समानही शाप दिया कि "हे पापिष्टे ! जा तू राक्षसी हो जा और मनुष्यों को मारा खाया कर"—प्रार्थना करने पर उन्होंने यह आज्ञा दी कि जब श्रीदत्त नामक वीर पुरुष के हाथ से तेरा केश पकड़ा जायगा तब तेरा शापान्त होगा, सो उसी क्षण से मेरा राक्षसीभाव हो गया। मैंनेही इस नगर के सब लोगों को खाकर इसे उजाड़ कर दिया है, अब तुम्हारे द्वारा मेरे शाप का अन्त हुआ है सो मैं प्रसन्न हूं तुम वर मांगो। यह सुन श्रीदत्त ने सादर कहा कि, हे शुभे ! मुझे किसी दूसरे वर की इच्छा नहीं है मैं इतनाही चाहता हूं कि मेरा यह सखा जी उठे। "ऐसाही हो" इतना कह वह तो उधर अन्तर्धान हो गई। इधर निष्ठुरक ज्यों का त्यों शरीर से भला चङ्गा हो उठ बैठा। श्रीदत्त को यह देख अत्यन्त विस्मय और हर्ष हुआ। दूसरे दिन वह अपने मित्र के साथ चल पड़ा और क्रमशः उज्जयिनीपुरी में जा पहुँचा। उसके मित्र लोग वहां इसका मार्गही देख रहे थे, सो सब इसके आने पर ऐसे प्रसन्न हुये जैसे मेघ के आने पर मोर हर्षित होते हैं। बाहुशाली ने श्रीदत्त को अपनेही घर में बहुत आदर के साथ टिकाया और उसने भी वहां रहकर निजबीती सब कहानी कह सुनाई। बहुशाली के माता पिता भी श्रीदत्त को निज पुत्रही के समान मानते थे और वह भी अपने घरही के समान सुखपूर्वक वहां रहने लगा। एक बेर की बात है कि, मधुमास का उत्सव देखने के लिये वह अपने मित्रों के साथ मेले में गया था कि वहां राजा बिम्बिकि की कन्या जो पूजन के निमित्त आई थी दीख पड़ी। दोनों की चार आंखें होतेही एक दूसरे के हृदय में बस गये, नेत्रों ने बार बार के आने जाने से मानो दूती का काम किया। राजसुता का नाम मृगाङ्कवती था, वह चन्द्रवदनी उसी क्षण से श्रीदत्त के हृदय में ऐसी बसी कि उसे अपनी कुछ भी सुधबुध न रही। वह तो वन में किसी ओर को चली गई, इधर श्रीदत्त पागल सा हो

गया। बाहुशाली ने अपने मित्र की यह दशा देख कहा कि हे सखे! मैं समझ गया कि तुम्हारा जी राजकुमारी पर आ गया है सो अब मुझसे छिपाव मत करो, चलो हमलोग उसकी खोज में चलें। बहुत अच्छा कह के वे सब लोग राजकुमारी जहां थी वहां गये, पहुँचतेही देखा कि वहां एक हाहाकार मचा हुआ है और सब लोग रो रहे हैं। पूछने से जान पड़ा कि राजपुत्री को सर्प काट गया है। बाहुशाली ने जाकर द्वारपाल से कहा कि आप लोग कुछ चिन्ता न करें मेरे मित्र के पास एक ऐसी अंगूठी है कि उसके बल से अभी विष उतर जायगा। इनने कहा आप अपने मित्र को बुलाइये। बाहुशाली ने श्रीदत्त को दिखला दिया, उसी क्षण वह द्वारपाल श्रीदत्त को लेकर राजकुमारी की सेवा में उपस्थित हुआ। उसने वही अंगूठी राजपुत्री के हाथ में पहिना दी और कुछ मन्त्र पढ़ने लगा। राजपुत्री कुछ देर में जी उठी, सब लोग यह हाल देखकर श्रीदत्त की स्तुति आश्चर्य से करने लगे। राजा भी यह वृत्तान्त सुन उसी दम आन उपस्थित हुये। तब तो श्रीदत्त अपनी अंगूठी वहीं छोड़ राजा से सत्कारित हो बाहुशाली के घर चला आया। वहां भी राजा ने बहुत सा सुवर्ण नौकरों के हाथ भेज दिया वह सब श्रीदत्त ने बाहुशाली के पिता के आगे रख दिया। किन्तु उसे राजपुत्री का स्नेह ऐसा प्रबल हो गया था कि वह रात दिन उसी के विरह में गला जाता था, यह दशा देख मित्र लोग भी सब घबड़ाये कि अब क्या करना चाहिये। एक दिन राजपुत्री की प्यारी सखी भावनिका अँगूठी देने के बहाने से आई और श्रीदत्त से कहने लगी कि हमारी राजकुमारी कहती हैं कि तुमने जो मेरे प्राण बचाये हैं सो या तो तुम्हीं से मेरा विवाह होगा या मैं विष खाकर शरीर त्याग करूंगी। जब ऐसा भावनिका ने कहा तो सब मित्रों ने बैठकर उसके साथ सलाह की कि अब क्या करना चाहिये। अन्त यह विचार ठहरा कि चुपके से राजपुत्री को निकालकर मथुराजी जाकर छिप के रहना चाहिये। इस प्रकार भावनिका की सलाह से निश्चय ठहरा, उन लोगों ने उसे विदा किया। दूसरे दिन बाहुशाली तो अपने तीन मित्रों के साथ वाणिज्य के बहाने से मथुराजी को चला गया। रास्ते में वह चतुर और तेज सवारियों को इसलिये नियत करता गया कि राजपुत्री के आने पर वे लोग शीघ्रतापूर्वक उसे मथुराजी पहुँचा देवैं। श्रीदत्त ने भी किसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक स्त्री को उसकी बेटी सहित मदिरा पिलाकर राजकुमारी के राजभवन में टिकवा दिया और इधर दीप बालने के बहाने से भावनिका ने घर में आग लगा दी और स्वयं राजकुमारी को साथ ले बाहर निकल गई। श्रीदत्त तो बाहर बैठा ही था उसने झट बाहुशाली के समीप जो आगे जा चुका था उन दोनों को शेष दो मित्रों के साथ भिजवा दिया । इधर आग लगने से वह मतवाली स्त्री अपनी बेटी के साथ जल मरी, लोगों ने अनुमान किया कि राजकुमारी अपनी सहेली के सहित भस्म हो गई। श्रीदत्त भी नगर में ज्यों का त्यों दिखाई दिया इस कारण किसी को भी कुछ सन्देह न हुआ । दूसरी रात को श्रीदत्त भी अपना मृगाङ्क खड्ग हाथ में ले अपनी प्यारी के पीछे मथुराजी को चला। अपने मित्रों से शीघ्र मिलने की इच्छा से एकही रात में वह मार्ग तै कर सबेरा होते होते विन्ध्याचल के जङ्गल में जा मिला। रास्तेही में उसे असगुन होने लगे थे, सो वहां पहुँचकर देखता क्या है कि वे दोनों मित्र भावनिका के सहित मार्ग में घायल पड़े हैं। हाल पूछने पर उन्होंने कहा कि अचानचक अनेक सवारों ने आकर हमलोगों को घेर लिया और मारने लगे, हमलोग बहुत लड़े पर सब घायल हो हो कर गिर पड़े तब तो वे लोग राजपुत्री को एक घोड़े पर बैठाकर ले भागे और हम सब घायल पड़े लाचार देखते रहे। सो जब लों वे लोग दूर न निकल जाँय तबसे तुम झटपट इसी मार्ग से जाओ, हमलोगों के पास रहने की कोई आवश्यकता नहीं है जैसे हो राजकुमारी को छुड़ाना चाहिये। इतना सुन श्रीदत्त बार बार अपने घायल मित्रों को देखनेलगा फिर झट उसने उधर का रास्ता लिया जिधर वे लोग राजपुत्री को हर ले गये थे। कुछ दूर जाकर वह उन सवारों से मिला और देखा कि एक क्षत्री युवापुरुष राजकुमारी को घोड़े पर बैठाये जा रहा है। पहुँचतेही उसने उसे पहिले तो बहुत कुछ समझाया बुझाया जब देखा कि वह किसी प्रकार नहीं मानता तो झट उसकी टाँग पकड़ उसे घोड़े के नीचे गिरा दिया और मृगाङ्क से उसे दो टुकड़े कर दिये। फिर उसी के घोड़े पर सवार हो उन शेष के सवारों से भी युद्ध करने लगा और क्रमशः उन सभों को भी काट गिराया। जो बाकी बचे वे इसका ऐसा अमानुषीय बल देख, जान बचाकर भय के मारे भाग गये। तब तो श्रीदत्त ने अपनी प्यारी मृगाङ्कवती को उसी घोड़े

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर सवार करा लिया और अपने मित्रों से मिलने को चला । अभी थोड़ीही दूर गया होगा कि वह घोड़ा जो रण में घायल हो गया था लड़खड़ाने लगा । श्रीदत्त अपनी भार्य्या के सहित उतर पड़ा और घोड़ा गिरकर मर गया । राजपुत्री यह सब तमाशा देख भयभीत हो रही थी किन्तु इस प्रकार अपने प्यारे द्वारा निस्तार पाकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुई । मारे चिन्ता और उत्कण्ठा के उसका गला सूख रहा था सो उसे बड़ी प्यास लगी । श्रीदत्त उसे वहीं बैठाल पानी की खोज में गया पर कहीं भी उसे जल न दिखाई दिया । इधर सूर्य्य-भगवान् अस्ताचल पर पहुँचे, उस समय उसे जल मिला तो रास्ता भूल जाने के कारण वन में भटकने लगा । सो वह रात उसे चकवा की नाईं वनही में बीती । प्रात:काल वह उस स्थान पर जल लेकर पहुँचा, देखा कि घोड़ा तो वहीं मरा पड़ा है किन्तु उस सुन्दरी राजपुत्री का कहीं भी पता नहीं है । तब तो वह व्याकुल हो अपने खड्ग को भूमि पर रख एक ऊँचे वृक्ष पर चढ़ दूर दूर तक देखने लगा । इतने में कोई व्याधों का सरदार उसी राह से आ निकला, उसने तलवार भूमि पर पड़ी देख उठा ली । उसे देख श्रीदत्त वृक्ष पर से उतरा और उस व्याध से पूछने लगा कि तुमने किसी स्त्री को कहीं इस वन में देखा है, उसने कहा कि समीपही मेरा गांव है कदाचित् वह वहां चली गई हो सो तुम चल वहां उसे ढूंढ़ो तबसे मैं भी वहां आता हूं तुम्हारी तलवार भी वहीं पर आकर दूंगा । इतना सुन श्रीदत्त तो उसके मनुष्यों के साथ उस गांव की ओर चला क्योंकि उसे तो अपनी खोई हुई प्रिया की धुन लग रही थी । वहां पहुँच उन आदमियों ने कहा कि आप बहुत थके हैं तनिक यहां ठहर कर विश्राम कर लीजिये । श्रीदत्त थका तो थाही लेटतेही घोर निद्रा में सो गया । आंख खुलने पर देखता क्या है कि उसके दोनों पैरों में बेड़ियां पड़ी हैं । लाचार वह अपनी उसी प्रिया की, जो उसे क्षणभर का सुख दे लोप हो गई थी, चिन्ता में वहीं पड़ा रहता था । व्याधराज के नौकर चाकर उसे खाने पीने तथा वस्त्रेत्यादि का दु:ख न होने देते थे । एक दिन एक दासी जिसका नाम मोचनिका था आकर यों कहने लगी कि हे महाभाग! आप मृत्यु के मुँह में यहां कैसे आ फंसे । वह व्याधराज इस समय किसी काम से बाहर गया है, आने पर वह आपको श्रीचण्डिकाजी के सन्मुख बलिदान चढ़ावेगा । इसी कारण वह विन्ध्याचल के जंगल से आपको यहां लाया है और युक्तिपूर्वक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आपको यहां रख भली प्रकार बांध अपने काम से गया है। क्योंकि उसने आपको भगवती का बलिदान विचार रक्खा है इसी कारण वस्त्र और भोजन इत्यादि से वह आपको प्रसन्न रखता है जिसमें आप दुर्बल न हो जाँय। यदि आप मेरा कहना मानें तो बचने का एकमात्र उपाय मैं आपको बतलाऊं, सो यह है कि इस व्याधराज की एक परम सुन्दरी कन्या सुन्दरी नाम की है वह आपको देख अत्यन्त मदनातुर हो गई है यदि आप उसकी इच्छा पूरी करें तो वह आपको बचा सकती है। श्रीदत्त को तो अपने बचाव की चिन्ता लगही रही थी उसने इस बात को स्वीकार कर लिया और गान्धर्व रीति से व्याधराज की उस सुन्दरी सुता को अपनी पत्नी बनाया। प्रत्येक रात को यह उसकी बेड़ी खोल देती और दिन को पुनः बांध देती थी। योंही कुछ दिनों के उपरान्त व्याधराज की वह सुन्दरी नामक कन्या गर्भवती हुई। मोचनिका के मुँह से सुन्दरी की माता ने यह सब हाल सुना सो जामातृस्नेह से श्रीदत्त के पास आकर धीरे धीरे यों कहने लगी कि हे पुत्र! सुन्दरी का पिता श्रीचण्ड अत्यन्तही क्रोधी है वह तुम्हें किसी प्रकार क्षमा न करेगा, सो मैं तुम्हें खोल देती हूं अब तुम जाओ किन्तु अपनी इस सुन्दरी को भूल न जाना। यों कह सास ने उसके बन्धन खोल दिये पर तलवार तो श्रीचण्ड के हाथ रहगई सो वह सुन्दरी से भेंट कर उसी पूर्व जङ्गल में अपनी प्यारी मृगाङ्कवती की खोज में चला। सगुन भी अच्छे होने लगे। चलते चलते वह उसी स्थान पर पहुँचा जहां वह घोड़ा मरा था और जहां से उसकी प्यारी भार्य्या खो गई थी। देखा कि एक व्याध साम्हने से चला आता है उससे उसने पूछा कि तुमने इस जङ्गल में कहीं किसी स्त्री को देखा है। उसने कहा कि क्या आप का नाम श्रीदत्त है। इसने दीर्घ स्वांस लेकर कहा हां वह मन्द भाग्य मैंही हूं। तब तो उस मृग पकड़नेवाले ने कहा कि हे सखे सुनो मैंने एक दिन तुम्हारी इस भार्य्या को जङ्गल में रोती हुई पाया था। मैंने पूछा कि तुम कौन हो, उसने आपका सब हाल सुनाया। तब मैं दयाकर उसे अपने गांव में ले गया। वहां तरुण भीलों को देखकर वह बहुत डरी और कहने लगी कि मुझे मथुरा जी को पहुँचा दो सो मैं उसे मथुरा जी के समीप नागस्थल गांव में पहुँचा आया हूं जहां वह एक वृद्ध ब्राह्मण के घर में जिनका नाम विश्वदत्त है रहती है। फिर मैं यहां लौट आया। आपका नाम तो मैंने

उससे सुनही लिया था सो अब आप शीघ्र नागस्थल गांव में जाकर उसका पता लगा लीजिये। यह सुन श्रीदत्त ने उसे धन्यवाद दिया और झट नागस्थल गांव की ओर चला। दूसरे दिन सन्ध्या होते होते वहां जा पहुँचा विश्वदत्त का पता लगा उसके घर जा वह कहने लगा कि मैं श्रीदत्त हूं उस व्याध ने जो मेरी भार्य्या आपके घरमे रख दी है उसे मुझे दीजिये। यह सुन विश्वदत्त ने उत्तर दिया कि मथुरा जी में मेरा एक बड़ा गुणग्राही मित्र जातिका ब्राह्मण रहता है जो राजा सूरसेन का उपाध्याय तथा मन्त्री है उसी के घर में मैंने तुम्हारी भार्य्या को रक्षापूर्वक रख दिया है। मैं तो इस निराले गांव में रहता हूं उसकी रक्षा क्योंकर कर सकता, सो तुम सवेरेही उनके पास जाना, आज रात को यहां विश्राम के निमित्त टिक रहो। यह सुन उस रात को वह विश्वदत्त के घर में टिक रहा और प्रातः-काल उन से विदा हो दूसरे दिन मथुरा जा पहुँचा। बड़ी लम्बी यात्रा करने के कारण वह धूल से भर रहा था सो थकावट मिटाने के लिये उसने नगर के बाहर वाले स्वच्छ तालाव में स्नान किया। किसी चोर ने एक गठड़ी इसी तालाव के जल में छिपाई थी, वह गठड़ी इसके पैर से टकराई, उसने जो उसे उठाकर खोला तो उसके अन्दर से एक बहुमूल्य हार निकला। श्रीदत्त उस हार तथा वस्त्र को लिये हुआ अपनी प्यारी से मिलने के लिये नगर में पैठा। सिपाहियों ने उस हार तथा वस्त्र को देखकर पहिचाना और चोर चोर करके पकड़ लिया तथा कोतवाल के पास ले गये। कोतवाल ने उसे राजा के सम्मुख उपस्थित किया और राजा ने चट पट फांसी की आज्ञा दे दी। जिस समय इसे डुग्गी बजा कर फांसी देने के लिये नगर से घुमाते हुये ले चले तो दूर से मृगाङ्कवती ने उसे देखतेही पहिचान लिया और जिस मन्त्री के घर में वह ठहरी थी उससे जाकर कहा कि यह जो व्यक्ति फांसी पर जा रहा है यही मेरा पति है। मन्त्री यह सुनकर राजा के पास पहुंचा और सब यथार्थ हाल पूरी रीति से समझा कर उसे छुड़वा अपने घर ले आया। देखिये, दैव की गति कैसी विलक्षण है कि यह मन्त्री वही विगतभय नामक व्यक्ति है जो श्रीदत्त का चाचा लगता था और जो निज भार्य्या के मरने पर उदास हो घर से विदेश चला आया था यहां आकर भाग्यवश राजा का मन्त्री हो गया था। जब मन्त्री, श्रीदत्त को अपने घर ले आया तो पूछने पर वह अपनी सब कथा सुना गया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह निश्चय होने पर कि मन्त्री जो मेरे चाचा हैं वह उठकर उनके चरणों पर गिरपड़ा और मन्त्री ने भी अपने खोये हुये भतीजे को पाकर हृदय से लगाकर उसका माथा चूम आशीर्वाद दिया। फिर अकेले में श्रीदत्त से उसके चाचा ने कहा कि हे पुत्र! तुम अधीर मत होओ सुनो मुझे यक्षिणी सिद्ध है। पांच सहस्र घोड़े और सात करोड़ स्वर्णमुद्रा उसने मुझे दी हैं और क्योंकि मुझे कोई पुत्र नहीं है सो वह सब धन अब तुम्हाराही है। इतना कह उसने उसको प्रिया को उसे दे दिया, जिसका विवाह उत्तम रीति से विधिवत् हुआ और अपने चाचा से ऐसा विभव पाकर श्रीदत्त निज भार्य्या मृगाङ्कवती के सहित वहां सुखपूर्वक रहने लगा। किन्तु उसके हृदय में सदा अपने मित्र बाहुशाली इत्यादि की चिन्ता लगी रहती थी कि वे लोग कहां होंगे और क्या करते होंगे। एक दिन श्रीदत्त के चाचा ने एकान्त में उससे कहा कि हे पुत्र! इस देश के राजा सूरसेन की एक कन्या परम सुन्दरी है, राजा की आज्ञा से मैं उसे अवन्तिकादेश में देने के लिये ले जानेवाला हूं सो इसी बहाने से उसे हर कर मैं तुझे दे दूंगा। फिर उसकी तथा मेरी सेना की सहायता से तुम उस राज्य को शीघ्र प्राप्त करोगे जो श्री (लक्ष्मी) जी ने तुम्हें देने को कहा है। ऐसा निश्चय कर श्रीदत्त और उसका चाचा दोनों सेना तथा परिवार के सहित राजपुत्री को लेकर अवन्तिकादेश की ओर चले। जब वे लोग विन्ध्याचल के जङ्गल में पहुंचे तो डाकुओं ने आकर चारो ओर से उन्हें घेर लिया और बाणों की वर्षा करने लगे। श्रीदत्त की सारी सेना भाग गई और वह घायल होकर भूमि पर गिर पड़ा, डाँकूलोग सब धन लूट कर उसे बांध अपने गांव में ले चले. फिर वे लोग उसे शङ्ख और घण्टा बजाते हुये श्रीदेवीजी के मन्दिर में बलिदान देने के लिये ले गये। वहां दर्शनों के निमित्त डाकुओं के सरदार की पुत्री वही सुन्दरी नाम की आई थी उसने जो श्रीदत्त को देखा तो उसी क्षण पहिचान गई। डाकुओं के सर्दार को इस सुन्दरी के अतिरिक्त कोई सन्तति न थी सो वह मृत्यु के समय अपनी कुल सम्पत्ति का अधिकार अपनी इसी पुत्री को दे गया था; डांकूलोगों ने सुन्दरी की आज्ञा से श्रीदत्त को छोड़ दिया और वह उसके साथ उसके घर आया। वहां उसने अपने चाचा से परिवार सहित भेंट की और अपना मृगाङ्क नामक खड्ग पाकर अपनी स्त्री के साथ रहने लगा। वहीं पर सूरसेन की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कन्या से भी उसका विवाह हो गया। इस प्रकार श्रीदत्त उस देश में बड़े राज्य को प्राप्त हुआ। तब उसने बिम्बकि तथा सूरसेन के सब विमुख दूतों को मरवा डाला, यह सुन वे लोग अपनी २ सेना लेकर चढ़ आये परन्तु जब यह जाना कि यह तो हमारा जामातृ श्रीदत्तही है तो अपने अपने देश को लौट गये। उधर उसके मित्र लोग भी अपने अपने घाओं से चङ्गे हो गये और बाहुशाली इत्यादि सभी मित्र लोग उसका प्रताप सुन सुनकर आ मिले। फिर कुछ दिनों के उपरान्त अपने श्वशुरों के साथ वह निज पिता के घाती विक्रमशक्ति पर सेना ले चढ़ गया और उसे अपनी क्रोधाग्नि की आहुति बनाया। फिर तो वह आसमुद्र राज्य को पाकर अपनी भार्य्या मृगाङ्कवती तथा अन्य स्त्रियों के साथ सुखपूर्वक रहने लगा। हे राजन्! इसीसे कहता हूं कि जो धीर लोग हैं वे इसी प्रकार अनेक दुःखरूपी समुद्रों से पार होकर अन्त कल्याण को पाते हैं। इस कथा को संगतक के मुख से सुनकर राजा सहस्रानीक को अपनी प्रिया से मिलने का और भी उत्साह बढ़ गया, सो वह रात तो उन्होंने रास्तेही में किसी किसी प्रकार बिताई, सबेरा होतेही उनने डेरा कूंच किया। शरीर तो उनका अभी मार्गही में था किन्तु वे मनोरथ के रथ पर आरूढ़ हो प्रिया के पास ध्यानरूप से पहुँचही गये। योंही चलते चलते कुछ दिनों के उपरान्त वे श्रीजमदग्निऋषिजी के आश्रम में जा उपस्थित हुये, मुनिजी के प्रताप से पशु पक्षियों ने भी निज स्वाभाविक चपलता परित्याग कर शान्तभाव धारण किया था। राजा ने श्रीजमदग्निजी के दर्शन कर प्रणाम किया, मुनिजी का ऐसा सुन्दर शान्तस्वरूप था मानो तपस्या ने संसार को पवित्र करने के लिये स्वयं मानुषी रूप धारण किया हो। मुनि ने इनका कुशल वृत्तान्त पूछा और फिर आतिथ्य सत्कार कर रानी मृगावती को बुला पुत्र सहित इन्हें समर्पण किया। शाप के अन्त होने पर जो चौदह वर्ष के उपरान्त राजा रानी ने एक दूसरे को देखा तो दोनों ओर से आनान्दाश्रु की धारा बह उठी। फिर राजा ने निज पुत्र उदयन को हृदय से लगा लिया और उसका माथा चूम आशीर्वाद दिया। कुछ दिन वहां निवास कर मुनिजी की आज्ञा ले, राजा निज भार्य्या और पुत्र के साथ अपनी राजधानी को पधारे। उनके स्नेह से तपोवन के मृग लोग भी आंसू बहाते हुये बहुत दूर तक उनके पीछे पीछे चले आये। मार्ग में प्रिया को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

साथ अनेक प्रकार की बातचीत करते हुये राजा सहस्रानीक कौशाम्बीपुरी में आ पहुंचे। नगरनिवासियों ने समग्र नगर को तोरण पताकाओं से सजाया और मङ्गल वाद्य बजने लगे तथा च सर्वत्र बधाई बजने लगी और प्रजा राजपरिवार को देख गद्गद हो गई। कुछ दिनों के उपरान्त राजा ने अपने पुत्र को गुणवान् देख सन्तुष्ट हो युवराज पद से भूषित किया और मन्त्रीपुत्र वसन्तक, रुमखान और यौगन्धरायण को उनका सखा और सलाह देनेवाला बनाया। इतनेही में पुष्पवृष्टि के साथ यह आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! इन मन्त्रीपुत्रों के साथ आपका यह पुत्र समग्र पृथिवी को प्राप्त करैगा। यह सुन राजा तथा समस्त परिजन लोग परम प्रसन्न हुये; फिर तो राजकाज का पूरा भार निज पुत्र उदयन को देकर राजा सहस्रानीक निज भार्य्या मृगावती के साथ सुख से रहने लगे।

कछु दिन योंही बीत गे जरा सु पहुँची आन।
विषयवासना जगत की आपुहि कीन पयान॥
उदयन राज समर्पि कै प्रजाभार सब दीन।
सचिव प्रिया निज साथ लै गमन हिमालय कीन॥

तीसरा तरङ्ग।

राजा सहस्रानीक के हिमालय जाने के उपरान्त राजा उदयन वत्स राज्य का अधिकार पा कौशाम्बी राजधानी में रहकर प्रजा का पालन भली प्रकार करनेलगे। किन्तु अभी अधिक दिन न बीते थे कि वे यौगन्धरायण इत्यादि मन्त्रियों को राज्यभार दे सांसारिक भोगों में लिप्त हो गये। उनका यही काम था कि सदा शिकार खेलना और रात दिन उसी वीणा को बजाना जो वासुकी के भाई बसुनेमि से उन्होंने पाया था। उस वीणा के अनूठे मनोहर स्वर से वे उन्मत्त हाथियों को वशीभूत कर पकड़ मँगाया करते थे, एक समय उन्हें यह चिन्ता उपस्थित हुई कि हमारे कुल और रूप के अनुरूप तो कोई भार्य्या नहीं है परन्तु हां उज्जयिनी के महाराज चण्डमहासेन की कन्या वासदत्ता नाम ऐसी सुनी जाती है सो किस प्रकार

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसे प्राप्त करना चाहिये । उधर उज्जयिनी के महाराज को भी इसी चिन्ता ने आ घेरा था कि हमारी कन्या के योग्य वर इस संसार में कोई दिखाई नहीं पड़ता, केवल राजा उदयनही इस योग्य है किन्तु वह हमारा सदा का विपक्षी है सो यह काम बने तो कैसे बने । इस प्रकार विचारते २ राजा ने यह सोचा कि उदयन को शिकार का बहुत प्रेम है और वह हाथियों को पकड़ता हुआ सदा वनोंमें अकेला घूमा करता है, सो इसी बहाने से किसी प्रकार उसे घर मँगाना चाहिये। यहां आ जाने पर मैं अपनी सुता को वीणा बजाना आदि गान्धर्वविद्या उससे सिखाऊँगा, फिर तो आपही दोनों का परस्पर स्नेह हो जायगा । इस प्रकार वश करने पर मैं उसे अपना जामाता बना सकूंगा इसके अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय दृष्टिगोचर नहीं होता। ऐसा विचार राजा ने जाकर चण्डिका देवी की पूजा की; उनको भक्ति तथा पूजा से प्रसन्न हो देवीमाता ने वरदान देकर आकाशवाणी-द्वारा कहा कि हे राजन्! तुम कुछ चिन्ता न करो तुम्हारी यह इच्छा शीघ्रही पूरी होगी। यह सुन बुद्धदत्त मन्त्री के सहित राजा प्रसन्नतापूर्वक अपने महलों को चले आये और विचार करने लगे कि अब क्या करना चाहिये, राजा उदयन तो बड़ाही मानी है उसको किसी प्रकार का लोभ नहीं और उसके नौकर चाकर भी उसे बहुतही चाहते हैं सो वह सामादि उपायों से तो फन्दे में नहीं आ सकता। विचारते २ राजा ने कुछ सोच समझकर एक दूत राजा उदयन के पास यह सन्देश देकर भेजा कि हमारी पुत्री को वाद्यविद्या सीखने की बड़ी इच्छा है यदि आप हमलोगों पर स्नेह रखते हों तो यहां आकर उसे यह विद्या सिखा दीजिये आपकी बड़ी कृपा होगी। दूत ने राजा उदयन के समीप जाकर ज्यों का त्यों सन्देश निवेदन किया। इस अनुचित बात को सुनतेही राजा ने यौगन्धरायण मन्त्री को बुलाकर एकान्त में यों बात की, कि 'देखा तुमने! उस दुष्ट राजा ने अपने मनमें हमें क्या समझा जो दूत के हाथ ऐसा सँदेसा कहला भेजा ।' यौगन्धरायण तो निज स्वामी का परम हितैषी था सो उसने हाथ जोड़ निवेदन किया कि धर्मावतार! इस संसार में जो आपकी दुर्व्यसनिता की धूम की लता फैली है, उसी का यह कसैला और कडुआ फल है । वह आपको रागी समझकर अपने कन्यारत्न का लोभ दिखाता है और उसकी इच्छा है कि इसी बहाने से आपको

वहां बुलाकर अपने जाल में फँसा लेवै। इसलिये आप इन व्यसनों को छोड़ दीजिये क्योंकि जो राजा लोग इनमें फंसे रहते हैं उन्हें शत्रु लोग यों फँसा लेते हैं जैसे गढ़हों में जङ्गली हाथी पकड़े जाते हैं। महामन्त्री की यह बात सुन वत्सराज ने भी अपना एक दूत भेजा और यह कहला दिया कि यदि आपकी पुत्री को वाद्यविद्या सीखने की ऐसीही इच्छा है तो उसे यहां भेज दीजिये, हम सिखा देंगे। उधर तो दूत भेजा और इधर राजा ने मन्त्रियों से कहा कि देखो चण्ड महासेन ने हमारे साथ बड़ी धृष्टता की है मैं अभी सेना लेकर जाता हूं और उसे बांध लाता हूं। यह सुन मुख्य मन्त्री यौगन्धरायण ने कहा कि हे राजन्! ऐसा करना कदापि उचित न होगा आप इस काम का साहस न कीजियेगा, क्योंकि वह राजा बड़ाही प्रभावशाली है सुनिये मैं उसका हाल आपको सुनाता हूं—

इस संसार की भूषणस्वरूपा उज्जयिनी नाम एक नगरी है जो अपने सुन्दर स्वच्छ महलों की चमक दमक से मानो इन्द्र की अमरावती का भी उपहास करती है। जहां साक्षात् शङ्कर भगवान् कैलास पर निवास करते करते ऊब कर स्वयं आन बसे हैं और जहां उनकी पूजा श्रीमहाकाल महादेव के नाम से की जाती है। उसी नगरी में राजशिरोमणि महाराज महेन्द्रवर्म्मा नाम राजा हो गये हैं, उनके पुत्र राजा जयसेनजी उन्हीं के समान प्रतापशाली हुये। राजा जयसेन के पुत्र महासेन बड़ेही बली और पराक्रमी हुये हैं। निज प्रजा का पालन उत्तम प्रकार से करते हुये राजा महासेन को एक दिन यह चिन्ता हुई कि मेरे हाथ में रखने योग्य न तो मेरे पास ऐसा कोई खड्गही है और न मेरे अनुरूप कोई भार्य्याही दिखाई पड़ती है। ऐसा सोचते हुये वह राजा एक दिन चण्डिकादेवी के मन्दिर में दर्शनों को गये वहां निराहार व्रत रहकर उन्होंने श्रीदेवीजी की पूजा आरम्भ की, और निज शरीर का मांस काट काटकर होम करने लगे। इससे श्रीचण्डिकादेवी ने अत्यन्त सन्तुष्ट हो राजा को अपना उत्तम खड्ग दिया और कहा कि हे पुत्र! मैं तुझ पर प्रसन्न हुई हूं इस खड्ग के प्रभाव से कोई भी शत्रु तेरे साम्हने ठहर न सकेगा, और सुन, अङ्गारकासुर की जो कन्या अङ्गारवती नाम की है उससे तेरा विवाह भी शीघ्रही होवेगा; और क्योंकि आज के इस यज्ञ में तूने यह अतिही चण्ड काम किया है इसलिये तेरा नाम महासेन के स्थान

में चण्डमहासेन होगा । इतना कह देवीजी तो खड्ग देकर अन्तर्धान हो गईं और राजा अपने मन की सिद्धि पा अत्यन्त प्रसन्न हुये। वह खड्ग और नड़ागिरि नाम मत्त हस्ती राजा को ऐसी शोभा देने लगी जैसे इन्द्र भगवान् को वज्र और ऐरावत हाथी देते हैं। एक समय की बात है कि राजा चण्डमहासेन शिकार खेलते २ किसी महा घनघोर जङ्गल में जा निकले; देखते क्या हैं कि एक बहुतही बड़ा जङ्गली सूअर साम्हने से चला आता है, जिसका समग्र शरीर ऐसा काला था कि मानो अमावास्या रात्रि का घोर अन्धकार दिन के समय एकत्र हो पिण्ड बनकर आ गया हो। राजा ने अनेक वाण उस शूकर पर चलाये किन्तु उसके शरीर में एक भी न लगा और न कहीं घाव का नाम दिखाई पड़ा। वह शूकर बड़ेही वेग से झपटा और अपने तीव्र दन्त से राजा का रथ तोड़ दौड़ता हुआ एक गुफा में पैठ गया। राजा भी झट रथ से उतर बाण को धनुष पर चढ़ाय पैदलही क्रोध से उसके पीछे दौड़े और गुफा के भीतर पैठे, अन्दर जाने पर अन्धकार के कारण ठीक पता न पा सके, सो दूसरी ओर भटक गये। देखते क्या हैं कि एक अत्यन्त सुन्दर नगर है उसके अन्दर एक बाग में एक स्वच्छ बावली है, राजा थके तो थेही जातेही उसके किनारे बैठ गये । थोड़ीही देर में देखा कि एक परम सुन्दरी कन्या जो मानो साक्षात् कामदेव की शक्ति हो एक सौ सुन्दर सहेलियों के हँसती बोलती खेलती अठलाती चली आती है। वह अपने अमृतमय कटाक्षों से राजा को शीतल करती हुई धीरे धीरे उनके पासही आ खड़ी हुई और पूछने लगी कि हे युवक! आप कौन हैं? और क्यों तथा किस प्रकार आप का आना इस कन्दरा के अन्दर हुआ—?। राजा ने अपना पूरा हाल उसे कह सुनाया। यह सुन वह बाला अत्यन्त अधीरता से रोने लगी और धीरज उसके हृदय से जाता रहा । राजा ने बड़े आश्चर्य से पूछा कि हे सुन्दरि! तुम अपना हाल कहो कि तुम कौन हो और क्यों रोती हो? वह विचारी राजा का रूप देख मोहित हो रही थी सो कहने लगी कि हे राजन्! जिस वाराह के पीछे आप कन्दरा के अन्दर पैठे थे वह अङ्गारक नाम असुर मेरा पिता है और मैं उसकी पुत्री हूं मेरा नाम अङ्गारवती है। यह जो सौ सहेलियाँ को मेरे साथ आप देखते हैं सो उन राजाओं की कन्यायें हैं जिन्हें मार मारकर यह हर लाया है, और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उन्हें मेरी सहेली बना दी हैं—इसका शरीर क्या है मानो वज्रनिर्मित कोई पिण्ड है कोई भी अस्त्र शस्त्र उस पर घात नहीं कर सकता। इस समय वह वाराह का रूप परित्याग कर घोर निद्रा में सो रहा है। जब उठेगा तो आपको भी देवी के साम्हने अवश्य बलिदान चढ़ावेगा। सो आपका कल्याण न देख कर मेरी आंखों की अश्रुधारा नहीं थमती, ऐसा जान पड़ता है कि मेरे प्राण इस दुःख से तापित हो पानी रूप से नेत्रों के द्वारा बहे जाते हैं। अङ्गारवती का ऐसा वचन सुन राजा उससे कहने लगे कि यदि तुम मुझे चाहती हो तो मेरा एक कहना मानो। जब तुम्हारे पिता सो कर उठें तो तुम उनके आगे जाकर रोने लगो, वह निस्सन्देह तुम्हारे रोने का कारण पूछेंगे तो तुम कहना कि हे पिता जी! आप जो वाराह के रूप में इस प्रकार जङ्गल में घूमा करते हैं यदि किसी दिन कोई आपको मार डालेगा तो फिर मेरी क्या दशा होगी? मैं यही विचार रोती हूं। यदि ऐसा करोगी तो इसमें तुम्हारा तथा मेरा दोनों का कल्याण है। राजा का यह वचन मान उन्हें वहीं छिपाय वह सोये हुये पिता के पैर के पास जाकर बैठ रही! इतने में वह दैत्य जागा और इधर इसने रोना आरम्भ किया। उसने पूछा, हे पुत्रि! तुझे क्या दुःख है मुझसे कह तू रोती क्यों है? उसने कहा हे पिता जी! आप नित्यही इस शूकरवेष से जङ्गल में घूमा करते हैं यदि कोई शिकारी किसी दिन आपको मार डालेगा तो मेरी क्या दशा होगी, यही विचार में रोती हूं। इतना सुन वह दैत्य खूब खिलखिलाकर हंसा और कहने लगा कि हे पुत्रि! तू क्यों यह व्यर्थ की चिन्ता करती है, मेरा सारा शरीर वज्रमय है, हां केवल बायें हाथ में मेरे एक छेद है सो तो धनुष के पीछे छिपा रहता है। सो तू निश्चिन्त रह मुझे कोई नहीं मार सकता।

इस प्रकार उस दैत्य ने अपनी कन्या को समाश्वासन दिया, उधर राजा आड़ में छिपे सब बातें सुन रहे थे। इतने में वह दानव उठा और स्नान कर मौन हो शिवजी की पूजा करने लगा। उधर से राजा ने धनुष बाण हाथ में ले साम्हने आन उसे ललकारा कि आ उठ यदि तुझमें सामर्थ्य है तो मुझसे युद्ध कर। वह पूजा में मौनव्रत धारण किये था सो बांया हाथ उठाकर राजा को इशारा करने लगा कि ज़रा ठहरो मैं अभी पूजा करके उठता हूं। ज्योंही उसने बायां हाथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उठाया त्योंही राजा ने लक्ष्य करके उसी छेद में बाण मारा और वह महासुर घोर चीत्कार करके पृथिवी पर गिर पड़ा, फिर मरते समय कहने लगा कि मैं तो विना आचमन किये बोल नहीं सकता था पर तूने जो मुझ प्यासे को मारा है सो यदि हर साल मुझे जल देकर तृप्त न करेगा तो तेरे पांच मन्त्री मर जांयगे। इतना शाप देकर वह दैत्य तो मर गया और राजा उसकी पुत्री अङ्गारवती को साथ लेकर उज्जयिनी को चले आये। यहां आकर उससे विवाह किया और समय पाकर उसी दैत्यकन्या से राजा को दो पुत्र उत्पन्न हुये। एक का नाम गोपालक और दूसरे का नाम पालक रक्खा। उन पुत्रों के होने पर राजा ने बड़े धूमधाम से इन्द्रोत्सव किया। प्रसन्न होकर इन्द्र भगवान् ने स्वप्न में राजा से कहा कि हे राजन्! मैं तुझसे बहुत प्रसन्न हूं सो तू मेरी कृपा से एक ऐसी कन्यारत्न को प्राप्त करेगा जिसके समान संसार में दूसरी न हो। कुछ काल बीतने पर राजा को एक कन्या उत्पन्न हुई। उसे ब्रह्मा ने ऐसा अपूर्व सौन्दर्य्य दिया कि कहीं दूसरी जगह ऐसा रूप दीख न पड़ता था। उसके जन्म के साथही यह आकाशवाणी हुई कि विद्याधरों का सरदार कामदेव का अवतार इसका पुत्र होगा। राजा चण्डमहासेन ने यह विचार कर कि यह कन्या मुझे वासवजी की कृपा से मिली है उसका नाम वासवदत्ता रक्खा। अब वह अपने पिता के घर में वर्तमान है और विवाह करने योग्य हो गई है उसकी शोभा इस समय उस घर में ऐसी हो रही है कि मानो रत्नाकर के घर में साचात् लक्ष्मी विराज रही हो।

ऐसो प्रबलप्रताप है महासेन नृप चण्ड।
सहज न जीतो जाय वह राजा परम उदण्ड॥
पै यह वाके मन बसै, कन्या दीजै तोहिं।
मानयुक्त आदर सहित, जब सब बातें होहिं॥
याते लीजै व्याह तेहिँ, मानि हमारो बैन।
सुनि बासवदत्ताकथा, नृपहिय पैठेउ मैन॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चौथा तरङ्ग ।

इधर तो ये बातें हो रहीं थीं उधर वत्सराज के भेजे हुये उस दूत ने राजा चण्डमहासेन के पास जाकर वह सन्देश कह सुनाया । सुनकर राजा ने विचारा कि निस्सन्देह राजा उदयन अत्यन्त मानी है वह क्यों इस प्रकार आने लगा । अपनी कन्या को उसके पास भेजना उचित नहीं है क्योंकि इसमें अपना हलकापन प्रतीत होगा, अतएव किसो न किसी युक्ति से उसे घर मँगानाही ठीक होगा; मन्त्रियों से सलाह करके राजा ने यही निश्चय ठहराया, सो पूरे आकार का एक कल का हाथी बनवाया और उसके अन्दर कई वीर पुरुषों को अस्त्र शस्त्र से सज्जित कर बैठाय विन्ध्याचल के जङ्गल में उसे छुड़वा दिया । ज्योंही उस हाथी को बनरखों ने देखा त्योंही अत्यन्त प्रसन्न हुये क्योंकि उनकी तो यह जीविकाही थी कि जहां कोई उत्तम हाथी दिखाई पड़े राजा को सूचना देवैं । उन लोगों ने उसी दम राजा के सन्मुख उपस्थित हो हाथ जोड़ निवेदन किया कि' 'हे देव! आजकल हमारे जङ्गल में एक बहुतही भारी हाथी आया है, इसके समान दूसरा गज कदाचित् इस संसार में न होगा, शरीर से इतना ऊँचा है कि मानो गगनमण्डल को छू लिया चाहता है और चलता हुआ यही प्रतीत होता है कि स्वयं विन्ध्यपर्वतही चला आता हो ।' बनरखों का ऐसा बचन सुन, वत्सराज बहुतही प्रसन्न हुये और उसी क्षण उन्हें एक लाख स्वर्णमुद्रा पारितोषिक दिये जाने की आज्ञा दी और मनमें विचारने लगे कि यदि इस गजेन्द्र को मैं पाऊँगा तो यह चण्डमहासेन के नड़ागिरि हाथी का अच्छा जोड़ होगा तब तो चण्डमहासेन अत्यन्तही शीघ्र मेरे वश में हो जायगा। फिर तो आपही वासवदत्ता को वह लेकर उपस्थित होगा और मेरे मन की अभिलाषा पूरी होगी । योंही अनेक प्रकार की बातें सोचते विचारते राजा ने वह रात तो किसी किसी प्रकार बिताई, सबेरा होतेही उन बनरखों को साथ ले राजा ने जङ्गल का रास्ता लिया। यद्यपि मन्त्रियों ने बहुत कुछ समझाया बुझाया किन्तु राजा को तो नड़ागिरि के जोड़ पकड़ने की धुन लग रही थी वह किसी की क्यों सुनने लगे । ज्योतिषियों ने यह भी कहा कि इस प्रस्थान के लग्न का यह फल निकलता है कि—"बन्धन के सहित कन्यालाभ हो" परन्तु राजा के हृदय पर ज्योतिषियों के बचन ने कुछ भी प्रभाव न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

डाला वे अपनी धुन में चलेही गये । विन्ध्याचल के जङ्गल में पहुँचकर राजा ने इस शङ्का से अपनी सेना को दूरही रोक दिया कि हाथी कहीं भड़क न जाय और स्वयं थोड़े से बनरखों को साथ ले वीणा उठा अकेलेही उस घोर जङ्गल में पैठे। बनरखों ने दूरही से जङ्गल के दक्षिण भाग में उस हाथी को दिखला दिया और राजा ने भी देखा कि वह हाथी मन्द मन्द पैर उठाता इधरही को चला आता है सो यह भी अकेलेही वीणा को बजाते और मन्द मन्द गाते हुये उसके फँसाने की युक्ति विचारते उधरही को चले। एक तो संगीत में राजा स्वयं लीन हो रहे थे दूसरे सन्ध्या के कारण कुछ समय भी धुँधला हो रहा था सो राजा ने यह न पहिचाना कि यह यथार्थ हाथी नहीं किन्तु बनावटी गजेन्द्र है। वह हाथी मानो गति पर ताल देता हुआ पैर उठाता धीरे धीरे आगे बढ़ने लगा। ज्यों ज्यों राजा उसके समीप जाते थे त्यों त्यों वह मन्दगति से आगेही बढ़ता जाता था, योंही वह राजा को बहुत दूर तक खींच ले गया। जब वे अत्यन्त घोर जङ्गल में जाकर उसके समीप पहुँचे तो अचानचक उस काल के हाथी में से अनेक वीर पुरुषों ने निकलकर इन पर आक्रमण किया। राजा यह देख यद्यपि विस्मित तो हुए पर झट कमर से छुरा निकाल युद्ध करने पर सन्नद्ध हो गये। सम्मुखवाले योधा से ये लड़ रहे थे कि पीछे से बाकी लोगों ने इन्हें बांध लिया। इतने में इधर उधर छिपी हुई शेष सेना भी निकल आई और वे लोग वत्सेश्वर उदयन को बांध कर राजा चण्डमहासेन के पास ले चले। राजा चण्डमहासेन ने जो यह हाल सुना तो वे उन्हें आदरपूर्वक लिवा ले जाने के लिये नगर से बाहर आ खड़े हुये और वत्सराज के पहुँचने पर बड़े सन्मान के साथ उन्हें लेकर नगर में आये। नगरनिवासियों ने अपमान से कलङ्कित वत्सराज को प्रसन्नतापूर्वक यों देखा जैसे वे पूर्णचन्द्र को हर्षपूर्वक देखते हों। किन्तु उन्हें इस बात की शङ्का हुई कि राजा चण्डमहासेन कहीं उनके बध की आज्ञा न दे देवें, सो वे लोग एकत्र होकर राजसभा में आये। राजा चण्डमहासेन ने उन लोगों को समझाया कि हम वत्सराज को कदापि मारनेवाले नहीं हैं आप लोग किसी बात की चिन्ता न करें। यह सुन सब पुरवासी प्रसन्नतापूर्वक लौट गये। तब तो राजा चण्डमहासेन ने निज पुत्री वासवदत्ता को वहीं पर गान्धर्वशिक्षा पाने के हेतु वत्सराज को समर्पण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किया और कहा कि हे प्रभो! आप इसे गाने बजाने की शिक्षा दीजिये, बस इसी में आपका कल्याण है, वृथा सोच मत कीजिये। वासवदत्ता को देखतेही वत्सराज का जी हाथ से जाता रहा और क्रोध का तो कोसों पता न रहा। वासवदत्ता का भी मन आंखों के साथही राजा वत्सराज के पास जा रहा, आंखें तो लज्जा के कारण लौट आईं किन्तु मन ने फिर लौटने का नाम न लिया। बस इसी प्रकार दोनों का हृदय परस्पर आपस में बँध गया; राजा नित्यही उसे गान विद्या सिखाते और वहीं गान्धर्वशाला में पड़े रहते। गोद में तो वह वीणा और कण्ठ में गीत और आगे चित्तविनोदिनी वासवदत्ता बैठी रहती, बस राजा को फिर क्या चाहिये था!। वासवदत्ता भी उनकी सेवा टहल में सदा लक्ष्मी की नाईं लगी रहती, किन्तु किसी प्रकार उन्हें बन्धन से मुक्त न कर सकती थी। उधर वत्सराज के सब नौकर चाकर अपने प्रभु के हरे जाने और बन्धन प्राप्त होने पर घबड़ा उठे और सभों ने चाहा कि चलकर चारो ओर से उज्जयिनी को घेर लेवें। तब तो रुमखान् मन्त्री ने उन लोगों को एकत्र करके समझाया कि उज्जयिनी पर चढ़ाई करने से कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि राजा चण्डमहासेन को बल से जीतना बहुत कठिन काम है और ऐसा करने से अपने महाराज के शरीर का भी कल्याण न होगा। जब यौगन्धरायण ने देखा कि ये लोग बहुत व्यग्र हैं तो धीरतापूर्वक उन्हें समझाने लगा कि आप लोग जल्दी न करें अभी आप सब कोई यहीं ठहरे रहें और उपाय सोचें तथा राज्य की भली प्रकार रक्षा करें। अवसर पाने पर विक्रम प्रकाश किया जावेगा। मैं वसन्तक को साथ लेकर जाता हूं और किसी न किसी युक्ति से महाराज को अभी छुड़ा लाता हूं इसमें आप लोग कुछ सन्देह न करें। जल से चोट खाने पर विजली की द्युति जैसे चमक उठती है उसी प्रकार जिसकी बुद्धि आपत्ति के समय तीव्रता धारण करती है वही यथार्थ धीर कहाता है। बड़ी बड़ी दीवारों का तोड़ना तथा कड़ी बेड़ियों का काट डालना, देखतेहि देखते आंखों के साम्हने से लोप हो जाना इत्यादि योगविद्या मुझे आती है। ऐसा कह रुमखान् के हाथ में प्रजाप्रबन्ध का भार दे, वसन्तक को साथ ले, यौगन्धरायण ने कौशाम्बीपुरी से यात्रा की, और अपनी गूढ़ प्रज्ञा तथा अपनी दुर्गम नीति के समानही उस घोर विन्ध्याटवी में पैठा। वहां जाकर उसने पुलि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

न्दक नामक भीलों के सरदार से जो राजा वत्सराज का मित्र था भेंट की और कहा कि हे सखे ! मैं अपनी सेना तुम्हारे पास छोड़े जाता हूं, जब वत्सराज को लेकर इसी मार्ग से लौटूंगा तो कदाचित् सेना का काम पड़े सो तुम सावधान और तयारही रहना; इतना कह वसन्तक को साथ ले चलते चलते यौगन्धरायण उज्जयिनी नगरी के महाकाल श्मशान में जा पहुँचा। इसे आया देख वहां के चिता-धूम सरीखे काले काले वैतालों ने कच्चे मांस की गन्ध पातेही इसे चारो ओर से घेर लिया। उनमें से योगेश्वर नाम ब्रह्मराक्षस इसे देख बहुतही प्रसन्न हो मित्रभाव से इसके पास आ खड़ा हुआ। कुछ बातचीत के उपरान्त उन दोनों में मैत्री हो गई। उस ब्रह्मराक्षस ने जो युक्ति बतलाई उसके अनुसार यौगन्धरायणने अपना रूप बिलकुलही बदल डाला और उसी क्षण उसने एक गञ्जे, उन्मत्त, बूढ़े, कुबड़े मनुष्य का ऐसा रूप बनाया कि जिसे देखतेही आदमी को हँसी आती थी मुंह का टेढ़ापन कुछ ऐसा विलक्षण था कि हंसी किसी प्रकार रोके न रुकती थी। उसी युक्ति से उसने वसन्तक का भी रूप बदल दिया, दो तीन बड़ेबड़े दाँत लगा दिये और सिर मूंड़ तमाम शरीर में कालख पोत गले में अँतड़ियों की माला डाल दी और उन्मत्त का सा भेष बना उसे अपने साथ लिया। वहां से चल उसने वसन्तक को आगे भेजा कि तू राजद्वार पर पहुँच पीछे मैं भी आता हूं। बस ऐसी विलक्षण दशा में कुछ गाता बजाता नाचता कूदता और उछलता यौगन्धरायण नगर में पैठा, जिधर जाता था उधरही झुण्ड के झुण्ड लड़के उसके पीछे पीछे तालियां बजाते हो हो करते चले जाते थे। जो देखता वही आश्चर्य करता कि यह नया पागल कहां से आया। इसी प्रकार चलते चलते वह राज-महल के फाटक पर पहुँचा और ज्योंही अन्दर चला कि द्वारपालों ने उसे रोका। वह उनके साम्हने उछलने कूदने और न जाने क्या क्या अट्ट सट्ट बकने लगा, सब के सब उसका यह तमाशा देखने लगे। राजद्वार पर जो इतना कोलाहल मचा तो वासवदत्ता ने पुछवाया कि यह कैसा झगड़ा हो रहा है। पूरा वृत्तान्त जा-नने पर उसने आज्ञा दी कि अच्छा उस व्यक्ति को हमारे साम्हने ले आओ। आज्ञा पातेही दूती झट जाकर उसे अपने साथ गान्धर्वशाला में लिवा लाई। न-वीन अवस्था में सभी को कौतुक देखने का उत्साह होता है, सो वासवदत्ता ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसे इसी कारण बुलाया था। पागल भेष धारण किये हुए, चीथड़ा लपेटे, यौगन्धरायण ने भीतर आतेही क्या देखा कि महाराज वत्सराज पहरे के अन्दर एक बड़े कमरे में बैठे हैं। उसने देखतेही नियत सङ्केत किया और राजा ने भी उसे पहिचान वैसाही उत्तर दिया। महाराज देखतेही हँसे कि यौगन्धरायण ने कैसा विलक्षण वेष धारण किया है। वासवदत्ता ने उससे पूछा कि तू कौन है? उसने कहा कि मैं योगी हूं। राजकन्या ने कहा कि तुझमें क्या सामर्थ्य है? उसने कहा देखो, इतना कह चट योगबल से वह लोप हो गया। केवल राजा तो उसे देखते रहे, सखियां और राजकुमारी यह कौतुक देख अत्यन्त विस्मित हुईं और आपस में बातें करने लगीं कि वह पागल कहां लोप हो गया। इतनेही में वह फिर सन्मुख खड़ा हो गया। तब तो वासवदत्ता को विश्वास हुआ कि यह निस्सन्देह कोई बड़ा योगी है। यह देख राजा वत्सराज ने युक्ति से कहा कि हे दारिके! तुम लोग जाकर श्री सरस्वतीजी की पूजा करने का सामान ले आओ। राजकुमारी 'बहुत अच्छा' कह सखियों को साथ ले पूजा की सामग्री लेने चली गई। तब तो अवसर देख यौगन्धरायण ने योगबल से राजा की बेड़ियां सब काट डालीं और वशीकरण गुटका भी उसने राजा को उसी समय दिया; फिर उसने कहा कि हे राजन्! वसन्तक भी मेरे साथ यहां आया है और बाहर दूसरे भेष में खड़ा है सो उसे भी किसी बहाने से यहां बुला भेजिये और अपने पासही रखिये। जब वासवदत्ता का धीरे धीरे आप पर अधिक प्रेम और विश्वास हो जाय तब जैसे मैं कहूंगा आप करियेगा, अभी योंही रहने दीजिये। इतना कह यौगन्धरायण तो चला गया। उधर वासवदत्ता पूजा का सामान लेकर सखियों सहित पहुँची। राजा ने उससे कहा कि एक ब्राह्मण बाहर द्वार पर खड़ा है, सरस्वती पूजन की दक्षिणा उसे दी जायगी, सो उसे यहां बुलवा लो। वासवदत्ता ने उसी क्षण अपनी दूती को भेजकर उसे बुला पठाया। राजा ने देखा कि बसन्तक ने भी एक विलक्षण प्रकार का स्वरूप धारण किया है। वसन्तक महाराज को देखतेही दुःख से रोने लगा। राजा ने भेद छिपाकर कहा कि हे ब्राह्मण देवता! तुम मत रोओ, रोग के कारण जो तुम्हारा मुंह ऐसा टेढ़ामेढ़ा हो गया है सो मैं सब चङ्गा कर दूंगा तुम मेरे पास यहीं रहो। वसन्तक ने नाक भौंह नचाकर कहा हे देव!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यदि ऐसा करेंगे तो आपकी बड़ी कृपा होगी। राजा यह देख खूब हँसे, वसन्तक भी उनका अभिप्राय समझ गया और मुंह टेढ़ा बना बनाकर बातें करने लगा। उसकी ऐसी दशा देख वासवदत्ता भी खूबही हँसी और बहुत प्रसन्न हुई, फिर ठट्ठे से पूछने लगी कि हे ब्राह्मण देवता ! तुम्हें कोई विज्ञान भी आता है ? उसने कहा हे देवि ! मुझे कथा कहानी कहने आती है। राजकन्या ने कहा कि अच्छा कोई मनोहर कथा सुनाओ। तब तो वसन्तक ने राजकुमारी के चित्तविनोदार्थ यह कथा कहनी प्रारम्भ की—

हे देवि ! मथुरा नाम की एक अत्यन्त मनोहर नगरी है, जहां श्रीकंसनिकन्दन भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजी ने जन्म ग्रहण किया है, उस नगरी में रूपणिका नाम की एक वेश्या रहती थी। उसकी माता का नाम मकरदंष्ट्रा था, जो बड़ी भारी कुटनी थी। वह उन नवयुवकों को जो रूपणिका के रूप गुण से मोहित होकर उसके पास आते थे विष के समान जान पड़ती थी। एक समय वह रूपणिका किसी काम से कहीं बाहर गई थी, सो उसकी दृष्टितले एक परम सुन्दर युवा पुरुष पड़ा जिसे देखतेही वह अत्यन्त कामातुर हुई। उधर माता के दिये हुये सभी उपदेश रूपणिका के हृदय से निकल भागे और इधर वह सुन्दर युवक उसके हृदय में बस गया। झट उसने अपनी दूती को उसके पास भेजकर यह कहलाया कि रूपणिका तुम्हें अपने घर बुलाती है आज सन्ध्या को अवश्यही आना। दूती ने जाकर उस पुरुष से वैसाही कहा, उसने कुछ सोच विचार कर उस दूती से कहा कि मैं गरीब ब्राह्मण हूं मेरा नाम लोहजङ्घ है, रूपणिका के घर पर धनवानों का काम है वह मुझे बुलाकर क्या लाभ उठावेगी। दूती ने कहा कि मेरी मालकिन तुझसे धन नहीं चाहती, तब तो लोहजङ्घ ने कहा अच्छा मैं सन्ध्या को आऊँगा। दूती ने आकर रूपणिका से सब हाल कह दिया और वह भी प्रसन्नतापूर्वक अपने घर जा सन्ध्या के समय शृङ्गार कर लोहजङ्घ के आने की बाट जोहने लगी। सन्ध्या होतेही लोहजङ्घ पहुँचा, रूपणिका की माता मकरदंष्ट्रा ने देखा कि यह मुसटण्ड कहां से आया, जिसके पास "लोटा न थारी आपे आप विहारी।" रूपणिका उसे देखतेही उठ खड़ी हुई और आदर सहित गले लगा अपने रङ्गमहल में ले गई। अब तो उन दोनों में अत्यन्त गाढ़ा प्रेम हो गया और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रूपणिका ने सब पुरुषों का आना जाना अपने यहां बन्द कर दिया, केवल लोहजङ्घ के साथ सुखपूर्वक रहने लगी। यह देख रूपणिका की माता बहुत घबड़ाई और एक दिन एकान्त में उससे कहने लगी कि हे पुत्रि! तू क्या इस निर्धन उजड्ड के पास रहती है। वरु अग्नि शीतल हो तो हो किन्तु वेश्या कभी निर्धन पुरुष को अपना शरीर नहीं छूने देती। कहां प्रेम कहां वेश्यापन? क्या तू भूल गई कि अनुरागिणी वेश्या कभी नहीं फलती फूलती। गणिका का यही काम है कि द्रव्य के लिये नटी की नाई झूठा प्रेम दिखाना, सो तू इस निर्धन पुरुष को छोड़ दे और व्यर्थ अपने रूप यौवन को नाश मत कर। माता का ऐसा बचन सुन, रूपणिका ने बड़े क्रोध से उत्तर दिया कि फिर ऐसी बात न कहना, वह मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारा है, मेरे पास बहुत धन है अब इससे अधिक धन लेकर मैं क्या करूँगी, खबरदार फिर कभी ऐसी बात मेरे आगे मत कहना। यह सुन वह बुड्ढी कुटनी बहुत जली और विचारने लगी कि किस युक्ति से लोहजङ्घ को अपने घर से निकालूं। एक दिन उसने एक राजपूत को देखा कि वह अपने नौकर चाकरों के साथ तलवार बाँधे जा रहा है, सो झट उसके पास जा कहने लगी कि हे युवक! देखो कैसे अन्धेर की बात है कि एक निर्धन कामातुर लुच्चा मेरे घर में बलपूर्वक आ घुसा है. बाहर नहीं निकलता, सो आप चलकर उसे निकाल दीजिये और बदले में मेरी पुत्री के साथ सुख कीजिये। उस राजपूत ने कहा बहुत अच्छा, सो वह उसके संग उसके घर गया। उस समय रूपणिका कहीं दर्शन के निमित्त बाहर गई हुई थी। लोहजङ्घ भी घर में न था किसी काम से बाहर गया हुआ था। ज्योंही वह घर आया उस राजपूत के सिपाहियों ने झपटकर उसे बाँध लिया और मारे जूतों के उसका सिर गञ्जा कर डाला; फिर उसे नल में ढकेल दिया, जहां से किसी किसी प्रकार अपने प्राण लेकर लोहजङ्घ निकल भागा। इतने में रूपणिका भी आई, वह यह तमाशा देख अत्यन्त दुःखित हुई और वह राजपूत तो लोहजङ्घ को निकाल अपने रास्ते लगा। लोहजङ्घ को मकरदंष्ट्रा पर बड़ी खार थी पर वह रूपणिका के वियोग में ऐसा दुःखित था कि उसने तीर्थ में जाकर प्राण परित्याग करना विचारा और चल पड़ा। अन्दर तो वह क्रोध से भस्म हो रहा था और ऊपर से धूप उसको जलाये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

डालती थी सो वह छाया खोजता फिरता था, कहीं कोई छायेदार वृक्ष भी उसे न मिला, देखता क्या है कि एक मरे हुये हाथी की खलड़ी पड़ी है उसके अन्दर का सारा मांस गीदड़ों ने खा डाला था। सो वह उसी खलड़ी के भीतर घुस कर बैठ रहा। थका तो थाही, ठण्ढी ठण्ढी हवा जो लगी सो वह सो गया। इतने में चारो ओर से बादल घेर आये और बड़ी घनघोर मुसलाधार वृष्टि होने लगी। वह हाथी की खोलड़ी भींगकर ऐसी सिकुड़ गई कि कहीं से निकलने का रास्ता न रहा। इतने में बरसाती जल का समूह बड़े वेग से उमड़ता हुआ आया, जो उस खाल को बहाकर गङ्गाजी में ले गया। बहते बहते वह समुद्र में जा रहा। वहां उस बहते हुये खलड़े को किसी ऐसे पची ने देखा जो गरुड़ के वंश में से था; उसे मांस का धोखा हुआ, सो वह उस खलड़े को लेकर उड़ता हुआ समुद्र पार लङ्का नामक टापू में जा पड़ा। वहां जो उसने अपने तीव्र पञ्जों और चोंच से उस खलड़े को फाड़ा तो उसके अन्दर जीते हुये मनुष्य को देख भय से उड़ भागा। उसके उड़ने से जो वायु का झकोरा लोहजङ्घ को लगा तो वह चैतन्य हो उठ बैठा और उसी छेद के द्वारा बाहर निकल आया। अपने को समुद्र के पार एक बिलकुल नये स्थान में पाकर वह बड़े आश्चर्य्य में हुआ और सोचने लगा कि मैं स्वप्न देखता हूं या जागता। इतने में देखता क्या है कि दो बड़े भयानक राक्षस साम्हने से चले आते हैं, यह उनको देखकर डर गया और वे दोनों भी इसे देख कर बहुत घबड़ाये और चकित हुये। उन दोनों के घबड़ाने का कारण यह था कि वे लोग एक बेर श्रीरामचन्द्रजी से बुरी तरह पराजित हो चुके थे उसी बात को स्मरण कर उनका कलेजा काँपता था कि यह तो उसी जाति का जीव (मनुष्य) है और समुद्र पार होकर लङ्का में आया है, फिर उन दोनों ने आपस में सलाह की कि अब क्या करना चाहिये, तब उनमें से एक दौड़ता हुआ अपने प्रभु श्रीविभीषणजी के पास गया और जो कुछ उसने देखा था सब निवेदन किया। राजा विभीषण तो श्रीरामचन्द्रजी का प्रभाव देखही चुके थे सो मनुष्य के आने से वे बहुत डर गये और उस राक्षस से बोले कि जाकर उनसे हमारी ओर से निवेदन करो कि वे कृपाकर हमारा आतिथ्य स्वीकार करें और हमारे यहां पधार कर प्रसाद पावें। उस राक्षस ने चकित होकर लोहजङ्घ से आकर अपने प्रभु का

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सन्देश निवेदन किया। उसने भी बड़ी गम्भीरता के साथ वह निमन्त्रण स्वीकार किया और राक्षस को साथ ले राजा विभीषण के पास गया, देखा कि वे सोने के महल के अन्दर अपने राजभवन में बड़े ठाठ से बैठे हैं। राजा विभीषण ने ब्राह्मण को आया देख उठकर प्रणाम किया और उनने भी आशीर्वाद दिया फिर आतिथ्य सत्कार कर महाराज ने पूछा कि हे ब्राह्मणदेवता! कहिये आपने जो मुझे अनुग्रह कर अपना दर्शन दिया सो मैं आपकी कौन सी आज्ञा पालन करूँ। किस अभिप्राय से आपने इस देश को अपने पवित्र चरणों से सत्कारित किया? तब तो लोहजङ्घ ने धूर्ततापूर्वक राजा विभीषण से यों कहा कि हे महाराज! मैं श्रीमथुराजी का रहनेवाला गरीब ब्राह्मण हूं मेरा नाम लोहजङ्घ है। दरिद्रता से दु:खी होकर मैं श्रीनारायणजी के मन्दिर में जाकर निराहार तपस्या करने लगा, सो श्रीभगवान् जी ने प्रसन्न होकर स्वप्न में मुझे आज्ञा दी कि तू राजा विभीषण के पास जा, वह मेरा परम भक्त है तुझे धनी कर देगा। मैंने निवेदन किया कि हे भगवन् कहां मैं कङ्गाल और कहां महाराजाधिराज विभीषण लङ्कापति! भला मैं वहां तक कैसे पहुँच सकूंगा? भगवान् ने आज्ञा दी कि तू अभी जा अवश्य भेंट होगी। बस इतनेही में मेरी नींद खुली तो मैंने अपने को समुद्रपार इस नगरी में पाया, इसके अतिरिक्त मैं और कुछ नहीं जानता। जब लोहजङ्घ ने यों अपना वृत्तान्त सुनाया तो महाराज विचारने लगे निस्सन्देह इसका कहना सत्य है क्योंकि हमारी लङ्कापुरी में मनुष्य का पहुँचना बहुत कठिन बात है। ऐसा विचार और यह सोच कि हमारे ये राक्षस लोग मनुष्य को खा जानेवाले हैं, राजा ने कहा कि ब्राह्मणदेव आप हमारेही राजभवन में ठहरिये मैं भगवदिच्छानुसार अवश्य आपको धन दूंगा। लोहजङ्घ वहीं रहने लगा; राजा विभीषण ने उसकी सवारी का यह प्रबन्ध किया कि अपने राक्षसों को स्वर्णमूल पर्वत पर जहां गरुड़ के वंशवाले पक्षी रहते थे भेजकर एक उत्तम उड़नेवाले पक्षी को बुला भेजा, और लोहजङ्घ के हवा खाने के लिये उसे सवारी में नियत किया। इस प्रकार महाराज विभीषण से सत्कार पाकर लोहजङ्घ ने सुखपूर्वक कुछ दिनों तक वहां निवास किया। एक दिन उसने राक्षसेन्द्र महाराज विभीषण से सकौतुक यह बात पूछी कि हे राजन्! इस समय लङ्कापुरी की सारी भूमि काठ की क्यों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है ? । यह सुन विभीषण ने कहा कि हे ब्राह्मण देवता ! यदि आपको यह कौतुक जानने की इच्छा है तो मैं आपको इसका हाल कहता हूं सुनिये—

प्राचीन समय की बात है कि कश्यप ऋषि के पुत्र गरुड़ भगवान् की माता विनता नागों की माता से किसी प्रतिज्ञा में हार गई थी सो उसे दासीपन स्वीकार करना पड़ा था। अपनी माता का दासीपन छुड़ाने के उद्योग में वे लगे। नागों की माता ने विनता से कहा कि यदि तू अमृत का घड़ा मँगवा दे तो हम तुझे दासीपने से छोड़ देंगे । विनता ने अपने सुत गरुड़ से कहा कि हे पुत्र ! तुम में सब सामर्थ्य है तो क्या तुम अमृत का घड़ा लाकर मुझ अपनी माता का दासीभाव नहीं छुड़ा सकते। गरुड़ ने कहा बहुत अच्छा मैं अभी ले आता हूं। इतना कह वे अपने पिता कश्यपमुनि के पास गये कि मुझे कुछ भोजन के लिये दीजिये ताकि मैं दृढ़ होकर इस काम के निमित्त जाऊँ । ऋषिजी ने कहा कि हे पुत्र ! महासागर के तट पर एक बहुतही भारी हाथी और एक विशाल कछुआ रहते हैं। इनके शाप का समय पूरा हो गया है सो तू जा और उन दोनों को खाकर अपना मनोरथ पूर्ण कर । गरुड़जी ने जातेही उन दोनों को अपने पञ्जे में उठा लिया और उड़ते हुये महान् कल्पवृक्ष की एक शाखा पर उन्हें खाने की इच्छा से जा बैठे। उस कल्पवृक्ष के नीचे बालखिल्य * ऋषि लोग बैठे तपस्या कर रहे थे। ज्योंही गरुड़ भगवान् उस शाखा पर बैठे कि वह डार भारी बोझ के कारण चरचरा के टूटी । कहीं बालखिल्य ऋषि लोग दब न जांय इस भय से गरुड़ भगवान् ने उस टूटी हुई शाखा को निज चोंच में धर लिया और तीनों को लेकर उड़ते हुये निज पिताजी के पास गये । उनकी आज्ञा से उन्होंने उस डार को लाकर एकान्त निर्जन स्थान में छोड़ दिया जहां किसी के दबने का भय न हो । उसी कल्पवृक्ष-शाखा की पीठ पर यह लङ्का बनी और बसी है इसी कारण इसकी सारी भूमि काष्ठमयी है । राजा विभीषण के मुख से इस कथा को सुन लोहजङ्घ का कौतुक निवारण हुआ।

योंही कुछ दिनों के उपरान्त एक दिन लोहजङ्घ ने अपनी इच्छा मथरा जाने

* बालखिल्य ऋषि लोग अंगूठे बराबर संख्या में कई सहस्र हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को प्रगट की, सो राजा विभीषण ने अनेक बहुमूल्य रत्न और अलङ्कारों से उसका सत्कार कर सादर विदा किया, और भक्तिपूर्वक मथुरानिवासी भगवान् हरि के लिये सोने का शङ्ख चक्र गदा पद्म बनवाकर लोहजङ्घ के हाथ यह कह कर भेजा कि भगवान् के चरणों में मेरा प्रणाम निवेदन कर यह चढ़ा देना। इन सब चीजों को लेकर लोहजङ्घ राजा के दिये हुये उस पक्षी पर जो लाख योजन की मजिल मारता था, सवार हो आकाशमार्ग से चला। मथुरा में पहुँच उसने बाहर एकान्त में उस सब द्रव्य को स्थापन किया और उस पक्षी को भी वहीं बाँध दिया। फिर एक रत्न को लेकर बाजार में गया और उसे बेंच कुछ वस्त्र अङ्गराग माला और भोजन की सामग्री खरीद लाया। उसी एकान्त स्थान में उसने स्वयं खाया पीया और अपने पक्षी को भी खिलाया और सन्ध्या समय वस्त्रालङ्कार तथा फूलों की माला और अङ्गराग से अपने को भूषित कर शङ्ख चक्र गदा पद्म ले उस पक्षी पर चढ़ रूपणिका के घर को आकाशमार्ग से चला। रास्ता तो उसे मालूमही था सो रूपणिका के कोठे पर पहुँच उसने अपनी प्रिया को सुनाकर एक गम्भीर शब्द किया। रूपणिका उस शब्द को सुनतेही कोठे पर यह जानने के लिये गई कि यह शब्द कैसा हुआ, देखती क्या है कि विष्णु भगवान् सा स्वरूपधारी एक व्यक्ति गरुड़ पर चढ़ा आकाश में स्थित है। उसे देखतेही लोहजङ्घ ने कहा कि हम हरि हैं तुझे दर्शन देने के लिये आये हैं। रूपणिका ने प्रणाम कर निवेदन किया कि भगवान् ने इस दासी पर बड़ी कृपा की, आइये इस दासी के घर में पधारिये। इतना सुनतेही लोहजङ्घ उस पक्षी पर से उतर पड़ा और वहीं कोठे पर उस पक्षी को बांध निज प्रिया के साथ उसके रङ्गमहल में गया। वहां कुछ देर रह उसका सहवास कर वह पुन: अपने पक्षी पर चढ़ आकाशमार्ग से चला गया। इधर रूपणिका ने विचारा कि मैं अब विष्णु भगवान् की भार्य्या हो गई सो इस संसार के लोगों से मुझे अब मिलना जुलना न चाहिये; ऐसा मनमें ठान वह मौन धारण कर बैठ रही। सबेरे जब उसकी माता मकरदंष्ट्रा ने उसकी ऐसी दशा देखी तो पूछने लगी कि हे पुत्रि! तू ऐसी चुपचाप आज क्यों है? तुझे क्या कोई दु:ख है, मुझसे कहती क्यों नहीं, तुझे जो दु:ख हो मैं उसे दूर करने का यत्न करूँ। जब उसने बार बार यही बात कह हठ किया तो रूपणिका ने रात का सब वृत्तान्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कह सुनाया । यह सुन मकरदंष्ट्रा के मनमें सन्देह हुआ कि यह झूठी है किन्तु जब दूसरी रात्रि को उसने पत्रों पर चढ़े हुये लोहजङ्घ को स्वयं अपनी आंखों से देखा तो उसे कुछ विश्वास होने लगा । सबेरा होतेही वह रूपणिका के पास रङ्गमहल में पहुँची और एकान्त में बैठ कहने लगी कि "हे पुत्रि ! अब तू विष्णु भगवान् की कृपा से लक्ष्मी हो गई है, मैं तेरी माता हूं सो तू मुझे सुता होने का फल दे। मैं यह चाहती हूं कि अब मैं बहुत बुड्ढी हो गई हूं सो तू विष्णु भगवान् से कहकर मुझे इसी देह से स्वर्ग में पहुँचवा दे।" रूपणिका ने कहा 'बहुत अच्छा' आज मैं भगवान् के आने पर उनसे निवेदन करूँगी । बुड्ढी यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। रात्रि के समय जब छलविष्णु (लोहजङ्घ) का आना हुआ तो रूपणिका ने हाथ जोड़ निज माता का निवेदन कह सुनाया। देववेषधारी लोहजङ्घ ने कहा कि तेरी माता अत्यन्त पापिष्ठा है, प्रकाशरूप से हम उसे स्वर्ग में नहीं ले जा सकते। हां एक युक्ति है सो सुन, कि प्रत्येक एकादशी को प्रातःकाल के समय स्वर्ग का द्वार खुलता है सो पहिले शम्भुजी के गण वहां प्रवेश करते हैं। यदि तेरी माता उन्हीं का सा रूप धारण करे तो उनमें मिलाकर मैं किसी प्रकार उसे स्वर्ग में पहुँचा सकता हूं। सो तू छूरे से उसका सिर मूंड़ कर पांच चोटी रखवा दे गले में हड्डियों की माला पहिना, एक कपोल में कज्जल और दूसरे कपोल में सिन्दूर लगाकर ठीक कर दे। इस प्रकार जब शिवजी के गणों का सा उसका स्वरूप बन जाय तो हम किसी प्रकार उन्हीं गणों में मिलाकर इसे स्वर्ग में पैठा दे सकते हैं। ऐसा कह कुछ देर वहां ठहर छलविष्णु तो आकाशमार्ग से अपने मन्दिर को पधारे। प्रातःकाल बुड्ढी ने आकर रूपणिका से पूछा कि तूने मेरे लिये विष्णु भगवान् से कहा कि नहीं ? उनने क्या आज्ञा दी है । रूपणिका ने सब हाल कह सुनाया। बुड्ढी बोली, "कुछ चिन्ता नहीं किसी प्रकार मुझे सदेह स्वर्ग में पहुँचवा दे। अच्छा जैसा विष्णु भगवान् ने कहा है तू वैसाही मेरा रूप रच दे।"

रूपणिका ने कुल सामान मँगाकर अपनी माता का सब स्वांग वैसाही बना दिया और बुड्ढी तयार होकर स्वर्ग जाने के लिये उत्कण्ठापूर्वक रात का आसरा देखने लगी कि कब विष्णु भगवान् आवें और मुझे गरुड़ पर चढ़ाकर ले जावें। सन्ध्या होतेही लोहजङ्घ आ पहुँचा और रूपणिका ने माता को बुलाकर सन्मुख

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उपस्थित किया। लोहजङ्ग ने देखा कि बुड्ढी सिर से पैर तक नङ्गी एक विलक्षण रूप धारण किये खड़ी है सो चलती समय झट उसने उसे पक्षी पर बैठा आकाश का रास्ता लिया। उड़ते हुये लोहजङ्ग ने देखा कि एक शिवालय के आँगन में एक बड़ा भारी पत्थर का खम्भा खड़ा है जिस पर सोने का चक्र जड़ा है। उसी खम्भे के ऊपर चक्र को थमा कर उसने बुड्ढी को बैठाला मानो खलों के प्रतिकार स्वरूप झण्डे को स्थापन कर दिया। फिर बुड्ढी से कहने लगा कि तुम यहीं ठहरो, अब मैं जाकर पता लगा आऊँ कि स्वर्गद्वार खुलने में क्या देरी है तब तुम्हें ले चलकर गणों के बीच में बैठा दूंगा। बुड्ढी बोली बहुत अच्छा—यह सुन लोहजङ्ग चला गया। उस मन्दिर में रात को उत्सव था सो अनेक लोग जागरण करने तथा गाने बजाने के लिये एकत्र हो रहे थे। लोहजङ्ग ने ऊपर से आवाज दी "हे लोको! आज इस नगरी में महामारी आकाश से गिरनेवाली है सो आप सब लोग भगवान् के दर्शन पूजन में लिप्त रहो।" ऐसी आकाशवाणी को सुनकर वे सब मथुरानिवासी बहुत डर गये और सब लोग मन्दिर में चारो ओर एकत्र होकर भगवान् की स्तुति तथा आरती और पूजा करने लगे। इतने में लोहजङ्ग भी आकाश से उतर, पक्षी को कहीं एकान्त में बांध, देववेष परित्याग कर, एक कोने में खड़ा हो तमाशा देखने लगा। वह बुढ़िया कुटनी खम्भे पर बैठी बैठी चिन्ता कर रही थी कि बड़ी देर हुई अभी तक न विष्णु भगवान् आये और न मैं स्वर्ग को गई। भला कबतक वह उस ऊँचे खम्भे पर बैठी रहती, उसे चक्कर आने लगा सो घबड़ाकर बोली "अरे रे अब मैं गिरती हूं, खबरदार! खबरदार!" यह सुन लोगों ने समझा कि वही महामारी गिरा चाहती है, सो सब के सब चिल्लाकर कहने लगे "हां हां क्षमा करो देवि! गिरना मत, गिरना मत!" इसकी धूम तमाम मथुरा नगर में छा गई कि महामारी गिरा चाहती है, लड़के बूढ़े युवा सभी घबड़ा उठे और लोगों ने जाग जागकर किसी किसी प्रकार वह सारी रात विताई। सबेरा होतेही क्या देखते हैं कि कुटनी बुढ़िया एक विलक्षण प्रकार का वेष बनाये खम्भे के ऊपर नङ्गी बैठी है और चिल्ला रही है। लोगों ने जाकर राजा को खबर दी, वे भी इस विचित्र बात को सुनकर मन्दिर में आये। नगर में जो सुनता सोई दौड़ा चला आता। थोड़ी देर में इतनी भीड़ एकत्र हो गई कि तिल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धरने को जगह न मिलती थी। कुछ लोगों ने दौड़कर रूपणिका को खबर दी वह भी दौड़ी हुई वहां आई, देखती क्या है कि उसकी मां खम्भे के ऊपर नङ्गी बैठी हुई आकाश की ओर मुंह उठाकर स्वर्ग का दर्शन कर रही है। फिर तो लोगों ने तीन चार बड़ी लम्बी लम्बी सीढ़ियां एकही में बांध कर बुढ़ी को किसी प्रकार नीचे उतारा और उससे पूछने लगे कि तू इस खंभे पर क्योंकर चढ़ी और क्यों ऐसा वेष बनाकर हमलोगों को डराती थी। बुढ़ी ने सारा हाल ठीक ठीक सुनाया सब लोग हँसते हँसते लोट गये। फिर राजा इत्यादि सब लोग विचार करने लगे कि यह साधारण मनुष्य का काम नहीं है निस्सन्देह किसी सिद्ध का यह काम है, सो सब लोगों ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि जिस किसी महात्मा का यह काम हो कृपाकर वे प्रगट होकर हमलोगों को दर्शन दें। यह सुन लोहजङ्घ प्रगट होकर उन लोगों के सन्मुख आया और पूछे जाने पर उसने सब हाल आरम्भ से लेकर अन्त तक कह सुनाया और विभीषण के दिये हुये शङ्ख चक्र गदा पद्म को भगवान् के निमित्त राजा के सन्मुख रख दिया।

दोहा।

ऐसो अद्‌भुत जब सुन्यो राजा ने सब हाल।
स्वाधीना तब करि दई रूपणिका तेहि काल॥
लोहजङ्घ सम्पति लही हुती जु अमित अतूलि।
ताकों सुख भोगन लग्यो प्रिया सहित दुख भूलि॥

चौपाई।

कही बसन्तक कथा सुहाई। सुनि वासवदत्ता हर्षाई।
वत्सराजहू सुनि हर्षाने। बन्धन दुख तहँ नेक न जाने॥
प्रिया समीप वसत सुखसाने। कई मास बीतत छन जाने॥
ऐसहि कथा समै-अनुकूला। कहत वसन्तक जो सुखमूला॥

पांचवां तरङ्ग।

धीरे धीरे वासवदत्ता का स्नेह पिता पर घटने लगा और वत्सराज पर नित्य प्रेम बढ़ता जाता था। एक समय यौगन्धरायण पुन: अञ्जनबल से सूक्ष्मरूप धारण कर राजा के पास पहुँचा, जहां और कोई भी उसे देख न सकता था। वसन्तक के साम्हने उसने एकान्त में वत्सराज को समझाया कि, हे राजन्! चण्डमहासेन ने आपको माया से यहां बांध रक्खा है उसकी इच्छा है कि वह अपनी कन्या से आपका विवाह करके आपको यहां से आदरपूर्वक छोड़े, किन्तु यदि हम लोग उसे स्वयं हरकर ले चलें तो आपके बांधे जाने का बदला चुक जावे, फिर हमलोगों के माथे वह कलङ्क नहीं रह सकता, क्योंकि हमारा हेठापन प्रतीत न होकर पौरुष प्रतीत होगा। उसकी युक्ति यों है कि राजा चण्डमहासेन ने अपनी पुत्री वासवदत्ता को भद्रवती नाम की एक ऐसी हथिनी दी है कि जिसके समान नड़ागिरि को छोड़ और कोई भी तेज चलनेवाला हाथी नहीं है किन्तु नड़ागिरि इसके साथ झगड़ा न करेगा क्योंकि यह हथिनी है। फिर इसका आषाढ़क नामक फीलवान् भी यहीं रहता है जिसे मैंने बहुत सा धन देकर अपने वश में कर लिया है। बस उचित यही है कि अपने आयुधों के सहित, रात्रि के समय, वासवदत्ता को साथ ले उसी हथिनी पर सवार हो आप चुपचाप निकल चलिये। यहां जो फीलवानों का सरदार महामात्र नामक व्यक्ति रहता है, जो हाथियों का सब सङ्केत जानता है, उसे मदिरा पिलाकर बेसुध कर दिया जायगा जिसमें वह मिनके तक भी नहीं। और मैं आपके मित्र पुलिन्दक के पास आगे जाता हूं कि मार्गरक्षा का प्रबन्ध किया जाय। यह कह यौगन्धरायण तो चला गया, तबतक राजा ने इधर उधर की बातें करते करते वासवदत्ता से उस बात की चर्चा छेड़ी जो यौगन्धरायण कह गया था। यह सुन वासवदत्ता भी चलने पर उद्यत हो गई और उसने आषाढ़क नामक हस्त्यारोही को बुलाकर तयार कर रक्खा, और मदिरा में अफीम घोलकर देवी के प्रसाद के बहाने से उसने महामात्र को पिला बेसुध कर दिया। सन्ध्या के समय जब बादल गरज रहे थे और मेघवृष्टि का सामान जान पड़ता था, आषाढ़क हाथी कस कर द्वार पर ले आया। तयार होने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर हथिनी ने एक चिङ्घाड़ मारी, यह सुन महामात्र नशे में बोला कि "हथिनी कहती है कि आज मैं ६३ योजन जा सकती हूं" किन्तु वह मदिरा से उन्मत्त हो रहा था इसी कारण दूसरे हस्त्यारोहियों ने उसकी बात पर ध्यान न दिया।

इधर वत्सराज भी यौगन्धरायण से पाये हुये योगबल द्वारा अपने बन्धनों को काट, वीणा ले, वासवदत्ता और वसन्तक के सहित हथिनी पर आ विराजे। चलते समय वासवदत्ता ने अपनी अनतरङ्गिणी सखी काञ्चनमाला को भी साथ बैठा लिया और इस प्रकार वे चारो व्यक्ति रात्रि के समय हथिनी पर चढ़ उज्जयिनी नगरी से दीवारों को तोड़ते रौंदते बाहर निकले। दीवारों की रक्षा करनेवाले दो राजपुत्र वीरबाहु और तालभट नामक थे, वे दोनों वत्सराज उदयन के हाथ से मारे गये। इधर आषाढ़क ने भी हथिनी को अंकुश लगाया और वह सवारी को लिये हुई शीघ्रतापूर्वक चली। सिपाहियों ने जो सबेरे उन दोनों द्वाररक्षकों को मरा हुआ पाया तो राजा चण्डमहासेन से डरते हुये जाकर यह वृत्तान्त निवेदन किया। सुनतेही राजा ने वासवदत्ता और वत्सराज की खोज में धावनों को पठाया परन्तु कहीं भी उन लोगों का पता न लगा और वे सब ढूंढ़ ढाँढ़ कर लौट आये। जब नगर में बड़ा कोलाहल मचा तो राजा चण्डमहासेन का पालक नामक पुत्र नड़ागिरि पर सवार होकर वत्सराज के पीछे दौड़ा और रास्ते ही में उनसे जा मिला। खूबही बाणयुद्ध हुआ किन्तु नड़ागिरि ने हथिनी भद्रवती पर चोट न किया। इतने में पालक का भाई गोपालक भी आन पहुँचा और उसने उसे समझाया कि इस व्यर्थ के झगड़े से कोई लाभ नहीं है। अन्त वत्सराज हमारे भगिनीपति होहींगे तो अपने सम्बन्धी से लड़ने में अपनीही हानि है, यों समझा बुझाकर गोपालक अपने भाई को लौटा ले गया और इधर राजा उदयन ने आनन्दपूर्वक निर्विघ्न वन का मार्ग लिया। चलते चलते रात भी बीत गई, किन्तु मार्ग समाप्त न हुआ। दोपहर के समय राजा विन्ध्याचल के जङ्गल में पहुँचे और हथिनी ने भी ६३ योजन की मंजिल मारी। तब तो वह अत्यन्त प्यासी हुई। राजा भार्य्या सहित उतर पड़े और हथिनी ने पानी पीया। मार्ग के परिश्रम के कारण वह बहुत गरमा गई थी सो पानी के पीतेही घूमकर भूमि पर गिरी और उसी क्षण मर गई। यह देख राजा और रानी को परम खेद हुआ!

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI,
Acc. No.
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु इतनेही में यह आकाशवाणी हुई कि, "हे राजन्! मैं मायावती नाम विद्याधराङ्गना हूं, शाप पाने के कारण इतने दिनों तक हथिनी हो गई थी। हे वत्सेश मैंने आपका इतना उपकार अब किया है और फिर भी आपके भविष्य पुत्र का उपकार करूंगी। अपनी इस वासवदत्ता भार्य्या को मानुषी मत समझना; यह देवी है, किसी विशेष कारण से मनुष्यरूप में इसने अवतार लिया है।" इतना कह आकाशवाणी चुप हो गई जिसे सुन राजा अत्यन्त प्रसन्न हुये। फिर उन्होंने वसन्तक को आगे भेजा कि जाकर हमारे मित्र पुलिन्दक से हमारे आने का हाल कहो। उसे उधर भेज आप रानी सहित पैदलही धीरे धीरे चलने लगे। रास्ते में डाकुओं ने इन्हें आ घेरा, राजा ने वासवदत्ता और काञ्चनमाला को तो एक कोने में खड़ी कर दिया और स्वयं धनुष वाण ले युद्ध करने लगे। देखते देखते उन्होंने १०५ डाकुओं को अकेलेही मार गिराया। यह देख डाकुओं का साहस जाता रहा। इतने में यौगन्धरायण तथा वसन्तक को साथ लिये हुआ राजा का मित्र पुलिन्दक भी आ पहुँचा और आदरपूर्वक वत्सराज को भार्य्या सहित अपने गांव में लिवा ले गया। मार्ग में पैदल चलने के कारण रानी के पैर कुश और कांटों के लगने से चलनी हो गये थे सो वह आतेही सो गई, और राजा ने भी थके होने के कारण सुख से निद्रा ली। यौगन्धरायण ने रुमण्वान् सेनापति के पास आगेही खबर भेज दी कि महाराज पधारते हैं सो वह भी समग्र सेना लेकर अगवानी के लिये सेवा में आन उपस्थित हुआ। उस सूनसान जङ्गल में अब ऐसी भीड़ एकत्र हो गई कि कहीं ठहरने की भी जगह न मिलती थी। राजा को इस बात का ध्यान लगा था कि हमारे चले आने पर उज्जयिनी में क्या हुआ, कुछ पता न लगा कि इतने में वहां के रहनेवाले एक वणिक् ने जो यौगन्धरायण का मित्र था सम्मुख उपस्थित हो हाथ जोड़ निवेदन किया कि, हे देव! चण्डमहासेन श्रीमान् को जामातारूप से मानते हैं वे आप पर रुष्ट नहीं प्रत्युत प्रसन्न हैं, उन्होंने आपकी सेवा में अपने दूतों को कुछ सौगात् लेकर भेजा है। वे लोग दूर एकान्त में छिपे हैं, भय के मारे श्रीमान् के सम्मुख नहीं आते, मुझे आगे सेवा में भेजा है, यदि आज्ञा हो तो वे लोग भी आकर चरणकमल का दर्शन करें। यह सुन राजा उदयन अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने रानी वासवदत्ता को सब हाल सुनाया,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह भी सुनकर खुशी हुई, और क्योंकि वह विवाह की शीघ्रता में अपने बन्धुओं को परित्याग कर अपने भविष्य पति के साथ चली आई थी इससे वह कुछ उत्सुक तथा लज्जित भी हुई। वसन्तक तो पासही बैठा था, सो रानी ने आज्ञा दी कि हे वसन्तक! इस समय मेरा जी बहलाने के लिये कोई मनोहर कथा तो सुनाओ। सो बुद्धिमान् वसन्तक ने इस भर्तृ प्रेमबर्धिनी कथा को इस प्रकार कहना आरम्भ किया—

वसन्तक बोला कि हे देवि! ताम्रलिप्ति नाम्नी एक अत्यन्त सुन्दरी नगरी है, जहां धनदत्त नामक कोई बनिया रहता था। उसे कोई लड़का बाला न था सो उसने अनेक ब्राह्मणों को एकत्र कर हाथ जोड़ यह निवेदन किया कि मुझे कोई पुत्र नहीं है, आपलोग कोई ऐसा अनुष्ठान करिये कि जिसमें मुझे कोई पुत्र हो। ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि इस संसार में कोई भी ऐसा कठिन काम नहीं है जिसे द्विज लोग अपने श्रौत कर्म्म के प्रभाव से न सिद्ध कर सकें। सुनो, हमलोग एक प्राचीन कथा कहते हैं कि किसी राजा के महल में १०५ रानियां थीं परन्तु किसी से भी उसे कोई पुत्र न हुआ, राजा ने पुत्रयेष्ठी यज्ञ किया जिसके प्रभाव से उनके यहां एक पुत्र का जन्म क्या हुआ मानो समस्त रानियों के नेत्रानन्द को बढ़ानेवाला नूतन चन्द्र का उदय हुआ। उसका नाम जन्तु रक्खा गया।

एक समय वह बालक बकैयां चल रहा था कि उसके जांघ में किसी चिँउटी ने जोर से काटा. वह बालक चिल्लाकर रोने लगा। उतनेही से सारे राजमहल में बड़ा कोलाहल मच गया और राजा भी घबड़ाकर कहने लगे "क्या हुआ पुत्र, क्या हुआ?" कुछ देर के बाद जब चिँउटी छूट गई और बालक स्वस्थ हुआ तो राजा का भी चित्त स्थिर हुआ। फिर वे विचारने लगे कि एक मात्र पुत्र का होना बड़े दुःख की बात है सो उन्होंने ब्राह्मणों की एक सभा एकत्र की और उनसे कहा कि कोई ऐसा उपाय करिये कि मुझे बहुत से पुत्र हों। उन लोगों ने उत्तर दिया कि हे राजन्! इसका एक यही उपाय है कि आपके इस पुत्र को मारकर इसके मांस से हवन किया जाय और उसके धूंये की गन्ध जब सब रानियों को पहुँचे तो उन्हें गर्भ रहे और सभों से आपको पुत्ररत्न का लाभ हो। ऐसा सुन उस राजा ने उसी प्रकार हवन कराया और अपनी पत्नियोंद्वारा अनेक पुत्रों को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाया। इसलिये कहते हैं कि हमलोग होम के द्वारा आपके पुत्र होने का यत्न कर सकते हैं। यह सुन उस धनदत्त बनिये ने ब्राह्मणों को खूब दक्षिणा दी और उन लोगों ने भी यज्ञ करना आरम्भ किया, जिसके प्रभाव से उसे एक सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम गुहसेन रक्खा गया। क्रमशः वह बालक सयाना होने लगा और उसके पिता धनदत्त को उसके विवाह की चिन्ता हुई। कुछ दिनों के उपरान्त वह धनदत्त बनिया पतोहू की खोज में व्यापार के बहाने से निज पुत्र को साथ ले किसी दूरदेश के टापू को गया। वहां धर्म्मगुप्त नामक एक बनिये से उससे भेंट हुई जिसकी कन्या का नाम देवस्मिता था। धनदत्त ने अपने पुत्र गुहसेन के लिये धर्म्मगुप्त से उस कन्या को माँगा परन्तु वह अपनी कन्या से बहुत स्नेह रखता था इसलिये उसने उत्तर दिया कि मैं इतनी दूर, ताम्रलिप्ती नगरी में कन्या का सम्बन्ध नहीं किया चाहता। किन्तु देवस्मिता ने गुहसेन को देख लिया था और उसका चित्त वणिक्पुत्र के गुणों से मोहित हो गया था सो उसने माता पिता को छोड़ गुहसेन के साथ निकल जाना निश्चय ठहराया। अपनी सखी को गुहसेन के पास भेज उसने सब बात पक्की कर रक्खी और दूसरे दिन रात्रि के समय अपने भविष्य पति और ससुर के साथ अकेलीही घर से निकल खड़ी हुई। ताम्रलिप्ती में पहुँच कर उन दोनों का विवाह हो गया और परस्पर की प्रीति दिनोदिन बढ़ने लगी। जब गुहसेन के पिता का देहान्त हो गया तो कुछ दिनों बाद बन्धुओं ने उससे कहा कि आपके पिता कटाह द्वीप में जाकर बहुत भारी व्यापार करते थे सो आपको भी वहीं जाकर अपना व्यापार बढ़ाना चाहिये। गुहसेन जाने पर राजी हुआ, किन्तु उसकी भार्य्या देवस्मिता को यह सन्देह हुआ कि चिरकाल तक विदेश में अकेले रहने के कारण कहीं ऐसा न हो कि यह दूसरी स्त्री से प्रेम करने लग जाय, सो उसने गुहसेन को विदेश जाने से मना किया। एक ओर तो प्यारी पत्नी निषेध करती और दूसरी ओर बन्धु लोग परदेश जाने का हठ करते, इन्हीं दोनों विचारों में पड़कर गुहसेन निश्चय न कर सका कि क्या करना चाहिये। सो उसने शिवजी के मन्दिर में जाकर निराहार व्रत कर यह प्रार्थना की कि अब शंभु भगवानही मुझे उपाय बतावें कि ऐसी अवस्था में क्या करना उचित है। देवस्मिता ने भी उसके साथ व्रत किया कि श्रीशिवजी उ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

[उ]चित उपदेश देवें तो चन्द्रमौलि भगवान् ने दोनों को स्वप्न देकर दो लाल कमल दिये और यह कहा कि तुम दोनों एक एक कमल अपने हाथ में रक्खो । यदि दूर रहने पर, दोनों में से जो कोई शीलत्याग कर धर्म्मभ्रष्ट होगा तो दूसरे के हाथ का कमल मुरझा जायगा, नहीं तो कमल ज्यों का त्यों ताजा बना रहेगा। इतने में स्त्री और पुरुष दोनों की आंखें खुल गईं और दोनों ने अपने अपने हाथ में एक एक ताजा कमल पाया। तब तो गुहसेन अपनी प्यारी पत्नी से अनुमति ले हाथ में उस कमल को धारण कर विदेश को चल पड़ा और देवस्मिता भी अपने हाथ के कमल पर रात दिन दृष्टि लगा अपने घर में रहने लगी। कुछ दिनों में गुहसेन कटाह द्वीप में जा पहुँचा और रत्नों की खरीद तथा बिक्री करने लगा। सदा उसके हाथ में ताजा कमल देखकर वहां के चार वणिक्पुत्रों को बड़ा आश्चर्य हुआ सो वे लोग उसे मित्रभाव दिखला अपने घर ले गये और वहां खूब मदिरा पिलाई, जब वह भरपूर नशे में हुआ तो उन लोगों ने उससे कमल का हाल पूछा और उसने मदमत्त अवस्था में रहने के कारण सब हाल ठीक ठीक कह दिया। जब रत्नों के सौदे का भुगतान हो गया तो गुहसेन अपने डेरे को लौट आया। इधर ये चारो पापी वणिक्पुत्र कौतुकवश हो विचारने लगे कि ताम्रलिप्ती में चलकर देवस्मिता का सतीत्व भङ्ग करना चाहिये सो चुपचाप चारो वहां से चलकर गुहसेन की नगरी में जहां उसकी पतिव्रता भार्य्या रहती थी आन पहुँचे। उपाय विचारते विचारते वे सब योगकरण्डिका नाम एक कुटनी से मिले, जो तापसी के वेष में रहती थी। उससे उन सभों ने कहा कि हे भगवति! यदि आप हमारा काम कर देवें तो हमलोग आपको बहुत धन देंगे। उसने कहा कि आपलोग सब युवा हैं कदाचित् किसी सुन्दरी स्त्री को फँसाया चाहते हैं, कहिये; मैं आपलोगों का काम कर दूंगी परन्तु मुझे धन की कोई इच्छा नहीं है। हमारी एक शिष्या सिद्धिकरी नाम की है वह अत्यन्त बुद्धिमती है उसकी कृपा से मुझे असंख्य धन मिल चुका है। जब उन वणिक्पुत्रों ने पूछा कि शिष्या की कृपा से तुम्हें क्योंकर असंख्य धन मिला तो वह तापसी कुटनी कहने लगी कि—

यदि आप लोगों को कौतुक है तो सुनिये मैं कहती हूं, एक समय यहां कोई धनी महाजन उत्तर के देश से आया था उसके यहां मेरी शिष्या रूप बदल कर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दासी का काम करने लगी। एक दिन रात के समय अवसर पाकर वह उस महाजन का सारा धन और रत्नों की सन्दूकड़ी चुराकर निकल भागी। नगरी के बाहर निकल वह इस शङ्का से शीघ्रतापूर्वक चली जाती थी कि कोई देख न ले कि इतने में एक डोम हाथ में मृदङ्ग लिये हुआ उसका माल छीनने के अभिप्राय से उसके पीछे लगा। जब वह एक बट वृक्ष के नीचे पहुँची तो डोम भी आन मिला, उसे देख उस धूर्त्ता सिद्धिकरी ने दीनतापूर्वक उससे कहा कि हे भद्र! आज मैं अपने पति से कलह करके मरने के लिये घर से निकल भागी हूं सो आप कृपा कर इस पेड़ में एक फांसी बना दीजिये जिसमें लटक कर मैं अपने प्राण दे दूं। डोम ने विचारा कि यह तो आपही फांसी लगाकर मरने कहती है तो मैं इसे क्यों मारूँ सो उसने उस वृक्ष में फाँसी तयार कर दी। तब सिद्धिकरी मूढ़ों की नाईं डोम से कहने लगी कि मैंने कभी फाँसी देखी नहीं है मुझे बतला दो कि मैं इसमें क्योंकर लटकूं। तब तो वह डोम मृदङ्ग पर चढ़ निज गले में फांसी लगा कहने लगा कि यों करो, इतने में सिद्धिकरी ने झट लात मार मृदङ्ग को ढकेल दिया और वह डोम फाँसी पर लटक मर गया। इतने में वह महाजन भी ढूंढ़ता ढूंढ़ता आ पहुँचा और उसने दूर से सिद्धिकरी को देखा। महाजन को देख सिद्धिकरी सब माल उठा झटपट उस वृक्ष के ऊपर चढ़ चुपचाप पत्तों की ओट में छिप रही। महाजन जो अपने नौकरों सहित वहां पहुंचा, देखता क्या है कि एक डोम फांसी से लटका है और सिद्धिकरी कहीं दिखलाई नहीं पड़ती। कदाचित् कहीं किसी वृक्ष पर वह न चढ़ गई हो ऐसा विचार महाजन के नौकरों में से एक उस वृक्ष पर चढ़ने लगा। सिद्धिकरी ने उसे आते देखा तो कहने लगी कि हे सुन्दर! मैं तो तुमसे बहुत दिन से मिला चाहती थी अच्छा हुआ कि तुम भी यहां आ गये, आओ आओ अब तो यह सब धन तुम्हाराही है आओ मेरे गले से लग जाओ। जब वह नौकर ऊपर पहुंचा तो वह सिद्धिकरी ऐसा कह प्यार से उसका मुख चुम्बन करने लगी, वह भी जीभ निकाल निकाल उसके मुंह में देने लगा। अवसर पा झट सिद्धिकरी ने उसकी जीभ दाँतों से काट डाली और वह मूर्ख अलल्लल करता हुआ मुंह से लहू फेंकता धड़ाम से नीचे गिर पड़ा। यह देख वह महाजन डर गया और इस भय से किसी भूत ने इसे जीभ काट नीचे फेंक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिया है चिल्लाता हुआ घर को भागा । तब तो वह भी वृक्ष से नीचे उतरी और स्वयं भी डरती हुई सब धन लिये मेरे पास आ पहुंची । ऐसी बुद्धिमती मेरी वह सिद्धिकरी शिष्या है सो हे पुत्रो ! मैंने उसी की कृपा से असंख्य धन प्राप्त किया है । इतनी बातें होही रही थीं कि इतने में सिद्धिकरी भी आ गई और उस तापसी ने वणिक्पुत्रों का परिचय उससे कराया । फिर वह उनसे कहने लगी कि हे पुत्रो ! अब आप लोग अपना अभिप्राय कहिये, वह कौन सी स्त्री है जिसको मैं फुसलाकर आप लोगों के लिये ठीक कर दूं । उन लोगों ने कहा कि जिस स्त्री को हम चाहते हैं उसका नाम देवस्मिता है और वह गुहसेन वनिये की भार्य्या है उसी का ठीकठाक कर दो । यह सुन उस कुटनी ने कहा 'बहुत अच्छा' आप लोग मेरे घर में ठहरिये मैं इसका प्रबन्ध करती हूं । दो चार दिनों में उसने गुहसेन के नौकर चाकरों को ले देकर साध लिया और यों मेल बढ़ा अपनी शिष्या को साथ ले एक दिन देवस्मिता के घर के द्वार पर पहुंची । द्वार पर कुतिया बँधी थी वह उसे देखतेही भूकने लगी और अन्दर न जाने देती थी कि इतने में देवस्मिता ने उसे देखा सो दासी को भेजकर कहा कि देख यह कौन है और क्यों आई है इसे अन्दर बुला ला । अन्दर आतेही बुढ़िया ने आशीर्वाद दिया और देवस्मिता ने भी उसे आदरपूर्वक बैठाया । तब वह पापिनी उस पतिव्रता से कहने लगी कि मुझे तुमसे मिलने की बड़ी इच्छा रहती थी आज मैंने स्वप्न में तुम्हें देखा सो मैं तुमसे भेंट करने के लिये चली आई । तुम्हारे पति विदेश गये हैं और तुम अकेली यहां रहती हो यह देख मेरा मन बड़ा दुःखी होता है क्योंकि बिना पुरुष के सुख मिले स्त्री का रूप यौवन सब वृथा है । इस प्रकार की दो चार बातें कर उस दिन तो वह पापिष्ठा अपने घर को गई और यह कह गई कि मैं फिर भी तुमसे कभी मिलूंगी । दूसरे दिन थोड़ा सा मांस मिर्च और चूना मिलाकर साथ ले वह देवस्मिता के घर गई और द्वार पर कुतिया के आगे उसे डाल दिया । कुतिया झट उस मांस को खा गई और मिर्च तेज़ होने के कारण उसके आंख तथा नाक से पानी बराबर बहने लगा । फिर तो वह धूर्ता अन्दर गई और देवस्मिता के आगे रोने लगी । जब देवस्मिता ने उसके रोने का कारण बार बार उससे पूछा तो वह बहुत आगा पीछा कर कहने लगी कि हे पुत्रि ! देखो तुम्हारी कु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तिया जो द्वार पर बँधी है मुझे देख रो रही है, कारण यह है कि यह पूर्व जन्म की मेरी परिचिता है आज इस जन्म में फिर मिली है, इसे रोती देख मेरी आंखों में भी आंसू आ गये। देवस्मिता ने जो बाहर की ओर दृष्टि उठाई तो सचमुच कुतिया को रोती सी पाया, यह देख वह विचारने लगी कि यह क्या बात है। कुटनी तापसी ने कहा कि हे पुत्रि! पूर्व जन्म में हम और यह दोनों एक ब्राह्मण की भार्य्या थीं। हमलोगों का पति किसी दूरदेश में बार बार राजा की आज्ञा से दूत होकर जाया करता था। उसके जाने पर मैं तो अपनी भूतेन्द्रियों को सांसारिक सुख से वञ्चित न करती थी, और पर-पुरुषों के साथ खूब आनन्द करती थी। भूतेन्द्रियों को कभी दुःख नहीं देना शास्त्र में यह परम धर्म कहा है, इसी कारण हे पुत्रि! मुझे इस जन्म में भी अपने पूर्व जन्म की बात याद रही। और यह सदा शीलही शील रटती रही सो अज्ञानता से इसने भूतेन्द्रियों को तृप्त न किया, इस कारण यह कुतिया हुई किन्तु तौभी इसे अपने पूर्व जन्म का हाल याद रहा। बुद्धिमती देवस्मिता अपने मनमें विचारने लगी कि भला यह कैसा धर्म्म है! इस धूर्ता ने यह बात अपने मन से बनाकर कही है, सो वह कुटनी तापसी से बोली कि भगवति! इतने दिनों तक मुझे इस धर्म की कुछ भी खबर न थी सो कृपा कर किसी सुन्दर युवा पुरुष से मेरी भी भेंट करा दो। तब तो वह धूर्ता तापसी कहने लगी कि हे पुत्रि! किसी दूरदेश से आये हुये चार वणिक्पुत्र इस नगरी में ठहरे हैं मैं उन्हें तेरे पास ले आऊँगी। देवस्मिता ने कहा 'बहुत अच्छा'। तब तो वह धूर्ता प्रसन्न हो अपने घर को गई। इधर उस पतिव्रता ने अपनी दासियों को बुलाकर एकान्त में सब हाल सुनाया और कहा कि निस्सन्देह इन वणिक्पुत्रों ने मेरे पति के हाथ में न मुर्झानेवाला वह कमल देखकर उन्हें मद्य पिला सब वृत्तान्त पूछ लिया है और अब वे शठ मेरा सतीत्व नाश करने के लिये यहां आये हैं और उन्हीं सभों ने इस तापसी कुटनी को भेजा है। सो अब तुम लोग धतूरा मिली हुई थोड़ी मदिरा मँगा रक्खो और कुत्ते के पैर का छाप भी लोहे का बाज़ार से बनवा लाओ। देवस्मिता की यह आज्ञा सुन दासियों ने सब काम उसी प्रकार कर रक्खा और एक दूती देवस्मिता का सा रूप बनाकर बैठ रही। उधर उस कुटनी ने घर पहुँचकर चारो वणिक्पुत्रों से सब हाल सुनाया, वे सब पहिले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में पहिले में करके झगड़ा करने लगी । अस्तु चारों में से एक को अपनी शिष्या का वेष धरवा साथ लेकर रात के समय वह देवस्मिता के घर पर आई और उसे वहां छोड़ अकेली चली गई। तब तो उस दासी ने जो देवस्मिता के वेष में बैठी थी उस वणिक्पुत्र को अपने पास बैठा कपट से प्यार की बातें करते करते वह धतूरेवाली मदिरा पिला दी और उसने भी बड़ी प्रसन्नता से पी। जब वह नशे में अचेत हो गया तो सब दासियों ने उसके वस्त्राभूषण उतार लिये और उसे नङ्गा बना, कुत्ते के पैर की मोहर गर्म कर उसके माथ में दाग, पैरों से घसीट गन्दे नल में रात के समय फेंक दिया। कुछ रात रहते जब उसे होश हुआ तो झट नहाकर माथे के चिन्ह पर दुःख करता हुआ नङ्गाही कुटनी के घर पर पहुँचा । फिर यह विचारकर कि यदि मैं ठीक ठीक हाल कह दूंगा तो ये सब मुझ पर ठट्ठा उड़ावेंगे उसने अपने मित्रों से कहा कि मैं तो रात्रि बड़े आनन्द में रहा किन्तु प्रातःकाल जब आने लगा तो रास्ते में चोरों ने मुझे अकेला पा लूट लिया। रात भर जागने तथा मदिरा अधिक पी जाने के कारण मेरे सिर में बड़ा दर्द होता है, इस बहाने से वह माथे में वस्त्र लपेट, मोहर का दाग छिपा, एक कोने में जाकर पड़ रहा।

उसी प्रकार दूसरे दिन रात के समय दूसरा वणिक्पुत्र भी देवस्मिया के घर आया और अपनी दुष्टता का फल पा सबेरे कुटनी के घर पहुंच अपने मित्रों से कहने लगा कि भई रात्रि भर सुख लूटने के उपरान्त मैं तो चालाकी कर अपने गहने वहीं रख आया किन्तु फिर भी दुष्ट डाकुओं ने मेरे सब कपड़े छीन लिये और मुझे नङ्गा कर छोड़ दिया । प्रातःकाल वह भी सिरदर्द के बहाने से माथे में कपड़ा लपेट, मोहर का दाग छिपा, दूसरे कोने में जा पड़ा। उसी प्रकार बाकी के दोनों वणिक्पुत्र भी क्रमशः उस पतिव्रता के घर पहुँचे और वस्त्राभूषण गँवा माथे पर मोहर की छाप खा, लज्जित हो अपना सा मुंह ले कुटनी के घर लौट आये। फिर सभों ने विचारा कि अब यहां से चुपचाप खसक चलना चाहिये ऐसा न हो कि यह तापसी कुटनी हम सबों का हाल जान ले। इसकी दशा भी हमलोगों जैसी होवे तभी ठीक होगा; ऐसा विचार वे सबेरेही उठ बिना उस कुटनी से कहे घर से निकल भागे । दूसरे दिन वह धूर्ता यह विचार कर कि मैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अपने उद्योग में कृतकार्य्य हुई शिष्या को साथ ले खुशी खुशी देवस्मिता के घर पहुंची। उसने बड़े आदरभाव से उन दोनों को बैठाया और पारितोषिकरूप से लाकर वही धतूरेवाली मदिरा दोनों को पिला दी। जब वे दोनों भी बेसुध हो गईं तो उनके नाक कान काट उसने उसी नल के कीचड़ में बाहर फेंकवा दिया। इसके उपरान्त उसे यह चिन्ता उपस्थित हुई कि कहीं ये वणिक्पुत्र जाकर मेरे पति को मार न डालें सो इस शङ्का से उसने अपनी सास को सब हाल सुनाया। सास ने कहा कि हे पुत्रि! जो तूने किया सो बहुतही उचित किया किन्तु मुझे भी इस बात का भय है कि कदाचित् ये लोग मेरे पुत्र को कुछ हानि पहुँचावें। तब तो देवस्मिता ने उत्तर दिया कि जैसे शक्तिमती ने अपने पति को बचाया था वैसेही मैं भी किसी युक्ति से अपने पति को बचा लाऊँगी। सास ने पूछा हे पुत्रि! शक्तिमती ने कैसे अपने पति को बचाया था वह कथा तू मुझे सुना—

देवस्मिता कहने लगी कि बड़े लोगों से सुना है कि हमारे देश में मणिभद्र नाम एक प्रतिष्ठित महायक्ष का मन्दिर था, वहां के निवासी अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिये उस स्थान में अनेक प्रकार के उपायन ले जाते और पूर्ण-मनोरथ होकर चले आते थे। प्रायः ऐसा होता था कि नगर में जहां कहीं कोई व्यक्ति पराई स्त्री के साथ पकड़ा जाता तो वह उसी स्थान में लाकर रात को बन्द किया जाता था और सबेरे उस परस्त्री के सहित राजसभा में उपस्थित किये जाने पर दण्ड पाता था। एक समय समुद्रदत्त नामक बनिया किसी परस्त्री के साथ कोतवालद्वारा पकड़ा गया सो वह स्त्री के सहित धर कर उसी यक्षदेव के मन्दिर में बन्द किया गया। यह वृत्तान्त उस बनिये की महाबुद्धिमती भार्य्या शक्तिमती ने सुना। वह धीरा झट पूजा का सामान लेकर सखियों को साथ ले उस मन्दिर के द्वार पर पहुँची और पुजारी से बोली कि मैं कुछ मन्नत उतारने आई हूं। दक्षिणा का लोभ जो पुजारी को दिया गया तो उसने कोतवाल से कह कर द्वार खुलवा उसे अन्दर पैठा दिया। उसने अन्दर जाकर देखा कि उसका पति और वह पराई स्त्री दोनों पकड़े आकर वहीं बैठे हैं सो उसने झट अपने कपड़े तो उस स्त्री को पहिना दिये और कहा कि तू मेरे भेष में बाहर निकल जा और वह स्वयं उस स्त्री के कपड़े पहिन वहां बैठ गई। जब सबेरे कोतवाल ने राजसभा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में उन्हें उपस्थित किया तो समुद्रदत्त के साथ पराई स्त्री न पाई जाकर उसी की भार्य्या शक्तिमती पाई गई। राजा ने यह देख समुद्रदत्त बनिये को छोड़ दिया और कोतवाल को दण्ड दिया। इस प्रकार शक्तिमती ने अपने पति की रक्षा बुद्धिमानी से की थी सो मैं भी जाकर किसी न किसी युक्ति से पति की रक्षा करूँगी। सास ने कहा जैसी तेरी इच्छा।

इस प्रकार वह पतिव्रता देवस्मिता सास की आज्ञा पा अपनी दासियों को साथ ले व्यापारी का वेष धारण कर पालकी पर सवार हो, उस देश में पहुंची जहां उसका पति रहता था। वह वणिक् लोगों के बीच निज पति को राजीखुशी देख अत्यन्त प्रसन्न हुई। उसने भी इस नवीन व्यापारी को देखा और मनमें सोचने लगा कि इसका स्वरूप मेरी भार्य्या से मिलता है सो यह वणिक्पुत्र कहां का रहनेवाला है। एक दिन देवस्मिता ने वहां के राजा से जाकर कहा कि मुझे कुछ वक्तव्य है सो आप कृपाकर विज्ञापन दे अपनी प्रजा को एकत्र करें। तब तो राजा ने समस्त पुरवासियों को एकत्र किया और उस वणिक्पुत्र से पूछा कि तुम क्या क्या कहा चाहते हो कहो। देवस्मिता ने कहा कि इन लोगों के बीच मेरे यहां से भागे हुये चार दास हैं सो श्रीमान् उन्हें मुझे दिला दें। राजा ने कहा कि यहां प्राय: सभी पुरवासी उपस्थित हैं आप अपने दासों को पहिचान कर अलग करिये। आज्ञा पातेही देवस्मिता ने उन्हीं चारों वणिक्पुत्रों को पहिचान कर अलग किया जो उसके यहां से निज कर्तूत का फल पा आये थे और इस समय भारी मुराठे के नीचे मोहर का दाग छिपाये हुये थे। यह देख वहां के बनिये महाजन बड़े क्रुद्ध हुये और कहने लगे कि ये सार्थवाह महाजन के पुत्र हैं आपके दास क्योंकर हो सकते हैं ?। तब तो देवस्मिता ने उत्तर दिया कि आपलोगों की पहिचान के लिये मैं यह प्रमाण देता हूं कि इन चारों के माथे पर हमारी मोहर लगी है देख लीजिये। लोगों ने कहा बहुत अच्छा यदि यह ठीक है तो ये आपके दास अवश्य होंगे। इतना कह उनके मुराठे जो हटाये गये तो चारों के मस्तक पर एक रंग मोहर के दाग निकल आये। सब महाजन लज्जित हो गये और राजा को बड़ा आश्चर्य्य हुआ। राजा ने पुरुषवेषधारी देवस्मिता से पूछा कि यह क्या बात है इसका भेद हमें भी समझाइये। तब तो उसने सब हाल कह सुनाया जिससे सब लोग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हँसते २ लोट गये। राजा ने कहा निस्सन्देह ये तुम्हारे दास हैं। तब तो सब महाजनों ने मिलकर बहुत सा धन देवस्मिता को दिया और उन चारों की मुक्ति दासपने से चाही। देवस्मिता ने भी इसे स्वीकार कर लिया और राजा ने उन चारों को कुछ दण्ड लगा छोड़ दिया।

दोहा।

यौं निज पति की पति रखी सकल सभाजन बीच।
निज गौरव रक्षित कियौ दण्डित कीन्हों नीच॥
बसी पिया सँग भवन में धन सम्पति सुख पाय।
प्रेमलता वर्धित कियौ नेह सलिल सरसाय॥
उत्तम कुल की नारि यौं पति चरनन की सेव।
चित दै नित करती रहैं पति बिन और न देव॥

सवैया।

यौं सुनि प्रेमउमङ्गभरी रसभीनी कथा जो वसन्तक भाखी।
मातु पिता परिवारविहाइनि वासवदत्ता हिये महँ राखी॥
सोच विहाय समोज पिया सँग नेह दृढ़ाय पतिव्रत नाखी।
राजहिँ हर्ष दियौ सब काजहिँ है इतिहास अजौं लगि साखी॥

छठवां तरङ्ग।

इस बीच में चण्डमहासेन का भेजा हुआ दूत वत्सराज की सेवा में आन उपस्थित हुआ और प्रणाम कर यों निवेदन करने लगा कि, हे महाराज! हमारे राजा चण्डमहासेन ने यों सन्देसा भेजा है कि "आप जो स्वयं वासवदत्ता को हर लाय सो अच्छा किया इसीलिये तो मैं आपको अपने यहां लाया था कि अपनी पुत्री आपको दूँ परन्तु मुझे इस बात की शङ्का हो रही थी कि आप इस सम्बन्ध को स्वीकार करेंगे या नहीं। अब मेरा यह कहना है कि यह विवाह विधिपूर्वक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होना चाहिये सो आप कुछ दिन और ठहरें। मेरा पुत्र गोपालक शीघ्रही आपके पास पहुँचेगा और अपनी बहिन का विवाह वह विधिपूर्वक करेगा। इस प्रकार उस दूत ने वत्सराज को यह सन्देश सुना वासवदत्ता से भी वैसाही निवेदन किया। राजा ने कहा बहुत अच्छा, फिर प्रसन्नचित्त हो उन्होंने वासवदत्ता के साथ कौशाम्बी राजधानी को चलने का विचार किया, और ससुराल के उस दूत तथा अपने मित्र पुलिन्दक को वहीं पर यह कह के ठहरा दिया कि जब लों गोपालक न आवे तब लों आप लोग उसके आने की प्रतीक्षा यहां पर करें, उसके आ जाने पर उसे साथ लेकर कौशाम्बी में आइयेगा। फिर तो राजा की सवारी के मदमत्त गजेन्द्र यों झूमते हुये चले मानो विन्ध्याचल के ऊँचे ऊँचे पर्वतशृङ्ग डग भरते चले जाते हैं। घोड़ों की टाप तथा खुरों की चपेट से जङ्गल की घास उड़ गई और इतनी धूलि आकाश लों छा गई कि जिससे इन्द्र को यह शङ्का हुई कि क्या पर्वतगण पुन: सपक्ष होकर उड़ने लगे!

दूसरेही दिन प्रात:काल के समय राजेन्द्र वत्सराज ने वासवदत्ता के साथ कौशाम्बी के लिये प्रस्थान किया। दो तीन दिनों में नगर के बाहर पहुँच मन्त्री रुमण्वान् के बाग में उन्होंने विश्राम किया, दूसरे दिन कौशाम्बी राजधानी में प्रवेश करने का मुहूर्त था सो प्रात:कालही से प्रजा लोगों की भीड़ चिरकाल से बिछुड़े हुये महाराज के दर्शनों के निमित्त एकत्र होने लगी। उस नगरी का अनेक प्रकार से शृङ्गार किया गया उस समय वह आगतपतिका सुन्दरी की सी शोभा धारण करती थी। नगरनिवासी लोग रानी के संग महाराज वत्सराज को उसी प्रेम से साथ देखते थे जैसे प्रसन्न हो मोर विद्युत्सहित मेघ को देखते हैं। महल की अटारियों पर चढ़ी हुई स्त्रियों के मुख की शोभा ऐसी हो रही थी मानो आकाशगङ्गा में सुन्दर गुलाबी कमल खिले हों। इस प्रकार निज राजधानी की शोभा देखते, और अपने प्रजागण का चित्त प्रसन्न करते हुये राजा वत्सराज, रानी वासवदत्ता के सहित अपने राजभवन में जा पहुँचे जहां अनेक देश-देशान्तर के राजे लोग उपायन लिये सेवा में उपस्थित थे और जहां नारियों का झुण्ड स्थान स्थान पर एकत्र हो मङ्गलगीत गा रहा था। कुछ दिनों के उपरान्त वासवदत्ता का भाई गोपालक उस दूत तथा पुलिन्दक को साथ लिये राजा के समीप आ पहुँचा। रानी वास-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वदत्ता अपने भाई गोपालक को देखकर अत्यन्तही प्रसन्न हुई, हर्ष के मारे उसके नेत्रकमल मानो खिल गये। भ.ई को देखकर कहीं अन्दर से लज्जा नेत्रों में न आ जावे इसी कारण मानों आंसू ने मार्ग रोक दिया। गोपालक ने पिता का भेजा हुआ सब सन्देश उसे जताया जिसे सुन वह ऐसी प्रसन्न हुई मानो आत्म-बन्धुओं ही से उसकी भेंट हुई हो। दूसरे दिन विवाहमहोत्सव का पूरा सामान किया गया और गोपालक ने, राजा वत्सेश्वर से, अपनी बहिन वासवदत्ता का पाणिग्रहण विधिपूर्वक कराया। ज्योंही महाराज उदयन ने वासवदत्ता का हाथ अपने हाथ में लिया त्योंही प्यारे भविष्य पति के गात्र स्पर्श होतेही वासवदत्ता को रोमाञ्च हो गया और सर्वाङ्ग में सात्विक भाव से पसीना हो आया। वेदी का धुआं लगने से रानी के नेत्र लाल हो रहे थे, उस समय अग्नि की प्रदक्षिणा करती हुई उसके रक्तवर्ण नेत्र ऐसे शोभायमान प्रतीत होते थे मानो मदिरामद का माधुर्य्य नेत्रों में अभी से आ गया हो। यद्यपि वत्सराज का कोष पहिलेही से पूर्ण हो रहा था तथापि कुमार गोपालकद्वारा भेजे हुये चण्डमहासेन के असंख्य धन से वह अधिक उबल पड़ा। यों विधिवत् विवाह हो जाने के उपरान्त वे दोनों दूल्हा दुलहिन आनन्दपूर्वक अपने रङ्गभवन में गये। राजा वत्सराज ने कुमार गोपालक तथा अपने मित्र पुलिन्दक का सत्कार भली प्रकार किया तथा च निमन्त्रण में आये हुये राजाओं और पुरनिवासियों के यथोचित सन्मान के लिये उन्होंने अपने मन्त्री यौगन्धरायण और रुमण्वान् को नियुक्त किया। यह देख यौगन्धरायण ने रुमण्वान् से कहा कि हे मित्र! महाराज ने जो हमलोगों को नगरनिवासियों तथा अन्य राजाओं के सत्कार करने के लिये नियुक्त किया है सो यह काम निस्सन्देह बड़ाही कठिन सौंपा गया क्योंकि सर्वसाधारण का प्रसन्न करना दुर्गम है। यदि एक छोटा सा बालक भी असन्तुष्ट रह जायगा तो वह हमलोगों का सब किया कराया बिगाड़ देगा, देखो मैं तुम्हें विनष्टक बालक की कथा सुनाता हूं—

पूर्व समय में कोई रुद्रशर्म्मा नाम ब्राह्मण इस नगर में रहते थे, जिनकी दो पत्नीयां थीं। एक को तो पुत्र उत्पन्न हुआ किन्तु वह विचारी उसी क्षण स्वर्गधाम को सिधारी सो पिता ने उसका लालन पालन सौतेली माता के अधीन किया। जब वह कुछ स्याना हुआ तो वह माता उसे उपेक्षा से रूखा सूखा भोजन देने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लगी जिससे उसका पेट कुछ निकल आया और शरीर का रङ्ग धूसर हो गया। यह देख रुद्रशर्म्मा ने अपनी उस भार्य्या से कहा कि यह विचारा बिना मा का बालक है तू इसकी ऐसी उपेक्षा क्यों करती है ? देख तो इसकी कैसी बुरी दशा हो रही है ! उसने उत्तर दिया कि मैं तो इसको बड़े स्नेह से खिलाती पिलाती हूँ पर जाने यह क्यों दिन पर दिन ऐसा हुआ जाता है, मैं क्या करूँ मेरा क्या अपराध है ? विचारे ब्राह्मण ने समझा कि ऐसाही होगा इस बालक का कदाचित् शरीरही ऐसा है, विद्वान् लोगों ने यथार्थही कहा है कि चतुर स्त्रियां अपने भोले भाले पति को झूठी बातें बना कर मोह लेती हैं । फिर तो यह जान कर कि अब यह बालक विनष्ट हुआ पिता ने उसका नाम विनष्टक रख दिया। इसी प्रकार वह गिरता पड़ता पिता के घर में रहने लगा । एक दिन उस बालक ने यह विचारा कि यह विमाता मुझे बहुत दुःख दिया करती है अब इसका कोई उपाय करना चाहिये। यद्यपि उसकी अवस्था अभी पांचही वर्ष की थी किन्तु वह बड़ा बुद्धिमान् था। एक दिन जब उसका पिता राजसभा से घर में आया तो वह दौड़ता हुआ उससे जा लपटा और तोतली बोली में कहने लगा कि "बाबू जी ! बाबू जी मेले दो बाबू हैं," इस प्रकार नित्यही वह अपने पिता से कहता था, सुनते सुनते ब्राह्मण को शङ्का हुई कि कहीं मेरी भार्या किसी उपपति से तो नहीं फँसी है, किन्तु उसे शङ्काकी कोई बात दिखाई न पड़ती थी। तथापि उसने रुष्ट होकर अपनी भार्य्या को छूना बन्द कर दिया। वह विचारने लगी कि क्या कारण है कि मेरे पति मुझसे रुष्ट रहते हैं कदाचित् इस विनष्टक बालक ने कोई बात लगाकर उन्हें रुसा दिया है। यह सोच एक दिन उसने उस बालक को स्नान करा, सुन्दर उत्तम भोजन देकर गोद में बैठा स्नेहपूर्वक पूछा कि, हे पुत्र ! तूने निज पिता को मुझसे विना अपराधही क्यों रुष्ट करा दिया है ? उसने कहा कि यदि तू अब भी न मानेगी तो मैं इससे भी बढ़कर करूँगा, तूही बता कि अपने पुत्र की तो तू इतनी खातिरी करती है और मुझे क्यों व्यर्थ इतना कष्ट देती है ! यह सुन उसकी विमाता ने कहा कि अच्छा मुझसे भूल हुई अब ऐसा न करूँगी तू मेरे पति को प्रसन्न कर दे। तब तो उस बालक ने कहा अच्छा तू मेरे पिता के आने पर किसी बहाने से उन्हें दासी के द्वारा दर्पण दिखलाइयो फिर इसके आगे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मैं समझ लूंगा। उसने भी अच्छा कहकर दासी को सहेज दिया; रुद्रशर्म्मा के आने पर दासी ने ज्योंही किसी बहाने से उन्हें दर्पण दिखाया कि वह बालक दौड़ता हुआ अपने पिता के पास आया और प्रतिबिम्ब को दिखाकर तोतली बोली में कहने लगा "देखो देखो बाबू जी! यही मेरे दूसले बाबू जी हैं।" यह सुन रुद्रशर्म्मा की शङ्का जो निज पत्नी पर थी जाती रही और वह निज भार्य्या का कोई दोष न देख उस पर प्रसन्न हो गया। इसीलिये कहता हूं कि यदि सत्कार करने में कोई बालक भी अप्रसन्न हो जायगा तो वह काम बिगाड़ देगा, सो हमलोगों को बहुत सावधानी से काम करना चाहिये जिससे सभी लोग प्रसन्न और सन्तुष्ट हों। ऐसा कह रमखान् और यौगन्धरायण दोनो ने महाराज वत्सराज के उत्सव में आये हुये सभी लोगों का अच्छी तरह सत्कार कर खूबही सन्तुष्ट किया और उन सब लोगों ने महाराज के सम्मुख उन दोनों की बड़ी प्रशंसा की, कि ये दोनों श्रीमान् के मन्त्री बड़ेही सुयोग्य और बुद्धिमान् हैं। प्रसन्न हो महाराज वत्सराज ने भी उन दोनों मन्त्रियों को वस्त्रालङ्कार और बहुत सा सुवर्ण देकर सत्कारित किया तथा च अनेक गांव भी उन्हें पारितोषिक में दिये गये। महाराज वत्सराज भी विवाह होने के उपरान्त अपनी प्यारी रानी वासवदत्ता के साथ अनेक प्रकार के सुखों का उपभोग करते आनन्द से रहने लगे। ज्यों ज्यों दिन बीतते जाते थे त्यों त्यों उन लोगों का स्नेह अधिक दृढ़ता को प्राप्त होता जाता था। गोपालक भी विवाह के उपरान्त कई बेर निज पिता का सन्देश लेकर आये गये जिससे वासवदत्ता बराबर प्रसन्नमन रहा करती थी।

किन्तु महाराज वत्सराज तो आरम्भही से चपल थे, सो एक दिन रानी वासवदत्ता ने उन्हें उनकी पूर्वपरिचिता विरचिता नाम अन्त:पुरपरिचारिका के साथ भेंट करते देख पाया और कुछ रुष्ट हुई, तब तो राजा ने हाथ पैर जोड़ रानी को किसी प्रकार मना लिया। एक बेर गोपालक किसी राजा को रण में जीत उसकी बन्धुमती नाम राजपुत्री को हर लाया था जिसे उसने मञ्जुलिका सखी के साथ अपनी बहिन वासवदत्ता के समीप रहने को भेज दिया था। मञ्जुलिका बड़ीही सुन्दरी और मनोहर रूपवाली थी, यही जान पड़ता था कि मानों सौन्दर्य्य के समुद्र से अभी निकली आती है। एक दिन राजा ने उसे बाग में टह-

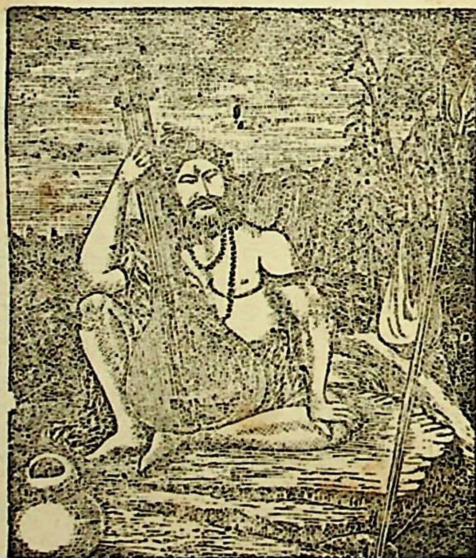
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लति देख पाया सो बसन्तक की सहायता से उसके साथ गान्धर्व विवाह कर लिया। इसकी थाह वासवदत्ता को लग गई सो उसने बसन्तक को धर मँगाया। तब तो राजा ने घबड़ाकर उस सन्यासिनी की शरण ली जो सखीरूप से वासवदत्ता के पितृगृह से आई थी, उसने रानी को समझा बुझाकर प्रसन्न कर लिया और फिर स्त्रियां स्वाभाविक भोली तो होतीही हैं, रानी ने प्रसन्न हो बन्धुमती तथा मञ्जुलिका दोनों को राजा के समर्पण कर दिया और उस बन्धन से बसन्तक की भी छुट्टी वासवदत्ता ने कर दी। वह छुट कर रानी के सन्मुख आ हँसता हुआ कहने लगा कि हे देवि! अपराध तो बन्धुमती ने किया, भला मैंने क्या बिगाड़ा था जो मुझे दण्ड दिया गया। आप तो वही बात करती हैं कि, "लड़ें सांप से मारें डेड़हे को"। रानी ने पूछा 'यह कैसी कथा है हमें सुना' तब तो बसन्तक कहने लगा कि, पूर्व समय की बात है कि रुरु नामक कोई मुनिपुत्र बन में घूमते फिरते थे कि एक मुनिपालिता परमसुन्दरी कन्या दीख पड़ी, वह मेनका नामक अप्सरा के गर्भद्वारा किसी विद्याधर से उत्पन्न हुई थी और उसे स्थूलकेश नामक ऋषि ने अपने आश्रम में पाला था, नाम उसका प्रमद्वरा था, सो दृष्टि पड़तेही वह कन्या मुनिपुत्र रुरु के हृदय में बस गई। उसने जाकर स्थूलकेश ऋषि से प्रमद्वरा के लिय याचना की और मुनि ने भी उसकी प्रार्थना को स्वीकार किया। जब विवाह का सब सामान ठीक हो गया तो अकस्मात् उस कन्या को सांप डँस गया और वह उसी क्षण मर गई। यह वृत्तान्त सुनतेही वह ऋषिपुत्र बेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा। इतनेही में यों आकाशवाणी हुई कि "हे ब्रह्मन्! इसकी आयुष्य क्षीण हो गई थी सो यदि तुम अपनी आधी आयुष्य इसे सङ्कल्प कर दो तो वह पुनः जी सकती है"। यह सुन मुनिपुत्र ने अपनी आधी आयु उसे दे डाली जिससे वह झट जी उठी। फिर उन दोनों का विवाह हो गया और वे लोग सुखपूर्वक रहने लगे। उसी दिन से रुरु को ऐसा क्रोध चढ़ा कि जहां कहीं कोई सर्प उसे दिखाई पड़ता तो वह यह कहकर उसे मार डालता कि इसी के बन्धु ने मेरी भार्य्या को काटा था। योंही एक दिन वह किसी डेड़हे को पकड़ कर जो मारने लगा तो उसने मानुषी भाषा में कहा कि हे मुनिपुत्र! आप सांप से लड़े हैं बिचारे डेड़हों को क्यों मारते हैं? तुम्हारी प्रिया को सर्प ने काटा था हम बिचारे डेड़हों से क्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वास्ता। सर्प विषवाले होते हैं और हम गरीब डेड़हे विना विष के! यह सुन मुनिपुत्र ने पूछा कि आप कौन हैं, तब तो डेड़हे ने उत्तर दिया कि मैं शापच्युत मुनि हूं। मुझे यह शाप था कि जबतक आपसे बातचीत न करूँ तबतक इस वेष में रहूं। यों कह वह मुनिरूपी डेड़हा तो लोप हो गया और उसी दिन से रुरु ने डेड़हों को मारना छोड़ दिया। सो हे देवि! इसीलिये मैंने आपसे निवेदन किया है कि आप सांप से लड़कर हम डेड़हों को व्यर्थ मारती हैं।

कह्यो वसन्तक हासयुत कथा अनोखी ठानि।
पति के ढिग बैठी सुनै वासवदत्ता रानि॥
यों राजा उदयन सदा प्रिया प्रेम रस पागि।
दयितामुख लोचन दिये रहत लिये अनुरागि॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri



॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

लावाणक नाम तीसरा लम्बक।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालविनैबल पाई ।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई ॥
प्रेम समेत पियै जो कोई बलबीर भनै बलि ईस दुहाई ।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ी बिबुधाई ॥

प्रथम तरङ्ग।

विघनविनाशन गणपतिहिँ वार वार परनाम ।
जिनकी कृपाकटाच्छ किय धाता विश्व ललाम ॥
जयति मीनकेतन विदितत्रिभुवनप्रबलप्रभाव ।
जदपि कुसुमसर तदपि कृत-कुलिशहृदय शतघाव ॥

हम पहिलेही कह चुके हैं कि राजा उदयन रानी वासवदत्ता के साथ सुखपूर्वक अपने महल में रहने लगे। अब राजकाज का समस्त भार महामन्त्री यौगन्धरायण और सेनापति रुमखान् को सम्हालना पड़ता था। एक समय यौगन्धरायण ने रुमखान् को अपने घर में रात को बुलाकर यों कहा कि हे मित्र! हमलोगों के महाराज वत्सराज पाण्डवकुलोत्पन्न हैं, यह कुल पृथिवी इनके कुल में क्रम से आज तक चली आई और हस्तिनापुर भी इन्हीं का है किन्तु इन्होंने अपने हाथही से सब छोड़ रक्खा है, अब इनका राज्य इनके मण्डलही भर में सम-

झना चाहिये। ये तो केवल स्त्री मद्य और मृगया में रात दिन लिप्त रहकर निश्चिन्त पड़े रहते हैं और राज्य की कुल चिन्ता हमलोगों के सिर छोड़ दी है। सो हमलोगों को अपनी बुद्धि से ऐसा काम लेना चाहिये कि जिसमें इन्हें क्रमशः सारी पृथ्वी का राज्य प्राप्त हो। ऐसा करने से हमलोगों की प्रभुभक्ति सुफल होगी और हमारा मन्त्रीपन भी सार्थ होगा। मनुष्य अपनी बुद्धि से क्या नहीं कर सकता सुनो मैं तुम्हें एक कथा सुनाता हूं।

प्राचीन समय की बात है कि महासेन नामक एक राजा हुये हैं, एक बेर कोई अधिकतर बलवान राजा अपनी सेना लेकर उन पर चढ़ आया। राजा महासेन ने सब मन्त्रियों को जमा किया और शत्रु को बहुत सा धन दण्डरूप से देकर अपनी छुट्टी कराई किन्तु उस मानी राजा को मनहीमन इस बात का बड़ाही दुःख हुआ कि धिक् मेरा जीवन है जो मैंने शत्रु के आगे झुक कर प्रणाम किया! इसी खेद के मारे राजा के हृदय में गुल्म का रोग हो गया जिसके कारण वे मरणासन्न हो गये। एक बुद्धिमान् वैद्य ने यह देखकर कि यह रोग औषधि से चङ्गा न होगा, युक्ति से उसे आराम करना विचारा, सो उसने झूठेही राजा से कह दिया कि हे महाराज! आपकी रानी का अचानचक शरीरान्त हो गया। यह सुनतेही राजा बेसुध हो पृथ्वी पर गिर पड़े और गिरने की चोट तथा महान शोक के आवेग से उनका गुल्म आपही फट गया। चंगे होने पर राजा ने फिर उसी रानी के साथ अनेक सुख किये और शत्रुओं को भी परास्त किया। सो जिस प्रकार युक्तिद्वारा उस वैद्य ने राजा का उपकार किया था उसी प्रकार हमलोग भी युक्ति से इनके लिये पृथ्वी को प्राप्त करें। इस समय यह बङ्गाल का राजा मगधेश्वर इनका अमित्र है वह हमलोगों से सदाही अप्रसन्न रहता है। उसकी एक कन्यारत्न है जिसका नाम पद्मावती है, बस इसी कन्या को अपने राजा के लिये हमलोग उससे मांगे, और अपनी बुद्धिमानी से वासवदत्ता को कहीं छिपा कर महल में आग लगाकर सर्वसाधारण में यह प्रसिद्ध कर दें कि राजमहल में आग लगने के कारण वह जल गई। यदि ऐसा न करेंगे तो वह मगधराज कभी अपनी कन्या को न देगा क्योंकि एक बेर पहिले भी मैंने उससे इस बात की प्रार्थना की थी तो उसने यही उत्तर दिया कि 'पद्मावती मेरी परम दुलारी कन्या है, मैं उसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वत्सराज को न दूंगा क्योंकि उनका स्नेह वासवदत्ता से बहुतही अधिक है। उस रानी के रहते वे दूसरे से प्रेम कदापि न करेंगे, इसीलिये कहता हूं कि जब सर्वत्र यह धूम मच जायगी कि वासवदत्ता जल गई तब हमलोगों का मतलब निकल सकेगा। जब पद्मावती मिल जायगी तो मगधराज से नाता हो जायगा, उस समय वह हमलोगों से अप्रसन्न न रहेगा प्रत्युत काम पड़ने पर सहायता करेगा। इसके उपरान्त हमलोग पूर्व दिशा को जीतने के निमित्त चलेंगे और क्रमशः दूसरी दिशाओं को भी वश में कर धीरे धीरे सारी पृथिवी महाराज के लिये प्राप्त करेंगे। पूर्व में ऐसी आकाशवाणी भी हुई थी कि जब हमलोग उद्योग करेंगे तो सारी पृथिवी इन महाराज को मिल सकेगी। सुयोग्य मन्त्री यौगन्धरायण का ऐसा कहना सुन रुमण्वान् ने यह शङ्का कर कि यह बड़े साहस का काम है यों कहना आरम्भ किया कि पद्मावती के पाने के लिये जो हमलोग ऐसा बहाना विचारते हैं कहीं ऐसा न हो कि भलाई करते हुये बुराई हाथ आवे। सुनो, मैं तुमसे एक कथा कहता हूं—

श्रीगङ्गाजी के तट पर माकन्दिका नाम एक नगरी है, वहां प्राचीन समय में एक मौनव्रतधारी सन्यासी रहता था। वह नगर में जाकर नित्य भिक्षा मांग लाता और शिवालय के एक मठ में अनेक सन्यासियों के साथ निवास करता था। एक दिन वह योंही भिक्षा मांगने के निमित्त किसी बनिये के घर चौक में गया, बनिये की परम सुन्दरी कन्या उसे भीख देने के लिये बाहर जो आई तो वह शठ उस अद्भुतरूपलावण्यवती बाला को देख मोहित हो गया, और हा! हा! शब्द उसके मुंह से निकल पड़ा जिसे उस बनिये ने सुन पाया। जब वह भिक्षा लेकर अपने घर को चला गया तो उस बनिये ने वहां जाकर एकान्त में आश्चर्य से उस से पूछा कि आज क्या कारण था कि आप अपना मौनव्रत छोड़कर बोल पड़े। यह सुन उस धूर्त सन्यासी ने बनिये से कहा कि उस कन्या के लक्षण अच्छे नहीं हैं, जब उसका विवाह होगा तो तुम, तुम्हारी स्त्री और तुम्हारे पुत्रों का देहान्त हो जायगा, इसीलिये उसे देखकर मुझे दुःख हुआ और क्योंकि तुम मेरे परम भक्त हो तुम्हारे सङ्कट को विचार मेरे मुंह से खेदसूचक शब्द निकल पड़ा। बनिये ने हाथ जोड़ पूछा कि महाराज! फिर इसका क्या उपाय किया जाय? तब उस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दुष्ट ने कहा कि इसकी एकही युक्ति है सो यह कि तुम उस कन्या को एक काठ के सन्दूक में बन्द करके, उसके सिर पर बलता दीपक रख, रात के समय गङ्गाजी में छोड़ दो। उसने कहा 'बहुत अच्छा'। बस घर आ कन्या को सन्दूक में बन्द कर दीपक बाल गङ्गाजी में छोड़ दिया। ठीकही है जो डरपोंक होते हैं उन्हें केवल अपनी रक्षा के आगे और बातों का विचार नहीं रहता। इधर उस सन्यासी ने अपने अनुचरों को बुलाकर कहा कि तुम लोग गङ्गातट पर जाओ वहां तुम्हें एक ऐसी सन्दूक बहती दिखाई देगी कि जिसके ऊपर दीपक बलता होगा, तुम लोग उस सन्दूक को वहां से निकालकर चुपचाप मेरे पास ले आओ यदि उसमें कुछ शब्द भी हो तो उस पर ध्यान मत देना और मत खोलना। वे लोग 'बहुत अच्छा' कहकर चलते हुये। अभी ये लोग मार्गही में थे कि उधर घाट पर किसी राजकुमार का आना हुआ। उनने उस बहती हुई सन्दूक को जिसे बनिया छोड़ गया था, देखा और नौकरों को भेजकर घाट पर मँगा कौतुक से खोला। देखता क्या है कि उसके अन्दर हृदय को उन्मत्त कर देनेवाली एक परम सुन्दरी स्त्री बन्द है। उसने उसे उसी क्षण बाहर निकाला। वह वणिक्कन्या भी राजकुमार का स्वरूप देख मोहित हो गई। फिर राजकुमार उसे अपने घर ले गया और वहां पहुँच गान्धर्व रीति से उसके साथ विवाह किया। जाते समय उन लोगों ने उस सन्दूक के अन्दर एक भारी भयङ्कर बानर को बन्द कर ऊपर दीपक बाल फिर गङ्गा में छोड़ दिया। इधर का हाल सुनिये कि राजकुमार के चले जाने पर सन्यासी के वे शिष्य लोग घाट पर पहुँचे और देखा कि सन्दूक बहा जाता है झट उन लोगों ने तैर कर उसे धरा और किनारे खींच लाये फिर सिर पर उठा अपने गुरु के पास पहुँचे, वह सन्दूक देख बहुत प्रसन्न हुआ और उन शिष्यों से कहने लगा कि आज रात को मैं इस सन्दूक पर बैठकर अकेले मन्त्र जगाऊँगा और तुम लोग नीचे जाकर चुपचाप सो रहो। यों कह सन्दूक को दूसरे खण्ड में रखवाकर, शिष्यों को नीचे भेज वह सन्यासी वणिक्कन्या की प्राप्ति की इच्छा से सन्दूक खोलने लगा। ज्योंही उसने ढकना उठाया कि वह भयानक बन्दर, जो अबतक उसके अन्दर बन्द होने से घबड़ा रहा था, क्रोध से उस पर झपटा और दाँत से उसकी नाक काट खायी तथा च नखों से उसका कान और सारा मुंह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नींच खसीटा। बन्दर तो काट कूट कर भाग गया और वह पापी सन्यासी उसी लहूलहान अवस्था में नीचे उतर आया। शिष्यों ने यह देख बड़ी कठिनता से हँसी रोकी, किन्तु प्रातःकाल जब यह भेद खुला तो जिसने सुना वही हँसते २ लोट गया। बनिये को जब यह हाल विदित हुआ तो वह बहुतही प्रसन्न हुआ कि उसको लड़की को एक सुयोग्य सुन्दर युवा पति प्राप्त हुआ। इसीसे कहता हूं कि कहीं ऐसा न हो कि जिस प्रकार वह सन्यासी बहाने से अपना काम निकालता हुआ ठट्ठे में उड़ाया गया हमलोग भी चूक जाने से हंसी के पात्र बनाये जांय। क्योंकि वासवदत्ता के विरह होने से राजा को अनेक प्रकार के कष्ट होंगे, फिर न जाने क्या क्या उत्पात हों। जब रुमण्वान् ने ऐसा कहा तो यौगन्धरायण कहने लगा कि, हमलोगों को उद्योग करना चाहिये अवश्य सफलता प्राप्त होगी किन्तु यह तो निश्चितही है कि यदि उद्योग न करेंगे और महाराज भी ऐसेही व्यसनी बने रहेंगे तो जो कुछ अब है वह भी न रहैगा। हमलोगों ने मन्त्रीपद पर रहकर जो नाम पैदा किया है वह भी जाता रहैगा और इस बात का कलङ्क लगेगा कि इनलोगों ने स्वामी की प्रतिष्ठा कुछ भी न बढ़ाई। राजाओं के कार्य्य की सिद्धि बुद्धि के परिचालन से होती है और मन्त्री वही कहाता है जो अपने राजा का उपकार करे। मन्त्रियों की बुद्धिमत्ता से ही काम बनता हैं और यदि वेही लोग निरुत्साह हो बैठ रहें तो फिर लक्ष्मी की प्राप्ति हो चुकी! यदि तुम्हें रानी वासवदत्ता के पिता चण्डमहासेन की ओर से कुछ शङ्का हो तो मेरे वाक्य पर विश्वास रक्खो कि उन्हें पुत्र हुई है और फिर उनकी कन्या क्या कहीं जाती है? वह भी तो अन्त रहेहोगी। जब परम बुद्धिमान् यौगन्धरायण ने ऐसा कहा तो रुमण्वान् ने शङ्का के साथ उत्तर दिया कि 'प्यारी स्त्री के वियोगदुःख से तो बड़े बड़े विवेकी पुरुष विह्वल हो प्राण गँवा बैठते हैं, फिर यह विचारे वत्सराज किस गिनती में हैं अच्छा सुनो मैं इस पर एक कथा सुनाता हूं,—

प्राचीन समय में देवसेन नामक बड़े बुद्धिमान् राजा हो गये हैं जिनकी राजधानी श्रावस्तीपुरी थी। उस नगरी में एक महाधनी बनिया रहता था, जिसके घर में एक परम सुन्दरी कन्या थी। ऐसा कहा जाता था कि उस समय कदाचित् सारे संसार में उसके सौन्दर्य्य का जोड़ा न था। क्योंकि सभी लोग उसके रूप को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देख उन्मत्त हो जाते थे इसलिये उसका नाम उन्मादिनी बहुतही सार्थक था। पिता ने विचारा कि मैं इस कन्या को यदि राजा की भेंट करूँ तो बहुतही उपयुक्त हो। ऐसा मनमें ठान उसने एक दिन राजा की सेवा में पहुँच निवेदन किया कि हे देव! मेरे घर में एक कन्यारत्न है यदि वह श्रीमान् के काम आवे तो स्वीकार की जाय। यह सुन राजा देवसेन ने उस कन्या का रूप गुण जानने के लिये कुछ ब्राह्मणों को यह आज्ञा देकर भेजा कि आपलोग जाकर इस बात की जाँच करें कि वह सुलक्षणा है वा नहीं। वे लोग "बहुत अच्छा महाराज" कहकर उस बनिये के घर गये और उस उन्मादिनी कन्या को देखतेही मोहित हो गये, सो सब के सब मनमें विचारने लगे कि हमारे महाराज तो इसे देखतेही विकल हो जांयगे और विवाह हो जाने पर सब राजकाज छोड़ इसी के साथ लिप्त रहेंगे। तब तो सभी काम नष्ट हो जायगा सो ऐसी रूपवती से कुछ काम नहीं। ऐसा निश्चय ठान वे ब्राह्मण लोग महाराज देवसेन के सन्मुख आ झूठही कहने लगे कि धर्मावतार वह कन्या बड़ी कुलक्षणा है आपके योग्य नहीं। जब राजा ने उस उन्मादिनी को स्वीकार नहीं किया तो बनिये ने उसे राजा के सेनापति को दे दिया। वह अपने पति के घर में रहने लगी। एक समय राजा उसी मार्ग से जा रहे थे और वह सेनापति की भार्य्या खिड़की में से देख रही थी कि अचानचक राजा की दृष्टि उस पर जा पड़ी। देखतेही राजा को तो मूर्छा सी आ गई। जब घर पहुँचने पर राजा को मालूम हुआ कि यह तो उसी बनिये की कन्या है जिसे मैंने स्वीकार न किया था, तो वे कामदेव की पीड़ा से अत्यन्त व्याकुल हुये और उन्हें कामज्वर चढ़ आया। जब सेनापति को यह विदित हुआ तो उसने हाथ जोड़ राजा से निवेदन किया कि महाराज वह तो दासी है उसे श्रीमान् परस्त्री न समझें अथवा नहीं तो मैं उसे देवमन्दिर में चढ़ा देता हूं तब श्रीमान् उसे स्वीकार कर लें। जब सेनापति ने यों प्रार्थना की तब राजा देवसेन ने कहा कि मैं परस्त्री को कदापि नहीं लूंगा और यदि तुम उसे परित्याग करोगे तो तुम्हारा धर्म्म नाश होगा और मैं भी तुम्हें दण्ड दूंगा। यह सुन दूसरे मन्त्री लोग भी चुप हो रहे, किन्तु राजा को वह कामज्वर ऐसा चढ़ा कि फिर न उतरा और उसी से उनका शरीर छूट गया। इस प्रकार उस परम धीर राजा का देहान्त उन्मा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिनो के बिना हो गया, इसीलिये पूछता हूं कि विना वासवदत्ता के वत्सराज का जीना क्योंकर होगा? रुमखान् की ऐसी बात सुन पुन: यौगन्धरायण ने कहा कि निज काम पर दृष्टि रखनेवाले राजा लोग क्लेश सहतेही हैं किन्तु कर्तव्य को नहीं परित्याग करते। देखो रावण के नाश कराने के लिये देवताओं ने श्रीरामचन्द्रजो को सीताजी से युक्तिपूर्वक अलग करही दिया था तो क्या भगवान् रामचन्द्र ने वियोगदु:ख नहीं झेला? रुमखान् ने कहा कि रामचन्द्रजी की बात दूसरी थी, वे देवता थे उनका मन सब सह सकता था किन्तु मनुष्यों का हृदय ऐसा नहीं होता जो उतना कष्ट सहन कर सके। इस पर एक कथा कहता हूं सुनो—

मथुरा नाम एक बड़ी प्रसिद्ध पुरी है जहां अनेक धनशाली लोग निवास करते हैं, वहां एक वणिक्पुत्र रहता था जिसका नाम यड्ल्लक था, उसकी एक बड़ीही प्यारी भार्य्या थी जो अपने पति को निज प्राणों से भी अधिक चाहती थी। वे दोनों अत्यन्त सुखपूर्वक रहते थे, एक समय कार्य्य की ऐसीही आवश्यकता आ पड़ी कि उस वणिक्पुत्र को विदेश जाना पड़ा। उसकी भार्य्या भी साथही चलने को तयार हुई, क्योंकि स्त्रियों का मन तो भावही का भूखा है, उनसे विरह कहां सहा जाय। किन्तु वह वणिक्पुत्र अपनी भार्य्या को घरही पर छोड़ विदेश को चल पड़ा, वह विचारी द्वार का कपाट पकड़े आंखों में आंसू भरे वहीं खड़ी देखती रह गई। जब उसका पति आंखों की ओट हो गया तो वह विरह सहने में असमर्थ हुई, स्वयं तो घर से बाहर न जा सकी परन्तु उसके प्राण शरीर से बाहर निकल गये। जब वणिक्पुत्र ने यह हाल सुना तो वह उसी क्षण लौट आया, देखता क्या है कि उसकी वह प्यारी भार्य्या विरह से व्याकुल हो प्राण-परित्याग किये भूमि पर यों पड़ी है मानो चन्द्रमा की कान्ति दिन के समय आकाश से उतर पृथ्वी पर पड़ी हो। उसने आतेही उसे गोद में उठा लिया और रोते रोते वह भी इतना व्याकुल हुआ कि उसके भी प्राण शरीर छोड़ हवा हो गये। इस प्रकार एक दूसरे के वियोग से पति और पत्नी दोनों का देहान्त हो गया। इसी लिये मैं कहता हूं कि वत्सराज और वासवदत्ता का वियोग बचाना चाहिये। ऐसा कहकर जब रुमखान् चुप हुआ तो बुद्धिसागर यौगन्धरायण ने यों उत्तर दिया कि मैं इसका निश्चय कर चुका हूं, महाराजों के काम ऐसेही होते हैं, सुनिये मैं एक कथा सुनाता हूं—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उज्जयिनी नगरी में एक पुण्यसेन नामक राजा हो गये हैं, एक समय वे किसी अपने से अधिक बलशाली राजा से जा भिड़े, किन्तु जब उनके बुद्धिमान् मन्त्रियों ने देखा कि वह शत्रु-राजा बड़ाही प्रबल है, तब उन लोगों ने राजा पुण्यसेन को तो कहीं छिपा दिया और यह प्रसिद्ध कर दिया कि उनका देहान्त हो गया; फिर किसी ऐसे वैसे मुर्दे को राजोचित रीति से अग्निसंस्कार कर उस वैरी राजा के पास दूत भेज कहने लगे कि हमारे राजा तो स्वर्ग को पधारे अब यह राज्य बिना स्वामी का हो रहा है सो आपही हमारे स्वामी बनिये। उस राजा ने इनलोगों की बात स्वीकार कर ली और ये लोग भी उसकी सेना में जा मिले। धीरे धीरे भेद लगा, उसकी सेना को छिन्न भिन्न कर, फूट उपजा, अवसर पा, उन लोगों ने पुण्यसेन को प्रकाश कर स्वयं बलवान् हो उस वैरी राजा को मार डाला और फिर अपना राज्य स्थिर कर लिया। बस योंही समझ लीजिये कि राजाओं के काम इसी प्रकार हुआ करते हैं, अतएव रानी के जल जाने का झूठा अपवाद उड़ाकर मैं इस कार्य्य को धैर्य्य के साथ किया चाहता हूं। जब रुमण्वान् ने देखा कि यौगन्धरायण ने अपना विचार पक्का ठान लिया है तो कहने लगा कि "अच्छा यदि ऐसाही निश्चय है तो रानी के भाई गोपालक को आदरपूर्वक बुलाकर उनके साथ सलाह करके यह काम करना चाहिये। यौगन्धरायण ने कहा "हां यह ठीक है यह बात मुझे भी स्वीकार है"। बस दूसरे दिन दोनों मन्त्रियों ने गोपालक के पास दूत भेजा कि 'बहुत दिनों से आपके दर्शन नहीं हुये सो हमलोगों को मिलने की उत्कण्ठा लगी है, आइये आप से कुछ सलाह करनी है।' दूत ने जाकर गोपालक से सब सन्देश कहा और वह भी सुनतेही मिलने के लिये तुरन्त चले आये, आतेही यौगन्धरायण रुमण्वान् के साथ उन्हें रात के समय चुपचाप अपने घर पर ले गया, और जो कुछ सलाह पहिले रुमण्वान् के साथ उसने की थी सब गोपालक से कह सुनाई। यद्यपि यह बात गोपालक की बहिन के लिये दुःखदाई थी किन्तु राज्य का हित विचार उनने इस युक्ति को स्वीकार किया क्योंकि सज्जन लोग अपनी हानि भी सह कर सदा अपने कर्तव्य पर दृष्टि रखते हैं। फिर गोपालक ने कहा कि एक बात आप लोग विचार लीजिये कि इस काम के हो जाने पर जब महाराज को विदित होगा कि रानी जल कर मर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गई, उस समय यदि वे अपनी प्राण-परित्याग करने पर उतारूँ होंगी तब क्या किया जायगा। बुद्धिमान् को उचित है कि जिस काम को करने जावे उसका होना तो निश्चयही ठान लेवे किन्तु चातुरी उसी का नाम है कि विगाड़ का ध्यान कर उसका उपाय पहिलेही से सोच रक्खे। रुमखान् ने कहा मैं भी तो यही कहता हूं कि इस बात का उपाय अवश्य विचार लेना चाहिये। तब तो यौगन्धरायण ने सब बातों को विचार कर सोचा कि देवी वासवदत्ता गोपालक की छोटी बहिन है और वह इसे अपने प्राणों से भी अधिक प्यारी है; किन्तु गोपालक का शोक कम देखकर महाराज वत्सराज को कदाचित् यह अनुमान हो जायगा कि देवी जीती हैं, ऐसा मान वे धीरज धारण करेंगे। फिर पद्मावती से इनका विवाह झटपट कर दिया जायगा और इसके उपरान्त ही हमलोग रानी वासवदत्ता को प्रगट कर देंगे। ऐसा विचार यौगन्धरायण ने रुमखान् और गोपालक से अपना अभिप्राय कहा, फिर उन लोगों ने यह सलाह की कि राजा और रानी को लेकर लावाणक नाम स्थान को चलना चाहिये क्योंकि वह देश मगध के पासही है। शिकार की भूमि वहां अच्छी है, हमलोग रानी को कहीं किसी बहाने से हटा देंगे और अन्तःपुर में आग लगा अपना मतलब साध लेंगे। देवी वासवदत्ता को ले चलकर हमलोग पद्मावतीही के घर में ठहरा देवें जिसमें वह उसकी पवित्रता की शाची भी पीछे से देगी। इस प्रकार रात को परामर्श ठहरा प्रातःकाल वे लोग राजा वत्सराज के पास पहुँचे, रुमखान् ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि धर्म्मावतार हमलोगों की इच्छा है कि श्रीमान् लावाणक प्रदेश की ओर चलें तो वहां का आनन्द भी देखा जाय। वह अत्यन्त रमणीय स्थान है और वहां शिकार भी बहुत है। निकट होने के कारण मगधेश्वर उस पर अपना अधिकार जमाये जाते हैं सो उसकी रचा तथा च अपने विनोद के लिये वहां चलना इस समय अत्यन्त उचित होगा। यह सुन महाराज ने आज्ञा दी कि 'अच्छा हम रानी के साथ चलेंगे आप लोग सब सामान ठीक कीजिये'। दूसरे दिन शुभ मुहूर्त स्थिर कर चलने की सब तयारी हो गई कि इतने में श्रीनारद मुनि आकाशमार्ग से उतरकर अपने मुख की ज्योति से दिङ्मण्डल को प्रकाशमान करते हुये महाराज के समीप आन पहुँचे। महाराज ने देखतेही उठकर प्रणाम किया और सब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आतिथ्य-सत्कार कर कुशल मङ्गल पूछा। नारद भगवान् ने आशीर्वाद देकर पारिजात पुष्पों की माला राजा को दी और कहा कि. हे राजन्! हम आपसे बहुत सन्तुष्ट हैं, सुनिये रानी वासवदत्ता से आपको, विद्याधरों का सरदार, कामदेव का अंश एक परमप्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा। यौगन्धरायण भी वहीं बैठे थे उनके सम्मुखही नारदजी ने, महाराज वत्सेश से कहा कि हे राजन्! वासवदत्ता को देख मुझे एक बात स्मरण आ गई।

आपके पूर्वज युधिष्ठिरादि पांच भाई थे, उन पाचों में केवल एकही भार्य्या द्रौपदी थी। उसका स्वरूप ठीक वासवदत्ता की नाईं अनुपम था सो उन्हें शिक्षा देने के लिये मैं एक बेर उन लोगों के पास गया और कहने लगा कि आप पांचों भाइयों में जैसा प्रेम है उसे देख मुझे परम सन्तोष और हर्ष होता है किन्तु एक बात पर आपलोग विशेष ध्यान रखियेगा कि एक स्त्री के कारण आपलोगों में कहीं वैरभाव उत्पन्न न हो जाय। सुनिये, प्राचीन समय में सुन्द और उपसुन्द नामक दो असुर भाई हो गये हैं जो निज बल विक्रम में ऐसे श्रेष्ठ थे कि त्रिलोक में उन्हें जीतनेवाला न दिखाई पड़ता था। उनको विनाश करने की इच्छा से ब्रह्मा ने विश्वकर्मा को आज्ञा देकर तिलोत्तमा नामक अप्सरा उत्पन्न कराई। जिसका ऐसा अपूर्व सौन्दर्य्य था कि ब्रह्मा ने चारो ओर से उसका मुख देखते हुये अपने चार मुख का होना सुफल माना। ब्रह्माजी की आज्ञा से वह तिलोत्तमा सुन्दोपसुन्द के लुभाने के लिये उनके पास कैलास के बाग में जहां वे रहते थे पहुँची। वे दोनों उसे देखतेही मोहित हो गये, सो दोनों ने उस सुन्दरी को अपनी भुजाओं में धर लिया। फिर तो उन दोनों भाइयों में उसके कारण घोर युद्ध हुआ यहां लों कि वे लोग आपसही में लड़कर मर गये। इससे जानना चाहिये कि स्त्रियों का प्रेम-व्यवहार सब के लिये आपत्ति उत्पन्न कर देता है, इसीलिये मैं कहता हूं कि आप पांचो भाइयों में एकही स्त्री सब की प्यारी हो रही है सो आप लोगों को सदा ध्यान रखना चाहिये कि उसके प्रेम के कारण कहीं आपस में वैरभाव न उत्पन्न हो जाय। मैं चाहता हूं कि जैसा स्नेह आप लोगों में इस समय है वैसाही सदा बना रहे। जब यह बड़े भाई के पास रहै तो छोटे को चाहिये कि उसे माता के सामान माने, और जब वह छोटे के पास रहै तो बड़े को उचित है कि उसे पुत्रबधू के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समान समझे । सो हे राजन् ! आपके उन पूर्वजों ने सदा हमारी बात पर दृष्टि रक्खी और उसी के कारण सदा उनका कल्याण होता रहा; आपके वे पुरखा लोग मेरे मित्र थे सो मैं इसी कारण आपसे मिलने चला आया । मेरा तात्पर्य्य यह है कि जिस प्रकार मेरा कहना उन लोगों ने माना था उसी प्रकार आप भी अपने मन्त्रियों का कहना यदि स्वीकार करेंगे तो कुछ दिनों में आप बड़ी प्रतिष्ठा और ऋद्धि को प्राप्त होंगे । हां कुछ दिनों के लिये आपको थोड़ा दुःख होगा किन्तु आप उससे घबड़ाइयेगा नहीं क्योंकि अन्त में आपको सुखही प्राप्त होगा ।

दोहा ।

सत्य करब हम ऐसही जो प्रभु आज्ञा दीन ।
गमने सुनि राजा बचन नारद धरमधुरीन ॥

सोरठा ।

धरि उर सिद्धी आस, मुनिपुङ्गव के बचन तें ।
मंत्री सहित हुलास, दृढ़ ह्वै निज कारज लगे ॥

दूसरा तरङ्ग ।

फिर तो दूसरे दिन यौगन्धरायण आदि मन्त्री लोग, महाराज वत्सेश्वर को रानी वासवदत्ता के सहित लेकर लावाणक नामक प्रदेश को चले, और कुछ दिनों में डङ्का पीटते हुये वहां जा पहुँचे । जब यह वृत्तान्त मगधेश्वर को विदित हुआ कि राजा वत्सराज ने हमारी सीमा के समीपही आकर डेरा लगा दिया है तो उनका हृदय अन्दर से काँप उठा । उस सद्बुद्धि राजा ने उसी क्षण अपना एक दूत पता लगाने के लिये यौगन्धरायण के पास भेजा और विचारशील तथा कार्य्यज्ञ मन्त्री ने उस दूत का भली प्रकार आदर कर इस सन्देश के साथ बिदा किया कि महाराज वत्सराज केवल मृगया की इच्छा से यहां आये हैं, जिसे सुन मगधेश्वर को धीरज हुआ । महाराज वत्सराज वहां के जङ्गलों में नित्य आखेट के लिये जाते और रानी वासवदत्ता के साथ रहते हुये अपना चित्तविनोद किया करते थे । योंही जब कुछ दिन बीत गये तो एक दिन राजा के आखेट जाने पर यौगन्ध-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रायण, रुमखान् और वसन्तक को साथ ले तथा गोपालक को आगे कर रानी वासवदत्ता की सेवा में जा उपस्थित हुआ। गोपालक ने अपनी भगिनी से कहा कि "बहिन! एक ऐसा काम महाराज के हित का है कि उसमें तुम्हारी सहायता की आवश्यकता है यद्यपि तुम्हें महाराज के विरह का दुःख तो कुछ दिनों के लिये सहना पड़ेगा, किन्तु अन्त में परिणाम बहुतही उत्तम होगा। रानी तो अत्यन्तही साध्वी और सदा पतिहितपरायणा थीं सो उन्होंने भाई से कहा कि "भैया! प्रथम तो स्वामी का कल्याण, दूसरे ज्येष्ठ भाई की आज्ञा, फिर मुझसे क्या पूछना है मुझे सब स्वीकार है जैसा आपलोग कहेंगे मैं करूँगी"। ठीकही है **"निज हित सबहिं बिसारि कै पतिहित ह्वै अनुकूल। सहहिं न सती सहर्ष अस कवन जगत महँ सूल॥"** अर्थात् संसार में ऐसा कौन दुःख है जिसे पतिव्रता सती नारियां निज पति के हित के लिये हर्षपूर्वक नहीं सह सकतीं! तब तो परम बुद्धिमान् यौगन्धरायण ने अपने योगबल से रानी का रूप बदल उसे एक ब्राह्मणी का रूप धारण कराया, वसन्तक को एक काना विद्यार्थी बनाया और स्वयं एक बूढ़े ब्राह्मण का रूप धर, उन दोनों को साथ ले मगधदेश को चला। रानी वासवदत्ता निकलने को तो घर से निकली किन्तु शरीरही उसका यौगन्धरायण के साथ था, मन तो पीछे राजाही के समीप चला जाता था। इधर ये लोग आगे बढ़े उधर रुमखान् ने राजभवन में आग लगा यह धूम मचा दी कि हाय! हाय! रानी और वसन्तक दोनों जलकर मर गये। महल में सर्वत्र रोना पीटना मच गया सैकड़ों हजारों नौकर चाकर पानी ले लेकर दौड़े, आग को तो उन लोगों ने शान्त कर लिया मगर रानी के जल जाने के ध्यान से जो रोना पीटना मचा वह किसी प्रकार कम न होता था। इधर यौगन्धरायण, रानी तथा वसन्तक को साथ लिये हुआ मगधेश्वर की पुरी में आ पहुँचा। राजकुमारी पद्मावती उस समय अपने बगीचे में टहल रही थी कि इतने में इन दोनों को साथ लिये यौगन्धरायण आ उपस्थित हुआ। यद्यपि द्वारपालों ने बहुत कुछ रोक टोक की पर ये अन्दर जाने के लिये प्रार्थना करने लगे। ज्योंही राजकन्या पद्मावती की दृष्टि ब्राह्मणीरूपधारिणी रानी वासवदत्ता पर पड़ी कि त्योंही उसके कोमल हृदय में रानी पर प्रीति उत्पन्न हुई। राजकुमारी ने पहरे-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वालों को निषेध कर आज्ञा दी कि इन्हें मत रोको मेरे पास आने दो। समीप आने पर राजकुमारी ने मधुर शब्दों में पूछा कि, हे ब्राह्मणदेव! यह बाला आपकी कौन है? और आप क्यों यहां मेरे पास आये हैं? मुझसे क्या चाहते हैं?। यौगन्धरायण ने कहा कि, हे राजपुत्रि! यह अवन्तिका नाम की मेरी बेटी है, इसका पति बड़ा व्यसनी है इसे छोड़ कहीं चला गया है, सो हे यशस्विनि! मैं इसे आपके पास छोड़ कर उसको खोज में जाता हूं, इसका भाई काणबटु इसके पास रहेगा जिसमें अकेले रहने से इसका जी न घबड़ावे। जब राजपुत्री ने इस बात को स्वीकार किया तो वह वृद्ध ब्राह्मण (यौगन्धरायण) उन दोनों को वहीं छोड़ आप उसी दिन सन्ध्या के पूर्व लावाणक को चला आया, और पद्मावती काने वसन्तक के सहित अवन्तिका को अत्यन्त स्नेह और सत्कार से लेकर अपने राजभवन में आई। राजमहल की भित्ति में अनेक प्रकार के चित्र बने थे वहां अवन्तिका (वासवदत्ता) ने विरहिणी सीता का चित्र देख अपने हृदय को धीरज दिया। पद्मावती ने देखा कि अवन्तिका की आकृति, स्वरूप, सुकुमारता, उठना, बैठना, चलना, फिरना, बोलना चालना सब मेरेही समान है इन लक्षणों से उसने निश्चय किया कि यह निस्सन्देह बड़ेही उत्तम कुल की है इसलिये वह अवन्तिका का बहुतही आदर सत्कार करती थी। फिर वह विचारने लगी कि जैसे द्रौपदी, विराट राजा के यहां छिप कर रही थी उसी प्रकार यह भी कदाचित् कोई वैसीही देवी होगी।

एक दिन ऐसाही अवसर जो आ पड़ा तो वासवदत्ता ने वह माला और तिलक पद्मावती को बना दिया जो कभी मुरझाता न था और जिसे उसने महाराज वत्सराज से सीखा था। उसे पहिन कर वह अपनी माता के पास गई, देखतेही माता ने पूछा कि हे पुत्रि! यह सुन्दर माला और तिलक तुझे किसने बना दिया है? उसने कहा हे माता! मेरेही महल में अवन्तिका नाम एक बाला रहती है उसी ने मुझे ये दोनों चीजें बना दी हैं। यह सुन माता ने कहा कि हे पुत्रि! यदि ऐसा है तो उसे मानुषी न जानना वह निस्सन्देह कोई देवी-बाला है जिसको ऐसी सुन्दर विद्या आती है। प्रायः ऐसा होता है कि देवता और मुनि लोग सज्जनों के घर में छिपकर कभी कभी निवास करते हैं। सुन मैं एक कथा कहती हूं—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन समय में कोई कुन्तिभोज नामक राजा हो गये हैं, एक बेर उनकी परीक्षा लेने के लिये श्रीदुर्वासा ऋषिजी उनके राजभवन में आये। उनकी सेवा और उनके सत्कार के लिये राजा ने निजपुत्री कुन्तीही को नियत किया और वह भी बहुत उत्तम रीति से तथा परिश्रम के साथ उनकी सेवा करती थी। एक बेर मुनि ने उसकी परीक्षा करने के निमित्त आज्ञा दी कि हे पुत्रि! मैं स्नान करके अभी आता हूं तू शीघ्र खीर पका रख। इतना कह वे स्नान के निमित्त गये और थोड़ीही देर में भोजन करने के लिये आ उपस्थित हुये, कुन्ती ने झट थाली में खीर परोस कर मुनि के आगे रक्खा—गरमागरम खीर पड़ने के कारण थाली आग की नाईं तप रही थी और हाथ से छूई न जाती थी, यह देख मुनि ने कुन्ती की पीठ पर दृष्टि उठाई। कुन्ती मुनिजी का आशय समझ गई, झट उसने थाली को अपनी पीठ पर रख लिया, फिर तो मुनि ने भली प्रकार भोजन किया किन्तु कुन्ती की पीठ जल गई। जब मुनि ने देखा कि पीठ जल जाने पर भी कुन्ती ने तनिक भी नाक भौंह नहीं सिकोड़ा तो वे उस पर बहुत प्रसन्न हुये और सन्तुष्ट हो उन्होंने उसे बरदान दिया। इसी से मैं कहती हूं कि यह अवन्तिका भी कोई देवी है, तेरे घर में आन ठहरी है, तू भली प्रकार उसकी आराधना करियो, उसे किसी बात का कष्ट न होने पावै। माता के ऐसे बचन सुन, पद्मावती उसी दिन से वासवदत्ता को और भी अधिक आदर से रखने लगी। वासवदत्ता भी निज नाथ के विना इस प्रकार रहती थी जैसे रात के समय पद्मिनी अपने पति सूर्य्य के विरह में मुरझाई रहती है, हां कभी कभी वसन्तक ऐसा टेढ़ा मेढ़ा मुंह बनाकर उसे दिखाया करता था कि जिससे उसके मुख पर मन्द मुसकान आ जाती थी।

उधर मृगया खेलते २ महाराज वत्सराज बहुत दूर निकल गये, सो उस दिन सन्ध्या के समय लौटकर लावाणक में आये, देखते क्या हैं कि महल तो आग लगने से भस्म हो गया है और मन्त्रियों से जान पड़ा कि रानी वासवदत्ता तथा बसन्तक दोनों जलकर परमधाम को सिधारे। महाराज तो सुनतेही शोक और मोह से व्याकुल हो पृथ्वी पर गिर पड़े और मूर्छित हो गये। कुछ देर के उपरान्त उन्हें सुधि आई परन्तु अग्नि को दहकते देख पुनः उनके हृदय में दाह होने लगा। रोते रोते राजा का दुःख इतना बढ़ा कि वे प्राणपरित्याग करने पर उतारू हुये, इतनेही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में उन्हें कुछ स्मरण हुआ और वे विचारने लगे कि नारदजी ने तो मुझसे कहा था कि रानी से एक पुत्र उत्पन्न होगा जो विद्याधरों का सरदार और कामदेव का अवतार है, सो वह बात क्योंकर झूठ होगी। फिर मुनि ने यह भी कहा था कि कुछ काल तक मुझे कष्ट होगा, और मैं यह भी देखता हूं कि रानी के भाई गोपालक को कुछ बहुत दुःख नहीं जान पड़ता, यौगन्धरायण और रुमण्वान् को भी मैं उतना दुःखित नहीं पाता, इसीसे अनुमान करता हूं कि कदाचित् मेरी रानी जीती होवे। यह भी कोई नीति की चाल होगी जो मन्त्रियों ने मेरे साथ की है अतएव मुझे विश्वास होता है कि मेरी भेंट देवी से अवश्य होगी। अच्छा देखना चाहिये अब क्या होता है—ऐसा विचार राजा ने धीरज धरा और मन्त्रियों के समझाने बुझाने से भी राजा को कुछ बोध हुआ सो वे अपना शोक मनही में रख हिम्मत बांध उठ बैठे और धीरजपूर्वक क्रमशः कामकाज देखने लगे। इधर तो यह हाल हुआ, उधर लावाणक में जो भेदिये लोग मगधेश्वर के भेजे हुये आये थे उन्होंने जाकर सब वृत्तान्त यहां का निवेदन किया। तब तो राजा को वह बात याद आई कि मन्त्री यौगन्धरायण ने मुझसे एक बेर पद्मावती के लिये प्रार्थना की थी सो अब वे उसका विवाह वत्सराज के साथ करने में सम्मत हुये। यही विचार उन्होंने अपना एक दूत यौगन्धरायण के पास भेजा कि अब यदि महाराज वत्सराज चाहें तो मैं पद्मावती को विवाह में दे सकता हूं। यौगन्धरायण ने अपने महाराज से यह सन्देश निवेदन किया और उन्होंने भी यह विचार कर कि कदाचित् इसीलिये इन लोगों ने महाराणी को छिपाया हो, विवाह को स्वीकार किया। फिर तो यौगन्धरायण ने लग्न निश्चित करा अपना दूत मगधेश्वर के पास पठाय यों कहला भेजा कि हमलोगों को आपकी इच्छा स्वीकार है आज के सातवें दिन पद्मावती के विवाह के लिये महाराज वत्सराज पधारेंगे, यह विवाह शीघ्रही होना चाहिये जिसमें हमारे महाराज वासवदत्ता का दुःख भूल जावें। दूत ने जाकर महाराज मगधराज से यह सन्देश निवेदन किया जिसे सुन वे अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और उन्होंने उस दूत को भली प्रकार धन से प्रसन्न कर विदा किया, और स्वयं निज कन्या के विवाह की तयारी धूमधाम के साथ करने लगे। पद्मावती इच्छानुसार वर पाने का वृत्तान्त सुन अत्यन्तही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रसन्न हुई किन्तु वासवदत्ता को यह हाल सुन चित्त में कुछ खेद हुआ। ज्योंही रानी वासवदत्ता के कान में इसकी भनक पड़ी त्योंही उसका तो रङ्गही उड़ गया जिससे इस छिपी हुई अवस्था में वह और भी दुबली हो गयी। वसन्तक ने धीरज धराया कि इसमें आप चिन्ता न करें, इस प्रकार एक शत्रु को आपने अपना मित्र बनाया है और राजा तो आपही के हैं फिर जब पद्मावती का विवाह निकट आया तो रानी ने हृदय में धीरज धर वही न कुम्हिलानेवाली माला और तिलक उसे पुनः बना दिया। सातवें दिन महाराज वत्सराज अपनी सेना और मन्त्रियों को साथ लिये बड़ी धूमधाम के साथ विवाह के लिये आ पहुँचे, किन्तु यथार्थ में तो विरही थे, इस विवाह को वे इसीलिये करते थे कि जिसमें इसके उपरान्त उनकी भेंट पुनः रानी वासवदत्ता से हो। इनके आने का सम्वाद पा राजा मगधेश्वर बड़े हर्ष के साथ अगवानी करने के लिये अपने दल बल के साथ आये फिर वत्सराज मगधपुरी में अपने लोगों के सहित पधारे, पुर-निवासियों ने बड़ाही उत्सव मनाया और सब के हृदय में आनन्द हलोरें मारने लगा। नगर की स्त्रियों ने देखा कि यद्यपि राजा का स्वरूप मन को मोहन करनेवाला है तथापि वे विरह से दुर्बल हो रहे हैं; वे यों शोभा पा रहे थे मानो रतिविहीन साक्षात् कामदेव सन्मुख से चले आते हैं। योंही नगर से होते हुये महाराज वत्सराज श्रीमगधपति के राजभवन में पहुँच कौतुकागार में पधारे। राजा की दृष्टि अचानचक पद्मावती पर जा पड़ी जो सखियों को साथ लिये झरोखे में से झांक रही थी, देखा कि उसका सुन्दर स्वरूप पूर्ण शशि को भी लज्जित करनेवाला है किन्तु अम्लान माला तिलक देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ कि ये यहां किसने बनाया। फिर वेदी पर बैठ राजा ने पद्मावती का हाथ निज हाथों में क्या लिया मानो उसी समय से पृथ्वी का हाथ पकड़ा। राजा के नेत्र जो धूयें के वेग से मुंदे जाते थे उसका कारण यही प्रतीत होता था कि वे रानी वासवदत्ता के प्रेमी थे दूसरे का पाणिग्रहण नहीं देख सकते थे। पद्मावती का मुख जो अग्निप्रदक्षिणा करती समय लाल हो गया उसका कारण यह प्रतीत होता था कि मानो उसने पति के इस अभिप्राय को समझ लिया और इसी कारण क्रोध से मानो मुख पर लालिमा आ गई हो। विवाह के उपरान्त राजा ने पद्मावती का हाथ छोड़ दिया किन्तु रानी वासवदत्ता को हृदय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से क्षण भर भी अलग न किया । मगधेश्वर ने बहुत कुछ दहेज में दिया कि जिससे वत्सराज का भण्डार भरा होने पर भी अधिक भर गया । उसी समय मन्त्री यौगन्धरायण ने अग्नि की साक्षी में मगधराज से यह प्रतिज्ञा करा ली कि अब से इन दोनों राज्यों में किसी प्रकार का भी विद्रोहभाव न रहेगा । नगर में चारो ओर आनन्द मंगल की बधाई बजने लगी, स्थान स्थान पर नृत्य होने लगा और राजभण्डार से वस्त्र इत्यादि बँटने लगे । किन्तु पति का उदय चाहनेवाली विचारी वासवदत्ता इस समय दिन की चन्द्रकला की नाईं दबी सी हो रही थी । जब महाराज वत्सराज अन्तःपुर में पधारे तो यौगन्धरायण को जो अपने उद्योग में सफलमनोरथ हो चुका था यह शङ्का हुई कि वे कहीं वहां पर रानी वासवदत्ता को देख न पावें, सो उसने भेद खुल जाने के भय से जाकर मगधेश्वर से निवेदन किया कि हे नाथ ! कोई राजकार्य्य ऐसा आवश्यक आ पड़ा है जिसके कारण आजही आपसे हमारे महाराज विदा होंगे । जब उन्होंने इस बात को स्वीकार कर लिया तो उसने जाकर वत्सराज से भी योंही निवेदन किया और उन्होंने भी उसी दिन चलना स्थिर किया । फिर तो मगधराज ने सब तयारी कर दी और महाराज वत्सराज निज मन्त्रियों तथा रानी पद्मावती के साथ बड़े धूमधाम से विदा हुये । पद्मावती ने कुछ कहारों तथा एक पालकी को इसलिये नियत कर दिया कि वे लोग अवन्तिका को भी साथही साथ ले आवें सो उसकी सवारी सेना के पीछे पीछे साथही साथ थी और काणवटुरूपधारी वसन्तक भी साथ में उपस्थित था । जब महाराज की सवारी लावाणक में पहुँची तो वे रानी पद्मावती के साथ निज राजभवन में पधारे किन्तु अवन्तिकारूपधारी वासवदत्ता निज कहारों को बाहर ठहरा भाई गोपालक के स्थान पर अन्दर चली गई । गोपालक अपनी प्यारी बहिन को देखतेही आदरपूर्वक उठ खड़े हुये और वह भी प्रेम से रोती हुई उनके कण्ठ से लग गई, गोपालक के भी आंखों में आंसू भर आये । वासवदत्ता का गोपालक के यहां जाना सुन यौगन्धरायण भी वहीं आ पहुँचे और पति के वियोग पर जो जो दुःख रानी ने सहे थे उसके लिये क्षमा प्रार्थना कर उन्हें धीरज देही रहे थे कि उधर वे कहार लोग रानी पद्मावती के पास जाकर निवेदन करने लगे कि हे देवि ! अवन्तिका जो हमलोगों के साथ आई थी वह हमें छोड़ राज-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुमार गोपालक के घर में चली गई है। कहारों का ऐसा निवेदन सुन, रानी पद्मावती ने महाराज के सन्मुखही उन्हें यह आज्ञा दी कि तुम लोग जाकर अवन्तिका से कहो कि वह इतने दिनों से हमारे पास रह आई है तो उसका वहां क्या काम है, जहां मैं हूं वहीं चली आवे। उन लोगों के चले जाने पर वत्सराज ने एकान्त में रानी पद्मावती से पूछा कि वह अम्लान माला तिलक तुम्हें किसने बना दिया था। उनने कहा कि एक वृद्ध ब्राह्मण अपनी पुत्री अवन्तिका को मेरे घर छोड़ गया था उसी ने वह माला तिलक बनाये थे। यह सुन महाराज वत्सराज भी गोपालक के घर यही विचारते हुये चले आये कि निस्सन्देह वह अवन्तिका हमारी प्यारी वासवदत्ताही होगी। वहां जाकर देखते क्या हैं कि पालकी तो बाहर पड़ी है और अन्दर रानी वासवदत्ता, गोपालक, यौगन्धरायण और बसन्तक बैठे हैं। महाराज ने देखा कि रानी वासवदत्ता का मुख इस वियोग के उपरान्त ऐसा हो रहा है जैसे ग्रहण छूटने के अनन्तर चन्द्रविम्ब की शोभा होती है। रानी की ऐसी अवस्था पा, राजा, शोक से विकल हो भूमि पर गिर पड़े, उधर रानी वासवदत्ता भी विरहाकुल होने से पृथ्वी पर गिर बेसुध हो गई, फिर जब कुछ ज्ञान हुआ तो अपने चरित की आपही निन्दा कर रोने लगी। इस प्रकार राजा और रानी दोनोंही रोते थे और यौगन्धरायण की आंखों से भी अश्रुधारा न थँमती थी। जब इस प्रकार अधिक कोलाहल हुआ तो उसे सुन रानी पद्मावती भी वहां आ पहुँची। जब उसे महाराज और वासवदत्ता का सब हाल विदित हुआ तो वह भी शोक से व्याकुल हो गई ठीकही है—"**कोमलमन सतकुल की नारी। पतिदुख नयन न सकहिं निहारी॥**" वासवदत्ता के मुख से तो बार बार यही निकलता था कि धिक्कार है मेरे जीवन को जो मैंने इतना कष्ट प्राणनाथ को दिया। फिर तो धीर यौगन्धरायण ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे प्रभो! इसमें महाराणी का कुछ भी दोष नहीं है यह अपराध केवल इसी सेवक का है जिसने ऐसा काम केवल इसी अभिप्राय से किया कि मगधेश्वर की सुता के साथ आपका विवाह होनेही से आपको साम्राज्य प्राप्त होगा। जिस उत्तम रीति से धर्मपूर्वक इन्होंने अपना प्रवास का रहना निबाहा है उसकी साक्षी श्रीमहाराणी पद्मावती जी हैं। मगधेशपुत्री ने कहा कि इनको धर्मरक्षा की मैं साक्षी हूं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्योंकि ये तो मेरेही भवन में मेरे साथ रहती थीं । तदुपरान्त राजा ने कहा कि अपराध तो मेरा है जो महाराणी को मेरे कारण इतने कष्ट उठाने पड़े । फिर रानी वासवदत्ता ने कहा कि महाराज आप निज हृदयशुद्धि के लिये मुझे अग्नि में प्रवेश कराइये और मेरी परीक्षा कर देखिये । तब तो धीमान् मन्त्री यौगन्धरायण ने पूर्व मुख खड़े हो आचमन कर हाथ जोड़ यों निवेदन किया कि हे लोकपाल-गण ! यदि मैं महाराज का सच्चा हितैषी हूं और यदि महाराणी वासवदत्ता शुद्ध-चरित्रा हैं तो आपही लोग साक्षी दीजिये नहीं तो मैं अपने प्राणपरित्याग करता हूं। जब यौगन्धरायण यों कहकर चुप हुये तो उसी क्षण यह आकाशबाणी हुई कि, "हे राजन् ! आप धन्य हैं कि जिनका यौगन्धरायण सरीखा बुद्धिमान् और हितैषी मन्त्री है, और जिनकी भार्य्या वासवदत्ता परम शुद्धा पूर्व जन्म की देवी है, इसमें इनका भी कोई दोष नहीं है ।"

यों भाषि दिव्या नभगा सरस्वती
मिटाइ दीन्ही मनजात शङ्का ।
प्रसन्न ह्वै गद्गद वत्सराजा
लगाइ लीन्हो उर सें प्रिया को ॥

पुनि गोपालक के सहित बहुत प्रशंसा कीन्ह ।
अतुलित धन जन ग्राम बहु मंत्री प्रवरहिँ दीन्ह ॥
वासवदत्ता के सहित पद्मावतिहिँ सु पाइ ।
सुख सों राज कियौ नृपति प्रजागणहिँ हरखाइ ॥

तीसरा तरङ्ग ।

एक दिन महाराज वत्सेश्वर, वासवदत्ता और पद्मावती के साथ मधुपान में आसक्त थे और गोपालक, रुमण्वान् तथा यौगन्धरायण भी समीपही बैठे थे कि निज विरह की बातचीत करते करते महाराज ने यह कथा आरम्भ की और वे लोग ध्यानपूर्वक सुनने लगे । राजा ने कहा कि—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन समय में पुरूरवा नामक एक परम वैष्णव राजा थे जिनकी गति पृथ्वी तथा स्वर्ग में एक समानही थी अर्थात् स्वर्ग में भी कहीं जाने से उनको रोक टोक न थी। एक बेर वे नन्दन बन में टहल रहे थे कि कहीं उर्वशी नाम अप्सरा ने उन्हें देख पाया और देखतेही मोहित हो गई, रम्भा इत्यादि जो दूसरी सखियां थीं वह उसकी ऐसी दशा देख भय से काँपने लगीं। वह राजा भी उसे देख अपना मन हाथ से गँवा बैठे और आलिङ्गन न करके जो तृप्त न हो सके तो मानो उसी कारण मूर्छित हो गये। उधर क्षीरसागर में, जो श्रीविष्णुभगवान् के समीप नारद जी इतने में पहुंचे तो उन्होंने देवर्षि को आज्ञा दी कि हे मुने! आप इस समय नन्दनकानन में जाइये वहां राजा पुरूरवा को पाइयेगा जो उर्वशी पर आसक्त होने के कारण उसके विरह में व्याकुल हो रहे हैं। सो इन्द्र के पास जा हमारी ओर से समझा के कहना कि वे राजा को उसे दे देवैं। भगवान् की आज्ञा पातेही नारद मुनि पुरूरवा के पास पहुँचे और उनकी वैसी दशा देख ढाढ़स दे कहने लगे कि हे राजन्! उठ खड़े होइये आपही के निमित्त विष्णु भगवान् ने मुझे भेजा है क्योंकि वे अपने शुद्धचरित्र भक्तों को कभी भी क्लेश में नहीं देख सकते। इस प्रकार उन्हें धीरज बँधा अपने साथ ले नारद मुनि, देवराज इन्द्र के पास पहुँचे। ऋषि को देखतेही पुरन्दर निज सिंहासन से उठ खड़े हुये और प्रणाम कर उन्होंने उनके आगमन का कारण पूछा। नारद जी ने आशीर्वाद के अनन्तर श्रीविष्णुभगवान् की आज्ञा उन्हें सुनाई और उर्वशी को दिलवा आप अन्तर्धान हो गये। स्वर्गलोक से राजा के साथ उर्वशी का आना क्या हुआ मानो स्वर्ग का जीवही निकल गया क्योंकि वहां तो उर्वशीही एक सञ्जीवनी औषधि थी। राजा तो उसे लेकर भूलोक में चले आये, यहां भूतल के निवासी उस परम मोहनीरूपछटा को देख आश्चर्य में आ गये। राजा और उर्वशी एक दूसरे के प्रेम में ऐसे बँध गये थे कि उन्हें और किसी बात की सुधि न रही। एक समय इन्द्र का युद्ध दानवों के साथ हुआ और उन्होंने सहायता के लिये पुरूरवा को बुला भेजा, जो झट वहां जा पहुँचे, इनकी सहायता पा इन्द्रभगवान् विजयी हुये और मायाधर नामक असुराधिपति रण में मारा गया। तब तो स्वर्ग में बड़ा उत्सव मनाया गया जिसमें अप्सराओं का दिव्य नाच भी हुआ। जब रम्भा का नाच आरम्भ हुआ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो गान तथा नृत्य विद्या के आचार्य्य तुम्बरू भी वहीं उपस्थित थे। उस नाच को देख राजा कुछ मुस्कुराये । यह देख रम्भा ने असूयापूर्वक कहा कि हे मनुष्य! यह स्वर्गीय नाच है इसे मैं जानती हूं तुम मृत्युलोक के रहनेवाले हो तुम इसे क्या समझोगी। पुरूरवा ने उसी क्षण उत्तर दिया कि उर्वशी के साथ रहने से इन सब बातों को जितना हम जानते हैं उतना तेरे गुरु तुम्बरू भी न जानते होंगे। यह सुन तुम्बरू ने क्रोध से शाप दिया कि "जिस उर्वशी के कारण तुझे इतना घमण्ड हो गया है उसका वियोग तुझे तबतक हो जबतक तू कृष्णभगवान् को निज आराधना से प्रसन्न न कर लेवै"। इस शाप को सुनतेही राजा पुरूरवा ने उर्वशी के पास जाकर इस आकस्मिक वज्रपात का हाल सुनाया। इतनेही में न जाने कहां से कोई अदृष्ट गन्धर्व आकर उर्वशी को आकाश में उड़ा ले गया। राजा ने समझ लिया कि यह वियोग उसी शाप के कारण हुआ है, सो वे वदरिकाश्रम में जाकर श्रीहरि भगवान् की आराधना करने लगे । उधर वह गन्धर्व उर्वशी को उड़ाकर अपने देश में ले गया जहां वह राजा से अलग होने के कारण केवल नाम मात्र को जीती और सांस लेती थी । वस इसी को आश्चर्य्य समझिये कि उसने वियोग में अपने प्राण न दे दिये, कारण यही था कि उसे यह आशा थी कि शाप के अन्त में मेरी भेंट पुनः राजा से होगी। उधर राजा पुरूरवा ने अपनी कठिन तपस्या से श्रीविष्णुभगवान् को प्रसन्न कर लिया जिससे उन गन्धर्व लोगों ने उर्वशी को छोड़ दिया और वह राजा से आन मिली, जिसके साथ राजा ने भूलोक में रहकर भी समस्त स्वर्गीय भोगों का सुख पाया । यों इस कथा को कहकर जब महाराज वत्सराज चुप हो गये तो रानी वासवदत्ता को अपने इस वियोग को सहकर जीवित रहने पर बहुत खेद हुआ और लज्जा भी आई। तब तो यौगन्धरायण ने रानी की यह दशा देख उनका दुःख हटाने के अभिप्राय से महाराज से कहा कि हे धर्म्मावतार! मैं भी एक कथा आपसे कहता हूं सुनिये कि,—

इस भूतल पर तिमिरा नामक एक अति सुन्दर नगरी है जिसे लक्ष्मी का घर कहना चाहिये, वहां के राजा विहितसेन थे, जिनकी भार्य्या तेजोवती नाम्नी थी, जो सौन्दर्य्य में इस भूतल की अप्सरा थी। राजा को अपनी रानी से ऐसा प्रेम था कि वे दोनों वक्षःस्थल मिलने के समय बीच में महीन रेशमी कञ्चुकी का अन्तर

भी न सह सकते थे । एक बेर राजा को जीर्णज्वर हो गया सो वैद्यों ने देखकर यह निश्चय ठहराया कि राजा अपनी रानी को छूने तक भी न पावैं—जब यहां तक बात आई तब तो राजा के हृदय में एक ऐसा गुल्म रोग हो गया जो औषधि से चङ्गा न हो सकता था। उस समय वैद्यों ने मन्त्रियों को एकान्त में बुलाकर यह कहा कि अब तो राजा का रोग बहुतही बढ़ गया है इसको केवल एकही औषधि है; यदि यह गुल्म अधिक भय अथवा अधिक शोक के वेग से कदाचित् फट जाय तो राजा अच्छे हो सकते हैं किन्तु जिसे पीठ पर सर्प गिरने से भी भय नहीं होता, शत्रुओं की सेना यदि महल में भी आ जाय तौ भी जिसे तनिक भी क्षोभ नहीं होता उस हिम्मती राजा को अचानक भय कैसे दिखलाया जाय. हमारी तो बुद्धि कुछ काम नहीं करती। ऐसा विचार मन्त्री लोग रानी के पास गये और उनसे सलाह ठीक कर उन्हें कहीं छिपाय उन लोगों ने राजा से आकर बड़ा मुंह बना निवेदन किया कि हे महाराज ! रानी का तो अचानचक देहान्त हो गया। इस परम शोकमय वृत्तान्त को सुनतेही राजा विह्वल हो भूमि पर गिर पड़े, और शोक के वेग से उनका वह हृदयस्थ रोग फट गया जिससे वे कुछ दिनों में चङ्गे हो गये; फिर तो उसी रानी के साथ उन्होंने अनेक प्रकार के सुखसम्भोग किये और कभी भी उस बुद्धिमान् राजा ने इस बात का क्रोध न किया कि रानी ने क्यों अपने तईं छिपाया था। जिसमें पति की सच्ची हितैषिता पाई जाय वही देवी शब्द के योग्य है, और जो पति के मन की मीठी मीठी बातें कर देवै उसके लिये देवी शब्द का उपयोग ठीक नहीं हो सकता । राजकार्य्य के भार की उपयुक्त चिन्ता जिसे हो वही यथार्थ मन्त्री है, और राजा के चित्त के अनुसार वर्ताव करना तो दास और सेवकों का काम है। इन्हीं सब बातों को सोचकर आपके शत्रु मगध-राज से आपका मेल कराने के लिये तथा च आपके लिये पृथ्वी में विजयप्राप्ति के लिये हमलोगों ने यह यत्न किया था, और इसीलिये हे देव ! महारानी ने आपकी भक्ति के कारण इस वियोग को सहकर कोई अपराध नहीं प्रत्युत आपका उपकारही किया। यों मुख्य मन्त्री का वचन सुन राजा वत्सराज ने अपना अप-राध माना और प्रसन्न हो कहने लगे कि मैं समझता हूं कि आपही लोगों ने देवी को सिखा कर यह उत्तम काम कराया है, देवी ने तो साक्षात् नीति का रूप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धारण कर मुझे यह पृथ्वी प्राप्त कराई है । अतएव प्रेम के वश होकर जो कुछ अनुचित शब्द मेरे मुंह से निकल गये हों उन्हें देवी चमा करें क्योंकि—""प्रेम न होइ न विचार विवेका" । इस प्रकार अनेक तरह की वार्ता और कथा कहते हुये राजा ने वह दिन विताया और रानी वासवदत्ता का खेद उसके चित्त से हटा दिया ।

उधर मगधेश्वर को जो इन बातों का भेद विदित हुआ तो उनने दूसरेही दिन महाराज वत्सराज के पास अपना दूत भेजा जिसने आकर सविनय यों निवेदन किया कि हमारे महाराज मगधेश्वर यों कहते हैं कि आपके मन्त्रियों ने हमें बड़ाही धोखा दिया, सो अब आपको ऐसा करना उचित है कि जिसमें हमलोगों का जीवन शोकमय न होवे। राजा ने उस दूत का आदर कर उसे पद्मावती के पास सन्देश सुनाने और प्रति सन्देश लेने के लिये भिजवा दिया । दूत ने जाकर देखा कि रानी पद्मावती वासवदत्ता के पास नम्रता से बैठी है और प्रेमपूर्वक हँस हँस के बातें कर रही है, सच है "सती नार कर इहै सुभाऊ । विनय सहित पति कैर पसाऊ" । दूत ने हाथ जोड़कर निवेदन किया कि, हे राजकुमारि! आपके पिताजी ने अत्यन्त खेद के साथ यह वृत्तान्त सुना है और यों कहा है कि हे पुत्रि! मन्त्रियों ने मुझे धोखा देकर यह काम करा दिया है, मुझे खेद है कि कदाचित् तुम्हें यहां कोई कष्ट होगा । दूत की यह बात सुन पद्मावती ने कहा कि हे भद्र! मेरी ओर से पिता जी तथा माता जी का चरण छूकर मेरा यह निवेदन कहना कि वे कदापि किसी बात की शङ्का न करें, आर्य्यपुत्र मुझसे बहुतही प्रेम करते हैं और जेठी महाराणी मुझे अपनी छोटी भगिनी के समान रखती हैं, मुझे किसी प्रकार का कष्ट यहां नहीं है। इस प्रकार जब पद्मावती ने दूत से कह दिया तो रानी वासवदत्ता ने उसका भली प्रकार सत्कार कर उसे विदा किया। दूत के चले जाने पर पिता माता के स्नेह को स्मरण कर रानी पद्मावती का चित्त कुछ उदास सा हो गया सो उसका जी बहलाने के लिये महाराणी वासवदत्ता ने वसन्तक को बुलवा भेजा और आने पर कहा कि कोई मन बहलानेवाली कथा सुनाओ। उसने हाथ जोड़ यों निवेदन किया कि—

पाटलिपुत्र नाम एक बड़ाही सुन्दर नगर है जो इस पृथ्वी का विभूषण है

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वहां धर्म्मगुप्त नामक एक बहुत बड़ा महाजन रहता था। उसकी भार्य्या का नाम चन्द्रप्रभा था जिसके गर्भ से एक सर्वाङ्ग सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई जो जन्मतेही उठ कर बैठ गई और स्पष्ट बातचीत करने लगी। घर की सब स्त्रियां यह हाल देख आश्चर्य में आ डर गईं और धर्म्मगुप्त भी यह वृत्तान्त सुनतेही भयभीत हो वहां आन उपस्थित हुआ और प्रणत हो उस कन्या से पूछने लगा कि, हे भगवति! तुम कौन हो? किस देवी ने मेरे घर में अवतार लिया है? कन्या ने उत्तर दिया कि हे तात! आप मेरा विवाह किसी के साथ न कीजियेगा, जबतक मैं आपके घर में हूं तभी तक सब कुशल है और विशेष पछने से कोई लाभ नहीं है। ऐसा सुन धर्म्मगुप्त बहुतही डर गया और उसने चुपके से उस कन्या को घर में छिपा रक्खा, और बाहर यह प्रसिद्ध कर दिया कि वह मर गई। क्रमशः वह कन्या जिसका नाम सोमप्रभा था, अपने पिता के घर में पलने लगी और ज्यों ज्यों दिन बीतते थे त्यों त्यों उसका सौन्दर्य्य चन्द्रकला की नाईं बढ़ताही जाता था। शरीर तो उसका मानुषी था परन्तु रूप उसका देवी था। एक समय मधूत्सव का मेला आ पड़ा, वह अपने घर की खिड़की में खड़ी बाजार की ओर देख रही थी कि गुहचन्द्र नामक वणिक्पुत्र ने उसे देख पाया, देखतेही मदन-बाण से घायल हो वह किसी किसी प्रकार अपने घर पहुँचा और मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़ा। जब माता पिता ने बार बार उसके दुःख का कारण उससे पूछा तो उसके एक अन्तरङ्ग मित्र ने सब वृत्तान्त पिता गुहसेन को कह सुनाया। दूसरे दिन वह गुहसेन नामक वणिक् जिसे अपना पुत्र प्राणों से भी प्यारा था धर्म्मगुप्त के घर उस कन्या को मांगने के लिये गया। जब गुहसेन ने धर्म्मगुप्त से निवेदन किया कि आप निज कन्या को मेरी पुत्रबधू बनाइये तो उसने प्रत्युत्तर में कहा कि मेरे यहां कन्या कहां है, आपसे किसी ने झूठही कह दिया होगा। गुहसेन ने समझ लिया कि इसने कन्या को छिपा रक्खा है सो वह अपने घर को लौट आया, यहां पुत्र की वैसी कामज्वरपीड़ित अवस्था देख व्याकुल हो विचारने लगा कि अब क्या करना चाहिये। सोचते विचारते उसे याद आया कि मैंने चिरकाल तक राजा की सेवा की है सो यदि मैं उनसे चलकर निवेदन करूं तो कदाचित् वे कृपाकर इस कार्य्य में सहायता करें। ऐसा निश्चय ठान उसने राजा के समीप जा एक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उत्तम रत्न सेवा में रख हाथ जोड़ अपना अभिप्राय कह सुनाया । राजा ने भी प्रसन्न हो, कोतवाल को साथ में कर दिया और कहा कि यदि यह बात सत्य है तो धर्म्मगुप्त से कह दो कि वह अपनी कन्या का विवाह इस महाजन के पुत्र से कर दे। उसने जातेही धर्म्मगुप्त का घर चारो ओर से घेर लिया और राजा की आज्ञा सुनाई। तब तो वह बहुत घबड़ाया और विचारने लगा कि यदि मैं राजा की आज्ञा नहीं मानता तो वह क्रोध कर मेरा सर्वस्व नाश कर देगा। यह देख सोमप्रभा ने निज पिता से कहा कि हे तात! आप मेरा विवाह कर दें, मैं नहीं चाहती कि मेरे निमित्त आपकी हानि हो किन्तु अपने समधी से इस बात की प्रतिज्ञा करा लीजिये कि उनका पुत्र मुझे भार्य्यारूप से निज शय्या पर न सुलावे। जब यह बात गुहसेन से कही गई तो वह अन्दर से हँसा किन्तु यह सोचकर कि पहिले विवाह तो हो जाने दो उसने उस बात को स्वीकार कर वैसी प्रतिज्ञा करी। विवाह हो जाने के उपरान्त गुहचन्द्र अपनी स्त्री सोमप्रभा को साथ ले अपने घर आया। सन्ध्या होने पर, पिता गुहसेन ने कहा कि हे पुत्र! यह तेरी भार्य्या है तू इसे निज शय्या पर आरोपण कर, इसमें आगा पीछा काहे का! यह सुन सोमप्रभा ने अत्यन्त क्रोध से अपनी तर्जनी अंगुली को हिलाया, वह तो मानो यमराज की आज्ञा थी, चट उसी क्षण गुहसेन भूमि पर पछाड़ खाकर गिरा और गिरतेही उसके प्राणपखेरू शरीरपिञ्जर से उड़ गये। यह दशा देख बाकी के सब घरवाले घबड़ा गये और गुहचन्द्र ने विचारा कि यह कोई महामारी भार्य्यारूप से मेरे घर में आ पैठी है पिता के क्रियाकर्म से छुट्टी पा गुहचन्द्र ने फिर कभी भी अपनी भार्य्या की ओर दृष्टि न उठाई, वह सदाही भयभीत और दुःखी रहता तथा नित्यप्रति स्वयं व्रत करके ब्राह्मणों को भोजन कराता था और दिव्यरूपधारिणी उसकी वह भार्य्या, ब्राह्मणों को भोजनोपरान्त नित्य मौनधारणपूर्वक दक्षिणा देती थी। एक समय कोई वृद्ध ब्राह्मण वहां भोजन करने के लिये जो आये तो उन्होंने उस आश्चर्य्य उत्पन्न करनेवाली रूपराशि को देख सकौतुक गुहचन्द्र से पूछा कि यह बाला तुम्हारी कौन है?। पहिले तो वह चुप रहा किन्तु जब बार बार उस वृद्ध ब्राह्मण ने पूछा तो गुहचन्द्र ने उसका सब वृत्तान्त दुःखित चित्त से कह सुनाया। यह सुन उस ब्राह्मण को बड़ी दया आई सो उसने इष्ट-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सिद्धि के निमित्त उस वणिक्पुत्र को अग्नि की आराधना का मन्त्र बतला दिया, और वह भी उसी मन्त्र से नित्य शुद्धतापूर्वक अग्निपूजन करने लगा। मन्त्र जपते जपते एक दिन एकान्त में एक दिव्य पुरुष अग्नि में से निकल गुहचन्द्र के सन्मुख खड़ा हो गया जिन्हें देख उस वणिक्पुत्र ने प्रणाम किया। द्विजरूपधारी अग्निदेव ने कहा कि आज दिन को मैं तुम्हारे यहां भोजन करूँगा और रात को भी वहीं रहूंगा, फिर इसका यथार्थ भेद तुम्हें दिखलाकर तुम्हारी अभीष्टसिद्धि कर दूंगा। ऐसा कह वह ब्राह्मण गुहचन्द्र के साथ उसके घर में आया। वहां अन्य ब्राह्मणों की नाईं उनने भी भोजन किया और रात को गुहचन्द्र के पासही सो रहा किन्तु उसे निद्रा कहां आती थी। जब घर के सब लोग घोर निद्रा में सो गये तो सोमप्रभा ने धीरे से घर का किवाड़ खोला और बाहर निकली। उसी क्षण उस ब्राह्मण ने गुहचन्द्र को जगाया और कहा कि चलो अपनी भार्य्या के चरित्र निज आंखों से देख लो, फिर उसने योगबल से अपना तथा गुहचन्द्र का रूप भौंरे का बनाया और बाहर निकल दिखलाया कि वह तुम्हारी भार्य्या चली जाती है। चलते चलते वह सुन्दरी नगर के बाहर हुई और ये दोनों भी भौंरे का रूप धरे उसके पीछे पीछे चले गये। वहां जा, गुहचन्द्र ने देखा कि एक बहुतही उत्तम छायेदार बट का वृक्ष है जिसके ऊपर से वीणाध्वनि के साथ मधुर मधुर गाने का शब्द सुनाई पड़ता है, और भी देखा कि उसकी भार्य्याही के समान एक दूसरी परम सुन्दरी बाला, एक उत्तम आसन पर उसी वृक्ष के ऊपर बैठी है। उसके वस्त्र शुभ्र और चमकीले, चन्द्रमा की चांदनी की नाईं स्वच्छ हैं और दो सुन्दरी सखियां अगल बगल खड़ी श्वेत चँवर डुला रही हैं, उसी आसन के आधे पर इसकी भार्य्या भी जाकर बैठ गई; ऊँचे वृक्ष पर तुल्य शोभावाली, वे दोनों दिव्य कन्यायें विराज रही थीं और ऊपर आकाश में पूर्णचन्द्र की छटा शोभा दे रही थी ऐसा जान पड़ता था कि मानो उस रात को तीन चन्द्रमा एक साथही व्योम में प्रकाश कर रहे हैं। गुहचन्द्र यह आश्चर्य्य देख मन में विचारने लगा कि मैं जागता हूं अथवा स्वप्न देख रहा हूं। वह ऐसा विचारही रहा था कि उधर उन दोनों दिव्य कन्याओं ने कुछ निजोचित भोजन कर दैवी आसव को पान किया। फिर सोमप्रभा ने कहा कि हे बहिन! आज एक ब्राह्मण मेरे घर में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आया है सो मुझे शङ्का होती है, अब मैं घर जाया चाहती हूं। इतना कह गुहचन्द्र की वह पत्नी अपनी बहिन से विदा हो वृक्ष के नीचे उतर आई। यह देख वे दोनों भृङ्गरूपधारी भी आगे आगे चलकर घर में पहिलेही पहुँच अपने असली रूप से सो रहे। इतने में वह भी आई और चुपचाप किवाड़े बन्द कर अपने शयनागार में जा सो रही। फिर तो उस ब्राह्मण ने गुहचन्द्र से कहा कि तूने सब हाल देखा न! तेरी यह भार्य्या दिव्या है, मानुषी नहीं। इसकी बहिन को भी तुमने देख लिया, वह भी मानुषी नहीं है, इसी कारण यह मनुष्य से संगम नहीं करती। अब इसकी सिद्धि के लिये मैं तुम्हें एक मन्त्र देता हूं जिसे तुम द्वार पर लिख दो और कुछ बाहरी युक्ति भी बताता हूं—देखो जो अग्नि बिना पवन केही जला करती है उसे यदि वायु की सहायता मिल जाय तो फिर क्या पूछना है, इसी प्रकार केवल मन्त्रही से काम निकल सकता है पर जो युक्ति भी उसके साथ मिला दी जाय तो सोना और सुगन्ध की कहावत हो जाती है। यों कह उस ब्राह्मण ने गुहचन्द्र को एक मन्त्र बतला दिया और एक युक्ति भी सिखा आप अन्तर्धान हो गया। गुहचन्द्र ने भी अपनी भार्य्या की कोठड़ी के द्वार पर उस मन्त्र को लिख दिया और सन्ध्या के समय उत्तम वस्त्राभूषण पहिन बाहर निकल एक बारयोषिता (वेश्या) से कुछ बातचीत करने लगा। सोमप्रभा खिड़की में से यह हाल देखती थी सो झट उसने गुहचन्द्र को बुलवा भेजा। उस मन्त्र के प्रभाव से उसकी वाणी खुल गई और उस दिव्य कन्या ने डाह खाकर पूछा कि यह कौन है। उसने झूठही कह दिया कि यह वेश्या मुझसे बहुत प्रेम करती है सो मैं आज इसके घर जाऊँगा। तब तो वह भौं मरोड़ दृष्टि टेढ़ी कर बायें हाथ से निषेध कर यों कहने लगी "हां मैं तुम्हारा अभिप्राय समझ गई इसीलिये ऐसे वस्त्र भूषण पहिने हैं, उसके यहां जाकर क्या करोगे, मैं तो तुम्हारी घरवाली हुई हूं मेरे पास रहो। इतना कहही रही थी कि उस मन्त्र ने ऐसा प्रभाव उस पर डाला कि वह पुलकित हो काँपती हुई बड़े प्रेम के साथ गुहचन्द्र के गले से लिपट गई और फिर बड़ेही आनन्द से उसकी गृहिणी हो सुखपूर्वक रहने लगी। गुहचन्द्र ने मन्त्रबल से उस दिव्या प्यारी को पाकर इस लोक में रहकर भी स्वर्गलोक के सुखों का अनुभव किया। सो प्रायः ऐसा होता है कि तपस्या में चूक हो जाने के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कारण स्वर्लोक की नारियां इस लोक में अवतार लेकर भले मनुष्यों के घर में गृहिणी होकर रहती हैं। देवता और ब्राह्मणों की पूजा सज्जनों के लिये कामधेनु है, उनके प्रभाव से क्या नहीं मिलता पर हां साम दाम आदि से ऊपरी काम अवश्य लेना चाहिये। अत्यन्त ऊँचे पदवाले स्वर्गनिवासी लोगों का भी चूक जाने से अधः-पतन होताही है जैसे आंधी के कारण टूटे हुआ पुष्प नीचे को गिर पड़ते हैं। ऐसा कह पुनः वसन्तक राजपुत्री से कहने लगा कि सुनिये, मैं आपसे अहल्या की कथा कहता हूं।

प्राचीन समय में गौतम नाम एक त्रिकालज्ञ मुनि हो गये हैं उनकी अहल्या नाम भार्य्या ऐसी सुन्दरी थी कि अप्सरा लोग भी उसके रूप के आगे अपनी आंखे नीची कर लेती थीं। एक बेर इन्द्र ने एकान्त में उससे अपने हृदय का असत् भाव कहा, ठीकही है—"धनमद बाउर कीन्ह न काहीं"। उस मूढ़ा का भी चित्त डोल गया और उसने उस बात को स्वीकार किया, श्रीगौतम ऋषि तो त्रिकालज्ञ थे झट आन उपस्थित हुये। इन्द्र ने तो डर के मारे बिल्ले का रूप धर लिया, और श्रीमुनिजी ने अहल्या से पूछा कि अभी यहां कौन था ? मारे भय के उसके मुंह से स्पष्ट अक्षर न निकलते थे सो उसने कांपती कांपती उत्तर दिया कि, "यहां तो औ—र कोई नहीं है, यही मज्जार है" *। मुनि ने मुस्कराकर कहा— "ठीक है यह निस्सन्देह तेरा यार है"। यों कह उस झूठ बोलनेवाली भार्य्या को मुनि ने यों शाप दिया कि "हे पापिष्टे ! जा तू पत्थर हो जा और तबतक उस अवस्था में रह जबतक तुझे वन में श्रीभगवान् रामचन्द्रजी के दर्शन न हों"। इन्द्र को उन्होंने यह शाप दिया कि "जिस अङ्ग के लोभ से तूने यह दुष्कर्म किया है वह तेरे सर्वाङ्ग में एक सहस्र हो जावें, किन्तु जब विश्वकर्म्माजी तिलोत्तमा नाम्नी अप्सरा को बनावेंगे तो उसे देखने पर वे सब छिद्र तेरे हजार नेत्र हो जावेंगे"। इस प्रकार दोनों को शाप देकर मुनि तो पुनः तपस्या को चले गये, उधर अहल्या शिलारूप में हो गई, और इन्द्र के सारे शरीर में वेही (भगाकार) चिन्ह हो गये। ठीकही है—"खोटे कर्म्म बिगारहीं मान प्रतिष्ठा खींच।
ऊंचे तें नीचे करैं इन्द्र होय चह नीच॥

* मज्जार = बिल्ली और 'मम जार' अर्थात् मेरा यार।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो जैसो कारज करै तैसोई फल होय ।
जैसो बोवै तस लवै इन्द्र कृषक सम दोय ॥
यातें सज्जन सुकृत जन परहितरति जिन केर।
अनुचित मारग त्यागि शुभ चलत न लावहिं बेर"॥

इसीसे मैं कहता हूं कि आप दोनों जनी पूर्व जन्म की बहिन और देवियां हैं परस्पर एक दूसरे के हितसाधन में आप लोगों को उत्साह और प्रेम रहता है। वसन्तक की ऐसी कथा सुन वासवदत्ता और पद्मावती का परस्पर स्नेह और भी दृढ़ हो गया और कभी उन दोनों में किसी प्रकार का भी द्वेषभाव स्थान न पाता था। दूतों ने जाकर जब पद्मावती का सन्देश मगधेश्वर को सुनाया और जब वासवदत्ता का प्रेम पद्मावती पर, निज आंखों देखा वर्णन किया तो उन्हें परम सन्तोष और हर्ष हुआ।

दूसरे दिन मन्त्री यौगन्धरायण, महाराज वत्सराज के पास पहुँचे जहां दोनों महारानियां भी बैठी थीं और अत्यन्त नम्रतापूर्वक निवेदन करने लगे कि हे देव! अब कौशाम्बी चलकर उद्योग करना चाहिये अब तो राजा मगधेश्वर से भी यद्यपि वे विचारे इस प्रकार हमलोगों द्वारा ठगे गये, कुछ शङ्का न रही। अब तो वे कन्या सम्बन्ध करने से सदा के लिये बँध गये क्या वे हमलोगों से विरोध करके अपने प्राणों से भी प्यारी कन्या को कभी छोड़ेंगे?। फिर आप उनके सत्य का पालन करतेही हैं, आपने तो उनका कुछ बिगाड़ा नहीं, जो कुछ किया मैंने किया उसमें भी उनका अहित न किया, प्रत्युत भलाईही की है। फिर दूतों के मुख से भी मैंने सुना है कि वे हमलोगों से अप्रसन्न नहीं हैं, केवल इसी कारण मैं इतने दिनों तक यहां ठहरा रहा। अभी यहां इतनी बातें होही रही थीं कि राजा मगधेश्वर का भेजा हुआ दूत आन उपस्थित हुआ। द्वारपाल ने आकर खबर दी कि महाराज! मगधेश्वर के यहां से एक दूत आया है, वह श्रीमान् के चरणों के दर्शन चाहता है क्या आज्ञा होती है। राजा ने कहा अच्छा उसे आदरपूर्वक ले आओ। द्वारपाल उस दूत को ले आया; उसने आतेही महाराज के चरण छूये और अनेक बहुमूल्य रत्न तथा वस्त्राभूषण सेवा में रख हाथ जोड़ निवेदन किया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि हे देव! देवी पद्मावती का सन्देश निज दूत से सुनकर हमारे राजा अत्यन्त सन्तुष्ट और प्रसन्न हुये हैं और मुझे यों निवेदन करने की आज्ञा दी है कि मुझे सब हाल विदित हो गया है अतएव विशेष कहने की कोई आवश्यकता नहीं है, हम आपसे प्रसन्न हैं, अब जिस काम के साधन के लिये यह सब खेल खेला गया है उसका उद्योग आप करिये हमलोग आपके अधीन हैं। दूत का ऐसा वचन सुन राजा यह देख अत्यन्त प्रसन्न हुये कि हमारे बुद्धिमान् मन्त्री यौगन्धरायण के लगाये नीतिवृक्ष का यह उत्तम पुष्प लगा जिसका मधुर फल आगे चलकर प्राप्त होगा। इसके उपरान्त महाराज तथा रानी पद्मावती ने उस दूत का भली प्रकार सत्कार कर अपने कुशल क्षेम का समाचार राजा मगधेश्वर के पास भेज उसे विदा किया। इतने में चण्डमहासेन का भी दूत आन पहुँचा और प्रणाम कर हाथ जोड़ यों निवेदन करने लगा कि हे देव! कार्य्यों के तत्व पहिचाननेवाले हमारे महाराज यहां का वृत्तान्त सुन बहुत प्रसन्न हुये हैं और मुझे यों निवेदन करने की आज्ञा दी है कि आपकी प्रशंसा हम अधिक न करके केवल इतनाही कहते हैं कि आप धन्य हैं जिनके यहां यौगन्धरायण सरीखा बुद्धिमान् और नीति का जाननेवाला मन्त्री है; और धन्य वासवदत्ता है जिसने आपकी भक्तिही को मुख्य मान ऐसा उत्तम काम किया कि जिससे हमारे कुल का सिर सदा के लिये ऊँचा हो गया। मुझे जैसी वासवदत्ता प्यारी है वैसेही पद्मावती भी प्रिय है; और उन दोनों का हृदय जो परस्पर प्रेम से बँध रहा है यह सुन मेरे हर्ष की सीमा नहीं है; अतएव अब आप उस काम की ओर ध्यान दीजिये जिसके लिये इतना कष्ट और परिश्रम उठाया गया है।

दूतवचन सुनतहिँ भयो राजहिँ हर्ष अपार।
सचिवप्रीति बर्धित उदित वासवदत्ताप्यार॥



चौथा तरङ्ग।

फिर दूसरे दिन मन्त्रियों और रानियों को साथ ले राजा वत्सराज ने कौशाम्बी की ओर सेना सहित प्रस्थान किया। सेनादल के चलने से ऐसा जान पड़ता था

कि मानो समुद्र का प्रवाह भूतल पर उमड़ा चला आता है। गजेन्द्र पर आरूढ़ चलते हुये महाराज की उपमा तब दी जाती है जब सूर्य्य भगवान् उदयाचल के सहित चलने लगें। महाराज के ऊपर श्वेत छत्र यों शोभा देता था मानो सूर्य्य के तेज को जीतनेवाला चन्द्रमा सेवा कर रहा हो। उस तेजस्वी महाराज के आस-पास साथ में चलते हुये दूसरे राजा लोग ऐसे प्रतीत होते थे मानो ध्रुव के चारो ओर अन्य तारेगण घूम रहे हैं। पीछे पीछे हाथी पर आरूढ़ दोनों महारानियां यों आ रही थीं मानो अनुराग के साथ लक्ष्मी और पृथ्वी साथ चली आती हों। उछलते कूदते घोड़ों के खुराघातरूपी नखक्षत से भूमि की ऐसी शोभा हो रही थी मानो महाराज ने उसका उपभोग किया हो। आगे आगे नकीबगण और भाट लोग अनेक प्रकार के प्रशंसित वाक्यों से विरुदावलि पढ़ते चलते थे। योंही चलते चलते कुछ दिनों में महाराज वत्सराज उस कौशाम्बीपुरी में आन पहुँचे जहां पहिलेही से बड़ी तयारी हो रही थी और अनेक प्रकार के मङ्गलोत्सव की धूम मची हुई थी। पुरी की शोभा ऐसी हो रही थी मानो प्रवास के उपरान्त उसका पति विदेश से आया हो और उस नायिका ने अपना शृङ्गार धारण किया हो। लाल ध्वजायें जो थीं वही उसकी लाल साड़ी थी, झँझरियां जो थीं वही मानो उसके उत्फुल्ल लोचन थे, प्रत्येक द्वार पर जो मङ्गल कलश धरे थे वही मानो उसके उत्तुङ्ग कुच थे। मनुष्यों का जो कोलाहल चारो ओर हो रहा था वही मानों उसका आनन्दसंलाप था. और स्वच्छ श्वेत महलों की चमक मानों उसकी हँसी थी दोनों महारानियों के साथ ज्योंही पुरीद्वार के अन्दर महाराज की सवारी पहुँची कि सारे नगर में धूम मच गई। नगर की स्त्रियां जो अपने अपने कोठों पर चढ़ कर दर्शनों के लिये एकत्र हुई थीं सो यही जान पड़ता था कि मानो महारानियों की मुखज्योति से पराजित होकर चन्द्रभगवान् की सेना सेवा के लिये उपस्थित हुई हो। एक ओर ऊँची खिड़कियों में से जो झुण्ड की झुण्ड चन्द्रबदनियां झुक झुक कर देख रही थीं तो यह प्रतीत होता था कि स्वर्ग की अप्सरायें विमानों पर बैठ महाराज की, सवारी, देखने आई हों। गवाक्ष अर्थात् झँझरियों से आंख लगाये हुई जो स्त्रियां देख रही थीं उनके बरौनियों से ऐसी शोभा हो रही थी मानो वह झँझरी कामदेव के बाण रखने का तरकस बन गया है। महाराज के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दर्शन करनेवाली किसी दीर्घनयनी के नेत्रों की शोभा यों जान पड़ती थी कि मानो नयन सवारी की शोभा का वर्णन कान से करने के हेतु वहां तक जा रहे हैं। किसी कामिनी के उत्तुङ्ग स्तन शीघ्रता से चलने के कारण कञ्चुकी से बाहर निकले आते हैं बस यही प्रतीत होता है कि मारे उत्साह और हर्ष के वे भी अपने से बाहर हुये जाते हैं । शीघ्रता के कारण झटका लगने से जो किसी कामिनी के मोती के हार के दाने छितरा गये थे तो जान पड़ता था कि मानों उसके हृदयस्थल से पसीना निकलकर बुन्दें छिटक गई हैं। रानी वासवदत्ता को देख देख कर एक दूसरे से हर्षपूर्वक उनका वृत्तान्त कहती थी कि न जाने किस पापी ने इन्हें जला दिया था, ईश्वर ने इन्हें राजी खुशी बचा लिया, दूसरी कहती थी सखि देखो, इनका कैसा उत्तम स्वभाव है कि अपनी सौत पद्मावती के साथ कैसी प्रसन्नता से बैठी हैं और हँस हँस के धीरे धीरे बातें करती हैं। निस्सन्देह शिव भगवान् और विष्णुजी ने इन दोनों का स्वरूप नहीं देखा नहीं तो वे लोग श्री-पार्वतीजी और श्रीलक्ष्मीजी का सौन्दर्य्य भूल जाते। योंही परस्पर बातें करती थीं कि दोनों देवियों की सवारी समीप पहुँचने पर सभी स्त्रियां प्रेमपूर्वक उन पर फूल और मालाओं की वर्षा करने लग जाती थीं। इस प्रकार महाराज वत्सराज अपनी प्रजा के नेत्रों को आनन्द देते हुये महारानियों के सहित निज राजभवन में जा पधारे। प्रात:काल राजमहल की शोभा ठीक वैसी हो रही थी जैसे सरोवर की शोभा कमल से अथवा समुद्र की शोभा चन्द्रमा के उदय से होती है। क्षण काल के अनन्तर अनेक राजे महाराजों की जो उपायन ले लेकर आये थे इतनी भीड़ एकत्र हुई कि मानों संसार भर के सभी भूपाल उमड़ आये हों। फिर आये हुये समस्त राजमण्डल का सन्मान कर और सब को सन्तोष दे, प्रसन्न कर, महाराज अन्त:पुर में पधारे । वहां दोनों महारानियों के बीच महाराज यों शोभा पा रहे थे मानो रति और प्रीति के बीच कामदेव विराजमान हों।

एक दिन महाराज सभा में मन्त्रियों सहित बैठे थे कि कोई ब्राह्मण आकर रोने और यों दोहाई देने लगा कि, "दोहाई है धर्म्मावतार की! इसी जङ्गल के समीप कुछ अहीर के लड़कों ने निरपराधही मेरे पुत्र का पैर काट डाला है।" यह सुन महाराज ने उसी क्षण दूतों को भेज उन लड़कों को धर मँगाया और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनसे पूछा कि तुम लोगों ने क्यों इस ब्राह्मण के पुत्र का पैर काट डाला ? । उन सबों ने हाथ जोड़कर निवेदन किया कि, "हे देव ! हमलोग गोपालक अर्थात् अहीरों के लड़के हैं, आपस में एक स्थान पर खेल रहे थे । हमलोगों के बीच देवसेन नामक एक लड़का है, एक दिन हमलोग खेल रहे थे कि वह एक पत्थर की चट्टान पर जा बैठा और कहने लगा कि मैं तुम लोगों का राजा हूं और तुम सब हमारी प्रजा हो । हमलोगों ने भी खेलही खेल में उसे राजा मान लिया; अब कोई भी उसकी आज्ञा का उल्लङ्घन न करता था, इस प्रकार वह देवसेन मानो उस जङ्गल का राजा हो गया । एक दिन इन्हीं ब्राह्मण महाशय का पुत्र उस रास्ते से जा रहा था किन्तु उसने हमारे राजा गोपालराज को प्रणाम न किया। हमलोगों को आज्ञा हुई कि उसे पकड़ लाओ सो हम सिपाही लोग उसे बांध कर अपने राजा के सन्मुख ले गये । राजा ने पूछा कि तुम हमें बिना प्रणाम किये क्यों जाते थे ? जानते नहीं कि हम यहां के राजा हैं अच्छा हमें प्रणाम करो नहीं तो तुम्हें दण्ड दिया जायगा । यह सुन वह ब्राह्मणपुत्र हँसने लगा । तब तो उस अविनीत को दण्ड देने के लिये हमारे गोपालराज ने हमलोगों को आज्ञा दी कि इसका पैर काट डालो यही इसकी सजा है। हमलोगों की सामर्थ नहीं थी कि प्रभु की आज्ञा न मानें, सो हमलोगों ने उसी चण उसका पैर काट डाला" । जब उन अहीर के लड़कों ने महाराज से यों निवेदन किया तो बुद्धिमान् मन्त्री यौगन्धरायण ने एकान्त में महाराज को यों समझाया कि हे प्रभो ! निस्सन्देह उस स्थान पर कोई निधान (खज़ाना) गड़ा है जिससे वहां रहने से अहीर के लड़के भी ऐसे प्रभावशाली हो रहे हैं, सो वहां चलकर देखना चाहिये। मन्त्री का ऐसा कहना सुन राजा, उन गोपालकों को आगे कर सेना और साथियों सहित वहां जा पहुँचे । भूमि की परीचा कर ज्योंही कुछ थोड़ा सा खुदवाया कि पत्थर का एक यच निकल आया और कहने लगा कि हे राजन् ! आपके पितामह का रक्खा यह असंख्य द्रव्य है, आजतक मैंने इसकी रचा की, अब आप इसे स्वीकार कर सँभालिये । इतना कह वह यच, राजा द्वारा पूजित हो, लोप हो गया और उसके चले जाने पर जान पड़ा कि उस गड़हे में बहुतही भारी निधान (खजाना) गड़ा है । उसमें एक बहुमूल्य रत्नसिंहासन भी निकला, ठीकही है मनुष्य के अभ्यु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दय काल में लक्ष्मी आपसे आप चली आती है। फिर तो उस समग्र निधान तथा सिंहासन को साथ ले और उन गोपालकों का शासन कर महाराज निज राजधानी कौशाम्बी को चले आये। सिंहासन में लगे हुये माणिक्यों की लाल प्रभा जो चारों ओर फैलती थी वह मानो महाराज के भविष्य फैलनेवाले प्रताप की सूचना पहिलेही से दे रही थी। स्थान स्थान पर जो चांदी के काम पर मोती चमक रहे थे सो यही जान पड़ता था कि मानो वह सिंहासन मन्त्री की ऐसी विलक्षण बुद्धि पर प्रसन्न हो हँस रहा है। महाराज जब उस सिंहासन को राजभवन में ले आये तो समग्र नगरनिवासियों ने बड़ी प्रसन्नता के साथ उसके दर्शन किये और चारों ओर भेरी शङ्ख घण्टा इत्यादि की आनन्दध्वनि गूंज उठी। मन्त्री लोगों को भी निश्चय हुआ कि अब महाराज की जयसिद्धि अवश्य होगी, क्योंकि **"होनहार विरवान के होत चीकने पात"**। अतएव उन लोगों ने भी खूब आनन्दोत्सव मनाया। समग्र नगर में खूब चमकती हुई ऊँची ऊँची पताकायें लगाई गईं, जिनसे गगनमण्डल छा गया, जान पड़ता था कि आकाश में विद्युत् का प्रकाश हो रहा है, उसी समय महाराज वत्सराजरूपी मेघ ने खूबही रत्न और सुवर्ण की वर्षा जल की नाईं करी। उत्सव समाप्त होने पर महाराज के चित्त का हाल जानने की इच्छा से यौगन्धरायण ने यों निवेदन किया कि हे प्रभो! यह महासिंहासन जो आपकी कुलपरम्परा में चला आया है अब आपको प्राप्त हुआ है सो आप भी इस पर विराजमान हो इसकी शोभा बढ़ाइये। महाराज ने उत्तर दिया कि जिस सिंहासन पर मेरे पुरखा लोग समग्र पृथिवी को जीतकर बैठे थे उसी पर मेरा बैठना तब लों शोभा नहीं देता जब लों मैं भी सारी पृथिवी का विजय न कर लूं। अतएव मैं उसी दिन इस सिंहासन पर पैर धरूँगा जिस दिन इस पृथ्वी को आसमुद्रान्त अपने वश में कर लूंगा। यों कह महाराज ने उस समय सिंहासन पर बैठना स्वीकार नहीं किया, उचितही है—**"मानिन कहँ सहजहिँ रहत निजकुल को अभिमान"**। यह सुन यौगन्धरायण को बड़ी प्रसन्नता हुई, उनने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे देव! आप धन्य हैं जिनके ऐसे कुलोचित विचार हैं, तो अब वृथा विलम्ब क्यों करना, अब पहिले पूर्व दिशा की जय करने के लिये प्रस्थान करना चाहिये। यह सुन प्रसङ्गवश राजा ने मन्त्री

से पूछा कि उत्तरादि दिशाओं को छोड़ जो पूर्वही से पहिले के राजा लोग जयारम्भ करते आये हैं इसका क्या कारण है ?। यौगन्धरायण ने निवेदन किया कि हे राजन् ! यद्यपि उत्तर दिशा बहुत निर्मल है किन्तु म्लेच्छसंसर्ग के कारण वह निन्दनीय है । पश्चिम दिशा का सत्कार इसलिये प्रथम नहीं होता कि उस ओर सूर्य्यभगवान् का अस्त होता है और दक्षिण दिशा में राक्षसों का निवास है तथा यमराज का स्थान भी उसी ओर है । पूर्व दिशा में आदित्य भगवान् उदय होते हैं, पूर्व दिशा में इन्द्रदेव रहते हैं और पूर्वही दिशा में पतितपावनी श्रीगङ्गा जी का गमन है इसीलिये पूर्व दिशा सब में श्रेष्ठ मानी गई है। देशों में भी वही देश सब से उत्तम माना गया है जो विन्ध्याचल और हिमालय के बीच में है तथा जो श्रीगङ्गाजी के प्रवाह से पवित्र हो रहा है । इसीलिये मङ्गल के चाहनेवाले राजा महाराज लोग पहिले पूर्वही की ओर यात्रा करते हैं और उसी देश में निवास करते हैं जो श्रीगङ्गाजी के जल से पवित्र होता है। आपके पुरखा लोगों ने भी पूर्व दिशा से आरम्भ कर क्रम से सब दिशाओं को जय किया और श्रीगङ्गा जी के समीपही हस्तिनापुर में अपना निवास स्थिर किया था। आपके पितामह श्रीमहाराज शतानीकजी ने साम्राज्य को निजपुरुषार्थ से अपने वश किया था और समग्र देश में कौशाम्बी को परम रमणीय देख इसे अपनी राजधानी बनाया था। यों कहकर जब यौगन्धरायण चुप हुये तो राजा ने पुरुषार्थ को आदर दे मानपूर्वक यों कहा कि सत्य है साम्राज्य में देश नियम कोई कारण नहीं माना जाता जो सत्ववान् पुरुष हैं उनका पुरुषार्थही सम्पत्ति पाने का एक मात्र कारण होता है। चाहे किसी का आसरा भरोसा न हो किन्तु सत्ववान् होने से अकेला ही लक्ष्मी को प्राप्त करता है, क्या आप लोगों ने उस सत्ववान् पुरुष की कथा नहीं सुनी ? मन्त्री ने प्रार्थना की कि महाराज वह कथा क्योंकर है मुझे भी सुनाइये, तो राजा वत्सराज ने दोनों रानियों के साम्हनेही उस कथा का वर्णन यों आरम्भ किया कि—

भूतल में उज्जयिनी नाम से जो प्रसिद्ध नगरी है, वहां पूर्व समय में, कोई आदित्यसेन नामक राजा हो गये हैं, उनके रथ का पहिया भी श्रीआदित्यभगवान् के रथ के पहिये की नाईं कभी कहीं अड़ता न था । जिस समय उनका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चन्द्रलजावनहार छत्र खुलता था तो और राजाओं के छत्र आपही आप दब जाते थे। राजा को संसार के भोगों में से किसी बात की कमी नहीं थी और वह रत्नों के तो वैसे भण्डार हो रहे थे जैसे जल का भण्डार समुद्र है। एक समय राजा ने किसी कारण वश विदेश की यात्रा करी और सेना के सहित श्रीगङ्गाजी के तट पर डेरा डाल दिया। वहां उन्हीं के देश का रहनेवाला कोई गुणवर्म्मा नामक धनी निवास करता था, वह अपनी कन्यारूपी रत्न को उपायन में लेकर पहुँचा और कहने लगा कि हे देव! यह अपूर्व रत्न जो त्रिभुवन में दुष्प्राप्य है, मेरे घर में उत्पन्न हुआ है सो इसके योग्य वर दूसरा कोई न पाकर मैं इसे श्रीमान् के समर्पण करता हूं, ऐसा कह उसने आज्ञा पा कन्या को राजा के सन्मुख उपस्थित किया। राजा उस परम रूपवती को जिसका नाम तेजस्वती थी देखतेही मोहित हो गये, सो राजा ने उसे स्वीकार किया और विधिपूर्वक उससे विवाह कर उसे देवीपद पर अभिसिञ्चन किया, और उसके साथ पुनः उज्जयिनी को लौट आये। फिर तो राजा को रानी से इतना स्नेह बढ़ा कि वे क्षण भर भी उसका साथ न छोड़ते थे और भारी से भारी राजकार्य्यों का देखना भी बन्द हो गया। रानी तेजस्वती की मीठी मीठी बातों से उनका कान इतना भरा रहता था कि प्रजा की आर्त-पुकार उस कान के अन्दर पैठ न सकती थी। राजा जो अन्तःपुर में पैठते तो बाहर न निकलते थे, इसी कारण शत्रुओं के हृदय में पैठा हुआ भय बाहर निकल गया। कुछ दिनों के उपरान्त रानी तेजस्वती से एक परम सुन्दरी कन्या राजा को उत्पन्न हुई, जिसके रूप के आगे सभी का रूप तुच्छ हो गया और राजा का हर्ष तथा पुत्रीस्नेह त्यों त्यों बढ़ता जाता था ज्यों ज्यों वह सयानी होती जाती थी, साथही उनका प्रताप और राज्य भी दिनोदिन वृद्धि पाता जाता था।

एक बेर किसी उद्धत राजा को परास्त करने के लिये राजा आदित्यसेन उज्जयिनी से बाहर गये किन्तु रानी भी एक हाथी पर सवार हो साथही साथ चलीं, मानो सेना की अधिष्ठात्री देवी साथ में वर्तमान हों। महाराज भी एक उत्तम तथा सजे हुये ऊँचे घोड़े पर सवार होने से यों शोभा पा रहे थे मानो कोई पर्वत मेखला और श्रीवृक्ष के सहित चल रहा हो। घोड़ा भी खुरों तथा अगले पैरों को उठा उठाकर यों चञ्चल हो रहा था मानो अपनी शीघ्र गति से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गरुड़ की तेजी को भी जीता चाहता है, धीर दृष्टि से जो गला ऊँचा कर वह पृथिवी को देख रहा था सो मानो वह विचारता था कि मेरी गति के लिये इस भूमि पर पर्य्याप्त स्थान है या नहीं। कुछ दूर आगे चलने पर राजा को समथर भूमि मिली सो उन्होंने तेजस्वती के दिखाने के लिये घोड़े को एड़ मारी और तेज किया। एड़ का मारना था कि घोड़ा हवा हो गया और ऐसी तेज़ी से दौड़ा कि क्षण भर में नैनों से लोप हो गया। यह देख सारी सेना विकल हो गई और हजारों सवार राजा के पीछे दौड़े किन्तु राजा का घोड़ा इतनी तेजी से भागा था कि कोई भी उसे पा न सका और सब के सब लाचार हो लौट आये। तब तो मन्त्री लोग सेना के सहित रोती हुई रानी को साथ ले उज्जयिनीपुरी को पीछे आ गये और मन में अनेक प्रकार की अनिष्ट शङ्का करने लगे कि हाय! वह घोड़ा महाराज को कहां ले गया होगा और महाराज की इस समय कैसी दशा होगी। फिर उन लोगों ने प्रजा को धीरज बँधाया और बुद्धिमत्ता तथा न्याय से राज्य का प्रबन्ध करने लगे। उधर वह घोड़ा जो महाराज को लेकर उड़ा सो क्षण भर में विन्ध्याचल के ऐसे महाघोर जङ्गल में जा निकला जहां बड़े बड़े भयानक सिंह इत्यादि जन्तु घूम रहे थे। दैवयोग से जब वह घोड़ा वहां ठमका तो महाराज उस पर से उतर पड़े, देखते क्या हैं कि यह बड़ाही घोर जङ्गल है, जहां मनुष्य का नाम भी नहीं है। फिर तो उन्होंने उस तुरङ्ग को प्रणाम कर कहा कि हे देव! इस प्रकार प्रभु पर रुष्ट होना उचित नहीं है, सो अब तुम मुझे धीरे से उचित मार्ग द्वारा राज्य पर ले चलो। वह घोड़ा भी कोई शापच्युत दिव्य पुरुष था, यह सुन उसे बड़ा पछतावा हुआ सो वह धीरे से महाराज को पीठ पर सवार करा उत्तम शीतल मार्ग से चलता हुआ पुनः राज्य पर लौट आया। सन्ध्या होते होते उसने सौ योजन की मजिल मारी और उज्जयिनी के समीप आ पहुँचा मानो सूर्य्यभगवान् ने उसकी चाल की तेजी से अपने सातों घोड़ों को पराजित मान उन्हें अस्ताचलकन्दरारूपी तबेले में बांध दिया। अन्धकार अधिक हो रहा था और नगर के सभी फाटक बन्द हो गये थे, स्मशान महा भयानक रूप धारण कर रहा था, सो वह बुद्धिमान् घोड़ा रात बिताने के लिये महाराज को नगर के बाहरवाले उस एकान्त मठ में ले गया जहां अनेक विप्र लोग रहते थे। राजा ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखा कि वह स्थान रात बिताने योग्य है सो थके हुये घोड़े से उतर उसी मठ में चले। ज्योंही उन्होंने उसके अन्दर पैर धरा कि वहां के रहनेवाले विप्रों ने रोका और धर कर कहने लगे कि तू चोर है अथवा श्मशान का कोई पागल है जो हमारे घर में यों बेधड़क घुसा आता है। इस प्रकार चांव चांव करते हुये सभी बाहर निकल आये, इतने में विदूषक नाम एक गुणवान् और सत्ववान् ब्राह्मण भी उसी मठ से बाहर निकला। इस द्विज ने अग्निदेव को अपनी तपस्या से सन्तुष्ट किया था और उनकी प्रसन्नता से इसने एक अतीवोत्तम खड्ग भी पाया था जो ध्यान करतेही आप से आप इसके हाथ में आ जाता था, वह शरीर से पुष्ट और चित्त से हिम्मती और साहसी था। उसने राजा को देखतेही उनकी भव्य आकृति से अनुमान किया कि यह कोई अच्छे कुल का भला आदमी है अथवा कोई देवता छिपे भेष में यहां आया है; सो उसने उन सब कलहप्रिय ब्राह्मणों को डांटा और आदरपूर्वक महाराज को अन्दर ले जाकर टिकने के लिये उत्तम स्थान दिखलाया। फिर दासियों द्वारा उनके चरणों की धूलि धुलवाकर उसने राजा के योग्य रसोई भी तयार कराई और उन्हें अच्छी तरह भोजन करा उनके घोड़े को भी दाना घास देकर उचित स्थान पर बांध दिया। फिर महाराज के सोने के लिये बिछौना बिछा कहने लगा कि, हे प्रभो! अब आप निश्चिन्त हो शयन करें, मैं पहरे पर बैठता हूं जान पड़ता है कि आप बहुत थक गये हैं सो थोड़ा विश्राम करने से आप पुनः स्वस्थ हो जांयगे। महाराज तो नींद में सो गये और उस ब्राह्मण ने अपने खड्ग का ध्यान किया, वह झट उसके हाथ में आ गया, सो वह सारी रात महाराज के शरीर का पहरा देता रहा। प्रातःकाल ज्योंही महाराज जागे त्योंही बिना कहेही विदूषक ने उनका घोड़ा कस कर तयार कर दिया, जिस पर सवार हो वे विदूषक से विदा हो, नगरी के फाटक की ओर चले। दूरही से उन्हें आते देख नगर के सभी लोग प्रसन्नतापूर्वक मिलने को दौड़े, और सारी पुरी तथा सेना और राजमहल में यह धूम मच गई कि महाराज राजी खुशी आ रहे हैं। थोड़ीही दूर जाते जाते मन्त्री और सेनापति तथा राज्य के सभी मुख्य कार्य्यकर्त्ता लोग आन उपस्थित हुये, जिनके साथही साथ महाराज राजमहल में पधारे, और रानी तेजस्वती से मिलकर उनकी चिन्ता दूर की। नगर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में चारो ओर मङ्गल बाजे बजने लगे और झण्डियां तथा बन्दनवार इत्यादि से खूबही सजावट की गई । तमाम दिन सारी प्रजा ने योंही महाराज के लौट आने पर महोत्सव मनाया । दूसरे दिवस राजा आदित्यसेन ने उस मठ के सब द्विजों को विदूषक के साथ अपने यहां बुलवा भेजा, फिर सब के साम्हने रात्रि का वृत्तान्त सुना महाराज ने एक सहस्र गांव विदूषक को पारितोषिक में दिया, फिर छत्र और वाहन प्रदान कर उसे राज्य के ऊँचे पद पर स्थापन किया । महाराज की ऐसी कृतज्ञता देख सब नगरनिवासी बहुतही प्रसन्न हुये । इस प्रकार वह गरीब विदूषक एक सामन्त के तुल्य प्रतापी और धनी हो गया । ठीकही है—

"सज्जनतरु प्रति जो कियो उपकृति जल को दान ।
अवसि देति अति मधुर फल साखी सकल जहान ॥"

विदूषक ने अपने हृदय की उदारता से उन पाये हुये गावों को सकल मठधारियों में बाँट कर अपना हिस्सा लिया और महाराज के समीप रह उनकी आज्ञा के अनुसार सब काम काज करने लगा और गावों की आमदनी भी उन ब्राह्मणों में बांटकर अपना भाग ले लेता था। कुछ दिनों के उपरान्त वे सब ब्राह्मण अपने अपने को प्रधान बनाने की इच्छा करने लगे और धन के मद से उन्मत्त हो विदूषक को तुच्छ समझने लगे । क्रमशः उन लोगों में सात दल भिन्न भिन्न हो गये और सदा एक दूसरे से लड़ते तथा अनेक प्रकार के उत्पात दुष्टग्रहों की नाईं करने लगे । वे सब तो ऐसे अधमी हुये, किन्तु विदूषक उनसे कुछ न बोलता था कारण यह कि, "अल्पसत्व पर धीरजन कबहुँ करहिँ नहिँ कोप" । योंही वे लोग नित्यही कलह मचाया करते थे कि एक दिन कोई अत्यन्त निठुर स्वभाववाला चक्रधर नामक ब्राह्मण उनके पास पहुँचा और कहने लगा कि, अरे शठो ! वह दिन तुम्हें भूल गया, जब तुम लोग भिक्षा मांगते फिरते थे आज इस लक्ष्मी को पाकर ऐसे उन्मत्त हो गये हो कि आपस में लड़कर गावों का नाश किये डालते हो । इसमें जो सच पूछो तो विदूषक काही दोष है जिसने तुम्हारी उपेक्षा कर रक्खी है, इसमें सन्देह नहीं कि थोड़ेही दिनों में फिर तुम्हारे हाथ में भिक्षा मांगने का ठिकड़ा दिखाई देगा, क्योंकि "बरु अनाथ बसिबो भलो नहिं बहुनायक गाम। बन उजाड़ करि देत हैं बहु मतङ्ग करि धाम"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सो यदि लक्ष्मी को स्थिर रखना हो तो मेरा कहना मान कर आपस में एक को सरदार बनाओ। यह सुन वे सब अपने अपने को प्रधान बनाने के लिये झगड़ने लगे। चक्रधर ने देखा कि ये सब महा मूढ़ हैं सो उनसे कहने लगा कि आप लोग आपस में मत लड़िये यहां के श्मशान पर आज तीन चोर सूली पर लटकाये गये हैं, जो सत्ववान् पुरुष उन तीनों को नाक आज रात को जाकर काट लावे वही वीर आप लोगों में प्रधान बनने योग्य है। विदूषक भी वहीं समीपही खड़ा था सो जब चक्रधर ने उन विप्रों से ऐसा कहा तो विदूषक बोल उठा कि "करो न इसमें हानि क्या है जिसकी हिम्मत पड़े वह जाकर उन तीनों की नाक काट लावे"। उन ब्राह्मणों ने उत्तर दिया कि हमारी सामर्थ्य तो नहीं है, जिसकी हिम्मत पड़े वह जाय हम यहीं बैठे हैं। तब तो विदूषक ने कहा "बहुत अच्छा मैं इस काम के करने की हिम्मत करूँगा"। वे मूढ़ इसे महा कठिन जान कहने लगे अच्छी बात है ऐसा कर दिखाओगे तो तुम्हीं को हमलोग अपना स्वामी मान लेंगे, यह बात पक्की रही। इस प्रकार बाजी लगा, रात होने पर उन ब्राह्मणों से कह विदूषक श्मशान की ओर चल पड़ा। ध्यान करतेही वह आग्नेय खड्ग उसके हाथ में आ गया जिसे ले वह बेखटके उस घोर भयानक श्मशान में बैठा। एक ओर कुत्ते भूंक रहे हैं दूसरी ओर गीध और हड़गिल मुर्दों का मांस नोंचने के लिये डैना फैलाये चोंच बाये उड़े चले आते हैं, कहीं सियार चिल्ला रहे हैं कहीं भूत प्रेत पिशाच मुर्दों की खोपड़ियों से आपस में लड़ रहे हैं, कहीं चिता चट चट कर जल रही है, कहीं चिराइन उड़ती और कहीं दुर्गन्धियुत धूम चारो ओर मण्डल बांधकर छा रहा है। ऐसे डरावने श्मशान पर पहुँच विदूषक ने देखा कि एक ओर कोने में तीन चोर सूली पर लटके हैं। यथार्थ में तो वे मर गये थे किन्तु श्मशान के बेताल उनके शरीर में पैठ उन्हें सजीवित् बनाये थे। जब यह उनके पास पहुँचा तो उन सबों ने इसे मुक्के से मारना आरम्भ किया। वह तनिक भी नहीं हिचका और अपनी तलवार खींच इसने भी चलाई, सच है "धीर पुरुष के भय हिय नाहीं"। तलवार के लगतेही बेताल लोग चोर के शरीर से निकल भागे और उनने तीनों की नाक काट अपने दुपट्टे के एक कोने में बांध ली और घर को लौटा, देखता क्या है कि उसी श्मशान पर कोई सन्यासी मुर्दे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर बैठा कुछ मन्त्र जप रहा है । कौतुकवश यह जानने की इच्छा सें कि यह क्या करता है, विदूषक उसके पीछे छिपकर तमाशा देखने लगा । कुछ देर के बाद उस मुर्दे ने जिस पर वह सन्यासी बैठा था नीचे से पड़ेहो पड़े एक फुफकार मारी और उसके मुंह से आग का ज्वाला निकलने लगी और नाभी में से बहुत से सरसों के दाने उड़कर छितरा गये । सरसों को तो उस सन्यासी ने बीन कर उठा लिये और हाथ से एक थापी मुर्दे को मारकर कहा कि 'उठ खड़ा हो', मुर्दा (वेताल के आवेश के कारण) उसी दम खड़ा हो गया और वह सन्यासी उसके कन्धे पर चढ़ चलता हुआ और विदूषक भी चुपचाप पीछे पीछे लग गया । कुछ-दूर जाकर एक देवी का मन्दिर दिखाई पड़ा जिसके द्वार पर वह सन्यासी वेताल के कन्धे से उतरा और अन्दर पैठा । बेताल तो धम से भूमि पर गिर पड़ा और विदूषक द्वार से चिपक कर तमाशा देखने लगा । सन्यासी ने चिरकाल तक श्री भगवती की पूजा की फिर निवेदन किया कि देवि ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरा इष्ट बरदान दीजिये नहीं तो मैं अपना सिर चढ़ा कर आपको प्रसन्न करता हूं । इस प्रकार जब उस मन्त्र साधनेवाले ने साहङ्कार भाषण किया तो मन्दिर में स यह शब्द हुआ कि तू राजा आदित्यसेन की कन्या को यहां लाकर बलिदान चढ़ा तब तेरी इच्छा पूरी होगी । इतना सुन वह 'बहुत अच्छा' कह बाहर निकल आया और थापी मार उसने बेताल को उठाया जो फुफकार मार अग्नि की ज्वाला फेंकता उठ खड़ा हुआ, फिर वह सन्यासी उसी पर चढ़ राजपुत्री को लाने के लिये आकाशमार्ग से उड़ गया । बिदूषक यह सब तमाशा देख वहीं खड़ा खड़ा विचारने लगा कि "धिक् है मुझे जो मेरे जीतेही यह दुष्ट उस विचारी निरपराधिनी कन्या को मारे ! अच्छा मैं यहीं ठहरता हूं , आने तो दो इस शठ को, तब देखा जायगा" । यह सोच वह उसी स्थान पर एक कोने में दबक बैठ रहा । उधर वह सन्यासी उड़ता हुआ खिड़की के मार्ग से राजमहल में पैठा जहां राजकुमारी निद्रा में अचेत सो रही थी, उसे उठा वह काला भुसुण्ड सन्यासी, क्षण भर में आ पहुँचा, मानो राहु चन्द्रकला को निज गोद में उठा लाया हो । राजपुत्री उसकी गोद में माता पिता को पुकार पुकार के रो रही थी किन्तु वह निर्दयी दुष्ट किसी की कब सुनता था । वेताल को बाहरही छोड़ वह राजकुमारी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को लिये हुआ देवीमन्दिर के अन्दर पैठा, और ज्योंही उसकी हाथ पैर बांध उसने बलिदान के लिये तलवार उठाई कि त्योंही ललकारता हुआ विदूषक भी अन्दर आया और बोला "क्योंरे दुष्ट ! मालती पुष्प को पत्थर से रौंदते तुझे दया नहीं आती जो तू इस निर्दोष सुन्दरी पर खड्गप्रहार किया चाहता है ?" इतना कह झट उसने उसका केश धर अपनी खड्ग का एक हाथ ऐसा मारा कि सन्यासी का मुण्ड धड़ से अलग हो भूमि पर लोटने लगा । राजपुत्री भय के मारे कांप रही थी उसे विदूषक ने धीरज बँधाया। जब उसने सन्यासी का सिर कटा हुआ देखा तो धन्यवाद की दृष्टि से अपने प्राणदाता विदूषक की ओर आंसू भरी दृष्टि से देखने लगी। विदूषक ने कहा अब कुछ चिन्ता मत करो वह दुष्ट मारा गया, देवीजी ने तुम्हारी रक्षा करी। फिर वह बिचारने लगा कि मैं अब इस राजपुत्री को यहां से राजा के अन्त:पुर में क्योंकर पहुँचाऊँ। इतनेही में यों आकाशवाणी हुई कि "हे विदूषक ! सुन, जिस सन्यासी को तूने मारा है इसे एक बड़ा वेताल सिद्ध है तथा अभिमन्त्रित सरसों भी इसके पास हैं, इसे समग्र पृथ्वी के राज्य तथा राजकुमारी के पाने की इच्छा हुई थी इसीसे यह ऐसा उन्मत्त हो गया था, सो बहुत अच्छा हुआ जो आज यह मूढ़ मारा गया। अब इसको उन सरसों को तू ले ले और केवल आजही की रात तुझको आकाश में उड़ने की शक्ति दी जाती है। इतना सुन विदूषक ने उस सन्यासी के कपड़े से उन सरसों के दानों को खोल लिया और राजकुमारी को गोद में उठा आकाशमार्ग से उड़ना चाहताही था कि इतने में दूसरी आकाशवाणी फिर यों हुई कि, "हे महावीर! आज से पूरे एक महीने उपरान्त तुम पुन: इस मन्दिर में आना, भूलना मत।" इतना सुन वह श्रीदेवीजी की कृपा से राजकुमारी को लिये आकाश से उड़ चला, और खिड़की द्वारा राजमहल में उसे पहुँचा धीरज बँधा कहने लगा कि अब तुम अपने घर में आ गई और वह दुष्ट भी मारा गया, तुम कुछ चिन्ता मत करो मैं अब जाता हूं क्योंकि प्रात:काल होने पर मेरी उड़ने की शक्ति जाती रहेगी फिर मुझे सब लोग देख लेंगे तो बड़ी कठिनता होगी। तब तो वह राजपुत्री भय से कांपती हुई बोली कि यदि आप चले जांयगे तो मेरे प्राण मारे डर के निकल जांयगे, सो जैसे आपने इतना कष्ट उठाकर मेरे प्राण बचाये हैं वैसेही इतनी कृपा और भी कीजिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि इस समय मुझे अकेली छोड़कर मत जाइये । कवियों का यह वाक्य बहुतही ठीक है कि 'सज्जनकेर इहै गुण भारी। करहिँ विनीतवचन अनुसारी'॥ सो राजकुमारी का ऐसा वचन सुन विदूषक ने विचारा कि यदि मैं इस समय इसे अकेली छोड़कर जाता हूं तो यह मारे भय के प्राण त्याग देगी, तो फिर मैंने राजा की क्या भक्ति करी, अस्तु मेरा जो होना हो सो हो, मैं तो अब यहां से नहीं जाता । ऐसा विचार वह सत्ववान् विदूषक रात को वहीं राजभवन मेंही लेट रहा और परिश्रम तथा जागने के कारण पड़तेही घोर निद्रा में सो गया, किन्तु राजकुमारी रात भर जागतीही रही, भय के मारे उसकी पलक पल भर भी न झपकी । रात भर के परिश्रम से ये बहुत थके हैं और इस समय जो आंख लग गई है सो इन्हें जगाना न चाहिये, ऐसा विचार दिन चढ़ने पर भी उसने विदूषक को न जगाया । इतने में अन्तःपुरचारिका सखियां आ गईं, किसी ने उसे इस प्रकार सोया देख, जाकर महाराज आदित्यसेन से निवेदन किया । राजा ने इसका ठीक निश्चय करने के लिये अपने निज के दूतों को भेजा और उन्होंने भी आकर हाथ जोड़ यही निवेदन किया कि कृपानिधान ! हमलोगों ने अपनी आंखों से वहां एक पुरुष को सोया देखा और वह विदूषक है । महाराज को विदूषक का नाम सुनकर और भी आश्चर्य तथा कौतुक हुआ कि यह क्या बात है कुछ समझ में नहीं आता सो उन्होंने उसे राजपुत्री के भवन से अपने समीप बुला भेजा और पूछा कि यह बात क्या है ? आप अन्तःपुर में क्यों और कैसे आये ?; उसने भी सारा हाल आरम्भ से लेकर महाराज को कह सुनाया । फिर दुपट्टे की गांठ खोलकर उन तीनों चोरों की कटी हुई नाक दिखलाई और सन्यासी से पाये सरसों के दाने जिनमें भूमि फाड़ डालने की शक्ति थी, महाराज के सन्मुख रख दिये । महाराज ने इस बात को सत्य मान उन मठधारियों को, चक्रधर के सहित बुलवा भेजा और उनसे पूछकर मूल कारण का निश्चय किया, फिर स्वयं श्मशान पर जाकर उन नककटे चोरों को देख देवीमन्दिर में पहुँच सिरकटे सन्यासी को भी पाया । जब महाराज को इस बात पर पूरा विश्वास आ तो वे निज सुता के प्राण बचानेवाले विदूषक पर अत्यन्तही प्रसन्न हुये और उसी के साथ निज कन्या का विवाह कर दिया । ठीकही है—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

"सज्जन परमउदारमन उपकृति हिय धरि लेहिँ।
जग में को अस वस्तु जिहिँ ह्वै प्रसन्न नहिँ देहिँ" ॥

राजकुमारी के हाथ को कमल मान कर लक्ष्मी उसमें निवास करती थी और उसी राजकुमारी का पाणिग्रहण विदूषक ने किया था, इसी कारण उसे लक्ष्मी आपसे आप प्राप्त होती थी। तब तो वह अपनी भार्य्या के साथ राजसी ठाठ से महाराज आदित्यसेन के राजभवन में रहने लगा। दैव की प्रेरणा जो हुई तो एक दिन रात के समय राजपुत्री ने अपने पति से कहा कि हे नाथ! आप भूल गये कि देवीजी के मन्दिर में चलती समय यह आकाशवाणी हुई थी कि एक महीने के उपरान्त फिर इसी स्थान पर आना, सो आज वह महीना ठीकोठीक पूरा हुआ। निज प्रिया की बात सुन विदूषक उस आकाशवाणी को स्मरण कर अत्यन्त प्रसन्नता से कहने लगा कि हे प्रिये! तुमने भली सुधि दिलाई मैं तो भूलही गया था। इतना कह उसने मानो पारितोषिक में अपनी प्यारी को आलिङ्गन कर लिया। फिर जब राजकुमारी सो गई तो वह अपना आग्नेय खड्ग हाथ में ले अन्तःपुर से बाहर निकल उसी सन्नाटी रात में देवीमन्दिर की ओर दृढ़तापूर्वक चला। वहां पहुँच उसने एक आवाज़ दी कि 'मैं विदूषक अपने नियत समय पर आ गया हूं'। साथही भीतर से उत्तर मिला "तो अन्दर चले आओ"। इतनेही में मन्दिर के कपाट खुल गये; अन्दर पैठतेही विदूषक देखता क्या है कि एक परम सुन्दरी दिव्य वस्त्रों को धारण किये हाथ जोड़े देवी जी की पूजा कर रही है जिसके शरीर की दिव्य कान्ति से चारो ओर उँजेला सा हो रहा है मानो कामदेव की सञ्जीवनी औषधि साक्षात् खड़ी हो। पूजा समाप्त कर उसने बहुतही आदर और सन्मान के साथ विदूषक का स्वागत किया, फिर स्वस्थ हो बैठने पर विदूषक ने आश्चर्य के साथ पूछा कि हे कल्याणि! आप कौन हैं? और इस मन्दिर में क्या कर रही हैं? उसने कहा कि मैं विद्याधरी कन्या हूं मेरा नाम भद्रा है, इच्छानुसार घूमती फिरती उस दिन इधर निकल आई थी सो मैंने तुम्हें देख पाया था, तुम्हारे गुणों से मैं मोहित हो गई थी सो मैंनेही तुम्हें यहां बुलाने के लिये वह आकाशवाणी की थी। आज विद्याप्रयोगों को मैंने इसलिये राजकुमारी के पास भेजा था कि वह तुम्हें स्मरण दिलावे। बस तुम्हारी बाट मैं इस मन्दिर में जोह रही हूं अतएव

हे सुन्दर ! मैंने अपना यह शरीर तुम्हें अर्पण किया तुम मेरे साथ विवाह करो। जब उस दिव्य विद्याधरी ने विदूषक से यों कहा तो उसने भी गान्धर्वरीति से उसका पाणिग्रहण किया, और अपने पुरुषार्थ के फल में उसका दिव्य उपभोग पाया। उधर रात बीतने पर राजपुत्री जो जागी तो निज शय्या पर अपने प्यारे पति को न पाकर अत्यन्त दुःखित हुई, और रोती हुई लड़खड़ाती अपनी माता के पास पहुंच कहने लगी कि हे माता ! रात को न जाने वे कहां चले गये, फिर अपने अपराध से कांपती हुई उसने वह सब हाल भी कहा कि मैंनेही अभाग्यवश उन्हें एक मास के अवधिवाले दिन का हाल चेताया था। इतना कह वह अपनी भूल पर पछता पछता रोने लगी। माता ने उसे धीरज दिया और कहा कि अच्छा मैं अभी उनकी खोज करती हूं तू कुछ चिन्ता न कर। यों कह उसने अपने पति राजा आदित्यसेन से जाकर सब हाल सुनाया, राजा भी उसी क्षण वहां आ गये और घर को जामातृशून्य देख परम व्याकुल हुये। फिर यह विचार कर कि वह उसी श्मशान के बाहरवाले मन्दिर में गया होगा, राजा स्वयं वहां पहुंचे। विद्याधरी ने अपने विद्याप्रभाव से उसे लोप कर दिया, सो बहुत कुछ खोजने पर भी महाराज विदूषक को न पा सके। तब तो वे लाचार होकर घर लौट आये। इधर निराशा से राजपुत्री अपना देह परित्याग करने पर उतारू हुई सो किसी ज्ञानी ने आकर यों कहा कि हे पुत्रि ! तू किसी प्रकार की अरिष्टशङ्का मत कर तेरा वह पति राजी खुशी जीता जागता है परन्तु इस समय वह दिव्य भोगों के फेर में पड़ा है, शीघ्रही तेरे पास आवेगा"। यह सुन राजपुत्री ने धीरज बाँधा और पति के लौट आने की आशा से शरीर का त्याग न किया। उधर विदूषक उस भद्रा नाम्नी प्रिया के साथ सुख से रहता था कि एक दिन योगेश्वरी नाम की कोई सखी उस विद्याधरी के पास आ एकान्त में कहने लगी कि हे सखि ! मनुष्य का साथ करने के कारण सब विद्याधर लोग तुम पर क्रुद्ध हो रहे हैं और तुम्हारा अनिष्ट किया चाहते हैं सो पूर्व समुद्र के पार जो कार्कोटक नाम नगर है उसके आगे एक शीतोदा नाम पवित्र नदी है उसे लांघ कर उदय नामक एक महागिरि सिद्धक्षेत्र पड़ता है जहां ये विद्याधर लोग नहीं जा सकते। सो तू इस समय वहीं चली जा और अपने इस प्यारे मनुष्य के लिये कुछ चिन्ता मत कर यह

किसी न किसी प्रकार आपही वहां पहुँच जायगा, क्योंकि यह बड़ा सत्ववान् और साहसी पुरुष है। तू यह सब हाल इससे कह के चली जाइयो जिसमें वहां पहुँचने में इसे सुभीता हो। जब उस योगेश्वरी सखी ने यों कहा तो भद्रा भय के मारे कांप उठी और यद्यपि विदूषक से उसे बहुतही अधिक प्रेम था तथापि उसे वहीं छोड़ उसने सिद्धक्षेत्र जाने का विचार मनमें ठान लिया। फिर सब हाल विदूषक से कह अपनी अँगूठी उसे दे वह भोर होते होते अन्तर्धान हो गई। इधर विदूषक क्या देखता है कि न वह मन्दिर है न भद्रा है, अकेला आप एक सूनसान स्थान में पड़ा है। उसने समझ लिया कि यह सब प्रपञ्च विद्याधरों का है, फिर अपने हाथ में अँगूठी को देख उसे खेद और आश्चर्य साथही हुआ। वह भद्रा की बातों को स्वप्न सा स्मरण करता हुआ विचारने लगा कि वह तो मुझे उदय पर्वत का रास्ता बताकर गई है सो उससे मिलने के लिये मुझे वहीं चलना चाहिये किन्तु यदि लोग मुझे देखकर राजा आदित्यसेन से खबर कर देंगे तो वे मुझे कदापि घर से बाहर न निकलने देंगे। सो कोई ऐसी युक्ति करनी चाहिये जिसमें यह काम सिद्ध हो। ऐसा विचार उसने अपना यथार्थ रूप यों बदल डाला कि सब उत्तम वस्त्रों को फाड़, शरीर में धूल मट्टी पोत, 'हा भद्रे! हा भद्रे!' बकता हुआ सड़क और गलियो में पागलों की नाईं दौड़ने लगा। वहां के लोगों ने जो उसे देखा तो 'विदूषक मिला, विदूषक मिला' कहकर कोलाहल करने लगे। महाराज को जब खबर लगी तो वे स्वयं चले आये और उसकी ऐसी दशा अपनी आंखों से देख सिपाहियों द्वारा धरवाकर उसे राजमहल में ले गये। इष्ट मित्र, नौकर चाकर, बन्धु बान्धव जो कोई आकर कुछ भी उससे पूछता तो वह उत्तर में 'हा भद्रे! हा भद्रे!' के अतिरिक्त कुछ भी न कहता। वैद्य लोग अनेक प्रकार की गुणकारी औषधियां तथा उत्तमोत्तम सुगन्धित लेप बना बनाकर उसके शरीर में लगाते किन्तु वह भस्म और धूलि उठाकर देह में मल लेता और हा भद्रे! हा भद्रे! रात दिन चिल्लाता था। पतिस्नेह से राजकुमारी ने अपने हाथ से भोजन की थाली ला परोसी किन्तु उसने लात मारकर सब फेंक दिया। इसी प्रकार उसे कुछ दिन वहां बीते, जो कपड़े पाता फाड़ डालता, जो वस्तु पाता उठाकर फेंक देता, अथवा तोड़ फोड़ डालता, और वही धुन, हा भद्रे! हा भद्रे! की लगाये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहता। राजा आदित्यसेन से वैद्यों ने कहा कि महाराज! ये किसी औषधि से चङ्गे न होंगे इस प्रकार रखने से कदाचित् ये अपने प्राण परित्याग कर दें तो व्यर्थ की ब्रह्महत्या आपको लगेगी, इसलिये इन्हें छोड़ दीजिये, सम्भव है कि कुछ दिनों तक स्वतन्त्र घूमने फिरने से अच्छे हो जांय। वैद्यों की यह सलाह सुन, राजा ने विदूषक को छोड़ दिया, और वह भी घर के बाहर निकल अंगूठी पहिने हुआ धीरे से भद्रा की खोज में चला। उसने सीधेही पूरब का रास्ता लिया और महीनों रात दिन चलाही गया, चलते चलते मार्ग में उसे पौण्ड्रवर्धन नामक एक नगर मिला। देखा कि एक वृद्धा ब्राह्मणी अपने घर के द्वार पर बैठी है, विदूषक ने उससे कहा कि हे माता! यदि आज रात के टिकने के लिये स्थान देतीं तो मैं कहीं कोने सोने में पड़ रहता। इस प्रकार आसरा पाकर वह ब्राह्मणी उठी और घर के अन्दर जा उसे बुला अत्यन्त दुःख से यों कहने लगी कि हे पुत्र! मैंने यह सारा घरही तुझे दिया सो तू इसे स्वीकार कर, क्योंकि अब मेरे जीने की कुछ भी आशा नहीं है। विदूषक ने पूछा कि हे माता! ऐसा तुम पर क्या दुःख है, जो इस प्रकार जीवन से निराश हो गई हो? बुढ़ी ने कहा अच्छा सुनो, मैं तुमसे कहती हूं—

हे पुत्र! इस नगर के राजा का नाम देवसेन है जिसे एक परम सुन्दरी कन्या है। राजा ने बड़े दुःख से उसे पाया था, इसी कारण उसका नाम दुखिया रक्खा। जब वह युवती हुई तो उसके विवाह की इच्छा से महाराज ने राजा कच्छपनाथ को अपने यहां बुलाया, यहां आकर ज्योंही वह राजकन्या के महल में पहुँचे त्योंही उनका शरीर छूट गया। तब तो राजा ने बहुत उदास होकर लाचार एक दूसरे राजा के यहां तिलक भेजा किन्तु उसकी भी वही दशा हुई। यह देख दूसरे सभी राजा लोग डर गये और जब कोई भी उससे विवाह करने पर सम्मत नहीं हुआ तो राजा ने अपने सेनापति को यह आज्ञा दी कि आज से लेकर नित्य क्रमशः प्रति घर से एक एक पुरुष ले आया करो, चाहे वह ब्राह्मण हो चाहे क्षत्री। उसे लाकर मेरी पुत्री के शयनगृह में रख दिया करो, देखें कबतक और कितने आदमी इस प्रकार मरते हैं। जो इस परीक्षा से उत्तीर्ण होकर जीता बचेगा उसी के साथ इस कन्या का विवाह किया जायगा। राजा की ऐसी आज्ञा सुन सेनापति ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नित्य एक एक घर से क्रमश: एक एक पुरुष का ले जाना आरम्भ किया। वहां तो जो गया सोही प्रात:काल मरा पाया गया; यों सैकड़ों पुरुषों की जान जा चुकी है होते होते आज मुझ भाग्यहीन के सुत की पारी आई है, मेरे केवल एकही एक पुत्र है वहां जाने से अवश्य उसकी मृत्यु होगी फिर मैं जीकर क्या करूँगी, अवश्य कल प्रात:काल अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगी। इस कारण अपने जीतेही तुझ गुणवान् को यह घर दिये जाती हूं कि जिसमें पीछे मुझे किसी प्रकार का दु:ख न हो। जब ऐसा उस बुड्ढी ने कहा तो विदूषक ने निवेदन किया कि हे अम्ब! यदि ऐसी बात है तो तुम कुछ भी चिन्ता मत करो, तुम्हारे पुत्र के बदले मैं जाऊँगा, मुझे सिद्धियोग के कारण वहां जाने में कुछ भी भय नहीं है। जब यों विदूषक ने कहा तो ब्राह्मणी बोली कि यदि योंही है तब तो मेरे पुण्यों से तुम कोई देवता मुझे आ मिले हो, सो हे पुत्र! हमलोगों के भी प्राण बचाओ और अपनी भी रक्षा करो। अस्तु, जब सन्ध्या हुई तो सेनापति के सिपाही उस ब्राह्मणी के पुत्र को लिवा जाने के लिये आये और विदूषक बुड्ढी से आज्ञा ले उन लोगों के साथ हो गया। राजभवन में पहुंच कर विदूषक ने देखा कि राजपुत्री पूर्ण युवती और यौवनमद से उन्मत्त हो रही है, रात के समय जब वह अपने पलङ्ग पर सो गई तो इसने अपने खड्ग का स्मरण किया, ध्यान करतेही वह हाथ में आ पहुँचा जिसे धारण कर विदूषक पहरा देने और यह विचारने लगा कि देखना चाहिये वह कौन है जो यहां आये हुये पुरुषों को मार डालता है। जब सब लोग सो गये और भरपूर सन्नाटा हुआ तो यकायक द्वार के दोनों कपाट आपसे आप खुल गये। विदूषक ने देखा कि एक भयानक राक्षस साम्हने से चला आता है द्वार पर पहुँचतेही वह अपना लम्बा और दृढ़ हाथ कोठरी के अन्दर डाल विदूषक को पकड़ने की इच्छा से इधर उधर घुमाने लगा। साथही विदूषक ने आग्नेय खड्ग से एक ऐसा हाथ मारा कि उस राक्षस की भुजा कट कर भूमि पर गिर पड़ी। बाहु कटने पर वह राक्षस विकल होकर भागा और विदूषक के सत्व से भयभीत हो उसने पुन: लौटने का नाम भी न लिया। जब राजकुमारी जागी तो वह कटी हुई भुजा को देख पहिले तो डर गई, फिर सब हाल जानने पर उसे परम हर्ष और आश्चर्य हुआ। प्रात:काल राजा ने देखा कि विदूषक राजकन्या के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

द्वार पर जीता जागता बैठा है और पासही रुधिर से भरी कटी हुई एक वृहदाकार भुजा पड़ी है। पूछने पर विदूषक ने सब हाल रात का कह सुनाया । तब तो राजा ने प्रसन्न होकर सेनापति को आज्ञा दी कि अब आज से किसी दूसरे पुरुष को यहां मत लाना, तदुपरान्त उनने उस दिव्य प्रभाववाले विदूषक के साथ, अपनी कन्या का विवाह कर दिया और धन सम्पत्ति से विभूषित कर उसे अपनेही यहां रख लिया । बस कुछ दिन वहां रहने के उपरान्त एक दिन रात के समय विदूषक राजपुत्री को सोताही छोड़ अपनी प्यारी भद्रा की खोज में अकेलाही निकल खड़ा हुआ । सबेरे जब राजकुमारी ने अपने पति को न पाया तो बहुत दुःखित हुई किन्तु उसके माता पिता ने यह कहकर उसे धैर्य बँधाया कि हे पुत्रि ! वह सत्ववान् पुरुष है फिर कभी घूमता फिरता यहां आ जावेगा तू धीरज धर । उधर पूर्व की ओर चलते चलते विदूषक समुद्र के समीपवाली ताम्रलिप्तिका नाम्नी नगरी में जा पहुँचा जहां स्कन्ददास नामक एक बनिये से जो समुद्र के पार यात्रा करने की इच्छा रखता था उसने जान पहिचान करी । उसी के साथ, उसके जहाज पर, जिसमें बहुमूल्य रत्न इत्यादि व्यापार के सामान भरे थे, विदूषक भी समुद्र पार जाने की इच्छा से चला । कुछ दूर समुद्र में जाकर वह जहाज यों रुक गया जैसे किसी समुद्रीय वस्तु से अटक गया हो। स्कन्ददास ने सरित्पति कीं बहुत कुछ पूजा की परन्तु वह जहाज अपने स्थान से तिल भर भी न टसका। तब तो वह घबड़ाकर यों कहने लगा कि जो कोई मेरे रुके हुये जहाज को यहां से चला देवै उसे मैं अपना आधा धन देकर अपनी कन्या व्याह दूंगा। यह सुन धीरचेता विदूषक ने कहा कि मैं जल के अन्दर पैठ कर देखता हूं कि जहाज़ क्यों अड़ा है फिर क्षण भर में इसके चलाने का यत्न करता हूं। पर आप लोग मेरे कमर में रस्सा बांधकर मुझे अवलम्ब दिये रहिये ऐसा न हो कि जहाज़ के चल निकलने पर मैं यहीं जल में छूट जाऊँ। जब जहाज चल पड़े तो उसी रस्से के आसरे से आप लोग मुझे ऊपर खींच लीजियेगा। बनिये ने जब यह बात स्वीकार की तो माझियों ने उसके कमर में एक दृढ़ रस्सा कसकर बांध दिया। रस्सा बँध जाने पर विदूषक अपना खड्ग ले जल में उतर पड़ा, ठीकही है "करहिं धीर अवसर पर काजा"। नीचे जाकर क्या देखता है कि वहां

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक बहुत भारी राक्षस जल में सोया है और वह जहाज़ उसी की जांघ से अड़ा हुआ है। एकही हाथ खड्ग का उसने ऐसा जमाया कि वह जांघ कट गई और पाल चढ़े रहने के कारण छूटतेही जहाज़ तीर की नाईं चल पड़ा। यह देख उस पापी और लोभी बनिये ने यह विचार कि अब तो इसे आधे धन के साथ कन्या देनी होगी विदूषक की रस्सी काट दी, जहाज़ तो छूटतेही हवा हो गया और विचारा विदूषक हाथ पैर मारता लहरों में हलोरें लेने लगा, फिर वह विचारने लगा कि इस दुष्ट बनिये ने यह क्या किया अथवा नई बात क्या है, "जे कृतघ्न धनलोभ-अँधारे। सूझत तिनहिँ न कृत उपकारे"। यह तो दुष्टों की रीतिही है कि काम निकल जाने पर फिर उन्हें अपने उपकारकर्त्ता की कुछ पर्वाह नहीं रहती। सो इस समय घबड़ाने का काम नहीं है, क्योंकि हिम्मत हारने से मनुष्य साधारण आपत्ति से भी उद्धार नहीं पा सकता। इसने देखा कि वह कटी हुई ज ा उतरा कर ऊपर आ गई सो उसने उसी का आसरा लिया, और उस पर चढ़ हाथही से खेता हुआ वह एक ओर को चला, भाग्य की बात किनारा भी समीपही था, सो वह खेते खेते वहां जा लगा। सच है "सत्ववान् नर साहसी हिम्मत तजहिं न भूल। को सहाय अस विपत् में विना दैव अनुकूल॥" इतनेही में यह आकाशवाणी हुई कि, "धन्य है विदूषक! तू धन्य है! मं तेरा सत्व देखकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ हूं, इस समय तू नग्नदेश में पहुंच गया है, यहां से कार्कोटक नगर सात दिन की मंजिल पर है वहां पहुँचने पर तेरा अभिप्राय सिद्ध होगा। मैं अग्नि हूं तूने पूर्व समय में मुझे तपस्या से सन्तुष्ट किया है सो मैं तेरा सदा सहायक हूं, मेरे आशीर्वाद से तुझे अब भूख प्यास की बाधा न होगी, सो तू धीरजपूर्वक अपने काम में लग जा।" विदूषक इस देववाणी को सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ, सो अग्निदेव को प्रणाम कर वह उठकर चलता हुआ और सातवें दिन कार्कोटक नगर में जा पहुँचा। वहां के राजा आर्य्यवर्म्मा ने एक परम रमणीय धर्मशाला विदेशियों के टिकने के लिये बना रक्खी थी जिसमें नाना देश के अभ्यागत लोग आकर सुखपूर्वक निवास करते थे। यात्रियों के स्नान तथा भोजन वस्त्र इत्यादि का सब प्रबन्ध राजा की ओर से होता था। विदूषक भी स्नान इत्यादि से निवृत्त हो उस देवमन्दिर में जो उसी धर्मशाला में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बना था, दर्शन के निमित्त गया। दर्शन करके ज्योंही बाहर आया देखता क्या है कि डुग्गी पिट रही है और इस बात की घोषणा दी जाती है कि जो कोई ब्राह्मण या क्षत्री राजकन्या से विवाह किया चाहता हो वह सन्ध्या के समय आकर उसके भवन में रात को रहने के लिये टिके । यह सुनतेही विदूषक की दाहिनी भुजा फड़कने लगी, उसने विचारा कि सगुन तो अच्छा हुआ जान पड़ता है कि यहां भी कोई पौण्ड्रवर्धन नगर सी बात है, तो उसने साहस कर राजसुता के घर में उस रात रहने की इच्छा की। यह जान उस मठ के रहनेवाले विप्र इसे समझाने लगे कि-हे ब्राह्मणदेव ! तुम्हें क्या अपनी जान भारी पड़ी है, अरे वह राजसुता का घर नहीं साक्षात् यमराज का भवन है। जो कोई रात को वहां रहता है वह सबेरे मरा हुआ पाया जाता है, कितनेही साहसी लोग वहां गये पर एक भी जीता न लौटा। उन ब्राह्मणों ने कितनाही समझाया किन्तु विदूषक ने एक न सुनी, राजा के नौकरों के साथ राजभवन को चलाही गया। राजा आढ्यवर्मा उसे देखकर प्रसन्न हुये किन्तु उसकी भावी दशा विचार उनके चित्त में भी दुःख होने लगा। अस्तु रात के समय यथानियम वह भी राजपुत्री के शयनागार में बन्द कर दिया गया । उसने देखा कि राजकन्या भी उसे देख अत्यन्त प्रसन्न हुई किन्तु निराशा की दृष्टि तथा अश्रुपूरित नेत्रों से देखती हुई चुप हो रही । फिर राजकुमारी तो सो रही किन्तु विदूषक अपना आग्नेय खड्ग लिये हुआ जागता रहा। अकस्मात् देखता क्या है कि वही घोर राक्षस पुनः साम्हने से चला आता है, दाहिनी भुजा तो उसकी कटी हुई थी सो उसने आतेही बाईं भुजा कोठड़ी के अन्दर डाली। विदूषक ने विचारा कि यदि इसकी यह भुजा भी काटता हूं तो यह पहिले की नाईं फिर भाग जायगा इसलिये अबकी बेर इसे मारही डालना चाहिये। ऐसा विचार झपट कर उसने राक्षस का केश बायें हाथ में पकड़ा और ज्योंही दाहिने हाथ में खड्ग उठाया कि वह राक्षस गिड़गिड़ा के कहने लगा कि मुझ पर कृपा कीजिये, मुझे मत मारिये, आप निस्सन्देह सत्ववान् हैं। विदूषक ने पूछा कि अच्छा बतला तू कौन है ? और यह राजकुमारी कौन है ? और क्यों तू ऐसा काम करता था ? तो मैं तुझे छोड़ दूंगा । राक्षस ने कहा कि मेरा नाम यमदंष्ट्र है, मेरी दो कन्यायें पूर्व जन्म की हैं एक तो यह और दूसरी पौण्ड्रवर्धन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नगर में है । शापवश इस लोक में वे दोनों राजा के घर में उत्पन्न हुई हैं, श्रीशङ्कर भगवान् की आज्ञा मुझे हुई कि तू इन दोनों राजसुताओं की रक्षा इस बात से कर कि इनका प्रसङ्ग किसी अवीर पुरुष से न होने पावे। एक वीर पुरुष ने पौण्ड्रवर्धन नगर में मेरी दाहिनी भुजा काट दी थी और आज आपने यहां मुझे जीतही लिया सो मेरा काम पूरा हो गया । यह सुन विदूषक ने हँस कर उसे उत्तर दिया कि जिस व्यक्ति ने पौण्ड्रवर्धन में तेरी भुजा काटी थी वह मैंही हूं। तब तो उस राक्षस ने कहा कि आप मनुष्य नहीं किसी देवता के अंश हैं और मैं यह समझता हूं कि आपही के निमित्त श्रीशम्भु भगवान् ने मुझे वैसी आज्ञा दी थी । सो आज से आप मेरे मित्र हुये जिस समय आप मुझे स्मरण करेंगे मैं उसी क्षण आन उपस्थित होऊँगा और जिस काम की आज्ञा होगी उसे पूरा करूँगा, अथवा यदि कोई सङ्कट आप पर होगा तो उसे दूर कर दूंगा। इस प्रकार वह यमदंष्ट्रा राक्षस विदूषक से मैत्री स्थापन कर लोप हो गया । विदूषक भी प्रसन्न हो वहीं राजपुत्री के भवन में आनन्द से बैठा रहा । प्रातःकाल जब राजा को यह सब हाल विदित हुआ तो उनने बड़ी प्रसन्नता और धूमधाम के साथ उस कन्या का विवाह विदूषक के सङ्ग कर दिया। कुछ दिनों तक विदूषक भी वहीं राजपुत्री के साथ जो एक क्षण भी अपने प्यारे पति को न छोड़ती थी सुखपूर्वक रहा। एक दिन रात को अवसर पा वह पुनः अपनी उसी प्यारी भद्रा की खोज में चल पड़ा। ठीकही है "आन रसन क्यों रज्जही जेहि मुख लगेउ पियूष"। नगर से बाहर निकलतेही उसने उस राक्षस को स्मरण किया और वह उसी क्षण गरजता हुआ नम्रतापूर्वक आन उपस्थित हुआ। विदूषक ने उसे आया देख कहा कि हे सखे! मैं भद्रा नाम्नी विद्याधरी के हेतु उदयाद्रि पर सिद्धक्षेत्र को जाया चाहता हूं सो तुम मुझे वहां ले चलो । उसने 'बहुत अच्छा' कह विदूषक को कन्धे पर चढ़ा लिया और उड़ता हुआ उसी रात को ६० योजन का मार्ग तै करता हुआ प्रातःकाल शीतोदा नदी के पार हो उदयाद्रि के समीप जा पहुँचा। मनुष्य की सामर्थ्य नहीं है कि किसी प्रकार उस नदी के पार जा सके। वहां पहुँच यमदंष्ट्रा ने कहा कि हे मित्र! यह देखो उदय नामक पर्वत तुम्हारे सन्मुख है इसके ऊपर सिद्धक्षेत्र है परन्तु मुझ में वहां जाने की सामर्थ्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं है। इतना कह राक्षस तो विदूषक की आज्ञा ले अन्तर्धान हो गया और उसने जो आगे पैर बढ़ाया तो थोड़ीही दूर पर एक परम सुन्दर स्वच्छ तालाब दिखलाई दिया। उसके किनारे पर जो भ्रमर गुञ्जार कर रहे थे सो जान पड़ता था कि मानो वह सरोवर विदूषक का स्वागत कर रहा है, सो वह तट पर बैठ विश्राम करने लगा। एक ओर दृष्टि जो उठाई तो स्त्रियों के कुछ पदचिन्ह दिखाई पड़े मानो वे कहते थे कि तुम्हारी प्रिया से मिलने के लिये इसी मार्ग से जाना होगा। पर्वत की ओर जो देखा तो जान पड़ा कि वह सिर उठाये मानो आकाशस्थ बादलों से बातें कर रहा है सो विदूषक ने विचारा कि मनुष्य की शक्ति इसके पार जाने की नहीं है, अच्छा तब लों यहीं बैठकर देखता हूं कि ये पदचिन्ह किसके हैं, कौन इस मार्ग से आता जाता है; अन्त कोई न कोई तो आवेहीगा मैं उसी से यहां का हाल पूछूंगा'। वह इतना विचारही रहा था कि इतने में अनेक सुन्दरियां सोने का घड़ा लिये हुई उस सरोवर पर पानी भरने के लिये आईं। जब वे लोग जल भर चुकीं तो विदूषक ने बड़े मीठे स्वर में पूछा कि आप लोग किसके लिये इतने स्नेह और परिश्रम के साथ पानी भर ले जाती हैं। उन्होंने कहा कि हे भद्र! इस पर्वत पर हमलोगों की रानी रहती हैं उनका नाम भद्रा है उन्हीं को स्नान कराने के निमित हमलोग जल ले जाती हैं। देखिये दैव की भी कैसी विलक्षण गति है कि "कठिन काज साधन निमित धीरन के उद्योग। धाता मनहु प्रसन्न ह्वै घटत सबै संयोग"। सो उनमें से एक स्त्री विदूषक से बोल उठी कि हे महाभाग! तनिक इस भरे हुये घड़े को टिकाकर मेरे सिर पर तो उठा दीजिये। उसने बहुत अच्छा कहकर घड़ा उठा दिया और बुद्धिमानो से उस अंगूठी को जिसे भद्रा ने इसे दिया था उसी घड़े में में चुपके से छोड़ दिया। उधर वे स्त्रियां तो जल भर के चली गईं इधर यह पुनः उसी सरोवर के किनारे बैठ रहा। भद्रा उठकर स्नान करने लगी और उन स्त्रियों ने धीरे धीरे जल छोड़ना आरम्भ किया। इतने में एक घड़े से निकल कर वह अंगूठी भद्रा की गोद में आ पड़ी; उसे देखतेही वह पहिचान गई और सखियों से पूछने लगी कि क्या तुम लोगों ने आज किसी नये पुरुष को यहां देखा है? उन्होंने उत्तर दिया "जी हां हमलोगों ने सरोवर के तट पर एक मनुष्य को बैठे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखा था उसी ने यह घड़ा इस सखी के सिर पर उठा दिया था।" यह सुन भद्रा ने चटपट स्नान मण्डन कर सखियों से कहा कि जाओ उन्हें आदरपूर्वक यहां ले आओ, वही मेरे भर्ता हैं, जान पड़ता है कि मुझे खोजते हुये यहां आ पहुँचे। यह सुन कई एक सखियां सरोवर पर गईं और विदूषक से सब हाल कह उसे स्नान करा अपने साथ लिवा लाईं। उसने देखा कि भद्रा चिरकाल से खड़ी द्वार की ओर दृष्टि लगाये उसके आने का आसरा देख रही है। भद्रा उसे देखतेही आगे बढ़ी और दोनों अश्रुपूरित नेत्रों से परस्पर गले लग गये। एक दूसरे को जो अधिक बलपूर्वक आलिङ्गन करने से पसीना छूटा तो जान पड़ता था कि हृदय के भाव अन्दर से बाहर जलस्वरूप में निकले आते हैं। तृप्त न होकर भी लाचार वे दोनों बैठ गये और एकटक परस्पर एक दूसरे का रूप निहारने लगे फिर भद्रा ने पूछा कि हे प्यारे! तुम यहां तक कैसे पहुँचे, विदूषक ने कहा कि सुन्दरि! और मैं क्या कहूं तुम्हारे स्नेह को डोरी से बँध कर अपने प्राण को अनेक सङ्कटों से बचाता कष्टों को झेलता किसी किसी प्रकार यहां पहुँच गया। भद्रा का प्रेम स्वयं बहुत बढ़ रहा था उसने देखा कि विदूषक का भी ऐसा अधिक स्नेह है कि मेरे बिना उसका जीना कठिन है सो उसने कहा कि हे आर्य्यपुत्र! अब मुझे न सखियों से कोई वास्ता है न सिद्धि से कुछ प्रयोजन है, तुम मेरे प्राण हो और मैं तुम्हारी दासी हूं। विदूषक ने कहा 'हे प्रिये! यदि ऐसाही तुम्हारा विचार है तो छोड़ो इस दिव्य टण्टे को और उठो मेरे साथ सुखपूर्वक उज्जयिनी में चलकर बसो, 'बहुत अच्छा' कह उसने उज्जयिनी का चलना स्वीकार किया और समस्त विद्याओं को तृणवत् परित्याग कर दिया। सखी योगेश्वरी ने सब प्रबन्ध ठीक कर दिया सो उस रात को उसने वहीं विश्राम किया, प्रातःकाल भद्रा के साथ उदयाद्रि से नीचे उतर आया, वहां पहुँचतेही उसने राक्षस यमदंष्ट्र को स्मरण किया। उसी क्षण वह आन उपस्थित हुआ, विदूषक ने उससे कहा, 'हे मित्र! जिस जिस राह से मैं यहां आया हूं उन्हीं मार्गों से मुझे लौटा ले चलो'। यमदंष्ट्र ने उन दोनों को निज कांधे पर चढ़ा लिया और आकाशमार्ग से उड़ चला, उड़ते उड़ते कार्कोटक नगर में पहुँचा जहां के लोग उसे राक्षस पर चढ़ा देख बहुत घबड़ाये, सबों ने जाकर राजा आर्य्यवर्म्मा को खबर दी, तब से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह भी आ पहुँचा और अपनी भार्य्या से मिल प्रसन्न हुआ । दूसरे दिन वहां से विदा हो निज पत्नी राजकुमारी को साथ ले, उसी राक्षस पर सवार हो, समुद्र पार डांक, वह उस छली बनिये के समीप पहुँचा जिसने उसकी रस्सी समुद्र में काट दी थी । बलपूर्वक उसके धन और सुता को हर, वह वहां से आगे बढ़ा । अपराध तो उसने ऐसाही किया था कि उसे प्राणदण्ड देना उचित था किन्तु विदूषक ने इस नीतिवाक्य को स्मरण कर कि "लोभिहिँ कृपण असित अज्ञाना । प्राणदण्ड धनदण्ड समाना" उसका सर्वस्व हर लिया । अब तो विदूषक, भद्रा, राजपुत्री तथा उस वणिक् कन्या तीनों को साथही ले आकाश-मार्ग से उड़ता हुआ पौण्ड्रवर्धन नामक नगर में पहुँचा । यहां भी सब लोग इसे राक्षस पर आरूढ़ देख चकित हो गये । वह जाकर राजा देवसेन की कन्या अर्थात् अपनी भार्य्या से मिला जो चिरकाल से उसकी राह देख रही थी, फिर उसे भी साथ ले और आगे बढ़ा और राजा आदित्यसेन के राज्य में पहुँचा, लोगों ने जाकर महाराज को उसके आने की खबर दी जिसके सुनतेही वे स्वयं चल पड़े । विदूषक ने महाराज को देखतेही राक्षस पर से उतर प्रणाम किया और वे भी उसे आशीर्वाद दे गद्गद हो गये । फिर उन सब भार्य्याओं को उसके कन्धे से उतार विदूषक ने राक्षस को जाने की आज्ञा दी और वह प्रणाम कर गरजता हुआ आकाशमार्ग से चल दिया । राक्षस के चले जाने पर विदूषक अपने ससुर आदित्य-सेन के साथ निज भार्य्याओं को लेकर राजमन्दिर में पैठा जहां वह अपनी प्रथम प्यारी भार्य्या से आनन्दपूर्वक मिला । फिर जब राजा अदित्यसेन ने पूछा कि ये भार्य्यायें तुम्हें कहां से और क्योंकर मिलीं ? तथा यह राक्षस कौन था और कैसे तुम्हारा मित्र हुआ ? तो उसने सारा हाल आरम्भ से लेकर अन्त तक सुना दिया। तब तो राजा ने अपने जामाता का ऐसा प्रभाव देख प्रसन्न हो उसे अपना आधा राज्य दे दिया और वह भी सब कामों में प्रवीण होने के कारण उसका प्रबन्ध भली भांति करने लगा । उसी क्षण से विदूषक एक साधारण ब्राह्मण से राजा हो गया और छत्र चमर से विभूषित हो राजसिंहासन पर विराज प्रजापालन करने लगा ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा।

यौं निज सत्व-प्रताप तें बांध्यो सकल समाज।
भद्रा प्रभृति प्रिया सहित कियो सुखी ह्वै राज॥

सोरठा।

कै विधिना अनुकूल, सत्ववान् सम्पति लहत।
लक्ष्मी सब सुखमूल, ह्वै प्रसन्न ठाढ़ी रहत॥

दोहा।

वत्सराज ने यौं कही कथा कर्णसुखदानि।
मंत्रीयुत देवी दोऊ सुनि विशेष हरखानि॥

पांचवां तरङ्ग।

फिर एक दिन यौगन्धरायण ने अवसर पा राजा वत्सराज से कहा कि, हे राजन्! इस समय दैव आपके अनुकूल है और आप भी पुरुषार्थी हैं और हम-लोगों ने भी थोड़ा बहुत नीतिशास्त्र में परिश्रम किया है सो जैसा पूर्व में विचार हो चुका है तदनुसार सब दिशाओं का जय अवश्य करना चाहिये। यौं जब मुख्य मन्त्री ने कहा तो महाराज वत्सराज ने उत्तर दिया कि 'बहुत अच्छा' किन्तु यह जान रक्खो कि उत्तम कार्य्य की सिद्धि में अनेक प्रकार के विघ्न होते हैं अतएव प्रथम में तपस्या से श्रीशम्भु भगवान् को प्रसन्न किया चाहता हूं क्योंकि "विना शम्भु शिव कृपा ते शिव कहु कैसे होय"। यह सुन मन्त्रियों ने कहा कि 'यह बात बहुत अच्छी है' देखिये सेतु बांधने के समय में श्रीसाक्षात् त्रिलोकी-नाथ रामचन्द्रजी ने भी ऐसाही किया था। तब तो राजा वत्सराज ने दोनों महा-रानियों और मन्त्रियों के साथ निराहार व्रत शिवजी के मन्दिर में बैठ आरम्भ किया। तीसरे दिन श्रीशङ्कर भगवान् ने स्वप्न में राजा को आज्ञा दी कि हे राजन् हम तुम पर प्रसन्न हैं उठ खड़े हो तुम्हें जय प्राप्ति होगी और थोड़ेही दिनों में तुम्हें ऐसा पुत्र होगा जो सब विद्याधरों का स्वामी होगा। तब तो राजा का सब श्रम दूर हो गया और वे सहसा जाग उठे और प्रातःकाल उन्होंने निज मन्त्रियों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तथा दोनों महारानियों को जो निराहार व्रत के कारण पुष्प की नाईं मुरझा रही थीं स्वप्न का वृत्तान्त सुनाकर प्रसन्न किया। वे लोग इस बात से बहुत हर्षित हुये कि भगवान् आशुतोष ने हमलोगों पर बड़ी कृपा की । फिर व्रत पारण के निमित नगर में बड़ा भारी उत्सव किया गया और अनेक साधु सन्त महात्मा ब्राह्मणों को भोजन कराया गया और उन्हें दक्षिणा भी भरपूर दी गई।

फिर दूसरे दिन यौगन्धरायण ने कहा कि हे राजन्! आप धन्य हैं कि जिस पर शम्भु भगवान् की ऐसी कृपा है सो बस अब शत्रुओं को जीतकर निज भुजा-बल से प्राप्त लक्ष्मी का भोग कीजिये क्योंकि जो सम्पदा निज धर्म से रीतिपूर्वक प्राप्त की जाती है उसका नाश नहीं होता और आपने तो अपने पूर्वजों की सञ्चित लक्ष्मी को भी जो चिरकाल से भूमि में गड़ी थी जिसका पता किसी को भी न था, पाई है; मैं इस पर एक कथा कहता हूं सो सुनिये।

प्राचीन समय की बात है कि पाटलिपुत्र नामक नगर में कोई देवदास नामक बणिक्पुत्र रहता था जो घर से बहुत लक्ष्मीसम्पन्न था। उसकी भार्य्या पौण्ड्रवर्धन नगर के किसी धनाढ्य बनिये की पुत्री थी और विवाह हो जाने के उपरान्त अपने पति के साथ यहीं पाटलिपुत्र में रहती थी । कुछ दिनों के उपरान्त जब देवदास के पिता का स्वर्गबास हो गया तो वह कुसंग में पड़कर जूये में अपना सब धन हार बैठा । जब उसकी भार्य्या अत्यन्त दुःखदारिद्य में रहने लगी तो उसका पिता पौण्ड्रवर्धन से आकर निज पुत्री को अपने घर ले गया। इधर देवदास पर विपत् पर विपत् पड़ने लगी, सो कुछ दिन तो उसने किसी किसी प्रकार निबाहा अन्त दुःखी होकर वह इस विचार से अपने ससुर के पास चला कि उनसे कुछ द्रव्य उधार लेकर कोई काम काज देखूं। चलते चलते वह सन्ध्या के समय पौण्ड्रवर्धन नगर में पहुँचा, फिर अपनी अत्यन्त हीन दीन दशा देख वह विचारने लगा कि मैं इन चीथड़े कपड़ों से ससुर के घर में कैसे जाऊँ वे लोग मुझे ऐसी अवस्था में देखकर क्या कहेंगे। नीतिकारों ने कहा है कि, "मानी जन को यह दृढ़ताई। मरिबो भलो न बन्धु निचाई"। अर्थात् मानी लोगों का यही दृढ़ निश्चय रहता है कि प्राण परित्याग करना अच्छा है किन्तु निज परिवारवालों के आगे दीनता अच्छी नहीं । यह विचार वह बाजार के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाहर जा किसी एकान्त स्थान में चुपचाप दबक के बैठ रहा। देखता क्या है कि कुछ सन्नाटा हो जाने पर एक युवा वणिक्पुत्र एक ओर से आया और एक दूकान का ताला खोल अन्दर चला गया, थोड़ी देर के उपरान्त एक स्त्री भी अच्छे वस्त्राभूषण पहिरे हुई आई और द्वार खोल उसी दूकान के अन्दर चली गई और द्वार अन्दर से बन्द हो गये। अन्दर दीपक जल रहा था इसने जो ध्यान से देखा तो पहिचाना कि यह स्त्री तो मेरीही भार्य्या है। तब तो इसके सिर पर मानो बज्रपात सा हो गया और इसकी सारी सुधि बुधि जाती रही, और वह अचानचक बज्राहत सा हो विचारने लगा कि धनहीन व्यक्ति तो अपना शरीर पर्य्यन्त गँवा बैठता है स्त्री की क्या बात है, और ये तो बामाही हैं "नारी और विसास नहिं सहजहिं चपल सुभाव"। व्यसनरूपी समुद्र में गिरे हुये मनुष्यों के लिये स्त्री स्वयं एक भारी विपत् है, किन्तु इसमें शोच किस बात का? पिता के घर में रहनेवाली स्वतन्त्र स्त्रियों की प्रायः यही चाल होती है। अन्दर तो उसकी भार्य्या उस वणिक्पुत्र से रमणपूर्वक बातें करती जाती थी और यह बाहर बैठा हुआ द्वार से कान लगाये सब सुन रहा था। वह पापिष्ठा अपने यार से एकान्त में कहने लगी कि हे प्यारे! सुनो मैं तुमसे बहुत प्रेम रखती हूं सो आज तुम्हें एक गुप्त वृत्तान्त सुनाती हूं, मेरे पति के परदादा का नाम वीरवर्म्मा था, उन्होंने अपने घर के चारो कोने में चार घड़े सोने की अशर्फियों से भरकर चुपके से गाड़े थे, जिसका हाल उन्होंने अपनी भार्य्याओं में से केवल एकही से कहा था। मरती समय उनकी भार्य्या अपनी पतोहू से उन घड़ों का हाल बतला गई, जब उसका अन्तकाल निकट आया तो वह अपनी पतोहू अर्थात् मेरी सास को सब हाल कह गई और मेरी सास ने वह भेद मुझे बताया है। इस प्रकार मेरे पतिकुल में यह बात सास से पतोहू सुनती चली आती हैं, मैंने अपने पति से इसका हाल नहीं कहा है क्योंकि वह मूर्ख जुआरी है और तुम तो मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारे हो, सो तुम पाटलिपुत्र में जाकर कुछ धन दे मेरे पति का वह मकान खरीद लो, और इस प्रकार उस गड़े हुये असंख्य धन को प्राप्त कर फिर मेरे पास आकर आनन्द मनाओ। उस कुटिला की ऐसी बात सुन उसका यार उससे बहुतही प्रसन्न हुआ और उसने समझा कि वह असंख्य धन बिना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परिश्रमही अब प्राप्त हो जायगा । देवदास भी अपनी उस दुष्टा भार्य्या की बात सुन धन की आशा से उसी दम उठकर निज घर की ओर चला और साङ्केतिक स्थान पर खोदने से उसे चारो स्वर्णपूरित घड़े मिल गये, जिन्हें पा, वह पुनः अत्यन्त धनी हो गया। कुछ दिनों के बाद वह वणिक्पुत्र जो उसकी भार्य्या का यार था व्यापार के बहाने से पाटलिपुत्र में पहुँचा, परन्तु यथार्थ में उसकी इच्छा देवदास के घर का गड़ा हुआ माल मारने की थी। जब उसने देवदास के समीप आ मकान खरीदने की बातचीत की, तो उसने भी बहुत अधिक मूल्य लेकर घर बेंच डाला। फिर एक दूसरा मकान मोल लेकर, अपना सब प्रबन्ध ठीक कर, देवदास युक्तिपूर्वक ससुराल से अपनी उस भार्य्या को निज घर में ले आया। उधर उस शठ को घर में कहीं भी गड़ा हुआ धन न मिला, सो वह देवदास के पास आ कहने लगा कि आपका घर बहुत पुराना और,जर्जर हो रहा है मुझे पसन्द नहीं है सो अपना घर लौटाकर मेरा रुपया फेर दीजिये। दोनों में इसी पर झगड़ा होने लगा, क्रमशः वे दोनों राजा के सन्मुख पहुँचे। वहां राजा के साम्हने उस समस्त दुःखरूपी विष को जो उसके हृदय पर निज भार्य्या की करतूत के कारण जम रहा था, देवदास ने उगल दिया। तब तो राजा ने उसकी भार्य्या को राजसभा में बुलाकर सब हाल पूछा और पूरा हाल जान लेने पर उस परदारा-लम्पट का सर्वस्व हरण कर लिया; इधर देवदास ने भी निज पत्नी की नाक काट उसे परित्याग कर दिया और दूसरी उत्तमा कुलबधू से विवाह कर सुखपूर्वक रहने लगा। सो हे महाराज ! जो लक्ष्मी धर्म्मपूर्वक उपार्जन की जाती है वह इस प्रकार अनेक सन्तति पर्य्यन्त स्थिर रहती है और जो धन अधर्म से मिलता है वह जल के अन्दर बनौरी की नाईं क्षण भर में गल जाता है। इसलिये मनुष्य को उचित है कि धर्म्मपूर्वक धन के उपार्जन का यत्न करे, विशेषतः राजा को तो यह बात बहुतही आवश्यक है क्योंकि धर्म्मरूपी वृक्ष की जड़ धनही है। अतएव मन्त्रीमण्डल का यथोचित सन्मान कर हे देव ! लक्ष्मी को धर्म्मपूर्वक प्राप्त करने के लिये आप शीघ्रही अब प्रस्थान कीजिये। जब आपके दोनों श्वशुरों की सहायता रहेगी और प्रबलशक्तिशालिनी सेना के साथ आप प्रस्थान करेंगे तो कदाचित् कोईही राजा युद्ध करने पर उद्यत हो, नहीं तो अनेक राजे महाराजे आपकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शरण योंही आ जांयगे। ब्रह्मदत्त नामक जो वाराणसी का राजा है, वह आपका सदा का बैरी है अतएव पहिले उसी का विजय करना चाहिये। उसे जीत कर फिर क्रम से पूर्व आदि दिशाओं का जय करते चलिये और अपने पुरखा पाण्डु महाराज के यश को जो कुमुद पुष्प की नाईं उज्ज्वल है और भी अधिक उज्ज्वल और विस्तृत कीजिये।

जब इस प्रकार मुख्य मन्त्री ने निवेदन किया तो महाराज वत्सराज ने प्रस्थान की तयारी की आज्ञा दी। प्रथम तो उन्होंने गोपालक को विदेहदेश का राज्य सत्कार में दिया फिर रानी पद्मावती के भाई सिंहवर्म्मा को भी एक प्रान्त में बहुत सी भूमि दी और वह भी अपनी सेना ले साथ में हुये। उन्होंने अपने मित्र भिल्लराज पुलिन्दक को भी बुला भेजा, जो अपनी सेना को लेकर शीघ्रही आन उपस्थित हुआ—उसके दल के श्याम वीरों के झुण्ड यों चलते थे मानो वर्षाकाल के काले काले मेघही उमड़े आते हों। इधर तो इस प्रकार महाराज वत्सराज की यात्रा की तयारियां होने लगीं, उधर शत्रुओं के हृदय में व्याकुलता छा गई। यौगन्धरायण ने अपने भेदियों को पहिले इस बात का पता लगाने के लिये काशी की ओर भेज दिया कि वे लोग ब्रह्मदत्त का विचार क्या है, देख आवें। एक दिन शुभ मुहूर्त में जब उत्तम शकुन हो रहे थे राजा वत्सराज ने पूर्व की ओर यात्रा कर ब्रह्मदत्त पर चढ़ाई कर दी। महाराज ऊँचे हाथी पर चढ़े थे और उन पर श्वेत छत्र शोभा दे रहा था. ऐसा जान पड़ता था मानो किसी पुष्पप्रफुल्लित वृक्ष के नीचे ऊँचे श्याम पर्वत पर कोई मदधारी मृगेन्द्र बैठा हो। सेना के बाजे और गर्जन से ऐसा जान पड़ता था मानो बादल गरजता चला आता हो। जिधर सुनिये उधरही महाराज वत्सराज की चढ़ाई की धूम सुन पड़ती थी, घोड़े और हाथियों की श्रेणी कतार बांध कर बड़ी शोभा के साथ बढ़ी जाती थी। क्योंकि महाराज दूसरे का तेज अपने तेज के आगे नहीं सह सकते थे, इसी कारण मानो उनकी सेना की धूलि ने सूर्य्य के तेज को रोक दिया। राजा के पीछेही पीछे जो दोनों महारानियां चलती थीं तो यही प्रतीत होता था कि उनके नीतिगुण से मोहित होकर मानो कीर्ति और जयश्री पीछे पीछे आ रही हैं। ध्वजाओं के फर-फराने से जो शब्द होता था वह मानो शत्रुओं से कहता था कि 'नम्रता स्वीकार

करो और अपनी जान लेकर भागो' । इस प्रकार महाराज उस दिशा के अनेक भागों में भ्रमण करते, खिले हुये श्वेत कुमुदों को देखते फिरते थे, जिनके बिखरे दलों से जान पड़ता था कि मानों पृथिवी के मर्दन किये जाने के भय से शेषनाग के फण छितरा गये हों । उधर वे भेदिये लोग जिन्हें यौगन्धरायण ने पहिले ही भेज दिया था वाराणसीपुरी में जा पहुँचे । उनमें से एक का नाम कुहक था सो वह तो विभूति रमा ज्ञानी बन बैठा और बाकी के शरीर में भस्म लगा उसके शिष्य बन गये । इस प्रकार उसे अपना छलगुरु बना वे लोग जहां भिचा मांगने जाते तहां यही कहते कि हमारे आचार्य्य महाशय त्रिकालज्ञ हैं। फिर तो अनेक लोग आ आकर गुरुजी की सेवा में दचिणा चढ़ाने और उनकी पूजा करने लगे और वह भी जो अग्निदाह आदि का हाल उनसे कहता उसके शिष्य लोग चुपके से वैसाही कर देते थे जिससे उसकी बहुत प्रसिद्धि हो गई । इसी प्रकार छोटी मोटी सिद्धि दिखाकर उसने वहां के राजसभा के अनेक आने जानेवालों को वश में कर लिया, जिनमें से एक राजपुत्र की उस पर बहुतही श्रद्धा हो गई । राजा ब्रह्मदत्त का सब हाल कुहक को उस राजपुत्र से मिल जाया करता था । वाराणसी के राजमन्त्री योगकरण्डक ने यह विचार किया कि वत्सराज के मार्ग में अनेक प्रकार के ऐसे विघ्न डालने चाहिये जिससे उनकी सेना को हानि पहुँचे, सो उनके अनेक प्रकार के विषों से मार्ग के वृच्च, फल, फूल और जल को दूषित करा दिया जिसमें जो कोई उनका व्यवहार करे वही विष के कारण मृत्यु को प्राप्त हो । उसने अनेक विषकन्याओं को वेश्यारूप से छोड़ दिया था कि जो कोई उनसे सम्भोग करे वही मर जाय, अनेक प्राणघाती पुरुष इस काम पर नियत किये गये कि छल कपट से सैनिकों को अपने फन्दे में लाकर बध कर डालें । इन बातों का पता लगाकर वह छलगुरु अपने शिष्यों के द्वारा यौगन्धरायण के पास सन्देश भेज देता और वह भी उसी चण अपने सैनिकों में सावधानी की घोषणा करा देता था, जिससे वे लोग योगकरण्डक के जाल में न पड़ते थे । फिर यौगन्धरायण को जब यह विदित हुआ कि मार्ग के फल, फूल, तोयादि सब विषाक्त कर दिये गये हैं तो वह उस विष के दूर करनेवाली औषधियों का प्रयोग करने लगा जिनके द्वारा वे सब पुनः ज्यों के त्यों शुद्ध हो गये । सेना में सब को सूचित कर दिया कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कोई भी किसी नवीन स्त्री से सम्भोग न करे नहीं तो अपने जीवन से हाथ धोवेगा और रुमरवान् की सहायता से उसने उन प्राणघाती पुरुषों को धर धर के फांसी लटकाना आरम्भ किया। जब ऐसी दशा हुई तब तो ब्रह्मदत्त अपने मन्त्री योगकरण्डक के सहित घबराया, इधर वत्सराज की सेना नगर में आन पैठी। तब तो उसने विचारा कि मैं वत्सराज से जीत न सकूंगा सो दूत को आगे भेज करबद्ध हो उपायन ले महाराज वत्सराज की शरण में चला आया। महाराज वत्सराज ने उसका उपायन स्वीकार किया और प्रीतिपूर्वक उसको बैठाया। ठीकही है—"त्राहि त्राहि मुख कहतही नमित सुकन्धर-भाल।

प्रणतपाल शत्रून कहँ छमा करहिँ तेहि काल" ॥

इस प्रकार महाराज वत्सराज ने अनेक प्रबल राजाओं को जड़ से उखाड़ डाला और जो नम्र हो शरण में आ पड़े उन्हें क्षमा भी कर दिया। योंहो चलते चलते महाराज वङ्गदेश के अन्त में पहुँचे, जहां देखा कि समुद्र बड़ी बड़ी लहरें ले रहा है मानो महाराज की सेना से भयभीत हो उसका हृदय कम्पायमान हो रहा है। उसके तट पर एक जयस्तम्भ स्थापन किया गया जिस पर एक सर्प की मूर्ति थी, जान पड़ता था कि मानो पाताल के लिये अभयप्रार्थना करनेवाले नागराज महाराज वत्सराज से मिलने आये हों। फिर कलिङ्ग देश के राजा ने नम्रता स्वीकार कर करदान किया तो महाराज का यश महेन्द्र पर्वत पर भी छा गया। उस देश के राजा ने बड़े बड़े हाथी महाराज को भेंट किये जो ऊँचाई में बहुत बड़े और शरीर से अत्यन्त पुष्ट थे। इसके उपरान्त महाराज ने दक्खिन की ओर यात्रा की जहां उन्होंने निःसार गर्जनेवाले पर्वतनिवासी शत्रुओं को यों नाश कर दिया जैसे शरत्काल बादलों का विध्वंश कर डालता है। कावेरी नदी को डांक कर उन्होंने चोलकेश्वर महाराज की कीर्ति को अपने प्रताप से कलुषित कर दिया और मुरला देशवालों को भी परास्त किया। महाराज के उन्मत्त हाथियों ने जो गोदावरी का जल सात जगह पीया इसीलिये मानो सात धारा से उनका मद बहता था। इसके अनन्तर महाराज वत्सराज नर्मदा नदी को पार हो उज्जयिनी में पहुँचे जहां उनके श्वशुर चण्डमहासेन आगे से आकर बहुत सत्कार-पूर्वक अपने राजमहल में लिवा ले गये। मालवदेश की परम सुन्दर स्त्रियों के

कटाक्ष के लक्ष्य महाराज यहां पर बने, किन्तु वे इनसे ऐसे दूर रहे कि अपने देश की पुरानी प्रकृति को मानो भूल से गये। वासवदत्ता भी निज पिता के घर में आनन्दपूर्वक रहती और अपनी बाल्यावस्था के क्रीड़ाकौतुकों को स्मरण करती सुख पाती थी। राजा चण्डमहासेन भी पद्मावती का वैसाही सत्कार और उस्से वैसाही स्नेह करते थे जैसे वे निज पुत्री वासवदत्ता को चाहते थे। इस प्रकार कुछ दिनों वहां रहकर महाराज वत्सेश्वर ने ससुर की सेना के साथ पश्चिम की ओर यात्रा की और लाटदेश के राजा को बात की बात में परास्त कर उसका राज्य जीत लिया। मन्दर पर्वत मानो इस भय से कांप उठा कि मुझे पुनः जड़ से उखाड़ कर महाराज कहीं पुनः समुद्रमथन की इच्छा न करें। इसके उपरान्त महाराज ने उत्तर दिशा की ओर गमन किया जो कुबेर की अलकापुरी और शिवजी के दिव्य कैलास से युक्त होने के कारण परम शोभायमती हो रही है। वहां उन्होंने सिन्धुराज को वश में किया और म्लेच्छों का यों पराभव किया जैसे महाराज रामचन्द्रजी ने राक्षसों का पराजय किया था। तुरकों ने निज देश के अनेक घोड़े महाराज को भेंट किये फिर उन लोगों से करग्रहण कर वत्सराज आगे बढ़े और उन्होंने पारसीकपति का शिरश्छेदन किया। तब तो महाराज की कीर्ति हिमाचल के प्रदेशों में सर्वत्र यों फैल गई मानो दूसरी गङ्गा चारो ओर व्याप्त हो गई हों, सेना की गरज चारो ओर के पर्वतों से प्रतिध्वनिरूप से सुनाई पड़ती थी फिर तो कामरूप के राजा ने भी अपने सिर का छत्र दूर कर महाराज की शरण स्वीकार की वहां से अनेक ऊँचे ऊँचे हाथी उपायन में स्वीकार कर महाराज ने सेना को लौटने की आज्ञा दी। इस प्रकार महाराज वत्सराज समस्त दिशाओं का जय करते हुये रानी पद्मावती के पिता मगधेश्वर के राज्य में पहुँचे। दोनों रानियों सहित निज देश में आये हुये जामातृ को देख उन्हें परम हर्ष हुआ सो उन्होंने नगर में बहुत भारी उत्सव किया। जो रानी वासवदत्ता पहिले अज्ञात अवस्था में यहां रह गई थी उसे अब व्यक्तरूप से आई देख मगधेश ने उसका बहुतही सत्कार किया और निजपुत्री से अधिक उसका आदर भाव किया।

यौं सादर कछु दिन रहे मगधराज के धाम।
जीति सकल वसुधा चले लावाणक अभिराम॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

छठवां तरङ्ग।

लावाणक में पहुँचकर सेना को विश्राम देने के लिये महाराज वत्सराज वहीं ठहर गये और एकान्त में बैठ निज मन्त्री यौगन्धरायण से इस प्रकार बातचीत करने लगे कि हे मन्त्रिप्रवर! तुम्हारीही बुद्धि के बल से हमने पृथिवी के सब राजाओं को जीता और ऐसा प्रबन्ध भी कर दिया गया कि जिसमें पुनः वे लोग सिर न उठा सकें किन्तु मुझे वाराणसी के कुटिल राजा ब्रह्मदत्त की ओर से कुछ खटका है कदाचित् वह कुछ पुनः जोर पकड़े क्योंकि शास्त्रकारों ने बहुतही उचित कहा है कि 'खलजन नाहिँ विससिये भाई, अवसर पाइ करहिँ कुटिलाई' यह सुन यौगन्धरायण ने कहा कि "महाराज! आपने बहुतही ठीक शङ्का करी परन्तु ब्रह्मदत्त अब कभी आपके विरुद्ध न होगा क्योंकि जब आपने उस पर चढ़ाई की थी तो वह शरण में आ गया था और आपने भी उसके साथ बहुत भलाई की है "जग अस चेतन कवन भुआलू। उपकारी सँग करहिँ कुचालू"। और जो कुचाल करें भी तो उन्हीं की हानि होगी, सुनिये मैं आपको एक कथा सुनाता हूं—

पद्मापुरी नगरी में कोई अग्निदत्त नामक ब्राह्मण रहता था जिसे वहां के राजा के यहां से वृत्ति मिलती थी। उसके बड़े पुत्र का नाम सोमदत्त और छोटे का नाम वैश्वानरदत्त था। सोमदत्त तो मूर्ख और अविनीत था किन्तु दूसरा बहुतही नम्र और पढ़ने लिखने का प्रेमी था। दोनों का विवाह हो गया था सो पिता की मृत्यु के उपरान्त दोनों ने उसकी सम्पत्ति को आधो आध बांट लिया। छोटे पुत्र ने राजा के दर्बार में बहुत प्रतिष्ठा प्राप्त की; किन्तु बड़े बेटे सोमदत्त को लड़ने भिड़ने और कुश्तंकुश्ती का अभ्यास पड़ गया। एक दिन एक ब्राह्मण ने जो सोमदत्त के पिता का मित्र था, उसे शूद्रों के साथ हिलते मिलते देखकर उससे कहा रे मूर्ख तू द्विजवर अग्निदत्त का पुत्र होकर शूद्रों का सा आचरण करता है क्या अपने छोटे भाई को राजसन्मानित देख तुझे लज्जा नहीं आती? यह सुनतेही सोमदत्त ने क्रोध से जूता उतार उस ब्राह्मण को पीटना आरम्भ किया उसके बड़प्पन का कुछ भी ध्यान उसके हृदय में न हुआ। उस ब्राह्मण ने जाकर राज-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

द्वार में पुकार की और राजा ने अपने सिपाहियों को उसे पकड़ लाने के लिये भेजा, सोमदत्त के साथियों ने मिल राजसिपाहियों को भी मारा; तब तो राजा ने सेना भेजी और उसे धर मँगाया, सन्मुख आने पर राजा ने उसे फांसी दिये जाने की आज्ञा दी। जब उसे फांसी पर चढ़ाया तो वह ब्राह्मण भूमि पर अकस्मात् यों गिर पड़ा मानो उसे किसी ने उठाकर फेंक दिया हो। जिसका भविष्य में कल्याण होना होता है उसकी रक्षा भाग्यही से होती है सो दैव की गति देखिये कि जब उसे बधिक लोग पुनः फांसी पर चढ़ाने लगे तो सब के सब अन्धे हो गये उन्हें सूझही न पड़ता था कि वह कहां है। इतने में उसका छोटा भाई वैश्वानरदत्त आ गया और उसने राजा से सब हाल सुनाया कि यह मेरा बड़ा भाई है आप कृपा कर मेरे निहोरे से इसे क्षमा कीजिये। राजा ने सन्तुष्ट होकर उसे बध से छोड़ दिया; तब तो इस प्रकार मौत के मुंह से बचकर सोमदत्त ने राजापमान के कारण चाहा कि निज स्त्री के साथ कहीं विदेश को चला जावे, परन्तु जब उसके बान्धवों ने उसे परदेश जाने से रोका तो वह उसी बचे हुये धन से अपना काम चला वहीं रहने लगा। फिर उसने विचारा कि मैं निजजीविकानिर्वाहार्थ क्या उपाय करूँ, सो खेती का विचार ठहरा वह एक दिन शुभ मुहूर्त में जङ्गल में उपयुक्त भूमि देखने के निमित्त गया। वहां अच्छी भूमि देख उसने सोचा कि यही मेरे काम लायक है, वहां एक बहुत बड़ा पीपल का वृक्ष था जिसकी छाया ऐसी घनी थी कि सूर्य्य भगवान् की किरणें भी कठिनता से वहां पैठ सकती थीं। उस वृक्ष को देख सोमदत्त बहुतही सन्तुष्ट हुआ। फिर तो उसने उस वृक्ष को प्रणाम किया और यह कहा कि जो कोई इस वृक्ष का अधिष्ठाता हो मैं उसका भक्त हूं। इतना कह उसने एक जोड़ा बैल मँगा उस वृक्ष की पूजा कर शुभ साइत से खेती आरम्भ कर दी। रात दिन उसी वृक्ष के नीचे उसने अपनी स्थिति कर दी, उसकी स्त्री घर से भोजन बनाकर वहीं ला उसे देती और वह भी उसी पीपल के नीचे भोजन कर जल पीता तथा रात दिन अपने परिश्रम में लगा रहता था। समय पाकर खेत में खूब अन्न उत्पन्न हुआ और पका भी, परन्तु इतनेही में एक दूसरे राजा ने आकर लूट मार मचा दी और उसका खेत नाश कर दिया। जब उस राजा की सेना चली गई तो वह अपने खेत पर गया और जो कुछ शेष बच

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गया था उसी को उठा लाया जिससे उसने रोती हुई निज भार्य्या का समाधान किया और पुनः द्विगुणित उद्योग से खेती के काम में प्रवृत्त हुआ। ठीकही है— "धीरज धीर न छाड़हीं आपति होवै लाख। और दृढ़ता धरत हैं बांधि नयो अभिलाख" ॥ इसीलिये वह और भी अधिक उत्साह से अपने काम में लगा। एक दिन योंही रात के समय चिन्ता में पड़ा वह कुछ विचार रहा था कि उस पीपल के वृक्ष पर से मानो यह आकाशवाणी हुई कि हे सोमदत्त! हम तुझ पर प्रसन्न हुये हैं तू उठ और आदित्यप्रभ राजा के राज्य श्रीकण्ठ देश को जा, और उस राजा के द्वार पर पहुँचकर सन्ध्याग्नि होम मन्त्रों को पढ़कर यों कहियो कि मेरा नाम फलभूति है जो मैं कहता हूं सुनिये—जब कोई पूछे कि क्या कहते हो, तो यही कहना "अन्त भले का भला, अन्त बुरे का बुरा" जब तू ऐसा कहेगा तो तुझे बहुत धन प्राप्त होगा, इसलिये अब तू मुझसे सन्ध्याग्नि होम मन्त्रों को पढ़ ले। मैं यक्ष हूं और इसी पीपल वृक्ष पर रहता हूं"। इतना कह वह वाणी उन मन्त्रों को उसे पढ़ा पुनः चुप हो गई। प्रातःकाल सोमदत्त अपनी भार्य्या को साथ ले श्रीकण्ठ देश की ओर चल पड़ा, चलते चलते अनेक प्रकार की आपत्तियों और कष्टों को झेलता अन्त वह उस पुरी में जा पहुँचा। वहां राजा के द्वार पर सन्ध्याग्निहोम मन्त्रों को पढ़ उसने द्वारपालद्वारा सूचना दिलाई कि फलभूति नामक कोई ब्राह्मण द्वार पर खड़ा है आज्ञा हो तो अन्दर आवे। राजा ने उसे बुला भेजा। सन्मुख आतेही उसने कहा कि "अन्त भले का भला, अन्त बुरे का बुरा"। फिर दो बार तीन बार इसी वाक्य को उसने दुहराया। राजा ने समझा कि यह भी एक सभा की दिल्लगी रहेगी, यही सोच उसे अपने यहां रहने की आज्ञा दी। फिर भी उसने वही बात कही, राजा खूबही हँसे और उसे धन वस्त्र गांव इत्यादि दे धनपात्र कर दिया। सत्यही है "बड़े कहा नहिँ देइँ"। इस प्रकार एक साधारण ब्राह्मण होकर भी फलभूति ने उस गुह्यक की कृपा से बड़ी विभूति प्राप्त की। किन्तु जब कभी वह राजा आदित्यप्रभ के सन्मुख आता तो वही बात कहता कि "अन्त भले का भला, अन्त बुरे का बुरा" और राजा भी इस बात को सुनकर बड़े प्रसन्न होते थे। होते होते नकि केवल राजसभाही में किन्तु सारे राज्य तथा अन्तःपुर में भी इस बात की धूम मच गई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि फलभूति राजा को बहुत प्यारा है इस कारण सभी लोग उसका मान सत्कार करते थे।

एक दिन राजा आदित्यप्रभ ज्योंही आखेट से लौटे त्योंही अचानचक अन्तः-पुर में चले गये। द्वारपाल राजा को देखतेही कुछ व्यग्र सा हो गया सो महाराज को और भी शङ्का हुई, अन्दर जो पैठे तो क्या देखते हैं कि उनकी रानी कुवलया-वली देवी की पूजा में लगी है। उसके केश खुले हैं, सारे शरीर से नङ्गी, नेत्र बन्द किये एक ध्यान में खड़ी है, माथे पर बड़ा सा सिन्दूर का टीका लग रहा है और मन्त्र के जाप से अधर फरफरा रहे हैं। पूजा की सामग्री भी सब विलक्षण प्रकार की है; रुधिर मदिरा और महामांस से बलिप्रदान किया गया है। राजा को अचानचक आये देख उसने घबड़ाकर कपड़ा उठाया और जब महाराज ने पूछा कि यह तुम क्या करती हो तो कुछ ठहर कर उसने अभय की प्रार्थना करी और जब महाराज ने अभय वाक्य दिया तो उसने नम्रतापूर्वक कहा कि हे नाथ ! आपही की उन्नति और आपही के लाभ के निमित्त मैं इस पूजन को करती थी। यह मैंने कहां से सीखा और इससे क्या सिद्धि पाई है उसका हाल भी सुनिये—

जब मैं अपने पिता के घर रहती थी तो एक दिन सखियों के साथ मधुमहो-त्सव के समय बगीचे में टहल रही थी कि एक सखी ने मुझसे कहा कि "इसी उद्यान में वृक्षों के नीचे श्रीवरदायक गणेशजी की एक मूर्ति है जिसका प्रभाव कई बेर आंखों से देखा गया है, तुम भी चलकर भक्तिपूर्वक उसका पूजन करो तो तुम्हें शीघ्रही निर्विघ्नतापूर्वक उत्तम पति जैसा उचित है प्राप्त हो। यह सुन मैं बालबुद्धि से पूछ बैठी कि कन्या का तो विवाह होहीगा फिर गणेशजी की पूजा से क्या लाभ है ? सखियों ने कहा ऐसा क्या कहती हो बिना श्रीगणेशजी के पूजे किसी काम की सिद्धि नहीं होती। अच्छा सुनो, हम तुम्हें एक कथा सुनाती हैं जिस्से तुम्हें इनका प्रभाव जान पड़ेगा कि विना गणेशजी के पूजन किये कैसे कैसे विघ्न आन उपस्थित होते हैं—

प्राचीन समय की बात है कि जब तारकासुर ने देवताओं को अमरावती से भगाकर इन्द्रका इन्द्रासन छीन लिया तो उन लोगों ने श्रीमहादेवजी से एक पुत्र उत्पन्न करा के उसे अपना सेनानी बना असुरों से युद्ध करना चाहा। इसी झमेले में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कामदेव भी श्रीरुद्रजी के तृतीय नेत्राग्नि से भस्म हुआ। इसके उपरान्त श्रीऊर्ध्व-रेताजी अत्युग्र तपस्या करने लगे और चिरकाल तक कठिन तप करने के बाद श्रीगौरीजी ने शिवजी को पतिरूप से पाया। तब तो पार्वतीजी ने सुतप्राप्ति और कामदेव के पुनरुज्जीवन की इच्छा की किन्तु इस काम की सिद्धि के लिये श्री-विघ्नेश्वरजी की पूजा करना भूल गईं। तब सुतप्राप्ति की इच्छा करनेवाली पार्वतीजी से श्रीमहादेवजी ने यह कहा कि हे प्रिये! पूर्व समय में प्रजापति के मन से कामदेव उत्पन्न हुआ और जन्मतेही उसने पिता से यों कहा कि "कं दर्पयामि मदात्" अर्थात् "किसे मद से पागल कर दूं?" इसी कारण चतुर्मुख ब्रह्मा ने उसका नाम कन्दर्प रक्खा। ब्रह्मा ने उसकी ऐसी दयामयी दशा देख कहा कि हे पुत्र! यदि तुझे ऐसा अहङ्कार हो गया है तो एक त्रिनेत्र भगवान् को छोड़ चाहे जिसे तङ्ग कीजियो किन्तु रुद्रजी के सम्मुख न जाइयो नहीं तो उसी क्षण तेरी मृत्यु होगी। यद्यपि ब्रह्माजी ने उसे इतना सचेत कर दिया था तथापि वह शठ मेरा चित्त चञ्चल करने के लिये सन्मुख आही तो गया सो मैंने उसे भस्म कर दिया, अब उसके पुनः सदेह उत्पन्न कराने की आशा व्यर्थ है। यदि तुम्हें पुत्र की कांक्षा है तो मैं निज शक्ति से तुम्हें पुत्र दूंगा परन्तु मेरा पुत्र सांसारिक उत्पत्ति की नाईं मदनोत्साह के कारण न होगा। ये बातें होही रहीं थीं कि इतने में इन्द्र के सहित ब्रह्माजी भी आन उपस्थित हुये और तारकासुर की शान्ति के लिये महादेवजी से प्रार्थना करने लगे, सो उन्होंने भी श्रीपार्वतीजी से औरस पुत्र का उत्पन्न करना स्वीकार किया। फिर उन्हीं द्वारा निवेदन किये जाने पर श्रीशङ्कर जी ने यह भी अङ्गीकार किया कि सृष्टि का विच्छेद जिसमें न हो जाय इस कारण देहधारियों के चित्त में वे मूर्त्तिहीन कामदेव को उत्पन्न कर देंगे। इसीलिये उ-न्होंने निज चित्त में भी मनोभू को स्थान दिया जिससे प्रसन्न हो ब्रह्माजी अपने धाम को पधारे और श्रीगौरीजी भी सन्तुष्ट हुईं।

एक समय की बात है कि श्रीमहादेवजी ने निज पत्नी पार्वतीजी के साथ सुरतक्रीड़ा आरम्भ की। जब एक सौ वर्ष बीतने पर भी उनका रतान्त न हुआ, तब उस उपमर्द से तीनों लोक कम्पायमान हो गया। उस समय ब्रह्माजी की आज्ञा से देवताओं ने समस्त जगत् के नाशभय से अग्नि को स्मरण किया कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शङ्करजी की रति में विघ्न किया जाय। अग्नि ने विचारा कि मदनान्तकारी महादेवजी के सन्मुख जाना अपने प्राणों से हाथ धोना है सो वह भय के मारे भाग, जल के अन्दर जा छिपा, इधर देवता लोग खोजते फिरते थे कि अग्नि का कहीं पता नहीं लगता वह कहां गुम हो गया। उधर वह्नि ने जो पानी में प्रवेश किया तो उसके उत्ताप से सारा जल खौलने लगा सो मण्डूकों ने देवताओं से चुगली खाई कि अग्नि तो जल के अन्दर पैठे हैं। तब तो अग्नि ने मेड़कों को शाप दिया कि जाओ आज से तुम्हारी बाणी ऐसी हो जावे कि कोई समझ न सके, तभी से मेड़क "टर्र-टों" कर बोलने लगे। जल से भागकर अग्निदेव घोंघी का रूप धर मन्दर पर्वत में जा छिपे और वहां हाथी तथा शुकों ने चुगली खाई सो देवताओं ने पता जा लगाया। इस अपराध से क्रुधहो अग्नि ने शुक और हाथियों की जीभ उलट दी। फिर जब देवताओं ने बहुत कुछ स्तुति की तो अग्नि ने प्रगट हो उन्हें दर्शन दिया और उनका काम करना स्वीकार भी किया। तब तो अग्नि ने निज उत्ताप से शिवजी को सुरत से रोका परन्तु शाप के भय से प्रणाम कर यह निवेदन किया कि मुझे देवता लोगों ने इस काम के लिये भेजा था। शिवजी को बहुतही बेग हो रहा था सो उन्होंने निज वीर्य्य को अग्नि के ऊपर छोड़ दिया जिसके धारण करने की शक्ति अग्नि या पार्वती दोनों में से एक को भी न थी। जब पार्वतीजी ने खेद और कोप से व्याकुल हो यों कहा कि "मैंने आपसे पुत्र नहीं पाया" तो शिवजी ने इस प्रकार उत्तर दिया कि यह विघ्न इस कारण हुआ है कि तुमने विघ्नविनायक का पूजन नहीं किया था, अतएव अब शीघ्र उनकी पूजा करो जिसमें हम दोनों का पुत्र अग्नि से उत्पन्न हो। शिवजी की आज्ञा पा उसी क्षण देवी ने विघ्नेश्वरजी का पूजन किया और महादेवजी के उस वीर्य्य से अग्नि को गर्भ रह गया। शम्भु सम्बन्धी उस तेज के धारण करने से दिन के समय भी अग्नि की ऐसी शोभा हो रही थी मानो उसके अन्दर सूर्य्य भगवान् स्वयं पैठे हों। फिर तो अग्नि ने, उस तेज के धारण में असमर्थ होकर, उसे गङ्गा में डाल दिया और गङ्गाजी ने उसे शिवजी की आज्ञा से मेरु के ऊपर एक अग्निकुण्ड में स्थापन किया। वहां शम्भुजी के गण उस गर्भ की रक्षा करते रहे, सो एक सहस्र वर्ष के उपरान्त उसमें से छ मुख वाले कुमार उत्पन्न हुये, तब तो श्रीपार्वती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जी ने छः कृत्तिकाओं को अपने पयोधरों से दूध पिलाने के लिये धाय नियत किया और छओं मुख से दूध पीते हुये कुमार दिनोंदिन पलने और बढ़ने लगे। इतने दिनों तक, तारकासुर से पराजित होकर, देवराज (इन्द्र) रण परित्याग कर मेरु पर्वत के किलों में रहते थे। दूसरे देवता लोग ऋषिओं के साथ षण्मुख की शरण में गये और कुमार भी उन सभों की रक्षा करते रहे। यह देख इन्द्र ने समझा कि मेरा तो राज्य हर लिया गया सो वह डाह खाकर स्वामिकार्तिकजी ही से लड़ने को उद्यत हो गया। इन्द्र ने जो वज्र चलाया तो कुमार के शरीर में घात लगने से शाख विशाख नामक दो पुत्र अतुल पराक्रमवाले उत्पन्न हुये। जब इन्द्र के पराक्रम को कुमारजी ने दबा दिया तो उसी क्षण शिवजी ने स्वयं उपस्थित हो बीच में पड़ युद्ध को शान्त करा दिया और यों कहा कि हे पुत्र! तुम्हारा जन्म तारकासुर के मारने और इन्द्र के राज्य की रक्षा करने के लिये हुआ है सो तुम्हें अपना कर्तव्य कार्य्य देखना चाहिये। उसी क्षण इन्द्र ने आकर प्रसन्न हो प्रणाम किया और कुमार का अभिषेक सेनापति के पद पर करने को वे उद्यत हुये। स्वयं अपने हाथ से कलश उठाने के लिये उन्होंने ज्योंही हाथ बढ़ाया त्योंही वह हाथ जहां का तहां रह गया और कलश न उठ सका, तब तो इन्द्रदेव अत्यन्त चकित हो घबड़ाकर इधर उधर देखने लगे कि यह क्या बात है, हाथ क्यों नहीं उठता। उसी क्षण शिवजी ने समझाया कि हे शक्र! तुमने सेनानी प्राप्त करने की जल्दी की और गजमुख श्रीगणेशजी का पूजन नहीं किया; इसी से यह विघ्न उपस्थित हुआ है अब तुम शीघ्रही उनका पूजन करो तो यह विघ्न दूर हो। यह सुन इन्द्र ने श्रीविघ्नविनाशक गणपतिजी की पूजा कराई, उसी क्षण उनका हाथ खुल गया और अभिषेकोत्सव निर्विघ्नतापूर्वक समाप्त हुआ। इसके उपरान्त कुछही दिनों में श्रीस्वामिकुमारजी ने तारकासुर को मार देवताओं का कार्य्य सिद्ध किया और श्रीगिरिजादेवी ने भी अपने को यथार्थ पुत्रवती माना। इसीलिये हमलोग कहती हैं कि हे राजपुत्रि! बिना श्रीगणेशजी की पूजा किये देवताओं के भी कार्य्य सिद्ध नहीं होते, मनुष्य विचारे किस गिनती में हैं। अतएव तुम चलकर उनका पूजन करो जिससे तुम्हारा मनोरथ सुफल हो। सखियों का ऐसा बचन सुन, हे नाथ! मैंने उस उद्यान के एकान्त मन्दिर में जा श्रीविघ्नेश्वर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जी का पूजन किया। पूजन समाप्त होने पर देखती क्या हूं कि मेरी सखियां निज सिद्धि से अकस्मात् उड़कर आकाश में इधर उधर विहार करने लगीं। यह देख मुझे बड़ा कौतुक हुआ सो मैंने उन सबों को बुलाकर नीचे उतरवाया और पूछा कि यह क्या बात है? उन सबों ने उत्तर दिया कि यह सब डाकिनीमन्त्र की सिद्धियां हैं उसमें नरमांस खाना होता है और हमलोगों की उपदेशकर्त्री कालरात्रि नाम्नी ब्राह्मणी है। जब सखियों ने मुझसे ऐसा कहा तो मेरा मन ललच गया कि मैं भी इसी प्रकार आकाश में उड़कर आनन्द करती तो बहुत अच्छा होता किन्तु नरमांस खाने के भय से कुछ आगा पीछा विचार चुप हो रही। फिर उन लोगों की सिद्ध देख मुझे जो लोभ उत्पन्न हुआ तो मैंने उन सखियों से कहा कि मुझे भी तुम लोग इसका उपदेश दिलवा दो जिसमें मैं भी आकाश में उड़ सकूं। मेरी यह बात सुन वे लोग उसी क्षण उड़कर चली गईं और थोड़ीही देर में विकटरूपधारिणी कालरात्रि को लिये हुई आन पहुँचीं। देखती क्या हूं कि उसकी दोनों भौंहें मिली हुई हैं, आंखे चिपुकी और नाक चिपटी है, दोनो गाले मोटे मोटे, दांत बड़े बड़े और निकले हुये तथा और कन्धे उठे हुये हैं। स्तन लम्बे लम्बे और पेटआगे को घड़ा सा निकला है तथा दोनों पैर चौड़े और उनकी उँगलियां छितराई हुई हैं, मानो ब्रह्मा ने कुरूपता की परम अवधि रच दी है। सखियों ने मुझे स्नान कराया फिर श्रीगणेशजी का पूजन कर मैंने उसे प्रणाम किया तदुपरान्त उसने सब वस्त्र उतरवा, सर्वाङ्ग नङ्गी बना भैरवजी की पूजा मुझसे कराई। फिर मेरा अभिषेक कर उसने उन मन्त्रों को मुझे सिखाया और वही नरमांस जिससे देवता का पूजन किया गया था मुझे खाने को दिया। मन्त्र सीखने और नरमांस खाने के साथ-ही मेरे पैर पृथ्वी से ऊँचे हो गये और मैं भी नङ्गीही सखियों के साथ आकाश में उड़ने लगी। कुछ देर लौं योंही व्योमविहार कर मैं गुरुकी आज्ञा ले आकाश से उतरी और निज घर को गई। इस प्रकार हमलोगों ने मिलकर बाल्याव-स्थाही में डाकिनीचक्र के वशवर्ती हो अनेक मनुष्यों को मार मारकर खा डाला। इसी कथा के अन्तर्गत हे महाराज! अब एक दूसरी कथा और भी सुनिये कि,—

उस कालरात्रि का पति विष्णुस्वामी नाम एक ब्राह्मण था, जो वेदविद्या में बहुत अच्छा विद्वान् होने के कारण नाना देशदेशान्तर से आये हुये विद्यार्थियों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को पढ़ाया करता था। उन शिष्यों में सुन्दरक नामक एक युवा विद्यार्थी समस्त शीलगुणों से सम्पन्न था। एक समय, पति के विदेश जाने पर वह कालरात्रि कामदेव से पीड़ित हो एकान्त में उससे कहने लगी कि तू मुझसे रमण कर, निस्सन्देह कुरूपों को कामदेव प्रायः सताकर हास्यपात्र बनाता है, सो उस कालरात्रि ने अपनी कुरूपता भुला उस परम रूपवान् सुन्दरक से रमण करना चाहा। किन्तु उस शीलवान् व्यक्ति ने कहा कि आप हमारी गुरुपत्नी हैं यह काम अत्यन्त अनुचित होगा। ठीकही है "नारि कामवश ह्वै चहै कैतो करहिँ कुयोग। उत्तम मारग ते कबहुँ डिगत न सज्जन लोग"। जब ऐसा कोरा उत्तर पाया तब तो कालरात्रि ने अपने बाल बिखरा लिये, वस्त्रों को फाड़ डाला और अपनेही दांतों तथा नखों से शरीर को काटा नोंचा तथा खसोट लिया और पति के आने पर रोती हुई उसके सन्मुख जा कहने लगी कि देखिये नाथ! सुन्दरक ने मेरे साथ बलात्कार करना चाहा था सो मेरी कैसी दुर्दशा की है। यह सुन उपाध्याय विष्णुस्वामी क्रोध से लाल हो गये, क्यों न हो "अति विसास इन तियन पै खोइ देत सब ज्ञान"। सन्ध्या समय जब सुन्दरक घर में आया तो विष्णुस्वामी ने शिष्यों के साथ मिलकर उसे लात मूके और लाठियों से खूबही मारा। जब वह मार खाते खाते बेसुध हो भूमि पर गिर पड़ा तो शिष्यों से उठवा कर उसे रात को बाज़ार में फेंकवा दिया। रात की ठण्ढी ठण्ढी हवा जो उसे लगी तो उसे कुछ सुधि आई तब तो वह अपनी ऐसी दशा देख विचारने लगा कि देखो स्त्रीप्रेरणा कैसी प्रबल होती है कि हमारे गुरुजी इतने विद्वान् और बुद्धिमान् होने पर भी यथार्थ तत्व को न विचार सके! अथवा सृष्टि के आरम्भही से यह नियम चला आता है कि विद्वान् ब्राह्मणों के मोक्षद्वार के बन्द रखने के लिये काम और क्रोध दो अर्गला हैं। यदि ये दोनों रोक न होतीं तो वे अपने विद्याबल से अवश्य मुक्ति पा जाते। देखो पूर्व समय में क्या मुनि लोगों को भी निज स्त्रियों के भ्रष्ट होने की शङ्का नहीं हुई थी और क्या इसी सन्देह के कारण वे श्रीमहादेवजी पर क्रुद्ध नहीं हुये थे? जब श्रीमहादेवजी ने पार्वती को यह दिखाने की इच्छा से कि मुनियों के हृदय में भी अशान्ति हो जाती है, क्षपणक (बौद्ध भिखारी) का रूप धारण किया था तो आवेश में आ उन लोगों ने श्रीशिवजी को शाप दे दिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

था किन्तु अन्त में जब उन्होंने शम्भु भगवान् को पहिचाना और यथार्थ तत्व के भेदू हुये तो उन्हीं शिवजी के शरण में आये और अपनी भूल स्वीकार की। सो जब काम क्रोधादि छ शत्रुओं से ठगी जाकर बड़े बड़े ऋषि मुनि लोग भी चूक जाते हैं तो हमारे उपाध्याय विचारे साधारण ब्राह्मण किस गिनती में ठहरे । यों विचार सुन्दरक चोरों के डर से वहां से उठकर समीपवाली छोटी गोशाला की झोपड़ी में जो बिलकुल शून्य थी जा पैठा और एक कोने में छिपकर चुपचाप बैठ गया थोड़ीही देर में देखता क्या है कि उसी घर में कालरात्रि ने भी प्रवेश किया। हाथ में उसके नङ्गी तलवार थी और मुंह के फूत्कार के साथ नथनों से भी अग्नि की ज्वाला निकलती थी । उसे इस प्रकार देख सुन्दरक तो बहुतही डर गया और राक्षसों को मारनेवाला मन्त्र पढ़ने लगा जिसके प्रताप से वह काल-रात्रि उसे देख न सकी और वह अपना सारा शरीर सिकोड़े एक कोने में दबका रहा। तब तो कालरात्रि ने उड़नेवाला मन्त्र पढ़ना आरम्भ किया और थोड़ीही देर में सखियों को साथ लिये गोशाला सहित वह आकाश में उठ खड़ी हुई और एक ओर को चली । सुन्दरक ने उस मन्त्र को सुनतेही कुल स्मरण कर लिया। कालरात्रि आकाशमार्ग से उड़ती हुई उज्जयिनी में जा पहुँची और एक बगीचे में उस गोशाला को उतार, उसमें से निकल महाश्मशान में जा डाकिनीचक्र में हो, क्रीड़ा करने लगी। इधर सुन्दरक को जो भूख लगी तो वह भी उसके बाहर नि-कल बगीचे से कन्द मूल उखाड़ खाने लगा। जब उसका पेट भर गया तो लौटकर उसी गोशाला में आ छिपकर बैठ रहा। इतने में कालरात्रि भी आई और मन्त्र-बल से मकान सहित उड़ती हुई अपने देश में आ पहुँची; फिर गोशालावाहन को अपने पूर्वस्थान पर रख सखियों सहित अपने घर में जा पैठी । यह सब कौतुक देख सुन्दरक आश्चर्य्य में आ गया सो वह रात भर उसी गोशाला में पड़ा रहा, प्रातःकाल वहां से निकल अपने मित्रों के पास गया और उन्हें सब वृत्तान्त सुना कहने लगा कि भाइयो अब मैं इस देश में न रहूंगा कहीं दूसरे देश को चला जाता हूं परन्तु जब उसके मित्रों ने उसे समझाया और आश्वासन दिया तो वह उन लोगों के साथ रहने लगा । उपाध्यायजी का घर छोड़ उसने सत्र में भोजन करना आरम्भ किया और मित्रों के साथ विहार करता हुआ रात्रि के समय भी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वहीं पड़ रहता था। एक समय वह कालरात्रि बाज़ार में कुछ वस्तु मोल लेने गई थी सो उसने वहां सुन्दरक को देख पाया, उसके समीप जा पुनः कामातुरा हो कहने लगी कि हे सुन्दरक! तू मुझसे प्रेम कर, तेरेही अधीन मेरा जीवन है। सुन्दरक ने कहा कि आप ऐसा न कहें यह धर्मविरुद्ध बात है आप मेरी गुरुपत्नी हैं, माता के तुल्य हैं। यह सुन कालरात्रि ने कहा कि यदि तू योंही धर्म की दुहाई देता है तो मुझे प्राणदान दे इससे बढ़कर कोई धर्म्म नहीं हो सकता। यदि तू मुझसे प्रेम न करेगा तो मैं अपने प्राण त्याग दूंगी। तब तो सुन्दरक ने कहा कि हे माता! आप अपने हृदय में ऐसा न विचारें, गुरुपत्नी से असत् प्रेम करने से धर्म्म क्योंकर रहेगा? जब इस प्रकार सुन्दरक ने उसकी बात न मानी तब तो वह क्रोध करके उसे बहुत भय दिखाने लगी, अन्त अपने वस्त्रेत्यादि अपने हाथोंही से फाड़ निज घर को चली गई और अपने पति से झूठेही कहने लगी कि देखो सुन्दरक ने आज पुनः मुझसे बाजारही में बलात्कार करना चाहा और मेरी दुर्दशा कर डाली है। तब तो उपाध्याय ने सत्र के प्रबन्धकर्त्ता से जाकर कहा कि सुन्दरक बड़ाही दुष्ट और बध करने के योग्य है उसका भोजन बन्द कर दीजिये सो सत्र से सुन्दरक को भोजन मिलना बन्द हो गया। तब तो वह अत्यन्त दुःखित हो देशपरित्याग पर उतारू हुआ; आकाश में उड़ने का मन्त्र तो उसने गोवाटवाहन में छिपकर यादही कर लिया था किन्तु उतरने का मन्त्र सुनकर भी वह भली प्रकार स्मरण न कर सका था, सो उसे भी याद करने की इच्छा से वह एक रात पुनः उसी शून्य गोशाला घर में जा छिपा। वहां वह कालरात्रि पुनः पहिलेही की नाईं आई और मन्त्र पढ़ आकाशद्वारा उड़ती हुई उज्जयिनी में जा पहुँची। वहां शाक के बगीचे में मन्त्रबल से गोशालागृह को उतार वह श्मशान में क्रीड़ा करने चली गई।

यद्यपि सुन्दरक ने पुनः उस मन्त्र को सुना परन्तु ठीक स्मरण न कर सका। ठीकही है **"विना गुरू-उपदेश के मंत्रसिद्धि नहिं होय"**। फिर उस बाग में कन्द मूल फल खाकर उसने यहां ले आने की इच्छा से उसी गोशाला-वाहन में कुछ रख भी लिये और छिपकर उसी में बैठ रहा। कुछ देर के उपरान्त कालरात्रि भी आई और मन्त्रबल से उड़ती हुई अपने देश में आ वाहन को यथा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्थान स्थापन कर घर में जा पहुँची। सबेरे सुन्दरक उस गोशालागृह से निकल उन कन्द मूल को ले बाज़ार में गया कि उन्हें बेंचकर कुछ खाने पीने की वस्तु मोल लेवे। वह उन कन्दमूल को बेचही रहा था कि राजा के उन सेवकों ने जो मालवदेशनिवासी थे आकर निज देश की चीज़ देख उन्हें बिना मूल्यही उठा लिया और चले। जब सुन्दरक उनसे कहने लगा कि मैं बिना मूल्य लिये न दूंगा तब उन शठों ने उसे हथकड़ी डाल दी और उस पर यह अपराध लगाकर कि यह हमें पत्थर मारता है राजा के सन्मुख ले गये ; उसके मित्र भी उसके साथही साथ राजा के पास चले । वहां जाकर सिपाहियों ने राजा से कहा कि, "महाराज! मालवदेश के ताजे कन्दमूल लाकर यह बाजार में बेचता था, हमलोगों ने जब इससे पूछा कि ये ताजे मालवीय कन्दमूल तुमने कहां से पाये तो पहिले तो यह कुछ न बोला फिर पूछने पर हमें पत्थर मारने लगा सो हमलोग इसे श्रीमान् के पास धर लाये हैं। जब राजा ने उससे पूछा कि यह क्या बात है तो उसके मित्रों ने कहा कि महाराज इसे हमलोगों के साथ आप इस महल के कोठे पर खड़ा कर दीजिये तो यह सब हाल सुना देगा । महाराज ने बहुत अच्छा कह उसे मित्रों सहित राजमहल के कोठे पर खड़ा कर दिया। ज्योंही सुन्दरक ने वह मन्त्र पढ़ा त्योंही वह महलसहित आकाश में उड़ चला । उड़ते उड़ते जब प्रयाग के समीप वह महल पहुँचा और सुन्दरक भी बहुत थक गया, तो उसने देखा कि एक राजा जल में स्नान कर रहे हैं, वह महल में से गङ्गाजी में धम्म से कूद पड़ा और तैरता हुआ उस राजा के सन्मुख जा खड़ा हुआ । राजा ने आश्चर्य्य से पूछा कि आप कौन हैं और क्यों आकाश से यहां उतरे हैं? जब राजा ने यह प्रश्न किया तो सुन्दरक ने यों उत्तर दिया कि मैं श्रीदेवदेव महादेवजी का मुरजक नामक गण हूं मुझे मानुषी भोग की इच्छा हुई सो श्रीशङ्करजी की आज्ञा से मैं आपके पास आया हूं। यह सुन उसकी बात सत्य मान राजा ने धन धान्य स्त्री वस्त्र रत्नालङ्कारों से पूरित एक नगर उसे दिया और उसकी बड़ी खातिरी करी। उस पुरी में प्रवेश करके वह मित्रों सहित नित्य आकाश-विहार करता, स्वर्णपर्य्यङ्क पर सोता तथा उत्तमोत्तम स्त्रियोंद्वारा चामरवायु का आनन्द लेता, इन्द्र के सुख को प्राप्त करने लगा। एक समय उससे किसी ऐसे सिद्ध से भेंट हो गई जो स्वयं भी आ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काश में उड़ने की शक्ति रखता था; उसने सुन्दरक को उतार का मन्त्र भी सिखला दिया। जब इस मन्त्र को उसने प्राप्त कर लिया तब तो एक दिन वह आकाश-मार्ग से उड़ता हुआ निज नगर और धन सम्पति तथा मित्रों सहित अपने प्राचीन कान्यकुब्ज देश में जा उतरा। वहां के राजा ने जब यह हाल सुना कि सुन्दरक सर्वसमृद्धि सहित व्योममार्ग से उतरा है तो वह आपही उससे मिलने को चला आया। राजा ने जब सब वृत्तान्त पूछा तो सुन्दरक ने समय और अवसर को उपयुक्त जान कालिरात्रि की समस्त करतूत को स्पष्ट रीति से कह दिया, जिसे सुन राजा ने कालरात्रि को बुलवा भेजा। पूछी जाने पर उसने निर्भय हो सब हाल सच्चा सच्चा कह दिया। राजा ने क्रुद्ध होकर आज्ञा दी कि इसके दोनों कान काट लो, ज्योंही सिपाहियों ने उसे पकड़ा कि सबके देखतेही देखते वह उन लोगों के हाथ से न जाने कहां लोप हो गई और सब लोग मुंह ताकते रह गये। तब तो राजा ने यह आज्ञा दे दी कि अब कालरात्रि हमारे देश में न रहने पावे। सुन्दरक भी कुछ दिनों वहां रहकर राजा से सत्कार पा पुनः आकाशमार्ग से उड़ता हुआ अपने राज्य में अपनी पुरी सहित चला आया।

यों, इस कथा को, रानी कुवलयावलि अपने पति राजा आदित्यप्रभ को सुनाकर कहने लगी, कि हे नाथ! देखा आपने, डाकिनीमन्त्र की सिद्धियां इस प्रकार की होती हैं। मेरे पिता के देश में यह वृत्तान्त हुआ था और इसकी चर्चा तथा धूम सारे संसार में है, और जैसा कि मैं आपसे पूर्व में कह चुकी हूं कि मैं कालरात्रि की शिष्या हूं और पतिव्रता होने के कारण उससे भी अधिक सिद्धियां मुझ में हैं। आज आपने देखही लिया कि मैं आपके कल्याण और आपकी उन्नति के लिये पूजन कर रही थी और इस बात के उद्योगही में थी कि मन्त्रबल से किसी पुरुष को खींच मँगाऊँ और उसका बलिदान चढ़ाऊँ कि इतने में आप आ गये। सो अब आप भी हमारे इस डाकिनीमण्डल में प्रवेश कर मन्त्रबल से संसार के समस्त राजाओं को जीत उनके मस्तकों पर पैर रखिये। यह सुन राजा ने पहिले तो यह कह अपनी अनिच्छा प्रकाश की "कि कहां तो डाकिनीमण्डल में महामांस का भोजन करना और कहां राजधर्म में प्रजापालन करना। भला ये दोनों काम एक संग कैसे हो सकते हैं सो मैं इस मण्डल में प्रवेश न करूँगा,"

किन्तु जब रानी निज प्राणपरित्याग पर उद्यत हुई तो राजा सम्मत हो गये। ठीकही है—"विषयवासना-वस भयो जिनको मन मति-अन्ध। ते उत्तम पथ ते डिगहिँ लाख करहु प्रतिबन्ध" ॥ तब तो उसने उसी पूर्व-पूजित मण्डल में राजा का प्रवेश कराया और उनसे शपथ ले यों कहने लगी कि यह जो फलभूति नामक ब्राह्मण आपके पास रहता है उसी को मैंने वलि चढ़ाने का विचार किया था और उसे मन्त्रद्वारा खींचने का उद्योग करनेवाली थी; सो इस प्रकार खींच बुलाने में अधिक परिश्रम है उत्तम तो यह होगा कि हमलोग किसी रसोइयों को भी इसी मण्डल में प्रवेश करावें जो उसे स्वयं मारकर उसका मांस पका लावें। उसके वलिमांसभक्षण में आपको किसी प्रकार घृणा करना उचित नहीं है क्योंकि इस काम के समाप्त हो जाने पर हमलोगों को पूर्ण उत्तम सिद्धि प्राप्त हो जायगी। इस प्रकार जब रानी ने अनुरोध किया तो यद्यपि राजा पाप से बहुत डरते थे तथापि उन्होंने उसकी बात स्वीकार कर ली, हा! "कठिन होत अनुरोध तियन को टारि सकै कोउ नाहीं। बुद्धिमान् वाहीं को गनियत वल करि रोकै ताहीं ॥" तब तो महाराज ने साहसिक नामक रसोइयों को बुला भेजा और उसे भी मण्डल में दीक्षित कर विश्वास दिला यों कहा कि 'जो कोई तुम्हारे पास जाकर यों कहे कि आज राजा और रानी साथही भोजन करेंगे, शीघ्र रसोई पकाओ, उसी का सिर तुम काट लेना और और फिर उसी के मांस को एकान्त में पकाकर खूब स्वादिष्ट भोजन बना लाना" रसोंइया यह सुन 'जो आज्ञा' कह अपने घर गया। प्रातःकाल जब फलभूति राजा के समीप आया तो महाराज ने उसे आज्ञा दी कि, पाकगृह में जाकर साहसिक रसोइयों से कह आओ कि आज महाराज और रानी साथही भोजन करेंगे सो शीघ्रही स्वादिष्ट रसोंई बनाकर तयार करो। फलभूति 'बहुत अच्छा' कह कर ज्योंही बाहर निकला कि राजा के पुत्र चन्द्रप्रभ ने आकर उससे कहा कि हे फलभूति। यह सोना लो और जैसे कुण्डल पिताजी के लिये तुमने बनवा दिये थे वैसेही दो कुण्डल मेरे लिये अत्यन्त शीघ्र बनवा दो। फलभूति ने कहा कि मैं तो महाराज की ऐसी आज्ञा लेकर पाकगृह में साहसिक रसोंइये के पास जाता हूं—राजकुमार ने कहा कि तुम मेरे कुण्डल बनवा लाओ तुम्हारा सन्देश मैं जाकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कह आता हूं। इस प्रकार बड़े अनुरोध के साथ राजकुमार ने तो फलभूति को कुण्डल बनवाने के लिये विदा किया और आप सन्देश लेकर साहसिक के पास गया। पाकस्थल में उस समय और कोई भी न था, ज्योंही राजकुमार ने वह सन्देश साहसिक से कहा त्योंही उसने राजकुमार का सिर तलवार से काट लिया और उसका मांस पका राजा और रानी के समीप ले गया, उन दोनों ने यथार्थ भेद को न जाना और उस पके हुये महामांस को फलभूति का मांस समझकर पूजनोपरान्त खा लिया। रात भर राजा को इस बात का पश्चात्ताप रहा, प्रातःकाल क्या देखते हैं कि फलभृति हाथ में दो स्वर्णकुण्डल लिये साम्हने से चला आता है। घबड़ाकर राजा ने बहाने से पूछा कि ये कुण्डल कैसे हैं? जब उसने कहा कि राजकुमार ने मुझे बनवाने को दिये थे तो उससे सारा हाल सुनतेही राजा पछाड़ खाकर भूमि पर गिरे और व्याकुल हो 'हा पुत्र! हा पुत्र' कर रोने लगे; फिर तो उन्होंने रानी के कार्य्य की बड़ी निन्दा की। जब मन्त्री लोगों ने हाल पूछा तो राजा ने सारा भेद कह सुनाया जिसे सुन उन लोगों ने भी खेद किया। तब तो राजा ने चिल्लाकर कहा कि हा! सच फलभूति कहा करता था कि,— "अन्त भले का भला और अन्त बुरे का बुरा" जैसे भित्ति पर गेंद फेंकने से वह उलटकर फेंकनेवालेही पर आता है वैसेही जो कोई दूसरे के साथ दुष्टता करता है उसे आपही उसका दण्ड उलटकर मिल जाता है। हम पापियों ने जो निरपराध ब्राह्मण को मारना चाहा तो उसके बदले में अपने पुत्रही का घात कर हमलोग उसका मांस खा बैठे। इस प्रकार शोक से नीचे मुंह किये हुये मन्त्रियों को राजा ने बोध देकर फलभूति को अपना सारा राज्य समर्पण कर वहां का राजा बनाया और अपुत्र हो अपनी पापशुद्धि के लिये यद्यपि वे पश्चात्ताप से दग्ध हो रहे थे तथापि अग्नि में भार्य्यासहित प्रवेश कर उन्होंने प्रायश्चित्त किया, और फलभूति उस राज्य को पाकर उत्तम प्रकार से पृथ्वी का शासन करने लगा।

इस प्रकार अपनी भलाई और बुराई का फल मनुष्य को आपसे आप मिल जाता है। यों महाराज वत्सराज के साम्हने इस कथा को कह कर यौगन्धरायण ने निवेदन किया कि हे राजेन्द्र! आपने ब्रह्मदत्त को जीतकर उसके साथ उत्तम वर्ताव किया है यदि इतने पर भी वह विरुद्धाचरण करेगा तो बध के योग्य होगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जब मुख्य मन्त्री ने यों कहा तो महाराज वत्सराज उठ खड़े हुये और अपने आन्हिक कृत्य में लगे । सर्व दिशाओं के जीतनेवाले महाराज वत्सराज दूसरेही दिन कौशाम्बी राजधानी के प्रति लावाणक से चल पड़े और थोड़ेही दिनो में साथियों सहित अपनी उस नगरी जा पहुँचे, जो ऊँची ऊँची पताकारूपी भुज लताओं को उठाये मानों नृत्य करती सी जान पड़ती थी । जिस समय महाराज उस पुरी में पैठे तो नगरनिवासी स्त्रियों के कमलरूपी बन को ऐसा सुख प्राप्त हुआ मानो प्रात:काल का शीतल मन्द समीर बहता हो । चारो ओर से भाट और बन्दीजन महाराज की स्तुति कर रहे थे और अनेक देशान्तरों के राजाओं ने महाराज के चरणों पर प्रणाम कर उनका पूजन किया ।

यों सब राजन जीति कै कियौ राज्य अभिराम ।
सिंहासन शोभित कियौ कुलगत परम ललाम ॥
जैजैकार भयो रह्यो गगन पूरि अहलाद ।
मन्त्रिमुख्यपरितोषितावनिपति-साधुप्रवाद ॥
बसुधा सकल अधीन कै द्विजगण पूजित कीन्ह ।
मन्त्री सत्कारित किये वत्सराज परवीन ॥
राजा कीन्हों इन्द्र सम धन-सुवारि-बरसात ।
घर घर बजत बधावनो सरस मोद सरसात ॥
राज्यभार दै दोउ सचिव प्रिया सङ्ग सुख मोद ।
करत रैन दिन ह्वै सुचित वत्सराज सविनोद ॥

श्रीमृत्युञ्जय ।



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

नरबाहनदत्तजन्म चौथा लम्बक।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि वालविनैबल पाई।
शम्भुमुखार्णव ते निकसो या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई॥
प्रेम समेत पिये जो कोई बलवीर भनै बलि ईस दुहाई।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द असन्द बड़ो बिबुधाई॥

प्रथम तरङ्ग।

कर्णघातकाम्पितसकलभूतलअचलसमाज।
सिद्धि सुमङ्गल साजहीं वारनमुख गणराज॥

तब तो महाराज वत्सराज सारी पृथ्वी को जीत उज्जयिनी में विराजमान हो सुखपूर्वक एकछत्र राज्य करने लगे। राजकाज का सारा बोझ तो उन्होंने यौगन्धरायण और रुमखान् को दे दिया और वसन्तक को अपना सखा बना सुखी हो सानन्द विहार किया करते थे। स्वयं तो वे वीणा बजाते और रानी वासवदत्ता तथा रानी पद्मावती के साथ सङ्गीत का पूर्ण आनन्द लेते थे। जैसा उन देवियों का कोयल की नाईं मधुर स्वर था वैसाही मधुर महाराज के वीणा का निनाद होता था, केवल बादन समय के अँगूठे के चलनेही से कुछ भेद प्रतीत होता था। अपने ऊँचे महलों पर विमल चन्द्र की चांदनी में बैठ वे शत्रुओं के मद की नाईं अनेक प्रकार के स्वादिष्ट मद का पान करते थे; उत्तम सुन्दरी स्त्रियां उनके लिये गुलाबी रङ्ग की मदिरा स्वर्णकलशों में क्या लाती थीं मानो कामदेव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के राज्याभिषेक का जल लाती हों जिसका उपभोग महाराज अपनी दोनों प्यारियों के प्रेम के साथ करते थे। दोनों महारानियों का हृदय ईर्षा तथा कोपभाव से शून्य था और दोनों का सुन्दर स्वरूप अहर्निशि देखने पर भी महाराज के नेत्रों को तृप्ति नहीं होती थी । महाराज की पानशाला में अनेक सुन्दर मधुपात्र गुलाबी मधु से भरे यों शोभा पा रहे थे मानों श्वेत पद्मिनी के ऊपर प्रातःकाल के सूर्य्य की रक्त किरणें पड़ी हों । प्रायः ऐसा होता था कि अनेक शिकारियों को साथ लेकर उन्हें हरित वस्त्र पहिना और स्वयं भी हरे वस्त्रों को धारण कर महाराज मृगया खेलने के निमित्त हरे हरे जङ्गलों में जाया करते थे । वे तीक्ष्ण शरों द्वारा कीचड़ों से सने शरीरवाले बाराहों को मारते यों शोभित होते थे जैसे अन्धकारसमूह को नाश करते हुये सूर्य्य भगवान् शोभा पाते हैं । भय से भागते हुये कृष्णसार मृग पीछे फिर फिरकर देखते यों जान पड़ते थे मानो पहिले की जीती हुई दिशायें बार बार फिर फिर कर देखती हों । भारी भारी महिषों के रक्त से जो बनभूमि लाल हो रही थी सो ऐसा प्रतीत होता था कि मानो पृथिवी उनके सींगों के आघात से बचने के कारण कृतज्ञ हो कमल की शय्या बन कर आई हो। जिस समय महाराज, मुंह बाये हुये सिंह के मुखाभ्यन्तर वाण मारते थे और वह गरज के साथही प्राणपरित्याग करता था तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती थी। यद्यपि आखेट के समय कुत्ते और जालों से भी काम लिया जाता था किन्तु महाराज को मृगया के समय केवल अपनेही आयुध और भुजाबल का भरोसा रहता था । इस प्रकार महाराज जब अनेक सुखों का उपभोग कर रहे थे तो एक दिन श्रीनारदभगवान्, निजदेहप्रभा से दिशाओं को प्रकाशमयी करते मानो सूर्य्यवंशीय प्रीति से महाराज वत्सराज के समीप आये । महाराज ने आसन से उठकर अत्यन्त नम्रतापूर्वक उनका स्वागत सत्कार किया और मुनिजी ने भी कुछ देर लों विश्राम कर यों कहा कि हे राजन् सुनिये मैं संक्षेप में आपसे कहता हूं कि—

आपके पूर्व पितामह पाण्डु राजा की भी आपही के नाईं दो भार्य्यायें थीं, एक का नाम कुन्ती और दूसरी का नाम माद्री था। एक समय वेही पाण्डु राजा आसमुद्रान्त पृथिवी को जीतने के उपरान्त आखेट खेलने बन को गये क्योंकि वे मृगया के बहुतही व्यसनी थे। राजा ने जो वाण चलाया तो वह जा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर अरिन्दम नामक एक मुनि को लगा जो मृगरूप से निज भार्य्या के सङ्ग बन में सुरतक्रीड़ा कर रहे थे। मुनि ने झट वह रूप परित्याग किया, राजा ने यह देखतेही खेद से धनुष को पृथ्वी पर फेंक दिया किन्तु मुनि ने कण्ठगत प्राण होते समय उन्हें यह शाप दिया कि 'हे राजन्! मुझ स्वेच्छाचारी को जो तुमने विना विचारेही इस प्रकार मारा है तो तुम्हारी भी मृत्यु निज प्रिया से सम्भोग काल में मेरीही नाईं होवे। यों शाप सुनकर उसी के भय से राजा ने दो पत्नीयों के रहते भी सांसारिक भोगस्पृहा कुल परित्याग दी और शान्त तपोवन में जाकर रहने लगे। एक दिन उस शाप की कुछ ऐसी प्रेरणा हुई कि राजा पाण्डु ने निज भार्य्या माद्री से रमण करना आरम्भ किया और उसी क्षण उनके प्राण जाते रहे। इसीसे कहता हूं कि यह मृगया राजा लोगों का प्रमाद है इसी के कारण अनेक राजे महाराजे स्वयं मृग की नाईं मारे गये हैं। मृगया से क्योंकर कल्याण हो सकता है क्योंकि वह राक्षसी के समान है, जिसका घोरनाद है जिसे कच्चे मांस पर सदा रुचि है, रूखी है, बाल जिसके सदा खड़े रहते हैं और बर्छीही जिसके दांत हैं। अतएव इस मृगया को जिसमें इतना परिश्रम व्यर्थ होता है आप परित्याग कर दीजिये क्योंकि इसमें बध्य और बधक दोनों को समान प्राणसंशय रहता है। आपके पूर्वजों से मेरा अत्यन्त स्नेह था इसी कारण मैं आपसे भी प्रेम रखता हूं, आपको कामदेव का अंश जो पुत्र होनेवाला है वह क्योंकर होगा सो सुनिये।

प्राचीन समय में कामदेव की स्त्री रति ने श्रीमहादेवजी की स्तुति कर उन्हें प्रसन्न किया और यह चाहा कि उसके पति अनङ्ग को सब अङ्ग हो जावें, तो श्रीशिवजी ने एकान्त में उसे यह भेद सुनाया कि स्वयं श्रीगौरीजी निज अंश से इस पृथ्वी पर अवतार ले मेरी आराधना कर पुत्र की इच्छा करेंगी और उन्हें यह कामदेव सुतरूप से उत्पन्न होगा। इसीलिये हे राजन्! श्रीगौरीजी इसी वासवदत्ता के रूप से राजा चण्डमहासेन के घर में उत्पन्न हो आपकी महिषी हुई हैं, अब यह श्रीशिवजी की आराधना कर कामांश पुत्र को उत्पन्न करेंगी जो सर्व विद्याधरों में चक्रवर्ती राजा होगा। ऐसा कह श्रीनारदजी, जिनके बचनों का अत्यन्त आदर किया जाता है, राजा को उनकी दी हुई पृथ्वी प्रत्यर्पण कर अन्तर्धान हो गये। उनके चले जाने पर राजा वत्सराज ने रानी वासवदत्ता के साथ जिसे पुत्र प्राप्ति की बड़ी इच्छा हो रही थी वह सारा दिन इसी चिन्ता में विताया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दूसरे दिन जब महाराज निज स्थान पर बैठे थे कि उनके मुख्य प्रतीहारी नित्योदित ने आकर निवेदन किया कि हे महाराज ! दो बच्चों को गोद में लिये एक गरीब ब्राह्मणी बाहर द्वार पर खड़ी है और श्रीमान् के दर्शनों की प्रार्थना करती है आज्ञा हो तो अन्दर आवे । महाराज ने आज्ञा दी कि अच्छा उसे सादर ले आओ। यह सुन वह प्रतीहारी उस ब्राह्मणी को लिवा लाया, महाराज ने देखा कि वह दुर्बल, धूसरित और पीली पड़ रही है, वस्त्र उसके चीथड़े हो रहे हैं और वह आत्मगौरव के ध्यान से मानों भूमि में गड़ी जाती है, गोद में उसके दो बच्चे मानों दुःख और दैन्य के अवतार से लेटे हैं । उचित प्रणाम किये जाने पर, उसने महाराज से यों कहा कि हे देव ! मैं एक उत्तमकुलोत्पन्ना ब्राह्मणी ऐसी दुर्दशा को प्राप्त हो रही हूं । दैवात् मुझे ये दो पुत्र साथही उत्पन्न हुये हैं, भोजन तो मिलताही नहीं दूध कहां से हो जो मैं इन्हें पिलाऊँ, आपको दीन दुखियों तथा शरणागतों का प्रतिपालक जान यह दुखिया आपकी शरण आई है आपही इस आपत्ति से इसका उद्धार करेंगे । यह सुन महाराज को बड़ी दया उत्पन्न हुई सो उन्होंने उस द्वारपाल को आज्ञा दी कि इस ब्राह्मणी को रानी वासवदत्ता के पास ले जाकर सौंप दो । आगे आगे वह द्वारपाल मानों उसके शुभ कर्मों की नाईं चला और पीछे पीछे वह ब्राह्मणी ; महारानी ने यह जानकर कि इसे महाराज ने मेरे समीप भेजा है, उसे बड़े आदर से बैठाया । दोनों बच्चों को गोद में लिये उस दीन को देखकर महारानी विचारने लगीं कि देखो प्रजापति (ब्रह्मा) की कैसी उलटी गति है कि जहां सुख सम्पति है वहां तो एक भी पुत्र नहीं और जहां अन्न का भी कष्ट है वहां दो दो विलख रहे हैं, यों विचारती थीं कि महाराणी के स्नान का समय हुआ सो उन्होंने चेरियों को आज्ञा दी कि इस ब्राह्मणी के भी स्नानादि का प्रबन्ध कर दो । दासियों ने उसे उत्तम रीति से स्नान करा, स्वच्छ वस्त्र पहिना, स्वादिष्ट भोजन कराया जिससे उस ब्राह्मणी को कुछ समाश्वासन हुआ मानो तप्त भूमि को बरसात का जल मिला । जब वह सुचित होकर बैठी तो रानी वासवदत्ता ने बातचीत से उसकी परीक्षा करने की इच्छा से कहा कि हे ब्राह्मणि ! यदि तुम्हें कोई उत्तम कथा आती हो तो सुनाओ; उसने बहुत अच्छा कह यों आरम्भ किया कि—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्व समय में जयदत्त नामक कोई सामान्य से राजा हो गये हैं जिनके पुत्र का नाम देवदत्त था। जब वह युवा हुआ तो राजा को उसके विवाह की चिन्ता उत्पन्न हुई। वे विचारने लगे कि राज्यलक्ष्मी अत्यन्त चञ्चल होती है इसका उप-भोग वेश्या की नाईं बलपूर्वक किया जाता है किन्तु वाणिज्य करनेवालों की लक्ष्मी कुलस्त्री की नाईं स्थिर होती है वह दूसरों के पास नहीं जाती। इसलिये मैं चाहता हूं कि पुत्र का विवाह किसी व्यापार करनेवाले के यहां करूँ क्योंकि राज्य के तो अनेक दायाद हो जांयगे किन्तु वहां उसे आपत्ति न आवेगी। ऐसा निश्चय ठहरा राजा ने पाटलिपुत्र के वणिक् वसुदत्त की कन्या से निज पुत्रका विवाह करना ठहराया और वसुदत्त ने इस सम्बन्ध को दूरदेशी होने पर भी बहुत अच्छा समझ निज कन्या का विवाह राजकुमार के साथ कर दिया और इतना धन निज जामाता को दिया कि जिसके आगे उसको निज पिता का वैभव हेच जचने लगा। राजा जयदत्त भी उस धनाढ्य वणिक् की पुत्री को बधूरूप से पा पुत्र के सहित निज राज्य में सुखपूर्वक रहने लगे। एक समय वह वसुदत्त नामक वणिक् अपनी समधी राजा जयदत्त के यहां आकर अपनी पुत्री को बड़े उत्साह-पूर्वक निज घर को लिवा ले गया। कुछ दिनों के बाद अकस्मात् राजा जयदत्त का शरीरान्त जो हुआ तो उनके गोत्रवालों ने समग्र राज्य को अपने हाथ तले दबा लिया। उन लोगों के भय से देवदत्त की माता निज पुत्र को लेकर रात के समय चुपचाप किसी दूर दूसरे देश को निकल गई। वहां उसने अ-त्यन्त दुःखित हो देवदत्त से कहा कि हे पुत्र! पूर्व दिशा का स्वामी हमलोगों का प्रभु है तू उनके पास जा वह तेरे राज्य को दिला देंगे। यह सुन राजकुमार ने कहा कि हे माता! जब मैं बिना सेवकों और साथियों के वहां जाऊँगा तो मुझे कौन पूछेगा—यह सुन माता ने कहा कि हे पुत्र! तेरा कहना ठीक है सो तू पहिले अपने ससुर के पास जा, वहां से कुछ धन प्राप्त कर नौकर चाकर ले पूर्वादिशाधीश्वर चक्रवर्ती के पास जा। जब माता ने इस प्रकार आग्रह किया तो वह राजकुमार चित्त में अत्यन्त लज्जित होता हुआ ससुराल को चला और चलते चलते एक दिन सन्ध्या के समय उस नगर में जा पहुँचा। पितृहीन होने तथा निज सांसारिक वैभव के नाश होने और ससुराल में जातेही अश्रुपात होने के भय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से लज्जा के कारण उसकी हिम्मत न पड़ी कि वह ऐसे कुसमय में रात को ससुर के घर में पैठे सो वह समीपही के एक सत्र में बाहर दालान में पड़ रहा; देखता क्या है कि आधी रात के समय एक परम सुन्दरी स्त्री उसके ससुर के मकान पर से रस्सा लटकाकर उसी के सहारे उतरी आती है, उसका सारा शरीर रत्न के आभूषणों से भरा है मानो स्वर्ग से कोई तारा टूट पड़ा हो; जब उसने ध्यानपूर्वक देखा तो पहिचाना कि यह तो मेरीही भार्य्या है, तब तो उसे बड़ा कष्ट हुआ। राजकुमार तो राह के अनेक कष्टों से धूसरित हो रहा था और शरीर से भी उन दिनों बहुत दुर्बल था सो उस स्त्री ने देखने पर भी इसे न पहिचाना, पूछा कि तू कौन है। देवदत्त ने कहा कि मैं यात्री हूं थकने के कारण यहीं दालान में पड़ रहा हूं। तब तो वह वणिक्पुत्री सत्र के अन्दर पैठी और राजकुमार भी उसका हाल देखने के लिये चुपके से उठकर उसके पीछे पीछे हो लिया। वहां जाकर वह एक पुरुष की ओर बढ़ी और वह पुरुष भी उसके पास आ दो चार लात मार झिड़की दे पूछने लगा कि आज तूने इतनी देर आने में क्यों लगाई। तब तो उस पापिष्टा ने बड़े प्रेम के साथ उसके गले में हाथ डाल दिया और उसे किसी प्रकार प्रसन्न कर उसके पास बैठ आनन्दक्रीड़ा करने लगी। यह हाल देख उस बुद्धिमान् राजकुमार ने विचारा कि मुझे दूसरा काम सिद्ध करना है इसलिये यह अवसर मेरे क्रोध करने का नहीं है। मेरा यह शस्त्र राज्यशत्रुओं पर प्रहार करने योग्य है सो उसे मैं इस दुष्टा स्त्री अथवा इस पशुरूपी नीच पुरुष पर चला कर वृथा क्यों कलङ्कित करूँ। अथवा इस कुलकलङ्किनीही का क्या अपराध है! यह सब अपने दुर्भाग्य का दोष है; जान पड़ता है कि विधाता वाम हो मेरे धैर्य्य की परीक्षा करने के लिये इतने दुःख मुझ पर बरसा रहा है। अथवा समान कुल में सम्बन्ध न करने का यह फल है क्योंकि कौवी कौवे को छोड़ कोयल के साथ कैसे प्रेम कर सकती है? ऐसा विचार उसने उस कामार्ता भार्य्या पर उपेक्षा कर दी क्योंकि सज्जनों के उच्च हृदय में यह स्त्रीरूपी तृण किस गिनती में है! उस समय रति के आवेग में उस वणिक्पुत्री के कान से एक बहुमूल्य रत्नजटित बाला वहीं पर गिर पड़ा जिसे उसने जल्दी में न देखा, झट अपने यार से मिल शीघ्रता के साथ जैसी आई थी वैसीही घर को चली गई। उसके चले जाने पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसका यार भी कहीं खसक गया, सो राजकुमार ने उस बहुमूल्य बाले को जिसमें अनेक उत्तमोत्तम रत्न जगमगा रहे थे वहां से उठा लिया, मानों विधाता ने उसको खोई हुई सम्पत्ति को खोजने के लिये यह रत्न का दीप उसके हाथ में दे दिया हो । राजकुमार ने देखा कि वह भूषण बहुमूल्य है, सो अपना मनोरथ सुफल देख वह वहां से निकलकर सीधा कान्यकुब्जदेश को चला गया, जहां उसने उस बहुमूल्य भूषण को एक लाख अशर्फी पर बन्धक रख अनेक हाथी घोड़े खरीदे और बड़ी धूमधाम से पूर्वदिशाधीश्वर के पास गया । वहां से उनको सहायता पा, वह पुनः अपने देश को लौटा और समस्त शत्रुओं को रण में जीत अपना पैतृक राज्य पा सुखपूर्वक रहने लगा। फिर उसने उस गुप्त और अशङ्कित भेद को प्रकाश करने की इच्छा से उस कर्णभूषण को बन्धक से छुड़ा अपने ससुर के पास भेज दिया । वसुदत्त ने देखतेही पहिचाना कि यह बाला तो मेरी पुत्री का है, दामाद के हाथ क्योंकर लगा, कुछ भी उसकी समझ में न आया, सो उसने अपनी सुता को दिखाया । बाले को देखतेही वह भौंचक सी रह गई कि यह तो बहुत दिन से खोया है पिता के पास कैसे आया, किन्तु जब उसे यह विदित हुआ कि उसके पति ने इसे भेजा है तब तो वह एक दम घबड़ा उठी और उस रात की सब बातें स्मरण हो आईं कि जब वह बाला उस सत्र में गिरा था जिसके बाहर एक यात्री को उसने पड़ा देखा था । वह निस्सन्देह मेरा पति था जो मेरे सतीत्व की परीक्षा करने आया था, उसी ने वह गिरा हुआ बाला उठा लिया होगा। इस प्रकार विचार करतेही उस वणिक्सुता का हृदय फट गया क्योंकि उसे अपने दुष्कर्म्म के प्रगट हो जाने से अत्यन्त लज्जा-भय और शोच हुआ । तदुपरान्त उसके पिता ने उस दूती से जो इस भेद को भली प्रकार जानती थी, पूरा हाल सुनकर उसे भ्रष्टा जान, उसके मरने का खेद परित्याग कर दिया । उधर राजपुत्र ने अपना राज्य पा लिया था सो उसके उत्तम गुणों को सुन एक राजा को कन्या उस पर मोहित हो गई जिसका पाणिग्रहण कर वह पुनः आनन्दपूर्वक राज्य करने लगा ।

सो आप देखती हैं कि स्त्रियों का हृदय साहसिक काम करने में वज्र के समान कड़ा होता है और वही भय के समय पुष्प से भी अधिक कोमल हो जाता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है। उनमें कोई कोई ऐसी सद्वंशोत्पन्ना होती हैं कि जो मोती को ना सुवृत्त और स्वच्छहृदय होने से संसार में भूषण मानी जाती हैं। यह राज्यश्री हरिणी की नाईं उछलनेवाली है इसे धीरजरूपी जाल में बांधना केवल बुद्धिमानही जानते हैं। अतएव जो अपनी भलाई चाहते हैं उन्हें उचित है कि चाहे कैसीही आपत्ति क्यों न पड़े अपना शील परित्याग न करें, जैसा कि आप मेरा वृत्तान्त सुनने पर जानेंगी; क्योंकि मेरा जीवनचरित्र इस बात का उदाहरण है। मैंने जो ऐसी दुर्गति में भी अपने सतीत्व की रक्षा करी है हे देवि! उसीका यह उत्तम परिणाम है कि मैंने आपके दर्शन पाये जिससे मेरा सब प्रकार का कल्याण हुआ।

इस प्रकार की कथा उस ब्राह्मणी के मुख से सुनकर रानी वासवदत्ता आदर-पूर्वक उसके विषय में विचारने लगीं कि यह ब्राह्मणी निस्सन्देह किसी उत्तम कुल की पुत्री है, रूपान्तर से निज शील का परिचय देने और इसके बचन की प्रौढ़ता से प्रतीत होता है कि इसका हृदय परम उदार है, और महाराज के शरण आने से इसकी प्रवीणता प्रगट होती है:—ऐसा विचार रानी ने पुनः उस ब्राह्मणी से कहा कि तुम किसकी भार्य्या हो और तुम्हारा क्या वृत्तान्त है सब मुझे सुनाओ; यह सुन वह ब्राह्मणी पुनः कहने लगी कि—

हे देवि! मालवदेश में अग्निदत्त नामक कोई ब्राह्मण रहते थे जो लक्ष्मी और सरस्वती के भण्डार थे और जिन्होंने अपनी सहज उदारता से गरीब दुखियों की सहायताही में सब धन वितरण कर दिया था। समय बीतने पर उन्हें क्रम से दो पुत्र उत्पन्न हुये, बड़े का नाम शङ्करदत्त और छोटे का शान्तिकर था। एक दिन वह छोटा भाई तो विद्या प्राप्त करने की इच्छा से पिता के घर से निकल लड़कपनही में न जाने कहां चला गया। बड़े भाई के साथ मेरा विवाह हुआ, मेरे पिता का नाम यज्ञदत्त था जिन्होंने यज्ञही के निमित्त बहुत सा धन एकत्र किया था। ससुर मेरे बहुत वृद्ध थे सो कुछ दिनों के उपरान्त वे स्वर्गधाम को सिधारे और मेरी सास भी उन्हीं के साथ गईं। मेरे पति तीर्थ करने के बहाने से मुझ गर्भिणी को छोड़ घर से चले गये और माता पिता के दुःख से व्याकुलहो उन्होंने भी सरस्वती-तट पर निज शरीर परित्याग किया। जब यह दुःखद वृत्तान्त उनके साथियों ने आकर मुझे सुनाया तो मैंने भी अग्निप्रवेशद्वारा देहत्याग करने को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इच्छा की परन्तु मेरे सम्बन्धियों ने मुझे ऐसा करने से रोक दिया क्योंकि मैं उस समय गर्भिणी थी। अभी मेरा वह शोक ठण्ढा भी न होने पाया था कि चोरों ने घर में पैठ बचा बचाया धन भी हर लिया जिसमें वे लोग राजा के दिये हुये दान-पत्रों को भी उठा ले गये। तबतो मैं इस भय से कि वहां के दुष्ट लोग मेरा सतीत्व भी कहीं नाश न करें, तीन ब्राह्मणियों के साथ कुछ कपड़े लत्ते ले घर से निकल पड़ी; निज स्थान परित्याग कर दूरदेश में जा मैं उन लोगों के साथ एक महीने तक वहां रही और लोगों के छोटे मोटे काम काज कर किसी किसी प्रकार अपनी जीविका निबाहती थी। फिर लोगों के मुख से यह सुनकर कि महाराज वत्सराज अनाथों के शरणदाता हैं, मैं उन तीनों ब्राह्मणियों के सहित अपने शील को साथ लिये यहां आ पहुँची। ज्योंही यहां उपस्थित हुई कि ये दो बच्चे साथही उत्पन्न हो गये; यद्यपि मेरी साथिनी तीन ब्राह्मणियां थीं तथापि एक तो शोक, दूसरे विदेश, तीसरे दारिद्र्य चौथे सबसे कष्टदायक ऐसे समय में इन दो दो पुत्रों की उत्पत्ति! ब्रह्मा ने मानों मेरे लिये आपत्तियों का द्वारही खोल दिया। तब तो मैंने यह विचारकर कि सिवाय महाराज वत्सराज के इन वत्सों का पालनेवाला कोई नहीं है, स्त्रीभूषण लज्जा को परित्याग कर, बीच सभा में उनकी शरण ली। फिर तो आप जानतीही हैं कि कैसाहू कठोरहृदय मनुष्य क्यों न हो स्त्री और बच्चों का दुःख निज आंखों से देख पिघलही जाता है, फिर महाराज वत्सराज तो परम कोमलहृदय और दयालु हैं, उनका क्या पूछना है। मुझे देखतेही उन्होंने श्रीमती के चरणों के पास भिजवा दिया और आपके दर्शन होतेही मेरी सब विपत्तियां न जाने कहां भाग गईं। यह मेरा वृत्तान्त है, और नाम मेरा पिङ्गलिका है क्योंकि पिताजी के यहां यज्ञ का धूआं लगते लगते लड़कपनही से मेरे दोनों नेत्र पीले पड़ गये थे। मेरा वह शान्तिकर नामक देवर अब भी कहीं विदेश में होगा किन्तु वह कहां है अथवा क्या करता है यह मैं कुछ नहीं जानती।

इस प्रकार जब उस ब्राह्मणी ने अपना वृत्तान्त सुनाया तो देवी वासवदत्ता ने उसे कुलीना निश्चय कर, प्रसन्न हो, उससे कहा कि यहां हमलोगों के पुरोहित शान्तिकर नामक एक ब्राह्मण रहते हैं वह भी विदेशी हैं कदाचित् वही तुम्हारे देवर हों। ब्राह्मणी ने जब यह सुना तो बड़ीही उत्सुकता स उस रात्रि को वि-

ताया, प्रातःकाल होतेही देवी वासवदत्ता ने शान्तिकर को बुलवाकर उसका वंशवृत्तान्त पूछा। जब उसने अपना वंशवृत्तान्त सुनाया तो उन्हें निश्चय हुआ कि यही उस ब्राह्मणी का देवर है फिर तो उन्होंने उस ब्राह्मणी को साम्हने कर उससे कहा कि यही तुम्हारी भौजाई है । जब उन दोनों का परस्पर यों परिचय हो गया और जब शान्तिकर को विदित हुआ कि मेरे सब नातेदार मर गये हैं तो वह अपनी भौजाई को सादर अपने घर लिवा ले गया । माता पिता और बड़े भाई के परलोक होने का उसे परम खेद हुआ, फिर उनके यथोचित कृत्य करने के उपरान्त उसने अपनी भौजाई को बहुत आश्वासन दिया । रानी वासवदत्ता ने भी उन दोनों बालकों के लिये अपने भविष्य पुत्र का पुरोहित-पद तभी से नियत कर दिया। देवी ने बड़े बालक का नाम शान्तिसोम और छोटे का नाम वैश्वानर रक्खा और उन्हें बहुत भारी सम्पदा अर्पण की । ठीकही है—"**जीव अन्ध सम लोक यह चालक अपनो कार । लहत जथारथ सकल फल ताही के अनुसार**" ॥ सो इसी प्रकार यहां आ, विभव प्राप्त कर, वे दोनों बालक, उनकी माता और शान्तिकर सुख से रहने लगे।

योंही कुछ समय बीतने के उपरान्त एक दिन देवी वासवदत्ता ने अपने राजमहल की खिड़की में से देखा कि कोई कुम्हारी सिर पर हड़िया पुरवों की दौरी उठाये पांच पुत्रों के साथ चली जा रही है उन्होंने पिङ्गलिका से जो समीपही बैठी थी कहा कि सखि! देखो पुण्यवान् ऐसे होते हैं कि जिनके आगे पांच पांच पुत्र दौड़ रहे हैं नकि मेरे समान कि जिसे अब लों एक भी सुत नहीं हुआ । यह सुन पिङ्गलिका ने कहा कि हे देवि! पूर्व जन्मकृत पापों का फल भोगने के लिये ये सब बहुत से लड़के दरिद्रों के घर होते हैं और अपनो करनी के अनुसार दुःख भोगते हैं; आप जैसे भाग्यमानों के यहां तो वही न जन्म लेगा जिसने पूर्व जन्म में बड़ी तपस्या की होगी, अतएव आप घबड़ावें नहीं, शीघ्रही भगवान् आपके कुलानुरूप पुत्र आपको देंगे । पिङ्गलिका का ऐसा बचन सुनने पर भी रानी पुत्रप्राप्ति के लिये बड़ी उत्सुक थीं, सो वह दिन उनका उसी चिन्ता में बीता। दूसरे दिन महाराज वत्सराज ने आकर कहा कि हे देवि! नारदजी कह गये थे कि श्रीशङ्करजी की आराधना से तुम्हें पुत्र उत्पन्न होगा सो उन्हीं वरदायी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शम्भु भगवान् की सेवा करनी चाहिये उनकी कृपा से हमलोगों की अभिलाषा अवश्य पूर्ण होगी। यह सुन देवी वासवदत्ता ने नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि हे नाथ! आपका कहना बहुतही उचित है मैं ऐसाही करूँगी। जब रानी ने व्रत करना निश्चय ठान लिया तो राजा ने भी मन्त्रियों तथा सारी प्रजा सहित श्रीशङ्करजी की आराधना प्रारम्भ की। अभी उन लोगों ने तीनही रात्रि उपवास किया था कि आशुतोष भगवान् ने प्रसन्न हो, स्वप्न में दर्शन दे, राजा रानी से कहा कि "उठो, कुछ चिन्ता मत करो, तुम्हें एक कामांश पुत्र उत्पन्न होगा जो मेरे प्रसाद से समग्र विद्याधरों का स्वामी होनेवाला है"।

यौं कहि शङ्कर शम्भु प्रभु भये सु अन्तर्धान।
दम्पति लहि बरदान शुभ मान्यो हरष महान॥
उठि भोरे कहि स्वप्न सब मुदित किये पुर लोग।
व्रतपारण उत्सव सहित विरच्यो अवसर जोग॥

सहर्ष यौंही कछु काल बीते
रानी सुशीला निशि स्वप्नमध्ये।
लख्यो कोऊ लम्ब जटासुधारी
मनुष्य दीन्हों फल पाणिपद्मे॥

राजा सुन्यौं स्वप्न प्रसन्नचेता
कृपा करी शम्भुमहेशदानी।
फलाभिव्याजेन ज़ु देविलब्धा
पुत्रप्रसूतीहिँ समीप जानी॥

दूसरा तरङ्ग ।

कुछ दिनों के उपरान्त महाराज वत्सराज के हृदय में महोत्सवकारक कामांशावतारवाला गर्भ रानी वासवदत्ता को रहा । रानी के चञ्चलनेत्रवाले मुख की ज्योति कुछ पीली पड़ गई थी जिसकी शोभा ऐसी हो रही थी मानो गर्भस्थ कामदेव की प्रीति से चन्द्रदेव इस लोक में आ गये हों । रानी की सेवा करनेवाली सखियां यों शोभा पाती थीं मानो होनहार विद्याधरेश की गर्भसेवा करने के लिये सब विद्या मूर्तिमती होकर आई हों । रानी के श्याम मुखवाले दोनों पयोधर ऐसे जान पड़ते थे मानो पुत्र के गर्भाभिषेक के लिये सोने के ऐसे दो घड़े हों जिनके मुख पर हरित रङ्ग के पल्लव रक्खे हों। रत्नमहल के अन्दर जब रानी मणिनिर्मित पलङ्ग पर सोती थीं तो चारो ओर की चमक दमक से यही जान पड़ता था कि मानो भावी पुत्र की आक्रान्ति से भयभीत हो सब रत्न रानी की सेवा में अभी से लगे हैं । रानी के विमान पर बैठने से जो छाया झलक मारती थी तो जान पड़ता था कि विद्याधरों की लक्ष्मी मानो उतरकर प्रणाम करने को आई हैं। कथाप्रसङ्ग की बात छिड़ जाने पर रानी को प्रायः यन्त्र मन्त्र की बातें सुनने की बड़ी इच्छा हुआ करती थी । प्रायः वह यह स्वप्न देखतीं कि मानों वह आकाश में विहार कर रही हैं और विद्याधरों की नारियां आसपास बैठी हुयीं उन्हें उत्तमोत्तम रागों की गीत सुनाती हैं। नींद खुलने पर जब महाराणी की इच्छा होती कि मैं जाग्रत अवस्था में भी वैसा देखूं कि आकाश से भूतल पर कैसा कौतुक दिखाई पड़ता है तो मन्त्री यौगन्धरायण अपने यन्त्र मन्त्र और इन्द्रजालादिप्रयोग से उनकी उस इच्छा को पूरी कर देता, और उस पुर की नारियों को इस आश्चर्यमय कौतुक को देखकर परम विस्मय होता था । एक समय की बात है कि महारानी के जी में विद्याधरों की उदार कथा सुनने की इच्छा हुई अतएव उन्होंने यौगन्धरायण को बुलाकर आज्ञा दी कि विद्याधरों की कोई उत्तम मनोहर कथा मुझे सुनाओ । यौगन्धरायण ने आज्ञा पाकर कथा को इस प्रकार से आरम्भ किया कि—

श्रीपार्वतीजी के पिता पर्वतराज सुप्रसिद्ध हिमवान् नाम उत्तर में हैं, वे केवल पर्वतोंही में श्रेष्ठ नहीं हैं किन्तु श्रीदेवदेव गौरीपति के भी पूज्य हैं। उस पर्वत पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो विद्याधरों का निवासही रहता है सो एक समय की बात है कि वहां जीमूतकेतु नामक कोई राजा हो गये हैं। वंशपरम्परा से उनके घर में कल्पतरु की स्थिति चली आती थी, इस वृक्ष का जैसा नाम है वैसाही अर्थ भी है अर्थात् वह सब मनोरथों का पूरा करनेवाला है। एक समय राजा जीमूतकेतु ने निजोद्यान में जाकर अपने कल्पतरु देवता से प्रार्थना की कि हे देव! हमलोग आपकी कृपा से अपनी इच्छा के अनुसार सब वस्तु को पाते आये हैं इसलिये अब मेरा यही निवेदन है कि मुझ अपुत्र को आप दया कर एक सर्वगुणसम्पन्न पुत्र दीजिये। तब कल्पतरु ने प्रसन्न होकर कहा कि हे राजन्! आपको एक ऐसा पुत्र उत्पन्न होगा कि जिसको अपने पूर्व जन्म की सब कथा स्मरण रहेगी और जो बड़ा दानी तथा सर्वसाधारण का उपकार करनेवाला होगा। यह सुन महाराज परम सन्तुष्ट हुये और कल्पतरु को प्रणाम कर निज महलों को पधारे वहां पहुँचतेही उन्होंने यह सब वृत्तान्त रानी से कहा जिसको सुनकर वह परम आनन्दित हुई। कुछ दिनों के उपरान्त महारानी गर्भवती हुई और एक परम सुन्दर पुत्र उनको उत्पन्न हुआ जिसका नाम जीमूतवाहन रक्खा गया। सर्वसाधारण को हित करनेवाली अनुकम्पा उसके साथही साथ मानो पैदा हुई थी, ज्यों ज्यों जीमूतवाहन सयाना होता गया त्यों त्यों वह भी उसके साथ बढ़ती गई। युवा होने पर पिता ने उसे युवराज के पद पर स्थापन किया और वे सदा उसके उत्तम आचरण से प्रसन्न रहते थे, एक दिन जीमूतवाहन ने एकान्त में अपने पिता से यह निवेदन किया कि हे तात! इस संसार में सब वस्तु क्षणभङ्गुर हैं केवल बड़ों का निर्मल यश कल्प * पर्यन्त स्थिर रहता है। यदि वह यश परोपकार करनेही से प्राप्त होता हो तो उदार पुरुषों के लिये इससे बढ़कर प्राणाधिक धन और क्या हो सकता है? सम्पत्ति, यदि परोपकार में न लगाई जाय तो वह विद्युत्प्रभा की नाईं नेत्र को क्षणमात्र दुःख देनेवाली है और चञ्चल होने के कारण शीघ्र स्थानान्तर को चली जाती है। इसलिये हमलोगों के पास जो सर्व मनोरथों का पूर्ण करनेवाला यह कल्पतरु है इसको यदि हम परोपकार में लगा सकें तो मानो समस्त फलों को इससे पा लिया। इसलिये मैं ऐसा करना चाहता हूं कि इस कल्पवृक्ष की समृद्धि से संसार के सारे अर्थी-

* एक कल्प ४३२,०००,००० मानुषीय वर्षों का होता है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जनों की दरिद्रता दूर कर दी जाय। पिता को ऐसा सुनाय और उनकी आज्ञा पाय जीमूतवाहन ने जाकर कल्पद्रुम से यों कहा कि, हे देव! आप सदा हम-लोगों को अभीष्ट फल देते आये हैं सो आज भी मेरी एक इच्छा को पूर्ण कीजिये, वह यह है कि इस सारी पृथिवी को दरिद्रता से शून्य कर दीजिये, आप दीन दु-खियों पर कृपा करनेवाले हैं, जगदीश्वर आपका कल्याण करेंगे। इस प्रकार उस धीर व्यक्ति से प्रार्थना किये जाने पर उसी समय कल्पवृक्ष ने भूतल में स्वर्ण की खूब वर्षा की, जिससे सारी प्रजा प्रसन्न हो गई; बोधिसत्व के अंश जीमूतवाहन को छोड़ और कौन ऐसा दयालु है जो कल्पद्रुम को भी अर्थिजनों के निमित्त लगा देवे, अतएव सब दिशा के लोग जीमूतवाहन से प्रेम करने लगे और उनका निर्मल यश सर्वत्र व्याप्त हो गया।

जब जीमूतकेतु के गोत्रवालों ने देखा कि उनका राज्य पुत्र के यश के कारण अच्छी तरह दृढ़ हो जाया चाहता है तब तो वे सब डाह करने लगे और प्रगटरूप से शत्रुता करने पर उतारू हुये। उन लोगों ने विचारा कि दानोपयुक्त कल्पवृक्ष के रहतेभी वह स्थान निष्प्रभाव हो रहा है सो उसे जीतना सहज होगा। अतएव वे सब लोग एकत्र होकर युद्ध के लिये सन्नद्ध हो गये यह देख धीर जीमूतवाहन ने अपने पिता से कहा कि हे तात! जैसे यह शरीर जल का बुलबुला है वैसेही यह लक्ष्मी वायुस्थल के प्रदीप की नाईं चञ्चल है, न मालूम कब बुझ जावे, कौन ऐसा बुद्धिमान् होगा जो दूसरे को मारकर इस तुच्छ लक्ष्मी को प्राप्त करना चा-हेगा? सो हे तात! मेरी तो ऐसी मति है कि इन स्वगोत्रवालों से युद्ध करना उचित नहीं; मैं तो राज्य को परित्याग कर किसी बन को चला जाऊँगा, इन्हीं कृपणों को राज्य भोगने दीजिये। जिसमें कुल का क्षय हो वह काम हमें न करना चाहिये। जब जीमूतवाहन ने यों कहा तो उनके पिता जीमूतकेतु ने भी दृढ़ निश्चय ठान यों उत्तर दिया कि हे पुत्र! मैं भी तुम्हारे साथ बन को चलूंगा, मैं तो वृद्ध हुआ, जब तुमने युवा होकर दया के कारण इस राज्य को तृण की नाईं परित्याग कर दिया तो फिर मुझ बूढ़े को भोग की कौन लालसा है। पिता की यह बात सुन जीमूतवाहन निज जनक और जननी के साथ मलयाचल को चले गये। वहां सिद्धों के निवासस्थान में, जहां स्वच्छ झरने चन्दनवृक्ष की छाया में शोभित हो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहे थे वे पिता की सेवा में तत्पर हो रहने लगे। वहां सिद्धाधिराज विश्वावसु के पुत्र मित्रावसु से उनकी मैत्री हो गई। एक दिन ज्ञानी जीमूतवाहन ने अपने पूर्व जन्म की भार्य्या मित्रावसु की बहिन को एकान्त में वहां देखा, एक दूसरे की चार आंख होतेही उन दोनों का हृदय परस्पर प्रेमजाल में फँस गया। एक दिन अकस्मात् उस त्रिजगत्पूज्य जीमूतवाहन के पास आकर मित्रावसु ने प्रसन्न हो यों कहा कि हे मित्र! मेरी छोटी बहिन मलयवती अभी क्वारी कन्या है मैं चाहता हूं कि उसका विवाह आपके साथ करूँ सो आप कृपा कर इस सम्बन्ध को स्वीकार कीजिये। यह सुन जीमूतवाहन ने उत्तर दिया कि हे युवराज! वह पूर्वजन्म में भी मेरी भार्य्या रही है तुम भी मेरे उस जन्म के अभिन्नहृदय मित्र हो, मुझे कुछ ऐसा वरदान है कि जिसके कारण मुझे अपने पूर्वजन्म की कुल कथा स्मरण है। यह सुन मित्रावसु ने कहा कि हे मित्र! आप अपने पूर्वजन्म की कथा कहिये मुझे उसके सुनने के लिये बड़ा कौतूहल होता है। मित्रावसु की प्रार्थना सुन, जीमूतवाहन ने अपने पूर्वजन्म की कथा को यों कहना प्रारम्भ किया कि—

मैं पूर्वजन्म में विद्याधर था सदा आकाशमार्ग में विहार किया करता था, एक समय हिमवान् पर्वत की चोटी के ऊपर से उड़ता हुआ मैं जा रहा था, और नीचे से श्रीशम्भु भगवान् ने जो श्रीपार्वतीजी के साथ क्रीड़ा कर रहे थे, मुझे देखा; उल्लङ्घित होने से क्रुद्ध हो उन्होंने मुझे यह शाप दिया कि "जा तू मनुष्ययोनि में जन्म ले, वहां विद्याधरी भार्य्या को पाकर अपने पुत्र को निज स्थान पर नियत कर पुनः विद्याधर को योनि में जन्म ले और तुझे अपने पूर्वजन्म की कथा स्मरण रहे" इस प्रकार जब मेरे शाप और उद्धार को सुनाकर श्रीमहादेवजी अन्तर्धान हो गये तब मैं आकाश से गिर पड़ा और पृथ्वी पर एक धनशाली बनिये के घर में मेरा जन्म हुआ। मेरी जन्मभूमि वल्लभी नगरी थी और मेरा नाम वसुदत्त था, क्रमशः मैं सयाना होने लगा। कुछ दिनों के उपरान्त जब मैं युवा हुआ तो मेरे पिता ने कुछ नौकर चाकर साथ दे किसी दूरदेश में जाकर व्यापार करने की आज्ञा मुझे दी। मैं घर से चला तो कुछ दूर जाने पर रास्ते में डाकुओं ने मुझे आ घेरा और मेरा सब धन हर मुझे बांध कर अपने गांव के चण्डिकादेवी के मन्दिर में ले गये, देवीजी के मन्दिर पर जो लाल रेशमी पताका फहरा रही थी सो मुझे ऐसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जान पड़ता था मानो पशुओं के प्राणनाश करनेवाले यमराज की लाल लाल जोभ लपलपा रही है। वे डांकू लोग मुझे बांधकर अपने स्वामी पुलिन्दक के पास जो मन्दिर में श्रीदेवीजी की पूजा कर रहा था, वलिदान देने के लिये ले गये। ज्योंही शवराधिपति ने मुझे देखा कि उसका हृदय दया से आर्द्र हो गया। निस्सन्देह विना किसी कारण हृदय का द्रवीभूत होना पूर्वजन्म की प्रीति सूचित करता है। तब तो उस शवरराज ने मुझे बध से छोड़ दिया और स्वयं अपना बलिदान चढ़ाकर पूजा को समाप्त करना चाहा। ज्योंही उसने अपना सिर काटने के लिये खड्ग उठाया त्योंही यह आकाशवाणी हुई कि 'हे पुत्र! ऐसा मत कर, मैं तुझ पर प्रसन्न हुई, मांग क्या वर चाहता है'। तब तो उसने प्रसन्न होकर कहा कि हे मातः! जब तू प्रसन्नही हुई तो अब मैं और क्या बरदान मांगू तथापि इतनी प्रार्थना करता हूं कि जन्मान्तर में भी मेरी मैत्री इसी वणिक्पुत्र से हो। आकाशवाणी हुई कि "तथास्तु"। तब तो उस शवराधिपति ने बहुत सा धन देकर जो मेरे लुटे हुये द्रव्य से भी कहीं अधिक था, मुझे मेरे घर भिजवा दिया। जब मैं मृत्यु के मुख से निकल इस प्रकार जीता जागता घर को लौट आया तो मेरे पिता ने सब वृत्तान्त सुनकर बहुत बड़ा उत्सव मनाया और अपने मित्रों को बड़े सहर्ष से निमन्त्रण दिया। योंही मैं निज पिता के साथ आनन्दपूर्वक रहने लगा। एक दिन देखता क्या हूं कि उसी शवराधिपति को सिपाही लोग, यात्रियों को लूटने के अपराध में, बांधकर राजा के समीप लिये जाते हैं। उसी क्षण मैंने जाकर इसका हाल अपने पिताजी को सुनाया और उनकी आज्ञा ले, राजा की सेवा में एक प्रार्थनापत्र भेज, एक लक्ष स्वर्णमुद्रा राजा को भेंट कर उसे बध से छुड़वा लिया। इस प्रकार अपने प्राणदान के उपकार का बदला दे उसे अपने घर लाकर मैंने चिरकाल तक उसका सन्मान किया। फिर मैंने बहुत सा धन उसे दे कर विदा किया और वह भी मेरी कृपा का अत्यन्त अनुगृहीत हो अपने घर को चला गया। वहां जा वह विचारने लगा कि वह मेरे लिये कौन सी वस्तु प्रत्युपकार में भेंट दे। उसने विचारा कि जितनी कस्तूरी और मोती उसके पास है वह उपयुक्त नहीं है, सो वह मेरे लिये उत्तम गजमुक्ताओं का हार बनाने की इच्छा से धनुष बाण ले हाथियों के शिकार के निमित्त हिमाचल की ओर गया। वहां भ्रमण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करता हुआ वह एक दिन किसी सरोवर के पास जा पहुँचा जिसके तट पर एक परम सुन्दर और स्वच्छ देवमन्दिर था । उस तालाब में जो कमल लगे थे उनकी प्रीति अपने मित्र † के प्रति कुछ कम न थी। उसने विचारा कि जङ्गली हाथियों का समूह अवश्य इस सरोवर पर पानी पीने आवेगा इस लिये उन्हें मारने की इच्छा से वह एक कोने में छिपकर बैठ रहा। देखता क्या है कि एक परम सुन्दरी कुमारी सिंह पर सवार, शिवजी की पूजा करने के निमित्त, उस सरोवर के तट पर आई, मानो कोई दूसरी शैलराजपुत्री कुमारी अवस्था में हरपूजन के अभिप्राय से पधारी हो। उसे देख वह शवराधिपति विचारने लगा कि यह कन्या कौन है? यदि मानुषी है तो सिंह पर आरूढ़ क्योंकर हुई! यदि दिव्या है तो मुझ सरीखे मन्दभाग्य इसका दर्शन कैसे पा सकते हैं सो यह निस्सन्देह मेरी आखों के पूर्वपुण्य की मूर्तिमती प्रतिमा है। यदि मैं अपने उस मित्र का विवाह इसके साथ करा सकूं तो इससे बढ़कर दूसरा उपकार क्या होगा । अब इसके समीप चलकर इसका हाल पूछूं, ऐसा विचार वह शवरराज उसके पास गया । तबतक वह कन्या सिंह से उतर, उसे वहीं छाया में बैठाय, सरोवरतट पर आ कमल तोड़ने लगी। जब शवर ने उसके समीप आकर बड़ी नम्रतापूर्वक प्रणाम किया तो उस अपरिचित का, अतिथि-प्रीति से उस दिव्या कन्या ने स्वागत किया, फिर पूछा कि आप कौन हैं और क्यों इस अत्यन्त दुर्गम भूमि में आये हैं? जब उस दिव्या कन्या ने यों पूछा तो शवरराज ने कहा कि हे कल्याणि! मैं श्रीभवानीजी का चरण-सेवक शवर हूं, गजमुक्ता की खोज में घूमता फिरता इस बन में भी आ निकला हूं, आपको देखतेही, मुझे मेरा प्राण बचानेवाला मित्र श्रीमान् वसुदत्त स्मरण आ गया, हे सुन्दरि! वह भी आपही के समान सुन्दर और युवा है, जो सच पूछिये तो उसके बराबर सुधा समान नेत्रों को आनन्द देनेवाला दूसरा व्यक्ति संसार में नहीं है, जिस कन्या का पाणिग्रहण इस मैत्री दान दया और धैर्य्य के समुद्र से हो वह धन्य है । यदि आप जैसी सुन्दरी स्त्री का योग वैसे सुन्दर पुरुष से कामदेव न करा सका तो मुझे इस बात का खेद होगा कि उसका धनुष वाण धारण करना वृथा है। व्याधेन्द्र के ऐसे बचन को सुन वह कुमारी कामदेव के वाणों

† मित्र = सूर्य्य।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से पीड़ित हो अपना हृदय गँवा बैठी । फिर कामवश हो, शवरराज से कहने लगी कि तुम्हारे वह मित्र कहां हैं ? उन्हें लाकर तनिक मुझे भी दिखा दो । यह सुन उसने कहा 'बहुत अच्छा' । बस उसी क्षण अपने उद्योग को सफल हुआ मान वह वहां से चल दिया पहिले वह सीधे अपने घर पहुँचा, वहां से मोती और कस्तूरी का बोझ एक सौ कुलियों पर लाद मेरे गृह पर आया । हम सब लोगों ने उसका बहुत सत्कार किया, फिर उसने उन सब बहुमूल्य वस्तुओं को मेरे पिता के आगे रख कहा कि यह आपकी भेंट है। जब वह सारा दिन और सारी रात दोनोंही, उत्सव में समाप्त हो चुके तो शवरराज ने उस कन्या के मिलने का सारा वृत्तान्त आरम्भ से लेकर अन्त तक मुझे एकान्त में कह सुनाया और कहा कि चलो हम दोनों वहां चलकर उससे मिलें। यह हाल सुन कर मुझको बड़ा उत्साह और कौतुक हो रहा था इसलिये एक दिन रात के समय मैं चुपके से अपने उस मित्र के साथ पिताजी को बिना जनाये घर से निकल पड़ा। दूसरे दिन प्रातःकाल जब पिताजी ने मुझे और शवराधिप दोनों को न पाया तो उसकी और मेरी प्रीति पर विश्वास कर, और यह विचार कि मैं उसी के साथ कहीं गया होऊँगा उन्होंने मेरे लिये कुछ विशेष चिन्ता न की और धीरज धर घर में बैठ रहे । शीघ्रता के साथ चलते चलते कुछ दिनों में हमलोग तुषाराद्रि के समीप जा पहुँचे, मार्ग में मेरा मित्र मेरी सब प्रकार की रखवाली करता रहा जिससे मुझे किसी तरह का कष्ट न होने पाया। सायङ्काल को वहां पहुँच, सरोवर में स्नान कर, कुछ मधुर फलों को खा, रात को तो हम दोनों उसी बन में पड़ रहे जहां सुन्दर सुन्दर लताओं से गिरे हुये सौरभमय पुष्पों के ऊपर भौंर गूंज रहे थे, और सीतलमन्दसुगन्ध पवन चारो ओर से बह रहा था तथा दिव्य औषधियों के प्रकाश से उजाला सा प्रतीत होता था । सरोवर का जल पीकर, रात के समय उसी बन में जो मानो रति का महल प्रतीत होता था, हम दोनों ने विश्राम किया। दूसरे दिन मेरा दहिना नेत्र फड़कने लगा जिससे सूचित हुआ कि जिस प्यारी को देखने के लिये पल पल पर मेरा चित्त व्यग्र हो रहा था वह आती है, और उसको देखने के लिये उत्सुक हो मानो मेरा वह नेत्र फड़क रहा था। शुभ शकुन के होतेही देखता क्या हूं कि वही प्राणप्रिया जिसके लिये मैं इतना व्याकुल था

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भूरे जटावाले सिंह पर सवार, शरत्काल के मेघ पर चन्द्रकला की नाईं, चली आती है। उसे देखतेही मेरे हृदय में कुछ ऐसा विस्मय और औत्सुक्य हुआ कि मैं किसी प्रकार उसका वर्णन नहीं कर सकता। वह आतेही अपने सिंह पर से उतरी, सरोवर में स्नान कर उसने कुछ फूल तोड़े और पासहीवाले हरमन्दिर में जाकर उसने श्रीशिवजी का पूजन किया। पूजा समाप्त कर जब वह मन्दिर के बाहर निकली तो मेरे उस मित्र शवर ने समीप जाकर अपना परिचय दे प्रणाम किया और उनने भी उसका आदर कर कुशल पूछा। तब तो उस शवरराज ने "सब कुशल" कहकर निवेदन किया कि हे देवि! मैं अपने उन मित्र को जो आपके योग्य वर हैं साथ में लाया हूं, यदि आपकी आज्ञा हो तो उन्हें यहां ले आऊँ और आपको दिखला दूं। यह सुन उनने कहा कि 'बहुत अच्छा ले आओ'। सुनतेही शवरराज ने मुझे ले जाकर साम्हने खड़ा कर दिया। उन्होंने प्रेम की दृष्टि से कुछ तिरछे कटाक्षोंद्वारा मुझे देख, कामवश हो, शवरराज से कहा कि आपके सखा मनुष्य नहीं प्रतीत होते यह तो कोई देवता हैं जो मुझे ठगने के लिये आये हैं, क्योंकि मनुष्यों में ऐसा सुन्दर मनोहारी अपूर्व स्वरूप होना कब सम्भव है? यह सुन मैंने समीप जाकर उसे विश्वास दिलाने को कहा कि हे सुन्दरि! मैं सचमुच मनुष्यही हूं क्योंकि आप जब मुझसे इतना स्नेह करती हैं तो मैं आपको क्यों धोखा देऊँ। मैं वल्लभीनगरनिवासी अत्यन्त धनी महाधन नाम बनिये का पुत्र हूं, श्रीमहादेवजी के बरदान से उन्होंने मुझे पुत्ररूप में पाया है, क्योंकि जब उन्होंने पुत्र पाने की इच्छा से श्रीशशिशेखरजी को निज तपस्या से प्रसन्न किया तो उन्होंने सन्तुष्ट होकर स्वप्न में यह आज्ञा दी कि 'उठ खड़ा हो कोई महात्मा तेरा पुत्र उत्पन्न होगा, उसका रहस्य बहुत विस्तृत है जिसे कहने की कोई आवश्यकता नहीं है।" इतना सुनतेही मेरे पिता जाग उठे, इसके उपरान्त में उनके यहां पुत्र होकर जन्मा और मेरा नाम वसुदत्त रक्खा गया। और यह जो मेरे साथ शवराधीश हैं यह मेरे परम मित्र हैं जिनसे मेरी मैत्री विदेश जाने पर हुई थी और जिन्होंने आपत्ति के समय मेरे प्राण बचाये थे। बस यही मेरा वृत्तान्त है। इतना कहकर जब मैं चुप हुआ तो उस दिव्य कन्या ने लज्जा से नीचे सिर झुका लिया और यों कहा कि "ठीक है आज जान पड़ा कि जब मैं स्वप्न में श्रीशिवजी का पूजन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समाप्त कर चुकी तो उन्होंने मानो प्रसन्न हो मुझसे यह कहा कि आज प्रातःकाल तेरे भर्ता से तुझसे भेंट होगी । अतएव आप मेरे पति हैं और आपके ये मित्र मेरे भाई हुये—इस प्रकार मानो बचनसुधा से उसने मुझे आनन्दित कर दिया । फिर उसके साथ विवाह की बातचीत पक्की कर मैंने अपने मित्र के सहित घर लौटने का विचार निश्चित किया । तब उसने सङ्केत से अपने सिंह को बुलाकर मुझसे कहा कि 'हे आर्य्यपुत्र ! आप इस पर आरोहण कीजिये,। मैं अपने मित्र की अनुमति से उस सिंह पर चढ़ बैठा और उस प्यारी को मैंने आगे गोद में बैठा लिया । इस प्रकार कृतकृत्य हो, अपनी प्रिया के साथ सिंह पर चढ़, मित्र को आगे आगे कर मैं अपने घर को ओर चला । वह अपने धनुष वाण से मृगया कर लाता और उसी मांस को पकाते खाते हम सब कुछ दिनों के उपरान्त बल्लभी-नगर में जा पहुंचे । मुझे सिंह पर आरूढ़ लौटा हुआ देख लोगों ने झट जाकर मेरे पिता को खबर दी और वे सुनतेही आ पहुँचे । मैंने चट सिंह पर से उतर उन्हें सादर प्रणाम किया और उन्होंने मुझे उठाकर मेरा माथा चूम आशीर्वाद दिया, तथा सिंह को मेरी सवारी में देख अत्यन्त विस्मित हुये। फिर मेरी उस परम रूप-वती भार्य्या को देखकर जिसने उनके चरणों पर झुककर प्रणाम किया, वे प्रसन्नता के मारे फूले अङ्गों न समाते थे । तदुपरान्त हमलोगों को घर ले जाकर सब वृत्तान्त पूछ उन्होंने शबरराज की मैत्री की बड़ी प्रशंसा की, और बडे धूमधाम से उत्सव मनाया । फिर ज्योतिषीजी से शुभ मुहूर्त्त दिखलाकर हम दोनों का विवाह कर दिया गया जिस उत्सव में मेरे सभी मित्रों ने योग दिया था । इतने में सब लोगों के देखतेही देखते वह सिंह भूमि पर लोटपोट कर पुरुषरूप से उठ खड़ा हुआ । उसे दिव्य वस्त्राभूषण पहिने देख सब लोग बड़े आश्चर्य्यान्वित हुये—मैंने जो उसे झुक कर प्रणाम किया तो वह मुझसे यों कहने लगा कि मैं चित्राङ्गद नाम विद्याधर हूं और मेरी इस प्राणों से भी प्यारी कन्या का नाम मनोवती है । मैं सदा इसे गोद में लेकर उड़ता हुआ जङ्गल जङ्गल घूमा करता था, एक दिन श्रीगङ्गा-तटवर्ती ऐसे स्थान पर जा निकला जहां अनेक मुनि और महात्माजन बैठे तपस्या कर रहे थे । इस भय से कि कहीं मुनियों का उल्लङ्घन न हो जाय मैं श्रीगङ्गाजी की बीचोबीच से उड़ने लगा कि अकस्मात् मेरी पुष्पमाला श्रीभागीरथीजी के जल पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गिर पड़ी। जल के अन्दर श्रीनारदजी तपस्या कर रहे थे वह माला उनकी पीठ पर जा पड़ी सो उन्होंने वहां से निकल क्रोधपूर्वक मुझे यों शाप दिया कि हे पापी जा तू इस उद्दण्डता के कारण हिमाचलपर्वत पर सिंह हो जा और वहां भी अपनी इसी कन्या को पीठ पर ले घूमा कर। जब इसका पाणिग्रहण एक मनुष्य के साथ होगा तो विवाह के देखतेही शाप से तेरी मुक्ति हो जायगी"। इस प्रकार मुनि के शाप से मैं सिंह होकर इस शिवपूजापरायणा सुता को सदा पीठ पर लादे लादे घूमता फिरता था; इसके उपरान्त इन शवराधिपति महाशय के यत्न से जो कुछ उत्तम परिणाम हुआ सो तो आपको विदितही है। अब मेरा वह शाप छूट गया, मैं जाता हूं, ईश्वर आपका कल्याण करें; इतना कह वह विद्याधर आकाश में उड़ गया। यह वृत्तान्त सुन और यह कौतुक अपनी आंखों से देख मेरे पिता तथा सब बान्धवों को वड़ा आश्चर्य हुआ, फिर तो मेरे पिताजी ने इस प्रशंसनीय सम्बन्ध से सन्तुष्ट होकर बडे धूमधाम से उत्सव किया। उस समाज में एक भी व्यक्ति ऐसा न था जो शवरराज की इस उदारता को बार बार स्मरण कर यह न कह बैठता था कि "निष्कारण स्नेह करनेवाले मित्रों का उदार चरित्र कौन वर्णन कर सकता है जो अपने सुहृत् पर प्राण न्यौछावर करने पर भी सन्तुष्ट नहीं होते"। जब यह सारा हाल राजा को विदित हुआ तो वे भी हमलोगों के स्नेह के कारण उस बुद्धिमान् शवरराज पर बहुत प्रसन्न हुये। फिर तो मेरे पिताजी ने उसे बहुत सा रत्न और धन उपायन में दिया, और राजा ने भी जङ्गल के राज्य का बहुत सा भाग शवरराज को पुरस्काररूप से प्रदान किया। तब मैं सुखी हो निज भार्य्या मनोवती के सङ्ग अनेक प्रकार के विहार करता अपने मित्र शवरेन्द्र के साथ आनन्द से रहने लगा, और हमारे उस सखा शवरराज ने भी अपने पुराने देश का निवास छोड़ हम्हीं लोगों के साथ रहना स्वीकार किया क्योंकि हमारे स्नेह और प्रेम के आगे उसे अपना देश विलकुलही भूल गया। यद्यपि हमलोग परस्पर एक दूसरे के उपकार करनेही में रात दिन लगे रहते थे तथापि हम दोनों मित्रों के हृदय का सन्तोष न होता था। कुछ दिनों के उपरान्त मनोवती से मुझे एक पुत्र उत्पन्न हुआ मानो सारे कुल का हृदयोत्साह बाहर आ गया। उसका नाम हिरण्यदत्त रक्खा गया, धीरे धीरे उसने सयाने होने पर अनेक विद्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राप्त कीं और युवा होने पर उसका विवाह भी किया गया। पौत्र का जन्म देख, मेरे पिताजी अपना जीवन सुफल मान, वृद्ध तो थेही, सपत्नीक देहपरित्याग के निमित्त श्रीभागीरथीजी के तीर पर चले गये। मैं माता पिता के शोक से अत्यन्त दुःखित हुआ, किन्तु मित्र और बान्धवों के धीरज धराने से, घर का कामकाज, जो अब मेरेही सिर पड़ा, देखने लगा। तब तो मेरे चित्तविनोद के केवल दोही आधार रह गये, एक तो प्यारी मनोवती के मुखचन्द्र का दर्शन, दूसरे अपने मित्र शवरेन्द्र का साथ! क्रमशः मेरे भी सुख के वे दिन जाते रहे, जब मैं नवीन व्याही हुई भार्य्या का आनन्द लेता और सत्पुत्र के जन्म से प्रसन्न हुआ था, और जब अपने सुहृत् शवरेन्द्र के साथ मैत्री का आनन्द पाता था। कुछ दिनों के उपरान्त बुढ़ौती ने आकर मानों मेरी ठुड्ढी में हाथ लगा यों कहा कि हे पुत्र! क्या तू अब लों घर में बैठाही है?। बस मुझे उसी क्षण वैराग्य उत्पन्न हो गया सो मैं गृहस्थी का सारा भार पुत्र को दे, भार्य्या के सहित कालिञ्जर पर्वत के बन को चला गया, और शवरराज ने भी अपना राज्य मेरे पुत्र को मेरेही स्नेह के कारण समर्पण कर बन में चल मेरा साथ दिया। वहां पहुँचतेही मुझे अपनी वैद्याधरी जाति, और महादेवजी का दिया हुआ वह शाप सब स्मरण हो आया सो मैंने इस मानुषी तनु को परित्याग करने की इच्छा से वह सब वृत्तान्त अपनी भार्य्या तथा अपने मित्र को सुनाया। तदुपरान्त मैंने श्रीशङ्कर भगवान् का अपने हृदय में ध्यान किया और हाथ जोड़ यह निवेदन कर कि "हे प्रभो! ऐसी कृपा कीजिये कि आपके प्रसाद से पुनः दूसरे जन्म में भी, मैं इसी भार्य्या और इसी मित्र को पाऊँ और मुझे इस जन्म की कथा स्मरण रहै" मैंने भार्य्या और मित्र के साथ पर्वततट से कूदकर शरीर छोड़ दिया।

इस विद्याधरकुल में, मैं जीमूतवाहन नाम से उत्पन्न हुआ हूं और श्रीशम्भु भगवान् की कृपा से मुझे पूर्वजन्म की सब बातें स्मरण हैं। आप मेरे मित्र वही शवरेन्द्र हैं, जो अब श्रीशिवजी की कृपा से सिद्धों के राजा विश्वावसु के पुत्र मित्रावसु नाम से प्रसिद्ध हैं, और हे मित्र! वही विद्याधरी जो मनोवती नाम से मेरी भार्य्या थी अब मलयवती नाम से आपकी बहिन उत्पन्न हुई है। इस प्रकार आपकी यह बहिन मेरी पूर्वपत्नी है और आप मेरे उस जन्म के भी मित्र थे सो इस जन्म में भी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हुये, अतएव उसका विवाह मेरे साथ होना युक्तही है। परन्तु इसके पूर्व आप जाकर मेरे माता पिता से निवेदन कीजिये, आशा है कि वे इस सम्बन्ध को अवश्य स्वीकार करेंगे और जब उनकी सम्मति से आपका मनोरथ पूर्ण होगा तो बहुतही उचित होगा। जीमूतवाहन की यह बात सुन, मित्रावसु ने अत्यन्त प्रसन्न हो, उनके माता पिता से यह वृत्तान्त जाकर निवेदन किया और जब उन लोगों ने भी इस सम्बन्ध का अभिनन्दन किया तो और भी अधिक सन्तुष्ट हो उसने निज माता पिता को यह हाल सुनाया और जब उन लोगों ने भी (जो यह चाहतेही थे) इस सम्बन्ध को सराहा तो युवराज ने विवाह का सारा आयोजन करना आरम्भ कर दिया। जीमूतवाहन ने सिद्धराजद्वारा सत्कारित हो विधिवत् मलयवती का पाणिग्रहण किया। उस समय वहां एक बहुतही भारी उत्सव किया गया जिसमें कुल आकाशविहारी चारण, तथा सिद्ध और विद्याधरों का जमावड़ा था। विवाह हो जाने के उपरान्त जीमूतवाहन बड़े वैभव से संयुक्त हो अपनी प्यारी पत्नी के साथ सुखपूर्वक उस मलयपर्वत पर रहने लगे।

एक समय की बात है कि जीमूतवाहन अपने साले मित्रावसु को सङ्ग ले समुद्रतट पर बन की शोभा देखने को गये। वहां देखते क्या हैं कि एक सिपाही एक युवा पुरुष को जो घबड़ाया सा जान पड़ता था किसी ऊँचे शिलातल पर छोड़कर लौटा चाहता है और वह युवा पुरुष अपनी माता को जो 'हा पुत्र! हा पुत्र!' कर रो रही है, समाधान कर लौटा रहा है। जीमूतवाहन ने उसके समीप जाकर पूछा कि तुम कौन हो, ? यह तुम क्या करते हो ? और तुम्हारी माता तुम्हारे लिये क्यों विलाप करती है? यह सुन उस युवा व्यक्ति ने कहा कि,

पूर्व समय की बात है कि कश्यप ऋषि की दोनों भार्य्यायें कद्रु और विनता एक दिन बैठी बातें कर रहीं थीं कि बातबातों में यह प्रसङ्ग उठा कि सूर्य्य भगवान् के घोड़े श्वेत हैं या श्याम ? कद्रु ने कहा कि श्याम हैं और विनता ने कहा कि नहीं वे श्वेत हैं। दोनों में यह पण लगा कि जो हारे सो दूसरे की दासी हो जावे। तब तो कद्रु ने जय पाने की इच्छा से अपने पुत्र सर्पोंद्वारा विष की फुफकार लगवा सूर्य्यभगवान् के घोड़ों को मलिन करवा दिया, और उसी अवस्था में जाकर विनता से कहा कि देखो घोड़े काले हैं वा श्वेत! विनता ने जो ध्यानपूर्वक देखा

तो सचमुच घोड़ों को काला पाया सो वह विचारी हार जाने के कारण उसी दिन से निज सपत्नी कद्रु की दासी हो गई। यह सुन विनता के पुत्र गरुड़ ने निज विमाता कद्रु के पास जाकर प्रार्थना की कि वे किसी प्रकार उनकी माता को दासीभाव से छोड़ दें, तब कद्रु के पुत्र नागों ने कहा कि हे गरुड़! आप तो वीरों में श्रेष्ठ हैं एक काम करें तो आप की माता अभी दासीपन से छूट जाय। सुनो, देवताओं ने क्षीरसमुद्र को मथना आरम्भ किया है, वहां से अमृत निकलनेवाला है सो यदि आप उस अमृतघट को लाकर बदले में हमें दे दो तो हमलोग आप की माता को दासीभाव से छोड़ देंगे। नागों का ऐसा बचन सुन गरुड़जी ने क्षीरसमुद्र के तट पर जा सुधा के लिये बड़ा पौरुष दिखाया, जिससे प्रसन्न हो श्रीविष्णु भगवान् ने गरुड़जी से कहा कि "हम तुम पर प्रसन्न हैं, कोई वर मांगो।" माता के दासीभाव से गरुड़जी बड़े कुपित हो रहे थे सो उन्होंने कहा कि "मैं यही वर मांगता हूं कि मुझमें नागों के खा जाने का सामर्थ्य हो जावै"। श्रीविष्णु भगवान् ने 'तथास्तु' कह वैसाही बरदान दे दिया। जब गरुड़ जी निज भुजाबल से अमृतघट को प्राप्त कर ले चले; तो इन्द्र ने यह सब वृत्तान्त सुन रास्ते में गरुड़जी से भेंट कर यों कहा कि हे पक्षिराज! आपको ऐसा करना उचित है कि जिसमें ये मूढ़ सर्प लोग अमृत का उपभोग न कर सकें, आप जाकर उन्हें भलेही दे आइये परन्तु जब मैं उसे पुन: हर लाऊँ तब आप बाधा मत दीजियेगा, क्योंकि सर्पों से आपकी यही बातचीत है कि हमें अमृतघट ला दो। ऐसा सुन गरुड़जी ने कहा 'बहुत अच्छा' और अमृतघट को लिये हुये वे नागों के समीप आ पहुंचे। नागों ने उनके वर पाने का हाल सुन पाया था सो देखतेही बोले कि 'दूरही रहना हमारे समीप मत आना'। जब गरुड़जी ने देखा कि ये मूढ़ बहुत डरे हुये हैं तो कहा 'अच्छा यदि तुम मेरे समीप आने से डरते हो तो लो मैं दूरही से इस घड़े को कुशा की गेरुड़ी पर रखकर दूर हट जाता हूं तुम लोग मेरी माता को दासीभाव से मुक्त करो फिर भलेही इस अमृत को चाहे जो करो,। नागों ने कहा बहुत अच्छा; बस गरुड़जी ने घड़े को कुशा की एक पवित्र गेरुड़ी पर रख दिया और नागों ने भी उनकी माता को दासीभाव से छोड़ दिया। यों निज माता को छुड़ा, अपने साथ ले जब गरुड़जी बहुत दूर चले गये तो वे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नाग लोग अत्यन्त प्रसन्न हो निश्शङ्कभाव से अमृतघट की ओर बढ़े। इतनेही में इन्द्र ने झपट्टा मार निज शक्ति से सर्पों को मोहित कर दिया और स्वयं सुधाकलश को कुशा की गेरुड़ी पर से उठा आकाश का मार्ग लिया। तब तो वे नाग लोग बडे दुःखी हुये और इस ध्यान से कि कदाचित् एकाद बुन्द घट में से टपक कर कुशा की गेरुड़ी में लगा होगा, उसे चाटने लग गये। भला वहां क्या था उसी दिन से उन सबों की जीभ कुशा की धार से कट कर एक एक की दो दो हो गई। ठीक है 'अमित लोभ किय आपद्‌धामू। जगउपहास तासु परिणामू'

इधर तो सर्पों को अमृत न मिला उधर श्रीविष्णुभगवान् से वर पा गरुड़जी ने बार बार झपट्टा मार उन्हें खाना आरम्भ किया। तब पातालस्थ नागों में बड़ी हलचली पड़ी, मारे भय के उनके प्राणही निकलने लगे, यहां लों कि गरुड़ के त्रास से नागिनियों के गर्भ स्खलित हो गये। भुजङ्गों के राजा वासुकि ने विचारा कि इस प्रकार तो नागकुल का नाशही हो जाया चाहता है सो उन्होंने महावीर्य्यशाली गरुड़ भगवान् से प्रार्थना कर यह प्रतिज्ञा स्थिर की, कि आप इस प्रकार नागों का नाश मत कीजिये, मैं प्रतिदिन एक नाग आपके भोजन के लिये समुद्रतटवर्ती पर्वत पर भेज दिया करूँगा, आप पाताल में पैठकर नागों का यों उपमर्द न करें, क्योंकि इसमें आपही के स्वार्थ की हानि है। वासुकि की इस प्रार्थना को गरुड़जी ने स्वीकार किया और वे नित्य यहां आकर उनके भेजे हुये एक एक नाग को खा जाते हैं। न जाने कितने फणियों का नाश इस प्रकार हो चुका और कितनों का होगा। मैं शङ्खचूड़ नामक नाग हूं आज मेरी पारी है इसी कारण मैं गरुड़जी के आहार के निमित्त, नागराज की आज्ञा से बध्यशिला पर लाया गया हूं. यह मेरी माता हैं जो मेरी भावी दशा को विचारकर रो रही हैं।

शङ्खचूड़ की बात सुन, जीमूतवाहन का हृदय अत्यन्त दुःखी हुआ सो वह खेद के साथ कहने लगे कि वासुकि का राज्य बड़ाही निःसत्व है जो अपने हाथोंही से वह अपनी प्रजा को शत्रु का भोजन बनाने के लिये भेज देता है। यदि ऐसाही करना था तो क्यों नहीं सब से पहिले उसने अपनेही को गरुड़ के अर्पण किया? उस कायर ने अपने कुल को अपने साम्हनेही नाश करने की यह क्या चाल निकाली, और श्रीकश्यपऋषिजी से उत्पन्न होकर गरुड़ ने यह कैसा पाप आरम्भ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किया! भला, निज पेट के पालने के लिये क्या कभी बड़े लोग ऐसा निकृष्ट आचरण करते हैं? अच्छा, हे सखे! आप दुःख न करें यदि अधिक नहीं तो एक आपकी रक्षा तो मैं आज गरुड़जी को अपना शरीर देकर अवश्यही करूँगा। यह सुन धीरज के साथ शङ्खचूड़ ने उत्तर दिया कि हे महासत्व बस कीजिये फिर ऐसा न कहियेगा! काच के निमित्त मुक्तामणि का नाश करना उचित नहीं है, फिर मैं ऐसा कर अपने कुल पर कदापि कलङ्क न लगाऊँगा। ऐसा कह उस सज्जन शङ्खचूड़ ने जीमूतवाहन को निषेध किया और यह विचारकर कि, गरुड़जी के आने का समय समीप आ गया है, वह समुद्रवर्ती गोकर्ण महादेवजी के मन्दिर में अन्तिम नमस्कार करने के लिये चला गया। उसका उधर जाना था कि करुणासागर जीमूतवाहन ने विचारा कि यह अवसर बहुत अच्छा मिला, सो वह मित्रावसु से कहने लगा कि मैं अमुक काम करना भूल आया हूं, आप कृपा कर घर जाके उस काम को कर लौट आइये, मैं यहीं बैठा हूं। यों मित्रावसु को बहाने से घर भेज वह बध्यशिला की ओर बढ़ा। इतनेही में आकाशमण्डल को अपने बृहदाकार से अन्धकारमय करते हुये गरुड़जी आ पहुँचे और वहां की भूमि पङ्क की वायु से यों हिल उठी मानो उनके पराक्रम से भयभीत हो कांपने लगी हो। इन लक्षणों से भुजङ्गरिपु गरुड़ का आना अनुमान कर परोपकारी जीमूतवाहन ने झटही बध्यशिला पर आरोहण किया और उसी क्षण खगेश्वर ने आ, चोंच मार, उस उदारहृदय को अपने पञ्जों में उठा, आकाश का रास्ता लिया। चोंच का आघात लगने पर जीमूतवाहन के शरीर से रक्त की धारा बह निकली और उनकी शिखामणि भी भूमि पर गिर पड़ी; उधर गरुड़ ने एक पर्वत की चोटी पर उन्हें ले जाकर खाना आरम्भ किया। उसी क्षण आकाश से पुष्पवृष्टि होने लगी, जिसे देख गरुड़जी को आश्चर्य हुआ कि यह क्या बात है! इतनेही में वह शङ्खचूड़ भी श्रीगोकर्ण महादेव को प्रणाम कर अपने स्थान पर आ पहुँचा, देखता क्या है कि बध्यशिला तो तमाम रुधिर से भरी है। इस पर उसने विचारा कि हा! परम खेद का विषय है कि उस महात्मा ने मेरे लिये अपनी जान दे दी! उसे पक्षिराज इस समय कहां ले गये होंगे, चलो उन्हें खोजूं कदाचित् कहीं मिल जांय, ऐसा विचार वह सद्हृदय शंखचूड़ लहू की छींट देखता और पता लगाता हुआ चला।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उधर नागान्तक गरुड़जी ने खाते समय देखा कि जीमूतवाहन बड़ा प्रसन्न जान पड़ता है सो वे उसका खाना छोड़ आश्चर्य से विचारने लगे कि यह क्या बात है! यह नाग नहीं कोई दूसराही है जो मरने की बेला दुःखित न हो उलटा प्रसन्न होता है। गरुड़जी को मन में यों विचारते देख जीमूतवाहन ने उसी अवस्था में निज अभिप्राय सिद्ध करने की इच्छा से कहा कि हे पक्षिराज! मेरे शरीर में भी तो रक्त औ मांस है फिर आपने विना पेट भरेही भोजन करने से जी क्यों हटा लिया? यह सुन आश्चर्य्य से वैनतेय ने पूछा कि हे सज्जन! तुम तो नाग नहीं जान पड़ते बताओ तुम कौन हो? जीमूतवाहन ने कहा मैं कि नागही हूं आप भोजन करिये, जैसे आपने आरम्भ किया है उसी प्रकार इस काम को समाप्त भी कीजिये, क्या धीर लोग किसी काम को आरम्भ कर कभी बीचही में छोड़ते हैं? इतनेही में शङ्खचूड़ भी आ गया और दूरही से चिल्लाकर कहने लगा कि हे पक्षिराज! वह नाग नहीं है, आपका भोज्य नाग तो मैं हूं आप उसे छोड़ दीजिये, यह आपने कैसी भयानक भूल की है! यह सुन खगेश्वर चकित हो गये, और जीमूतवाहन को इस बात पर खेद हुआ कि वह अपना मनोरथ पूर्ण न कर सका। फिर उन दोनों की बातचीत से गरुड़जी को विदित हुआ कि मैंने धोखे से विद्याधरों के राजा को पकड़ लिया और खाही जाता किन्तु जगदीश्वर ने उसके प्राण बचाये। अहो! मैं अपनी क्रूरता के कारण कैसा भारी पाप कर चुका थां! अथवा इसमें आश्चर्य्यही क्या है! बुरे मार्ग से चलनेवालों को पाप में फँसना बहुतही सहज है। किन्तु, यह महात्मा धन्य है जो इस मोहमय संसार को तुच्छ जान केवल परोपकारार्थ प्राण देने को मेरे सन्मुख चला आया। ऐसा विचार गरुड़जी अग्निप्रवेशद्वारा निज पाप की शुद्धि करना चाहते थे कि जीमूतवाहन ने कहा कि हे पक्षीन्द्र आप क्यों दुःखित होते हैं यदि सचमुच आपको पाप से भय है तो अब भविष्य के लिये इन भुजंगमों का खाना छोड़ दीजिये और जिन्हें पहिले खा चुके हैं उनके लिये सच्चे जी से पश्चात्ताप कीजिये, बस यही इसका उचित प्रतीकार है और सब व्यर्थ की चिन्ता छोड़ दीजिये।

इस प्रकार जब समस्त लोकों पर दया करनेवाले जीमूतवाहन ने कहा तो पक्षीन्द्र ने प्रसन्न हो उनकी बात को गुरुवाक्यवत् मान स्वीकार किया और उसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चण अमृत लाकर अस्थिशेष नागों को जिलाने तथा च चताङ्ग जीमूतवाहन को चङ्गा करने के लिये बडे वेग के साथ स्वर्ग की ओर उड़ गये। इधर जीमूतवाहनकी पत्नी की भक्ति से सन्तुष्ट हो साचात् श्रीगौरीजी ने स्वयं आकर उनके चत अङ्गां पर अमृत छिड़का जिससे उनके प्रत्येक अङ्ग जो कट गये थे आगे से भी अधिक सुन्दर उत्पन्न हो गये और आकाश में देवताओं के नगाड़े तथा मङ्गल-वाद्य बजने लगे। इधर तो जीमूतवाहन स्वस्थ हो उठ बैठे, उधर गरुड़जी ने स्वर्ग से सुधा ला, सारे समुद्रतट पर जहां नागों की हड्डियां पड़ी थीं खूबही अमृत-वर्षा की जिसके कारण सब मरे हुये सर्प जी उठे और वहां भुजङ्गमों की बड़ी भारी भीड़ लग गई मानो वैनतेय के भय से विनिर्मुक्त हो सारा पाताललोकही जीमूतवाहनजी के दर्शनों को उमड़ आया हो। तब तो जीमूतवाहन के अचत देह और विमल कीर्ति को देख,उनके सभी बन्धुजन प्रसन्न हो बधाई देने लगे, और उनके माता पिता तथा च उनकी भार्य्या अपने सब बन्धुबान्धवों सहित गद्गद हो गये, यथार्थ है दु:ख का परिवर्तन सुख से पाकर कौन प्रसन्न नहीं होता। इसके उपरान्त जीमूतवाहन ने शङ्खचूड़ को निज घर को जाने की आज्ञा दी और वह भी अत्यन्त अनुगृहीत हो प्रसन्नमन से रसातल को गया और उसके रचक का यश आपसे आप तीनों लोक में व्याप्त हो गया। तब तो देवसमूह ने आकर गरुड़ जी को प्रणाम किया; और श्रीगिरिराजपुत्री के अनुग्रह से, विद्याधरतिलक जीमूतवाहन के प्राचीन वैरी लोग मतङ्ग इत्यादि भी काँपते काँपते उनके चरणों पर आ गिरे।

फिर उन लोगों के प्रार्थनानुसार सुकृती जीमूतवाहन मलयपर्वत से चलकर अपने देश तुषाराद्रि को चले आये। वहां अपने माता पिता, मित्रावसु और मलयवती के साथ रहकर सुखपूर्वक विद्याधरों के चक्रवर्ती-पद का आनन्द लेने लगे। जिन महात्माओं के उदारचरित त्रैलोक्य के हृदय में चमत्कार उत्पन्न करते हैं उनके चरणों में कल्याणपरम्परा की लक्ष्मी आपसे आप चली आती हैं। इस प्रकार मन्त्रिवर यौगन्धरायण के मुख से इस मनोहर कथा को सुन गर्भिणी रानी वासवदत्ता अत्यन्तही प्रसन्न हुईं क्योंकि वे अपने भविष्य पुत्र के उदारचरित होने की बहुत प्रबल इच्छा रखती थीं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इहि बिधि करत सुबतकही पियसँग दिवस बिहान।
भावीसुतगुनगन गमत रानिहिँ हरष महान ॥

तीसरा तरङ्ग।

दूसरे दिन जब महाराज वत्सराज अपने मन्त्रियों के सहित एकान्त में बैठे थे तो रानी वासवदत्ता ने उनसे यह कहा कि हे आर्य्यपुत्र! जब से मुझे यह गर्भ हुआ है तब से इसकी रक्षा की बड़ी चिन्ता मुझे रात दिन लगी रहती है। आज रात को नींद तो आती न थी पर ज्योंही तनिक सी आंख झपकी, देखती क्या हूं कि मानो कोई जटाधारी व्यक्ति सारे शरीर में भस्माङ्गराग लगाये, मस्तक पर चन्द्रमा धारण किये, हाथ में त्रिशूल लिये मेरे पास आकर कृपापूर्वक कहते हैं कि हे पुत्रि। इस गर्भ के लिये तू कुछ भी चिन्ता मत कर क्योंकि यह मेराही दिया है मैं इसकी रक्षा स्वयं कर लूंगा, इसका विश्वास दिलाने के लिये एक बात कहता हूं सो सुन कि प्रातःकाल एक स्त्री अपने पति को धरकर खींचती हुई तेरे पति के सन्मुख लाकर कुछ निवेदन करैगी, वह दुश्चारिणी झूठी है अपने बान्धवों के बल से निज पति को मरवाया चाहती है सो हे पुत्रि! तू महाराज को पहिलेही से सूचित कर दीजियो कि वे उसकी बात का विश्वास न करें और उस दुष्टा के हाथ से उसके निर्दोष पति को बचा दें। ऐसी आज्ञा देकर जब वे महात्मा अन्तर्धान हो गये तो मैं चौंक कर जाग उठी, सो आज वही सबेरा है कदाचित् वह आती हो।

इस प्रकार देवी वासवदत्ता का भाषण सुन, सब लोग कहने लगे कि श्रीशङ्कर भगवान् की बड़ी कृपा है, फिर सबही का चित्त आश्चर्य्य के साथ स्वप्न की सत्यता देखने पर लगा था। इतनेही में मुख्य प्रतीहारी ने आकर दीनप्रतिपालक महाराज वत्सराज की सेवा में यों निवेदन किया कि 'हे देव! कोई स्त्री, अपने बान्धवों के सहित, पांच पुत्रों को साथ लिये, पति को धरे कुछ निवेदन करने के लिये द्वार पर आई है आज्ञा हो तो आवे।' यह सुन राजा को देवी वासवदत्ता की स्वप्न पर बड़ा आश्चर्य्य हुआ सो उन्होंने द्वारपाल को आज्ञा दी कि अच्छा उन

सब लोगों को ले आओ। स्वप्न के पिछले भाग के सत्य होने से रानी को प्रथम भाग के भी सत्य होने की आशा हुई, सो पुत्रप्राप्ति का निश्चय पा वह परम प्रसन्न हुईं। वहां जितने लोग बैठे थे सबही उत्सुक हो द्वार की ओर कौतुक से दृष्टि लगाये थे कि प्रतीहारी के साथ वह स्त्री, पति और बान्धवों सहित अन्दर आई। प्रथम तो उसने अत्यन्त दीनभाव धारण कर बड़ी नम्रता से महाराज को प्रणाम किया, फिर देवीसहित महाराज को उद्देश्य कर उसने सभा में यों कहना आरम्भ किया कि 'हे देव! यह मेरा भर्ता होकर भी मुझ निरपराधिनी अनाथा को भोजनाच्छादन नहीं देता'। जब वह इतना कह चुकी तो उसके पति ने निवेदन किया कि 'हे प्रभो! यह झूठी है, अपने बान्धवों के बहकाने से मुझे मरवाया चाहती है, मैंने इसे साल भर के लिये सब वस्तु पहिलेही से दे रक्खी हैं इसके वे बन्धु जो निष्पक्ष हैं इस बात के साक्षी हैं आप उनसे भलेही पूछ लीजिये'। इस प्रकार जब उसने निवेदन किया तो महाराज ने कहा कि इसके साक्षी तो स्वयं महादेवजीही हैं जो रानी को स्वप्न में समझा गये हैं। तो अब अधिक साक्षियों की क्या आवश्यकता हैं, इस स्त्री को इसके बान्धवों सहित दण्ड दिया जाय, महाराज की यह आज्ञा सुन बुद्धिमान् यौगन्धरायण ने यों निवेदन किया कि "यद्यपि श्रीमान् का कहना बहुत ठीक है तथापि जैसा उचित है साक्षियों का कहना अवश्य सुन लेना चाहिये, क्योंकि जो लोग इस भेद को नहीं जानते वे अपने मन में क्या समझेंगे।" यह सुन महाराज ने साक्षियों को वहीं बुलवाया और पूछने पर उन लोगों ने उसी स्त्री को झूठी ठहराया। इस प्रकार जब यह प्रमाणित हो गया कि वह स्त्री सत्पति से द्रोह करती है तो महाराज ने उसे उसके बान्धवों और पांचों पुत्रों के सहित निज देश से बाहर निकलवा दिया। कोमलहृदय महाराज ने इतना धन देकर कि जिससे वह दूसरा विवाह कर सके, उसे विदा किया। फिर महाराज ने कहा कि क्रूरा दुष्टा बुरे कुटुम्बवाली नारी, आपद्ग्रस्त आकुल पति को जीतेही कौव्वो की नाईं खाया करती है, पर सरला, कुलीना, सुशीला, गृहिणी, ताप हरनेवाली मार्ग की तरुच्छाया की नाईं बड़े भाग्योंही से किसी को प्राप्त होती है। इस प्रकार प्रसङ्गवश जब महाराज ने कहा तो कथाप्रवीण वसन्तक ने जो समीपही बैठा था विनयपूर्वक निवे-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दन किया कि हे देव ! देहधारियों का स्नेह वा विरोध भी पूर्वजन्म की वासना के अभ्यासवश होता है सुनिये मैं इस विषय की एक कथा आपसे कहता हूं कि—

वाराणसी नगरी में कोई विक्रमचण्ड नामक राजा रहते थे उनके एक अति प्यारे सेवक का नाम सिंहपराक्रम था जो एकही समान रण और द्यूत दोनों में विजयी रहता था। उसकी कलहकारिणी नाम की एक भार्य्या थी जो अपने नाम के अनुसार अर्थ भी रखती थी और जो शरीर तथा हृदय दोनों से समानही दूषिता थी। वह धीर पुरुष जो कुछ धन राजा अथवा जूये से पाता था सभी ला लाकर अपनी उस भार्य्या को दे दिया करता था। तथापि वह शठा, यद्यपि उसे तीन पुत्र उत्पन्न हो चुके थे, कलह किये विना चण भर भी न रहती थी, और नित्यही पुत्रों को साथ लिये यही रट लगाकर उसे सन्ताप दिया करती थी कि तू आप तो बाहरही बाहर खाता पीता है और हमलोगों को कुछ भी नहीं देता। यद्यपि उसका पति खाने पीने और वस्त्रालङ्कार किसी प्रकार से उसे दुःखित न होने देता था तथापि उसकी भोगतृष्णा का अन्त न मिलता और वह सदा भूखी ही बनी रहती थी। योंही नित्य दुःख सहते सहते उसके क्रोध से खिन्न हो वह सिंहपराक्रम घर छोड़ श्रीविन्ध्यवासिनी देवीजी के दर्शनों को चला गया। वहां उसने निराहार व्रत कर श्रीदेवीजी को प्रसन्न किया जिनने उसे स्वप्न में दर्शन देकर कहा कि 'हे पुत्र ! उठ और उसी वाराणसीपुरी को जा, वहां सब से बड़े वटवृक्ष की जड़ में खोदने से तुझे असंख्य धन प्राप्त होगा, उसी में तुझे गरुड़मणि निर्मित एक थाली ऐसी सुन्दर और निर्मल मिलेगी मानो स्वच्छ आकाश का टुकड़ा टूट कर ऊपर से गिर पड़ा हो। जिस प्राणीमात्र के पूर्वजन्म का हाल तू जानना चाहेगा उसका वृत्तान्त मानो प्रतिबिम्ब की नाईं उसके अन्दर लिखा हुआ तुझे दीख पड़ेगा। उसी के द्वारा अपने तथा भार्य्या के पूर्वजन्म का वृत्तान्त जानकर तू खेद परित्याग कर सुखपूर्वक रहेगा। देवीजी का ऐसा वचन सुन वह जाग उठा और व्रत का पारण कर दूसरे दिन वाराणसी की ओर चल पड़ा। वहां पहुँच जो उसने उस वटमूल में खोदा तो वहां उसे असंख्य धन हाथ लगा और उसी में वह रत्ननिर्मित थाली भी उसको मिली। फिर अपने तथा अपनी भार्य्या के पूर्वजन्म का वृत्तान्त जानने की इच्छा से उसने उस थाली में जो देखा कि यह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिखा पाया कि 'तू उस जन्म का सिंह है और तेरी भार्य्या भालुनी है।' सो पूर्व जाति के महा वैर की वासना से इस जन्म के भार्य्याद्वेष को निश्चल जान उसने शोक और मोह दोनों को परित्याग कर दिया । फिर तो उसने उस पात्र के प्रभाव से अनेक कन्याओं के पूर्वजन्म का हाल निश्चय कर करके और उन्हें भिन्न जाति का पा पा के छोड़ दिया, योंही करते करते उसे एक कन्या ऐसी मिल गई जो पूर्वजन्म में सिंही थी और जिसका नाम सिंहश्री था, बस उसी से अपना विवाह कर वह सिंहपराक्रम सुख से रहने लगा । तब उसने कलहकारिणी को एक गांव देकर अलग कर दिया और नववधू के साथ असंख्य धन को पा आनन्दपूर्वक अपना दिन बिताने लगा । इसी प्रकार हे महाराज! इस जन्म में पूर्वसंस्कारवश वैर वा स्नेह करनेवाले स्त्रीपुत्रादि मनुष्य को प्राप्त होते हैं । वसन्तक के मुख से इस विचित्र कथा को सुन, महाराज वत्सराज और रानी वासवदत्ता दोनों सन्तुष्ट हुये ।

योंही दिन पर दिन बीतते जाते थे और महाराज वत्सराज अपनी प्यारी गर्भिणी रानी वासवदत्ता के मुखचन्द्र को देख देख प्रसन्न होते थे। इतने में क्रम से सब मन्त्रियों को भविष्यकल्याणसूचन करनेवाले शुभलक्षण पुत्र उत्पन्न हुये। प्रथम तो मुख्यमन्त्री यौगन्धरायण को जो बुद्धिमान् पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम मरुभूति रक्खा गया । फिर रुमण्वान् को जो सुत हुआ उसका नाम हरिशिख धरा गया, और वसन्तक के पुत्र का नाम तपन्तक हुआ । तदुपरान्त मुख्य प्रतीहारी नित्योदित को भी जिसका एक दूसरा नाम इत्यक भी था पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम गोमुख धरा गया। इन सबों के उत्पन्न होने पर एक बड़ा भारी उत्सव किया गया, जिसमें नभ से यह आकाशवाणी हुई कि महाराज वत्सराज के होनहार चक्रवर्ती पुत्र के ये मन्त्री लोग ऐसे होंगे कि समस्त वैरियों के वंश का नाश इनके द्वारा किया जायगा। कुछ दिन और बीतने पर रानी वासवदत्ता के गर्भप्रसव का समय बहुतही निकट आ गया, तो वह उस वासगृह में जा रहीं जिसे पुत्रवती स्त्रियों ने पवित्र किया था और जिसकी खिड़कियों में अर्क और शमीवृक्ष के पत्ते लगा दिये गये थे । अनेक प्रकार के मङ्गल आयुध भी वहां लटका दिये गये क्योंकि उनकी ज्योति गर्भरक्षा में उचित समझी जाती है । उनमें से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ऐसा सुन्दर तेज निकलता था कि मानो रत्न के दीप बल रहे हैं, मन्त्र तन्त्र के ज्ञाताओं ने भी अपने जादू टोटकों से उस वासगृह की ऐसी रक्षा कर दी कि वह मातृगण का किलाही हो गया, जहां किसी प्रकार के अकल्याण की पहुँच न हो सकती थी। ऐसे सुरक्षित मनोहर स्थान में देवी वासवदत्ता के गर्भ से उस परम सुन्दर कुमार का जन्म यों हुआ जैसे अमृतमय किरणों से दिशाओं में प्रकाश फैलाते हुये चन्द्रमा का जन्म आकाश से होता है। जन्म लेतेही न कि केवल वह मन्दिरही प्रकाशमय हुआ किन्तु माता का हृदय भी शोकान्धकार के हटने से हर्षानन्द द्वारा उल्लसित हो गया। उधर तो सारे अन्त:पुर में हर्ष छा गया इधर अन्त:पुर से आकर किसी ने महाराज को सुतजन्म का आनन्दमय समाचार सुनाया। उसे जो सब राज्यही महाराज ने पुरस्कार में न दे दिया उसका कारण कुछ लालच न था वरन यह समझकर कि ऐसा करना अनुचित होगा उन्होंने सारा राज्य देने से हाथ को कठिनतापूर्वक रोका। फिर उसी क्षण औत्सुक्यपूर्वक अन्त:पुर में पहुँचकर उन्होंने उस सुत के मुखचन्द्र का दर्शन किया जिसके हेतु उन्हें चिरकाल से लालसा लगी थी। देखा कि कुमार का अधर और नवीन ओष्ठ रक्तपल्लव की नाईं सुन्दर और कोमल हैं, छोटे छोटे केश अत्यन्तही नरम और भूरे हैं, उनका मुख साम्राज्य-लक्ष्मी के लीलाकमल की नाईं मनोहर और रमणीक है। उनके मृदु पदों पर छत्र और चामर के चिन्ह दीख पड़ते थे मानो अन्य राजाओं की श्री ने जो भय के मारे पहिलेही से छत्र चामर परित्याग कर दिये हैं उन्हीं के चिन्ह अङ्कित हो गये हों। पुत्र के ऐसे शुभ लक्षण देखतेही महाराज के नेत्रों में हर्षानन्द से प्रेमाश्रु उमड़ आये और यौगन्धरायणादि को बड़ीही प्रसन्नता हुई। इतनेही में यह आकाशवाणी हुई कि, हे राजन्! आपका यह पुत्र कामदेव का अवतार है इसका नाम नरवाहनदत्त जानो। यह समस्त विद्याधरेन्द्रों का चक्रवर्ती राजा होगा और उस पद को देवताओं के एक कल्प पर्य्यन्त धारण करेगा'। इतना कहकर जब आकाशवाणी चुप हुई तो साथही नभोमण्डल से पुष्पवृष्टि होने लगी और देवी नगाड़े भी बजने लगे। तब महाराज वत्सराज ने प्रसन्न हो एक बहुतही बड़ा उत्सव किया जिसे पहिले मानो देवताओं ने आरम्भ किया था। मन्दिरों से निकलकर जो मङ्गल बाजों का शब्द आकाश में फैलता था तो वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मानो विद्याधरों को इस बात की सूचना देता था कि उनके राजा का जन्म महाराज वत्सराज के यहां हुआ है। महलों के ऊपर जो लाल लाल पताकायें वायु में फहराती थीं तो यह जान पड़ता था कि मानो वे सब परस्पर गुलाल से खेल रही हों। सुन्दर वारपोषिताओं के चहुँओर नृत्य करने से ऐसा प्रतीत होता था मानो स्वर्गीय अप्सरायें सदेह कामदेव की उत्पति सुनकर पृथ्वी पर एकत्र हुई हों। महाराज ने समस्त पुरी में इस उत्सव के कारण जो नवीन वस्त्रालङ्कार वितरित किये तो उसकी शोभा यों हो गई मानो उस नगरी में सबही लोग समान विभववाले हों। जिस समय महाराज खुले हृदय से अपने सेवकों में धन लुटाने लगे तो कोष को छोड़ और कहीं भी कमी न हुई। आसपास के सामन्तों के घर की स्त्रियां अनेक प्रकार के वस्त्रालङ्कार सौगात में ले लेकर आ रही थीं उनके साथ झुण्ड की झुण्ड नर्तकी आगे आगे चली आती थीं जिनके साथ में रक्षक लोग अपने चमकदार आयुधों को लिये चल रहे थे। उस आनन्दमयी पुरी में सर्वत्र नृत्य हो रहा था, जहां देखो तहीं भरे पात्रों का दान दिया जा रहा है, जिधर दृष्टि उठती उधरही आनन्द दिखाई पड़ता, जहां सुनिये वहीं मङ्गलमय बाजे बज रहे हैं, जिसे देखिये वही गुलाल से लालोलाल हो रहा है, राजभवन के चारो ओर भाट और चारणों की ऐसी भीड़ लगी है कि चलने को मार्ग नहीं मिलता। इस प्रकार यह भारी महोत्सव दिनोदिन बढ़ताही जाता था और तबलों समाप्त न हुआ जब लों पुरनिवासियों का उत्साह पूर्ण न हो लिया।

ज्यों ज्यों दिन बीतते गये त्यों त्यों कुमार प्रतिपच्चन्द्र की नाईं वृद्धि पाते गये और जैसा कि आकाशवाणी ने सूचित कर दिया था, महाराज ने निज पुत्र का नामकरण विधानपूर्वक नरवाहनदत्त किया।

छोटे छोटे नखवाले कोमलपदों से लड़खड़ाते हुये जब कुमार दो एक डग चलते अथवा नन्हें नन्हें दांतवाले सुन्दर मुख से दो एक शब्द तुतलाते हुये उच्चारण करते तो महाराज को यह सब देख सुनकर बड़ाही सन्तोष होता था। कुछ दिनों के उपरान्त मन्त्री लोगों ने भी अपने अपने बालक को लाकर राजकुमार के पास समर्पण किया जिन सबों को देख महाराज बड़ेही प्रसन्न हुये। यौगन्धरायण ने पहिले मरुभूति को समर्पित किया, फिर रुमखान् ने हरिशिख को,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इत्यक ने गोमुख को और वसन्तक ने तपन्तक को ला उपस्थित किया। पुरोहित शान्तिकर ने भी अपने दोनों भतीजों को जो उसकी भौजाई पिङ्गलिका को साथही उत्पन्न हुये थे और जिनका नाम शान्तिसोम और वैश्वानर था, लाकर राजकुमार के लिये महाराज को अर्पण किये।

अच्छी भई सुतहवां शुभपुष्पवृष्टि
नान्दीनिनादमिलिता सुरलोकवाणी।
राजा प्रसन्नमन भो निज रानि सङ्गै
मन्त्री-सुपुत्रवर-मण्डल आदरै दै ॥
छोटेपनौ मगन ह्वै षट मन्त्रिपुत्रा
कीन्ही करैं सतत राजकुमारसेवा ।
जातें सदैव नरवाहनदत्त सोहै
मानो घिरयौ सुगुण गौरवकारियों ते ॥

किलकिलात पुनि पुनि हँसत इत उत आवत जात ।
यौं निजसुतकौतुक लखत राजहिं दिवस बिहात ॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

चतुर्दारिका नाम पांचवा लम्बक।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालविनैबल पाई ।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा वसुधा महँ छाई ॥
प्रेम-समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस दुहाई ।
पावहिं सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ी विबुधाई ॥

प्रथम तरङ्ग।

सुण्डादण्ड-सिंदूर तें करत महीतल लाल ।
विघनवृन्दविनिपात-कर जयति उमापतिलाल ॥

इस प्रकार निज पुत्र नरवाहनदत्त का प्रतिपालन करते हुये महाराज वत्सराज रानियों के सहित आनन्दपूर्वक रहते थे। किन्तु उन्हें राजकुमार की रक्षा के लिये सदा व्यग्र देखकर एक दिन यौगन्धरायण मन्त्री ने उनसे एकान्त में कहा कि हे राजन्! आप राजकुमार के लिये कुछ चिन्ता न करें श्रीमहादेवजी ने वह पुत्र आपके घर में दिया है जो सब विद्याधरों का चक्रवर्ती राजा होगा। विद्याओं के प्रभाव से इस हाल को जानकर विद्याधरों के राजा लोग निज हृदय में द्वेष मानने लगे और वे लोग कुमार की कुछ बुराई किया चाहते थे कि इस बात को श्रीचन्द्रमौलिजी ने जानकर निज पुत्र स्तम्भक नामक गणेशजी को कुमार की रक्षा के लिये नियत कर दिया है। वे अलक्ष्यभाव से सदा आपके राजकुमार की रक्षा किया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करते हैं; यह वृत्तान्त अभी हालही में श्रीनारदजी मुझसे कह गये हैं। अभी मुख्य मन्त्री इतना कहही रहे थे कि एक दिव्य पुरुष किरीट और कुण्डल पहिने, हाथ में खड्ग लिये आकाश से उतर महाराज के सन्मुख आ खड़ा हुआ। आतेही उसने राजा को प्रणाम किया और महाराज ने भी उसका आतिथ्यसत्कार करने के उपरान्त आश्चर्य के साथ पूछा कि आप कौन हैं? और किस कारण आपका यहां आना हुआ है? उसने कहा कि मैं मनुष्य होकर भी विद्याधरों का राजा हो गया हूं, नाम मेरा शक्तिवेग है, अब मेरे बहुत से शत्रु हो गये हैं। सो हे राजन्! मैं अपने प्रभाव से यह जानकर कि आपके पुत्र हम विद्याधरों के राजा होंगे मैं उनका दर्शन करने आया हूं। उसका ऐसा कहना सुन, प्रसन्न हो महाराज वत्सराज ने अपने भविष्य चक्रवर्ती पुत्र का दर्शन उसे करा दिया। फिर आश्चर्य के साथ पूछा कि विद्याधरत्व क्या है? तथा वह पद क्योंकर प्राप्त होता है? और आपने कैसे उस पद को पाया सो हमसे कहिये?। राजा का ऐसा बचन सुन, विनय से नम्र हो, शक्तिवेग विद्याधर ने यों कहना आरम्भ किया कि,—

हे राजन्! इस जन्म अथवा पूर्वजन्म में श्रीशङ्करभगवान् की आराधना करने से धीर लोग उनके अनुग्रह द्वारा विद्याधरपद को पाते हैं। वह पद अनेक प्रकार का है जिसमें खड्ग और माला आदि की दिव्य विद्या का ज्ञान होता है, मैंने उसे क्योंकर पाया सो सुनिये; यों निवेदन कर शक्तिवेग ने रानी वासवदत्ता के सन्मुख निजसम्बन्धिनी कथा को इस प्रकार कहना आरम्भ किया कि—

हे देव! इस भूतल का भूषण जो वर्धमान नामक नगर है वहां किसी समय शत्रुओं को दमन करनेवाले परोपकारी नाम राजा हो गये हैं। उनकी भार्य्या का नाम कनकप्रभा था, वह ऐसी सुन्दरी थी कि मानो मेघ में रहनेवाली सौदामिनी, अपनी चञ्चलता को छोड़ भूतल पर स्थिर हो गई हो। कुछ दिनों के उपरान्त राजा को उसी रानी से एक ऐसी रूपवती कन्या हुई कि जिसे ब्रह्मा ने मानो लक्ष्मीजी के सौन्दर्य्यदर्प को शान्त करने के लिये उत्पन्न किया हो। वह दिनोदिन चन्द्रकला की नाईं बढ़ने लगी और पिता ने उसका नाम कनकरेखा रक्खा। जब वह कन्या युवती हुई तो राजा ने एक दिन अपनी प्यारी भार्य्या रानी कनकप्रभा से एकान्त में कहा कि हे प्रिये! कनकरेखा तो दिनोदिन स-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यानी होती जाती है अब मुझे इस बात की चिन्ता लगी है कि इसके अनुरूप सु-योग्य बर कहां मिलेगा, क्योंकि उचित पति को न प्राप्त होनेवाली कन्या बेसुरी रागिनी की नाईं है जो सुननेवालों के कर्ण में उद्वेग पैदा करती है। जो कन्या भूल वा मूर्खता से अपात्र को दे दी जाती है वह मूढ़ की विद्या की नाईं न तो यश और न धर्म्म के लिये होती प्रत्युत उससे केवल पछतावाही हाथ रहता है । सो हे देवि ! मुझे यही भारी चिन्ता रात दिन लगी रहती है कि कौन सा ऐसा राज-कुमार इसके योग्य है जिसे मैं इस कन्या को विवाह में दूं। यह सुन कनकप्रभा ने हँस कर उत्तर दिया कि आपतो ऐसा कह रहे हैं और आपकी कन्या विवाह-ही नहीं किया चाहती। अभी आजही की बात है कि जब वह गुड़ियों से खेल रही थी तो मैंने हँसीही हँसी में कहा कि हे पुत्रि ! वह कौन सा शुभदिन होगा जब मैं तेरा विवाह देखूंगी। यह सुन उसने आक्षेप के साथ उत्तर दिया कि, हे मां ! ऐसा मत कह तू मेरा विवाह कभी मत कीजियो, मैं तुझसे अलग नहीं होनेवाली, मैं क्वारीही रहकर इस घर में शोभा पाऊँगी, यदि तू बलपूर्वक मेरा विवाह कर देगी तो मुझे मरी समझियो, इसका कोई विशेष कारण है जो मैं नहीं कहती । ऐसा उसका कहना सुन हे नाथ ! मैं घबड़ाई हुई आपके पास आई हूं कि जब उसका विवाहही न होगा तो फिर वर की चिन्ता व्यर्थ क्यों करनी ! रानी के मुख से ऐसी बात सुन राजा भी घबड़ा गये और निज सुता के अन्त:पुर में जा उससे कहने लगे कि हे पुत्रि ! जिस विवाह के लिये सुरासुर की कन्यायें सदा भगवान् से प्रार्थना किया करती हैं उस विवाह को तू क्यों नहीं किया चाहती ? पिता का ऐसा बचन सुन राजकुमारी ने लज्जा से नेत्र नीचे कर लिये और हाथ जोड़ कहने लगी कि हे पिता जी ! अभी मुझे विवाह करने की इच्छा नहीं है, फिर आप इसमें इतना आग्रह क्यों करते हैं ? पुत्री के ऐसे वचन सुन परम बुद्धिमान् परोपकारी राजा ने यों कहा कि हे पुत्रि ! विना कन्यादान किये पाप की शान्ति नहीं होती, फिर शास्त्र में लिखा है कि कन्या को सदा बन्धुओं के पराधीन होके रहना चाहिये, उसका स्वतन्त्र होना कदापि उचित नहीं है। यथार्थ में कन्या की उत्पत्ति दूसरेही के लिये है और इसी निमित्त उसकी रक्षा की जाती है, पिता के घर में उसे केवल बाल्यावस्थाही में रहना चाहिये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यदि कन्या ऋतुमती हो जाय तो उसके बन्धु लोग नरकगामी होते हैं, लोग उसे वृषली कहते हैं और उसका भर्ता वृषलीपति कहलाता है। जब इस प्रकार पिता ने कहा तो कनकरेखा ने उसी क्षण अपने मन की बात यों प्रकाश की, कि हे पिता जी! यदि ऐसाही है तो चाहे ब्राह्मण हो वा क्षत्री, जिस किसी ने कनकपुरी नाम्नी नगरी देखी हो, आप उसी से मेरा विवाह कीजियेगा, वही मेरा भर्ता होगा। यदि कोई भी व्यक्ति ऐसा न मिले तो मेरे पर रुष्ट होना आपका वृथा है। पुत्री का यह बचन सुन राजा विचारने लगे कि अच्छा भाग्यों से इसने किसी प्रकार विवाह करना तो अङ्गीकार किया। निस्सन्देह यह कोई देवी है जो किसी कारणवश मेरे घर में उत्पन्न हुई है नहीं तो यह बालिका होकर इतना क्योंकर जानती है। ऐसा विचार वह कन्या से बोले कि, "बहुत अच्छा, मैं ऐसाही करूँगा" फिर वे उस दिन के कृत्य में लगे। दूसरे दिन जब वे राजसभा में बैठे तो अपने पार्श्ववर्तियों से पूछने लगे कि, 'क्या आप लोगों में से किसी ने कनकपुरी नाम नगरी देखी है, देखनेवाले को चाहे वह ब्राह्मण हो या क्षत्री. मैं अपनी कन्या कनकरेखा को विवाह में देकर युवराज बनाऊँगा।' यह सुन वे सब एक दूसरे का मुंह ताक कर कहने लगे कि हे देव! हमलोगों ने तो कभी कनकपुरी का नाम भी नहीं सुना, देखने की कौन कहे! तब तो राजा ने प्रतीहारी को बुलाकर यों आज्ञा दी कि जाकर सारी नगरी में इस बात की डुग्गी पिटवा दो कि क्या किसी ने सचमुच कनकपुरी नाम नगरी को देखा है! प्रतीहारी ऐसी आज्ञा पाकर चला गया और राजपुरुषों (पुलिस) को आदेश दे उसने इस तरह डुग्गी पिटवाई जिसमें लोगों का ध्यान विशेषरूप से आकर्षित हो। डुग्गीवाला यों कहता फिरता था कि—

छत्री हो वा विप्रसुत सुनौं हमारी बात।
आयसु राजा दीन्ह जस सबै सुनाये जात॥
कनकपुरी देखी जिनै सो आवहि तिहि पाहिँ।
यौवराज्य कन्यासहित राजा देहै ताहिँ॥

इस प्रकार डुग्गी पीट कर सबको विस्मित करनेवाला यह बचन सारे नगर में सुनवा दिया गया। उस घोषणा को सुनकर नगरनिवासी लोग आपस में कहने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लगी कि भाई वह कैसी कनकपुरी है कि जिसके लिये आज हमारी नगरी में डुग्गी पीटी जाती है जिसे न तो हमलोगों ने और न हमारे वृद्धों ने कभी सुना, देखने की कौन कहे। एक भी व्यक्ति ऐसा न मिला जो कहता कि मैंने कनकपुरी देखी है।

इतने में बलदेव के पुत्र शक्तिदेव नामक एक ब्राह्मणपुत्र ने उस घोषणा को सुना। यह युवा बड़ा व्यसनी था और ताजाही ताजा जूये में अपना सब धन हार गया था, सो वह राजपुत्री के पाने की बात सुन उन्मत्त हो विचारने लगा कि मैं तो अपना सब धन जूये में गँवा बैठा हूं, अब मुझे न तो पिता के घर में पैठना मिलेगा और न वेश्या के घर में ; सो मुझ अगति के लिये झूठ बोलनाही अच्छा है, चलो मैं घोषणा देनेवाले के पास चलकर कहूं कि मैंने वह नगरी देखी है, कौन जानता है कि मैंने उसे नहीं देखा क्योंकि कोई भी तो वहां नहीं गया है, सम्भव है कि इस प्रकार राजपुत्री मेरे हाथ लग जावे। ऐसा विचार वह उन राजपुरुषों (पुलिसवालों) के पास जा कहने लगा कि 'हे हे महाशयो! मैंने उस पुरी को देखा है।' उन लोगों ने कहा 'वाह! वाह! बहुत अच्छी बात है, तो हमारे साथ प्रतीहारीजी के पास चलो।' उसने कहा बहुत अच्छा, तब तो वे लोग उसे प्रीतहारी के पास ले आये। उनसे भी उसने झूठेही कनकपुरी के देखने की बात कही, सो वे उसे सत्कारपूर्वक राजा के पास ले गये, उनके भी साम्हने ढीठता से इसने वैसाही कहा। जूये में जो अपना सर्वस्व गँवा चुका है वह क्या नहीं कर सकता!। महाराज ने उसका यथार्थ तत्व जानने के लिये उसे निज पुत्री कनकरेखा के समीप भिजवा दिया। जब कनकरेखा ने प्रतीहारी के मुख से सुना कि एक ब्राह्मणपुत्र ऐसा आया है जिसने कनकपुरी देखी है तो अत्यन्त प्रसन्न हो उसने उसे अपने समीप बुलाकर पूछा कि क्या आपने कनकपुरी को देखा है? उसने कहा "हां जब मैं विद्यारथी-अवस्था में पृथिवी पर इधर उधर भ्रमण करता फिरता था तो मैंने उस समय उस नगरी को देखा था"। फिर राजकुमारी ने उससे प्रश्न किया कि अच्छा आप यह बतलावें कि किस मार्ग से आप वहां गये थे और वह पुरी कैसी है? उसने उत्तर दिया कि पहिले मैं यहां से हरपुर नामक नगर को गया फिर वहां से चलकर क्रमशः वाराणसी को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पहुँचा, फिर आगे चलकर कुछ दिनों में पौण्ड्रवर्धन को डांककर मैं कनकपुरी में जा पहुँचा और उत्तम कर्म्मवालों की भोगभूमि उस पुरी को देखा, जिसकी शोभा इन्द्रपुरी के समान है जहां केवल देवताही लोग बसते हैं। कुछ दिन वहां रह, विद्याप्राप्त कर मैं यहां लौट आया, सो जिस रास्ते से मैं वहां गया और जैसी वह पुरी है सब वृत्तान्त आपसे निवेदन कर दिया। इस प्रकार जब बात बनाकर शक्तिदेव ने कहा तो मुसकुरा कर राजपुत्री ने पुनः कहना आरम्भ किया, "ठीक है, ठीक है महाब्रह्मन् जी! हां हां फिर तो कहिये आप किस मार्ग से वहां पहुँचे थे। यह सुन शक्तिदेव ने फिर भी ढीठेपन से वही उत्तर दिया। तब तो राजपुत्री ने अपनी सहेलियों द्वारा उसे बाहर निकलवा दिया और स्वयं निज पिता के पास पहुँची। महाराज ने पूछा कि क्या उस ब्राह्मणपुत्र ने वहां का हाल ठीक ठीक बतलाया? राजकुमारी ने कहा कि हे पिताजी! आश्चर्य्य है कि आप राजा होकर ऐसा विलच्चण आचरण करते हैं! क्या आप नहीं जानते कि दुष्ट धूर्त लोग सीधे सादे सज्जनों को ठगने के लिये इस संसार में घूमाही करते हैं? सो उसी प्रकार वह ब्राह्मण भी मुझे ठगने का उद्योग करता था। वह झूठा है उसने उस नगरी को कभी नहीं देखा। धूर्त लोग, इस संसार में अनेक प्रकार की ठगविद्या करते हैं, सुनिये मैं आपसे शिव और माधव का हाल कहती हूं, यों कह राजकुमारी ने इस कथा को कहना आरम्भ किया कि—

रत्नपुर नाम एक अतीवोत्तम नगर है, जहां शिव और माधव नामक दो धूर्त रहते थे। उनके यहां अनेक धूर्तों का जमावड़ा रहता और वे सब नगर के धनी लोगों को अनेक प्रकार की धूर्तता से ठगा करते थे। एक समय उन दोनों ने आपस में यों सलाह ठहराई कि भाई इस सारे नगर को तो हम दोनों भली प्रकार लूट चुके, अब चलकर उज्जयिनीपुरी में बसना चाहिये। सुनते हैं कि वहां के राजा का पुरोहित शङ्करस्वामी बड़ा धनाढ्य है, यदि उसका धन हर सकें तो फिर मालवदेश की स्त्रियों के विलास का खूबही आनन्द लेने में आवै। ब्राह्मणों में इस बात की धूम है कि वह भारी सूम है क्योंकि यद्यपि उसके पास सात घड़ा सुवर्ण है तथापि वह भौंह चढ़ाकर ब्राह्मणों की दच्चिणा में से आधा कपट लेता है। यह भी सुनते हैं कि उसकी कन्या परम सुन्दरी है सो उसे भी किसी न किसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ढङ्ग से हाथ पर चढ़ाना चाहिये। ऐसा विचार उन्होंने यह निश्चय किया कि वहां चलकर क्या क्या करना उचित है, फिर वे दोनों धूर्त शिव और माधव नगर से बाहर हुये।

चलते चलते जब माधव वहां पहुँचा तो वह राजपुत्र का वेष धारण कर अपने लोगों के साथ नगर के बाहरही एक गांव में टिक रहा। शिव, जो अनेक प्रकार की माया रचने में चतुर था ठीकोठीक एक तपस्वी का रूप धर अकेलेही नगर में जा पैठा, और सिप्रा नदी के तट पर जो मठ था वहां रहने लगा। उसने थोड़ी मिट्टी, कुछ कुशा, एक भिक्षापात्र और मृगचर्म्म इत्यादि वहां इस ढङ्ग से रख दिया कि बाहर से आते जाते लोगों को सब वस्तु दिखाई पड़ें। प्रातःकाल उसने अपने शरीर पर खूब गाढ़ी मिट्टी पोत ली, मानो अवीचि नरक में जाने पर जो शरीर में कीचड़ लगेगा उसका अभ्यास अभी से करने लगा। कभी कभी नदीजल में पैठकर वह चिरकाल तक नीचे सिर और ऊपर टांगे कर पड़ा रहता, मानो अपने दुष्कर्म से नरक में उलटे ढकेले जाने की साधना का अभ्यास करता हो। स्नान कर चुकने के उपरान्त वह सूर्य्य की ओर मुंह उठाकर चिरकाल तक देखा करता मानो लोगों को सूचित करता हो कि वह शूली पर चढ़ाने के योग्य है। फिर देवमूर्ति के सन्मुख खड़ा हो वह कुशा की माला बना जप किया करता था, और बड़े दम्भ से मुंह बना पद्मासन मार चिरकाल तक बैठा रहता। वह स्वच्छ फूलों को चुन चुन कर पुरारि भगवान् पर क्या चढ़ाता मानो सज्जन साधुओं के स्वच्छहृदय को अपनी ओर खींचता था। पूजा कर चुकने के उपरान्त भी वह ध्यान लगा कर देखने में तो जप किया करता, परन्तु हृदय के अन्दर निज कुटिल गति की बातें विचारा करता था। तीसरे पहर काला मृगचर्म्म ओढ़ वह भिक्षा क्या मांगा करता मानो अपनी ठगविद्या के कटाक्ष को चारो ओर घुमाता था। ब्राह्मणों के घर से वह दण्डचर्म धारण किये तीन मूठी अन्न मांग लाता और दिन के तीन भाग की नाईं सब का तीन खण्ड करता। एक भाग कौओं को, दूसरा भाग अभ्यागत को देता और तीसरे भाग से अपना मनुआ भरता था। फिर बैठकर झूठेही अक्षमाला से जप क्या करता मानो अपने सब पापों की गिनती किया करता था। रात को मठ में अकेले बैठ वह बिचार किया करता था कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कौन सी घात लगाऊँ जो किसी को ठगूं। योंही प्रतिदिन महा कष्ट से छल तपस्या करते करते वह नगरवासियों का मन अपनी ओर खींचने में समर्थ हुआ। चारो ओर यह धूम मच गई कि यह बड़ा शान्त तपस्वी है, क्रमश: अनेक लोग भक्ति के साथ उसके यहां आ आ कर प्रणाम करने लगे।

तबतक उसका दूसरा मित्र माधव भी भेदियों के द्वारा सब पता लगा कि वह क्या क्या करता है नगर में पैठा, और दूरही एक देवमन्दिर में डेरा लगा वह राजपूत का वेष धरे सिप्रातट पर स्नान करने को गया। स्नान करके अपने अनुचरों के साथ लौटताही था कि शिव को देवता के सन्मुख जप और ध्यान में लगा देख मानो बड़ी भक्ति के साथ उसने उसके चरणों में साष्टाङ्ग दण्डवत् की। फिर उन लोगों को जो वहां एकत्र थे सुनाकर कहने लगा कि ये बड़े महात्मा हैं इनके ऐसा तपस्वी मैंने देखाही नहीं क्योंकि मैं भी अनेक तीर्थों में घूमता फिरता हूं जहां जाता हूं तहीं इनको देखता हूं, ये बड़े सिद्ध पुरुष हैं।' शिव, उसको देख कर भी उसी प्रकार ज्यों का त्यों दम्भ से ऊँचा सिर किये बैठा रहा, कुछ देर के उपरान्त माधव अपने घर को चला गया। रात को वे दोनों एकही स्थान में मिलकर साथही खा पी, विचारने लगे कि अब इसके आगे क्या करना चाहिये। पिछले पहर शिव तो चुपचाप उठकर अपने मठ को चला गया और सबेरा होतेही माधव ने अपने साथियों में से एक धूर्त को आज्ञा दी कि इन दोनों रेशमी वस्त्रों को लेकर तुम यहां के राजपुरोहित शङ्करस्वामीजी के पास जाओ और यह उनको भेंट करके यों निवेदन करो कि दक्षिणदेशनिवासी माधव नामक राजपूत अपने गोत्रवालों से दु:खित होकर निज पिता का बहुत सा धन लेकर यहां आये हैं, उनके साथ और भी अनेक राजपूत हैं, उनकी इच्छा है कि वे आपके राजा के यहां नौकरी करें। आपका यश सर्वत्र छा रहा है सो उन्होंने मुझे आपके समीप इस अभिप्राय से भेजा है कि जब आपको अवकाश हो तब वे आपके दर्शनों के निमित्त यहां उपस्थित हों, ऐसा जाकर विनयपूर्वक तुम पुरोहितजी से हमारी प्रार्थना कहो।"

ऐसा सिखा पढ़ा माधव ने उस धूर्त को भेजा और वह भी उन रेशमी वस्त्रों को एक उत्तम सोने की थाली में रख, एक बहुमूल्य वस्त्र से ढँक भेंट में देने के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिये पुरोहितजी के गृह पर पहुँचा । फिर पुरोहितजी से साक्षात् कर उसने अवसर से उन वस्त्रों को भेंट में दिया और एकान्त में माधव का सन्देश जैसा उसे बतलाया गया था, यथोचित कह सुनाया। पुरोहितजी ने भी उपायन के लोभ में फँसकर उसकी बात को सच मान लिया, ठीक है "कबहुँ न लोभ अन्ध कछु सूझा"। वह धूर्त तो लौट आया, किन्तु दूसरे दिन माधव ने अच्छा अवसर देख, कुछ नौकरों के हाथ में आसा बल्लम दे, सबों को राजपूत का वेष धरा, पुरोहितजी से मिलने के लिये प्रस्थान किया । वहां पहुँच उनसे मिल कुछ देर तक वार्तालाप कर वह उनकी आज्ञा ले निज निवासस्थान को लौट आया । दूसरे दिन फिर भी उसने उसी धूर्त के हाथ दो जोड़े बहुमूल्य रेशमी वस्त्र के पुरोहितजी के पास भेज दिये और तीसरे पहर स्वयं जाकर उनसे भेंट की। बातोंही बातों में नौकरी का प्रसङ्ग छेड़कर माधव ने पुरोहितजी से कहा कि मेरे पास धन तो बहुत है किन्तु साथियों के अनुरोध से मैं आपके महाराज के यहां नौकरी किया चाहता हूं, इसीलिये मैं आपके आश्रय में आया हूं आप यदि कृपा करें तो मेरी इच्छा पूर्ण हो। सुनतेही मनमें यह विचार कि अब अच्छी प्राप्ति होगी, वह माधव से बोला कि आप चिन्ता न करें मैं आपके लिये उद्योग करूँगा। फिर पुरोहितजी ने राजा के पास जाकर माधव के लिये बहुत कुछ कहा और राजा ने भी उनके अनुरोध तथा गौरव से उनकी बात स्वीकार कर ली । दूसरे दिन पुरोहितजी ने सेवकों सहित माधव को अपने साथ ले जाकर गौरव के साथ राजा के सम्मुख उपस्थित किया और राजा ने भी उसे भले राजपूत की आकृति में देख, सत्कार कर एक प्रतिष्ठित पद पर नियत कर दिया।

इस प्रकार माधव नित्य राजसभा में उपस्थित रहने और राजा की सेवा करने लगा किन्तु रात के समय वह सदा अपने मित्र धूर्तराट् शिव से मिलकर सलाह किया करता था। कुछ दिनों के उपरान्त पुरोहित ने लालचवश होकर माधव से यों कहा कि आपको बाहर रहने से बहुत कष्ट होता होगा आप मेरे-ही स्थान पर आकर क्यों नहीं रहते ? यहां आपको सब प्रकार सुबीतारहेगा। यह सुन माधव ने बहुत अच्छा कह अपने सेवकों सहित आकर पुरोहितजी के घरही में डेरा डाल दिया, पुरोहित महाशय ने यह न समझा कि वृक्ष की जड़

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में चूहा आ बसा। फिर तो माधव ने अनेक प्रकार के नकली भूषणों को बनवा कर उनमें झूठे नगीने जड़वा निज सन्दूक को भर अपनी कोठड़ी में धरवा दिया। कभी कभी वह कुछ वस्तु निकालने के बहाने से जब सन्दूक को खोलता तो उन नकली आभूषणों को आधाही ऐसा निकालता कि उनकी झलक पुरोहितजी को दिखाई पड़ जावे, जिसके कारण पुरोहित का जी यों ललचता था कि जैसे बैल घास देखकर लोछियाता हो। जब इस प्रकार उसने अपना भरम बट्टा जमा लिया, तो धीरे धीरे आहार में कमी कर नित्य शरीर से दुबला होने लगा। कुछ काल योंही बीतने पर, एक दिन जब पुरोहितजी उसकी शय्या के पास बैठे थे तो वह धूर्तराट् धीरे धीरे रोगियों की नाईं बोल कहने लगा कि पुरोहित जी आप देखतेही हैं कि मेरे शरीर की दशा अच्छी नहीं है सो आप किसी उत्तम सुयोग्य ब्राह्मण को ले आइये जिसे मैं अपना सर्वस्व दान करके अपने भविष्य कल्याण के निमित्त दे दूं, मेरे जीवन का कोई ठिकाना नहीं, बुद्धिमान् को उचित है कि ऐसे समय धन पर चित्त न लगावे, अपना परलोक सुधारने के लिये उसे सत्पात्र को दान कर दे। पुरोहितजी की तो जीविकाही दान से थी, सो उन्होंने कहा कि बहुत अच्छा मैं किसी को ले आता हूं, यह सुन, माधव ने मानो उपकृत हो उनके दोनों चरण धर लिये। इसके उपरान्त पुरोहितजी अनेक ब्राह्मणों को क्रमशः लाये किन्तु कोई भी माधव की दृष्टि में सत्पात्र न जँचा। यह देख उसके पार्श्ववर्ती धूर्तों में से एक कहने लगा कि इन्हें कोई भी ऐसा वैसा साधारण ब्राह्मण पसन्द न आवेगा। सिप्रा नदी के तट पर शिव नामक एक महातपस्वी ब्राह्मण रहते हैं इस समय उन्हीं पर इनकी बहुत श्रद्धा देखने में आती है यदि आप उन्हें ला सकें तो बहुत उत्तम हो, वह इन्हें अवश्य रुचेगा। यह सुन माधव ने बहुत गिड़गिड़ाकर पुरोहितजी से कहा कि हां हां आप कृपा कर किसी प्रकार उन्हें ले आते तो बड़ा काम होता उनके समान सत्पात्र ब्राह्मण कोई दूसरा नहीं है। यह सुन पुरोहित महाशय शिव नामक छलतपस्वी के पास पहुँचे, देखते क्या हैं कि वह आंखें बन्द किये ध्यान लगाये मानो ब्रह्म में लीन बैठे हैं। यह प्रदक्षिणा के उपरान्त प्रणाम कर पासही बैठ गये, कुछ देर के अनन्तर उस धूर्तराट् ने भी धीरे धीरे आंखें खोलीं। तब तो पुरोहितजी ने प्रणाम कर हाथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जोड़ साहसपूर्वक यों निवेदन किया कि हे प्रभो! यदि आप इस सेवक पर क्रोध न करें तो यह कुछ निवेदन करे। यह सुन उसने धीरे ऊपर से नीचे सिर हिलाकर मानो आज्ञा दी, जिसके उपरान्त पुरोहित ने यों कहना आरम्भ किया कि दक्षिणदेश के रहनेवाले एक महाधनी राजपूत यहां आकर ठहरे हुये हैं, नाम उनका माधवप्रसाद है, इस समय वे कुछ अस्वस्थ हैं सो अपना सर्वस्व दान किया चाहते हैं। यदि आप अङ्गीकार करें तो वे आपको वह कुल धन, जिसमें नाना प्रकार के रत्न और अलङ्कार हैं, देने के लिये प्रस्तुत हैं। यह सुन उसने धीरे से मौनव्रत छोड़ यह कहा कि हे ब्रह्मन्! मैं ब्रह्मचारी हूं भिक्षा मांग कर अपना पेट पालता हूं मैं धन लेकर क्या करूँगा। यह सुन पुरोहितजी ने पुनः कहा कि हे ब्राह्मणदेव! ऐसा मत कहिये आप आश्रम का क्रम नहीं जानते कि प्रथम किस आश्रम का निर्वाह करना चाहिये। सुनिये विवाह करके, घर में बस, गृहस्थ आदमी देव पितृ और अतिथियों की पूजा करने से धन के द्वारा त्रिवर्ग का साधन करता है अतएव गार्हस्थ आश्रम सबों में श्रेष्ठ है। यह सुन शिव ने कहा कि, प्रथम बात तो यह है कि मुझे कन्या देगा कौन? दूसरे, मैं ऐसे वैसे कुल में तो विवाह करूँगा नहीं। यह सुन पुरोहित के मनमें लालच पैठी कि मैं इसके धन से चैन करूँगा, सो अवसर पा लोभ से वह कहने लगा कि अच्छा यदि ऐसी बात है तो मुझे एक अत्यन्त रूपवती कन्या है जिसका नाम विनयस्वामिनी है उसी को मैं आपसे ब्याह दूंगा, और जो कुछ धन आपको माधव से प्रतिग्रह में मिलेगा उस सब की रक्षा यदि आपसे न हो सके तो मैं करूँगा, आप गृहस्थाश्रम को स्वीकार कीजिये। शिव तो यह चाहताही था सो कहने लगा कि हे ब्रह्मन्! यदि आप को ऐसाही आग्रह है तो मुझे भी क्या वक्तव्य है, आप जैसा कहेंगे मैं वैसाही करूंगा। मैं तपस्वी हूं, सोना और रत्न कैसा होता है मैं नहीं जानता, मुझे तो जैसे जैसे आप कहेंगे मैं करता जाऊँगा, अब आप जैसा चाहें और जैसा उचित समझें वैसा करें। शिव का ऐसा वचन सुन, वह मूढ़ पुरोहित प्रसन्न हो उसे अपने घर ले आया और उस अशिवरूपी शिव को घर में स्थापन कर माधव के पास जाकर उसे सब हाल सुनाया और वह भी यह सुन बहुत प्रसन्न हुआ। क्यों न हो अब तो वृक्ष की जड़ में एक छोड़ दो दो चूहे पैठे!!! अस्तु पुरोहित

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जी ने अपनी उस प्यारी पुत्री को जिसे बड़े कष्टों से पालकर सयानी किया था, उस शिव नामक धूर्त के साथ व्याह क्या दिया मानो अपनी सब सम्पत्तिही उसके हाथ दे दी। विवाह के तीसरे दिन पुरोहितजी अपने जामाता को दान दिलाने के निमित्त माधव के पास जो झूठेही रोगी बना हुआ था, ले गये। माधव उसे देखतेही शय्या को टेकटाक उठ बैठा और झट उसके पैरों पर गिर कहने लगा कि "धन्य हैं आप! आपकी तपस्या का भेद कौन पा सकता है! आपको मैं बारम्बार प्रणाम करता हूं"। यह कह उसने कोषागार से सब धन, जिसमें नकली अलङ्कार भरे थे, मँगा दान कर शिव को समर्पण किया। शिव ने भी "स्वस्ति" कह उसे स्वीकार किया और फिर उसी क्षण सब का सब अपने ससुर पुरोहित जी के हाथ यह कहकर दे दिया कि मैं तो इसे कुछ जानता बूझता नहीं, आप समझते हैं आपही इसे सम्हालिये और रखिये। पुरोहितजी ने कहा, "यह तो मैं पहिलेही अङ्गीकार कर चुका हूं कि मैं भली प्रकार रक्षा करूंगा इसके लिये आप चिन्ता न करें"। फिर शिव, माधव को आशीर्वाद देकर अपनी स्त्री की कोठड़ी में चला गया तो पुरोहितजी ने सब माल एक दृढ़ सन्दूक में बन्द कर अपने घर मे रखवा दिया। दूसरेही दिन से माधव का वह कपट-रोग मानो चङ्गा होने लगा; वह पुरोहितजी से यही कहता था कि मेरा यह रोग इसी महादान के प्रभाव से घटने लगा है, आपने बड़ी कृपा की कि धर्म में सहायता कर इस भारी आपत्ति से मेरा उद्धार किया। योंही जब जब पुरोहितजी माधव के पास आते तो वह उनकी प्रशंसा किया करता था। 'आपही के प्रभाव से मैं शिव के द्वारा चङ्गा हुआ हूं' यह कह कहकर उसने शिव से क्रमशः मैत्री को बढ़ाना आरम्भ किया। कुछ काल योंही बीतने पर एक दिन शिव ने अपने ससुर पुरोहितजी से कहा कि मैं कबतक आपके घर में भोजन किया करूंगा इसमें लोग मेरी तथा आपकी दोनोंही की निन्दा करते हैं सो आप ऐसा क्यों नहीं करते कि इन अलङ्कारों का मूल्य देकर आप इन्हें ले लेवें, यदि इनका मूल्य बहुतही अधिक हो तो आप मुझे यथासम्भव दे देवें मैं उतनेही में सन्तुष्ट हो जाऊँगा। यह सुन पुरोहित जी ने विचारा कि ये अलङ्कार तो बहुतही अधिक मूल्य के हैं सो उनके बदले में उन्होंने अपने सारे जन्म की कमाई शिव को दे दी, और शिव ने भी वह सन्दूक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अलङ्कार सहित पुरोहितजी को लिख दिया। तथा पुरोहितजी से भी एक रसीद माल के पाने की शिव ने लिखवा ली। इस प्रकार परस्पर एक दूसरे की रसीद लेकर वे लोग अलग अलग मकान में जा बसे। कुछ दिनों के उपरान्त माधव भी शिव के पास जा रहा और दोनों पुरोहितजी के माल से चैन उड़ाने लगे। कुछ काल बीतने पर एक दिन पुरोहित महाशय को कुछ द्रव्य की आवश्यकता हुई तो वे उन अलङ्कारों में से एक जोड़ी कड़ा निकालकर बाजार में बेचने के निमित्त गये। वहां जौहरियों ने उसकी परीक्षा कर कहा, 'वाह वाह! जिस व्यक्ति ने इस नकली अलङ्कार को बनाया है उसका विज्ञान ज्ञान बहुतही विलक्षण है। देखो काच और स्फटिक के टुकड़ों में कैसा उत्तम रङ्ग दिया है कि असली और नकली में कुछ भी भेद न रहा, सो न तो ये असली रत्न हैं और न यह यथार्थ सोना है। यह सुनतेही पुरोहितजी घबड़ाये और उसी क्षण दौड़े हुये घर को गये, वहां से सब अलङ्कारों को लाकर उन्होंने उन जौहरियों को दिखाया, उन्होंने कहा कि ये सब के सब नकली और बनावटी हैं यह सुनतेही पुरोहितजी की तो वह दशा हुई मानो उनके सिर पर वज्रपात हुआ हो। तब तो उस मूढ़ ने जाकर शिव से कहा कि आप अपने अलङ्कारों को लौटा लें और मेरा धन मुझे दे देवें। शिव ने उत्तर दिया कि मेरे पास क्या वह धन रक्खा है, मैं तो गृहस्थी में उसे खा पका गया। तब तो वे दोनों झगड़ते हुये राजा के समीप पहुँचे जिनके पास माधव उस समय बैठा था। पुरोहितजी ने राजा से निवेदन किया कि हे देव! इस शिव नामक व्यक्ति ने काच और स्फटिक के टुकड़ों पर उत्तम रङ्ग चढ़े हुये नकली गहने मुझ अनजान को दे धोखा मे डाल मेरा सर्वस्व ले लिया है सो मेरा न्याय हो! शिव ने कहा कि हे महाराज! मैं तो बालपनही से तपस्वी हूं, इसी ने मुझे घेरघार कर दान लेने पर विवश किया, मैंने इससे कहा कि मैं रत्नों का ज्ञाता नहीं हूं जो तुम कहोगी मैं करूंगा, इसने कहा कि सब धन मेरे पास रख दो मैं इसका प्रबन्ध करूंगा, मैंने इसकी बात स्वीकार कर सब का सब धन पातेही इसे दे दिया। फिर कुछ दिनों के उपरान्त हे प्रभो! इसने अपने इच्छानुसार मूल्य देकर वह सब आपही ले लिया, हम दोनों के पास एक दूसरे की लिखी रसीद भी तयार है, आप प्रभु हैं, राजा हैं, आपही न्याय कर मुझ दीन की सहायता करेंगे"।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जब शिव इतना कह चुका तो माधव ने पुरोहित से कहा "आप ऐसा क्यों कहते हैं आपतो हमारे मान्य हैं, आपही कहिये मेरा क्या दोष है, न मैंने आप से एक पैसा कभी लिया न शिव को एक दमड़ी जानता हूं, मैंने तो अपने पिता का धन पाकर चिरकाल तक उसे दूसरे महाजन के पास रक्खा था फिर उसे वहां से लेकर यहां आया, रुग्ण होने पर अपने भविष्य कल्याण के लिये मैंने वह सब धन एक सत्पात्र को दान दिया, यदि वह सोना सच्चा सोना न था, और वे रत्न सच्चे रत्न न थे तब तो मुझे काच और स्फटिक तथा पीतल दान करने का अच्छा फल मिला ! परन्तु नहीं, मैंने सच्चे हृदय से उन सच्ची चीजों को दान दिया जिसके पुण्यप्रभाव से मैंने उस महा दुस्तर रोग से निवृत्ति पाई, जिसके साक्षी आप सभी लोग हैं। इस प्रकार जब माधव ने विना तनिक भी मुख की आकृति बदले स्पष्ट कह सुनाया तो महाराज मन्त्री सहित हँस पड़े और बहुतही सन्तुष्ट हुये। जितने सभासद वहां बैठे थे सभी मनमें मुसकराने लगे और बोल उठे कि इसमें तो माधव और शिव की ओरसे कोई भी अन्यायाचरण नहीं दीख पड़ता। यह सुन मुंह लटका पुरोहितजी ने राजसभा के बाहर का रास्ता लिया। ठीकही है—

"अधिक लोभ नर चतुर को नाश करै सब ज्ञान।
को न लोभवश ह्वै लह्यो जगत माँहि अपमान" ॥

फिर तो वे दोनों धूर्त राजा को प्रसन्न रख उनकी कृपा से सब सुखों का भोग प्राप्त कर आनन्द से वहां रहने लगे। इस प्रकार धूर्त लोग अपने जिह्वाबल से सूत्र बीन अनेक प्रकार के जाल फैलाते हैं, क्योंकि ये लोग भूमि के मछुये हैं और जालही से इनकी जीविका है। सो हे तात! वह धूर्त झूठही कनकपुरी को देखा बता आपको ठग मुझे लिया चाहता था, इसलिये अब आप अभी मेरे विवाह के लिये जल्दी न करें, मैं कन्याभाव से आपके घर में बैठी हूं देखिये होता क्या है। इस प्रकार कन्या कनकरेखा ने जब परोपकारी नामक राजा से कहा तो वे कहने लगे कि पुत्रि ! यौवनावस्था प्राप्त होने पर चिरकाल तक कन्या को क्वारी न रखना चाहिये, क्योंकि परगुण से द्वेष करनेवाले दुर्जन लोग झूठही दूसरे को दोष लगाया करते हैं, विशेष कर उत्तम व्यक्ति के तो झूठ कलङ्कोत्पन्न करनेवाले बहुत लोग होते हैं, सुन, मैं तुझसे हरस्वामी की कथा कहता हूं—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगङ्गाजी के तट पर कुसुमपुर नामक नगर में तीर्थों का भ्रमण करनेवाला हरस्वामी नामक एक तपस्वी रहता था। वह ब्राह्मण श्रीपतितपाविनी गङ्गाजी के तीर पर कुटी बनाकर रहता और भिक्षा मांगकर अपना निर्वाह किया करता था किन्तु अपनी कठिन तपस्या के प्रभाव से वह लोगों की दृष्टि में बहुत आदर पा गया था। एक दिन जो वह भिक्षा मांगने के लिये बाहर निकला तो उसके गुण को न सहनेवाला एक खल बोल उठा कि क्या आप लोग इस कपटतपस्वी को जानते हैं? यह वही है जिसने नगर के सब बालकों को खा लिया है। यह सुन दूसरा खल कहने लगा 'हां भाई सत्य है मैंने भी लोगों को ऐसाही कहते सुना है। तीसरा भी उस बात को समर्थन कर कहने लगा ठीक है! ठीक है!"। "खलवादन ते होत दृढ़ सज्जनजन अपवाद"। योंही यह बात दो कान से सौ कान तक पहुँची और सारे नगर में इसका हुल्लड़ मच गया। पुरवासियों ने भी इस डर के मारे कि कहीं हरस्वामी हमारे बालकों को पकड़कर न खा जाय अपने अपने बच्चों का घर से बाहर निकलना रोक दिया। तब तो वहां के सब ब्राह्मणों ने अपनी अपनी सन्तति के नाश-भय से मिलकर यह विचार किया कि ऐसे आदमी को नगर से निकलवा देना चाहिये। कहीं क्रुद्ध होकर हमही को न खा जाय इस भय से कोई उसके साम्हने न जाता था सो लोगों ने सलाह कर उसके पास दूतों को भेजा और वे लोग भी वहां जा दूरही से उससे कहने लगे कि इस नगर के निवासी लोगों ने हमारे द्वारा यह कहलाया है कि आप इस पुर को छोड़कर और कहीं चले जावें। उसने आश्चर्य से पूछा कि 'भई लोगों ने मेरे लिये ऐसी आज्ञा क्यों दी है?' उन्होंने कहा 'इस कारण कि आप नगर के बालकों को देखतेही खा जाते हैं, यह सुन हरस्वामी विश्वास दिलाने के लिये स्वयं उन लोगों के पास चला परन्तु उसे देखतेही वे लोग भय से भागकर अपने अपने कोठों पर जा चढ़े। 'ठगे गये जनवाद तें तिनहिँ न होत विचार'। तब तो नीचे खड़े होकर हरस्वामी ने एक एक का नाम लेकर पुकारना आरम्भ किया और वे लोगभी किसी किसी प्रकार कोठेही पर से बात करने में सम्मत हुये। हरस्वामी ने कहा कि "हे ब्राह्मणों! यह आप लोगों को आज कैसा भ्रम हो गया है आप लोग स्वयं क्यों नहीं देखते कि आप लोगों के कितने बालक थे और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मैंने कौन तथा किसका बालक खाया है ? तनिक तो विचार कर देखिये"। यह सुन सब विप्र लोग आपस में विचारने लगे देखते हैं, तो सभी के बालक जीते हैं कोई भी नहीं घटता। फिर कुछ लोग नगर में इस बात का पता लगाने के लिये भेजे गये कि हरस्वामी ने किसके किसके बालक को खाया है, जब कोई भी ऐसा न मिला, तो वे लोग लौट आये और ब्राह्मण तथा बनिये सब लोग कहने लगे कि भाई हमलोगों ने भ्रम में पड़ कर नाहकही इस विचारे साधु ब्राह्मण को दोष लगाया, देखो सभी के बालक तो जीते हैं तो फिर इसने किसके बालक को खाया ? इस प्रकार जब सब लोगों ने कहा तो हरस्वामी अपना मिथ्या कलङ्क मिटा निज कुटी को लौट आया, फिर उसने दुर्जनों के उठाये हुये इस मिथ्यापवाद से विरक्त हो उस देश को परित्याग करने का विचार किया क्योंकि जहां के लोग ऐसे अविवेकी हैं वहां बुद्धिमान् क्योंकर ठहर सकता है; किन्तु जब नगर निवासी ब्राह्मण और बनियों ने उसके चरणों पर गिरकर अपना भ्रम-जनित अपराध क्षमा कराया और बहुत समझाया तो वह सन्तुष्ट हो वहां बसने में सम्मत हुआ।

इस प्रकार, सज्जनों के उत्तम चरित्रों को देख द्वेष खानेवाले दुर्ज्जन लोग प्रायः उन्हें अनेक मिथ्या कलङ्क लगाते हैं और यदि कहीं दुर्भाग्यवश तनिक भी उन्हें अवकाश मिल गया तब तो वे उस धधकती हुई आग में तेल छोड़ छोड़ कर बड़ेही प्रसन्न होते हैं। इस कारण हे पुत्रि ! यदि तू मेरे हृदय से इस कांटे को दूर किया चाहती है तो इस खिलती हुई युवावस्था में अपने को प्रसन्न करने के लिये चिरकाल तक विना विवाह किये मत रह, क्योंकि ऐसी अवस्था में दुर्जनों को मिथ्या कलङ्क लगामा बहुत सहज होता है।

इस प्रकार, जब राजा परोपकारी पिता ने निज पुत्री कनकरेखा को समझाया तो वह दृढ़ संकल्प कर उनसे कहने लगी कि हे तात ! यदि ऐसाही है तो आप किसी ऐसे ब्राह्मण वा क्षत्री को ढुंढ़वाइये जिसने सचमुच कनकपुरी देखी हो और उसी के साथ मेरा विवाह कर दीजिये क्योंकि मैं ऐसाही बचन दे चुकी हूं। इतना सुन और यह विचार कि यह कन्या अपने पूर्वजन्म की बात स्मरण कर दृढ़ संकल्प हो रही है और उसके विवाह का कोई दूसरा उपाय न देख

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजा ने नवागन्तुक व्यक्ति पाने के अभिप्राय से यह आज्ञा प्रचार कर दी कि आज से नित्य नगर में यही ढिंढोरा पीटा जाय कि—

छत्री हो वा विप्रसुत सुनौ हमारी बात ।
आयसु राजा दीन्ह जस सबै सुनाये जात ॥
कनकपुरी देखी जिनै सो आवहि तिहि पाहिँ ।
यौवराज्य कन्यासहित राजा दैहै ताहिँ ॥

इस प्रकार नित्य नगर में ढिंढोरा पीटता था पर एक भी व्यक्ति ऐसा न मिला जो कहता कि मैंने कनकपुरी देखी है ।

दूसरा तरङ्ग ।

इधर वह शक्तिदेव नामक ब्राह्मणपुत्र राजकन्या से अपमानित हो दुःखित हृदय से मनमें विचारने लगा कि आज मैंने नाहकही कनकपुरी देखने की झूठी बात कह इतना अपमान भी पाया और राजकुमारी भी प्राप्त न हुई; सो अब मैं उसकी खोजमें सारी पृथिवी छानता फिरूंगा, या तो उस नगरी को ढूंढ़ही निकालूंगा या उसीकी खोज में अपने प्राण को गँवा दूँगा; क्योंकि यदि उस नगरी को देख और लौटकर मैंने प्रतिज्ञानुसार राजकुमारी से विवाह न किया तो मेरे जीने को धिक्कार है । यों प्रतिज्ञा कर वह विप्रसुत वर्धमान नगर से निकल सीधे दक्षिण की ओर चला । चलते चलते वह विन्ध्याचल के जङ्गल में पैठा जो उसकी कठिन इच्छा की नाईं गहन था । वह बन, मारुत से कम्पायमान वृक्षों के कोमल पत्तों से मानो उसे पङ्खा करता था जिसमें वह, जो सूर्य्य भगवान् की किरनों से उत्तप्त हो रहा था, शीतल होवे । सिंहों से मारे जाने पर जो पशुओं की घोर चिल्लाहट होती थी तो जान पड़ता था कि अनेक चोर और डाकुओं के उपद्रव से दुःखित हो रात दिन वह बन चिल्लाया करता है । सूर्य्यभगवान् की जो उग्र किरणें महामरु में पड़कर उच्छलित होती थीं तो जान पड़ता था कि वह बन सूर्य्य के तेज को भी दबाने की इच्छा कर रहा है । उस जङ्गल में जल का नाम भी न दीख पड़ता था और आपत्ति तो वहां पद पद पर सुलभ थी, मार्ग की यह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दशा थी कि कितना भी चलो पर समाप्ति का नाम भी न होता था, ज्यों ज्यों चलो त्यों त्यों लम्बाही होता जाता था । बहुत दिनों के उपरान्त चलते चलते, उसे एकान्त में एक बहुत बड़ा और सुन्दर सरोवर दिखाई पड़ा जिसका जल शीतल और स्वच्छ था । वह जलाशय सबही सरोवरों का मानो राजा था क्योंकि कमल तो उसके ऊँचे छत्र और तटवर्ती हंस उसके खेत चमर जान पड़ते थे। वह सरोवर में स्नान करके ज्योंही बाहर निकला तो देखता क्या है कि तलाव के उत्तर कोने पर मुनियों के रहने योग्य एक स्वच्छ स्थान है जिसके समीपही फलदार वृक्षों की घनी छाया है, और पासही पीपल वृक्ष के नीचे एक अति वृद्ध मुनि बैठे हैं, पीछे विदित हुआ कि नाम उनका सूर्य्यतपा है, अनेक तपस्वियों की भीड़ उनके आसपास एकत्र है, गले में जो रुद्राक्ष की माला पड़ी है उसकी सब गांठे मानो यह सूचित करती हैं कि इतने सौ वर्ष की इनकी उम्र है। बाल पकने को कौन कहे कान भी धौल हो गये थे जिन पर वही रुद्राक्ष की माला लटक रही थी। इसने पहुँचतेही मुनिजी को प्रणाम किया और उन्होंने भी अतिथिसत्कारोचित स्वागत किया। फिर ऋषिजी ने कुछ स्वादिष्ट फलादि देकर पूछा कि तुम कौन हो ? कहां से आते हो और कहां जाने का विचार है ? उसने कहा, हे भगवान् ! इस समय तो मैं वर्धमान नामक नगर से चला आता हूं और किसी प्रतिज्ञा के कारण कनकपुरी को जाना मैंने ठाना है, नहीं जानता कि वह किधर है सो हे कृपानाथ! यदि आप उसे जानते हों तो दया कर मुझे बता दीजिये। यह सुन सूर्य्यतपा मुनि ने उत्तर दिया कि हे पुत्र ! इस तपोवन में मुझे आठ सौ वर्ष रहते हो गये पर कभी भी मैंने उस नगरी का नाम नहीं सुना। यह सुन शक्तिदेव का जी टूट गया और तब वह कहने लगा कि यदि ऐसा है तो नाहक मैं पृथ्वी पर क्यों घूमता फिरूं अब मैं यहीं पर प्राणपरित्याग करूँगा । जब महात्मा जी ने क्रमशः उसका सब वृत्तान्त समझलिया तो यों कहने लगे कि यदि तुझे ऐसाही निश्चय है तो जैसा मैं कहता हूं वैसा कर। यहां से तीन योजन पर काम्पिल्य नामक एक देश है उसमें उत्तर नामक एक पर्वत है जिस पर एक आश्रम बना है। वहां मेरे बड़े भाई दीर्घतपा नामक रहते हैं, तुम उनके पास चले जाओ, वे मुझसे बड़े हैं कदाचित् उन्हें उस पुरी का हाल विदित हो । यह सुन कुछ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आज्ञा पा बहुत अच्छा कह रात को तो वह वहीं टिक रहा और दूसरे दिन भोर होने के पहिलेही मुनिजी को प्रणाम कर चला। अनेक कष्टों को झेलता और मार्ग के दुःख को उठाता वह किसी किसी प्रकार काम्पिल्य देश में जा पहुँचा और उत्तर नामक पर्वत पर चढ़ गया। वहां उसने देखा कि अत्यन्त वृद्ध दीर्घतपा नामक ऋषि बैठे हैं। इसने समीप जाकर प्रणाम किया और उन्होंने भी इसका आतिथ्यसत्कार किया। बातचीत होने पर इसने कहा कि हे देव! राजकुमारी कनकरेखा से कनकपुरी का नाम सुनकर उसे देखने की इच्छा से मैं चला आता हूं पर यह नहीं जानता कि वह नगरी किधर है। राजसुता को पाने के लिये मुझे वहां जाना परम आवश्यक है, मुझे आपके छोटे भाई सूर्य्यतपाऋषि ने आपके समीप भेजा है कि कदाचित् उस पुरी की थाह आपसे लगे। यह सुन दीर्घतपा ने शक्तिदेव से कहा कि हे पुत्र! मेरी इतनी उम्र हुई पर आजही मैंने उस पुरी का नाम सुना है। अनेक देशदेशान्तर से हज़ारों लोग मेरे पास आते हैं परन्तु कभी मैंने उस पुरी का नाम भी न सुना देखने को कौन कहै। किन्तु मुझे ऐसा विश्वास है कि वह पुरी किसी दूरदेशस्थ अन्य द्वीप में होगी, सो मैं तुम्हें एक उपाय बतलाता हूं। समुद्र के बीच में उत्स्थल नामक एक टापू है वहां अत्यन्त धनी सत्यव्रत नामक निषादों का राजा रहता है। वह प्रायः इधर उधर अनेक द्वीपों में जाया करता है सम्भव है कि उसने उस नगरी को देखा या सुना हो। सो तुम यहां से चलकर समुद्रतटवर्ती विटङ्कपुर नामक नगर को जाओ वहां किसी बनिये के साथ समुद्रयान (जहाज) पर चढ़ उस टापू में जाओ जहां वह निषादराज रहता है तो कदाचित् तुम्हारा अभिप्राय सिद्ध हो। तपस्वी दीर्घतपा से ऐसा सुन, बहुत अच्छा कह, उन्हें प्रणाम कर, शक्तिदेव ने आगे का रास्ता लिया। अनेक देशों को लांघता और अनेक कष्टों को झेलता वह चलते चलते समुद्रतटवर्ती विटङ्कपुर को जा पहुँचा। पता लगाने से विदित हुआ कि समुद्रदत्त नामक एक बनिया उस उत्स्थल टापू को जानेवाला है, सो शक्तिदेव ने जाकर उससे जान पहचान की। समय पर उसके जलयान (जहाज) पर चढ़ उसकी कृपा से खाने पीने का पूरा सामान साथ ले वह समुद्रयात्रा को चला। पहुँचने में थोड़ी दूर रह गया था कि इतने में गरजता हुआ राक्षसरूपी मेघ अचानचक आ गया, विद्युत् जिसकी लपलपाती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हुई जिह्वा जान पड़ती थी। प्रचण्ड पवन भी भाग्य की नाईं हलकों को ऊँचे चढ़ाता और भारियों को नीचे पटकता बड़े वेग से बहने लगा। बड़ी बड़ी लहरें वायु से प्रताड़ित होकर उठने लगीं मानो पर्वत लोग अपने आश्रयस्थान (समुद्र) पर आक्रमण देख परदार हो क्रोध से उड़ने लगे। वह जहाज भी क्षण भर में ऊपर आकाश को जाता और क्षणही भर में नीचे पाताल को पहुँचता था मानो यह सूचित करता था कि योंही धनी लोगों की कभी उन्नति और कभी अवनति होती है। दूसरेही क्षण में वह जलयान, व्यापारियों की चिल्लाहट के साथहीसाथ मानो भारी बोझ के कारण बीच से फट गया। जहाज का फटना था कि उसका स्वामी समुद्रजल में जा पड़ा, कई गोते खाने के उपरान्त कोई तख़्ता जो उसके हाथ लगा तो वह उसके सहारे से बहता हुआ एक दूसरे जहाज़ पर जा लगा। किन्तु शक्तिदेव को गिरतेही एक भारी मगरमच्छ मुंह खोल यों बेलाग लील गया कि जिससे उसके शरीर का कोई अङ्ग भङ्ग न हुआ। होनहार की बात कि वह मगरमच्छ तैरता तैरता उत्स्थल द्वीप के पास जा निकला। वहां मछुओं के राजा सत्यव्रत के कुछ नौकर लोग मछली पकड़ रहे थे, अचानचक यह मगरमच्छ भी कहीं उनके जाल में जा फँसा। इतना बड़ा मगरमच्छ देख उन्हें बड़ा कौतुक हुआ सो वे धीवर लोग उसे धरकर अपने स्वामी सत्यव्रत के पास ले आये उसने जो इतना बड़ा मच्छ देखा तो कौतुकवश उन्हीं सेवकोंद्वारा उसे चिरवाया। मच्छ का पेट फटतेही, खड़बड़ा कर, शक्तिदेव जो अब लों जीता था उस अन्धकारमय कोठरी से बाहर निकल आया। शक्तिदेव ने उस कन्दरारूपी गर्भ से निकलतेही सत्यव्रत को आशीर्बाद दिया, यह देख उस धीवरेश ने आश्चर्य से पूछा कि हे युवक! आप कौन हैं? और इस मच्छ से आपका क्या सम्बन्ध है? और क्योंकर तथा क्यों आप इसके पेट में शयन कर रहे थे? यह वृत्तान्त बड़ा कौतुकमय है सो आप मुझे सब पूरा पूरा हाल सुनाइये। यह सुन शक्तिदेव ने उस धीवरेन्द्र से कहा कि, "मैं ब्राह्मण हूं, नाम मेरा शक्तिदेव है; कनकपुरी के देखने का विचार मनमें ठान कर मैं वर्धमान नामक नगर से चला, वह नगरी कैसी और किधर है सो मैं नहीं जानता। अतएव चिरकाल तक पृथ्वी पर इधर उधर मारा मारा फिरता रहा, तब दीर्घतपा ऋषि के वाक्य से यह जाना कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसका होना कहीं किसी टापू में सम्भव है, मैं उनके बताने से, उत्स्थलद्वीप-निवासी धीवरेन्द्र सत्यव्रत से मिलने को चला, मार्ग में आंधी के कारण वह जहाज जिस पर मैं यात्रा कर रहा था फट गया सो मैं समुद्र में जा पड़ा, गिरतेही मुझे यह मगरमच्छ लील गया अब इसके पेट से मैं आपकी कृपा के कारण जीता जागता निकल आया, सो मैं आपका अत्यन्त अनुगृहीत हूं।" इतना सुन उस धीवरराट् ने कहा कि सत्यव्रत तो मैंही हूं और यह टापू वही उत्स्थल नामक है जहां आप जाया चाहते थे, यद्यपि मैंने अनेक द्वीपों को देखा है किन्तु कनकपुरी के देखने का अवसर आज तक न पड़ा, हां इतना सुनता हूं कि वह कहीं किसी बड़े दूरवर्ती टापू में है। इतना कह जब उसने देखा कि शक्तिदेव ने सुनतेही गर्दन झुका दी, तो अभ्यागत की प्रीति के कारण फिर कहने लगा कि हे ब्रह्मन् ! आप ऐसे दुखी मत होइये आज की रात तो आप यहीं बसिये कल प्रातःकाल आपसे मिलकर मैं कोई न कोई उपाय आपकी इष्टसिद्धि का करूंगा । इस प्रकार शक्तिदेव को सन्तोष दे धीवरेन्द्र ने उसे, एक धर्म्मशाला में जहां ब्राह्मणों के टिकने का सब सुभीता था, भेज दिया । वहां विष्णुदत्त नामक एक ब्राह्मण से उससे भेंट हुई जिसने शक्तिदेव के खाने पीने का सब सामान कर दिया, फिर दोनों जने बैठकर आपस में बड़े प्रेम से बातें करने लगे। प्रसङ्गवश पूछे जाने पर शक्तिदेव ने अपना कुल, देश और यात्रा का सारा वृत्तान्त विष्णुदत्त से कह सुनाया। सुनतेही विष्णुदत्त ने उसे गले से लगा लिया और मारे हर्ष के उसके आंखों में प्रेमाश्रु भर गये, फिर गद्गदकण्ठ से कहने लगा कि, "आहा ! तब तो तुम मेरे मामा के पुत्र हो, हम और तुम दोनों एकही देश के रहनेवाले हैं मैं अपनी छोटीही अवस्था में घर छोड़कर यहां चला आया था, सो तुम यहीं ठहर जाओ; यहां अनेक देश के वणिक् और मांझी आया करते हैं उनसे तुम्हारा अभिप्राय सिद्ध हो जायगा। इस प्रकार विष्णुदत्त ने अपना परिचय देकर यथासम्भव शक्तिदेव के सुभीते का सब सामान कर दिया। शक्तिदेव भी अपने मातुलपुत्र को पा कर हर्ष के मारे मार्ग का सब परिश्रम भूल गया, ठीकही है **"बन्धुमिलन परदेश में सुखकर होत महान। पथिक श्रान्त कहँ देत मुद मरुजल सुधासमान"** ॥ तब उसके मनमें यह आशा हुयी कि अब मेरी इच्छा शीघ्र पूरी होगी, क्योंकि किसी

काम में जब कल्याण होने लगता है तो सूचित होता है कि अब वह कार्य्य पूरा होगा। उस रात को उसकी पलक तनिक भी न झपकी, वह मनही मन अनेक विचार बांध रहा था, विष्णुदत्त भी उसके समीपही बैठा था सो उसने शक्तिदेव का उत्साह बढ़ाने के लिये एक कथा को कहना आरम्भ किया—

विष्णुदत्त ने कहा कि, प्राचीन समय में गोविन्दस्वामी नामक एक ब्राह्मण श्रीयमुनाजी के तट पर रहता था, राजा से जो भूमि उसने पाई थी उसीसे उसकी जीविका का निर्वाह होता था। उस सुयोग्य, ब्राह्मण के दो पुत्र उसी के समान गुणवान् क्रमसे उत्पन्न हुये, बड़े का नाम अशोकदत्त और छोटे का नाम विजयदत्त था। एक समय उस देश में बड़ा भयानक दुर्भिक्ष पड़ा सो गोविन्दस्वामी ने अपनी भार्य्या से कहा कि हे प्रिये! इस अकाल ने तो सारा देश नाश कर दिया अब मुझसे अपने मित्र तथा बान्धवों की दुर्गति नहीं देखीजाती। कौन किसको देनेवाला है? सो जो कुछ अन्न हमारे पास है उसे अपने मित्र और बन्धुओं को देकर, इस देश को परित्याग कर, चलो हमलोग कहीं विदेश को निकल चलें। इच्छा होती है कि हमलोग सकुटुम्ब वाराणसीपुरी में चलकर बसें। उसकी भार्य्या ने भी जब इस बात को स्वीकार किया तो उसने अपना सारा अन्न इष्ट मित्रों में बांट दिया और निज पत्नी, सुत तथा सेवकों के साथ विदेश के लिये निकल पड़ा, ठीकही है "साधु न सकहिँ बन्धुदुःख देखी"। चलते चलते मार्ग में उसने देखा कि एक महाव्रती महात्मा कपाल लिये, जटा बढ़ाये, शरीर में भस्म रमाये साक्षात् चन्द्रशेखर शङ्करभगवान् की नाईं बैठे हैं। वह उनके समीप जा प्रणाम कर बैठ गया और निज पुत्रों के स्नेह के कारण उसने महात्माजी से पूछा कि इन पुत्रों का भविष्य शुभाशुभ कैसा है। योगीजी ने कहा कि हे ब्रह्मन्! तेरे दोनों पुत्रों का भविष्य कल्याणकारक है किन्तु इस छोटे पुत्र विजयदत्त से तेरा वियोग हो जायगा, फिर इस अशोकदत्त के प्रभाव से तुम लोगों का पुनः समागम होगा। ज्ञानी महात्मा का ऐसा भाषण सुन, गोविन्दस्वामी उन्हें प्रणाम कर, सुख दुःख और आश्चर्य्य के साथ आगे बढ़ा। वाराणसीपुरी में पहुँच, नगर के बाहर चण्डिकादेवी के मन्दिर में पूजा इत्यादि करते कराते वह दिन तो उसे वहीं बीता। सन्ध्या हो जाने से वहीं एक वृक्ष के नीचे, सकुटुम्ब, वह अन्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देश से आये हुये यात्रियों के साथ रात को पड़ रहा । पत्तों को बिछाकर जैसे पथिकों की रीति है, श्रान्त होने के कारण सभी घोर निद्रा में सोये थे किन्तु विजयदत्त जागताही था सो उसे बड़े वेग से शीतज्वर हो आया, और मानो बन्धुवियोगभय से उसके रोंगटे ज्वर से खड़े हो गये। जब उसे अधिक शीत जान पड़ा तो उसने पिता को जगाकर कहा कि हे तात! मुझे तो ज्वर बड़े वेग से चढ़ा है और जाड़ा लगता है, आप कहीं से लकड़ी वा खर पत्ता लाकर आग जलाइये तो मेरे प्राण बचें नहीं तो यह रात न बीतेगी। यह सुन गोविन्दस्वामी, पुत्र की वेदना से व्याकुल हो कहने लगा कि हे पुत्र! इस समय रात को आग कहां मिलेगी? उसने कहा हे तात! वह देखो थोड़ी दूर पर खूब आग बल रही है, क्यों न वहीं चलकर मैं उसे ताप शरीर को गरमा लूं, किन्तु मेरे पैर ज्वर के कारण सीधे नहीं पड़ते आप मेरा हाथ पकड़ मुझे वहां ले चलिये। पुत्र की बात सुन गोविन्दस्वामी ने कहा कि हे वत्स! वह श्मशान है और चिता जल रही है वहां पिशाचादि का भय रहता है, तुम बालक हो रात के समय वहां चलना उचित नहीं है। वीर विजयदत्त ने स्नेहमय पिता का बचन सुन हँसकर दृढ़ता से कहा कि हे तात! ये तुच्छ भूत पिशाच मेरा क्या कर सकते हैं! क्या मैं अल्पसत्त्व हूं आप मुझे निःशङ्क वहां ले चलिये। इस प्रकार जब आग्रह से उस बालक ने बार बार अपने पिता से कहा तो वह उसका हाथ पकड़ श्मशान पर उसे ले गया और वह आग तापते तापते चिता के अत्यन्त समीप आ गया। वह चिता साक्षात् राक्षसी सी प्रतीत होती थी, जलती हुई अनलज्वाला से जो धुआं चारो ओर निकलता था वही मानो उसके बिथुरे हुये केश थे और मनुष्य का मांस तो वह साक्षात् खाही रही थी। कुछ देर अपने पिता को समाश्वासन दे उसने पूछा कि, हे तात! चिता के अन्दर यह गोल गोल क्या दिखाई देता है? पिता ने जो पासही बैठा था उत्तर दिया कि, हे पुत्र! यह मनुष्य का कपाल चिता में जल रहा है। उस बालक ने एक जलती हुई लकड़ी वहीं से उठाकर उस कपाल को जो बलपूर्वक खींचा तो वह अचानचक फट गया और अन्दर की वसा अर्थात् चरबी जो छटकी तो उसके मुंह में पड़ी, मानो श्मशान की अग्नि में राक्षसों की सिद्धि उसे अर्पण कर दी। चरबी का स्वाद मुंह में लगतेही वह बालक स्वयं राक्षस हो गया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सिर के बाल सब खड़े हो गये, जलती हुई अग्नि में से एक खड्ग उसने खींच लिया, और उसके दांत बड़े बड़े हो बाहर निकल आये। उसने चिता में से उस कपाल को खींचकर सब चरबी पी ली और फिर हड्डी पर जो ज्वाला बल रही थी उसे अपनी लपलपाती हुई चञ्चल जीभ से चाटने लगा। फिर कपाल को फेंक खड्ग उठा अपने पिता गोविन्दस्वामी को मारने के लिये झपटा। इतने में श्मशान से यह शब्द उठा कि "हे हे कपालस्फोटक देव! देखो निज पिता को मारना उचित नहीं है, इधर आओ"। यह सुन कपालस्फोटक नाम पा वह बालक अपने पिता को छोड़, राचस बन, वहीं लोप हो गया। तब तो उसका पिता गोविन्द-स्वामी 'हा पुत्र! हा पुत्र! हा विजयदत्त!' कह रोता हुआ निज स्थान पर श्री-दुर्गामन्दिर के सन्मुख लौट आया और निज पत्नी तथा बड़े पुत्र अशोकदत्त को सब हाल कह सुनाया। उन लोगों पर जो विना मेघ का ऐसा वज्र अचानक आ गिरा उसके आघात से वे सब अत्यन्त दुःखित हुये। श्रीदेवीजी के दर्शनों को जो लोग वाराणसी नगर से आये थे वे इन सबों का दुःख देख अत्यन्त खिन्न हुये। उनमें एक बड़ा धनी बनिया समुद्रदत्त नामक था, जो गोविन्दस्वामी की वैसी दशा देख उसके पास आ धीरज दे कहने लगा कि हे ब्रह्मन्! अब तो जो होना था सो हो गया, आप लोग मेरे साथ मेरे घर पर चलिये। यों समुझा बुझा वह गोविन्दस्वामी को सब लोगों के साथ अपने घर पर ला, स्नान भोजन करा, सेवा शुश्रूषा करने लगा। बड़ों का यह सहज स्वभाव है कि आपद्ग्रस्त को देखतेही उनके हृदय में दया उत्पन्न हो जाती है। गोविन्दस्वामी को उन तपस्वी महात्मा का कहना स्मरण आया कि सुतवियोग हो जाने पर फिर भी उससे भेंट होगी सो वह इसीसे धीरज बांध उस समय की प्रतीचा करता हुआ उसी धनी बनिये के घर पर उसकी इच्छानुसार रहने लगा। ज्येष्ठ पुत्र अशोकदत्त कुछ दिनों में पढ़ लिख कर सयाना हुआ और उसने मल्लविद्या में अच्छा अभ्यास किया। धीरे धीरे उसकी ख्याति इस विषय में बहुत बढ़ गई, पृथ्वी में कोई भी ऐसा मल्ल (पहलवान) न था जो उसे जीत सकता। एक समय किसी देवयात्रा के मेले में अनेक मल्ल लोगों की भीड़ हुई जिसमें दचिण देश का एक अत्यन्त प्रसिद्ध पहलवान भी आया था। वाराणसी के राजा प्रतापमुकुट के जितने मल्ल थे सभों को उसने पराजित

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर दिया तब तो राजा ने उस वणिक् के घर से अशोकदत्त को बुला उसकी कुश्ती उस दक्षिणी मल्ल के साथ नियत कर दी। अब ठीक ज्योंही उस मल्ल ने इसकी भुजा पकड़ी कि बात की बात में अशोकदत्त ने उसे चित्त कर दिया। अखाड़े में जितने पहलवान बैठे थे वाह वाह! कह उठे मानो स्वयं मल्लभूमि ने सन्तुष्ट हो अशोकदत्त के बल की प्रशंसा की। वाराणसी के राजा प्रतापमुकुट ने प्रसन्न हो अशोकदत्त का घर रत्नों से पूरित कर दिया और क्योंकि उसका विक्रम अपने आखोंही से देख चुके थे इसलिये उसे अपना पार्श्ववर्ती भी बना लिया। राजा का प्रियपात्र होने के कारण, अशोकदत्त थोड़ेही दिनों में सर्वसम्पत्तिवान् हो गया क्योंकि जो शूरविद्या में निपुण है उसके लिये तो राजा मानो कुबेर का भण्डारही है। एक समय की बात है कि राजा चतुर्दशी के दिन किसी दूरदेशस्थ प्रतिष्ठित मन्दिर में शिवपूजन के निमित्त नगर से बाहर गये। पूजा कर, श्मशान के समीप से लौटे आते थे कि रात के समय उन्होंने ये शब्द श्मशान की ओर से आते हुये सुने, 'हे प्रभो! दण्डाधिपति ने मुझसे द्वेष खाकर निरपराधही मुझे शूली की आज्ञा दे दी है, सो आज तीसरा दिन है कि मुझ पापी के प्राण नहीं निकलते, मुझे बड़ी प्यास लगी है कृपाकर तनिक पानी पिलवा दीजिये।' यह सुन राजा ने दया कर पार्श्ववर्ती अशोकदत्त को आज्ञा दी कि इसे थोड़ा जल भिजवा दो।

उसने कहा 'हे देव! रात के समय किसकी हिम्मत है जो वहां जाय, सो मैंही जाता हूं, इतना निवेदन कर अशोकदत्त जल लेकर स्वयं उधर को चला। राजा तो नगर को चले गये और वह वीर अकेलाही हाथ में जल लिये श्मशान में पैठा जहां ऐसा घोर अन्धकार था कि हाथ को हाथ न दिखाई पड़ता था। कहीं नर-मांस से सन्ध्यावलि दी गई थी जिसे सियारों ने इधर उधर छितरा दिया था, कहीं चिता की ज्योति से प्रकाश हो रहा था जिसमें वेताल लोग हाथों से ताल बजा बजाकर भयानक रीति से नाच रहे थे, बस जान पड़ता था कि वह श्मशान नहीं कालीरात्रि का निवासस्थान है। ऐसे भयानक श्मशान में पहुँच अशोकदत्त ने ऊँची टेर लगाई कि "किसने राजा से जल मांगा था, मैं ले आया हूं जो कोई हो बोले"। साथही एक ओर से उत्तर मिला कि "मैंने जल मांगा था इधर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लाओ"। शब्द की आहट पर चलकर वह एक बलती हुई चिता के समीप पहुँचा, उसके प्रकाश में देखता क्या है कि एक मनुष्य ऊँची शूली पर लटका हुआ है, नीचे एक परम सुन्दरी स्त्री जैसी कभी न देखी थी सब अलङ्कारों को पहिने दुःख के साथ रो रही है, यही जान पड़ता था कि कृष्णपक्ष में घटते घटते रजनीपति के अस्त हो जाने पर, उसकी प्रिया श्वेतपक्ष की रात्रि वहां चितारोहण के निमित्त आई हो। अशोकदत्त ने उसको देख पूछा कि हे मातः तुम कौन हो ? और क्यों ऐसे समय में इस भयानक स्थान में आकर रो रही हो, अपना दुःख मुझसे कहो मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। उसने कहा कि मैं अभागिनी इस व्यक्ति की भार्य्या हूं जो शूली पर खींचा गया है मैं इसके साथ चितारोहण करने के दृढ़ विचार से खड़ी हूं। थोड़ीही देर में इसके प्राण निकलनेवाले हैं क्योंकि आज तीसरा दिन है आज यह नहीं बचेगा। यह घड़ी घड़ी जल मांगता है, मैं इसके लिये पानी तो ले आई हूं किन्तु शूली इतनी ऊँची है कि मैं इसके मुंह तक नहीं पहुँच सकती। यह सुन उस वीर ने उत्तर दिया कि राजा की आज्ञा से मैं भी इसके लिये जल लाया हूं, सो तुम मेरे कन्धे पर पैर रख खड़ी हो इसके मुंह तक जल पहुँचा दो, कहा भी है कि आपत्ति के समय पर पुरुष के केवल स्पर्श मात्र से स्त्रियों को दूषण नहीं लगता। इतना सुन शूली के नीचे झुके हुये अशोकदत्त के कन्धे पर दोनों पैर रख, वह स्त्री हाथ में जलपात्र लेकर खड़ी हो गई। थोड़ी देर में यह देखता क्या है कि भूमि तथा उसकी पीठ पर रुधिर के विन्दु टपाटप टपक रहे हैं। उसने आश्चर्य्य से ऊपर सिर उठाकर जो देखा तो जान पड़ा कि वह स्त्री उस शूली पर चढ़े हुये मनुष्य का मांस छुरी से काट काट कर खा रही है।

जब उसे विदित हुआ कि यह तो कोई राक्षसी है तो उसने झट उसका एक पैर जिसमें वह नूपुर पहिरे हुई थी, धरा और क्रोध में आ नीचे खींच पृथ्वी पर पटकाही चाहता था कि वह फर्र से उसके हाथ से छूट आकाश में उड़कर लोप हो गई। जिस समय वह पैर छुड़ाने के उद्योग में थी उसी समय उसका एक मणिमय नूपुर अशोकदत्त के हाथ में रह गया। तब तो वह यह विचारने लगा कि यह अपने तईं दुर्जन की संगति की नाईं आदि में मधुर, वीच में कठिन और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अन्त में घोर भयानक प्रतीत कराती हुई कैसी लोप हो गई; फिर अपने हाथ में उस दिव्य नूपुर को देख, विस्मित, दु:खित और प्रसन्न हो उठा। इसके उपरान्त वह उस दिव्य नूपुर को हाथ में लिये हुआ श्मशान से निकल निज घर को चला और प्रात:काल स्नानेत्यादि से निश्चिन्त हो राजा के समीप जा पहुँचा।

राजा ने देखतेही पूछा कि क्या तुमने उस शूलीवाले को जल पिला दिया। उसने हां महाराज कहकर वह नूपुर उनके आगे रख दिया। जब राजा ने स्वयं पूछा कि यह कहां से पाया तो उसने रातवाला महाभयानक वृत्तान्त कह सुनाया। राजा, यद्यपि उसके गुणों पर पहिलेही से प्रसन्न थे परन्तु इस समय उसका ऐसा असाधारण साहस देख परम सन्तुष्ट हुये। फिर उस दिव्य नूपुर को ले जाके राजा ने निज रानी को दिखलाया और प्रसन्नता के साथ उसके मिलने का सब वृत्तान्त भी कह सुनाया। रानी, यह हाल सुन और उस दिव्य नूपुर को देख बहुत प्रसन्न हो, बार बार अशोकदत्त की प्रशंसा करने लगीं। फिर राजा ने कहा कि, हे देवि! यह वीर पुरुष जाति, विद्या, सत्यता और रूप में बड़ों से भी बड़ा है। मेरा ऐसा विचार है कि यदि अपनी सुन्दरी कन्या मदनलेखा का विवाह इसके साथ कर दिया जाय तो उहुतही उत्तम हो। वर में येही गुण देखने चाहिये, लक्ष्मी तो क्षणभङ्गिनी और चञ्चला है, इसलिये इसी वीर को कन्या देना मैंने विचारा है। निज पति की ऐसी बात सुन, रानी ने आदरपूर्वक उत्तर दिया कि हे नाथ! यह बहुतही उचित होगा क्योंकि यह वर हमारी कन्या के अनुरूपही है, एक बेर इस युवक को मदनलेखा ने वसन्तोत्सव के समय अपने उद्यान में टहलते देख पाया था तभी से उसकी भूख प्यास मानो जाती सी रही, न कुछ देखती है न सुनती है, चुपचाप शय्या पर पड़ी न जाने क्या क्या सोचा करती है। इसका हाल मुझे उसकी सखी से विदित हुआ, सो एक दिन रात के समय में इसी चिन्ता में सो गई, स्वप्न में देखती क्या हूं कि मानो कोई दिव्या स्त्री मुझे कह रही है कि हे पुत्रि! तू अपनी कन्या मदनलेखा का विवाह किसी दूसरे से मत करियो, क्योंकि वह पूर्वजन्म की अशोकदत्त की भार्य्या है। यह सुन जब मेरी निद्रा खुल गई तो मैंने स्वयं पुत्री के पास जा स्वप्न के विश्वास पर उसे सन्तोष दिया। अब आर्य्यपुत्र ने भी इस बात को स्वयं कहा तो बहुत अच्छा हुआ। लतारूपी मदन-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लेखा का सम्बन्ध अशोकदत्तरूपी वृक्ष से अवश्य कराइये। जब रानी ने भी अपनी सम्मति दी तो महाराज ने मदनलेखा का विवाह अशोकदत्त के साथ बड़े उत्साह पूर्वक कर दिया। राजेन्द्रपुत्री और विप्रेन्द्रपुत्र का संगम परस्पर शोभा का बढ़ाने वाला हुआ जैसे लक्ष्मी और विनय का सम्बन्ध होता है। एक समय रानी ने महाराज को वही अशोकदत्त का लाया हुआ मणिनूपुर दिखाकर कहा कि, हे नाथ! यह नूपुर अकेला नहीं अच्छा लगता, इसका जोड़ा दूसरा बनवा दीजिये। यह सुन महाराज ने दूसरेही दिन सुनारों को बुलाकर आज्ञा दी कि इस नूपुर का जोड़ा शीघ्र बनाकर प्रस्तुत करो। उन लोगों ने नूपुर को भली प्रकार देख कर निवेदन किया कि हे देव! यह मनुष्य के हाथ का काम नहीं है, यह नूपुर दैवी है इसका जोड़ा इस पृथ्वी में नहीं बन सकता। पहिले तो ऐसे रत्नही इस भूतल में न मिलेंगे दूसरे ऐसा शिल्प का काम बनानेवाला यहां कौन है इसलिये जहां से यह एक मिला है वहीं से इसका जोड़ा ढुंढ़वाइये। यह सुन राजा और रानी दोनों का जी टूट गया, किन्तु अशोकदत्त जो पासही बैठा था सहसा बोल उठा कि महाराज मैं इस नूपुर का जोड़ा वहीं से जहां से इसे लाया हूं खोज लाऊँगा। उसका ऐसा साहस देख और यह प्रतिज्ञा सुन महाराज ने स्नेह से बहुत निषेध किया किन्तु वह अपने दृढ़ निश्चय से न टला और उस नूपुर को महाराज से ले कृष्णचतुर्दशी की रात श्मशान की ओर चल पड़ा। श्मशान की यह दशा थी कि चारो ओर से चिता का धूम अन्धकार सा छाया था, वृक्षों की डालियों से अनेक चोर डांकू जिन्हें फांसी दी गई थी रस्सों से लटक रहे थे; जैसे वृक्षों की बहुतायत थी वैसेही राक्षसों का समूह भी वहां एकत्र हो रहा था। ऐसे महाभयानक श्मशान में पैठकर अशोकदत्त ने उस स्त्री को ढूंढ़ना आरम्भ किया जिससे एक बेर पहिले वहां भेंट हो चुकी थी परन्तु चारो ओर ढूंढ़ने पर भी वह कहीं न दिखाई दी। तब तो वह यह उपाय विचार कि कदाचित् वह नरमांस के लालच से कहीं दिखाई पड़े, कन्धे पर एक मुर्दे को उठा यों पुकारने लगा—"मैं मनुष्य का मांस बेचता हूं जिसे लेना हो मुझसे मोल ले"। इतनेही में एक स्त्री का शब्द एक ओर दूर से सुन पड़ा कि 'हे महा! सख नरमांस को लिये हुये मेरे साथ आओ'। शब्द की आहट पर वह वहां पहुँच उस स्त्री के साथ चला, थोड़ी दूर जाकर देखता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या है कि एक वृक्ष के नीचे एक परम सुन्दरी स्त्री दिव्य रत्नों के आभरण पहिरे ऊँचे सिंहासन पर बैठी है और उसके आसपास अनेक सुन्दरी सहेलियां हाथ बांधे खड़ी हैं। उसे कदापि ऐसी आशा न थी कि उस भयानक स्थान में ऐसी परम सुन्दरी रमणी दीख पड़ेगी क्योंकि कौन व्यक्ति मरुस्थल में कमल पाने की आशा कर सकता है। जब उस स्त्री ने इसे ले जाकर उस दिव्या रमणी के सम्मुख खड़ा कर दिया तो इसने कहा कि मैं नरमांस का बेचनेवाला हूं आपको लेना हो तो लीजिये! यह सुन उस दिव्या स्त्री ने पूछा कि, हे महासत्व! कहो नरमांस किस भाव से बेचते हो? तब उस वीर व्यक्ति ने अपनी मूठी से उस अकेले मणिनूपुर को निकालकर दिखाया और कन्धे पर रखे मुर्दे की ओर अँगुली उठाकर कहा कि जो कोई इस मणिनूपुर का जोड़ा देगा उसे मैं यह मांस दूंगा यदि आपके पास हो तो देकर इसे ले लीजिये। यह सुन उस सुन्दरी ने कहा कि हां इसका जोड़ा नूपुर मेरे पास है और यह मेराही नूपुर है जिसे तुम मेरे पैर से हर ले गये थे। मैं वही हूं जिसको तुमने उस श्मशानमें शूलीवाले के पास देखा था, इस समय मेरा दूसरा रूप है इसी कारण तुम मुझे पहिचान न सके। तो अब मांस का कुछ प्रयोजन नहीं है, यदि तुम मेरा एक कहना करो तो इसका जोड़ा नूपुर मैं तुम्हें दे दूं। यह सुन उस वीर पुरुष ने इस बात को स्वीकार कर कहा कि, 'बहुत अच्छा, आप जो कहेंगी मैं इसी क्षण करूँगा'। तब उस स्त्री ने अपने मन की बात यों कही कि हे वीर! हिमालय के शिखर पर त्रिघण्ट नामक एक पुर है, वहां लम्बजिह्व नामक राक्षसों के राजा रहते थे। मैं उनकी भार्य्या हूं, मेरा नाम विद्युच्छिखा है, मैं अपनी इच्छानुसार चाहे जैसा रूप धारण कर सकती हूं। जब मुझे एक कन्या उत्पन्न हो चुकी तो एक समय राजा कपालस्फोटक से उनसे घोर युद्ध हुआ और उसी रण में मेरे पति मारे गये। राजा ने मुझ पर दया कर मेरा नगर मेरेही अधिकार में रहने दिया जिसके कारण मैं अब लों अपनी कन्या के साथ सुखपूर्वक वहां रहती हूं। अब वह युवती हुई है, मेरे मनमें इस बात की चिन्ता लगी कि कोई सुयोग्य वीर पुरुष मिलें तो उसका विवाह किया जाय। उस दिन कृष्णचतुर्दशी की रात को मार्ग में राजा के साथ जाते तुमको देखकर मैंने यहां बैठे बैठे यह विचारा कि यह सुन्दर वीर पुरुष मेरी कन्या के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

योग्य जान पड़ता है इसकी प्राप्ति के लिये कोई उपाय करना चाहिये। ऐसा विचार, मैंने झूठेही उस शूलीवाले को सी बोली बना, बहाने से राजा से जल मांग तुम्हें श्मशान में बुलवा मँगाया। फिर मैंने एक सुन्दरी स्त्री का रूप बना जो कुछ झूठे प्रपञ्च रचे वह तुम्हें मालूमही है, तदुपरान्त मैं आकाश में उड़ चली, मुझे खींचने का उद्योग जब तुमने बार बार किया तो तुम्हारे हाथ में अपने एक पैर का नूपुर छोड़ मैं निकल भागी। फिर जब तुम उसका जोड़ा नूपुर ढूंढ़ने निकले तो मैंने तुम्हें यहां बुलवा लिया, सो अब मेरा इतनाही निवेदन है कि जो तुम मेरी कन्या से विवाह कर लो तो मैं वह दूसरा नूपुर तुम्हें दे दूंगी। जब अशोकदत्त ने इस बात को स्वीकार किया तो वह राक्षसी अपने सिद्धिबल से उसको आकाशमार्ग से उड़ाती हुई अपनी नगरी में ले गई। वहां देखता क्या है कि हिमवान् पर्वत के शृङ्ग पर वह सोने का नगर ऐसा सुन्दर बसा है मानो सूर्य्य-भगवान् का विम्ब आकाश में चलते चलते थककर विश्राम करने के लिये, आकर ठहर गया हो। वहां पहुँच, राक्षसराज की कन्या विद्युत्प्रभा से उसने विवाह क्या किया मानो निज साहस की महासिद्धिरूपी प्रतिमा को पाया। फिर अपने सास का अखिल वैभव पा अशोकदत्त कुछ दिनों तक निज प्यारी भार्य्या के साथ वहां सुखपूर्वक रहा। एक दिन उसने अपनी सास से कहा कि अब मुझे वह दूसरा नूपुर दीजिये, मैं वाराणसीपुरी को जाऊँगा क्योंकि मैं राजा के सन्मुख यह प्रतिज्ञा कर आया हूं कि मैं प्रथम नूपुर का जोड़ा अवश्य खोज कर लाऊँगा। यह सुन उसकी सास ने अपना वह दूसरा नूपुर उसे दे दिया और एक सोने का कमल भी उसको सौगात में अर्पण किया। उन दोनों वस्तुओं को लेकर और पुनः भेंट करने की प्रतिज्ञा कर अशोकदत्त नगर के बाहर हुआ और उसकी सास ने निज सिद्धि के प्रभाव से उसे पुनः लाकर उसी श्मशान में खड़ा कर दिया। वहां एक वृक्ष के नीचे खड़ी होकर उसने कहा कि 'हे पुत्र! मैं सदा कृष्णचतुर्दशी की रात को इस श्मशान पर आया करती हूं अतएव जब कभी उस रात्रि को तुम यहां आओगे तो इसी वटवृक्ष के नीचे मुझसे भेंट हुआ करेगी। इतना सुन उस निशाचरी से आज्ञा ले अशोकदत्त वहां से चलकर सीधे अपने पिता के घर पर पहुँचा। उसके माता पिता छोटे पुत्र के वियोग से तो पहिलेही दुःखी हो रहे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

थे अब इसके गुम हो जाने से उन्हें परम मनोव्यथा और अधीरता हुई थी। अचानचक जो यह आ पहुँचा तो इसे देख वे लोग आनन्द के मारे फूले न समाते थे, इतनेही में उसके श्वसुर राजा भी इस समाचार को पा वहीं आन पहुँचे। अशोकदत्त ने उन्हें देखतेही प्रणाम किया और वे भी उसे उठा हृदय से लगा, आशीर्वाद दे आनन्द से गद्गद हो गये। फिर अशोकदत्त ने मूर्तिमान् प्रमोद की नाईं महाराज के साथ राजमन्दिर में प्रवेश किया और उनके आगे उन दोनों नूपुरों को रख दिया जिनके झन्झन् रव से यह प्रतीत होता था कि मानो वे दोनों नुपुर उसके साहस और वीर्य्य की प्रशंसा करते थे। उस स्वर्णकमल को भी उसने महाराज को अर्पण किया जो राक्षसों की कोषलक्ष्मी के हाथ का मानो लीलाकमल था। महाराज और महाराणी ने जब पूछा कि यह तुमने कैसे पाया? तो वह सब हाल पूरा पूरा सुना गया जिसे सुन उन लोगों को बड़ा कौतूहल और आनन्द हुआ। महाराज ने बहुतही उचित कहा कि—"चित्तचमत्कृतकारि यश बिन साहस नहिँ होय। बिन पैठे यादःपतिहिँ मुक्ता लहै न कोय"॥ ऐसे साहसी और यशस्वी जामाता तथा दिव्य नूपुरों की उस जोड़ी को पाकर महाराज और महाराणी ने अपने को कृतकृत्य माना। राजभवन में बड़ा भारी उत्सव किया गया जहां बाजों के बजने से यही जान पड़ता था कि जड़ पदार्थ भी अशोकदत्त का गुणानुवाद कर रहे हैं। दूसरे दिन, महाराज ने उस सुवर्णकमल को एक चांदी के कलश पर रखकर अपने बनवाये हुये एक देवमन्दिर में चढ़ा दिया। श्वेत कलश और लाल कमल दोनों मिलकर ऐसी शोभा पा रहे थे जैसे राजा और अशोकदत्त के यश और प्रताप के मिलने से होती थी। उन दोनों की उत्तम शोभा देख महाराज बोल उठे कि आहा! इस ऊँचे कमल को रौप्यकलश पर रखने से ऐसा जान पड़ता है मानो श्वेत भस्म धारण किये हुये शम्भु भगवान् पिशङ्ग रङ्ग जटाजूट बांधे विराजमान् हों, यदि हमारे पास कोई दूसरा ऐसा सोने का कमल होता तो उसको दूसरे कलश पर रखकर हम इनके ऊपर चढ़ाते। राजा का बचन सुनतेही अशोकदत्त ने कहा कि हे देव! मैं आपके लिये ऐसा दूसरा कमल भी अवश्य ला दूंगा। यह सुन महाराज ने कहा "नहीं नहीं मुझे दूसरे कमल की कोई आवश्यकता नहीं है अब तुम इस विषय में साहस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मत करो"। अशोकदत्त ने उसी दम मनमें ठान लिया कि मैं इस कमल का जोड़ा अवश्य लाऊँगा, सो विचारते २ कृष्णचतुर्दशी भी आ पहुँची। उस दिन आकाशरूपी सरोवर के स्वर्णकमल सूर्य्यभगवान् मानो अशोकदत्त की उस इच्छा को जान भय के मारे जब अस्ताचल को चले गये, और जब रात्रिरूपी राक्षसी ने दीपावलीरूपी दन्तमाला से लाल बादलरूपी कच्चे मांस को निगल लिया तब अशोकदत्त सोती हुई राजपुत्री को भवन में छोड़, चुपके से निकल उसी भयानक श्मशान में जा पहुँचा। कुछ देर के उपरान्त उसकी वही राक्षसी सास वटवृक्ष के नीचे आई और अशोकदत्त को वहां देख अत्यन्त प्रसन्न हुई। उसी के साथ उड़ता हुआ वह पुनः हिमाचल पर्वतवाले घर पर गया जहां उसकी प्यारी भार्या विद्युत्प्रभा उसका मार्ग देख रही थी। कुछ दिनों तक वहां निज पत्नी के साथ रह, उसने एक दिन अपनी सास से कहा कि हे अम्ब! जैसे बने मुझे उस सोने के कमल का जोड़ा कहीं से ला दो। यह सुन उसने कहा कि हे पुत्र! मेरे पास तो दूसरा कमल नहीं है, हमारे प्रभु राजा कपालस्फोटक का एक सरोवर है, वहीं पर ऐसे हेमकमल उत्पन्न होते हैं, उन्होंने एक बेर प्रसन्न होकर मेरे पति को एक कमल दिया था। यह सुन उसने कहा कि अच्छा तो मुझे उसी सरोवर पर ले चलो मैं आपही वहां से एक कमल तोड़ लूंगा। सास ने कहा कि उस तालाव की रक्षा बड़े बड़े राक्षस चारो ओर से किया करते हैं, किसकी शक्ति है कि वहां के कमलों को कोई छू भी सके, तोड़ने की कौन कहे! यों कहकर उसकी सास ने बहुतेरा समझाया पर अशोकदत्त ने एक न सुनी। अन्त हार मान वह उसे अपने साथ ले उड़ी और वहां जा पहुँची, दूरही से अशोकदत्त ने देखा कि वह तलाव ऊँचे पर्वत की चोटी पर स्थित है। उसमें अनेक चमचमाते हुये हेमकमल लगे हुये हैं मानो सदा सूर्य्य के सन्मुख रहते रहते उनकी किरणों को पीकर वैसेही रङ्गदार हो गये हैं।।

सरोवर पर पहुँचकर ज्योंही उसने कमलों पर हाथ चलाया कि उसकी रक्षा करनेवाले घोर राक्षसों ने उसको ललकार कर रोका और सन्मुख आ खड़े हुये। अशोकदत्त ने खड्ग उठा अनेकों को काट डाला शेष जो बचे वे भागकर अपने स्वामी कपालस्फोटक के पास जा कहने लगे कि, "नाथ एक आवा नर भारी। तिन सरोजबाटिका उजारी"। यह सुनतेही वह राक्षसेन्द्र क्रुद्ध हो स्वयं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उठ धाया, आकर देखता क्या है कि अशोकदत्त ने बहुत से कमल तोड़ कर एकत्र किये हैं। देखतेही पहिचान कर वह आश्चर्य्य के साथ यों कहने लगा "क्या भैय्या अशोकदत्त हैं! आप यहां कैसे आ गये! तब तो अपने शस्त्र को दूर फेंक, वह दौड़कर, आंखों में आंसू भरे, अशोकदत्त के पांओं पर गिर पड़ा और कहने लगा कि मैं आपका छोटा सहोदर विजयदत्त हूं। हम दोनों द्विजवर गोविन्द-स्वामी के पुत्र हैं, इतने दिनों तक मैं दैवात् निशाचर होकर रहा और चिता के कपाल को फोड़ देने से मेरा नाम कपालस्फोटक हुआ। आपके दर्शनों से मुझे अपना ब्राह्मणत्व स्मरण हो आया और जिस राक्षसभाव ने मेरे चित्त पर मोह का आच्छादन डाल दिया था वह अब हट गया। ऐसा सुन अशोकदत्त के भी आंखों में आंसू भर आये वह अपने भाई के राक्षसीभाववाले अङ्गों पर हाथ फेरने लगा। इतनेही में पञ्चशिकौशिक नामक विद्याधरों के गुरु आकाश से उतर वहां आ पहुँचे और कहने लगे कि आप लोग विद्याधर हैं, शाप के कारण इस दशा को प्राप्त हुये थे। अब आपलोगों का वह शाप छुट गया, अब अपनो इस विद्या को लेओ और आपस में सब कोई समझ लो। अब अपने बान्धवों को साथ लेकर निज धाम को जाओ, इतना कह उन्हें विद्या दे वह आकाशमार्ग से उड़ गये। फिर वे दोनों, स्वप्नावस्था से जाग, विद्याधर हो, हेमकमलों को ले आकाश से उड़ते हुये हिमवान् पर्वत के शृङ्ग पर आये जहां अशोकदत्त अपनी भार्य्या उस राक्षसपति के सुता से मिला जो निज शाप के छुट जाने से अब विद्याधरी हो गई थी। उस मृगलोचनी को साथ ले, वे दोनों भाई गगनमार्ग से उड़ते हुये क्षण भर में काशीपुरी को जा पहुँचे जहां उन्होंने विरहाग्निसन्तापित निज माता पिता को अपना अमृतरूपी दर्शन दे शीतल किया। विना शरीर बदले जो इन लोगों ने कई प्रकार के जन्मों को देखा तो इन्हें पाकर न कि केवल इनके माता पिताही गद्गद हुये किन्तु सभी लोग हर्षान्वित हो गये। विजयदत्त को कण्ठ से लगा उसके पिता ने चिरकाल तक आलिङ्गन कर अपने हृदय के मनोरथों को पूर्ण किया। लोगों के मुख से अपने जामाता अशोकदत्त का, भाई सहित लौटने का वृत्तान्त सुन कर राजा प्रतापमुकुट भी हर्षान्वित हो वहीं आ पहुँचे और अपने इष्टमित्रों के सङ्ग अशोकदत्त को बड़े उत्साहपूर्वक बाजेगाजे के साथ निज राजमहलों में ले आये, जहां उसकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्यारी भार्य्या बड़ी उत्कण्ठा से उसके आने का मार्ग जोह रही थी । अशोकदत्त ने सब कमल महाराज को दे दिये। उन्हें तो एकही कमल की इच्छा थी सो अपनी अभिलाषा से अधिक पाकर वे बहुतही प्रसन्न हुये । फिर सब लोगों के सन्मुखही गोविन्दस्वामी ने आश्चर्य्य और कौतुकान्वित हो विजयदत्त से पूछा कि हे पुत्र! उस दिन रात को श्मशान में जब तू राक्षस हो गया तो फिर पीछे क्या क्या हुआ वह वृत्तान्त हमलोगों को सुना। विजयदत्त ने कहा कि हे तात! जब उस चिता के जलते हुये कपाल को मैंने अपनी चपलता से फोड़ दिया तो अचानचक उसकी वसा (चर्बी) छटक कर जो मेरे मुंह में गई तो मैं राक्षस हो गया, वह तो आपने देखाही था, इसके उपरान्त वहां के राक्षसों ने मेरा नाम कपालस्फोटक रखकर मुझे अपने पास बुलाया और मैं भी दौड़कर उन लोगों में जा मिला। तब वे लोग मुझे अपने राजा राक्षसपति के समीप ले गये जो मुझे देख बहुत प्रसन्न हुआ और उसी क्षण उसने राक्षसों के सेनापति का पद मुझे दिया। एक समय वह मद से उद्धत हो गन्धर्वों से लड़ने को गया, वहां शत्रुओं के हाथ से रण में उसकी मृत्यु हुई। उसी क्षण उसके सेवकों ने मिलकर मुझको राजा बना दिया और मैं उस पद को प्राप्त हो उस पुरी में राज्य करने लगा। फिर जब बड़े भैय्या हेमकमल की खोज में वहां पहुँचे तो उनके दर्शन से मेरी वह दशा शान्त हो गई। इसके उपरान्त फिर हमलोगों ने शाप के उद्धार हो जाने पर क्योंकर अपनी विद्या पाई उसका हाल बड़े भैय्या आप लोगों को सब सुनावेंगे।

विजयदत्त जब इतना वृत्तान्त निवेदन कर चुप हुआ तो अशोकदत्त ने आरम्भ से सारा हाल यों कह सुनाया कि प्राचीन समय में हम दोनों विद्याधर थे, एक दिन श्रीगालव ऋषि के आश्रम के समीप अनेक मुनिकन्याओं को जो श्रीगङ्गाजी में स्नान कररही थीं हम दोनों ने आकाश में से देखा, आंख मिलतेही हमलोग कामवश हो प्रेमजाल में फँस गये और वे कन्यायें भी हमलोगों को देख मोहित हो गईं। यद्यपि ये सब बातें एकान्त में हुई थीं परन्तु उनके दिव्यदृष्टि बन्धुओं ने सब हाल जान लिया और क्रुद्ध हो यों शाप दिया कि 'हे पापाचारियो, जाओ तुम दोनों पृथ्वी में मनुष्ययोनि में जन्म लो, और वहां तुम्हारा एक विचित्र प्रकार से वियोग हो, छोटा तो ऐसे देश में जा रहेगा, जहां मनुष्य की पहुँच होना दुर्घट

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है, परन्तु जब बड़ा भी वहां पहुँचेगा तो उसे देखने और पहिचानने पर छोटे को अपनी सुधि आ जावेगी, फिर विद्याधरों के गुरु से विद्या प्राप्त कर शाप से छूट अपनी विद्याधरी योनि को पाकर निज बन्धुओं से मिलोगे।" इस प्रकार मुनियों के शाप से हम दोनों इस लोक में उत्पन्न हुये और जैसे हमलोगों का वियोग हुआ सो सब आप लोगों को विदितही है। फिर स्वर्णकमल की खोज में, मैं सास की सिद्धि के प्रभाव से राक्षसपति के नगर में पहुँचा और वहां छोटे भैय्या से मिला। वहीं प्रज्ञप्तिकौशिक नामक गुरु से विद्या प्राप्त कर, विद्याधर हो, हमलोग यहां आ गये।

इस प्रकार शाप से मुक्ति पाने पर प्रसन्न हो अशोकदत्त ने अपने माता पिता तथा निज भार्य्या राजकुमारी को भी सब विद्या सिखा दीं जिसके कारण उन लोगों का भी मन जाग्रत हो गया और वे भी विद्याधरत्व को प्राप्त हुये। तदुपरान्त वह वीर व्यक्ति राजा की आज्ञा ले निज भार्य्या और माता पिता के सहित आकाशमार्ग से उड़ता हुआ अपने राजाधिराज विद्याधरेश के पास जा पहुँचा, और उनकी आज्ञा से बड़े का नाम अशोकवेग तथा छोटे का नाम विजयवेग हुआ। वहां से दोनों तरुण विद्याधर भाई अपने बन्धु ओं के सहित निजनिवासस्थान में, जो गोविन्दकूट नामक पर्वत पर था, जाकर सुखपूर्वक रहने लगे। वाराणसी के राजा प्रतापमुकुट इस आश्चर्य्य को देख बडे विस्मित हुये, फिर उन्होंने एक दूसरे रूपे के कलश पर नवीन हेमकमल को धारण कर नई शिवमूर्ति पर चढ़ाया, और बचे हुये स्वर्णसरोजों से श्रीमहादेवजी का पूजन कर इस उत्तम सम्बन्ध के महत्व से अपने कुल को धन्य माना।

इस प्रकार दिव्य पुरुष लोग किसी कारणवश इस जीवलोक में अवतार लेते हैं और अपने प्राचीन साहस तथा उत्साह के कारण दुष्प्राप्य अर्थसिद्धि को प्राप्त कर लेते हैं। इसलिये हे सत्वसागर शक्तिदेव! मैं जानता हूं कि तुम भी कोई उस जन्म के देवांश हो और अवश्य अपनी इच्छा के अनुसार फल प्राप्त करोगे, क्योंकि कठिन कार्य्य में महात्माओं का उत्साह यह सूचित करता है कि उनकी प्रकृति में अवश्य कोई विशेषता है, और वह राजकुमारी कनकरेखा भी जिसे तुम इतना चाहते हो अवश्य कोई दिव्या कन्या है, नहीं तो अपनी बालअवस्था-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ही में उसे यह ज्ञान क्योंकर हुआ कि उसे ऐसे पति के साथ विवाह करना चाहिये जिसने कनकपुरी देखी हो।

यौं जु कही सुन्दर कथा विष्णुदेव गुणखान।
शक्तिदेवहू ने सुनी सहित प्रेम दै कान॥
कनकपुरी अवलोकिये उर में बाढ़ी चाह।
निसि बितई हिय धीर धरि छनछन सहित उछाह॥

तीसरा तरङ्ग।

दूसरे दिन प्रातःकालही उत्स्थलद्वीप के मठ में जहां शक्तिदेव रात को टिका था, धीवरों का राजा सत्यव्रत आ पहुँचा क्योंकि वह सबेरे मिलने की प्रतिज्ञा कर चुका था। आतेही उसने कहा कि हे ब्रह्मन्! तुम्हारी इच्छा पूरी करने का एक उपाय मैंने विचारा है सो यह है कि समुद्र के बीच में रत्नकूट नामक एक द्वीप है जहां स्वयं रत्नाकर ने श्रीविष्णुभगवान् का एक मन्दिर बनवा उन्हें वहां प्रतिष्ठित किया है। वहां प्रति वर्ष आषाढ़शुक्ला द्वादशी को एक बड़ा भारी मेला लगता है और दूर दूर से यात्री लोग वहां पूजन करने के निमित्त आते हैं। सम्भव है कि उनमें से किसी न किसी को उस कनकपुरी का पता मालूम हो, सो चलो हम दोनों वहां चलें क्योंकि मेले का समय समीप आ गया है। जब शक्तिदेव ने इस बात को स्वीकार किया तो विष्णुदत्त ने उसके यात्रा के मार्ग का सब सामान ला उपस्थित कर दिया। तदुपरान्त वह सत्यव्रत के लाये हुये जलयान पर चढ़ उसके साथही साथ चला। उस अद्भुत समुद्र में जहां महाकाय तथा भयानक जलजन्तु रहते थे, शक्तिदेव ने सत्यव्रत से जो स्वयं जहाज को चला रहा था पूछा कि वह बहुत दूर समुद्र में क्या वस्तु दीख पड़ती है जो ऐसा जान पड़ता है कि, मानो कोई पर्वत सपक्ष हो समुद्र के बाहर निकला आता है। सत्यव्रत ने कहा कि हे ब्रह्मन्! यह वही वटवृक्ष दीख पड़ता है जिसके नीचे लोग कहते हैं कि समुद्रवर्ती बड़वानल का मुख है इस ओर से यात्रा करने में इसे बचा के चलना चाहिये क्योंकि जो इसके चक्र में पड़ जाते हैं वे फिर नहीं निकल सकते।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अभी सत्यव्रत इतना कहही रहा था कि जल के वेग से वह समुद्रयान उसी ओर को खींचता जान पड़ने लगा। यह देख सत्यव्रत ने शक्तिदेव से कहा कि हे मित्र अब तो निश्चयही हमलोगों का अन्तकाल आ पहुँचा क्योंकि हमलोगों का जल-यान उसी बड़वानल की ओर खिंचा जा रहा है और अब मैं इसे रोकने में असमर्थ हो रहा हूं। निःसन्देह थोड़ी देर में हमलोग जल के वेग से खींचे जाकर मृत्यु के मुंह में जा पड़ेंगे; जान पड़ता है कि हमलोग प्रबल दुर्भाग्य के अधीन हो रहे हैं। मुझे अपने मरने का दुःख कुछ भी नहीं है क्योंकि इस संसार में किसी का भी शरीर स्थिर न रहा न रहेगा, किन्तु मुझे इस बात का खेद है कि इतना उद्योग और परिश्रम करने पर भी तुम्हारी इच्छा पूरी न हो सकी, सो अब एक उपाय करना चाहिये; वह यह है कि जब लों मैं इस जलयान को सँभालता हूं तुम उछल कर इस वटवृक्ष की कोई डाली पकड़ लो, सम्भव है कि कदाचित् तुम्हारे जैसे सत्वशाली पुरुष के बचने का कोई न कोई उपाय निकल आवे क्योंकि विधि तथा समुद्र के तरङ्गों का विलास कोई भी नहीं जानता। अभी वह धीर सत्यव्रत इतना कहही रहा था कि जलयान खिंचता हुआ वटवृक्ष के नीचे जा पहुँचा, एकही उछाल में शक्तिदेव ने बहुत बड़ी डाली उस समुद्रवर्ती वटवृक्ष की धर ली और उस पर चढ़ गया किन्तु सत्यव्रत अपने शरीर और जलयान के सहित जिन्हें वह परोपकार में दे चुका था, बड़वानल के मुख में जा पड़ा। यद्यपि शक्तिदेव वृक्ष की डाली धर लेने से बच तो गया था किन्तु उसे जीने की कोई आशा नहीं थी। वह सोचने लगा कि मैं उस कनकपुरी को न देख सका और अब इस निर्जन स्थान में मेरी मृत्यु होगी, देखो मैंने अपने मित्र धीवरराज की भी जान व्यर्थही गँवाई, अथवा सब के सिरों पर पैर रखनेवाली भगवती भवितव्यता को कौन रोक सकता है ? वह ऐसी अवस्था में बैठा हुआ अनेक प्रकार की बातें विचार रहा था कि सूर्य्यभगवान् अस्ताचल को पधारे। सन्ध्या होतेही देखता क्या है कि बड़े बड़े पक्षी, विशेषतः गृध्रगण, चारो ओर से भयानक रव करते हुये उसी वटवृक्ष पर चले आते हैं, उनके बृहत् पङ्खों के वायुचपेट से समुद्र की जो लहरें उठतीं थीं तो ऐसा जान पड़ता था कि मानो चिरकाल के परिचयी होने के कारण समुद्र प्रेम से उनकी अगवानी करता हो।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुछ देर के उपरान्त वे सब पक्षी भिन्न भिन्न शाखाओं पर बैठ मानुषीभाषा में बातचीत करने लगे, और शक्तिदेव घने पत्तों की आड़ में छिपकर उनकी बातें सुनने लगा। एक कहने लगा कि आज मैं अमुक टापू में गया था, दूसरा बोला कि मैं तो अमुक पर्वत पर विहार करता था, तीसरे ने कहा कि मैं तो आज बड़ेही दूरदेश को गया था, योंही सबही अपने अपने उस दिन के घूमने फिरने का वृत्तान्त कहने लगे। इतनेही में एक बूढ़ा गिद्ध बोल उठा कि भई मैं तो आज कनकपुरी में विहार करने गया था और कल प्रात:काल भी वहीं चरूँ चुगूंगा, क्योंकि दूर जाकर व्यर्थ थकने से मुझे क्या लाभ है। इस प्रकार उस पक्षी के अमृतरूपी बचनों से शीतल हो, शक्तिदेव विचारने लगा कि भाग्यों से भला उस नगरी का पता तो लगा और ईश्वर ने वहां पहुँचने के उपाय इस महाकाय पक्षी को भी भेज दिया है। ऐसा विचार वह उस सोये हुये पक्षी के पास खसक कर उसके पीठ के पङ्खों में छिप बैठ रहा। प्रात:काल जब दूसरे पक्षी इधर उधर को उड़ कर चल दिये तो भाग्य की नाईं मानो शक्तिदेव की सहायता करता हुआ वह बूढ़ा गिद्ध भी अनजान में उसे लिये हुआ क्षण भर में कनकपुरी को जा पहुँचा। ज्योंही वह एक उद्यान में जाकर उतरा त्योंही शक्तिदेव उसकी पीठ से उतर, अलग हो, इधर उधर टहलने लगा। देखता क्या है कि एक स्थान पर दो स्त्रियां पुष्प तोड़ रही हैं। वह धीरे से उनके पास जा पूछने लगा कि हे भद्रे! यह कौन पुरी है और आप लोग कौन हैं? वे दोनों इसको देख विस्मित हुईं! फिर कहने लगीं कि विद्याधरों की इस भूमि का नाम कनकपुरी है और यहां की स्वामिनी चन्द्रप्रभा हैं, हमलोग उनकी दासी मालिनी हैं और ये फूल उन्हीं के लिये तोड़े जाते हैं। शक्तिदेव ने कहा कि आप लोग कृपाकर कोई ऐसा प्रबन्ध करिये कि जिसमें मैं भी आपकी स्वामिनी जी का दर्शन पाऊँ। उन लोगों ने कहा वहुत अच्छा आप हमारे साथ नगर के राजमन्दिर में चले चलिये। शक्तिदेव ने उनके साथ जाकर देखा कि राजप्रसाद की रचना अतीव सुन्दर और अद्भुत है, रत्नों के तो खम्भ हैं और सुवर्ण की दीवारें बनी हैं, मानो वह स्थान कुल सम्पदाओं का निवासस्थान है। उसको वहां देख दूसरी सखियों ने जाकर चन्द्रप्रभा से निवेदन किया कि एक मनुष्य को हमलोगों ने यहां आया देखा है। सुनतेही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसने आज्ञा दी कि उसे मेरे समीप आदरपूर्वक ले आओ । सखी लोग जाकर उसे बहुत सन्मान के साथ अपनी स्वामिनी चन्द्रप्रभा के पास ले आईं । शक्तिदेव ने देखा कि एक परम सुन्दरी रमणी नेत्रों को आनन्द देनेवाली साम्हने पर्य्यङ्क पर बैठी है मानो ब्रह्मा ने अपनी सारी प्रवीणता उसके रचने में लगा दी हो । दूर से देखतेही उसने मोहित हो रत्नपर्य्यङ्क से उठ शक्तिदेव का स्वागत बड़े आदर से किया और एक उत्तम आसन पर स्थान दे उसके बैठने के उपरान्त धीरे से पूछा कि हे भद्र ! आप कौन हैं, और कैसे इस नगरी में जहां मनुष्य की पहुँच नहीं हो सकती, आपका आना हुआ ? जब चन्द्रप्रभा ने कुतूहल के साथ यों पूछा तो शक्तिदेव ने अपना देश और नाम तथा अपनी जाति बतलाकर कनकरेखा का सारा हाल सुना दिया कि क्योंकर उसे प्राप्त करने की इच्छा से वह कनकपुरी देखने को घर से निकला था । यह सुन कुछ देर लों ध्यान कर एक लम्बी सांस ले चन्द्रप्रभा ने सब लोगों को वहां से हटा दिया और एकान्त हो जाने पर उससे कहा कि हे भद्र ! सुनिये मैं आपको अपना हाल सुनाती हूं—

इस देश में विद्याधरों के पति शशिखण्ड नाम राजा रहते हैं । क्रम से हमलोग चार कन्या उन्हे उत्पन्न हुईं, मैं सब से बड़ी चन्द्रप्रभा नामक हूं, मुझसे छोटी का नाम चन्द्ररेखा है, तीसरी शशिरेखा और चौथी शशिप्रभा है । हम चारो पिता के घर में रहकर क्रमशः सयानी होने लगीं । एक समय की बात है कि मेरी तीनों बहिनें स्नान करने के निमित्त मन्दाकिनी के तट पर गईं और मैं अस्वस्थता के कारण घरही पर पड़ी रही । वहां उन लोगों ने जल में खेलना आरम्भ किया । पानी की छींट उड़ाते उड़ाते यौवनमद से उन लोगों ने अग्रतपा नामक ऋषि को जो वहां बैठे थे, जल से भिँगा दिया । उनका ऐसा उत्पात देख मुनि ने क्रोध से शाप दिया कि "हे दुष्टा कन्याओ ! जाओ तुम सब मर्त्यलोक में जन्म लो" । यह हाल सुन, हमारे पिताजी ने जाकर उन्हें नम्रता और प्रार्थना से किसी किसी प्रकार प्रसन्न किया तो उन्होंने उन लोगों के शाप का उद्धार भिन्न भिन्न रीति से नियत कर दिया और यह भी स्थिर कर दिया कि उन सबों को दिव्य ज्ञान के साथ अपने इस जन्म की कथा स्मरण रहेगी । जब वे सब शरीर परित्याग कर मर्त्यलोक को चली गईं तो मेरे पिताजी इस नगरी को मुझे दे खेद से बन

को पधार गये । मैं यहां रहने लगी। एक दिन माता दुर्गाजी ने स्वप्न में मुझे यह जताया कि हे पुत्रि! कोई मर्त्यलोक का निवासी तेरा भर्ता होगा। इसलिये यद्यपि मेरे पिताजी ने अनेक विद्याधरों से मेरा विवाह करना चाहा किन्तु मैंने किसी को भी स्वीकार न किया और अब तक क्वारीही रही। इस समय आपका ऐसा आश्चर्य्यमय आना देख, और आपके रूप पर मोहित हो, मैं अपने तई आप को अर्पण करती हूं। आगामि चतुर्दशी को मैं ऋषभ नामक महागिरि पर अपने पिताजी के पास जाकर आपके आने का हाल निवेदन करूँगी, वहां प्रति वर्ष उस तिथि को शिवपूजन करने के निमित्त सभी दिशाओं से उत्तम विद्याधरलोग एकत्र होते हैं। वहां जा उनकी आज्ञा ले मैं शीघ्र यहां लौट आऊँगी, फिर आपके साथ मेरा विवाह होगा। अब आप इस समय स्नानित्यादि से निवृत्त होइये।

इतना कह चन्द्रप्रभा ने विद्याधरों के योग्य सब उपभोग एकत्र कर दिये। वहां रहते हुये शक्तिदेव को ऐसा सुख प्राप्त हुआ जैसे दावानल से तपे हुये मनुष्य को अमृत के सरोवर में स्नान करने से हो। चतुर्दशी आने पर चन्द्रप्रभा ने उससे कहा कि हे भद्र! अब मैं आपके निमित्त पिताजी के पास जाती हूं। मेरे सब सेवक मेरे साथ जांयगे, सो आप इन दो दिनों के लिये अकेले रहने का दुःख न मानियेगा किन्तु एक बात पर ध्यान रखना होगा कि इस बीचवाले प्रासाद की छत पर न चढ़ियेगा।

इतना कह चन्द्रप्रभा शक्तिदेव को वहां छोड़ निज पिता के पास पधारी। जाने को तो वह गई परन्तु उसका चित्त शक्तिदेवही में लगा था और शक्तिदेव का जी भी उसी के साथ था। जब शक्तिदेव अकेला रह गया तो अपना जी बहलाने के लिये राजभवन में इधर उधर घूमा फिरा करता था। एक दिन उसे यह कौतूहल हुआ कि, उस विद्याधरपुत्री ने मुझे बीचवाले प्रासाद की छत पर जाने से क्यों निषेध किया है। इतना विचार वह उस कोठे पर चढ़ गया देखा कि वहां तीन गुप्तरत्नमण्डप बने हैं, एक के द्वार खुले पा वह अन्दर जा पैठा। देखता क्या है कि एक उत्तम रत्नमय पलङ्ग पर कोई व्यक्ति चादर ओढ़े सोया है। उसने जो चादर हटाया तो देखा कि परोपकारी राजा की पुत्री राजकुमारी कनकरेखा मरी पड़ी है, यह देख वह विचारने लगा कि यह क्या आश्चर्य्य है! क्या यह सचमुच

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ऐसी नींद में सोई है जिससे कोई नहीं जागता अथवा यह मेरे आंखों की भ्रान्ति है। जिसके लिये मैं देश परदेश मारा मारा फिरा सो तो यहां मरी पड़ी है और वहां मेरे देश में यह जीती है। इसकी कान्ति कुछ भी नहीं बिगड़ी, निस्सन्देह विधाता ने मुझे भ्रम में डालने के लिये यह कोई इन्द्रजाल का खेल रचा है। ऐसा विचार वह वहां से बाहर निकल शेष की दोनों कोठड़ियों में क्रम से पैठा तो वहां भी और दो कन्याओं को उसी प्रकार भिन्न भिन्न पलङ्गों पर मरी हुई पाया। तब तो वह आश्चर्य से पुनः बाहर निकल आया और बैठकर नीचे जो दृष्टि डाली तो एक अतीवोत्तम बावली दिखाई दी। फिर देखा कि उसके तट पर एक रत्नमय घोड़ा खड़ा है। राजभवन से उतर वह कौतुकवश उसके समीप गया और ज्योंही उसकी पीठ पर हाथ रख चढ़ने की इच्छा की, कि उसने एक लात ऐसी मारी कि वह उस वापी में जा पड़ा और गोता खा गया। आंख खोलतेही देखता क्या है कि वह अपने वर्धमान नगर के एक बागीचे के सरोवर में खड़ा है, न वह कनकपुरी है न वह प्रासाद है, चन्द्रप्रभा के बिना दीन कुमुदपुष्प की नाईं स्वयं आपही आप वर्तमान है। वह सोचने लगा कि अहो! कहां यह वर्धमान नगर और कहां वह विद्याधरों की पुरी! यह क्या आश्चर्यमयी विडम्बना है? खेद का विषय है कि मैं मन्दभाग्य न जाने किसके द्वारा इस प्रकार ठगा गया, अथवा भवितव्यता को कौन जान सकता है। यों विचारता हुआ वह तालाब से बाहर निकल आया और आश्चर्य के साथ सीधे अपने पिता के घर को गया। पिता ने जब पूछा कि तू इतने दिनों तक कहां था? तो उसने कहा कि मैं डुग्गी के सङ्ग स्वयं घूमता और उस पुरी की खोज करता फिरता था। तब तो पिता ने उसका अभिनन्दन किया और वह अपने बन्धु बान्धवों के साथ रहा। दूसरे दिन जब घर के बाहर निकला तो फिर वही डुग्गी और वही घोषणा उसने सुनी कि—

छत्री हो वा विप्रसुत सुनौ हमारी बात।
आयसु राजा दीन्ह जस सबै सुनाये जात॥
कनकपुरी देखी जिनै सो आवहि तिहि पाहिँ।
यौवराज्य कन्यासहित राजा देहै ताहिँ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह सुन शक्तिदेव ने उस डुग्गीवाले के समीप जाकर कहा कि हमने उस पुरी को देखा है। वे लोग उसे राजा के सन्मुख ले गये। महाराज ने कहा कि तुम तो एक बेर मिथ्याभाषण के कारण निकाले गये थे अब क्या आये हो? उसने कहा कि यदि मैं इस बेर भी झूठ बोलूं और यदि मैंने वह नगरी न देखी हो तो मुझे प्राणदण्ड दिया जाय, अब राजपुत्री मुझसे उस विषय में चाहे जो प्रश्न कर लें। यह सुन राजा उसको अपने साथ लेकर निज भवन को चले और सेवकों को भेज राजकुमारी कनकरेखा को भी अन्त:पुर से बुलवा भेजा। उसने उसे देखतेही पहिचानकर कहा कि हे तात! यह तो वही है, फिर कोई न कोई बात बनाकर झूठही कह देगा। शक्तिदेव ने कहा कि हे राजकुमारी! मैं चाहे सच कहता हूं या झूठ परन्तु एक बात मैं पूछता हूं उसका उत्तर आप मुझे दीजिये, मुझे बड़ा कौतुक हो रहा है। मैंने कनकपुरी में जाकर देखा कि वहां आपका शरीर निर्जीव एक पलङ्ग पर पड़ा था, और यहां देखता हूं कि आप भली चङ्गी जीती जागती हैं यह क्या आश्चर्य्य है? जब राजकुमारी से यह प्रश्न किया गया तो उसने ठीक पता पाकर अपने पिता से कहा कि हे तात! निस्सन्देह इस महात्मा ने उस नगरी को देखा है और कुछ काल के अनन्तर जब मैं वहां जाकर रहूंगी तो यह मेरा भर्ता होगा। वहां इनका विवाह मेरी शेष की तीनों बहिनों के साथ होगा और ये उस विद्याधरपुरी के राजा होंगे। अब मैं आजही उस पुरी को जाकर अपने पहिले शरीर में पैठूंगी, यहां तो मैं एक मुनि के शाप से आपके घर में उत्पन्न हुई थी, जिन्होंने मेरे शाप का अन्त यों निर्धारित किया था कि जब कोई मनुष्य कनकपुरी में जाकर तेरा वह शरीर देखकर तुझे पूरा भेद सुनावेगा तब तेरा उद्धार होगा और वही मनुष्य तेरा पति होगा। यद्यपि मैं इस मानुषी शरीर में हूं तथापि मुझे अपने पूर्वजन्म की सब कथा विदित है, सो अब मैं अपनी सिद्धि पाने के लिये निज विद्याधरपुरी को जाती हूं। इतना कह राजपुत्री अपना शरीर परित्याग कर अन्तर्धान हो गई और इधर प्रासाद में रोना पीटना मच गया। फिर शक्तिदेव मनही मन पछताता और अपनी निन्दा करता हुआ राजभवन से बाहर निकल आया और विचारने लगा कि मैं क्यों खेद करूँ, मुझे तो कनकरेखा कह गई है कि मेरा मनोरथ पूर्ण होगा, श्रेष्ठ लोगों का वचन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है कि, "काजसिद्धि उद्यम-आधीन।" अतएव मैं पुनः उसी पहिले मार्ग से कनकपुरी में पहुँचूँगा, दैव कोई न कोई उपाय निकालही देगा। इतना विचार पुनः शक्तिदेव नगर से बाहर हुआ, ठीकही है, "उद्यमही लागे रहत कैतौ परै सुभोर। जब लगि कारज होत नहिँ धीर धरहिँ नहिँ धीर"। चलते चलते वह पुनः कुछ दिनों में उसी समुद्रतटवर्ती विटङ्कपुर में जा पहुँचा। वहां देखा कि वही व्यापारी जिसके साथ उसने समुद्रयात्रा की थी और जिसका जहाज आंधी में फट गया था, साम्हने से चला आता है। वह विचारने लगा कि क्या यह वही समुद्रदत्त है, वह तो डूब गया था, बचा क्योंकर, ? अथवा इसमें सन्देहही क्यों करना, मैं भी तो इसी विचित्र बात का प्रत्यक्ष उदाहरण हूं। ऐसा विचार वह ज्योंही आगे बढ़ा त्योंही उस वणिक्पुत्र ने दौड़कर इसे पहिचान हर्ष के मारे कण्ठ से लगा लिया। फिर अपने घर ले जा सब प्रकार का आतिथ्य-सत्कार कर पूछने लगा कि कहो भाई, जहाज फट जाने के उपरान्त आप उस घोर समुद्र से क्योंकर बचे? शक्तिदेव ने उसे सब हाल सुनाया कि क्योंकर मगर-मच्छ से निगला जाकर वह उत्स्थलद्वीप में पहुँचा था। फिर उसने समुद्रदत्त से पूछा कि आप अपना हाल कहिये कि आपकी रक्षा क्योंकर हुई? उसने कहा कि जब मैं समुद्र में गिर पड़ा तो अचानचक एक तख्ता मेरे हाथ लग गया, उसी के आसरे से मैं तीन दिन तक जल में बहता फिरा, देखा कि एक दूसरा जलयान दूर से जा रहा है। मैं वहीं तख़्ते पर बैठा बैठा जोर से चिल्लाने लगा, उन लोगों ने मेरी चिल्लाहट सुन निज जलयान समीप ला मुझे उठा लिया। जलयान पर आ मैंने देखा कि वहां मेरे पिताजी बैठे हैं जो चिरकाल से विदेश गये थे और अब अपने उसी जहाज पर लौटे आते थे। मुझे पहिचानतेही पिताजी ने उठकर मुझे गले से लगा लिया, प्रेम से गद्गद होने के कारण उनकी आंखों में आंसू भर आये; उन्होंने मुझसे पूछा कि हे वत्स! तू यहां क्योंकर आया? मैंने कहा कि हे तात! जब आपको गये बहुत दिन हो गये और आप लौटकर न आये तो मैंने विचारा कि वाणिज्य तो मेरा धर्म्मही है मैं क्यों न उसी में लगूं। सो एक दिन मैं जलयान पर आरूढ़ हो वाणिज्य का सब सामान ले यात्रा के निमित्त चला। मार्ग में आंधी में पड़ मेरा वह जलयान डूब गया और मैं समुद्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में जा पड़ा, वहां से आपने मुझे बचाया। मेरी बात सुन पिताजी ने उपालम्भ के साथ मुझे कहा कि हे पुत्र! तू ने क्यों व्यर्थ अपने प्राण को ऐसे सङ्कट में डाला? मेरे पास बहुत धन है और मैं तो उसके उपार्जन में लगाही हूं, देख मैं तेरे लिये जहाज़ भर के सोना ले आया हूं। इस प्रकार मुझे आश्वासन दे वे घर को ले आये। यों उस वणिक्पुत्र की बात सुन शक्तिदेव रात को वहीं सुखपूर्वक टिक रहा। दूसरे दिन उससे कहने लगा कि हे मित्र! मुझे पुन: उत्स्थलद्वीप को जाना है अब मैं वहां क्योंकर पहुँचूंगा सो बताइये। समुद्रदत्त ने उत्तर दिया कि आज मेरे अनेक व्यवहारी वहां जानेवाले हैं, आप भी उन्हीं लोगों के साथ चले जाइये। यह सुन, उसका कहना मान, शक्तिदेव उन व्यापारियों के साथ जलयान पर चढ़ उत्स्थलद्वीप में जा पहुँचा। वहां उसने विचारा कि यहां जो मेरा ममेरा भाई विष्णुदत्त एक मठ में रहता है उसी के पास चलकर रहूं, ऐसा सोच वह विपणी मार्ग (बाज़ार) से होता हुआ उसी ओर को चला। रास्ते में उसको धीवरेन्द्र सत्यव्रत के पुत्रों ने देख पहिचान कर पूछा कि हे ब्रह्मन्! तुमतो हमारे पिता के साथ कनकपुरी की खोज में गये थे, अब तुम अकेले दीख पड़ते हो, वे कहां हैं? शक्तिदेव ने कहा कि आप लोगों के पिता जलवेग से खींचे जाकर जलयान सहित बड़वानल के मुख में जा पड़े। यह सुन सत्यव्रत के पुत्रों ने अत्यन्त क्रुद्ध हो अपने सेवकों को आज्ञा दी कि इस दुरात्मा को धर लो इसने हमारे पिता को अवश्य मार डाला है, नहीं तो यह क्योंकर हो सकता है कि दोनों यहां से एक-ही जलयान में गये, यह तो जीता जागता लौट आवे और वे वाहन सहित बड़वा-नल के मुख में जांय! इस पितृघातक को हमलोग कल पशु की नाईं चण्डिका-देवी के सन्मुख बलिदान चढ़ावेंगे। धीवरराजपुत्रों की ऐसी आज्ञा सुन उनके दासों ने शक्तिदेव को धर के बांध लिया और उस भयानक चण्डिकागृह में ले गये। उस बलिदानगृह का पेट मानो अनेक पशुओं के खाने से फूल रहा था और घण्टों की माला जो लटक रही थी वही मानो उसके मृत्यु सरीखे मुख के दाँत थे। उन लोगों ने उसके हाथ पैर बांध उसे मन्दिर में डाल दिया, जहां वह सारी रात अपने प्राणों का सन्देह करता श्रीकल्याणकारिणी भगवती माता से यों प्रा-र्थना करता रहा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तुही अम्ब कल्याण की कारिणी है ।
जगत्तारिणी दैत्यसंहारिणी है ॥
पर्यौ दुष्टफन्दे में या दास तेरो
निशुम्भादि दैत्यों की तू दारिणी है ॥
बचावै मुझे कौन इन राक्षसों से
अरी अम्ब ! तुही विपद् टारिणी है ॥
न तेरे सिवा कोइ है त्राणदाता
सुभक्तों की माता तु उद्धारिणी है ॥

इस प्रकार देवी की प्रार्थना करते करते भोर के समय उसे कुछ झपकी सी जो आई तो स्वप्न में क्या देखता है कि एक दिव्य स्त्री मानो उस मन्दिर से निकल कर दयापूर्वक यों कहती है कि हे शक्तिदेव ! तू मत डर तेरा अनिष्ट न होगा। धीवरेन्द्र के इन पुत्रों की एक बहिन है जिसका नाम बिन्दुमती है, वह कन्या प्रात:काल तुझको देखकर मोहित होगी और तुझे अपना पति बनाया चाहेगी तू उसका निवेदन अङ्गीकार कर लीजियो, वही तुझे यहां से बचावेगी, वह धीवरी नहीं किन्तु एक दिव्या स्त्री है जो किसी शाप के कारण ऐसे कुल में जन्मी है। यह सुनतेही उसकी आंखें खुल गईं; प्रात:काल देखता क्या है कि नेत्रों को आनन्द देनेवाली वही रूपलावण्यवती कन्या देवीजी के मन्दिर में आ उपस्थित हुई और इसके समीप आ कहने लगी कि हे भद्र। आप मुझे स्वीकार कीजिये, यदि मेरा कहना मानियेगा तो मैं आपको यहां से बचा दूंगी। मेरे भाई लोगों ने जिन जिन वरों को मेरे लिये नियत किया था सभों को मैंने अस्वीकार कर दिया किन्तु आपको देखतेही मेरे हृदय में प्रीति उत्पन्न हो गई है सो आप मुझे अङ्गीकार कीजिये । इस प्रकार जब उस धीवरेन्द्र की कन्या बिन्दुमती ने कहा तो शक्तिदेव को अपना स्वप्न स्मरण हो आया सो उसने इस बात को सहर्ष स्वीकार कर लिया। उधर श्रीदेवीजी ने बिन्दुमती के भाइयों को भी स्वप्न में ऐसी आज्ञा दी कि तुम लोग शक्तिदेव को छोड़कर उसका विवाह अपनी बहिन बिन्दु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मती के साथ कर दो, इसी में तुम लोगों का कल्याण होगा। तदनुसार उनलोगों ने शक्तिदेव को छोड़ दिया और विन्दुमती के साथ उसका पाणिग्रहण हो गया, और वह उस दिव्या भार्य्या के साथ जो धीवरी रूप में वहां वर्तमान थी सुखपूर्वक रहने लगा।

एक समय उसने अपने घर के कोठे पर से देखा कि कोई चाण्डाल गोमांस का टोकरा सिर पर उठाये चला जाता है सो उसने अपनी भार्य्या विन्दुमती से कहा कि हे कृशोदरि! देखो जो गौ माता तीनों लोक में पूजनीय हैं उन्हीं का मांस यह दुष्ट खाता है, हा यह कैसा घोर पापी है! यह सुन विन्दुमती ने निज पति से कहा कि हे प्राणनाथ! यह पाप अचिन्त्य है इसका हाल क्योंकर कहा जाय। गौ माता का प्रभाव बड़ाही विलक्षण है मैं उनके तनिक से अपराध के कारण इस धीवरकुल में उत्पन्न हुई हूं, न मालूम इस महापापी का उद्धार क्योंकर होगा। ऐसा सुन शक्तिदेव ने कहा कि हे प्रिये! मुझे बड़ा कुतूहल होता है, तुम बताओ कि तुम कौन हो, और क्योंकर इस धीवरकुल में तुम्हारा जन्म हुआ? जब उनने बार बार हठ कर पूछना आरम्भ किया तो उसने कहा कि यह बात बड़ी गोप्य है किन्तु यदि आप मेरा एक कहना मानें और उसके लिये प्रतिज्ञा करें तो मैं यह भेद आपको बता दूंगी। जब शक्तिदेव ने शपथपूर्वक यह प्रतिज्ञा करी कि हां प्रिये! जो तुम कहोगी सो मैं करूँगा तो विन्दुमती ने यों कहना आरम्भ किया कि—

इस द्वीप में आपका एक और विवाह होगा और आपकी वह भार्य्या थोड़ेही दिनों में गर्भवती होगी। जब वह गर्भस्थित बालक आठ महीने का हो, तब निज भार्य्या का पेट फाड़कर आप उस बालक को निकालकर लाइयेगा, इसमें कुछ भी घृणा मत करना। जब विन्दुमती ने ऐसा कहा तो शक्तिदेव को बड़ा विस्मय हुआ कि यह क्या बात है, उसके हृदय में घृणा उठती देख उस धीवरेन्द्रपुत्री ने कहा कि हे आर्य्यपुत्र! आपको किसी हेतुवश मेरे कहने से ऐसा करनाही होगा, अब सुनिये कि किस कारण से मेरा जन्म धीवरकुल में हुआ है।

मैं पूर्वजन्म में विद्याधरी थी और इस समय शाप के कारण इस मर्त्यलोक में जन्मी हूं। विद्याधरी की अवस्था में एक दिन मैंने ताँत को दाँत से काट कर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बीणा में लगाया था उसी पाप के कारण मुझे धीवर के घर में जन्म लेना पड़ा। गज माता का एक सूखा ताँत मुंह से छूने के कारण मेरी ऐसी अधोगति हुई तो फिर उसका मांस खाने से क्या दुर्दशा होगी और कौन नरक भोगना पड़ेगा यह कौन कह सकता है? अभी इतनी बातें होही रही थीं कि विन्दुमती का एक भाई घबड़ाया और दौड़ता हुआ बाहर से आ कहने लगा कि 'उठो उठो भागो, एक बड़ा भारी और भयानक जङ्गली सूअर जो अनेक लोगों को मार चुका है क्रोध से झपटता हुआ इधरही चला आता है, यह सुन शक्तिदेव अपने भवन से नीचे उतर, एक घोड़े पर चढ़, हाथ में बर्छी ले उस शूकर के पीछे चला, और अस्त्र चला उसे घायल किया किन्तु वह भागता हुआ एक पर्वत की कन्दरा में जा छिपा, उसे ढूंढ़ता हुआ शक्तिदेव भी उसके पीछे पीछे उसी गुफ़ा में पैठा, अन्दर जाकर देखता क्या है कि वहां एक अतीवोत्तम उद्यान है जिसके बीच में एक अतिविशाल भवन राजाओं के रहने योग्य बना हुआ है। थोड़ीही देर में उसने देखा कि एक परम सुन्दरी कन्या घबड़ाई हुई साम्हनेवाले घर से निकल उसी की ओर चली आती है मानो प्रसन्न हो वनकन्या उसका स्वागत करने आती हो। शक्तिदेव ने उससे पूछा कि हे कल्याणि! आप कौन हैं और क्यों ऐसी घबड़ाई सी जान पड़ती है? यह सुन उस सुमुखी ने उत्तर दिया कि, हे महाशय! दक्षिण दिशा के एक चण्डविक्रम नाम राजा हैं उन्हीं की मैं विन्दुरेखा नाम कन्या हूं, एक पापी लालनेत्रोंवाला दैत्य आज मुझको मेरे पिताजी के घर से अकस्मात् छल से हर के यहां ले आया है। वह मांस की खोज में बाराह का रूप धारण कर बाहर गया था कि किसी वीर पुरुष ने अभी बर्छे से उसे घायल कर दिया है। अभी वह बाहर से दौड़ता हुआ घर में आया और आतेही भूमि पर गिर मर गया है, भगवान् ने मेरे कुमारीपन की रक्षा करी, सो मैं घबड़ाकर डर के मारे भाग बाहर निकल आई हूं। यह सुन शक्तिदेव ने कहा कि हे सुन्दरि! घबराने की कोई बात नहीं है मैंनेही उस वाराह को बर्छे से घायल किया है। राजकुमारी ने पूछा कि आप कौन है? तब उसने उत्तर दिया कि जाति का ब्राह्मण हूं और मेरा नाम शक्तिदेव है। विन्दुरेखा ने कहा तो बस आपही मेरे भर्ता हुये, शक्तिदेव भी इस बात को स्वीकार कर उसे साथ में ले,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कन्दरा के बाहर आ गया, और घर पहुँच, निज भार्य्या विन्दुमती से विन्दुरेखा का परिचय कराया, फिर उसकी इच्छा से शक्तिदेव का विवाह विधिपूर्वक विन्दुरेखा के साथ किया गया। अब उसको दो दो भार्य्यायें हो गईं, समय पाकर विन्दुरेखा को गर्भ रह गया, आठ महीने बीतने पर एक दिन प्रथम भार्य्या विन्दुमती ने एकान्त में आ शक्तिदेव से कहा कि हे नाथ! स्मरण कीजिये कि आपने मेरे साथ क्या प्रतिज्ञा की थी, आपकी द्वितीय भार्य्या के गर्भ का यह आठवां महीना है, आप विन्दुरेखा का पेट फाड़ उस गर्भस्थ बालक को निकाल लाइये क्योंकि अब आप अपनी प्रतिज्ञा से टल नहीं सकते। यह सुन शक्तिदेव एक ओर स्नेह और दूसरी ओर प्रतिज्ञा से पराधीन हो कुछ उत्तर न दे सका। फिर महा खेद और उद्वेग के साथ वहां से निकल विन्दुरेखा के पास पहुँचा, उसने इसे खिन्न देख समीप आ सादर पूछा कि, हे आर्य्यपुत्र! आज आप कुछ चिन्तित से दीख पड़ते हैं, मैं इसका कारण जानती हूं कि विन्दुमती ने आपको मेरा गर्भ फाड़ने के लिये कहा है, सो आप अवश्य उस काम को कीजिये क्योंकि इसका कोई विशेष कारण है, इसमें किसी प्रकार की क्रूरता नहीं है और न आप इस काम में किसी प्रकार की घृणा करिये। हे नाथ! मैं आपको देवदत्त की ऐसीही कथा सुनाती हूं सो सुनिये—

प्राचीन समय में कोई देवदत्त नामक ब्राह्मण जूआ खेलने का बड़ा व्यसनी था। वह जूये में अपने कपड़े लत्ते सभी हार गया सो मारे लज्जा के पिता के घर न जा सका और एक अकेले देवमन्दिर में घुसकर कोने में बैठ रहा। वहां उसने देखा कि अनेक मन्त्रों का जाननेवाला जालपाद नामक एक महाव्रती कुछ जप कर रहा है। यह धीरे से समीप जा प्रणाम कर बैठ गया और उस तपस्वी ने भी अपना मौनव्रत छोड़ उसका स्वागत किया, और पूछा कि आप ऐसे खिन्न और दुःखित क्यों दीख पड़ते हैं। देवदत्त ने भी अपनी आपत्ति का सब वृत्तान्त सुना दिया कि मैं अपना सब धन जूये में हार इस अवस्था को प्राप्त हुआ हूं। तब उस महाव्रती ने कहा कि हे वत्स! इस सारे संसार में जुआरियों के लिये पर्य्याप्त धन तो कहीं भी नहीं है, परन्तु हां यदि इस आधुनिक विपत्ति से अपना उद्धार किया चाहते हो तो मेरा एक कहना करो। मैंने विद्याधरत्व प्राप्त करने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के लिये सब सामान कर लिया है, हे सुलक्षण! उसकी साधना में आप मेरी कुछ सहायता कीजिये। यदि आप मेरा कहना करेंगे तो मैं भी आपकी यह विपत्ति दूर कर दूंगा। देवदत्त ने उसकी यह बात स्वीकार कर उसके पासही अपनी स्थिति कर ली। दूसरे दिन वह महाव्रती श्मशान में गया और रात के समय वटवृक्ष के नीचे पूजा कर उसने खीर पका, सब दिशाओं में बलि चढ़ाया। पूजन समाप्त कर उसने देवदत्त से जो पासही बैठा था कहा कि 'बस इसी प्रकार आप नित्य पूजन किया करें और यह मन्त्र जपें कि "विद्युत्प्रभे! इमां पूजाम् गृहाण"। मुझे निश्चय है कि हम दोनों का अभिप्राय इससे अवश्यही सिद्ध होगा। इतना समझा वह तपस्वी देवदत्त को साथ ले निज घर को गया। देवदत्त नित्य उसी वटवृक्ष के नीचे जाकर उसी प्रकार जैसा कि उस तपस्वी ने बतलाया था विधिपूर्वक पूजन करने लगा। एक दिन पूजा की समाप्ति होने पर अकस्मात् वह वटवृक्ष बीच से फट गया और उसके अन्दर से एक परम सुन्दरी दिव्या नारी निकल आई और कहने लगी कि 'हे भद्र! मेरे साथ आओ आपको हमारी स्वामिनी बुलाती हैं, यह कह उसने देवदत्त को वृक्ष के अन्दर डाल लिया और फिर वह वृक्ष ज्यों का त्यों हो गया। भीतर पैठ उसने देखा कि एक परमोत्तम दिव्य मणिमय घर है जिसके अन्दर एक सुन्दरी रमणी स्वर्णपर्य्यङ्क पर लेटी है। उसे देख जब लों देवदत्त विचारने लगा कि क्या यह हमलोगों की रूपमयी सिद्धि है तब लों उसने पलङ्ग पर से उठकर उसका आतिथ्यसत्कार किया और अपने समीपही निज पर्य्यङ्क पर बैठने को स्थान दिया। फिर कहने लगी कि हे महाभाग! मैं रत्नवर्ष नामक यक्षपति की कन्या हूं मेरा नाम विद्युत्प्रभा है। इस जालपाद तपस्वी ने मेरी बड़ी आराधना की है सो मैं उसे अर्थ की सिद्धि दूंगी, किन्तु आप मेरे प्राणों के प्रभु हैं। इस कारण मुझ अनुरागिणी का आप पाणिग्रहण करें। उसकी बात को देवदत्त ने अङ्गीकार किया और उन दोनों का विवाह हो गया। कुछ दिन वहां रहने पर विद्युत्प्रभा को गर्भ रह गया और देवदत्त पुनः लौटने की प्रतिज्ञा कर उस महाव्रती के समीप आया और भय के साथ वहां का सारा हाल सच्चा सच्चा सुना गया। तब उस महाव्रती ने अपना अभिप्राय सिद्ध करने के लिये उससे कहा कि हे भद्र! आपने बहुतही उचित काम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किया किन्तु अब उस यक्षयोषिता के पास जाकर उसका पेट फाड़ उस गर्भवाले बालक को ले आइये। इतना कह उसे पूर्वप्रतिज्ञा का स्मरण दिला उस तपस्वी ने देवदत्त को उसकी प्यारी भार्य्या के पास भेजा। वह वहां आ चिन्ता से दुःखित हो रहा था कि विद्युत्प्रभा ने स्वयं उसके पास आकर कहा कि 'हे नाथ! आज आप ऐसे उदास क्यों हैं, क्या जालपाद ने मेरा पेट फाड़ गर्भ निकालने को कहा है? आप कुछ भी विचार न करें इसी क्षण मेरा पेट फाड़ गर्भ को निकाल लेवें, यदि आप ऐसा न करेंगे तो मुझे स्वयं अपना पेट फाड़ गर्भ निकालना पड़ेगा, क्योंकि किसी कारणवश इस कार्य्य का करना अत्यन्त आवश्यक है। इतना कहने पर भी जब देवदत्त की हिम्मत न पड़ी तो विद्युत्प्रभा ने अपने हाथ से निज उदर फाड़ उस बालक को गर्भ से बाहर कर दिया और निज पति के आगे फेंक कर कहा कि इसे ले जाइये, जो कोई इसे पकाकर भोजन करेगा उसे विद्याधरत्व प्राप्त होगा। मैं विद्याधरी होकर भी शाप से यक्ष के घर में जन्मी थी और मेरे उस शाप का उद्धार इसी प्रकार नियत किया गया था, क्योंकि मुझे अपने पूर्वजन्म की कथा स्मरण है। अब मैं अपने धाम को जाती हूं, मेरी आपकी पुनः भेंट उसी स्थान पर होगी, ऐसा कह विद्युत्प्रभा अन्तर्धान हो गई। देवदत्त भी उस गर्भ को लिये हुआ दुःखित चित्त से उसी जालपाद तपस्वी के पास आ पहुँचा और सिद्धि देनेवाली उस वस्तु को उसके आगे रख दिया, ठीकही है—

"आत्मलाभ चेतें नहीं भीर परेहु धीर"। तपस्वी तो मांस पकाने में लगा और देवदत्त से बोला कि तुम जङ्गल में जाकर श्रीभैरवजी का पूजन कर आओ तो तुम भी खाना, मैं तब लों सब प्रस्तुत करता हूं। जब देवदत्त पूजा करके लौटा तो देखता क्या है कि वह तपस्वी सबही मांस खा गया है, उसने पूछा कि क्या तुम मेरा भी भाग खा गये? इतनेही में वह छली विद्याधर हो आकाशमार्ग से उड़ चलता हुआ। जब वह खड्ग धारण कर, हार और केयूर पहिन उड़ गया तो देवदत्त विचारने लगा कि हा! इस पापबुद्धि ने मुझे कैसा भारी धोखा दिया अथवा अत्यन्त सीधापन किसे पराभव नहीं देता? यह तो अब विद्याधर हो गया, मैं इस अपकार का बदला इससे क्योंकर लूं और क्योंकर इसे पाऊँ? मेरी समझ में तो विना वेताल को सिद्ध किये दूसरा कोई उपाय नहीं है, यह विचार वह रात

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के समय श्मशान में पहुँचा । वहां किसी वृक्ष के नीचे वेताल का आवाहन एक मुर्दे में कर उसने उसका पूजन किया और बलि में नरमांस चढ़ा उसे सन्तुष्ट करना चाहा । नरमांस के समाप्त हो जाने पर भी जब वेताल की तृप्ति न हुई और इसे इतना अवकाश भी न मिला कि जाकर कहीं से और ले आवे तो इसने निज शरीर का मांस दे उसे प्रसन्न करना चाहा। इसे छुरा उठाते देख वेताल ने कहा कि हे महासत्व ! तुम ऐसा साहस मत करो मैं तुम पर प्रसन्न हुआ हूं, कहो तुम्हारा क्या अभीष्ट है जिसे मैं इसी दम पूरा कर दूं। वेताल की ऐसी बात सुन उस वीर देवदत्त ने कहा कि तुम मुझे विद्याधरों के निवासस्थान में उस जगह ले चलो जहां छली तपस्वी जालपाद रहता है, वह उन लोगों को धोखा देता है जो उस पर विश्वास करते हैं, मैं उसे इस छल का दण्ड दिया चाहता हूं। वेताल ने बहुत अच्छा कह उसे कन्धे पर चढ़ा लिया और आकाशमार्ग से उड़ता हुआ विद्याधरों की पुरी को जा पहुँचा। वहां देवदत्त ने देखा कि जालपाद एक उत्तम प्रासाद में रत्न के सिंहासन पर बैठा है और विद्याधरों का राजा होने के कारण अहङ्कारमद से उन्मत्त हो रहा है। वह विद्युत्प्रभा को जो विद्याधरी हो गई थी अनेक प्रकार से प्रतारणा कर अपनी भार्य्या बनाया चाहता था किन्तु वह किसी तरह सम्मत न होती थी। यह देखतेही उस युवक ने वेताल के सहित उस पर धावा किया। विद्युत्प्रभा के चकोररूपी नेत्र, उस चन्द्र के दर्शन से अत्यन्तही प्रसन्न हुये। जालपाद पर जो अकस्मात् धावा हुआ तो मारे भय के उसके हाथ से खड्ग भूमि पर गिर पड़ा और वह स्वयं भी अपने आसन से नीचे आ रहा। यद्यपि देवदत्त के हाथ वह खड्ग लग गया तथापि उसने जालपाद को प्राण से नहीं मारा क्योंकि "भीत रिपुहिँ मारहिँ नहिँ वीरा । प्रत्युत दया धरहिँ लखि पीरा ॥" जब वेताल ने उसे मार डालना चाहा तो देवदत्त ने उसे निवारण कर कहा कि 'जाने दो इस कृपण पाखण्ड के मारने से हमें क्या लाभ है । इसे भूलोक में ले जाकर तुम अपनेही यहां रक्खो जिससे यह पापी कापालिक का कापालिकही बना रहे' । देवदत्त के यों कह चुकने के उपरान्त उसी क्षण श्रीकल्याणकारिणी भगवती ने आकाश से उतर उसे प्रत्यक्ष दर्शन दे यह कहा 'कि हे पुत्र ! मैं तेरा सत्वोत्कर्ष देख तुझ पर अत्यन्त प्रसन्न हुई हूं सो मैं तुझे यहां के विद्याधरत्व का राज्य देती हूं ' यों कह उसे विद्या दे श्रीदेवी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जी अन्तर्धान हो गईं। वेताल भी जालपाद को लेकर भूतल में चला आया और अष्टसिद्धि हो जाने के कारण वह वेताल के साथही श्मशान पर पड़ा रहता था। ठीकही है "कबहुँ न फरै पाप की बेला"। उधर देवदत्त प्यारी विद्युत्प्रभा के साथ विद्याधरों का राज्य पा वहां सुखपूर्वक रहने लगा।

इस प्रकार अपने पति शक्तिदेव को यह मनोहर कथा सुना वह मधुरभाषिणी विन्दुरेखा कहने लगी कि 'हे नाथ! योंही कोई कोई काम ऐसे आ पड़ते हैं कि उनके अन्दर कोई भेद छिपा रहता है, इसलिये आप शोक को परित्याग कर मेरा पेट फाड़ गर्भ को निकाल लीजिये। विन्दुरेखा का ऐसा भाषण सुन शक्तिदेव पुनः विचारताही था कि यह बड़ाही नीच कृत्य है, इसमें महा पाप की शङ्का है, कि इतने में यह आकाशवाणी हुई कि 'हे शक्तिदेव! तू निःशङ्क अपनी भार्य्या का पेट फाड़ गर्भ बाहर निकाल ले, ज्योंही तू उसे कण्ठ से पकड़ेगा त्योंही वह तेरे हाथ में खड्ग हो जायगा।' ऐसी आकाशवाणी सुन ज्योंही उसने उसका पेट फाड़ गर्भ को कण्ठ से धरा कि वह तड़प कर उसके हाथही में खड्ग हो गया, मानो सिद्धि का लम्बा केशपास शक्तिदेव के हाथ में आ गया हो। उसी क्षण वह ब्राह्मण विद्याधरत्व को प्राप्त हुआ और विन्दुरेखा अन्तर्धान हो गई। यह देख उसने निज पहिली पत्नी धीवरेन्द्रपुत्री विन्दुमती को सब वृत्तान्त जैसे हुआ था जा सुनाया। उसने कहा कि हे नाथ! अब आप स्पष्ट हाल सुनिये कि—

विद्याधरपति शशिखण्ड की हम तीन कन्यायें अर्थात् तीनों बहिन शापवश कनकपुरी से भूलोक में जन्मीं। एक तो वर्धमान नगर में कनकरेखा थी जिसका शापान्त आप देखही चुके हैं। इस समय वह अपनी कनकपुरी में वर्तमान है। हमारी दूसरी बहिन के शाप का अन्त जिस विचित्र प्रकार से हुआ सो भी आपने निज आंखों से देखा। मैं तीसरी हूं, अब मेरा भी उद्धार शाप से हो गया। हे नाथ! मैं भी आजही अपनी उस कनकपुरी को जाऊँगी, हम तीनों का वह वैद्याधर-शरीर वहीं पड़ा है। हमारी बड़ी बहिन चन्द्रप्रभा उसी पुरी में है, अब आप भी इस खड्ग की सिद्धि के प्रभाव से वहां शीघ्र पहुँचिये। वहां हम चारों भार्य्याओं को हमारे पिताजी से विधिपूर्वक प्राप्त कर, आप उस पुरी का राज्य करेंगे।'

इस प्रकार जब विन्दुमती अपना यथार्थ वृत्तान्त सुना चुकी तो शक्तिदेव भी खड्गबल से आकाशद्वारा उड़ता हुआ उसके साथही साथ कनकपुरी में जा पहुँचा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वहां उसने देखा कि जिन तीन सुन्दरियों को : हैं भिन्न भिन्न पलङ्ग पर उसने पहिले निर्जीव पाया था वे सब अब सजीव हो इधर उधर घूम रही हैं। ज्योंही वह राजभवन में पैठा त्योंही कनकरेखा आदि उसकी वे तीनों भार्य्या में नम्र हो उसके चरणों पर आ गिरीं। उसने यह भी देखा कि वह चौथी बहिन चन्द्रप्रभा मङ्गलोत्सव की सब योजना कर चुकी है और चिरकाल से बिछुड़े हुये अपने प्यारे के मुखचन्द्र की ओर एक टक चकोरदृष्टि से निहार रही है । समस्त नौकर चाकर लोग अपनी नारियों सहित शक्तिदेव के पुनः लौट आने से बड़े प्रसन्न हुये और जब उसने अन्तःपुर में पैर धरा तो चन्द्रप्रभा ने समीप आ यों कहा कि 'हे सुभग ! जिस कनकरेखा नाम राजसुता को आपने वर्धमान नगर में देखा था वही यह चन्द्ररेखा नाम मेरी बहिन है, और उत्स्थलद्वीप में जिस धीवरेन्द्र-पुत्री विन्दुमती से आपने विवाह किया था वही यह शशिरेखा नाम मेरी भगिनी है, और जिस विन्दुरेखा नाम्नी राजसुता को दानव हर ले गया था और जो पीछे आपकी भार्य्या हुई थी वही यह शशिप्रभा नाम मेरी छोटी स्वसा है । अब हे स्वती ! आप हमलोगों के साथ हमारे पिताजी के समीप शीघ्र चलिये और उनके हाथ से हमलोगों को विवाह में विधिपूर्वक प्राप्त करिये ।'

जब चन्द्रप्रभा कामदेव की प्रेरणा से इस प्रकार शीघ्रता और प्रगल्भता से सब हाल कह गई तब शक्तिदेव उन चारों दाराओं के साथ उनके पिता के पास जो कहीं बन में रहते थे मिलने के निमित्त गया । उन सबों ने जाकर निज पिता के चरणों में प्रणाम कर सब वृत्तान्त निवेदन किया; साथही उन्हें भी दिव्य वाणी की प्रेरणा हुई, सो उस विद्याधरेन्द्र ने बड़ी प्रसन्नता के साथ अपनी चारों पुत्रियों को एक साथही शक्तिदेव को दे दिया। तदुपरान्त उसने अपना कनक-पुरीवाला समस्त विशाल राज्य सब ऋद्धि और विद्या के सहित शक्तिदेवही को समर्पण कर दिया और समस्त विद्याधरों में निज धरे हुये शक्तिवेग के नाम से उसे प्रसिद्धि दी। यह भी साथही सूचित कर दिया कि आपको और कोई भी न जीत सकेगा किन्तु महाराज वत्सराज से जो चक्रवर्ती पुत्र होगा वही नरवाहनदत्त आप सब लोगों का एक मात्र स्वामी होगा, उसके आगे अवश्य आप लोगों को नम्रता स्वीकार करनी होगी। यों निज जामाता शक्तिवेग को समझा और सत्कार

कर विद्याधरपति राजा शशिखण्ड ने उसे चारो भार्य्याओं के साथ निज राजधानी कनकपुरी में जाकर राज्य करने के लिये बन से विदा किया।

शक्तिवेग राजा भया कनकपुरी को बेग ।
निज दारन सँग मुद लह्यो भयो रहित उद्वेग ॥
भाखी निज चरितावली शक्तिवेग तेहिँ काल ।
अतिविचित्र मनभाविनी रम्या परम रसाल ॥

फिर उसने वत्सराज से कहा कि हे चन्द्रकुलभूषण महाराज! मैं वही शक्तिवेग हूं जो आपके भाग्यशाली पुत्र का जन्म सुन उनके दर्शनों से अपने नेत्रों को सुफल करने के लिये आया हूं क्योंकि येही हम विद्याधरों के भविष्य महाराजाधिराज हैं। इस प्रकार मैंने मनुष्य होकर भी श्रीशङ्करभगवान् के अनुग्रह से विद्याधर की पदवी को प्राप्त किया है। आपने जो कृपाकर हमारे भविष्य चक्रवर्ती प्रभु का, दर्शन मुझे करा दिया उससे मैं परम अनुगृहीत हुआ। अब मैं अपने धाम को जाता हूं; ईश्वर आपके पुत्र को सदा प्रसन्न रक्खें और उनका कल्याण करें।

यौं कहि दोउ कर जोरि कै मांगि विदा तेहि काल ।
शक्तिवेग नभ में उड्यो काहि राजहिँ निज हाल ॥
दोउ देवी अरु साचिव सँग वत्सराज गुणखान ।
निजसुत को अस भाग्य लखि पायो मोद महान ॥



॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

मदनमञ्चुका नाम छठवां लम्बक।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालबिनैबल पाई।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई॥
प्रेम-समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस-दुहाई।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ो बिबुधाई॥

प्रथम तरङ्ग।

अध ऊरध निज सीस को करि करि बारम्बार।
विघ्नराशि भय देत जनु जयति गिरीशकुमार॥
गिरितनया-परिरम्भ तें शम्भुशरीर ललाम।
पुलकित नहिं शरघात तें कियौ कण्टकित काम॥
ताहि कुसुमायुध वीर को नमन करहुँ शतवार।
जाकी शक्ति अपार को देव न पावहिँ पार॥

अब उस दिव्य चरित्र को सुनो, जिसे नरवाहनदत्त ने विद्याधरों का ऐश्वर्य्य पाने के उपरान्त, भार्य्या सहित सप्तर्षियों से प्रसङ्गवश पूछे जाने पर स्वयं कहा था।

निज पिता वत्सराज से प्रतिपालित होकर नरवाहनदत्त ने, आठवां साल व्यतीत कर नवें वर्ष में पैर रक्खा। राजकुमार अनेक प्रकार की विद्या में शिक्षा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाते थे और मन्त्रीपुत्रों के साथ उद्यान में क्रीड़ा किया करते थे । रानी वासवदत्ता तथा रानी पद्मावती दोनों एकही सा स्नेह उस पुत्र पर रखती और अत्यन्त प्रेम के साथ रात दिन उसके लालन पालन में लगी रहतीं थीं । वह अपने शरीर और धनुष दोनों से शोभायमान हो रहे थे, ये दोनोंही गुण से नम्र तथा सद्वंश से उत्पन्न थे और धीरे धीरे भरते जाते थे । महाराज वत्सराज की यह इच्छा हो रही थी कि राजकुमार का विवाह जल्दी किया जाय जिसमें फलसम्पत्ति की प्राप्ति शीघ्र हो । इस समय कथा सम्बन्ध में जो हुआ सो सुनो—

वितस्ता नदी के तट पर तक्षशिला नाम्नी कोई पुरी थी, उसके ऊँचे ऊँचे भवनों की परछाहीं जो जल में पड़ती थी तो यही जान पड़ता था कि, मानो नीचे से चलकर पाताल नगरी उस पुरी की शोभा देखने आई है । वहां परम सौगत (बौद्धधर्मावलम्बी) राजा कलिङ्गदत्त अपनी समग्र जिनभक्त प्रजा का जो तारापति के उपासक थे, शासन भली प्रकार किया करते थे। वह पुरी अनेक ऊँचे शिखरवाले बौद्धमन्दिरों से शोभित क्या हो रही थी मानो अपने समान किसी को न पाकर मद से अपना सींगदार सिर उठाये थी । महाराज निज प्रजा का केवल पालनही पिता की नाईं न करते थे किन्तु गुरु की नाईं उन्हें धार्मिक शिक्षा भी दिया करते थे । उसी नगरी में वितस्तादत्त नामक कोई बौद्धधर्मावलम्बी धनी वणिक् निवास करता था जो निज धर्म के भिक्षुकों की सेवा में रात दिन लगा रहता । उसके युवा पुत्र का नाम रत्नदत्त था जो सदा अपने पिता को अधर्म्मी और पापी कहकर उसकी निन्दा किया करता था । जब उसके पिता ने पूछा कि हे पुत्र ! तू वृथाही मेरी निन्दा क्यों किया करता है, तो उस वणिक्-पुत्र ने असूया के साथ उत्तर दिया कि हे तात ! आप तीनों वेदों के धर्म को परित्याग कर अधर्म का सेवन करते और ब्राह्मणों को छोड़कर सदा श्रमणों के पूजन में तत्पर रहते हैं । आपको इन बौद्ध नियमों से क्या प्रयोजन है ? जिन्हें सब अधम जाति के लोग अपने विहार के लिये प्रसन्नता से स्वीकार कर लेते हैं, क्योंकि स्नानादि का कोई प्रतिबन्ध उस धर्म्म में नहीं है, जब भूख लगी भोजन कर लिया, जिन्हें शिखा केशादि का कोई विचार नहीं और जो केवल एक कौपीन लगाये चैन से पड़े रहते हैं । उनका क्या धर्म्म है ! यह सुन उस वणिक् ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहा हे पुत्र! धर्म्म का कुछ एकही रूप नहीं है, एकदेशीय धर्म्म और है तथा सार्वलौकिक धर्म्म दूसरा है। रागद्वेष का परित्याग करनाही यथार्थ ब्राह्मणधर्म्म कहाता है, जहां सब भूतों के साथ सत्यता और दया का वर्ताव होता हो, न कि आपस में वृथाही झगड़ा फैलाया जाय। फिर इस धर्म्म को, जिसमें सबही प्राणी मात्र को अभय दिया जाता है तुझे दूषण न देना चाहिये। परोपकार करने में तो किसी प्रकार का विवादही नहीं है, मेरा कहना यही है कि भूतमात्र को अभयदान देने से बढ़कर दूसरा उपकार और क्या है? अतएव हे वत्स! यदि इस मोक्ष देनेवाले धर्म्म में, जिसमें हिंसा न करनाही प्रधान कर्तव्य है, मेरी इतनी प्रीति है तो तूही कह इसमें मैं क्या अधर्म्म करता हूं? इस प्रकार समझाने पर भी वणिक्पुत्र ने हठपूर्वक उस बात को स्वीकार न किया प्रत्युत उसकी अधिकतर निन्दा करने लगा। तब उसके पिता ने धर्म्म के अनुशासन करनेवाले राजा कलिङ्गदत्त के पास खेद के साथ जाकर सब वृत्तान्त ज्यों का त्यों निवेदन किया। राजा ने उस वणिक्पुत्र को युक्ति से अपने पास बुलवा भेजा और झूठेही कोप प्रकाश कर बधक से यों कहा कि मैंने सुना है कि यह वणिक्पुत्र बड़ा पापी और बुरे कामों का करनेवाला है, बस इसी क्षण इस देश के कलङ्क को बाहर ले जाकर जान से मार डालो। जब राजा की ऐसी आज्ञा हुई तो पिता ने हाथ जोड़ प्रार्थना की, कि धर्म्मावतार! इस बेर इसका अपराध क्षमा किया जाय। यदि पुनः ऐसा आचरण करेगा तो आप स्वामी हैं जो उचित दण्ड समझियेगा दीजियेगा। यह सुन महाराज ने मानो दया से यह आज्ञा दी कि 'अच्छा दो मास तक का इसे समय दिया जाय और यह अपने पिता के पास रहकर धर्म्म की रीति सीखे और पुनः दो महीने के उपरान्त हमारे समीप लाया जावे।' जब वह वणिक् अपने पुत्र को निज घर पर ले आया तो वह लड़का मारे भय के व्याकुल हो विचारने लगा कि मैंने राजा का तो कोई भी अपराध नहीं किया, दो मास बीतने पर अकारणही मेरी मृत्यु होगी। इसी भय से उसे रात को नींद न आती और भूख मर जाने से क्रमशः उसका भोजन भी घटने लगा जिसके कारण वह प्रति दिन शरीर से दुबला होता जाता था। दो महीने बीतने पर पुनः उसका पिता उसे राजा के सन्मुख ले गया। वह तन से क्षीण और रङ्ग में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पीला पड़ रहा था मानो बरसों का रोगी हो। राजा ने उसकी ऐसी दशा देख पूछा कि तू इतना दुर्बल और कृश क्यों हो रहा है? क्या हमने तेरा भोजन बन्द कर दिया था? यह सुन वणिक्पुत्र ने काँपते हुये हाथ जोड़ उत्तर दिया कि, महाराज! मैं तो मारे भय के अपने को भी भूल गया खाने पीने की कौन कहे। जिस दिन से आपने मेरे बध की आज्ञा दी है उसी दिन से मैं प्रति क्षण आनेवाली मृत्यु का ध्यान किया करता हूं, एक पल भी मेरे चित्त में दूसरी बात नहीं आती। जब उस वणिक्पुत्र ने यों उत्तर दिया तो महाराज ने उससे कहा कि हे वत्स! इसी युक्ति से मैंने तेरेही द्वारा तुझे समझा दिया कि मृत्यु का भय कैसा भारी है। इस प्रकार सबही जन्तुओं को अपने अपने प्राण का भय होता है, अतएव अब तूही बता कि जीवरक्षा से बढ़कर संसार में और कौन धर्म्म हो सकता है? सो हमने तेरे धर्म्म और मोक्ष के लिये यह दिखलाया है कि जिस बुद्धिमान् नर को मृत्यु का भय रहता है वही मोक्ष के लिये यत्न करता है, अतएव अब तू अपने पिता की निन्दा इस धर्म्म के अवलम्बन करने के कारण मत कीजियो। राजा का ऐसा बचन सुन, नम्र हो, उस वणिक्पुत्र ने निवेदन किया कि हे धर्म्मावतार! आपने धर्म्म का उपदेश देकर मुझे कृतकृत्य कर दिया अब मुझे मोक्ष की इच्छा होती है, कृपाकर हे प्रभो! उसका भी उपदेश दे मुझे अनुगृहीत कीजिये। जिस समय उस वणिक्पुत्र ने महाराज से यों निवेदन किया उस समय नगर में एक मेला था, सो महाराज ने एक कटोरा तेल से भरकर उसके हाथ में दिया और कहा कि इस पात्र को हाथ में लेकर सारे नगर में घूम आ, किन्तु इसमें से एक विन्दु भी तेल गिरने न पावे। यदि एक भी बून्द तेल इसमें से गिरेगा तो ये लोग जो खड्ग लेकर तेरे साथ भेजे जाते हैं उसी दम तुझे काट डालेंगे। ऐसा कह हाथ में तेल का भरा हुआ कटोरा दे उस वणिक्पुत्र को वहां से जाने की आज्ञा दी गई और नङ्गी तलवार लिये हुये चार मनुष्य उसके पीछे पीछे कर दिये गये। वह वणिक्पुत्र बड़े कष्टों से तेल का छलकना बचाता हुआ किसी किसी प्रकार सारी नगरी घूम कर राजा के समीप आ उपस्थित हुआ। महाराज ने जब देखा कि वह विना एक भी बुन्द गिराये तेल का कटोरा ज्यों का त्यों लिये आन पहुँचा तो उससे पूछा कि जब तुम नगर में कटोरा लिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आज भ्रमण करते थे तो किस किस को देखा ? यह सुन उस वणिक्पुत्र ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे देव ! मैंने तो न कुछ सुना और न किसी को देखा। मैं तो तनमन से इसी कटोरे पर ध्यान लगाये सारी नगरी घूम आया, इसी भय से कि कहीं एक भी बुन्द बाहर टपका कि खड्ग मेरे मस्तक पर गिरा। उसकी यह बात सुन महाराज ने कहा कि तेरी दृष्टि तो तेल पर लगी थी तू देखता क्या ? इसी प्रकार के ध्यानद्वारा तन मन से एक होकर तू धर्म्म का अनुचरण कर क्योंकि जो बाहिरी वृत्तियों को रोक कर एकाग्रचित्त होता है उसी को तत्व दिखाई देता है। जब तत्व देख लिया तो कर्मजाल में नहीं फँसता, सो यही मोक्ष का उपदेश है जो हमने तुझे संक्षेप में समझा दिया। महाराज का ऐसा कहना सुन वह वणिक्पुत्र उनके चरणों में प्रणाम कर कृतार्थ हो अपने पिता के साथ प्रसन्नतापूर्वक निज घर को चला गया।

इस प्रकार प्रजा का अनुशासन करनेवाले राजा कलिङ्गदत्त के एक समान कुलोचित रानी थी जिसका नाम तारादत्ता था। वे उस रीतिमत्ता और सुवृत्ता रानी से ऐसी शोभा पाते थे जैसे कोई कवि वैसी निज वाणी से शोभित होता है। वह अपने गुणों के कारण महाराज को बहुतही प्यारी थी और चन्द्रमा की चांदिनी की नाईं क्षण भर भी उनसे न्यारी न होती थी। महाराज अपनी रानी के संग ऐसे सुखी रहते थे जैसे इन्द्र भगवान् अपनी प्यारी शची के साथ स्वर्ग में रहते हैं, उनके दिन बड़ेही आनन्द से कटते थे।

जिस समय की हम कथा कह रहे हैं उस समय इन्द्रभगवान् के यहां अमरावती में किसी विशेष कारण से बड़ा उत्सव रचा गया था। उस महोत्सव में नाचने के लिये स्वर्ग की सभी अप्सरायें एकत्र हुई थीं किन्तु सुरभिदत्ता नामक एक प्रसिद्ध अप्सरा वहां दिखाई न पड़ी। इन्द्र भगवान् ने ध्यान करके जान लिया कि वह किसी विद्याधर के साथ नन्दन वन में एकान्तविहार कर रही है। यह देख शक्र क्रुद्ध हो विचारने लगे कि "अहो ! ये दोनों मदनान्ध बड़े दुराचारी हैं, एक तो हमलोगों को भूल स्वतन्त्रों की नाईं मनमाना आचरण करती है और दूसरा देवभूमि में पैठ ऐसी ढीठता का काम कर रहा है ! अथवा उस बिचारे विद्याधर का क्या दोष है, उसे तो यही दुष्टा अपने रूपजाल में फँसा यहां खींच लाई है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुन्दरी नायिका तो अपने ऊँचे कुचरूपी तटों के अन्तर बहनेवाली सौन्दर्य्यरूपी नदी में, निज इन्द्रियों को वश में रखनेवाले महात्माओं को भी बहा ले जाती है। क्या पूर्व समय में जिस तिलोत्तमा को ब्रह्मा ने सब उत्तम वस्तुओं में से तिल तिल भर लेकर रचा था उसे देख शम्भु भगवान् का हृदय नहीं डोल गया था ? अथवा मेनका को देखतेही क्या विश्वामित्रजी ने तप नहीं परित्याग कर दिया, वा शर्मिष्ठा के रूप से मोहित होकर क्या ययाति ने बुढ़ौती नहीं पाई ? इसलिये इस विद्याधर युवक का कोई अपराध नहीं है क्योंकि यह उस अप्सरा के रूप से छला गया है जो अपने सौन्दर्य्य से तीनों लोक को डमाडोल कर सकती है। बस दोष इसी दुश्चारिणी अप्सरा का है जो देवों को छोड़ इस विद्याधर को नन्दनवन में ले आई है। ऐसा विचार उस इन्द्र ने, जो स्वयं किसी समय अहल्या पर आसक्त हो गया था, विद्याधरकुमार को छोड़ उस अप्सरा को यह शाप दिया कि "हे पापिष्ठे ! जा तू मानुषी योनि में जन्म ले, और वहां एक ऐसी कन्या को जो गर्भ से उत्पन्न न हो प्राप्त करने, तथा देवों की कार्य्यसिद्धि करने के उपरान्त, तू पुनः स्वर्ग में लौट आवेगी" ।

इसी अन्तर में राजा कलिङ्गदत्त की भार्य्या रानी तारादत्ता को तक्षशिलापुरी में गर्भ रहा, और इन्द्र के शाप से गिरी हुई वही सुरभिदत्ता नाम्नी अप्सरा उसी गर्भ में, रानी के देहसौन्दर्य्य को बढ़ाती हुई, आई । रानी तारादत्ता ने स्वप्न में देखा कि आकाश से गिरी हुई किसी ज्वाला ने उनके उदर में प्रवेश किया। प्रातःकाल उन्होंने आश्चर्य्य के साथ उस स्वप्न का वर्णन अपने पति से किया और राजा कलिङ्गदत्त ने भी प्रसन्न हो उनसे कहा कि हे देवि ! प्रायः ऐसा होता है कि स्वर्गलोकनिवासी शाप के कारण मनुष्ययोनि में जन्म लेते हैं, सो मैं जानता हूं कि कोई देवजातीय व्यक्ति तुम्हारे गर्भ में आया है। क्योंकि विचित्र और उत्तम तथा निकृष्ट कर्म के बन्धन में पड़कर सभी प्राणी इस त्रिजगत् में शुभाशुभ फल पाने के लिये घूमा करते हैं। महाराज का ऐसा कहना सुन प्रसङ्ग से रानी ने कहा कि हे नाथ ! यह सत्य है कि कर्म्म बड़ा बलवान् है और वही शुभाशुभ फलों का देनेवाला है। इसके प्रमाण में मैंने जो कुछ सुना है सो मैं आपसे कहती हूं सुनिये।

प्राचीन समय में कोशल नगर के स्वामी कोई धर्म्मदत्त नामक राजा हो गये

हैं। निज पति को देवतातुल्य माननेवाली उनकी महिषी का नाम नागश्री था, वह भूलोक की अरुन्धती कहलाती थी और उन्हीं की नाईं सती स्त्रियों में भूषण मानी जाती थी। कुछ काल के उपरान्त हे नरनाथ! मैंने उनके घर में सुतारूप से जन्म ग्रहण किया। जब मैं बहुत छोटी थी तो एक दिन मेरी जननी को अकस्मात् अपने पूर्वजन्म की कथा स्मरण हो आई, सो उन्होंने निज पति अर्थात् मेरे पिताजी से यों निवेदन किया कि हे नाथ! आज अचानचक मुझे अपने पूर्व जन्म की कथा याद आ गई है, यदि उसे आपसे न कहूं तो प्रीति का निर्वाह नहीं होता और यदि कहती हूं तो मेरी मृत्यु हो जायगी। ऐसा कहा है कि यदि पूर्वजन्म की स्मृति सहसा आ जावे तो उसके कहने से कहनेवाले की मृत्यु हो जाती है, इसलिये हे देव! मैं इस समय बड़े असमञ्जस में पड़ी हूं कि अब क्या करूँ। निज भार्य्या का ऐसा भाषण सुन, महाराज धर्म्मदत्त ने कहा कि हे प्रिये! तुम्हारे साथही साथ मुझे भी अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण हो आया। सो तुम मुझे सुनाओ और मैं तुमसे अपना पूर्वजन्म का वृत्तान्त कह जाऊँ, जो होना होगा सो होगा, भवितव्यता को कौन पलट सकता है! राजा का कहना सुन, रानी ने कहा कि हे नाथ! यदि ऐसाही है तो सुनिये मैं कहती हूं।

पूर्वजन्म में इसी नगर के किसी माधव नाम ब्राह्मण के घर में मैं एक सुचरित्रा दासी थी, मेरे पति का नाम देवदास था, वह भी किसी बनिये के घर में काम काज किया करते थे और स्वभाव के सीधे तथा सुचरित्र थे। हम दोनों अपने २ स्वामी के घर की सेवा टहल कर पकापकाया अन्न ले आते और उसी को खा अपने योग्य एक छोटी सी झोपड़ी में रह अपना दिन व्यतीत करते थे। हमारी उस रामझोपड़िया में केवल तीन जोड़े थे, एक सुराही एक घड़ा, एक बढ़नी एक संझा, और एक मैं तथा मेरे पति। हमारे घर में किसी प्रकार का कलह न था, देव पितृ और अतिथि का भाग देने के उपरान्त जो कुछ बचता उसी को खा पी के सन्तोष कर हमलोग सुखी हो सो रहते थे।

एक एक कपड़े से अधिक यदि हमारे पास कभी हो जाता तो हमलोग उसे किसी दीन दुखिया को दे देते थे। समय के फेर से एक बेर वहां बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा इस कारण सेवकाई में जो अन्न हमें नित्य मिलता था उसमें कमी होने

.CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लगी। भूख के मारे हम दोनों अत्यन्त दुर्बल और कृश हो गये किन्तु किसी २ प्रकार सांस लेते और जीते थे। एक दिन ज्योंही भोजन करने बैठे कि कोई थका हुआ भूखा ब्राह्मण अतिथि आ गया। हम दोनों ने अपना कुल भोजन, प्राण-सङ्कट होने पर भी जो कुछ अपने पास था सब का सब उस ब्राह्मण के आगे रख दिया और वह भी भोजन कर हमें आशीर्वाद दे चला गया। उसके जातेही मेरे पति के प्राण मानो इस कारण क्रुद्ध हो निकल गये कि उन्होंने उनकी (निज प्राणों की) अपेक्षा अतिथि का अधिक आदर किया। तदुपरान्त मैं चिता का आयोजन कर निज पति के साथ अग्नि में प्रवेश कर गई और मेरी सारी विपत्तियों का अन्त हो गया। उस पुण्य के प्रभाव से मैं राजघराने में उत्पन्न हो आप की महिषी हुई, क्योंकि सुकृतरूपी वृक्ष में जो अचिन्त्य फल सद्यः उत्पन्न होता है उसे कौन कह सकता है।

इस प्रकार जब रानी ने अपना वृत्तान्त सुनाया तो मेरे पिता राजा धर्मदत्त कहने लगे कि हे प्रिये! मैं भी उसी बनिये का सेवक देवदास हूं जो पूर्वजन्म में तुम्हारा पति था और आजही मुझे भी अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण हो आया है। इस प्रकार अपना पूर्व परिचय दे मेरे पिता खिन्न होने पर भी मेरी माता के संग प्रसन्नता के साथ स्वर्गधाम को सिधारे। जब मैं अकेली रह गई तो मेरी मांसी मेरा पालन करने के निमित्त मुझे अपने घर उठा लाई। कुछ सयानी होने पर एक दिन एक अतिथि मुनि, मेरी मांसी के घर आये और उनने मुनि जी की सेवा टहल करने के लिये मुझही को आज्ञा दी और मैंने भी यत्नपूर्वक उनकी ऐसी आराधना की जैसा किसी समय कुन्ती ने दुर्वासा ऋषि की करी थी, उन्हीं के बरदान से हे नाथ! मैंने आप सरीखे धार्मिक पति को पाया है। कहने का तात्पर्य्य यह कि इसी प्रकार धर्म्म से कल्याण होता है जैसे मेरे माता पिता राजा के घर जन्म पाकर अपने पूर्व वृत्तान्त के भी ज्ञाता हुये। अपनी भार्य्या रानी तारादत्ता का ऐसा बचन सुन, परम धार्मिक राजा कलिङ्गदत्त यों कहने लगे कि हे प्रिये! तुम्हारा कहना यथार्थ है, यदि थोड़ा सा धर्म्मकार्य्य भी विधिपूर्वक किया जाय तो बड़े फल का देनेवाला होता है, सुनो मैं तुम्हें सात ब्राह्मणों की एक प्राचीन कथा सुनाता हूं—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुण्डिन नामक पुर में किसी उपाध्याय के यहां सात ब्राह्मणपुत्र विद्या पढ़ते थे। एक समय भारी दुर्भिक्ष जो पड़ा तो गुरुजी ने अपने सातो शिष्यों को अपने श्वसुर के पास भेजा कि वे लोग उनकी गोशाला में से एक गऊ भरपूर दूध देने वाली मांग लावैं। वे शिष्य लोग भी भूख से दुःखित चलते चलते विदेशनिवासी निज गुरु के ससुर के पास पहुंचे, और जैसा उन्हें कह दिया गया था उन्होंने एक गऊ उनसे मांगी। उनने एक ऐसी गऊ उन्हें दी कि जिससे भली प्रकार वृत्ति चल सकती थी, किन्तु उन भूखों को खाने पीने के लिये कुछ भी न दिया। वे लोग गऊ को लेकर जो चले, तो आधे मार्ग में भूख के मारे अत्यन्त व्याकुल हो पृथ्वी पर गिर पड़े, और विचारने लगे कि उपाध्यायजी का घर अभी बड़ी दूर है, और इस दूरदेश में हमलोगों पर यह आपत्ति आ पड़ी है, अन्न सर्वत्र दुर्लभ हो रहा है, सो अब हमलोगों के बचने की कौन आशा है। यह गौ भी इस जङ्गल में जहां जल, घास और मनुष्य का अभाव हो रहा है, मरीही समान है, सो हमारे गुरुजी की कुछ भी कार्य्यसिद्धि इससे न होगी। अतएव इसके मांस से अपने प्राण बचाकर जो कुछ बचै उससे गुरुजी की भी रक्षा करैं क्योंकि यह आपत्ति का समय है। आपस में ऐसी सलाह कर उन सातो ब्रह्मचारियों ने गऊ को बलि बना शास्त्रोक्त-विधान से उसको मार डाला, और देव तथा पितरों को समर्पण कर विधिवत् उस मांस को खाया, और जो कुछ शेष बचा उसे लिये हुये अपने उपाध्यायजी के पास आ पहुंचे। प्रणाम करके सब वृत्तान्त को सत्यही सत्य गुरु जी से निवेदन किया, और वे उनके अपराध को भूल-उनके सत्यभाषण के कारण सन्तुष्ट हुये। सात दिनों के उपरान्त वे सब दुर्भिक्ष के कारण मर गये और सत्य बोलने के प्रभाव से पुनः उत्पन्न होने पर उन्हें अपने पूर्वजन्म की कथा स्मरण रही। इस प्रकार छोटे से पुण्य का बीज भी सतसङ्कल्परूपी जल से सींचा जाकर किसानों के सुबीज की नाईं उत्तम फल देता है और हे देवि! वही यदि दुष्टसङ्कल्परूपी जल से सींचा जाय तो अनिष्ट फल उत्पन्न करता है। इसी विषय की मैं एक दूसरी भी कथा कहता हूं सो सुनो—

एक समय की बात है कि, श्रीगङ्गाजी के तट पर, दो व्यक्तियों ने साथही निराहार तपस्या आरम्भ की, उनमें एक ब्राह्मण और दूसरा चाण्डाल था। ब्रा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ह्मण भूख के मारे बहुत व्याकुल हुआ, उसने देखा कि बहुत से मछुये वहां आकर मछली पकड़ पकड़ कर आनन्द से खा रहे हैं, वह मन में विचारने लगा कि, अहो! ये दासीपुत्र धीवर धन्य हैं जो नित्यही मछलियां धर के मनमानता खाते हैं। वह दूसरा जो चाण्डाल था धीवरों को देख विचारने लगा कि धिक्कार है इन मांस खानेवालों को जो दूसरों के प्राण मारते हैं, मैं यहां बैठ इन दुष्टों का मुंह क्यों देखूं। ऐसा विचार आंखें बन्द कर वह अपने ध्यान में लगा। कुछ दिनों के उपरान्त ब्राह्मण और चाण्डाल दोनों निराहार रहने के कारण मर गये, ब्राह्मण को तो तटवर्ती कुत्ते खा गये और चाण्डाल गङ्गाजी के प्रवाह में बह गया। दूसरे जन्म में वह ब्राह्मण निज चित्तवृत्ति के चञ्चल होने के कारण धीवरों के यहां उत्पन्न हुआ, किन्तु तीर्थस्थान में प्राणपरित्याग करने के प्रभाव से उसे अपने पूर्वजन्म की कथा स्मरण रही। वह चाण्डालभी जो अपनी चित्तवृत्ति का निरोध कर सका था वहीं गङ्गातट पर एक राजा के घर में उत्पन्न हुआ और उसे भी अपने पूर्वजन्म के वृत्तान्त विदित रहे। इस प्रकार दोनोंही इस संसार में उत्पन्न हुये और दोनोंही को अपना २ पूर्वजन्म स्मरण रहा, किन्तु एक धीवर होकर दुःख पाता और दूसरा राजकुल में होकर सुख भोगता रहा।

सो हे प्रिये! धर्मरूपी वृक्ष की जड़ ऐसी है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि मन की शुद्धि वा अशुद्धि के अनुसार उसमें भले और बुरे फल लगते हैं। इतनी कथा रानी तारादत्ता को सुनाकर, राजा कलिङ्गदत्त पुनः प्रसङ्ग से कहने लगे कि हे देवि! जो काम वीरता और साहस के साथ किया जाता है वह अवश्य उत्तम फल देता है क्योंकि—"संपद बारहिँ अनुसरत वह ताही के साथ। जो धरि साहस हिये में कारजहिँ डारत हाथ"॥ सुनो मैं तुम्हें एक विचित्र कथा सुनाता हूं।

अवन्तीदेश में उज्जयिनी नाम एक पुरी है, जो जगत् में अपने श्वेत और ऊँचे भवनों के लिये प्रसिद्ध है, ऐसा जान पड़ता था कि महाकाल शम्भुभगवान् के वहां निवास करने से मानो उनकी सेवा के निमित्त कैलास पर्वत के शिखर वहां चले आये हों। वह नगरी समुद्र की नाईं शोभित हो रही थी क्योंकि वहां भी चक्रवर्ती पानीय (राजा) थे, वहां भी अनेक वाहिनी (नदी और सेना) का

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रवेश होता था, जैसे समुद्र में अनेक पर्वतों ने आश्रय लिया था वैसेही अनेक देशदेशान्तरों के राजा लोग वहां आकर शरण पाते थे। उस पुरी के स्वामी राजा सिंहविक्रम अपने नाम को सार्थक करते थे, क्योंकि कोई भी वैरीरूपी मृग उनके सन्मुख न ठहरता था। उनके प्रताप से भयभीत होकर कभी भी उनसे समर में कोई न लड़ा अतएव उन्हें सदा इस बात का खेदही रहता कि अपने वीर्य्य तथा शस्त्र का बल वे किसे दिखावें। उनका अभिप्राय समझ एक दिन उनके अमर-गुप्त नामक मन्त्री ने प्रसङ्ग से यह कहा कि हे देव! निज भुजाबल तथा शस्त्रविद्या के मद से शत्रु को खोज करनेवाले राजा को वैरी का मिलना कोई कठिन बात नहीं है। देखिये प्राचीन समय में वाणासुर, निज सहस्र भुजाओं के बल से मद-मत्त हो, हर भगवान् को प्रसन्न कर तबतक अपने योग्य शत्रु मांगता रहा जबतक उसे विष्णु भगवान् सरीखे वैरी न मिले जिन्होंने उसकी सब भुजायें रण में काट उसे सीधा बना दिया। इस कारण आप युद्ध के लिये वैरी की खोज मत करिये क्योंकि बलवान् शत्रु बुरा होता है। हां यदि अपने शस्त्र की शिक्षा और अपने वीर्य्य के कौशल दिखाने की इच्छा आपको हो तो जङ्गल में चलकर उसे मृगया में दिखाइये, क्योंकि वही उसके दिखाने के लिये उचित स्थान है। और क्योंकि राजाओं को शारीरिक परिश्रम कुछ भी नहीं पड़ता, इसलिये मृगया उनके लिये उपयुक्त समझा गया है क्योंकि उसमें दौड़ धूप करना पड़ता है, किसी से बैठे बैठाये युद्ध करना उनको शोभा नहीं देता। फिर ये जङ्गली व्याघ्रादि जन्तु बड़े दुष्ट होते हैं वे चाहते हैं कि पृथिवी को शून्य कर दें, अतएव राजाओं द्वारा उनका मारा जाना ठीकही है, इसी कारण राजाओं को आखेट खेलना चाहिये। किन्तु मृगया का व्यसनी होना उचित नहीं है क्योंकि उसी में रात दिन लिप्त होने से पाण्डु आदि राजा मारे पड़े।

इस प्रकार जब उस बुद्धिमान् मन्त्री ने समझाया तो राजा विक्रमसिंह ने बहुत अच्छा कह उसकी बात अङ्गीकार की। दूसरे दिन राजा नगरी से बाहर निकल मृगया के हेतु ऐसे बन में पहुँचे जहां चारो ओर घोड़े, पैदल और कुत्तों से भूमि भर रही थी। बड़े बड़े जाल दिशाओं में बांध दिये गये थे और जहां आखेटवालों के कोलाहल से आकाश गूंज रहा था।

एक हाथी की पीठ पर चढ़ के महाराज शस्त्रों से सज आगे बढ़े, देखते क्या हैं कि एक निराले देवमन्दिर में दो व्यक्ति बैठे धीरे धीरे कुछ सलाह कर रहे हैं, ये लोग क्या विचार करते हैं ऐसा सोचते हुये दूरही से राजा मृगया खेलने चले गये। वहां खड्ग खींच चिरकाल तक व्याघ्र, सिंह और हाथियों का आखेट करते रहे, जबतक उनका सन्तोष न हुआ। उन्मत्त हाथियों के मारनेवाले सिंहों को जिनके नखों में गजमुक्तायें फँसी थीं, मार मार के राजा ने सारी बनभूमि मोतियों से पाट दी। आखेट खेलते खेलते जब राजा के सब सेवक थक गये, और उनके धनुष की डोरी भी शिथिल हो गई तो वे उज्जयिनी की ओर लौटे। देखा कि वे दोनों पुरुष जो जाती बेर दीख पड़े थे अब लों उसी देवमन्दिर में बैठे बातें कर रहे हैं। महाराज ने विचारा कि ये दोनों कौन हैं जो इतनी देर लों बैठे न जाने क्या सलाह कर रहे हैं, निस्सन्देह ये किसी के भेजे हुये भेदिये होंगे जो अब लों एकान्त में बैठे कुछ गुप्त मन्त्रणा कर रहे हैं। सो महाराज ने प्रतीहारों को भेज उन दोनों को धरवा मँगाया। दूसरे दिन राजसभा में वे दोनों लाये गये, महाराज ने पूछा कि तुम लोग कौन हो? और एकान्त में बैठे चिरकाल तक क्या सलाह कर रहे थे? इस प्रकार पूछे जाने पर उन दोनों युवकों में से एक ने हाथ जोड़ यों निवेदन किया कि हे धर्म्मावतार! यदि मुझे अभयदान दिया जाय, तो मैं सत्य सत्य सब हाल निवेदन कर दूं। महाराज से अभय दान पा उसने यों कहना आरम्भ किया कि,—

हे देव! आपकी इस पुरी में करभक नाम कोई ब्राह्मण हो गये हैं। मैं जो श्रीमान् के सन्मुख खड़ा हूं उन्हीं वेदविद्याविशारद पण्डितजी का पुत्र हूं जिसे उन्होंने वीर सुत पाने की इच्छा से अग्निदेव की आराधना कर प्राप्त किया था। पिताजी के स्वर्गवास होने पर जब मेरी माता भी उनके साथही पधारीं तो अनाथ हो जाने के कारण पढ़ा लिखा होने पर भी मैंने अपना मार्ग परित्याग कर दिया और जूआ खेलने तथा शस्त्रविद्या में अभ्यास करने लगा। बिना गुरुजन की ताड़ना के बाल्यपन में कौन नहीं उच्छृङ्खल हो जाता! इसी प्रकार लड़कपन बिता, भुजाबल से उन्मत्त हो, मैं एक दिन बाण चलाता हुआ जङ्गल में जा निकला। इतनेही में उसी मार्ग से एक दुलहिन की पालकी निकली जिसके साथ उसके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पति के अतिरिक्त बहुत से नौकर चाकर भी थे। अचानचक एक हाथी, पैर की शृङ्खला तुड़ा किसी ओर से दौड़ता हुआ आया और उसी पालकी पर झपटा। उसके भय से कहारों ने पालकी पटक दी, और उसके सभी नौकर चाकर जो निरे कायर थे उसके भयभीत पति के साथ इधर उधर भाग गये। यह देख मेरे रोयें खड़े हो गये और मैं विचारने लगा कि हा! देखो ये दुष्ट कायर क्योंकर इस विचारी को अकेली छोड़ अपनी जान लेकर भागे हैं। अस्तु मैं इस गरीबनी सहायहीना की रक्षा इस उन्मत्त हाथी से करूँगा, क्योंकि ऐसे जीवन वा पौरुष से क्या लाभ है जो आपद्ग्रस्तों की सहायता में न लगाया जाय! यह विचार मैं ललकारता हुआ उस हाथी की ओर लपका और वह उस स्त्री को छोड़ मेरेही पर टूटा। मैं आगे आगे दौड़ता और उसे ललकारता हुआ दूर एक ओर को ले गया और वह विचारी दुलहिन उसके डरसे काँपती खड़ी सब कौतुक देख रही थी। अकस्मात् एक वृक्ष की टूटी हुई घनी डाली मेरे हाथ लग गई, उसीसे अपने को छिपा मैं एक वृक्ष के पीछे जा रहा, डाली को वहां रख तिरछा हो मैं तो एक ओर को निकल भागा, और उस हाथी ने झपटकर डाली को उठा लिया और पैरों से रौंद चिथड़े चिथड़े कर डाला। मैं दौड़ता हुआ झट उस डरी हुई स्त्री के पास पहुँच पूछने लगा कि कुशल तो है, तुम्हें कहीं चोट तो नहीं लगी?। वह विचारी मुझे देख हर्ष से कहने लगी कि आप मेरी कुशल क्या पूछते हैं जो ऐसे कायर पति को दी गई हूं कि सङ्कट के समय मुझे अकेली छोड़ अपनी जान बचा कर भागा यही बड़ी कुशल है कि आप राजी खुशी विना चोट खाये लौट आये। वह मेरा कैसा भर्ता? मेरे पति तो आप हैं जिन्होंने अपने प्राण सङ्कट में डाल मेरी रक्षा मृत्यु के मुख से की है। वह देखिये मेरा नाममात्र का पति अपने सेवकों के साथ इधरही आ रहा है, सो इस समय तो आप यहां से हट जाइये, किन्तु हमलोगों के साथही साथ पीछे पीछे चले आइये, जब अवसर मिलेगा मैं आपके साथ निकल चलूंगी। यह सुन मैंने वैसाही किया। मुझे यह विचारना चाहिये था कि यद्यपि यह परम रूपवती है और स्वयं आत्मसमर्पण करती है, तथापि यह पराई स्त्री है मुझसे इससे क्या सम्बन्ध! किन्तु यह धैर्य्य का मार्ग है, नये तरुण लोग इस बात का विचारही कब करते हैं!!!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

थोड़ीही देर में उसके भर्ता ने आकर उसकी कुशल पूछी और वह स्त्री भी पालकी पर चढ़ उसके तथा सेवकों के साथ विदा हुई। उस स्त्री ने मार्ग के लिये व्यय मुझे दे दिया था सो मैं गुप्त रीति से उस लम्बी यात्रा में उसके पीछे २ चला। मार्ग में वह, पति को अपना अङ्ग इस बहाने से स्पर्श भी न करने देती थी कि हाथी के भय से गिरने के कारण मेरी पसुली में बड़ा दर्द होता है। अन्य पुरुष पर प्रेम रखनेवाली स्त्री विषयुक्ता नागिनी की नाईं चोटैल होने पर भी बदला लेने से कभी न चूकेगी। चलते चलते हमलोग उस लोहनगर में जा पहुँचे जहां उस स्त्री के भर्ता का घर था, उसकी जीविका वाणिज्य से चलती थी। घर के अन्दर न आकर हम सब लोग उस दिन बाहरही एक देवमन्दिर के समीप ठहर गये, वहीं इस दूसरे ब्राह्मण से जो मेरा सखा है, भेंट हुई। यद्यपि हम दोनों में कभी का पूर्व परिचय न था परन्तु एक दूसरे को देखतेही घी खिचड़ी से मिल गये। जन्मान्तर के प्रेम को प्राणी का चित्तही कुछ जानता है, वह कहा नहीं जा सकता। तब तो मैंने अपना सब गुप्त भेद इससे कह दिया जिसे सुन इसने धीरे से कहा कि चुप रहो जिस काम के लिये तुम यहां आये हो उसका उपाय मैं तुम्हें बता देता हूं। इस स्त्री की ननद जो यहां रहती है कुछ माल लेकर मेरे साथ भागा चाहती है तो उसी की सहायता से तुम्हारा भी काम मैं करा दूंगा। इतना मुझसे कह इस ब्राह्मणसखा ने जाकर उस बनिये की बहिन से एकान्त में मेरा सब हाल सुनाया। दूसरे दिन, जैसा कि सलाह ठहर गई थी, ननद अपनी भौजाई को साथ लिये हुई उस शून्य मन्दिर के अन्दर दर्शन के बहाने से आई, हम दोनों वहां पहिलेही से बैठे थे। ननद ने अपनी भौजाई के कपड़े मेरे इस मित्र को पहिना कर स्त्री का भेष बना दिया और इसे अपने साथ ले भाई के संग घर को चली गई। मैं उस वणिक्भार्य्या के साथ जो मेरे मित्र का कपड़ा पहिन पुरुष का वेष बनाये थी, मन्दिर से बाहर निकल चलते चलते यहां उज्जयिनी में आ पहुँचा। बनिये के घर के लोग जब दिन का उत्सव समाप्त कर रात को सो गये तो उसकी बहिन भी मेरे इस मित्र के साथ निकल भागी। यह भी चुपके से उसे साथ लिये चलता चलता मुझसे यहां आ मिला। इस प्रकार हम दोनों ने नवीन युवती भार्य्याओं को पाया है जो आपस में ननद भौजाई लगती हैं। इसीलिये हे राजन्!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शङ्का के मारे हमलोग कहीं जम नहीं सकते क्योंकि ऐसे साहस का काम करके किसका चित्त ठिकाने रह सकता है । हमलोग अपने टिकने के स्थान और जीविकानिर्वाह की युक्ति चिरकाल तक बैठे विचार रहे थे कि आपने हमें दूर से देख पाया, और भेदिया समझ कर यहां धर मँगाया । श्रीमान् के पूछने पर मैंने सच्चा सच्चा हाल कह सुनाया, अब आप मालिक हैं जो चाहें सो करें ।

इतना वृत्तान्त सुन राजा विक्रमसिंह ने उन दोनों ब्राह्मणों से कहा कि हम तुम लोगों पर प्रसन्न हैं, मत डरो, तुम हमारी पुरी में रहो. हम तुमें खाने पीने लायक बहुत धन देंगे । इतना कह महाराज ने उनके योग्य बहुत सा धन दिया और वे दोनों भी अपनी २ भार्य्याओं के सहित उनके यहां सुखपूर्वक रहने लगे ।

इस प्रकार सम्पत्ति उन लोगों को भी प्राप्त हो जाती है जो ऐसे वैसे काम कर बैठते हैं; परन्तु उसी अवस्था में, जब कि वे काम प्रबलसत्वपूर्वक किये जाते हैं, और ऐसे साहसधनी बुद्धिमानों पर राजा लोग भी प्रसन्न होकर अपनी उदारता दिखाते हैं । इस प्रकार इस लोक के अथवा पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्मों के प्रभाव से तदनुसारही भला या बुरा फल प्राणीमात्र को मिलता है । अतएव हे देवि ! तुमने जो स्वप्न में आकाश से गिरी हुई किसी ज्वाला को निज उदर में प्रवेश करते देखा है वह निस्सन्देह कोई स्वर्गीय जीव है जो कर्मवश तुम्हारे गर्भ में आया है ।

यों निज पति के सुनि बचन उपजावन मनमोद ।
गर्भधरे हर्षित भई रानी पाइ विनोद ॥

दूसरा तरङ्ग ।

इधर राजा कलिङ्गदत्त की महिषी रानी तारादत्ता का धीरे धीरे गर्भ का बोझ बढ़ने से शरीर भारी होने लगा । उसकी शोभा पूर्वदिशा की नाईं हो रही थी जहां से चन्द्रलेखा उत्पन्न होने को थी, उसका मुख, प्रसव समीप होने के कारण कुछ पीला पड़ रहा था । कुछ दिनों के उपरान्त उसे एक परम सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई, मानो ब्रह्मा ने अपनी सारी चतुराई का नमूना बना दिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

था। उस घर में जो रक्षाप्रदीप बल रहे थे उनकी कान्ति उस कन्या की ज्योति के आगे दब गई, मानो वे इस शोच से उदास हो गये कि ऐसा रूपवान् पुत्र क्यों न उत्पन्न हुआ! वैसी परम रूपवती कन्या को पाकर पिता कलिङ्गदत्त भी तद्रूप पुत्र पाने की आशा से निराश हो कुछ उदास से हो गये। यद्यपि महाराज जान गये थे कि यह कन्या कोई स्वर्गीया जीव है तथापि पुत्र न होने से वे कुछ खिन्न हुये क्योंकि कहां सुत साक्षात् शरीरधारी मुद, और कहां कन्या शोक-जन्या। तब अपना जी बहलाने के लिये राजा निज प्रासाद से निकल एक बौद्धमन्दिर में चले गये। वहां देखा कि एक बौद्धपाठक अपने श्रोताओं के प्रति यों उपदेश कर रहे हैं कि "बड़ों ने इस संसार में धन का दानही बड़ा तप कहा है, अर्थ देनेवाला प्राणदेनेवाला कहलाता है क्योंकि अर्थही में प्राण बँधे हैं। श्रीबुद्ध भगवान् ने करुणा से व्याकुल हो पराये के लिये अपने को भी तृण की नाईं दे दिया तो फिर तुच्छ धन की क्या बात है। ऐसे धीर तप से सब प्रकार की इच्छाओं को दूर कर, दिव्य विज्ञान को प्राप्त हो, बुद्ध भगवान् ने बुद्ध का पद पाया था, अतएव बुद्धिमान् को उचित है कि अपना शरीर पर्य्यन्त भी देकर दूसरे का हित करे जिसमें उसे उत्तम बोध की प्राप्ति हो।

पूर्व समय में, क्षत नामक राजा को क्रम से सात अति सुन्दर कुमारियां उत्पन्न हुई थीं। वे सातो बालपनही में वैराग्य के कारण पिता का घर छोड़ श्मशान में जा बसीं। जब उनके सेवकों तथा परिवारवालों ने ऐसा करने का कारण पूछा तो उन्होंने यह उत्तर दिया कि यह सारा संसार असार है तहां भी यह शरीर अनित्य है और वहां भी अभीष्ट-संयोग तथाच सुखादिक सब स्वप्न की नाईं हैं। इस संसार में परोपकारही सार है, हमलोग इस देह से दूसरे का हित किया चाहती हैं अर्थात् इस देह को जीतेही उन जीवों को समर्पण कर देंगी जो मांस के आधार से जीते हैं, इसको सुन्दरता से क्या लाभ है। प्राचीन समय में कोई राजकुमार अत्यन्त सुन्दर और युवा थे, किन्तु विरक्तता के कारण वे परिव्राजक हो घर से बाहर निकल गये। एक दिन वे भिक्षा के अभिप्राय से किसी बनिये के घर में गये, उसकी तरुणी स्त्री ने देखा कि इनके नेत्र कमलपत्र की नाईं सुन्दर और बड़े हैं, सो वह ऐसे मनोहारा नेत्रों को देख मोहित हो पूछने लगी कि आपने ऐसा सुकुमार शरीर और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुन्दर रूप पा ऐसा कठिन व्रत क्यों धारण किया ? । धन्य वह स्त्री है जो आपके इन मनोहर नेत्रों से देखी जाती है। यह सुनतेही उस राजकुमार ने अपना एक नेत्र नोंच बाहर निकाल लिया और हाथ में ले कहने लगा कि हे माता ! इसे देखिये यह कैसा है, यह तो घृणायोग्य मांस और रक्त का लोथड़ा है, यदि आप को रुचता हो तो ले लीजिये। यह दूसरा भी इसी की नाईं है । अब आपही कहें इनमें क्या रमणीयता है। यह सुन और नेत्र को देख वह वणिक्वधू अत्यन्त दुःखित हुई और कहने लगी कि हा! मैं अत्यन्त पापिनी हूं जो मैंने ऐसा दुष्कर्म किया कि आपके नेत्र निकलवाने का कारण हुई! यह सुन उस राजकुमार भिक्षुक ने कहा कि, हे अम्ब। आप खिन्न मत होइये आपने मेरे साथ बड़ा उपकार किया, सुनिये मैं इसका निदर्शन कहता हूं कि,—

श्रीगङ्गाजी के तट पर किसी रमणीय उपवन में एक ऐसे यति रहते थे कि जिन्हें पूर्ण तपस्या करने की प्रबल इच्छा हो रही थी । जहां वे महात्मा तपस्या कर रहे थे वहीं पर कोई राजा निज महल की रानियों के साथ विहार करने के लिये आन उपस्थित हुये । विहार के उपरान्त जब वे पान कर बेसुध सो गये तो वे रानियां चपलता के कारण उनके पास से उठ इधर उधर उद्यान में टहलने लगीं। उन्होंने जो मुनिजी को समाधि लगाये देखा तो कौतुक से उन्हें घेर चारो ओर खड़ी हो गईं कि यह क्या तमाशा है। उनके चले जाने के चिरकाल के उपरान्त राजा की निद्रा जो खुली तो उन्होंने किसी भी रानी को अपने पास न देखा, उठकर इधर उधर घूमने लगे । देखते क्या हैं कि एक स्थान पर मुनि को घेरे सब रानियां खड़ी हैं। क्रोध और डाह से राजा ने अपना खड्ग ले मुनि के शरीर में कोंच दिया।

धन ईर्षा अरु क्रूरता तापर ह्व मदपान ।
हियविवेक-परिशून्यता सब उत्पातनिधान ॥

ये पांचो अकेलेही अकेले महा उत्पात कर सकते हैं, फिर जहां पांचो एकत्र हों वहां का क्या पूछना । राजा के चले जाने पर यद्यपि मुनि के शरीर से रक्त की धार बह रही थी परन्तु उन्होंने कुछ भी क्रोध न किया। इतनेही में किसी देवी ने प्रगट हो मुनि से यह कहा कि हे महात्मन्! यदि आप कहें तो मैं इस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पापी को जिसने उन्मत्त होकर आपके साथ ऐसा अनुचित वर्ताव किया है अपनी शक्ति से अभी नाश कर दूं। यह सुन उस ऋषि ने कहा हे देवि! ऐसा न कहिये वह मेरी हानि करनेवाला नहीं किन्तु धर्म्म में सहाय करनेवाला है। हे भगवति! यह उसी की कृपा का कारण है कि मैं क्षमाधर्म्म को काम में ला सका, यदि उसने ऐसा न किया होता मैं किसको क्षमा करता? बुद्धिमान् को इस नाश होनेवाले शरीर के लिये क्रोध करना कैसा? प्रिय और अप्रिय में एक सा भाव दिखाकर क्षमा करना ब्रह्म का पद पाना है। मुनि का ऐसा भाषण सुन, उसकी तपस्या से प्रसन्न हो और उसके शरीर को पुनः ज्यों का त्यों कर, देवी अन्तर्धान हो गई।

उसी प्रकार जैसे उस ऋषी ने राजा को अपना उपकारी माना था तिसी प्रकार हे अम्ब! आपने नेत्र निकालने का कारण हो मेरे तप की वृद्धि की है। इतना कह उस नम्र वणिक्वधू को आशीर्वाद दे वह राजकुमार भिक्षुक अपने सुन्दर शरीर का कुछ भी ध्यान न कर तीर्थभ्रमण के लिये आगे चलता हुआ।

इसी कारण यद्यपि हमलोगों का यह शरीर सुन्दर है परन्तु नश्वर होने के हेतु हमें इसमें लिप्त न होना चाहिये। बुद्धिमानों का वचन है कि इससे एकही कार्य्य अर्थात् परोपकार की सिद्धि करनी उचित है। सो हमलोग, इस सुख के घर श्मशान में अपने शरीर को इसलिये छोड़ देंगी कि यह प्राणियों के काम में आवे। ऐसा अपने सेवकों और परिवारवालों से कह उन सातो कुमारियों ने वैसाही किया जिससे उन्हें परम सिद्धि प्राप्त हुई। यों आप जानिये कि बुद्धिमान् लोगों को निज शरीर पर भी ममता नहीं रहती, सुत दारा और सेवकरूपी तृण समूह की कौन कहै।

जब राजा कलिङ्गदत्त ने, उस धर्ममन्दिर में जाकर धर्मोपदेशक के मुख से यह कथा सुनी तो उस दिन को वहीं विता सन्ध्या के समय घर को लौटे। वहां आने पर जब फिर भी कन्या के जन्म पर उनका चित्त दुःखित होने लगा तो उन्हीं के घर में जो एक वृद्ध ब्राह्मण रहता था उनसे बोला कि हे राजन्! ऐसी कन्या-रत्न के जन्म से आप क्यों उदास होते हैं, जो सच पूछिये तो कन्या पुत्रों की अपेक्षा कहीं उत्तम हैं, क्योंकि वे इस लोक तथा परलोक में भी कल्याणकारिणी होती हैं। राजाओं को निज पुत्रों पर कौन आस्था हो सकती है, क्योंकि वे सदा राज्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के लोभी हो केकड़ों की नाईं अपने पिताही को खा जाते हैं। देखिये कुन्तिभोज आदि राजा लोग कुन्ती इत्यादि पुत्रियों के गुण से दुर्वासा आदि सरीखे भयानक ऋषियों के शाप से बच गये हैं। कन्यादान से जो फल होता है वह परलोक में पुत्र द्वारा कैसे मिल सकता है, सुनिये मैं आपसे सुलोचना की कथा कहता हूं—

प्राचीन समय की बात है कि चित्रकूट पर्वत पर कोई सुषेण नामक युवा और सुन्दर राजा हो गये हैं जिनका रूप ऐसा मनोहर और नेत्रानन्ददायक था कि मानो शिवजी से डाह खाकर ब्रह्मा ने दूसरा शरीरधारी कामदेव उत्पन्न किया हो। उन्होंने उस महागिरि के मूल में एक दिव्य उद्यान ऐसा रमणीय बनवाया था कि जिसे देख इन्द्र के नन्दन बन को भी ईर्षा होती थी। उसके बीचोबीच उन्होंने एक सरोवर बहुतही स्वच्छ और सुन्दर रचवाया था जिसके कमल मानो लक्ष्मीजी के लीलाकमल की बराबरी करते थे। उस सरोवर की सीढ़ियां रत्नमयी थीं। महाराज प्रायः उसी के तट पर आनन्द से अकेले घूमा फिरा करते थे, अकेले रहने का कारण यही था कि विवाह के अनुरूप उन्हें कोई राजकुमारी न मिलती थी। एक समय रम्भा नाम्नी अप्सरा इन्द्र के भवन से निकल आकाशद्वारा उड़ती हुई जा रही थी कि उसकी दृष्टि राजा पर, जो अपने उद्यान में विहार कर रहे थे, पड़ी। राजा की शोभा, खिले हुये पुष्पों के बीच विहार करते हुये साक्षात् वसन्त की नाईं, हो रही थी। वह विचारने लगी कि क्या श्री को जो इस सरोवर के कमलों में आकाश से आन गिरी है, खोजता हुआ चन्द्रमा, इस लोक में आ गया है, अथवा यह क्योंकर हो सकता है क्योंकि इसकी श्री तो अलग होनेवाली नहीं। यह निस्सन्देह पुष्पशर (कामदेव) है जो पुष्पों की इच्छा से इस उद्यान में आया है किन्तु इसकी सहचारिणी रति किधर गई? इस प्रकार उत्सुकता से वर्णन करती हुई रम्भा आकाश से उतर मानुषीरूप से राजा के समीप पहुँची। उसे अचानचक आई देख, राजा विस्मित हो, मनमें विचारने लगे कि अहो! यह असम्भव-रूपवाली युवती कौन है! यह इस लोक की अर्थात् मानुषी नहीं है, क्योंकि इसके पैर धूलि को नहीं छूते और इसके पलक झपकते नहीं हैं, इसलिये यह अवश्य कोई दिव्या है। किन्तु इससे कुछ पूछना न चाहिये कि यह कौन है, नहीं तो यह उड़ जायगी। प्रायः ऐसा होता है कि स्वर्गीय लोग कभी कभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किसी कारणवश मनुष्यों में आ मिलते हैं किन्तु वे अपना भेद प्रकाश नहीं किया चाहते। राजा ऐसा मनमें विचारही रहे थे कि उसने बातचीत आरम्भ कर दी और क्रमशः राजा ने उसके गले में हाथ डाल दिया और चिरकाल तक उस अप्सरा के साथ क्रीड़ा करते रहे। वह भी स्वर्ग को भूल गई "प्रेम की अगाड़ी गई जन्म-भू पिछाडी को" रम्भा की सखी यक्षिणियों ने वृक्षों का रूप धारण कर राजा के राज्य को सोने से यों भर दिया जैसे मेरु के शिखरों से स्वर्ग भरा जाता है। कुछ दिनों के उपरान्त उस अप्सरा को राजा सुषेण से गर्भ रह गया और उसे एक परम सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई। उसी क्षण उसने राजा से कहा कि 'हे नरनाथ! मुझे ऐसाही शाप हुआ था किन्तु अब उसका उद्धार हो गया है। मैं रम्भा नाम्नी स्वर्ग की अप्सरा हूं, आपको देख मोहित हो गई थी, अब मुझे कन्या उत्पन्न हो चुकी है सो मैं जाती हूं इसका विवाह हो जाने पर मेरी और आपकी पुनः भेंट स्वर्ग में होगी। ऐसा कह वह अप्सरा इच्छा न रहते भी अन्तर्धान हो गई, उसके वियोगदुःख से राजा प्राण परित्याग करने पर उतारू हुये। यह देख मन्त्रियों ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे प्रभो! आपको भी धीरज धरना उचित है, देखिये शकुन्तला के जन्म के उपरान्त जब मेनका स्वर्ग को चली गई थी तो क्या विश्वामित्रजी ने, यद्यपि वे बड़ेही दुःखित हुये थे, प्राण-परित्याग कर दिया था?। मन्त्रियों का समझाना सुन राजा ने धीरज बांधा और उस कन्या का, जिसके विवाह के उपरान्त पुनः रम्भा से भेंट होने की आशा थी, भली प्रकार लालन पालन करने लगे। यद्यपि वह बालिका सर्वाङ्ग सुन्दरी थी तथापि उसके लोचनों में विशेष सौन्दर्य्य होने से पिता ने उसका नाम सुलोचना रक्खा। क्रमशः वह चन्द्रकला की नाईं सयानी होती होती यौवनवती हुई, एक दिन वह अपने उद्यान में सखियों के साथ टहल रही थी कि कश्यपजी के पुत्र वत्स नामक किसी युवा मुनिपुत्र ने उसे देख पाया। यद्यपि वे तपस्या के रूपही थे तथापि इस परम सुन्दरी बाला को देखतेही मोहित हो गये और विचारने लगे कि अहो! इस कन्या का रूप परम अद्भुत है, यदि मैंने इसे भार्य्यारूप से न पाया तो मेरी इस तपस्या का और क्या फल होगा!। इधर तो मुनिपुत्र ऐसा ध्यान कर रहे थे उधर सुलोचना की दृष्टि जो उन पर पड़ी तोवह विचारने लगी कि यह विना धूम की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशमान् अग्नि कैसी है। उन्हें देखतेही उसके हृदय में भी प्रेम का अङ्कुर जम आया। वह विचारने लगी कि यह रुद्राक्ष की माला धारण किये, हाथ में कमण्डलु लिये, शान्त तथा परम सुन्दर युवा कौन है ? फिर उसके समीप आय मानो वरनेही के लिये नेत्रकमलों की माला उन पर डालकर उसने मुनिपुत्र को प्रणाम किया। उनने भी, उस कामदेव के वश हो जिसके प्रभाव को सुरासुर भी उल्लङ्घन नहीं कर सकते, आशीर्वाद दिया कि "पतिवती हो"। तदनन्तर उस रूपवती ने, जिसका हृदय मुनिपुत्र के असाधारण रूप द्वारा हर लिया गया था, नीची दृष्टि कर यों निवेदन किया कि हे देव ! यदि आपकी ऐसीही इच्छा है, और यदि आपका आशीर्वाद हास्य नहीं है, तो आप मेरे पिता राजा से मुझको मांगिये। मुनिपुत्र ने, सखियों द्वारा सुलोचना का वंशवृत्तान्त जानकर, सुषेण राजा के समीप जा उसकी प्राप्ति के लिये निज इच्छा प्रकाश की। महाराज ने उन्हें तपस्या और शरीर से योग्य देख उनका अतिथिसत्कार कर यों कहा कि 'हे मुनिकुमार! यह कन्या मुझे रम्भा नाम्नी अप्सरा के गर्भ से प्राप्त हुई है, इसके विवाह के उपरान्त मेरी भेंट उसके साथ स्वर्ग में होगी; यह बात वह जाती समय कह गई थी। सो हे महाभाग ! यह कैसे होगा, आपही विचारिये। यह सुन मुनिपुत्र ने क्षण भर सोचा और यह निश्चय किया कि क्या मेनकापुत्री प्रमद्वरा को सर्प काट जाने पर, रुरु ऋषि ने अपनी आधी आयु उसे देकर पुनः जिवाय उससे विवाह नहीं किया था ? और क्या विश्वामित्रजी ने अपने तपोबल से चाण्डाल त्रिशङ्कु को स्वर्ग में नहीं पहुँचा दिया था, सो मैं भी अपने तपोभाग को देकर इस काम को क्यों न करूँ। यह विचार मुनिपुत्र ने कहा "बहुत अच्छा इसमें कुछ भी कठिनता नहीं है"। इतना कह अपनी भुजा आकाश की ओर उठा उन्होंने ज़ोर से कहा कि 'हे देवता लोग ! सुनो, यह राजा मेरी तपस्या के एक अंश के प्रभाव से इसी शरीर द्वारा रम्भा की सम्भोगप्राप्ति के लिये स्वर्ग को जावै'। इस प्रकार जब उन मुनिपुत्र ने सबके सम्मुखही राजसभा में ऐसा कहा तो उसी क्षण आकाशवाणी हुई कि 'बहुत अच्छा, ऐसाही होगा'। इसके अनन्तर राजा ने निज पुत्री सुलोचना को कश्यपमुनि के पुत्र वत्स को व्याह दिया और स्वयं इसी शरीर से स्वर्गधाम को पधारे। वहां दिव्यत्व को प्राप्त हो, इन्द्र से नियुक्त की हुई रम्भा के साथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्वर्गीय सुखों का आनन्द लेने लगे। हे देव! इस प्रकार, कन्याही के द्वारा, राजा सुषेण कृतार्थता को प्राप्त हुये थे। आप सरीखे पुण्यात्माओं के घर में ऐसीही भाग्यवती कन्यायें अवतार लेतीं हैं। यह जो सुता आपके घर में उत्पन्न हुई है अवश्य कोई स्वर्गीय जीव है जो किसी शाप के कारण इस लोक में उतरी है। अतएव हे विभो! आप इसके जन्म से उदास मत होइये। इस प्रकार, उस ब्राह्मण से जो उन्हीं के घर में इतने हृष्ट हुये थे, इस कथा को सुन, राजा कलिङ्गदत्त ने शोक को परित्याग कर दिया और चन्द्रकला की नाईं उस आत्मजा का नाम कलिङ्गसेना रख बड़े स्नेह से उसका लालन पालन करने लगे। वह भी अपनेही समान वयवाली सहेलियों के साथ खेलती हुई क्रमशः सयानी होने लगी। कभी राजभवन में क्रीड़ा करती, और कभी उद्यान में विहार करती, योंही बालपनरूपी समुद्र के लहरों में आनन्द के हिलोरे लिया करती थी।

एक समय की बात है कि वह निज राजभवन के कोठे पर खेल रही थी कि मयासुर की सोमप्रभा नाम्नी कन्या ने जो आकाशमार्ग से कहीं उड़ी जाती थी, इसे देखा। इसका ऐसा सुन्दर स्वरूप देखतेही उसके मनमें प्रीति उत्पन्न हुई तो वह आकाश में स्थिर होकर विचारने लगी कि यह कौन है? क्या चन्द्रमा की मूर्ति है? किन्तु दिन के समय उसमें इतनी ज्योति कहां? तो क्या रति है तो कामदेव कहां है? इस्से मैं अनुमान करती हूं कि यह कोई भूलोक की कन्या है! जान पड़ता है कि शाप के कारण किसी स्वर्गीया ने राजा के घर में जन्म लिया है, और मुझे ऐसा लगता है कि जन्मान्तर में भी मेरी इसकी अवश्य मैत्री रही है। मेरा मन अत्यन्त प्रेममग्न हो ऐसाही कहता है, सो मैं चलकर इस्से सखीभाव उत्पन्न करूँ। ऐसा विचार सोमप्रभा चुपचाप आकाश से उतर आई जिसमें वह बालिका उसे देखकर डर न जावे, और उसे विश्वास दिलाने के लिये मानुषी रूप धारण कर वह धीरे से कलिङ्गसेना के पास पहुँची। राजकुमारी उसे देख मनमें कहने लगी "आहा! यह तो कोई परम सुन्दरी राजसुता स्वयं मुझसे मिलने को चली आती है मैं इससे अवश्य मैत्री करूँगी।" ऐसा विचार आदर से उठकर सोमप्रभा के समीप आने पर कलिङ्गसेना ने उसे गले से लगा लिया। जब राजकुमारी ने पूछा कि आप कौन हैं? और आपका क्या नाम है? तो सोमप्रभा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ने कहा 'ठहरो मैं तुम्हें सब बताती हूं'। फिर बातचीत करने पर दोनों में सखी-भाव हो गया और दोनों ने बड़े प्रेम से एक दूसरे का हाथ पकड़ लिया । तदनन्तर सोमप्रभा ने कहा कि हे सखि ! तुम राजा की कन्या हो, राजा के बालकों के साथ स्नेह का निर्वाह कठिन होता है, वे लोग थोड़ेही अपराध से क्रुद्ध हो जाते हैं। सुनो मैं तुम्हें एक राजकुमार और वणिक्पुत्र की कथा सुनाती हूं।

पुष्करावती नगरी में गूढ़सेन नामक राजा रहते थे, उन्हें केवल एकही एक राजकुमार था। पिता का एकमात्र पुत्र होने से वह राजकुमार अपने मद में भला बुरा जो कुछ कर बैठता था राजा उसे सह लेते थे। एक दिन उपवन में भ्रमण करती समय ब्रह्मदत्त नामक बनिये के पुत्र पर उसकी दृष्टि पड़ी, जो वैभव और रूप में राजकुमार के समानही था । देखतेही राजकुमार ने उसे अपने समीप बुलवा उससे मैत्री करी, और वे दोनों समान रूपवाले परस्पर बड़े प्रेम से साथही रहने लगे । यदि राजकुमार अपने मित्र को चण भर भी न देखते तो व्याकुल हो जाते और किसी प्रकार अकेले न रह सकते थे। "पूर्वजन्म को प्रेम हिय करत मित्रता गाढ़' उनका स्नेह ऐसा था कि विना अपने मित्र वणिक्पुत्र को पहिले खिलाये राजकुमार भोजन न करते थे । जब राजकुमार के विवाह का समय निकट आया तो वे अपने मित्र के विवाह की बातचीत पहिले ठहरा कर पीछे अहिच्छत्र नामक देश को निज विवाह के लिये चले। वे अपने मित्र को साथ लेकर हाथी पर आरूढ़ हुये और सेना सब साथ साथ चली । चलते २ इक्षुमती नदी के तीर पर सन्ध्या को पहुँच लोगों ने डेरा डाल दिया। चांदनी में मधुपान करके जब राजकुमार लेटे तो धात्री ने कहा कि 'हे राजकुमार! कोई मनोहर कथा तो सुनाओ'। राजपुत्र ने बहुत अच्छा कह एक कथा को कहना आरंभ किया किन्तु अभी थोड़ीही सी कथा कही थी कि श्रान्त और मत्त होने के कारण वे निद्रा के वश हो सो गये और धात्री को भी नींद आ गई; किन्तु वह वणिक्पुत्र अपने मित्र के स्नेह से जागताही रहा । जब सब लोग घोर निद्रा में सो गये तो उस वणिक्पुत्र को जान पड़ा कि ऊपर आकाश में कुछ स्त्रियां आपस में बातें कर रही हैं। पहिली ने कहा कि यह पापी कथा को विना समाप्त कियेही जो सो गया तो मैं इसे यह शाप देती हूं कि प्रातःकाल यह एक हार देखेगा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और यदि उसे उठा लेगा तो वह इसके गले से लिपट जायगा और उसी क्षण इसकी मृत्यु होगी। इतना कह पहिली चुप हो गई। दूसरी ने कहा कि यदि इससे बच गया तो इसे एक आम का वृक्ष दिखाई पड़ेगा यदि उसके फल को खायगा तो फिर न बचेगा। इसके चुप होने पर तीसरी कहने लगी कि यदि इससे भी यह बच गया तो विवाहवाले घर में प्रवेश करतेही वह घर इसके ऊपर गिर पड़ेगा और इसकी मृत्यु होगी। चौथी बोली कि यदि यहां से भी बच गया तो वासगृह में पैर रखतेही इसे एक सौ बेर छींक आवेगी, यदि हर बेर में कोई यह न कहेगा कि "चिरञ्जीव" तो अवश्य इसकी मृत्यु होगी। यदि हमारी बात को सुनकर इसकी रक्षा के निमित्त कोई इससे कहदेगा तो उसकी भी मृत्यु हो जायगी। इतना कह वह भी चुप होगई। जब वणिक्पुत्र ने यह सब बात सुनी तो वह अपने मित्र राजकुमार के स्नेह से व्याकुल हो विचारने लगा कि हाय! हाय! कैसी कुलक्षणी कथा को मेरे मित्र ने आरम्भ किया कि जिसको समाप्त न करने के कारण इसको यह शाप हुआ, जान पड़ता है कि स्वर्गीया देवियां इस कथा को छिपकर सुन रहीं थीं और पूरा न सुनने के कारण उन्होंने क्रोध से यह शाप दिया है। यदि मेरे मित्र राजकुमार की मृत्यु हो जायगी तो फिर मैं जीही कर क्या करूँगा इसलिये कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिये कि जिससें इस प्राण समान प्यारे मित्र की रक्षा हो। यह वृत्तान्त भी इससे अभी न कहना चाहिये नहीं तो मेरीही मृत्यु हो जायगी। ऐसा विचार उस वणिक्पुत्र ने किसी किसी प्रकार वह रात विताई।

प्रात:काल राजकुमार अपने मित्र के साथ मार्ग में आगे चले, और थोड़ीही दूर पर उन्हें एक हार दिखाई पड़ा। ज्योंही उन्होंने उसके उठाने की इच्छा की त्योंही वणिक्पुत्र ने निषेध कर कहा कि हे मित्र! इसे मत उठाइये, यह माया का हार है, यदि ऐसा न होता तो क्या आपके सैनिक इसे न देखते? यह सुन राजकुमार उसे छोड़ आगे बढ़े और एक आम का वृक्ष देख उसमें से एकाद फल तोड़ कर खाना चाहा। फिर भी वणिक्पुत्र ने पहिले की नाईं निवारण किया जिसे सुन राजकुमार ने अनिच्छापूर्वक मित्र की बात मान ली और अपने भविष्य ससुराल में पहुँचे। ज्योंही वह घर में पैठने चले कि जिसमें विवाह होनेवाला था त्योंही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वणिक्पुत्र ने फिर रोका और इतनेही में वह मकान अररा कर गिर पड़ा । इस प्रकार यहां से प्रत्यक्ष बच जाने से राजकुमार को निज मित्र पर कुछ आस्था हुई । तदुपरान्त विवाह हो जाने के अनन्तर वे एक दूसरे महल में निज भार्य्या के सङ्ग रात को गये । वह वणिक्पुत्र भी छिपकर वहां जा ठहरा, राजकुमार ने रङ्गमहल में ज्योंही पैर धरा कि छींक आरम्भ हुई और क्रमश: एक सौ छींक आईं। हर बेर उसने धीरे धीरे "चिरञ्जीव" कहा, बस अपना काम कर उस वणिक्पुत्र ने धीरे से बाहर का रास्ता लिया । राजपुत्र ने जो अपनी भार्य्या के साथ बैठे थे देखा कि वह वणिक्पुत्र चोरी से खसका जाता है सो वह क्रोध के मारे लाल हो अपने मित्र का सब स्नेह भूल गये और उनने उसी क्षण द्वारपालों को आज्ञा दी कि इसे पकड़ लो, न जाने यह पापी हमारे अन्त:पुर में किस अभिप्राय से छिपा था, इस समय तो इसे बांधकर रक्खो और प्रात:काल इसे फाँसी दे देना । इतनी आज्ञा सुनतेही द्वाररक्षकों ने उसे बँधकर रात भर तो वहीं रख छोड़ा और प्रात:काल जब उसे बधभूमि को ले चले तो वणिक्पुत्र ने उनसे कहा कि पहिले मुझे राजकुमार के सन्मुख ले चलो, मैं अपने छिपने का कारण उनसे कह लूं फिर आप लोग भलेही मुझे मार डालियेगा । ऐसा सुन उन लोगों ने राजकुमार के समीप जाकर उसका निवेदन सुनाया और जब मन्त्रियों ने समझाया कि उसे बुलाकर उसकी भी सुन लीजिये तो राजपुत्र ने उसे अपने पास आने की आज्ञा दी । आतेही उसने राजकुमार को सब हाल सुनाया और मकान को गिरा हुआ देख प्रत्यक्ष प्रमाण पा उन्हें वणिक्पुत्र की बात पर विश्वास हुआ और सन्तुष्ट हो बध से उसकी मुक्ति की । फिर निज भार्य्या और उसी वणिक्पुत्र के साथ राजकुमार अपनी पुरी को लौट आये। यहां आने पर उन्होंने उसका विवाह जो पहिलेही ठहर चुका था, कर दिया । सब लोग उसके मैत्रीगुण की प्रशंसा करते और वह भी सुखपूर्वक वहीं रहने लगा । कहने का तात्पर्य्य यह कि इसी प्रकार राजा के पुत्र लोग उच्छृङ्खल हो उन्मत्त हाथी की नाईं किसी को नहीं मानते । वेतालों के साथ जो ठट्ठे में भी प्राण निकाल लेते हैं क्या मैत्री करना ! सो हे राजपुत्रि ! यदि हमसे सखीभाव स्थापन करती हो तो फिर इसे कभी परित्याग मत करना ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सोमप्रभा से इस अद्भुत कथा को, सुनकर कलिङ्गसेना ने स्नेह से कहा कि हे सखि! जिनका हाल तुम कहती हो वे राजपुत्र नहीं पिशाच हैं, मैं एक पिशाच के दुर्ग्रह की कथा कहती हूं, सुनो—

प्राचीन समय की बात है कि यज्ञस्थल नामक नगर में कोई ब्राह्मण, राजा के दिये हुये भूमि से अपना निर्वाह करता था। दुर्भाग्यवश वह अति हीनता को प्राप्त हो गया और एक दिन स्वयं जङ्गल में लकड़ी काटने को गया। वहां वह कुठार से लकड़ी काट रहा था कि अकस्मात् एक कटी हुई चैली ऐसी छटकी कि उसकी जाँघ में बड़ा भारी घाव हो गया। रुधिर विशेष बहने से वह मूर्छित हो वहीं गिर पड़ा; किसी जान पहिचान ने जो उसे वैसी अवस्था में देखा तो उसे उठवाकर उसके घर पहुँचवा दिया। उसकी पत्नी यह देख बहुत घबड़ा गई पर उस विचारी ने घाव को धो धा कर उस पर कुछ औषधि लगा, पट्टी बांध दी और निज पति को बहुत धीरज बँधाया। यद्यपि वैद्य की बहुत चिकित्सा हुई किन्तु वह घाव आराम होने की कौन कहे प्रत्युत नाड़ी पर्य्यन्त पहुँच गया। ऐसी अवस्था में उसके एक मित्र ने एक दिन एकान्त में कहा कि हे सखे! मेरा बन्धु यज्ञदत्त योंही बड़ी दुर्गति को पहुँच गया था किन्तु वह पिशाच की साधना से धन पाकर अब अत्यन्त सुखी है। उसने वह साधना मुझे बतला दी है, सो हे मित्र! तुम पिशाच को सिद्ध करो वही तुम्हारे घाव को चङ्गा करेगा। ऐसा कह उसने उस मन्त्र को उसे सिखला दिया और उसकी क्रिया यों बतलाई कि, पिछले पहर उठकर, बाल खोल, सारे शरीर से नङ्गे हो, विना मुंह धोये दो मुठ्ठी चावल दोनों हाथ में खूब भरपूर भर लेना और मन्त्र को जपते हुये चौराहे पर जाना, वहां दोनों मुठ्ठी चावल रख देना और मौनपूर्वक घर को चले आना, किन्तु पीछे फिरकर न देखना चाहिये। इसी प्रकार बराबर नित्य करते जाओ जब लों वह पिशाच प्रगट होकर स्वयं न कहे कि "मैं तुम्हारा दुःख दूर करूँगा।" तब तुम प्रसन्नतापूर्वक उसकी सहायता स्वीकार करना और वह तुम्हें रोग से मुक्त कर देगा। निज मित्र की ऐसी बात सुन, उस ब्राह्मण ने वैसाही करना आरम्भ किया और कुछ दिनों के अनन्तर पिशाच ने प्रसन्न हो हिमाचल पर्वत से कोई महौषधि लाकर उसके व्रण पर लगा उसका घाव चङ्गा कर दिया। जब वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ब्राह्मण अत्यन्त प्रसन्न हुआ तो वह पिशाच हठ कर उससे कहने लगा कि कोई दूसरा घाव भी मुझे ऐसाही दे कि मैं उसे चङ्गा करूँ, नहीं तो मैं तुझे बहुत कष्ट दूंगा वा मारही डालूंगा । यह सुन वह विचारा ब्राह्मण बहुत डरा और उस समय किसी प्रकार अपनी जान बचाने के लिये कहने लगा कि अच्छा सात दिन में मैं तुम्हें दूसरा घाव दूंगा । पिशाच ने उसे छोड़ दिया किन्तु वह ब्राह्मण अपने जीने से निराश हो गया । इतना कह कलिङ्गसेना लज्जा से सिर झुका चुप हो रही क्योंकि आगे की कथा अश्लील थी । किन्तु सोमप्रभा के पूछने पर उसने कहा कि जब उस ब्राह्मण ने एक बेश्या से यह हाल कहा तो उसने कहा कि 'बहुत अच्छा तुम उस पिशाच को मेरे पास ले आना, मैं उसे ऐसा घाव दिखाऊँगी कि उस पिशाच के बाप से भी चङ्गा न हो सके '। सोमप्रभा हँस कर चुप हो रही, बोली हां आगे मैं समझ गई * । फिर कलिङ्गसेना ने कहा 'कि वह पिशाच घबड़ाकर स्वयं भाग गया और वह ब्राह्मण घाव से चङ्गा हो सुखपूर्वक रहने लगा । इसी से कहती हूं कि जो राजपुत्र वैसे होते हैं उन्हें राजकुमार न कहना चाहिये वे पिशाच हैं जो सिद्ध किये जाने पर भी अनर्थ करते हैं, उनसे अपना बचाव बुद्धिद्वारा करना चाहिये । किन्तु कुलीन राजपुत्रियां कभी भी ऐसी नहीं सुनी गईं', अतएव हे सखि ! हमारी तुम्हारी प्रीति में कदापि ऐसा होना सम्भव नहीं है । कलिङ्गसेना के मुख से ऐसा सुन सोमप्रभा मुसुकुरा उठी और अत्यन्त प्रसन्न हुई । फिर कहने लगी कि सखि ! मेरा घर यहां से साठ योजन दूर है, दिन बीता जाता है, मुझे यहां बहुत देर हो गई है अब आज्ञा दो तो मैं अपने घर जाऊँ । यों कह, और फिर मिलने की प्रतिज्ञा कर, सूर्य्य भगवान् के अस्ताचल जाने के समय सोमप्रभा वहां से विदा हुई और आकाशमार्ग से उड़ती हुई निज घर को जा पहुँची । उसे आकाश में उड़कर जाते देख सब लोगों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ और कलिङ्गसेना मनमें अनेक तर्क वितर्क कर विचारने लगी कि मैं नहीं जानती कि मेरी यह सखी कोई सिद्धाङ्गना है अथवा कोई अप्सरा वा विद्याधरी है । परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह अवश्य कोई दिव्या स्त्री है,

* कथा किञ्चित् अश्लील थी अतएव हमने इस प्रकार उसका बचाव कर दिया है ।　　रामकृष्णवर्म्मा ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्योंकि यह आकाश में उड़ सकती है। प्रायः ऐसा होता है कि स्वर्गीया स्त्रियां अपने स्नेह के कारण इस लोक की मानुषी स्त्रियों से मेल करती हैं, देखो क्या अरुन्धती ने राजा पृथु की तनया से सखीभाव नहीं किया था? और उसी की प्रीति के कारण क्या पृथुजी सुरभि गऊ को स्वर्ग से इस भूतल पर नहीं लाये थे? और क्या वे स्वर्ग से गिरने पर भी उसी का दूध पीकर फिर वहां नहीं पहुँचे थे? और क्या तभी से अनेक उत्तम गौ संसार में नहीं हो गईं? सो मैं धन्य हूं कि भाग्यों से ऐसी स्वर्गीया सखी से मेरा मेल हुआ है, कल प्रातःकाल जब वह आवेगी तो मैं उससे उसका नाम धाम और पूरा पता पूछूंगी।

यौं मन में सोचति रही राजकुमारी रैन।
भोर भये मिलि पूछिहौं तब ऐहै हिय चैन॥
लै लै करवट सेज पै सोमप्रभा अकुलाइ।
कब उगिहैं पुनि दिवसपति मिलिहौं सखि उर लाइ॥

तीसरा तरङ्ग॥

दूसरे दिन प्रातःकाल अपनी सखी कलिङ्गसेना का जी बहलाने के लिये सोमप्रभा ने एक पिटारी में अनेक प्रकार की यन्त्रनिर्मित गुड़ियायें रखीं और उसे साथ ले आकाश से उड़ती हुई तक्षशिला नगरी में अपनी उसी सखी के पास आ पहुँची। ज्योंही राजकुमारी ने अपनी प्यारी सखी को आते देखा त्योंही आनन्द और प्रेम से उसके नेत्रों में अश्रुबिन्दु आ गये और वह उठकर अपनी सखी के गले से लिपट गई फिर आदरपूर्वक उसे एक आसन पर स्थान दे आप भी पासही बैठ बातचीत करने लगी कि, हे सखि! कल रात को तुम्हारे मुखचन्द्र का दर्शन जो न हुआ सो वह अन्धकारमयी रात्रि मेरे लिये मानो तिपहरी से शतपहरी हो गई थी। हे देवि! यदि तुम्हें विदित हो तो कृपा कर मुझे यह बतलाओ कि उस जन्म का मेरा तुम्हारा कैसा सम्बन्ध है कि जिसके कारण इस जन्म में भी मेरी तुम्हारी ऐसी अपूर्व मैत्री है। यह सुन सोमप्रभा ने उत्तर दिया कि इसका हाल तो मुझे नहीं विदित क्योंकि मैं जातिस्मर अर्थात् पूर्वजन्म

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

का हाल जाननेवाली नहीं हूं। इस बात को मुनि लोग भी नहीं जानते किन्तु हां जो इसके जानकार हैं उन्हें परमतत्व के ज्ञाता कहना चाहिये। उसका ऐसा भाषण सुन कलिङ्गसेना ने प्रेम से गद्गद हो कौतुक सहित पुनः पूछा कि हे सखि! अच्छा यह तो बताओ कि तुम्हारे पिताजी किस देवजाति के हैं और किस वंश को, सुवृत्त मोती की नाईं अपने जन्म से तुमने अलङ्कृत किया है, और हे सुलक्षणे! जगत् के कानों को अमृत सा सुख देनेवाला तुम्हारा वह कौन सा नाम है? और यह पिटारी किस काम की है तथा इसके अन्दर कौन वस्तु है? कलिङ्गसेना का ऐसा प्रेम-बचन सुन सोमप्रभा ने क्रम से उत्तर देना आरम्भ किया कि हे सखि! मय नामक असुर इन तीनों लोक में अत्यन्त प्रसिद्ध हैं जिन्होंने आसुरीभाव को परित्याग कर श्रीशङ्कर भगवान् की सेवा स्वीकार की थी और श्रीशम्भुजी ने भी उन्हें अभयदान देकर अपनी शरण में लिया था। उन्होंहो ने इन्द्र की सभा अपने हाथों तयार की थी, इसीलिये दैत्यों ने उन पर यह कहकर क्रोध किया था कि यह देवतालोगों का पक्षपाती है। उन लोगों के भय से उनने विन्ध्य पर्वत के भीतर एक ऐसा मन्दिर रचा है जहां अनेक प्रकार के आश्चर्यमय यन्त्र ऐसे बनाये हैं कि वहां असुरेन्द्रों की पहुँच न हो सके। हम दो बहिनें उनकी कन्यायें हैं, बड़ी का नाम स्वयंप्रभा है जो ब्रह्मचारिणी हो सदा पिताजो के घर रहती हैं, इसीलिये उनका विवाह आज लों न हुआ, और मैं छोटी हूं मेरा नाम सोमप्रभा है। हे सखि! मेरा विवाह श्रीकुबेरजी के पुत्र नलकूबरजी से हुआ। पिताजी ने मुझे अनेक प्रकार के मायायन्त्रों में शिक्षा दी है, मैं यह पिटारी भर के खिलौने तुम्हारे लिये ले आई हूं। इतना कह सोमप्रभा ने पिटारी खोलकर अनेक प्रकार के कौतुक करनेवाले खिलौनों को दिखाया। किसी को कील तनिक सा ठोंक दो तो वह चट आकाश में उड़ जाता और आज्ञा देने से पुष्प की माला लेकर शीघ्रही आ जाता। इसी प्रकार आज्ञा देने से कोई पानी ले आता, और कोई नाचने लगता तथा कोई बातचीत करने लगता था। यों कुछ देर तक उसका जी बहला उसने सब खिलौनों को पिटारी में बन्द करके एक सुरक्षित स्थान में रख दिया। इसके उपरान्त सोमप्रभा कलिङ्गसेना से पूछ जिसका चित्त अपनी सखी को बिदा करने को न होता था, आकाशमार्ग से उड़ती हुई निज घर में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जा पहुँची, क्योंकि वह निज पति की अत्यन्त आज्ञाकारिणी थी। कलिङ्गसेना की भूख, यह सब आश्चर्य कौतुक देख जाती रही। उसने दिन भर कुछ भी न खाया किन्तु चित्त में वह अत्यन्त प्रसन्न रही। यह देख उसकी माता को यह शङ्का हुई कि यह कुछ खाती पीती क्यों नहीं, क्या इसे कोई रोग हुआ है! उन्होंने आनन्द नामक वैद्य को बुलाकर कन्या की नाड़ी दिखलायी, वैद्य ने कहा कि आप कुछ चिन्ता न करें इसकी भूख रोग से नहीं किन्तु किसी हर्ष के कारण जाती रही है। इसके हँसते हुये मुख और प्रसन्न नेत्रों से ऐसाही प्रतीत होता है। वैद्यराज की ऐसी बात सुन माता ने कलिङ्गसेना से उसके हर्ष का कारण पूछा और उसने भी सब बातें सच्ची सच्ची कह सुनाईं। जब यह जाना गया कि उत्तम सखी का सङ्ग पाने से यह प्रसन्न है तो माता की चिन्ता दूर हुई और उनने भी इस मेल की प्रशंसा की। तदुपरान्त जननी ने अपने साथ ले जाकर कुछ हलका सा उचित भोजन उसे कराया। दूसरे दिन सोमप्रभा को, आने पर जब यह सब हाल विदित हुआ तो उसने एकान्त में कलिङ्गसेना से कहा कि हे सखि! मैंने अपने प्यारे पति को, जो सब बातों को दिव्य ज्ञान से जान जाते हैं, जाकर तुम्हारी मैत्री का हाल सुनाया और जब उन्होंने सब ठीक समझ लिया तो मैं उनसे यह आज्ञा ले आई हूं कि मैं नित्य यहां आकर तुमसे मिला करूँ। अतएव उत्तम होगा कि तुम भी अपने माता पिताजी से कहकर आज्ञा ले लो जिसमें हम तुम निःशङ्क होकर खेला करें। इस प्रकार जब सोमप्रभा ने कहा तो कलिङ्गसेना उसका हाथ धर के अपने माता पिता के पास ले चली। वहां जा, उसका नाम पता तथा उसके कुल का सारा हाल पिताजी से निवेदन किया, फिर माता तारादत्ता को भी उसी प्रकार उसका सब वृत्तान्त सुना परिचय कराया। वे दोनों सोमप्रभा को देख और उसका कुलवृत्तान्त सुन, अत्यन्त प्रसन्न हो, निज पुत्रीवत् उसका स्नेह सत्कार कर कहने लगे कि हे पुत्रि! हमलोगों ने इस कलिङ्गसेना को तुम्हारे हाथ में सौंपा तुम दोनों अपनी रुचि के अनुसार खेला करो। उनकी ऐसी आज्ञा पा वे दोनों प्रसन्नतापूर्वक वहां से चली आईं और महाराज कलिङ्गदत्त के बनाये हुये एक समीपवर्ती देवमन्दिर में अपना पिटारा ले खेलने चली गईं। वहां सोमप्रभा ने एक यन्त्रमय यक्ष को कल से उड़ाकर आज्ञा दी कि वह जाकर बुद्ध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् की पूजा के लिये सब सामान ले आवे। वह यन्त्र आकाश में उड़ता हुआ दूर चला गया और थोड़ीही देर में उत्तम रत्न, मोती तथा हेमकमलों का ढेर का ढेर उठा लाया जिससे सोमप्रभा ने बुद्ध भगवान् का पूजन कर सुगतों का घर द्रव्य से भर दिया, यह देख सबको परम आश्चर्य्य हुआ। राजा कलिङ्गदत्त भी यह वृत्तान्त सुन रानी के साथ वहीं आ पहुँचे और विस्मित हो यन्त्रों का हाल पूछने लगे। सोमप्रभा ने कहा कि हे राजन्! इन अनेक प्रकार के मायामय यन्त्रों को जिनकी रचना शिल्पविद्या से की जाती है, मेरे पिताजी ने बनाया है।

जिस प्रकार का यह पञ्चभूतात्मक जगद्यन्त्र है उसी प्रकार के ये मायामय यन्त्र हैं इनका हाल अलग अलग सुनिये। जिन यन्त्रों में पृथ्वी प्रधान है वे द्वारादि को बन्द कर देते हैं और उनके बन्द किये द्वारों को फिर इन्द्र भी नहीं खोल सकता। जल से जो यन्त्र बनाये जाते हैं वे सजीव से प्रतीत होते हैं, और जो तेजोमय यन्त्र हैं वे अग्निज्वाला छोड़ते हैं। वायुनिर्मित यन्त्र आने जाने की सी चेष्टा करते हैं, और आकाशनिर्मित यन्त्र बातचीत करते हैं। मैंने यह सब अपने पिताजी से पाया है, किन्तु जिस चक्रयन्त्र से अमृत की रक्षा होती है उसे उनके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं जानता। अभी वह इतना कहही रही थी कि मध्यान्ह-सूचक शङ्खों की ध्वनि हुई जिन्होंने उसके बचन की सत्यता की मानो साक्षी दी। तदुपरान्त सोमप्रभा ने राजा से इस बात की आज्ञा मांगी कि यदि आप कहैं तो मैं अपनी सखी को अपने घर ले जाकर कुछ जल पान कराऊँ। राजा ने जब इस बात को स्वीकार किया तो एक यन्त्रनिर्मित विमान पर कलिङ्गसेना को अपने साथ बैठाय सोमप्रभा ने आकाशमार्ग से अपने पिता के घर का रास्ता लिया और क्षण भर में विन्ध्याचलवाले उस घर में जा पहुँची जहां उसकी बहिन स्वयंप्रभा रहती थी। कलिङ्गसेना ने देखा कि स्वयंप्रभा जटाजूट और लम्बी अक्ष-माला धारण किये, स्वच्छ स्वेत वस्त्र पहिरे, साक्षात् श्रीपार्वतीजी की नाईं मन्द मुसकान करती तपःक्रिया को ग्रहण कर ब्रह्मचारिणी बनी बैठी है। जब सोमप्रभा ने राजकुमारी का परिचय अपनी बहिन से कराया तो इसने प्रणाम किया और स्वयंप्रभा ने आशीर्वाद दे आतिथ्यसत्कार से अपने पास बैठाल कुछ मधुर फल उसे प्रसाद में दिये। सोमप्रभा ने कहा कि हे सखि! इन फलों को खाने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से तुम्हें वृद्धावस्था न व्यापेगी जो इस रूप को यों नाश कर देती है जैसे हिम-संहति कमल को दबाती है। इसी के लिये मैं तुम्हें स्नेह से यहां ले आई हूं। यह सुन कलिङ्गसेना ने उन फलों को खा लिया और उसी क्षण उसके सर्वाङ्ग ऐसे हो गये मानो वे अमृतरस के सार से सींचे गये हों। फिर कौतुक से, विहारार्थ भ्रमण करती हुई उसने नगर के उद्यान, हेमकमलवाले सरोवर, और ऐसे २ वृक्षों को देखा जिनके फलों का स्वादु अमृत के समान मीठा था, उद्यान में सुनहले परों के अनेक पक्षी घूम रहे थे, और वहां मणिमय खम्भ बनें जान पड़ते थे। शून्य स्थान में तो भित्ति और भित्तिवाले स्थान में शून्य प्रतीत होता था। जहां यथार्थ में जल था वहां भूमि जान पड़ती और जहां सचमुच भूमि थी वहां जल का भ्रम होता था। वह एक अपूर्व सा विचित्र संसार प्रतीत होता था जिसकी रचना मय नामक असुर ने अपनी माया के प्रभाव से की थी। प्राचीन समय में सीताजी को खोजते हुये बन्दरों ने यहां प्रवेश किया था, सो चिरकाल तक उन्हें बाहर जाने का रास्ता न मिलता था, अन्त में स्वयंप्रभा की कृपा से उन्हें निकलने का मार्ग मिला। ऐसे विलक्षण पुर को जब राजकुमारी भली प्रकार देख चुकी तो उसे परम हर्ष और आश्चर्य हुआ; फिर स्वयंप्रभा की आज्ञा ले वह अपनी सखी सोमप्रभा के साथ विमान पर बैठ तक्षशिलापुरी में अपने घर को आ पहुँची और वहां जो जो देखा था सब का पूरा पूरा हाल निज माता पिता को सुना गई जिससे वे लोग परम सन्तुष्ट हुये। योंही दोनों सखियां चिरकाल लों आपस में हिलती मिलती और खेलती रहीं। एक दिन सोमप्रभा ने कलिङ्गसेना से कहा कि हे सखि! हम दोनों का मिलना जुलना तभी तक होता है जब लों तुम क्वारी हो विवाह हो जाने पर फिर तुम्हारे पति के घर में मेरा आना जाना कैसे होगा क्योंकि सखी के भर्ता को देखना वा अङ्गीकार कदापि न चाहिये और सास तो वीग की नाईं भेड़ी के मांसवत् सदा बहू को खाया करती है, सुनो मैं तुम्हें कीर्तिसेना की कथा सुनाती हूं।

प्राचीन समय की बात है कि पाटलिपुत्र नगर में धनपालित नामक एक अत्यन्त धनी बनिया रहता था जो अपने नाम को सार्थ करता था। उसकी कन्या का नाम कीर्तिसेना था जो रूप में अपने समान दूसरी स्त्री न रखती थी; अपने पिता को वह प्राणों से भी अधिक प्यारी थी। इस कन्या का विवाह उसने मगध देश

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के देवसेन नामक एक धनी वणिक्‌पुत्र से किया था । यद्यपि देवसेन स्वयं बड़ाही सज्जन था किन्तु उसकी माता जो निज पति की मृत्यु के उपरान्त घर की मालकिनी हुई थी स्वभाव की बड़ी चिड़चिड़ी और क्रूरा थी । जब उसने देखा कि पुत्र और बहू की बहुत बनती है तो वह क्रुद्ध होकर पुत्र की अनुपस्थिति में कीर्तिसेना के साथ बहुतही बुरा वर्ताव करने लगी । बहू विचारी कभी भी इस बात की चर्चा अपने प्यारे पति से न करती । क्योंकि कुटिल सास के अधीन रहकर बहू का निर्वाह बड़ी कठिनता से होता है । एक दिन वह वणिक्‌पुत्र देवसेन निज बन्धुओं के कहने सुनने से वाणिज्य के निमित्त बल्लभी नाम्नी पुरी को जाने के लिये उद्यत हुआ; उस समय कीर्तिसेना ने हाथ जोड़ पति से निवेदन किया कि हे प्राणनाथ ! आज लों मैंने आपसे नहीं कहा था, किन्तु आज यह निवेदन करती हूं कि आपके यहां रहतेही आपकी माताजी मुझे अनेक प्रकार के कष्ट दिया करती हैं, जब आप विदेश को चले जायंगे तो मैं नहीं जानती कि वे मेरे साथ कैसा वर्ताव करेंगी । यह सुन वह घबड़ा गया और उसके स्नेह के कारण डरता हुआ माता के समीप जा नम्र हो बोला कि हे अम्ब ! मैं तो विदेश को चला। तुम्हारी बहू को तुम्हारेही हाथों सौंपे जाता हूं , यह कुलीन की तनया है इस पर सदा स्नेह रखना जिसमें इसे कष्ट न हो। यह सुन उसकी माता ने कीर्तिसेना को बुलवा भेजा और नेत्रों से घूर कर पुत्र से कहने लगी कि “मैंने क्या किया है ? इससे पूछो, जो वह तुमसे कहती है, यह तो घर में झगड़ा कराया चाहती है, मुझे तो जैसे तुम वैसी यह, मेरे लेखे तो तुम दोनों समान हो” । इतना सुन वह वणिक्‌पुत्र उसकी ओर से निश्चिन्त हो गया, माता के स्नेह मय वाक्यों में यदि छल भरा हो तो कौन न धोखे में आ जायगा । कीर्तिसेना मन्द २ मुस्कुराती हुई, विस्मित हो सब सुन रही थी, किन्तु वह कुछ भी न बोली। दूसरे दिन देवसेन बल्लभीपुरी के लिये चल पड़ा । जब वह निज पति के विरह से दु:खित होने लगी तो उसकी सास ने दासियों को निषेध कर दिया कि कोई उसकी बात न सुने और न उसका काम काज करे; फिर एक दिन घर की दासी से मिलकर सास ने सलाह की और की!र्तिसेना को एक कोठड़ी में बन्द कर उसके सब वस्त्र उतारकर उसे नङ्गी कर दिया और कहने लगी कि क्यों रे पापिष्टे !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तू मेरे पुत्र को उभाड़ मुझसे लड़वाया चाहती थी। इतना कह उसने दासी को संग ले उसे खूब मारा और लात तथा मुक्कों से उसे कूटकर नखों से नोंचा खसोटा, फिर उसी कोठड़ी में डाल बाहर से ताला बन्द कर दिया। नित्य सन्ध्या के समय वह दुष्टा सास आधी कटोरी पका हुआ चावल और एक गिलास पानी उसी कोठरी के अन्दर कीर्तिसेना को दे दिया करती थी। फिर वह विचारने लगी कि जब कुछ दिनों में पति के विदेश रहनेही पर यह मर जायगी तो मैं इसे उठाकर कहीं फेंक दूंगी और यह प्रसिद्ध कर दूंगी कि वह किसी के साथ निकल गई। इस प्रकार विचारी कीर्तिसेना को, जो पिता के घर में सदा सुख में रही और जिसे पति भी बड़े प्रेम से सुखपूर्वक रखता था उस दुष्टा सास ने अकेली कोठरी में बन्द कर दिया, जहां बिछाने को एक चिथड़ा या चटाई तक भी न थी। वह असहाया वहीं पड़ी पड़ी रोया करती और विचारती थी कि देखो मेरे पति ऐसे धनाढ्य हैं, मैं स्वयं उत्तम कुल में उत्पन्न हुई हूं, मेरा सौभाग्य अच्छा है और मेरी चाल भी प्रशंसनीय है फिर भी मैं अपनी सास की कृपा से यह विपत् भोग रही हूं! इसीलिये मैं जानती हूं कि लोग कन्या के जन्म की निन्दा करते हैं क्योंकि सास और ननद के दु:स्वभाव के कारण अनेक प्रकार के कष्ट उन्हें उठाने पड़ते हैं। वह इस प्रकार सोचती और इधर उधर उस कोठरी में घूमती थी कि अकस्मात् लोहे का एक खम्भा उसे एक कोने में पड़ा हुआ दिखाई पड़ा, मानो भगवान् ने उसके हृदय का कोई कांटा निकालकर रख दिया हो। उसी से उसने धीरे धीरे कोठरी की गच को खोदना आरम्भ किया, और तबतक खोदती रही जबतक कि उसने बड़ा सा छेद न बना लिया, यह छेद ठीक उस कोठरी के ऊपर निकला जिसमें उसके कपड़े इत्यादि रखे रहते थे। वह उस छेद से नीचे उतर गई जहां एक छुटा हुआ दीप क्या बल रहा था मानो उसके धर्म्म का प्रकाश वहां चारो ओर छाया था। वहां से अपने कुछ वस्त्र और सुवर्ण इत्यादि जो उसने अपने सन्दूक में रखे थे निकाले और उन्हें ले रात के समय चुपके से वह घर के बाहर निकली और विचारने लगी कि ऐसी अवस्था में पिताके घर जाना मुझे उचित नहीं है, वहां के लोग देखकर मुझे क्या कहेंगे और कौन मेरी बात का विश्वास करेगा। उचित यही है कि मैं किसी युक्ति से चलकर अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राणप्यारे से मिलूं क्योंकि "इह परलोक दोऊ जग माहीं। सती नारि-गति पति बिन नाहीं" । यह विचार उसने एक तालाव में स्नान कर राज-पुत्रों का सा मर्दाना वेष धारण किया और हाट में जा कुछ सोना बेंच उसने खाने पीने का सामान ले एक बनिये से जान पहिचान कर उसी के घर में डेरा लगा दिया। दूसरेही दिन किसी समुद्रसेन नामक बनिये को बल्लभीनगरी को व्यापार के निमित्त जाते देख उसने उससे परिचय किया और उसी के साथ राजपुत्र के वेष में निज पति से मिलने की इच्छा से बल्लभीपुरी को चली। इसने उस वणिक्पुत्र से कहा कि मेरे गोत्रवालों ने मुझे बहुत कष्ट दिया है सो मैं अपने लोगों के पास बल्लभी नगरी को जाता हूं। यह सुन वह वणिक्पुत्र इस ध्यान से कि यह कोई भारी राजकुमार है मार्ग में उसकी परिचर्य्या सब प्रकार गौरव से करता रहा। उस वणिक् ने ऐसे जङ्गल के पथ से चलना स्वीकार किया, कि जिस रास्ते से प्रायः वे पथिक आया जाया करते थे जो राजकर के भय से राजमार्ग को परित्याग कर बन के रास्ते का आश्रय लेते थे। कुछ दिनों के उपरान्त उनलोगों ने लोग अरण्य-द्वार पर पहुँच। सन्ध्या को वहीं डेरा लगा दिया। रात के समय यमराज की दूती की नाईं शृङ्गाली का भयङ्कर शब्द सुनने में आया। जो वणिक् लोग इस अप-शकुन के ज्ञाता थे उन्हें डांकुओं का भय हुआ सो वे शस्त्र से सन्नद्व हो शत्रुओं से भिड़ने को तयार हो गये। जब डाकुओं के अग्रयायी अन्धकार की, पहिले चढ़ाई हुई तो पुरुष वेषधारी कीर्तिसेना मन में विचारने लगी कि अहो! पूर्वजन्म में दुष्कर्म करनेवालों के कर्म्म इस जन्म में भी बुरे फल पाते हैं देखो सास ने जो आपत्ति मेरे लिये उठाई उसका फल मुझे यहां भी मिलने लगा। पहिले सास के कोपरूपी मृत्यु ने मुझे ग्रसा, तदुपरान्त भूगर्भ की उस कोठरी में मेरा गर्भवास हुआ, दैवात् वहां से निकल अर्थात् पुनर्जन्म ले मैं यहां आई तो यहां भी मेरे प्राणों का सङ्कट उपस्थित हुआ। यदि मैं यहां चोरों के हाथ से मारी पड़ी तो मेरी वैरिन सास मेरे पति से यही कहेगी कि वह किसी पुरुष के प्रेम में फँसकर यहां से निकल गई। यदि किसी ने स्त्री जानकर मुझे हाथ लगाया या मेरे वस्त्र उतरवाये तो निज सतीत्व गँवाने की अपेक्षा मेरा मर जाना अच्छा है। इसलिये इस वणिक्पुत्र की उपेक्षा कर मुझे अपनी रक्षा आप करनी चाहिये क्योंकि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पतिव्रता स्त्रियों को सुहृद इत्यादि का विचार छोड़ सब से पूर्व अपना सतीधर्म्म देखना चाहिये। ऐसा विचार वह खोजती हुई किसी वृक्ष में एक खोखला स्थान पा गई मानो पृथ्वी ने दया कर उसे वह जगह दे दिया। उसके अन्दर पैठ उसने पत्तों से अपने तई छिपा लिया और पति के पुन: सङ्गम की इच्छा से किसी प्रकार जीती रही। आधी रात के समय डांकुओं ने आकर वणिक्‌पुत्र पर छापा मारा और चारो ओर से घेर लिया। यद्यपि वे लोग भी निज शस्त्रों की सहायता से खूब लड़े किन्तु अन्त में सब के सब डाकुओं के हाथों से मारे पड़े और डाकू लोग उस समुद्रसेन नामक बनिये को उसके साथियों सहित मार कर सब धन ले चम्पत हुये।

कीर्तिसेना वहीं छिपी २ यह सब कौतुक देख रही थी और चारो ओर से कोलाहल के मारे उसके कान फटे जाते थे। धन्य है विधि की गति? कि मारे भय के उसके प्राण न निकल गये। रात बीत जाने पर जब सूर्य्य भगवान् उदय हुये तो कीर्तिसेना उस खोड़रे से बाहर निकली। ठीकही है **"निज पति चरणरता जु हैं जग में सती सु नारि। आपद मै तिनकी सदा दैव करत रखवारि"** ॥ सो न कि केवल एक सिंह उसे देखकर दूसरी ओर चला गया, किन्तु एक मुनि न जाने कहां से अचानक दिखाई पड़ गये और जब कीर्तिसेना ने उनसे मार्ग पूछा तो वे उसे खाने के निमित्त कुछ मीठा फल दे अपने कमण्डलु से जल पिला रास्ता बता पुन: अन्तर्धान हो गये। उस अमृतफल से उसकी भूख प्यास जाती रही और वह पतिव्रता तृप्त हो तपस्वी के बताये हुये मार्ग से आगे चली। सन्ध्या समय सूर्य्य भगवान् अस्ताचल पर पहुँचे, उनके हिलते हुये किरणों से यह जान पड़ता था कि मानो वे निज अँगुरियों से कीर्तिसेना को आगे बढ़ने से निषेध करते और रात्रि को वहीं टिकने के लिये कहते हैं। वह एक बड़े वृक्ष के खोड़रे में छिपकर बैठ रही और उसके द्वार को पत्ते सत्ते से ढाँक लिया। रात्रि के आरम्भही में द्वार के छेद में से देखती क्या है कि एक महा भयानक राक्षसी अपने बच्चों को लिये हुई वहां आई। कीर्तिसेना विचारने लगी कि यद्यपि मैं अनेक आपतियों से बच गई हूं किन्तु इस बेर ये सब मुझे अवश्य खा जांयगी। इस प्रकार सोच वह डर रही थी कि वे झटपट

उसी वृक्ष पर चढ़कर बैठ गये, बच्चों ने कहा कि 'मां हमें कुछ खाने को दे, भूख लगी है'। राक्षसी ने कहा कि हे पुत्रो! आज मैं महा श्मशान पर गई थी परन्तु कहीं भी कुछ खाने को न मिला। डाकिनी लोगों से मैंने मांगा भी पर किसी ने भी कुछ न दिया, तब मैंने दुःखित होकर श्रीभैरवजी से खाने को मांगा। वह मेरा नाम और कुल पूछ कहने लगी कि हे भयङ्करि! तू खर और दूषण के वंश में होने से कुलीना है अतएव यहां से समीपही वसुदत्तपुर को तू चली जा, वहां वसुदत्त नामक एक अत्यन्त धर्मपरायण राजा रहते हैं। वे इस जङ्गल की सीमा पर रहकर इसकी रक्षा करते हैं, इसका कर भी वे बहुतही थोड़ा लेते और तस्कर इत्यादिकों को स्वयं दण्ड देते हैं। एक दिन इसी जंगल में मृगया के परिश्रम से थक कर जब वे सो गये थे उस समय उनके कान में एक छोटी कनसलाई घुस गई। शिर के अन्दर जाकर उसने अनेक बच्चे दिये, जिसके कारण उन्हें ऐसा रोग हो गया कि अब उनके शरीर में नाम मात्र को मांस अवशिष्ट है। वैद्यों को उनके रोग की कुछ भी थाह नहीं लगती और यदि यही दशा रही तो कुछ दिनों में उनका देहान्त हो जायगा। यदि वह मर जावें तो तू उनका मांस खाइयो, और अपनी माया से तू छ महीने तक परितृप्त रहेगी। इस प्रकार श्रीभैरवजी ने संशय सहित मेरा भोजन नियत कर दिया है जो अभी चिरकाल तक नहीं मिल सकता, सो हे पुत्रो! तुम्हीं कहो मैं क्या करूँ। राक्षसी के यों कहने पर उसके पुत्रों ने पूछा कि अम्ब! यदि रोग का पता लग जाने पर वह हटा दिया जाय तो क्या वह राजा बच जायगा? भला इतना भारी रोग क्योंकर चङ्गा हो सकता है? यों पूछी जाने पर राक्षसी कहने लगी कि हां यदि रोग चंगा हो जावे तो राजा जी सकता है। सुनो मैं तुम्हें इसकी युक्ति बताती हूं।

प्रथम तो राजा के शिर में गर्म घी खूब मलना चाहिये, तदुपरान्त दो पहर की धूप में उसे बैठाकर सिर में भली प्रकार गर्मी पहुँचानी चाहिये। फिर कान के छेद में बांस की एक ऐसी नली पैठानी उचित है जिसका दूसरा कोना एक ऐसी थाली के छेद पर रहे जो ठंढे पानी पर रक्खी हो। कनसलाइयां गर्मी और पसीने से घबड़ा कर कान द्वारा उसी नली में घुस जांयगी और ठंढक की खोज में दौड़ती हुई टपाटप उसी पानी में गिरने लगेंगी। इस प्रकार राजा का रोग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चंगा किया जा सकता है। राक्षसी अपने बच्चों से इतना कह चुप रही, और कीर्तिसेना खोड़रे में छिपी हुई सब सुन रही थी । फिर विचारने लगी कि यदि मैं यहां से जीती निकली तो अवश्य उस राजा को इस रोग से निर्मुक्त कर इसी युक्ति से उसके प्राण बचाऊँगी, और क्योंकि ये जंगल प्रान्त में रहकर यात्रियों से थोड़ाही कर लेते हैं तो इस सुबीते के कारण सब वणिक् लोग इसी मार्ग से आते जाते हैं। ऐसाही उस स्वर्गवासी समुद्रसेन नामक वणिक् ने मुझसे कहा था, अतएव यह बात निश्चय है कि मेरे पति भी इसी मार्ग से लौटेंगे। सो मैं जङ्गल के प्रान्तवर्ती बसुदत्तपुर में चलकर, राजा को इस रोग से चङ्गा कर, वहीं रह, निज पति के लौटने की बाट जोहूंगी।

इस प्रकार अनेक भांति की चिन्ता करते करते किसी तरह वह रात बीती, प्रात:काल होने पर जब वे सब राक्षस चले गये तो यह खोड़रे के बाहर निकली और पुरुष का वेष धारण किये एक ओर को चली । चलते चलते दो पहर के समय एक सज्जन ग्वाले से भेंट हुई । वह इसकी सुकुमारता और थकावट को देख दयार्द्र हो गया, इतने में कीर्तिसेना ने निकट जाकर उससे पूछा कि 'यह कौन प्रदेश है ?' उस ग्वाले ने कहा कि यह राजा वसुदत्त का राज्य है और यह साम्हने वसुदत्तपुर नामक नगर है। यहां के राजा बड़े सज्जन और महात्मा हैं किन्तु इस समय रोग से मूर्छा में पड़े हैं। यह सुन कीर्तिसेना ने उस ग्वाले से कहा कि यदि कोई मुझे राजा के समीप ले चले तो मैं उसे अभी चङ्गा कर सकता हूं। ग्वाले ने कहा कि मैं उसी नगर को जा रहा हूं यदि तुम मेरे सङ्ग चलो तो मैं इसका यत्न कर दूंगा । कीर्तिसेना उसके साथ हो गई और वह उसे लिये हुआ नगर में जा पहुँचा और प्रतीहारी से जो बहुत घबड़ाया हुआ था निवेदन किया कि यह वैद्यजी राजा को चङ्गा करने कहते हैं। प्रतीहारी ने राजा को खबर दी और उनकी आज्ञा से इन वैद्यजी को उनके समीप ले गया । रोगपीड़ित राजा उस अद्भुत रूपवाले वैद्य को देखतेही कुछ स्वस्थ से हो गये क्योंकि अन्तरात्मा हिताहित को खूब पहिचानता है। फिर राजा ने कहा कि 'हे सुलक्षण! यदि आप कृपा कर मुझे चङ्गा कर देंगे तो मैं आधा राज्य आपको पुरस्कार में समर्पण करूँगा । मैंने आज स्वप्न में देखा है कि किसी स्त्री ने मेरी पीठ पर से काला

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कम्बल हटा दिया है सो मुझे विश्वास होता है कि आप मुझे अवश्य नीरोग करेंगे। यह सुन कीर्तिसेना ने कहा कि 'हे देव! आज का दिन तो बीत चला कल में आपका रोग अवश्य दूर कर दूंगा, आप धीरज रखिये, घबड़ाइये मत।' यह कह कीर्तिसेना ने उस दिन राजा के सिर में खूब घी मलवाया जिससे उन्हें रात को भली प्रकार निद्रा आई और वह भयानक वेदना जाती रही। यह देख सब लोग कीर्तिसेना की बड़ी प्रशंसा करने लगे कि हमलोगों के पुण्यप्रताप से यह कोई देवता वैद्यरूप से आ गये हैं। महाराणी भी अनेक प्रकार से उसकी खातिरी करने लगीं और रात्रि के सोने के लिये प्रसादही में एक स्थान अलग नियत कर दिया गया जहां सेवा के लिये बहुत सी दासियां उपस्थित थीं।

दूसरे दिन मध्यान्ह के समय जब अन्तःपुर में सब मन्त्री एकत्रित हुये तो सब के सन्मुखही कीर्तिसेना ने राजा की चिकित्सा आरम्भ की, और उक्त राक्षसी की बताई हुई उस अद्भुत युक्ति द्वारा उसने महाराज के सिर से कान के रास्ते अनुमान १५० कनसलाइयां बाहर निकालीं और उन्हें एक घड़े में रख घृत और दूध से राजा के सिर में ठण्ढक पहुँचाई। योंही क्रमशः राजा के रोगमुक्त होने पर सबही लोग उन कनसलाइयों को देख आश्चर्य्य करते थे। महाराज भी उन दुःखदायी कीड़ों को जो उनके सिर के अन्दर से निकले थे देखकर बहुत डर गये और प्रसन्न हो उन्होंने अपना नया जन्म माना। आरोग्य स्नान के उपरान्त महाराज ने बड़ा भारी उत्सव मनाया और कीर्तिसेना को अनेक गांव हाथी घोड़े और सोने का ढेर तथा आधा राज्य दे भली प्रकार सत्कारित किया। महाराणी तथा मन्त्रियों ने भी उसे सुवर्ण और वस्त्रों से यह कहकर भूषित किया कि यह वैद्यजी प्रभु के प्राणों के बचानेवाले हमारे पूज्य हैं। कीर्तिसेना ने वह सब धन राजाही के हाथ में यह कहकर सौंप दिया कि अभी आप इसे अपनेही पास रखिये मैं अभी कुछ दिनों तक यहीं रहूंगा। इतना कह अपना निवासस्थान वहीं बना पुरुषवेष से रहती हुई वह पति के लौटने का मार्ग जोहने लगी, राज्य के सभी लोग उसका मान और सत्कार करते थे।

एक दिन उसने लोगों से सुना कि वल्लभीपुर से कोई देवसेन नामक अत्यन्त धनी बनिया उस नगर में आया है। कीर्तिसेना ने अनुमान किया कि हो न हो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मेरे पतिही आये होंगे सो वह अपने सेवकों को साथ ले पुरुष वेष में उनके स्थान पर पहुँची और मयूरी की नाईं निज पतिरूपी मेघ का दर्शन पा हर्ष के मारे प्रसन्न हो मनही मन नाच उठी। फिर चिरकाल की उत्सुकता और विरहसन्ताप के दूर होने से जो आनन्द हृदय में हुआ उससे अश्रुपूरित नेत्रों द्वारा मानो अर्घ दे वह निज पति के चरणों में दौड़ कर जा पड़ी। देवसेन यह देख भौंचक सा रह गया किन्तु जब उसने पुरुषवेष में छिपी हुई दिन की चन्द्रकला की नाईं अपनी उस चन्द्रमुखी भार्य्या को पहिचाना तो उसके आनन्द की सीमा न रही और उसका चन्द्रकान्तमणिरूपी हृदय उस शशिवदनी को देख आर्द्र हो गया।

जब कीर्तिसेना प्रेम से गद्गद हो अपने पति देवसेन के पैरों पर जा गिरी तो वहां के सभी लोग आश्चर्य्य से यह देखने लगे कि यह क्या बात है। सारे नगर में धूम मच गई और राजा वसुदत्त भी यह विचित्र हाल सुन स्वयं वहां आन उपस्थित हुये। जब महाराज ने कीर्तिसेना से इसका भेद पूछा तो उसने अपनी सास का सारा दुश्चरित्र और अपना वृत्तान्त कह सुनाया, जिसे जान देवसेन निज माता से पराङ्मुख हो गया किन्तु उसी क्षण कोप, क्षमा, विस्मय और हर्ष ने एक साथही उसके हृदय में स्थान पाया। कीर्तिसेना का ऐसा अद्भुत निर्मल चरित सुनकर वहां के सभी लोग आनन्द से यों कहने लगे कि—

"पतिसुभक्ति-रथरूढ़ ह्वै शील कवच धरि अंग"।
धर्मसारथी सँग लिये सती जयति जग जंग॥

महाराज ने कहा कि पति के लिये क्लेश उठाती हुई इस सती ने श्रीरामचन्द्र जी के साथ कष्ट सहनेवाली सीतादेवी को भी जीत लिया। सो मेरे प्राणों को बचानेवाली यह मेरी बहिन है। राजा का ऐसा भाषण सुन कीर्तिसेना ने कहा कि हे भैय्या! आपने जो कुछ धन गांव हाथी घोड़े और रत्न इत्यादि मुझे प्रसन्न हो दिये थे वह सब आपही के पास हैं सो वह सब कृपा कर मेरे भर्ता को दे दीजिये। यह सुन महाराज ने वह सब धन उसके पति देवसेन को दे दिया और सत्काररूप से प्रतिष्ठा की एक पगड़ी भी उसे बँधवाई।

तदुपरान्त देवसेन राजा से प्राप्त तथा निज वाणिज्योपार्जित द्रव्य से विशेष धनी हो, माता को परित्याग कर, निज भार्य्या कीर्तिसेना के साथ सुखपूर्वक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसी नगरी में रहने लगा। कीर्तिसेना भी अपनी दुष्टा सास से बचकर तथा निज उत्तम असामान्य चरित से प्रसिद्धि को प्राप्त कर, अखिल सुख और ऐश्वर्य का उपभोग करती हुई, निज भर्ता के उत्तम कामों की देहधारिणी फलसमृद्धि की नाईं, आनन्द से अपने दिन बिताने लगी।

इस प्रकार सती स्त्रियां, विरोधी विधि के दिये हुये कष्टों को सहनपूर्वक, निज चरित्र-धन की रक्षा करती हुईं, अपने सत्वरूपी विभव से रक्षित हो, सदा अपना तथा अपने पति का कल्याण साधन करती हैं। सो हे राजकुमारि ! सास और ननद के दिये हुये अनेक ऐसे २ कष्ट विचारी बहुओं को सहने पड़ते हैं, अतएव मैं भगवान् से सदा यही प्रार्थना किया करती हूं कि वह ऐसे घर में तुम्हारा विवाह करे जहां सास और ननद, शठ क्रूर तथा दुःख देनेवालियां न हों।

सुनी जबै या सुखदायिनी कथा।
विलक्षणा अद्भुत मोदकारिणी॥
लह्यो महाहर्ष लसत्सुकौतुका।
कलिङ्गसेना मनुजेन्द्रपुत्रिका॥

निरखि भई पूरण कथा गयउ मित्र* निजधाम।
सखिहिं भेंटि सोमप्रभा भवन गई अभिराम॥

चौथा तरङ्ग॥

जिस समय सोमप्रभा आकाशमार्ग से उड़ती हुई निज धाम को जाने लगी तो कलिङ्गसेना उसके स्नेह के कारण कोठे पर आश्चर्य से खड़ी हो उसकी ओर देख रही थी। उसी समय विद्याधरों का स्वामी मदनवेग नामक कोई युवा विद्याधर भी व्योम में उड़ता हुआ जा रहा था, अचानचक उसकी दृष्टि जो दूरही से इस त्रिजगन्मोहिनी पर पड़ी तो वह मोहित हो मन में कहने लगा कि इस मानुषी

* सूर्य्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कन्या के रूप के आगे विद्याधारियों का सौन्दर्य्य भी तुच्छ है अप्सरायें विचारी किस गिनती हैं ! यदि इसके साथ मेरा विवाह न हुआ तो मैं इस जीवन को धारण कर क्या करूँगा किन्तु मैं विद्याधर ठहरा और यह मानुषी हैं मेरा इसका मेल क्योंकर होगा । ऐसा विचार उसने प्रज्ञप्ति नामक विद्या को स्मरण किया जो साकार प्रगट हो उससे यों कहने लगी कि 'हे सुभग ! यह यथार्थ में मानुषी नहीं किन्तु अप्सरा है जो किसी शाप के कारण राजा कलिङ्गदत्त के घर में उत्पन्न हुई है ।' विद्या का ऐसा कहना सुन मदनवेग अपने घर को गया, किन्तु वहां किसी भी काम में उसका चित्त न लगता, कामार्त हो रात दिन उसी को चिन्ता में व्याकुल रहता था । वह विचारने लगा कि यदि मैं इसे बलपूर्वक हर लाऊँ तो ठीक न होगा, क्योंकि मुझे ऐसा शाप है कि हरी हुई स्त्री से भोग करनेही से मेरी मृत्यु हो जायगी । अतएव इसे पाने के लिये मैं शम्भु भगवान् की आराधना (तपस्या) करूँगा क्योंकि तपस्या से अनेक कल्याण होते हैं, इसके अतिरिक्त मुझे दूसरा उपाय नहीं दीख पड़ता । ऐसा विचार दूसरे दिन वह ऋषभ पर्वत पर जा निराहार रह, एक पैर पर खड़ा हो तपस्या करने लगा। उसकी ऐसी कठिन तपस्या से शीघ्र प्रसन्न हो श्रीभवानीपति ने दर्शन दे यों आज्ञा दी कि हे मदनवेग, यह कलिङ्गसेना नाम्नी कन्या भूतल में अपने रूप के कारण प्रसिद्ध है इसके समान स्वरूपवान भर्ता इस संसार में नहीं है । केवल वत्सराज इसके योग्य हैं सो इसे चाहते हैं किन्तु वासवदत्ता के डर से वे खुलकर इसके पिता से इसको नहीं मांगते । और यह राजपुत्री भी रूप की लालची है, सो सोमप्रभा के मुख से वत्सराज की प्रशंसा सुन उन्हें स्वयं वरने के लिये उनके पास जायगी। सो इसके विवाह होने के पूर्व तू व्याकुलचित्त वत्सेश्वर का रूप धर उसके पास जा गान्धर्व रीति से विवाह कर ले। बस इसी युक्ति से तू इस सुन्दरी कलिङ्गसेना को पा सकता है।' शम्भु भगवान् का ऐसा आदेश सुन, मदनवेग उन्हें प्रणाम कर अपने कालकूट पर्वतवाले घर को लौट आया ।

इधर तक्षशिलापुरी में कलिङ्गसेना नित्यही अपनी प्यारी सखी सोमप्रभा से मिलती जुलती रही । सोमप्रभा सन्ध्या के समय तो अपने घर को चली जाती और प्रातःकाल होतेही आकाशमार्ग से उड़ कलिङ्गसेना से आ मिलती थी। एक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिन उसने एकान्त में सोमप्रभा से कहा कि 'हे सखि! एक बात मैं तुझसे कहती हूं पर उसे तू किसी से भी मत कहियो, सुन, मैं जानती हूं कि मेरा विवाह-समय निकट आ गया है क्योंकि अनेक राजाओं ने मेरे लिये पिताजी के समीप दूत भेजे थे परन्तु उन सभों को उन्होंने लौटा दिया। किन्तु श्रावस्ती नगरी में जो प्रसेनजित् नामक राजा हैं केवल उन्हीं के दूत को उन्होंने सत्कारपूर्वक अपने यहां ठहराया है। मैं अनुमान करती हूं कि मेरी माता ने भी इस बात को स्वीकार किया है, सो मेरे माता पिता दोनों की सम्मति में वह कुलीन वर प्रतीत होते हैं। उनकी उत्पत्ति उस कुल से हैं जिसमें कौरव और पाण्डवों की दादियां अम्बा और अम्बालिका उत्पन्न हुई थीं। हे सखि! यह निश्चित है कि मैं श्रावस्ती नगरी के राजा प्रसेनजित् से ब्याही जाऊँगी; कलिङ्गसेना की यह बात सुन सोमप्रभा शोच के मारे रोती हुई, निज अश्रुबुन्दों से मानों मोतियों की माला पिरोने लगी। जब कलिङ्गसेना ने उसके रोने का कारण पूछा तो मयासुर की उस पुत्री ने जो सारा संसार देख चुकी थी उत्तर दिया कि हे सखि वर में जो बातें ढूंढी जाती हैं, अर्थात् वय, रूप, कुल, शील और धन इनमें वयही प्रधान है और वंश आदिक सब इसके पीछे देखे जाते हैं। मैंने उस राजा को देखा है, वह बहुत वृद्ध है कुम्हिलाये हुये चमेली के फूल की नाईं उसकी जाति को लेकर कोई क्या करै? सो यदि हिम की नाईं श्वेत उस राजा से तुम्हारा मेल हेमन्त की पद्मिनी की नाईं होगा तो तुम्हारा यह मुखकमल मुरझा जायगा और तुम्हारी दशा बड़ी शोचनीय होगी। इसी कारण मुझे खेद हो रहा है, हर्ष तो मुझे तब होता, हे कल्याणि! जब उदयन नामक वत्सराज तुम्हारे पति होते। रूप, लावण्य, कुल, शील और विभूति में उनके समान कोई भी दूसरा राजा इस संसार में नहीं है। हे कृशोदरि! यदि उस भर्ता से जो तेरे अनुरूप है तेरा विवाह हो तो ब्रह्मा का तुझे ऐसा सौन्दर्य्य देना सुफल हो जाय। सोमप्रभा के ऐसे बचनों को सुन, कलिङ्गसेना का मन मानो किसी यन्त्र द्वारा वत्सराज के समीप जा रहा। फिर राजकन्या ने मयासुर की पुत्री से पूछा कि हे सखि! उनका नाम वत्सराज क्यों हुआ? और वे किस वंश से उत्पन्न हुये हैं? सो तुम मुझे सुनाओ और यह भी बतलाओ कि उनका नाम उदयन किस कारण पड़ा? सोमप्रभा ने कहा कि, हे सखि! सुन मैं तुझे सब वृत्तान्त भली प्रकार सुनाती हूं—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस संसार का भूषण वत्स नाम एक प्रदेश है जहां दूसरी अमरावती की नाईं कौशाम्बी नाम्नी एक पुरी है। यह, उसी प्रदेश के राजा हैं, इसीसे इनका नाम वत्सेश्वर है और उनके वंश का जो वृत्तान्त पूछती हो सो हे कल्याणि! वह भी सुनो, मैं तुमसे कहती हूं—

पाण्डववंश में जो श्रीअर्जुनजी हुये हैं, उनके पुत्र का नाम अभिमन्यु था, जिन्होंने चक्रव्यूह का भेदन कर, कौरवों की सेना का नाश किया था। उनसे राजा परीक्षित हुये जो भरतवंश में मुख्य थे, इनसे जन्मेजय उत्पन्न हुये जिन्होंने प्रसिद्ध सर्पमेध यज्ञ किया था। उनसे शतानीक हुये जिन्होंने कौशाम्बीपुरी बसाई और जो अनेक दैत्यों का संहार कर देवासुरसंग्राम में स्वर्गधाम को पधारे। उनसे राजा सहस्रानीक उत्पन्न हुये जिन्होंने सारे संसार में अपना यश फैलाया और जो इन्द्र के भेजे हुये रथ पर आरूढ़ हो सदेह अमरावती को आते जाते थे। उनकी देवी मृगावती से इन उदयन का जन्म है जो शशिवंश में भूषण और जगत् के नेत्रों को आनन्ददेनेवाले राजा हैं। इनका नाम उदयन क्यों हुआ, सो मैं अब कहती हूं।

जिस समय रानी मृगावती अर्थात् राजा उदयन की माता, गर्भवती थीं तो एक दिन उनकी ऐसी इच्छा हुई कि मैं रुधिर के सरोवर में स्नान करूँ, सो उनके पति राजा सहस्रानीक ने पाप के भय से रुधिर से सरोवर न भरवा के लाक्षा इत्यादि रङ्गों से उसे परिपूरित कर दिया। रानी, जो उसमें स्नान करने लगीं तो गरुड़वंशीय कोई पक्षी मांस के धोखे में उन्हें ले उड़ा और जीतीही को विधिवशात् उदयाचल पर छोड़ उड़ गया। वहां श्रीयमदग्नि ऋषि ने रानी को देखा सो यह कह उन्हें धीरज बँधाया कि तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारे पति से तुम्हारी पुनः भेंट होगी। यह सुन रानी मृगावती पुनः पतिसम्मिलन की आशा से उसी आश्रम में रहने लगीं। इस वियोग का कारण यह हुआ कि तिलोत्तमा नाम्नी अप्सरा ने अवज्ञाजनित ईर्षा से राजा सहस्रानीक को ऐसाही शाप दे दिया था कि कुछ बरसों के लिये तुम्हारा वियोग रानी से हो जायगा। योंही कुछ दिनों तक श्रीयमदग्नि ऋषि के आश्रम में रहती हुई रानी मृगावती के उसी गर्भ से उस उदयाचल पर एक चन्द्र सरीखे सुन्दर पुत्र का जन्म हुआ। उसी समय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह आकाशवाणी कि 'हे रानी! यह उदयन नामक तुम्हरा सुत सार्वभौम राजा होगा और इसका पुत्र सर्व विद्याधरों का राजा होनेवाला है।' इस प्रकार उदय पर्वत पर जन्म होने के कारण देवताओं ने इनका नाम उदयन रख दिया। उधर इन्द्र के सारथि मातलि ने राजा सहस्रानीक के शाप का हाल सुनाकर यह भी बतलाया कि इतने दिनों के उपरान्त शाप का अन्त होगा तब पुनः आपकी भेंट प्यारी रानी से होगी। इसी आशा से राजा ने भी किसी किसी प्रकार विरह के दिनों को विताया। जब शाप का अन्त समय आया तो उदय पर्वत के रहनेवाले एक शबर से, विधिवशात् राजा सहस्रानीक ने, अपनी रानी मृगावती का पता पाया और उसी समय आकाशवाणी भी हुई जिससे उन्हें पूरा निश्चय हुआ। सो वे कौशाम्बी से चलकर उसी शबर को साथ लिये उदयाचल पर पहुँचे। वहा वाञ्छित संसिद्धि की नाईं निज भार्य्या रानी मृगावती तथा उदयन पुत्र को पाकर राजा प्रसन्न और सुखी हुये। फिर उन दोनों के साथ अपनी राजधानी कौशाम्बी को आ, राजा सहस्रानीक ने अपने पुत्र उदयन को युवराज पद पर स्थापित किया, और निज मन्त्रियों के पुत्र यौगन्धरायणादिकों को उनका सचिव बना राज्य का भार उन्हें दे चिरकाल तक उन्होंने निज भार्य्या के साथ इस संसार का सुख भोगा। कुछ दिनों के उपरान्त राज्य का पूरा भार निज पुत्र को दे राजा सहस्रानीक वृद्ध होने पर निज भार्य्या और मन्त्रियों के साथ हिमाचल पर्वत को चले गये। इस प्रकार निज पिता से राज्य को प्राप्त कर, उन्होंने यौगन्धरायणादि मन्त्रियों की सहायता से समस्त राजाओं को रण में परास्त कर, समग्र पृथ्वी का राज्य प्राप्त किया है।

इस प्रकार झट झट सब वृत्तान्त राजपुत्री कलिङ्गसेना को सुना सोमप्रभा कहने लगी कि हे सुन्दरि! यों वत्स देश का राज्य करने से इनका नाम वत्सराज हुआ और क्योंकि ये पाण्डववंशोत्पन्न हैं इसलिये चन्द्रवंशियों में श्रेष्ठ हैं। और उदय पर्वत पर जन्म पाने के कारण देवताओं ने उनका नाम उदयन रक्खा, और सौन्दर्य्य तो भगवान् ने उन्हें ऐसा दिया है कि कदाचित् कामदेव का भी वैसा स्वरूप न होगा। हे त्रैलोक्य-सुन्दरि! बस वही एक तेरे योग्य भर्ता हैं और वह भी रूप के लोभी हैं, तुम्हारे सौन्दर्य्य की धूम तीनों लोक में है तो वह भी तुम्हें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बहुतही चाहते हैं । किन्तु हे सखि ! राजा चण्डमहासेन की पुत्री वासवदत्ता उनकी अग्र महिषी हैं जिनने ऊषा और शकुन्तला आदि प्रसिद्ध कन्याओं को भी लज्जित कर, अपने बान्धवों को परित्याग, राजा उदयन को पति रूप से स्वयं स्वीकार किया है । उन्हीं के गर्भ से नरवाहनदत्त नामक ऐसे पुत्र को उत्पत्ति हुई है जो विद्याधराधीशों का राजा होनेवाला है। उसी पटरानी के भय से राजा अपना दूत तुम्हारे पिताजी के पास नहीं भेजते, मैंने रानी वासवदत्ता को भी देखा है, स्वरूप में वह तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकतीं । सोमप्रभा का ऐसा कहना सुन कलिङ्गसेना के हृदय में वत्सराज के प्रति प्रेम उभड़ आया और वह कहने लगी कि हे सखि ! मैं यह जानती हूं किन्तु मैं माता पिता के वश में हूं, तुम सर्वज्ञ और प्रभावशालिनी हो, जैसा कहो मैं करूँ । सोमप्रभा ने कहा कि यह कार्य दैव के आधीन है सुनो मैं तुमसे इस विषय को एक कथा कहती हूं—

पूर्व समय की बात है कि उज्जयिनीपुरी में कोई विक्रमसेन राजा हो गये हैं। उनकी कन्या का नाम तेजस्विता था जो सौन्दर्य में एकही थी। अनेक राजाओं ने उसका पाणिग्रहण करना चाहा किन्तु किसी को भी उसने स्वीकार न किया। एक दिन उसने अपने राजभवन के कोठे पर से एक परम सुन्दर युवा पुरुष को जाते देखा, उसके रूप से मोहित हो अपनी विश्वासपात्री सखी को उस व्यक्ति के समीप भेज उसने अपने हृदय का भाव कहलाया। सखी का कहना सुन उस पुरुष की हिम्मत ऐसे साहसवाले काम में न पड़ी, सो वह सम्मत न होता था, किन्तु उस सहेली ने उसे बहुत कुछ समझा बुझा के किसी किसी प्रकार राजी किया और कहा कि हे भद्र ! इस साम्हनेवाले शून्य मन्दिर में आज रात को आकर तुम ठहरना यहीं पर राजकुमारी आकर तुमसे मिलेगी। ऐसा स्थिर कर उसने राजपुत्री तेजस्विता से जाकर सब वृत्तान्त कहा और राजसुता भी उससे मिलने के उत्साह में पल पल गिनती सूर्य्यास्त का मार्ग देखने लगी । वह पुरुष समय उपस्थित होने पर डर के मारे कहीं भाग गया, ठीकही है "कोविद जानत मूढ़ नहिँ सरसिजनैनी रङ्ग अलि जानत दादुर नहीं कमलिनि सरस प्रसङ्ग" ॥ इसी अवसर पर कोई उच्च वंश का राजकुमार अपने पिता की मृत्यु हो जाने पर निज जनक के मित्र उस राजा से मिलने के निमित्त वहां

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आया । उस सोमदत्त नामक राजकुमार को गोत्रवालों ने उसका राज्य छीनकर निकाल दिया था । देखने में वह परम रूपवान् और सुशील था । सन्ध्या के समय जो वह नगर में पहुँचा तो अकेला होने के कारण रात बिताने के लिये वह दैवात् उसी शून्य मन्दिर में टिक रहा जिसमें राजपुत्री के आने का सङ्केत स्थिर हुआ था। नियत समय पर राजकुमारी जो पहुँची तो उस व्यक्ति को वहां बैठे देख उसने जाना कि यह वही पुरुष है जिससे मिलने की बातचीत हो चुकी थी, सो विना निर्णय कियेही उसने प्रेमान्ध हो उस राजकुमार को अपना पति बनाया । बुद्धिमान् राजकुमार ने भी भाग्यप्रेषित उस राजपुत्री को चुपचाप सहर्ष भार्य्या-रूप से ग्रहण किया मानो भविष्य में मिलनेवाली राज्यलक्ष्मी से उसकी भेंट यहीं हो गई । अन्त में जब राजकुमारी ने देखा कि यह राजपुत्र उस व्यक्ति से कहीं सुन्दर है तो अपने को धन्य माना और समझी कि मैं विधि से कुछ भी ठगी न गई । तदनन्तर बातचीत कर, परस्पर एक दूसरे का परिचय पा, राजकुमारी तो अपने भवन को लौट आई और उस राजकुमार ने उसी मन्दिर में रात बिताई । प्रातःकाल प्रतीहारी के द्वारा उसने महाराज के यहां अपने नाम धाम की सूचना दी जिसे जानकर महाराज ने उसे अपने समीप बुलवा भेजा । पूछे जाने पर उसने अपने राज्यहरण आदि सब दुःखों को निवेदन किया और महाराज ने उसका आदर कर उसे समाश्वासन दिया और कहा कि हम तुम्हारे शत्रुओं को भली प्रकार दण्ड देंगे । राजा ने चित्त में विचारा कि हमें भी तो कन्या का विवाह करना ही है इसी सुयोग्य वर से उसका पाणिग्रहण क्यों न कर देवें, इस आत्म-विचार को महाराज ने अपने मन्त्रियों से कहा । उधर राजपुत्री ने सहेली के द्वारा निज माता को सब वृत्तान्त सुना दिया था, सो रानी ने महाराज को निज कन्या के हाल से सूचित किया । महाराज ने देखा कि यह अनिष्ट कार्य्य इष्टापत्ति में परिणत हो गया। उसी समय मन्त्रियों में से एक ने हाथ जोड़ निवे-दन किया कि हे देव ! भले लोगों की कार्य्यसिद्धि में विधि सदा सचेत रहते हैं, जैसे विशेष सावधान न रहनेवाले स्वामी के काम में उत्तम सेवक लोग सदा दत्त-चित्त रहते हैं । इस विषय की मैं एक कथा कहता हूं सो सुनिये—

किसी गांव में हरिशर्म्मा नामक एक दरिद्र और मूर्ख ब्राह्मण रहता था,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वृत्ति के अभाव से वह अत्यन्त दुःखी था और पूर्वजन्मकृत पापों के भोगने के लिये ऐसी दरिद्र अवस्था में उसे कई एक बालक खानेवाले थे। भिक्षा के लिये वह सकुटुम्ब घूमता फिरता एक नगर में पहुँचा जहां स्थूलदत्त नामक एक धनी गृहस्थ के यहां उसने आश्रय पाया। पुत्रों को तो उसने स्वामी के गऊ इत्यादिकों की सेवा में लगा दिया और भार्य्या को घर के काम काज की करनेवाली बना स्वयं इधर उधर आने जाने का काम स्वीकार कर रहने लगा।

एक समय जब स्थूलदत्त की कन्या का विवाह उपस्थित हुआ तो दुलहे के बहुत से सम्बन्धी और इष्ट मित्रों की भीड़ वहां एकत्र हुई। हरिशर्म्मा ने विचारा कि इस अवसर पर मैं अपने कुटुम्ब सहित घी मांस और मिठाई के भोजन से नांक तक भर जाऊँगा। वह तो अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था किन्तु किसी ने भी उसकी बात न पूछी, तब तो वह भूख से व्याकुल हो अपनी भार्य्या से कहने लगा कि मेरी दरिद्रता और मूर्खता के कारण मेरा यहां ऐसा अनादर है, सो मैं किसी बनावटी युक्ति से अपना विज्ञान दिखलाया चाहता हूं जिसमें यह स्थूलदत्त मेरा आदर करने लग जावे। जब अवसर आवे तू स्थूलदत्त से कह दीजियो कि मेरे पति को असाधारण ज्ञान और विलक्षण शक्ति है। निज भार्य्या को इस प्रकार समझा उसने एक युक्ति विचारी। जब सब लोग सो गये तो दामाद के घोड़े को स्थूलदत्त के घर से चुरा कर कहीं दूर ले जाकर बांध दिया। प्रातःकाल जब घोड़ा न दिखाई पड़ा तो लोगों में बड़ा कोलाहल मचा और सभी लोग उसे इधर उधर ढूंढ़ने लगे। स्थूलदत्त ने सोचा कि यह बड़ा अशकुन हुआ, सो वह भी चोरों की खोज में लगा। इतने में हरिशर्म्मा की स्त्री ने आकर उससे कहा कि मेरे भर्ता बड़े ज्ञानी और सयाने तथा ज्योतिर्विद्या के जाननेवाले हैं आप उनसे क्यों नहीं पूछते वह अपनी विद्या के बल से घोड़े का पता लगा देंगे। यह सुन स्थूलदत्त ने हरिशर्म्मा को बुलवा भेजा और पूछा कि तुम बड़े ज्ञाता हो, कृपाकर अपनी विद्या के बल से बताओ कि घोड़ा कौन चुरा ले गया और वह कहां है? हरिशर्म्मा ने कहा 'वाह! कल तो आप मुझे भूल गये थे, आज जब घोड़ा खो गया तब आपको मेरी याद आई!' स्थूलदत्त ने कहा कि भाई कल भीड़भाड़ में जो तुम्हें भूल गया सो क्षमा करना, बड़ी चूक हुई, अच्छा अब यह बतलाओ कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह घोड़ा कौन चुरा ले गया ? और अब कैसे तथा कहां मिलेगा ? । हरिशर्म्मा झूठहीमूठ बहुत सी रेखा सेखा भूमि पर खींच खांच और कुछ मिथ्यागणित लगा कहने कि मेरे गणित में यह निकलता है कि चोरों ने इस गृह के दक्षिण ओर घोड़े को बांधा है, यदि सन्ध्या तक न मिला तो वे लोग उसे कहीं दूर ले जांयगे, सो आप उसको जल्दी खोज करिये और जाकर उसे ले आइये । यह सुन अनेक लोग दक्षिण की ओर दौड़ पड़े और क्षण भर में घोड़े का पता लगा उसे ले आये। तब तो सभी लोग हरिशर्म्मा के ज्योतिर्ज्ञान की प्रशंसा करने लगे और वह सब से सत्कार तथा पूजा प्राप्त कर स्थूलदत्त के यहां सुख से रहने लगा । कुछ दिनों के उपरान्त इस नगर के राजा के यहां चोरी हुई और बहुत सा सोना तथा रत्न राजभण्डार से उठ गया। जब चोर का पता न चला तो ज्ञानी की प्रसिद्धि पानेवाले हरिशर्म्मा की बुलाहट राजा के यहां से हुई। नृप ने पूछा कि आप अपनी विद्या से बतलाइये कि हमारा धन किसने चुराया और वह कैसे मिलेगा ?। हरिशर्म्मा ने कुछ टाल मटोल कर कहा कि कल प्रातः मैं बतलाऊँगा, राजा ने उसे रात को अपने ही भवन में एक कोठड़ी दे दी जिसके अन्दर वह मन्त्र जगाने के बहाने से द्वार बन्द कर बैठ रहा। राजा के अन्तःपुर में जिह्वा नाम्नी एक दासी रहती थी जिसके भाई ने उसकी सहायता से वह चोरी की थी । दासी ने सुन रक्खा था कि हरिशर्म्मा बड़े ज्ञानी हैं सो इस शङ्का से कहीं मैं पकड़ी न जाऊँ और वह ज्ञानी अपनी कोठरी में कैसे और क्या मन्त्र पढ़ रहा है, चुपके से आ द्वार के पास खड़ी हो कान लगा सुनने लगी । हरिशर्म्मा अकेला अपनी कोठरी में बैठा हुआ खेद के मारे अपनी झूठ बोलनेवाली जीभ की निन्दा कर रहा था । वह कहने लगा कि अरी भोगलम्पट जिह्वे! यह तुने क्या दुष्कर्म्म किया! अरी दुराचारि देख तुझे इस खोटे काम का कैसा दण्ड मिलता है ।' यह सुन उस दासी ने समझा कि इस ज्ञानी ने सब हाल जान लिया और मेरा भेद खुल गया, सो वह भय के मारे चुपके से हरिशर्म्मा के पास जा पैरों पर गिर पड़ी और हाथ जोड़ गिड़गिड़ा कर कहने लगी कि ब्रह्मन्! मैं वही जिह्वा नाम की दासी हूं जिसके चोरी का सब भेद आपने जान लिया है । मैंने धन चुराकर इस भवन के पीछेवाले बगीचे में उस अनार के वृक्ष तले गाड़ा है सो दया कर मुझे बचा दीजिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और जो कुछ सोना मेरे पास है उसे मैं आपकी सेवा में भेंट करती हूं। यह सुन हरिशर्म्मा ने गर्व के साथ उत्तर दिया कि अरी! मैं सब भूत भविष्य वर्त्तमान जानता हूं, जा जब तू मेरे शरण में आई है तो मैं तेरा हाल किसी से न कहूंगा किन्तु जो कुछ सोना तेरे हाथ में है सो तू सब मुझे दे दे। चेरी ने कहा "बहुत अच्छा" और बाहर चली गई। हरिशर्म्मा विस्मित हो विचारने लगा कि देखो जब भाग्य अनुकूल होता है तो असाध्य बात भी खेल में साध्य हो जाती है, कहां तो इस सङ्कट के उपस्थित होने पर अपनी जिह्वा की निन्दा कर रहा था कहां वह चोट्टी मेरे पैरों पर आपसे आप आ गिरी। बस छिपे हुये पाप को पापी अपने मुंह से आपही भय के मारे बक देता है, यों़ही सोचते विचारते बड़ी प्रसन्नता के साथ उसने वह रात बिताई। प्रातःकाल वह झूठही कुछ मन्त्र पढ़ कर राजा को अपने साथ उस बगीचे में ले गया और कहने लगा कि इसी अनारवृक्ष के तले माल गड़ा है यहां खोदो—खोदने के साथही सब धन मिल गया, जो कुछ कमी थी उसके बारे में उसने कहा कि इतना माल चोर लोग लेकर भाग गये हैं। यह देख राजा ने प्रसन्न हो उसे अनेक गांव पुरस्कार में देने का सङ्कल्प किया। उसी क्षण एक मन्त्री ने हाथ जोड़ राजा के कान में यों निवेदन किया कि हे देव! विना सत्शास्त्रों के पढ़े ऐसा विलक्षण ज्ञान मनुष्य को क्योंकर प्राप्त हो सकता है, इसे तो एक अक्षर का भी बोध नहीं है। यह निस्सन्देह चोरों से मिलकर धूर्त्तता से अपनी जीविका चलाता है आप एक बेर युक्ति से इसकी पुनः परीक्षा कीजिये। यह सुन राजा ने एक नया घड़ा मँगाकर उसके अन्दर एक दादुर रख ऊपर से बन्द कर दिया और घड़े को चुपके से हरिशर्म्मा के समीप लाकर कहा कि हे ब्रह्मन्! यदि आप यह बतला दें कि इस घड़े के अन्दर क्या है? तो मैं आपका आज बहुत कुछ सत्कार करूँगा और भारी पुरस्कार दूंगा। यह सुन उसने विचारा कि तब नहीं तो अब मेरा अन्तकाल आया सो बाल्यकाल में उसके पिता ने जो खेल में उसका मण्डूक नाम रक्खा था उसे स्मरण विधिवशात् कहने लगा कि "अरे बचा मण्डूक अब तेरी मृत्यु हुई जो यह घड़ा तेरे लिये आया अब तू नहीं बचता।" ऐसे सुअवसर की वाणी सुन जो ठीकोठीक मेल खा गई सभी लोग वाह! वाह कर कहने लगे कि ये महात्मा बड़े ज्ञानी हैं इनकी विद्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

का पार कोई नहीं पा सकता। तब तो राजा ने हरिशर्म्मा के ऐसे ज्ञान से सन्तुष्ट हो उसे खूब धन सम्पत्ति से परिपूरित कर दिया।

इस प्रकार पूर्वजन्म में शुभ कर्म्म करनेवालों के कार्य्य की सिद्धि विधाता स्वयं इस जन्म में करते हैं, इसी कारण आपकी सुता तेजस्विता का मेल उसने घर बैठे उसके समान वर सोमदत्त से करा दिया। मन्त्री के मुख से ऐसा सुन राजा विक्रमसेन ने विधिपूर्वक अपनी कन्या सोमदत्त को दी और वह भी अपने ससुर की सहायता पा उनकी सेना ले अपने शत्रुओं पर चढ़ गया और उन सबों को परास्त कर निज भार्य्या के साथ आनन्द से राज्य करने लगा।

सो हे सखि! भाग्य के किये सब कुछ हो सकता है, दूसरे की क्या सामर्थ्य है जो इन बातों को कर सके। तुम्हारा भी मेल महाराज वत्सराज के साथ वही भाग्य करावेगा। हे सखि कलिङ्गसेने! मैं क्या कर सकती हूं। इस प्रकार, इस मनोहर कथा को सोमप्रभा से सुनकर राजकुमारी कलिङ्गसेना के चित्त में कुछ धीरज उत्पन्न हुआ और बन्धुओं का भय किञ्चित् शिथिल होने लगा। किन्तु साथही उसका हृदय वत्सराज से मिलने के लिये अत्यन्त उत्सुक हो उठा।

अथये त्रिभुवनदीप जब मयदानव की बाल।
राजकुमारिहिं पूछि कै भवन गई तेहि काल॥

पांचवां तरङ्ग।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब सोमप्रभा आई तो आपस की बातचीत करते २ कलिङ्गसेना ने कहा कि हे सखि! यह बात निश्चित हो गई है कि मेरे पिताजी मेरा विवाह प्रसेनजित् राजा से अवश्य करेंगे, मैंने यह हाल अपनी माताजी से सुना है और तुम तो देखही चुकी हो कि वह वृद्ध हैं। महाराज वत्सराज के गुण और रूप का वर्णन जैसा तुमने किया उसे सुन मेरा मन उन्हीं की ओर खिँच गया है, सो पहिले प्रसेनजित् को दिखलाकर तुम मुझे उस स्थान पर ले चलो जहां महाराज वत्सराज हों, मुझे माता पिता से कोई प्रयोजन नहीं है। महा उत्सुक राजपुत्री का ऐसा बचन सुन सोमप्रभा कहने लगी कि यदि तुम्हारा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विचार वहां चलने का है तो मैं तुम्हें अपने आकाशचारी विमान पर बैठाल वहां ले चलूंगी, किन्तु तुम पहिले अपने साथ पूरा सामान तथा अपने दो चार आदमियों को ले लो क्योंकि महाराज वत्सराज को देखकर पुनः तुम यहां लौट न सकोगी। फिर न तो माता पिता को देखोगी और न उन्हें कभी स्मरण करोगी और कहां लौं कहूं अपने प्यारे को पाकर मुझे भी भूल जाओगी क्योंकि मैं तो उस समय तुमसे बहुत दूर रहूंगी। जैसी अब मैं तुमसे मिलती जुलती हूं वैसी तुम्हारे पति के घर में कैसे आऊँगी! यह सुन राजकुमारी रोने लगी और बोली कि हे सखि! यदि ऐसाही है तो वत्सराज को यहीं ले आओ क्योंकि तुम्हारे बिना तो मैं वहां एक क्षण भी न ठहर सकूंगी। क्या चित्रलेखा युक्ति से अनिरुद्ध को उषा के पास नहीं लाई थी? और यद्यपि तुम उस कथा को जानतीही होगी तथापि मैं तुम्हें सुनाती हूं—

प्रसिद्ध बाणासुर नाम राक्षस की कन्या का नाम उषा था, जिसने श्रीपार्वती जी की बड़ी अराधना की थी। गौरीजी ने प्रसन्न हो उसे वरदान दिया कि जिस पुरुष से स्वप्न में तेरा प्रसङ्ग होगा उसी के साथ तू व्याही जायगी। उसने स्वप्न में ऐसे व्यक्ति को देखा जिसकी आभा देवताओं के समान थी, गान्धर्व रीति से उन्हीं के साथ विवाह भी हुआ और उनका उपभोग सुख पाकर वह सबेरे जाग उठी। स्वप्न में देखे हुये पति को न पाकर और सम्भोग के सब लक्षणों को देख श्रीपार्वती जी का वरदान स्मरण कर वह आश्चर्य और भय से चिन्तित हो गई। स्वप्न में देखे हुये पति के विरह से वह दुःख पाने लगी और व्याकुल हुई। जब उसकी सखी चित्रलेखा ने उसके दुःख का कारण पूछा तो उसने पूरा पूरा सब हाल उसे कह सुनाया। चित्रलेखा योगविद्या जानती थी, सो उसने उषा से, जिसे उस पुरुष का नाम धाम कुछ भी विदित न था कहा कि हे सखि! यह देवीजी के वर का प्रभाव है इसमें कोई क्या कर सकता है देखो तुम्हारे प्यारे का कुछ पता ठिकाना तो हैही नहीं खोज क्योंकर की जाय! किन्तु मैं सारे संसार के सुरासुर और मनुष्यों का चित्र लिख जाती हूं यदि तू मुझे पहिचान के बतला दे तो मैं उस व्यक्ति को तेरे पास ला दूं। उषा ने कहा बहुत अच्छा तू लिख मैं पहिचान दूंगी। यह सुन चित्रलेखा ने सारे संसार का चित्र रङ्ग से लिख दिया। उषा ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखतेही द्वारावती में बैठे हुये यदुवंशी अनिरुद्ध की ओर अंगुली दिखाकर हर्ष के मारे कहा "यही हैं" । चित्रलेखा ने कहा सखि तू धन्य है ! जो तूने भगवान् हरि के पौत्र अनिरुद्ध को भर्ता पाया, किन्तु वे यहां से साठ हजार योजन दूर रहते हैं '। यह सुन उषा ने बड़ी उत्सुकता से कहा कि 'हे सखि ! यदि आजही उनके चन्दनतुल्य शीतल अङ्ग का आश्रय मुझे न मिलेगा तो मुझे इस उद्दण्ड कामाग्नि से जली और मरी समझियो '। ऐसा सुन चित्रलेखा अपनी प्यारी सखी को धीरज धरा उसी चण उड़कर द्वारावतीपुरी में जा पहुँची, देखा कि वह नगरी बीच समुद्र के विराज रही है और उसके विशाल तथा ऊँचे मन्दिर, ऐसा प्रतीत करा रहे हैं मानो पुनः समुद्रमथन करने के लिये आये हुये मन्दराचल के ऊँचे शिखर दीख पड़ते हैं । उसने अनिरुद्ध को रात के समय राजभवन में सोये हुये पाया, सो उन्हें जगाकर स्वप्नदर्शन से अनुरागवती उषा के प्रेम का वृत्तान्त सुनाया । जब उनके हृदय में भी प्रेम उपजा और वे भी उषा से मिलने के लिये उत्सुक हुये (क्योंकि उन्हें भी वैसाही स्वप्न हुआ था) तो वह अपनी सिद्धि के प्रभाव से चण भर में उन्हें द्वारावती से लेकर पुनः अपनी नगरी को लौट आई और उषा के पास जो बैठी उनका मार्ग देख रही थी अन्तःपुर में ले गई । चन्द्ररूपी अनिरुद्ध को साचात् आये देखकर उषा के अङ्गों की दशा ठीक वैसीही हुई जैसे पूर्ण सुधांशु के दर्शन पर समुद्र की होती है। तब तो वह सखी के लाये हुये प्राणप्यारे के पास बड़े ही आनन्द और सुख से जा बैठी । जब इसका वृत्तान्त उषा के पिता वाणासुर को विदित हुआ तो वह अत्यन्त कुपित हो उठा, परन्तु अनिरुद्ध ने अपने पितामह के बल तथा अपने वीर्य्य से उसे जीत लिया । फिर वे दोनों उषा और अनिरुद्ध द्वारावती में जाकर गिरिजा और शङ्कर की नाईं अभिन्न शरीर हो सुख से रहने लगे ।

इस प्रकार 'हे सखि ! एकही दिन में चित्रलेखा ने उषा और अनिरुद्ध का मिलाप करा दिया मैं तो तुझे उससे भी अधिकतर प्रभावशाली जानती हूं, सो तू अब वत्सराज को यहां ले आ, विलम्ब मत कर ।' कलिङ्गसेना के ऐसे बचन सुन, सोमप्रभा बोली कि हे सखि ! चित्रलेखा सुरस्त्री थी वह परपुरुष को उठा लाई किन्तु मेरे जैसी स्त्री जिसे परपुरुष का छूना निषेध है क्योंकर ऐसा कर सकती है ।

सो हे सखि! मैं तुझे वहां ले चलूंगी जहां वत्सराज हैं किन्तु पहिले राजा प्रसेनजित् का दर्शन करा दूंगी जो तेरे साथ विवाह किया चाहते हैं। सोमप्रभा का ऐसा कहना सुन कलिङ्गसेना ने उत्तर दिया 'अच्छा योंही सही'। यह सुन सोमप्रभा ने झटपट अपना आकाशगामी विमान प्रस्तुत किया और कलिङ्गसेना अपने कोष और सखियों तथा अधिकारी के साथ उस पर आरूढ़ हो माता पिता से बिना कहे सोमप्रभा के साथ चल पड़ी। ठीकही है "मदनप्रेरिता लखति नहिँ ऊँच नीच कछु नार। निज सवार ललकार लहि ज्यों बाजी असिधार" ॥

पहिले श्रावस्तीपुरी में पहुँच उसने दूरही से वृद्ध राजा प्रसेनजित् को देखा जो मृगया खेलने बाहर निकले थे और जिनके ऊपर झूलता हुआ चमर कलिङ्गसेना को मानो निषेध कर यह कहता था कि तू इस वृद्ध के समीप मत आ। सोमप्रभा ने अँगुली से दिखाकर ठट्ठे से कहा "सखि! देख ले यही राजा प्रसेनजित् हैं जिनके साथ तेरे पिताजी तेरा विवाह किया चाहते हैं। वृद्धावस्था ने तो इन्हें वर लिया है अब दूसरी कौन इन्हें वरेगी?" कलिङ्गसेना ने कहा 'सखि! बस कर, मैंने देख लिया अब तू शीघ्र मुझे कौशाम्बी को ले चल'। यह सुन सोमप्रभा उसी क्षण उसे विमान द्वारा लेकर कौशाम्बी में जा पहुँची, जहां महाराज वत्सराज अपने बगीचे में वायुसेवन कर रहे थे। सोमप्रभा ने बतलाया कि वत्सराज यही हैं, देखते ही कलिङ्गसेना एक टक यों देखने लगी जैसे चकोरी कलानिधि को ओर एक ध्यान से निहारती है। प्रसन्न और उत्फुल्ल नेत्रों से उनकी ओर देखती हुई वह हृदय पर हाथ रख मानो यह कह रही थी कि इन्हीं नेत्रों के द्वारा महाराज मेरे हृदय के अन्दर पैठ गये हैं। वह कहने लगी कि 'हे सखि! तू किसी प्रकार आजही महाराज से मेरी भेंट करा दे क्योंकि इन्हें देखकर अब मुझसे रहा नहीं जाता'। उसका ऐसा वचन सुन सोमप्रभा ने कहा कि आज तो मैंने एक अशकुन देखा है, सो आज की रात तू इसी उद्यान में छिपकर चुपचाप बैठ रह किसी सखी सहेली को उनके पास मत भेजियो। कल प्रातःकाल आकर मैं कोई न कोई युक्ति तेरे मिलाप की कर दूंगी, इस समय मैं अपने पति के घर को जाया चाहती हूं क्योंकि सन्ध्या हो गई है। तू विश्वास रखियो कि मेरा चित्त तेरेही पास लगा रहैगा। ऐसा समझा, उसे वहीं छोड़ सोमप्रभा तो

अपने घर को चली गई और महाराज वत्सराज भी उद्यान से उठकर निज राजभवन को पधारे। तदुपरान्त कलिङ्गसेना ने अपना सारा सन्देश निज अधिकारी के द्वारा वत्सराज के पास कहला भेजा। यद्यपि शकुनों का शुभाशुभ फल जाननेवाली सोमप्रभा ने ऐसा करने से भली प्रकार उसे निषेध किया था किन्तु कलिङ्गसेना ने उस पर कुछ भी ध्यान न दिया। सच किसी कवि ने कहा है कि— "नवयुवती के हृदय में पाइ मनोहर धाम। कौनेहु विधि नाहिन रुकत नवभूपति इव काम"॥ उस अधिकारी ने राजा के प्रतीहारी द्वारा राजभवन में प्रवेश पा महाराज के सम्मुख पहुँच हाथ जोड़ एकान्त में यों निवेदन किया कि 'हे महाराज! तक्षशिला नगरी के स्वामी राजा कलिङ्गदत्त की कन्या राजकुमारी कलिङ्गसेना, अपनी आकाशसञ्चारिणी सखी सोमप्रभा के मुख से आपके रूप और गुण की प्रशंसा सुन, अपने बान्धवों को छोड़, आपको स्वयं वरने की इच्छा से यहां आई है। उनकी वह सोमप्रभा नाम्नी सखी मयासुर की कन्या और नलकूबर की भार्य्या है वही उन्हें मायाविमान पर यहां लाई है। राजसुता ने मुझे आपके समीप यह प्रार्थना करने के लिये भेजा है कि आप उन्हें भार्य्यारूप से अङ्गीकार करें, मैं भी यही चाहता हूं कि आप दोनों का योग चन्द्र और चांदनी की नाईं आनन्ददायक हो।' अधिकारी का ऐसा वचन सुन महाराज ने कहा 'बहुत अच्छा हमें स्वीकार है।' उन्होंने प्रसन्न हो, हेम वस्त्रेत्यादि से उस व्यक्ति का भली प्रकार सत्कार किया। तब उन्होंने अपने मुख्य मन्त्री यौगन्धरायण को बुलाकर कहा कि राजा कलिङ्गदत्त की कलिङ्गसेना नाम्नी कन्या जिसके रूप की त्रिजगत् में धूम है, स्वयं चलकर मुझे वरने के लिये यहां आई है, उसको त्यागना उचित नहीं है, सो तुम यह बतलाओ कि यह विवाह कब होना चाहिये। महाराज की यह बात सुन परमहितैषी मन्त्री यौगन्धरायण मन में यों विचारने लगा कि कलिङ्गसेना तो तीनो लोक में परम रूपवती प्रसिद्ध है, उसके समान रूप में कहीं भी दूसरी कन्या नहीं है, उसके पाणिग्रहण की इच्छा तो देवता लोग भी करते हैं मनुष्य की कौन कहे। हमारे महाराज वत्सराज उसे पाकर सबही कुछ परित्याग कर देंगे, उस समय देवी वासवदत्ता दुःख से प्राण छोड़ देंगी। ऐसी अवस्था में राजकुमार नरवाहनदत्त के जीने की कौन आशा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहेगी और उसके स्नेह के कारण देवी पद्मावती का जीवित रहना असाध्य है। फिर उन दोनों के पिता चण्डमहासेन और प्रद्योत निज पुत्रियों की मृत्यु के उपरान्त या तो स्वयं मर जांयगे या हमारे विरोधी हो जांयगे। सो यह बड़ी कठिनता आ पड़ी है, इसमें तो सर्वनाशही हो जायगा ! अतएव कोई ऐसी युक्ति निकालनी चाहिये कि यह कठिन काम भली प्रकार हो जावे। यदि महाराज को विवाह करने से निषेध करता हूं तो मना करने से उनका यह विचार और भी अधिक दृढ़ हो जायगा, सो इस समय तो विवाह को युक्ति से टाल देना चाहिये पीछे अवसर देखकर जैसा उचित होगा किया जायगा। यों विचार यौगन्धरायण ने कहा कि 'हे देव ! आप धन्य हैं कि कलिङ्गसेना आपसे आप श्रीमान् के घर में आ गई है और अब इसके पिता राजा कलिङ्गदत्त मानो आपके सेवक हो गये। उचित होगा कि आप ज्योतिषियों से उत्तम लग्न पूछ किसी अच्छे मुहूर्त में इसका पाणिग्रहण करें क्योंकि यह बड़े घर की बेटी है। आज इसे अपने घर में कोई अलग स्थान टिकने को दे दिया जाय और कुछ दासी दास सेवा के लिये तथा कुछ उत्तम वस्त्राभरण पहिनने के लिये भेज दिये जांय'। अपने मुख्य मन्त्री की यह बात सुन, महाराज ने प्रसन्न हो सब प्रबन्ध उसी प्रकार करवा दिया। कलिङ्गसेना भी अत्यन्त प्रसन्न हो अपने मनोरथ की पूर्ति को समीपही जान महाराज के बताये हुये भवन में रात को टिक रही।

परम बुद्धिमान् यौगन्धरायण महाराज के पास से उठकर अपने घर आया और यों विचारने लगा कि प्रायः अशुभ कामों का निवारण समय के टालटूल से भी हो जाता है, देखो प्राचीन समय में जब राजा इन्द्र ब्रह्महत्या लगने पर भाग गये और नहुष ने स्वर्ग का राज्य पाया, और जिस समय वह शची को अपनी भार्य्या बनाया चाहता था और वह भागकर देवगुरु श्रीबृहस्पतिजी के शरण में गई तो देवताओं के आचार्य्य ने इसी आज कल के टालटूल की युक्ति से उस विचारी की प्रतिष्ठा तबलों बचाई, जब लों एक ब्राह्मण के शाप और हुङ्कार से नहुष का आपही पतन हो गया और इन्द्र ने पुनः अपना राज्य पूर्व की नाईं पाया। इसी प्रकार कलिङ्गसेना के विषय में भी मुझे कालक्षेप करना चाहिये। यों विचार उसने राज्यज्योतिषियों को बुलाकर गुप्तरीति से यों समझा दिया कि जब महाराज विवाह का मुहूर्त पूछें तो बहुत दूर का लग्न बताना।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इधर देवी वासवदत्ता को जो यह सारा वृत्तान्त विदित हुआ तो उनने मुख्य मन्त्री यौगन्धरायण को अपने पास बुलवा भेजा और उसके आने तथा नम्रतापूर्वक प्रणाम करने पर वह रोकर यों कहने लगीं कि 'हे आर्य्य! आपने तो यही कहा था कि जब लों आपके शरीर में प्राण हैं तब लों पद्मावती को छोड़ मेरी दूसरी सपत्नी न होगी। अब देखिये यह तीसरी कलिङ्गसेना कहां से आया चाहती है। वह अत्यन्त रूपवती है, इसमें सन्देह नहीं कि महाराज उसीसे प्रेम करेंगे, अतएव आप तो अलीकवादी हुये और मैं प्राणों से गई, अब मुझे मरीही समझिये'। यह सुन मन्त्री यौगन्धरायण ने कहा कि हे देवि! आप धीरज रखिये भला मेरे जीते कभी ऐसी बात हो सकती है? आप किसी प्रकार से इस काम में महाराज की प्रतिकूलता न करें प्रत्युत मन में धीरज रख उन्हीं के मन की सी बात करिये। देखो रोगी को उत्तम वैद्य क्या प्रतिकूलता से वश में लाता है? कभी नहीं, प्रत्युत उसी की इच्छानुसार कहकर युक्ति से अपना काम निकाल लेता है। नदीप्रवाह के विरुद्ध बल करने से मनुष्य कभी नहीं बच सकता किन्तु यदि वह प्रवाह के साथ बहता जाय तो धीरे धीरे उद्योग करने से पार लगही जाता है। इसी प्रकार जब महाराज आपके समीप आवैं तो आप किसी प्रकार का खेद या दु:ख प्रगट न होने दें और अपने चित्त का भाव छिपाकर सदा की नाईं उनकी सेवा में लगें, प्रत्युत श्रद्धा से यों कहैं कि बहुत अच्छी बात है कि कलिङ्गसेना के स्वीकार करने से उसके पिता भी आपके सहायक हो जांयगे और राज्य की वृद्धि होगी। ऐसा करने से महाराज को यही ध्यान होगा कि इसका हृदय बड़ा उदार है, फिर उनका स्नेह आप पर अधिकतर होगा और वे आपके वश में रहेंगे। वे यह समझकर कि कलिङ्गसेना तो मेरे हाथही में है जब चाहेंगे विवाह कर लेंगे, बहुत उत्सुक न होंगे, क्योंकि यह आपको विदितही है कि जितना अधिक किसी व्यक्ति को किसी काम करने से रोको उतनाही अधिक उस काम के करने की इच्छा उसे होती है। और हे शुभे! आप देवी पद्मावती को भी ऐसाही समझा दें। हमलोगों के ऐसा करने से महाराज कालक्षेप को सहज में सह लेंगे और जल्दी न मचावेंगे। आप तो ऐसा करें फिर मैं समझ लूंगा, आप उस समय मेरी युक्ति का बल देखियेगा क्योंकि जैसे सूर की परीक्षा रण में होती है उसी प्रकार बुद्धिमान् की परीक्षा सङ्कट पड़ने पर की जाती है। सो हे देवि! आप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चित्त में किञ्चित् भी खेद न करें।' यों कह रानी वासवदत्ता को भली प्रकार समझा और उनके यह कहने पर कि "अच्छा जैसा आप कहते हैं मैं वैसाही करूँगी" मन्त्री यौगन्धरायण अपने घर को गया।

तेहि दिन दिवा न रात को नृपति गये रनवास।
चञ्चलचित चितवत रहे नवनारी-सुविलास॥
रानी अरु मंत्री तथा राजा नृपतिकुमारि।
प्रथम युग्म सोचत रहे दूजहिं हर्ष अपारि॥

छठवां तरङ्ग।

महाराज वत्सराज ने किसी किसी प्रकार वह रात बिताई और भोर के समय यौगन्धरायण के आने का आसरा देखही रहे थे कि उस कार्य्यदक्ष मन्त्री ने सेवा में पहुँच यों निवेदन किया कि हे देव! आपके तथा तक्षशिलाधिराजपुत्री *

---

* जेनरल कनिङ्गहाम कहते हैं कि तक्षशिला उसी स्थान का नाम है जहां काल की सराय से एक मील ईशान-कोण (North-east) की ओर शाहदरी के समीप एक प्राचीन नगर के टूटे फूटे चिन्ह पाये जाते हैं। वत्सराज की राजधानी कौशाम्बी के विषय में मि: ग्रौस लिखते हैं कि जेनरल कनिङ्गहाम साहब ने उसका भी पता लगाया है। अबलों उस स्थान का नाम कुसुम कहा जाता है, और वह श्रीयमुनाजी के तट पर इलाहाबाद से ३० मील की दूरी पर ऊपर की ओर वर्तमान है। अबलों वहां एक टूटा हुआ भारी किला दीख पड़ता है जिसकी मिट्टी की दीवारें ३० से ३५ फीट ऊँची हैं और गढ़ तो इससे भी ऊँचे हैं। कुल घेरा २१०० फोट अर्थात् ठीकोठीक ४ मील और २ फर्लाङ्ग है। बनावट ईंट और पत्थर की है, कितनीही ईंटें १९ × १२½ × २½ इञ्च की हैं जिनसे प्रतीत होता है कि वे बहुतही प्राचीन समय की हैं। इस उजाड़ खँड़हर के मध्य में एकही पत्थर का एक वृहत् खम्भ है जैसा दिल्ली और इलाहाबाद में भी पाया जाता है परन्तु उसके ऊपर लिखा कुछ भी नहीं है। यह खम्भ भूमि के ऊपर १४ फीट ऊँचा है। उसके जड़ में नीचे २० फीट तक खोदा गया था किन्तु वहां तक उसका अन्त न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कलिङ्गसेना के मङ्गल विवाह का शुभलग्न आजही क्यों न दिखाया जाय ! यह सुन महाराज ने कहा कि मेरे हृदय में भी यही बात है क्योंकि उसके विना अब मुझसे एक पल भी नहीं ठहरा जाता । इतना कह सरलहृदय महाराज ने प्रतीहारी को जो पासही खड़ा था यह आज्ञा दी कि शीघ्र जाकर ज्योतिषियों को बुला लाओ । उनके आने पर महाराज ने जब लग्न पूछा तो यौगन्धरायण की पूर्व मन्त्रणा के अनुसार उन लोगों ने उत्तर दिया कि 'हे राजन् ! आज से छः महीने के उपरान्त अनुकूल लग्न निकलता है ।' यह सुन उस निपुण मन्त्री ने झूठही कोप प्रकाश कर कहा कि 'महाराज ये लोग कुछ नहीं जानते, वह ज्योतिषीजी जिनका सत्कार श्रीमान् ने पहिले किया था और जो इस विद्या के बड़े ज्ञाता हैं आज नहीं आये हैं उनको बुलाकर पूछिये और जैसा वे कहैं तदनुसार किया जाय ।' मन्त्री का ऐसा बचन सुन कुछ आगा पीछा कर महाराज ने उन्हें भी बुलवा भेजा । इनसे भी यौगन्धरायण से पहिलेही बातचीत हो चुकी थी, सो पूछे जाने पर उनने भी विवाह टालने के लिये वही बात कही कि अभी छ महीने तक कोई लग्न नहीं है । तब तो यौगन्धरायण ने मानो उद्विग्न होकर महाराज से कहा कि हे देव ! अब क्या करना चाहिये जैसी आज्ञा आप देवैं मैं करूँ । राजा बड़े उत्सुक हो रहे थे किन्तु समीप कोई लग्न न निकलता था, सो उन्होंने कुछ विचार कर कहा कि अच्छा कलिङ्गसेना से पूछ देखो वह क्या कहती है । यह सुन दो गणकों को अपने साथ ले यौगन्धरायण कलिङ्गसेना के पास पहुँचा । राजपुत्री ने उठकर आदर किया । मन्त्री उसे देखतेही विचारने लगा कि, भला इस रूपवती को पाकर महाराज कब राजकाज देखने लगे ! फिर बोला कि मैं इन गणकों को साथ लेकर इसलिये आया हूं कि आपके विवाह का लग्न निश्चित

मिला । इसकी पूरी लम्बाई कदाचित् ४० फ़ीट से भी अधिक है । एक बेर ऐसा विचार हुआ था कि उसे वहां से लाकर इलाहाबाद में खड़ा किया जाय किन्तु इस काम में अधिक व्यय देख वह उद्योग छोड़ दिया गया । जेनरल कनिङ्गहाम साहब कहते हैं कि श्रावस्ती नगरी (जहां कलिङ्गसेना प्रसेनजित् को देखने गई थी) वही स्थान है जो अब अवध में राप्ती नदी के किनारे सहेट महेट के नाम से बसा है ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किया जाय सो कृपाकर अपने सेवकों को आज्ञा दीजिये कि वे आपका जन्म-नक्षत्र बतला दें। यह सुन राजपुत्री के सेवकों ने जन्मनक्षत्र कह दिया, उन गणकों ने, जिन्हें मन्त्री सिखा पढ़ा चुका था, झूठही कुछ देर लों विचार कर, कहा कि "इधर तो कुछ नहीं बनता जो कुछ होगा उसके उपरान्तही होगा" इतना कह उन लोगों ने वही पूर्वनिश्चित किया हुआ छ महीने के उपरान्त-वाला लग्न सुना दिया। इस दूरवर्ती लग्न के सुनतेही कलिङ्गसेना का चित्त उद्विग्न हो गया। यह देख उसके अधिकारी ने कहा कि पहिले अनुकूल लग्न का देखना बहुत आवश्यक है जिसमें इन दोनों का जन्म भर शुभ हो, समीप वा दूर की कुछ चिन्ता नहीं। अधिकारी का ऐसा बचन सुन वहां के सभी लोग कहने लगे कि हां आप बहुत ठीक कहते हैं। यौगन्धरायण ने भी कहा कि, यदि कुलग्न में विवाह किया जायगा तो हमलोगों के समधी राजा कलिङ्गदत्त न जाने ग्रहों के हेरफेर के कारण किस विपत्ति में आ जावें। उन सबों की बात सुन विवश हो कलिङ्गसेना कहने लगी कि अच्छा आप लोग बुद्धिमान् हैं जैसा उचित समझिये करिये मैं इस विषय में क्या कहूं। इतना कह जब वह चुप हुई तो उससे पूछ यौगन्धरायण गणकों को साथ लिये हुआ महाराज के समीप चला आया और वहां का पूरा हाल वत्सराज से कह गया। फिर युक्तिपूर्वक उन्हें धीरज बँधा वह अपने घर को गया।

इस प्रकार जब कालक्षेप की कार्य्यसिद्धि हो गई तो उसने योगेश्वर नामक अपने मित्र उस ब्रह्मराक्षस को स्मरण किया। ध्यान करतेही वह आ उपस्थित हुआ और प्रणाम कर मन्त्री से पूछने लगा कि कहिये आपने किस लिये मुझे स्मरण किया है। मन्त्री ने अपने प्रभु के व्यसन और कलिङ्गसेना का सारा वृत्तान्त उसे सुनाकर कहा कि हे मित्र! समय तो मैंने बहुत निकाल लिया है इसी बीच में अपनी युक्ति से तुम छिपे छिपे कलिङ्गसेना की चलन पर ध्यान रक्खो। इसमें सन्देह नहीं कि इसके समान रूपवती तीनों लोक में नहीं है इसीलिये विद्या-धरादिक भी छिपे छिपे इससे प्रेम रखते हैं। अतएव यदि किसी विद्याधर का सङ्ग तुम इसके साथ देख पाओ तो बहुतही उत्तम हो। यदि वह दिव्य प्रेमी वेष बदलकर भी आवेगा तो सोये हुये को तुम देख लेना, क्योंकि सो जाने पर ये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिव्य पुरुष अपना यथार्थ रूप धारण कर लेते हैं । इस प्रकार तुम्हारी दृष्टि से हमलोग इसका दोष देख लेंगे, फिर राजा उससे अप्रसन्न हो जांयगे और हम-लोगों का काम बन जायगा । यह सुन उस ब्रह्मराक्षस ने कहा कि क्यों न मैं अपनी किसी युक्ति से इसे पतित कर दूं अथवा मारही डालूं ? तब महामन्त्री ने कहा 'नहीं ऐसा करना उचित नहीं है क्योंकि इसमें महा अधर्म होगा। जो कोई धर्म को विना हानि पहुँचाये अपने उचित मार्ग से चलता है। उसकी अभीष्ट-सिद्धि में वही धर्म्म सहायता करता है, इसलिये हे सखे! तुम उसके उस दोष को देखते रहो जो उसी के कारण उत्पन्न हो जिसमें मैं तुम्हारी मैत्री द्वारा इस राज्य कार्य को पूरा कर सकूं। मुख्य मन्त्री की ऐसी आज्ञा पा वह ब्रह्मराक्षस योग-बल से छिपकर राजकुमारी कलिङ्गसेना के घर में पैठ गया।

इस अन्तर में उसकी सखी मयासुर की पुत्री सोमप्रभा कलिङ्गसेना के पास आ उपस्थित हुई और रात्रि का हाल पूछ, कलिङ्गसेना से सब वृत्तान्त सुन, कुछ कहने लगी। उधर वह ब्रह्मराक्षस छिपा हुआ चुपचाप सब बातें सुन रहा था। सोमप्रभा ने कहा कि हे सखि! मैं तो भोरही की आई हुई हूं, तेरा पता लगाती और तुझे खोजती हुई मैं दोपहर के पूर्वही यहां आ गई थी किन्तु यौ-गन्धरायण को तेरे पास देख प्रगट न हुई, छिपकर तेरे बगल में खड़ी रही। तुम लोगों की बातचीत सुनकर मैंने सब हाल जान लिया है। सो मेरे निषेध करने पर भी तूने कलही इस कार्य्य को क्यों आरम्भ कर दिया ? हे सखि! अशकुन की शान्ति बिना किये यदि कोई कार्य्य आरम्भ किया जाता है तो उसका फल बड़ा-ही अनिष्ट होता है, सुनो मैं तुमसे एक कथा कहती हूं—

प्राचीन समय की बात है कि अन्तर्वेदी में वसुदत्त नामक कोई ब्राह्मण रहता था जिसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, नाम उसका विष्णुदत्त रक्खा गया। जब वह बालक पूरे सोलह वर्ष का युवक हुआ तो उसने विद्याप्राप्ति के लिये बल्लभीपुरी जाने की इच्छा की। अचानचक उसे सात ब्राह्मणपुत्र जो उसी के समान युवक थे मिले, किन्तु वे सातो मूर्ख थे और यह बुद्धिमान् तथा सत्कुलोत्पन्न था। सबों ने आपस में इस बात की शपथ खाई कि कोई भी किसी का साथ परित्याग न करेगा, अस्तु विष्णुदत्त विना अपने माता पिता से कहे चुपचाप उन लोगों के साथ चल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पड़ा। कुछही दूर जाकर उसे अशकुन दिखलाई पड़ा, सो वह अपने साथियों से कहने लगा कि एक शकुन बड़ाही खोटा देखने में आया है इसलिये आज लौट चलना चाहिये, जब उत्तम शकुन निकले तब हमलोग पुनः यात्रा करेंगे जिसमें हमलोगों की कार्य्यसिद्धि हो। यह सुन वे सातो मूर्ख सखा कहने लगे कि वृथा क्यों डरते हो! हमलोग इस अशकुन फशकुन को कुछ नहीं गिनते! यदि तुम्हें डर लगता है तो मत चलो, हमलोग तो अभी जांयगे क्योंकि सबेरे यदि हमारे बान्धवों को हमारा यह हाल विदित हो जायगा तो वे लोग हमें छोड़ देंगे। उनकी ऐसी बात सुन, शपथ से बँधे हुये विष्णुदत्त ने, अघहारी विष्णु भगवान् का स्मरण कर यात्रा में उनके साथ पैर उठाया। रात्रि के अन्त में उसने दूसरा अशकुन देखा और पुनः अपने साथियों से वही बात कही। वे सब मूर्ख साथी उसे डांट कर कहने लगे कि 'सब से बड़ा अशकुन तो यही है कि जो तुझ डर-पोंक को हमलोग अपने साथ यात्रा में ले आये जिसका दम पद पद पर कौवे को देख निकला जाता है। जब उन सबों ने इसे इस प्रकार डांटा और आगे का रास्ता लिया तो विष्णुदत्त विवश हो चुपचाप उनके साथ मानो गूंगा बन चलने लगा। वह विचारता था कि कवियों का यह बचन बहुतही यथार्थ है कि,—

"निज हठ-मारग पै लगें मूढ़हिँ मत उपदेश। शोधनहार पुरोष को हांसी होत हमेश" ॥ एक बुद्धिमान् बहुतेरे मूर्खों के बीच में पड़कर वैसीही दुर्दशा सहता है जैसे तरङ्गों के बीच में पड़ा हुआ कमल। इसलिये चाहे भलाई हो चाहे बुराई अपने को बोलने से क्या प्रयोजन, मैं चुपचाप इनके संग चला चलता हूं, विधि कल्याणही करेंगे। ऐसा विचार उन मूर्खों के साथ चलते चलते विष्णुदत्त सन्ध्या के समय एक ऐसे गांव में पहुँचा जहां अनेक शबर लोग निवास करते थे। टिकने के योग्य स्थान ढूंढ़ते ढूंढ़ते उसने देखा कि एक युवती स्त्री एक घर के द्वार पर बैठी है जिसके अन्दर उसे कई शून्य कोठरियां भी बाहर ही से दीख पड़ीं। उस स्त्री से मांगने पर उसने टिकने का स्थान पाया और अपने साथियों सहित अन्दर जा डेरा लगा दिया। वे सातो के सातो थके तो थे ही लेटतेही घोर निद्रा में सो गये किन्तु विष्णुदत्त जागता था क्योंकि वह समझता था कि हमलोग एक जङ्गली व्यक्ति के घर में टिके हैं। कहा भी है कि "ह्वै अचेत

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

घर छाड़िके सूतत हैं नर मूढ़ । नहिँ निद्रा बाधत तिन्हें जे नर ज्ञानी गूढ़" ॥ इतनेही में एक युवा पुरुष चुपके से उस घर में घुस आया और उस स्त्री को साथ लिये एक निराली कोठरी में जा रहा । वे दोनों धीरे धीरे बातें करते और चिरकाल तक रमण करते रहे, फिर रति से थक जाने के कारण बेसुध हो सो गये । सचेत विष्णुदत्त द्वार के छेद में से दीप के प्रकाश में सब चरित्र देख रहा था, फिर दुःख के साथ विचारने लगा कि हा ! हमलोग तो धोखे से इस दुश्चारिणी के घर में आ टिके, यह व्यक्ति इसका यार जान पड़ता है, विवाहित पति नहीं प्रतीत होता, क्योंकि यदि यह व्याहा हुआ पति होता तो ये दोनों इतने शङ्कित न रहते और न यों फुसुर फुसुर बातें करते । मैंने तो पहिलेही अनुमान किया था कि यह कुछ चपलचित्तवाली है, अस्तु हमलोग मानो इसके कुकर्म्म के साक्षी होकर यहां आ टिके हैं । अभी वह इतना सोचही रहा था कि बाहर से अनेक लोगों का कोलाहल सुन पड़ा, थोड़ीही देर में देखता क्या है कि एक युवा शबराधिप हाथ में खड्ग लिये घर के अन्दर आ पैठा, और उसके सेवक लोग सब अपने २ स्थान पर खड़े रह गये । उसने जो आतेही विष्णुदत्त से पूछा कि तुम लोग कौन हो ? इससे विष्णुदत्त ने समझा कि यह इस घर का स्वामी है, सो उसने डर के साथ उत्तर दिया कि हमलोग पथिक हैं आज रात को यहां टिके हैं । इतना सुन वह शबराधिप अपने घर के अन्दर गया वहां निज भार्य्या को वैसी अवस्था में देख उसने तलवार से उसके सोये हुये यार का सिर काट डाला । अपनी स्त्री को न तो उसने मारा और न जगाया । वहीं भूमि पर तलवार रख उसी पलङ्ग पर सो रहा । विष्णुदत्त दीप के प्रकाश में यह सब देख विचारने लगा कि इसने जो अबला समझ कर निज भार्य्या को नहीं मारा सो बहुतही उचित किया केवल उस परदारलम्पट को जो मार डाला सो भी न्यायसंगतही किया । किन्तु ऐसा कर्म्म करने के पश्चात् जो यह इस प्रकार निश्चिन्त सो रहा है सो बड़े साहस और आश्चर्य्य की बात है अथवा यह दृढ़ चित्तवालों की वीरता सूचित करता है । विष्णुदत्त इतना विचारही रहा था कि उस स्त्री की निद्रा खुली, देखती क्या है कि उसका यार तो कटा पड़ा है और पति पास में सोया है । झट उसने यार के धड़ को तो अपने कन्धे पर उठाया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और मुण्ड को एक हाथ में ले बाहर निकली और समीपवर्ती एक घूरे पर उसे फेंक मिट्टी से ढक आई। विष्णुदत्त भी चुपके से उसके पीछे पीछे जा सब वृत्तान्त देख लौट कर अपने सातो साथियों के पास लेट रहा।

कुलटा ने घर के अन्दर आ अपने सोये हुये पति का सिर उसी तलवार से काट डाला और बाहर निकल अपने सेवकों को सुना रो रो के चिल्लाने लगी कि हाय! हाय! बड़ा अन्धेर हुआ! इन पथिकों ने मेरे भर्ता को मार डाला। यह सुन सभी नौकर चाकर वहां दौड़ आये और अपने स्वामी का सिर कटा देख विष्णुदत्त आदि उन सातों पथिकों की भुजायें उलटी कर उन्होंने बांध लीं। वे सातो जो नींद से चौंककर उठतेही इस प्रकार अचानचक बांध लिये गये तो डर के मारे हक्के बक्के हो कांपने लगे और जब उनके मारने के लिये खड्ग उठाया गया तो विष्णुदत्त ने कहा कि ठहरो ठहरो वृथा निरपराध ब्राह्मणों को जान मत मारो, हमलोगों ने यह काम नहीं किया है इसी दुश्चारिणी स्त्री ने दूसरे से फँसी होने के कारण यह पतिहत्या की है मैं छिपकर द्वार के छेद से सब हाल, आरम्भ से देखता रहा, मैं बाहर जाकर भी उसकी सब करतूत देख आया हूं। यदि आप चण भर ठहरें तो मैं सब कहता और दिखला देता हूं। इस प्रकार उन शबरों को विष्णुदत्त ने मारने से रोक कर सब वृत्तान्त आरम्भसे कह सुनाया और बाहर ले जाकर उस घूरे पर जहां उसने अपने कटे हुये यार को फेंका और ढँका था, रुण्ड और मुण्ड दोनों दिखला दिया। तब तो उस दुराचारिणी का मुँह पीला पड़ गया और सब लोगों ने उस कुलटा का तिरस्कार कर यों कहा कि जो कुचरित्रा स्त्री कामदेव से खींची जाकर अशङ्कित हो साहस करती है वह शत्रु के हाथ पड़ी तलवार की नाईं किसे नहीं मार सकती। यह कह उन लोगों ने विष्णुदत्त को उसके सातो साथियों सहित छोड़ दिया और वे सातो इस प्रकार मृत्यु के मुख से बच विष्णुदत्त की प्रशंसा करने लगे कि हम सोये हुयों के लिये आप रचारत्नप्रदीप हुये और आपही की कृपा से हमलोग अशकुनजनित मृत्यु से आज बच गये। इस प्रकार विष्णुदत्त की स्तुति करते और अपने दुर्बचन कहने की चमा मांगते, तथा बारम्बार प्रणाम करते वे लोग अपनी कार्य्यसिद्धि के लिये आगे बढ़े।'

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यों कलिङ्गसेना को एकान्त में यह कथा सुना, सोमप्रभा कहने लगी कि हे सखि! बुरे शकुनों की उपेक्षा कर जो काम आरम्भ कर दिये जाते हैं उनका ऐसाही भयानक परिणाम हो जाता है। इसलिये काम को टाल कर अथवा विलम्बादिकों से उसे रोक कर कुशकुनों की शान्ति करना अवश्य उचित है। जो मन्दबुद्धि लोग बुद्धिमानों के कहने को उपेक्षा कर हठपूर्वक काम में लग जाते हैं वे पीछे हानि उठाने पर बहुतही पछताते हैं। इसलिये हे सखि! अशुभ शकुन देखने पर भी जो तूने महाराज वत्सराज के पास अपने विवाह के निमित्त दूत भेजा सो उचित काम नहीं किया। अब विधि से यही प्रार्थना है कि वह विना विघ्न उपस्थित हुये तुम्हारा विवाह करा दे, तुम किसी कुलग्न में घर से चलीं थीं जो विवाह का मुहूर्त इतना दूर जाकर निकला। इस समय अनेक देवता लोग भी तुम्हारे रूप पर मोहित हो रहे हैं सो इसकी सावधानी तुम्हें करनी पड़ेगी और नीतिनिपुण मन्त्री यौगन्धरायण से भी सचेत रहना पड़ेगा। महाराज के व्यसन में पड़ जाने की शङ्का से सम्भव है कि वह कोई विघ्न डाले अथवा विवाह हो जानेही पर कोई न कोई उत्पात करे। किन्तु वह धार्म्मिक है कोई झूठा दोष न लगावेगा तथापि अपनी सपत्नीयों की ओर से तुम्हें सदा सावधानी करनी होगी, सुनो मैं तुमसे एक कथा कहती हूं—

इसी प्रदेश में इक्षुमती नाम्नी एक नगरी है जिसके पास इसी नाम की एक नदी बहती है। इन दोनों को श्रीविश्वामित्र ऋषिजी ने बनाया था। इसी नगरी के समीप एक बड़ा भारी बन है जहां आश्रम बना मङ्कणक नामक मुनि ने ऊपर पैर कर चिरकाल तक कठिन तपस्या की है। उधर वे तपस्या कर रहे थे कि इधर मेनका नाम्नी अप्सरा आकाश से उड़ती हुई निकली, वायु की फरफराहट से जिसका वस्त्र शरीर पर से हट गया था; बस कामदेव ने अवसर पा अपना अस्त्र चलाया और मुनि का वीर्य्य निकल कर एक फटे हुये नवीन कदलीगर्भ में जा गिरा। तदुपरान्त उन्हें एक सर्वाङ्गसुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई क्योंकि महर्षियों का वीर्य्य कभी व्यर्थ नहीं जाता, उसी क्षण फल देता है। मुनि ने उसका नाम कदलीगर्भा इसलिये रक्खा कि वह कदली के गर्भ से जन्मी थी। धीरे धीरे वह कन्या उसी आश्रम में सयानी होने लगी, जैसे पूर्व समय में रम्भा के दर्शन से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गौतम के वीर्य्य से उत्पन्ना, द्रोण की भार्य्या कृपी सयानी हुई थी। एक समय मध्यप्रदेशोत्पन्न राजा दृढ़वर्म्मा मृगया खेलते खेलते अपने घोड़े पर आरूढ़ उसी तपोवन में आ निकले, वहां उन्होंने उस परमरूपवती कदलीगर्भा को जो मुनि-कन्योचित वेष में वल्कलवस्त्रधारण किये परम शोभा को प्राप्त हो रही थी। राजा की दृष्टि पड़तेही वह कन्या उनके हृदय में बस गई और वे उसी क्षण अपने अन्तः-पुर की सब रानियों को भूल गये। फिर विचारने लगे कि यह किसी ऋषि की कन्या जान पड़ती है, क्या कण्वपुत्री शकुन्तला जिस प्रकार राजा दुष्यन्त को मिली थी वैसेही मुझे भी यह भार्य्या प्राप्त होगी! यों मन में चिन्ता करही रहे थे कि इतने में समित् कुशा हाथ में लिये हुये साम्हने से मङ्कणक ऋषि आ गये। घोड़े से उतर समीप आ राजा ने उनके चरणों में प्रणाम किया और मुनि से पूछे जाने पर उन्होंने अपना परिचय दिया। मुनि ने कदलीगर्भा को आज्ञा दी कि, हे वत्से! राजा हमारे अतिथि हैं इनके लिये अर्घ्य † प्रस्तुत करो। वह नम्रता-पूर्वक 'बहुत अच्छा' कह अर्घ्य प्रस्तुत करने लगी। राजा ने मुनि से पूछा कि हे महात्मन्! आपको ऐसी रूपवती कन्या कहां से प्राप्त हुई? मुनिने उसकी उत्पत्ति और नाम तथाच ऐसे अभिधान का कारण सब राजा को कह सुनाया। राजा को जब यह विदित हुआ कि यह कन्या मुनि की मेनका की भावना से उत्पन्न होकर प्राप्त हुई है तो उसे अप्सरा मान उन्होंने मुनि से मांगा। ऋषि ने अपनी पुत्री कदलीगर्भा राजा को समर्पण की, प्राचीन समय के महात्माओं के काम दिव्य अनुभवों से होते थे इसलिये अविचार्य थे। निज प्रभाव से इस हाल को जानकर सब सुराङ्गनायें वहां आईं और उन्होंने मेनका की प्रीति के कारण उस कन्या का सब उद्वाहशृङ्गार कर दिया। फिर उसके हाथ में सरसों के बीज देकर कहा कि हे पुत्रि! पति के घर को जाती हुई तू इन्हें पहिचान के लिये मार्ग में छींटती जाइयो, कदाचित् भर्ता से अपमानित होकर कभी तू यहां आवे तो इनके उगने पर तुझे मार्ग का ज्ञान हो जायगा। इस प्रकार विवाह हो जाने पर, राजा दृढ़वर्म्मा कदलीगर्भा को घोड़े पर चढ़ा निज देश को चले। सारे रास्ते वह

† अर्घ्य देवताओं वा अत्यन्त प्रतिष्ठित मनुष्यों को दिया जाता है जिसमें तन्दुल, दूर्वा, पुष्प और जल रहता है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सरसी को छींटती चली गई, अगवानी के लिये उनकी सेना भी आ गई और महाराज प्रसन्नतापूर्वक अपनी राजधानी में भार्य्या को लिये हुये पहुँच गये। मन्त्रियों को अपनी नवीन भार्य्या का सब हाल सुना, दूसरी रानियों से विमुख हो राजा दृढ़वर्म्मा कदलीगर्भा के साथ सुख से रहने लगे। तब तो पटरानी ने राजा के मन्त्री को एकान्त में बुलाकर अपने किये हुये उपकारों का उसे स्मरण दिलाय, परम दुःखित हो यों कहा कि "हे बुद्धिविशारद! आप देखतेही हैं कि, राजा अपनी नवीन भार्य्या के प्रेम में ऐसे लिप्त हो गये हैं कि वे मुझे क्षण भर भी स्मरण नहीं करते। कोई ऐसी युक्ति करो कि हमारी यह सपत्नी दूर होवे।" यह सुन उस मन्त्री ने उत्तर दिया कि 'हे देवि! ऐसा करना उचित नहीं है। हमारे जैसे लोगों का यह काम नहीं कि अपने प्रभु की भार्य्या का नाश करें अथवा उसे देश से निकाल दें। यह काम सन्यासिनी स्त्रियों से ठीक होता है जो जन्त्र मन्त्र टोना टामर आदिक प्रयोगों में लगी रहती हैं और उनका मेल भी वैसेही लोगों में रहता है। ये छल-तपस्विनियां, लोगों के घर में विना रोकटोक पैठ जाती हैं और अनेक प्रकार की माया में कुशल होने के कारण क्या क्या कर्म्म नहीं करतीं! मन्त्री का ऐसा कहना सुन, मानो लज्जित हो, रानी ने कहा कि 'अच्छा यदि इस काम को आप सरीखे सज्जन लोग अनुचित समझते हैं तो मैं इसका ध्यान छोड़ दूंगी।' इतना कह मन्त्री को विदा कर, उसके कहने को चित्त में रख, रानी ने किसी चेरी के द्वारा एक सन्यासिनी को बुलवा भेजा और अपने जी की बात उसे सुना, यों कहा कि यदि हमारा यह काम सिद्ध हो जायगा तो मैं तुम्हें धन से सन्तुष्ट कर दूंगी। उस कुतापसी ने धन के लोभ में पड़ रानी से कहा कि 'हे देवि! यह कौन बड़ी बात है मैं अभी इस काम को कर देती हूं, मुझे नाना प्रकार के प्रयोगों का ज्ञान है।' इस प्रकार रानी को समझा बुझा वह अपने मठ को गई, वहां डर के साथ विचारने लगी कि अहो! यह तृष्णा किसकी विड़म्बना नहीं करती! देखो मैं रानी के साम्हने क्या प्रतिज्ञा कर बैठी, जानती वानती तो मैं कुछ भी नहीं और राजगृह में कोई चालाकी भी मेरी काम न आवेगी क्योंकि यदि चालाकी का भेद खुल गया तो वहां के अधिकारी लोग मेरा सर्वनाशही कर डालेंगे। अच्छा एक उपाय मैं करती हूं कि,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मेरा जो सुहृत् नापित है वह ऐसे कामों में बड़ा प्रवीण है, उसीसे इस विषय में उद्यम कराना चाहिये। ऐसा विचार वह उस नापित के घर पहुँची और उसे सब वृत्तान्त सुनाकर अपना मनोरथ कह गई। वह धूर्त वृद्ध नापित मन में विचारने लगा कि भाग्यों से यह अवसर गहरा माल मारने का हाथ लगा है। इस नवीना राजबधू को मारना न चाहिये किन्तु उसकी रक्षा करनी उचित है, क्योंकि उसके पिता दिव्यदृष्टि हैं अपने योगबल से सब हाल जान जांयगे और मेरा भेद प्रकाश कर देंगे। इसलिये इस समय राजा और नई रानी को अलग कर मैं राजमहिषी से खूब माल मारूँगा कारण यह कि बुरे और गुप्त रहस्य में सेवक की सहायता पाने से वह प्रभु स्वयं उस सेवक का सेवक बन जाता है। फिर कुछ दिनों के उपरान्त अवसर पाकर मैं पुनः उन दोनों की भेंट आपस में करा दूंगा जिससे राजा और ऋषिकन्या उभय ओर से मेरा प्रतिपालन होगा। इसमें किसी प्रकार का पाप भी न होगा और जीविका भी सदा के लिये बँध जायगी। ऐसा विचार वह नापित उस कूट तापसी से कहने लगा कि हे अम्ब! यह मैं सब कर सकता हूं किन्तु जादू के बल से राजा की इस नई भार्य्या को जान से मारना उचित नहीं है क्योंकि यदि यह बात राजा को विदित हो जायगी तो वह हम सबों को नाश करवा देंगे, फिर स्त्रीहत्या का पाप भी नाहक सिर चढ़ेगा और उसके पिता मुनिजी क्रोध से शाप दे देंगे। इसलिये बुद्धिबल से इस नई रानी को अलग कर देना चाहिये जिसमें राजमहिषी भी प्रसन्न हों और हम लोगों को भी अर्थप्राप्ति हो। यह कौन बड़ी बात है, मैं अपने बुद्धिबल से क्या नहीं कर सकता, सुनो मैं अपने बुद्धिबल का एक उदाहरण तुम्हें सुनाता हूं—

इस राजा दृढ़वर्म्मा के पिता की चलन ठीक नहीं थी, मैं उस समय उनका दास था और अपना उचित कामकाज किया करता था। एक दिन उन्होंने कहीं मेरी भार्य्या को देख पाया और उस रूपवती तरुणी को देखतेही वे मोहित हो गये। लोगों से पूछने पर उन्हें विदित हुआ कि यह नापित की भार्य्या है। उन्होंने सोचा कि नापित मेरा क्या कर सकता है, यह विचार वह मेरे घर में पैठ मेरी भार्य्या का उपभोग कर चले गये। दैवात् उस दिन मैं किसी काम से बाहर गया था। दूसरे दिन जो मैं घर में आया तो उसका रङ्गही दूसरा देखा, पूछने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर उसने अभिमान के सहित मुझे सब हाल सुनाया। योंही मैं तो अपनी भार्य्या को निषेध करने में अशक्त हुआ और राजा ने नित्यही उसका उपभोग आरम्भ कर दिया।

कुशील और उन्मादी प्रभु को इस बात का कब ध्यान रहता है कि यह गम्य है वा अगम्य, जैसे वायु से सञ्चालित अग्नि को तृण वा बन का विचार कहां रहता है। जब मैंने देखा कि मैं उस राजा को किसी प्रकार रोक नहीं सकता तो आहार कम करके दुर्बल हो रोगी होने का बहाना मैंने किया। फिर उसी अवस्था में मैं सांस लेता और हांफता हुआ अपना काम करने के निमित्त राजा के समीप गया। राजा ने साभिप्राय मुझसे पूछा कि अरे नापित! यह तेरी क्या दशा हो रही है तू क्या बीमार है? मैं चुप रहा, जब उन्होंने बार बार मुझसे पूछा तो मैंने एकान्त में कहा कि धर्म्मावतार! यदि मुझे अभयदान दिया जाय तो मैं कुछ निवेदन करूँ। महाराज ने कहा "अच्छा कह तू कुछ मत डर"। मैंने कहा 'हे प्रभो! मेरी भार्य्या डाइन है जब मैं सो जाता हूं तो वह मेरी अँतड़ियों को गुदाद्वार से निकालकर चूसा करती है और फिर अन्दर डाल देती है इसी कारण मैं इतना दुर्बल हो गया हूं, खाना पीना मेरे शरीर में कुछ भी नहीं लगता!' मेरी बात सुन, राजा के चित्त में कुछ शङ्का उत्पन्न हुई और वे विचारने लगे कि क्या वह सचमुच डाकिनी है? होगी, तभी उसने मेरा मन हर लिया है, कदाचित् वह मेरी भी अँतड़ियों को न चूसने लग जाय क्योंकि मैं तो खाने पीने से भली प्रकार हृष्टपुष्ट हूं सो आज रात को मैं स्वयं उसकी परीक्षा करूँगा। ऐसा मन में दृढ़ कर राजा ने मेरे लिये कुछ भोजन मँगाकर वहीं पर मुझे दिलाया। फिर मैं घर आकर अपनी भार्य्या के सम्मुख फूट २ कर रोने लगा, जब उसने मेरे रोने का कारण बार बार पूछा तो मैंने कहा हे प्रिये! यदि तुम किसी से न कहो तो मैं अपने रोने का कारण तुम्हें बतलाऊँ, जब उसने इस बात को स्वीकार किया तो मैंने कहा अच्छा सुनो, हमारे महाराज के गुदास्थान में कई एक दाँत वज्र के समान कड़े निकल आये हैं, मेरा छुरा लेकर वह स्वयं गुप्तस्थान का बाल बना रहे थे कि वह छुरा दांत से टक्कर खाकर टूट गया। मुझे यह चिन्ता उपस्थित है कि यदि प्रतिदिन मेरा एक छुरा योंही टूटा करेगा तो मैं

नित्य नया छुरा कहां से पाऊँगा, इसीलिये मैं रोता हूं कि इस घर से मेरी जीविका गई अब मैं अपनी गृहस्थी कैसे चलाऊँगा।" यह सुन मेरी भार्य्या ने विचारा कि यह बड़े आश्चर्य्य की बात है। आजतक संसार में यह कहीं न सुना गया कि किसी को ऐसे स्थान में भी दाँत होते हैं, सो आज रात को जब महाराज सो जांयगे तो मैं उस समय उन अद्भुत दांतों को देखूंगी। कैसीही चतुर स्त्री क्यों न हो धूर्तों के विचित्र फन्दे में आही जाती है।

अस्तु, रात को जब राजा आये और मेरी स्त्री से भेंट करने के उपरान्त थकने का बहाना कर सो गये तो मेरी भार्य्या ने उन दांतों की खोज में धीरे धीरे हाथ बढ़ाया। ठीक स्थान पर हाथ पहुँचतेही राजा चौंक कर उठे और "डाइन डाइन" चिल्लाते हुये डर के मारे बाहर निकल आये और अपने महलों को चल दिये। उसी दिन से राजा ने भय के मारे फिर मेरी स्त्री का मुंह न देखा और वह सन्तोष कर मेरेही से प्रेम करने लगी।

इस प्रकार अपनी बुद्धि से मैंने अपनी स्त्री को राजा के हाथ से पूर्व में बचाया था। तापसी को यह वृत्तान्त सुना वह नापित कहने लगा कि हे मातः! उसी प्रकार इस काम को भी बुद्धिमानी से करना चाहिये, अब तुम मेरी युक्ति सुनो—अन्तःपुर के किसी प्राचीन और वृद्ध सेवक को अपनी ओर मिलाना चाहिये जो नित्यही राजा से एकान्त में यह कहा करै कि 'महाराज! कदलीगर्भा तो डाइन है!' फिर वह अरण्यनिवासिनी है उसका कोई अपना सेवक तो है नहीं, जो हैं सब पराये हैं और पराये सेवक धन की लालच में पड़ क्या नहीं कर सकते। जब कुछ दिनों तक ऐसा सुनते सुनते राजा के हृदय में शङ्का उत्पन्न होने लगी तो एक दिन रात के समय चुपके से कदलीगर्भा के घर में किसी मुर्दे के हाथ पैर रखवा दिये जांय। सबेरे जब राजा की दृष्टि उन पर पड़ेगी तो उन्हें वृद्ध की बात पर विश्वास हो जायगा कि यह सचमुच डाइन है, फिर डर के मारे वे आपही उसे छोड़ देंगे। इस प्रकार सपत्नी के निकल जाने से महिषी को सुख प्राप्त होगा और वह तुम्हें मानने लग जांयगी तथा मुझे भी कुछ लाभ हो रहेगा। नापित की यह बात सुन उस तापसी ने जाकर महारानी को यह युक्ति बतलाई और उन्होंने भी वैसाही किया। महाराज ने जब अपनी आंखों से मुर्दे के हाथ पैर देखे तो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कदलीगर्भा को यथार्थ डाइन समझ भय के मारे परित्याग कर दिया। इस विलक्षण युक्ति से प्रसन्न होकर जो कुछ महारानी ने उस तापसी को दिया उसमें नापित का भाग देकर वह भी आनन्द से रहने लगी।

जब राजा दृढ़वर्म्मा ने कदलीगर्भा को परित्याग कर दिया तो वह राजमन्दिर से निकल, जिस मार्ग से यहां आई थी उसी मार्ग से चलती, और उगी हुये सरसों द्वारा पता लगाती अपने पिता के आश्रम में पहुँच गई। किन्तु सारे मार्ग में उसे यही चिन्ता लगी थी कि कहीं पिताजी रुष्ट होकर राजा को शाप न दे दें। अकस्मात् इसे आई हुई देख पिता मङ्कणक के मन में क्षण भर यह शङ्का हुई कि क्या यह दुश्चारिणी तो नहीं हुई किन्तु फिर ध्यान की साधना करने से उन्हें सब वृत्तान्त ठीकोठीक विदित हो गया, तब तो वे निज पुत्री को आश्वासन दे उसे अपने साथ ले राजा दृढ़वर्म्मा के पास आये। राजा ने उन्हें देखतेही सादर प्रणाम किया और ऋषि ने राजा को उस कपटनाटक के पूरे भेद से अभिज्ञ किया जो महिषी ने सपत्नीभाव से द्वेष खा कर खेला था। इतनेही में उस नापित ने भी महाराज की सेवा में स्वयं उपस्थित हो हाथ जोड़ सब वृत्तान्त निवेदन कर यों कहा कि हे राजन्! हे प्रभो! इस युक्ति से मैंने रानी कदलीगर्भा को उन मन्त्रों के अभियोग से बचाया जो अवश्य उस पर किये जाते और आपकी महिषी को भी सन्तुष्ट किया। यह सुन मुनीन्द्र के बचनों से उसकी बात का मिलान कर राजा ने पुनः प्रसन्नता और विश्वासपूर्वक कदलीगर्भा को अपने राजभवन में ले लिया। फिर जब ऋषिजी विदा होने लगे तो कुछ दूर लों उन्हें सादर पहुँचा कर उस नापित को भी इस ध्यान से अच्छा पुरस्कार दिया कि यह हमारा शुभचिन्तक और हितैषी है। तदुपरान्त राजा अपनी महिषी से विमुख हो कदलीगर्भा के साथ सुखपूर्वक रहने लगे।

सो हे सखि! कलिङ्गसेने! सपत्नी लोग ऐसे ऐसे अनेक झूठे दोष लगा दिया करती हैं, तू अभी बालिका है, तेरे विवाह का लग्न बहुत दूर निकला है और तिस पर तेरे सौन्दर्य्य से मोहित हो अनेक देवता लोग तुझसे छिपे छिपे प्रेम करते हैं। सो इस समय तू अपने को, जो जगत में अनूठा रत्न है, केवल महाराज वत्सराज को अर्पित करके आप अपनी रक्षा कीजियो, तेरा उत्कर्षही तेरा बैरी

हो गया है। और हे सखि! अब मैं तेरे पास न आऊँगी क्योंकि तू अपने पति के घर में आ रही है, सती स्त्रियां सखी के पतिगृह में कभी नहीं जातीं और आज मेरे पति ने भी मुझे निषेध कर दिया है। और तेरे स्नेह के कारण मैं गुप्त रीति से अर्थात् अपने पति की चोरी भी यहां नहीं आ सकती क्योंकि वे दिव्यदृष्टि हैं सब बातें जान जांयगे; आजही बड़ी बड़ी कठिनता से उनकी आज्ञा लेकर यहां आई हूं। और अब मेरा यहां कोई काम भी नहीं है, सो हे सखि! मैं अपने घर को जाती हूं, हां यदि मेरे पति प्रसन्नतापूर्वक मुझे आने की आज्ञा देंगे तो मैं लज्जा को परित्याग कर पुनः तेरे पास आऊँगी।

सखीवचन इतनो सुनत रोन लगी अकुलाय।
बेसुध ह्वै महि पै गिरी दशा कही ना जाय ॥
तब उठाइ गर लाइ कै भूपकुँवरि समुझाय।
दै धीरज गृह को गई सोमप्रभा बिलखाय ॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सातवां तरङ्ग।

राजकुमारी कलिङ्गसेना, जो अपने देश और बान्धवों को परित्याग कर कौशाम्बी में आई थी, सोमप्रभा के चले जाने पर अत्यन्त दुःखित हुई और सदा उसे स्मरण किया करती थी। महाराज वत्सराज के साथ जो विवाह होनेवाला था उसका लग्न भी दूर जा पड़ा, सो ऐसी अवस्था में उस राजपुत्री की ठीक वही दशा हुई जो यूथ से भटकी हुई मृगी की होती है। जिन ज्योतिषियों ने चालाकी से कलिङ्गसेना का विवाहलग्न टाल दिया था उन पर महाराज वत्सराज कुछ मनही मन असन्तुष्ट हुये। उनका चित्त बहुत उदास हो गया था, सो वे जी बहलाने के लिये उस दिन महिषी वासवदत्ता के रनवास में गये जहां रानी ने मन्त्री की शिक्षा के अनुसार उनकी सेवा निर्विकार चित्त से की और अपने हृदय का दुःख किसी प्रकार झलकने न दिया। महाराज मन में विचारने लगे कि कलिङ्गसेना का वृत्तान्त सुनने पर भी जो इसके हृदय में कुछ भी विकार न उत्पन्न हुआ इसका क्या कारण है। यह जानने की इच्छा से उन्होंने रानी से पूछा कि हे प्यारी! तुमने सुना है वा नहीं कि कलिङ्गसेना नाम की कोई राजपुत्री मुझसे विवाह करने की इच्छा कर स्वयं यहां आई है। यह सुन विना किसी प्रकार का विकार चित्त में लाये रानी ने उत्तर दिया कि हां प्राणनाथ इसका वृत्तान्त मुझे विदित है, जो सच पूछिये तो मुझे इस बात से बड़ा हर्ष है कि यह लक्ष्मी हमारे घर में आई। उसके आ जाने से उसके पिता महाराज कलिङ्गदत्त भी हमारे वश में हो जांयगे जिसके कारण सारी पृथ्वी हमारे अधीन रहेगी। हे आर्य्यपुत्र! यह तो आप चिरकाल से देखते आये हैं और भली प्रकार जानतेही हैं कि मैं आपकी विभूति और आपके सुख से सुखी रहती हूं। क्या मैं धन्य नहीं हूं कि जिसके भर्ता आप हैं जिनसे वे राजकन्यायें भी प्रेम किया चाहती हैं जिनकी अभिलाषा अनेक राजा लोग रखते हैं। मन्त्री यौगन्धरायण से सिखाई हुई वासवदत्ता ने जब इस प्रकार महाराज वत्सराज से बातचीत की तो वे अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और उस रात उसी रानी के यहां उन्होंने शयन किया। रात्रि को निद्रा खुलने पर वे मन में विचारने लगे कि सचमुच यह रानी बड़ी उदारहृदय है, जो मेरी प्रसन्नता और तुष्टि

CC-0: Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के लिये कलिङ्गसेना को अपनी सौत बनाने में किञ्चित् भी दुःखित नहीं होती। किन्तु यह विचारी इस मनोवेदना को इस समय कैसे सहेगी, जो एक बेर पद्मावती के विवाह के समय प्राणपरित्याग करती हुई भाग्यों से बच गई है। भगवान् न करे, यदि इसका कुछ अनिष्ट हुआ तो मेरा सर्वनाशही हो जायगा क्योंकि मेरे पुत्र, सास, श्वशुर पद्मावती और राज्य, कहां तक कहूं सभी का अवलम्ब इसी पर है। अतएव कलिङ्गसेना के साथ मेरा विवाह करना उचित न होगा। ऐसा निश्चय कर भोर के समय महाराज रनवास से बाहर आये और तीसरे पहर रानी पद्मावती के भवन में गये। रानी वासवदत्ता ने उसे पहिलेही सिखा पढ़ा रक्खा था, सो उसने भी महाराज का वैसाही सत्कार किया और पूछी जाने पर वही उत्तर दिया जो वासवदत्ता ने सिखला दिया था। दोनों रानियो का एकही जैसा चित्त पा और एकही सा बचन सुन, महाराज ने यह सब हाल दूसरे दिन मन्त्री यौगन्धरायण से कहा, उसने भी जब देखा कि महाराज का विवाह-विचार कुछ ढीला पड़ा है तो समयानुसार यों कहना आरम्भ किया कि हे देव! मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि यह बात यहीं तक नहीं है इसका कोई भयानक और दारुण परिणाम अनुमान होता है, मेरी समझ में तो दोनों रानियों ने अपने प्राणपरित्याग करने का दृढ़ निश्चय कर ऐसी बात कही है। साध्वी स्त्रियों का यह सहज स्वभाव है कि पतिकी मृत्यु पर वा उसके अन्य स्त्री से प्रेम करने पर वे संसारकी सब भोग--कामना से उदास हो कर मृत्यु के मुख से जाना निश्चय ठान लेती हैं; क्योंकि पतिव्रता स्त्रियों को अपने गाढ़ प्रेम का खण्डन असह्य होता है। हे महाराज इसपर मैं राजा श्रुतसेन की कथा कहता हूं सो सुनिये—

पूर्व समय की बात है कि दक्षिण देश के गोकर्ण नामक पुर में कोई विद्यासम्पन्न, निज कुल के भूषण प्रसिद्ध राजा श्रुतसेन हो गये हैं। सर्व सम्पत्ति से संयुत उन राजा को एक दिन यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि अबलों मुझे कोई भार्य्या अपने अनुरूप न मिली। ऐसा विचारही रहे थे कि अग्निशर्म्मा नामक किसी ब्राह्मण ने जो उनके यहां रहता था कथाप्रसङ्ग से यों कहा कि हे राजन् मैंने दो बातें परम आश्चर्य्य की देखी हैं सो मैं आपसे कहता हूं सुनिये—तीर्थयात्रा में घूमते घूमते मैं एक समय उस पञ्चतीर्थी में पहुँचा, जहां पांच अप्सराओं का, जो किसी

ऋषि के शाप से ग्राहयोनि में जा भी थीं, तीर्थाटन करते हुये श्रीअर्जुनजी ने उद्धार किया था । उस तीर्थवर में स्नान करके जो लोग पांच रात उपवास करते हैं वे उस पुण्यस्थली के माहात्म्य के कारण श्रीनारायणजी के अनुचर हो जाते हैं । मैं ज्योंही स्नान करके बाहर निकला देखता क्या हूं कि साम्हने के खेत में एक किसान खेत जोतकर बैठा है और आनन्द में मग्न कुछ गा रहा है । दूसरी ओर से एक सन्यासी आया, उसने उस किसान से जो अपनी धुन में मस्त बैठा गा रहा था, मार्ग पूछा; किन्तु गीत में मग्न होने के कारण उसने कुछ भी न सुना । सन्यासी क्रोध में आ कुछ बुड़बुड़ाने लगा कि वह गाना बन्द कर उससे बोला कि 'अहो ! तू सन्यासी हुआ पर तूने धर्म्म का अंश मात्र भी न सीखा, देख यद्यपि मैं मूर्ख हूं परन्तु धर्म्म का सार मैंने पाया है । यह सुन उस सन्यासी ने कौतुक से पूछा कि अच्छा बता तूने क्या धर्म्म का तत्व जाना है ? कृषक कहने लगा कि तुम इस वृक्ष की छाया तले बैठ जाओ तो मैं तुम्हें इसका भेद सुनाऊँ—वह बैठ गया और किसान कहने लगा कि—

इस प्रदेश में तीन ब्राह्मण भाई रहते हैं, पहिला ब्रह्मदत्त, दूसरा सोमदत्त और तीसरा विष्णुदत्त जो बड़ा पुण्यात्मा है । प्रथम दोनों का तो विवाह होगया था किन्तु वह तीसरा क्वारा ही था । वह अपने दोनों बड़े भाइयों की आज्ञा का पालन करता हुआ सदा दासों की नाई मेरे साथ काम किया करता था, क्रोध का तो उसे लेश मात्र भी न था । मैं उनलोगों का हलवाहक हूं । दोनों बड़े भाई उस मृदु, सीधे, सन्मार्गानुयायी, सरलस्वभाव और आयासरहित विचारे को बुद्धिहीन और गवह समझते थे । एकबेर उसकी दोनों भौजाइयों ने उसपर मोहित हो एकान्त में अपनी बुरी इच्छा उससे प्रगट की किन्तु विष्णुदत्त ने उनसे हाथ जोड़ निवेदन किया कि आपलोग मेरी माता के तुल्य हैं, यह अनुचित और पापविधायक काम मुझसे न होगा । तब तो उन दोनों ने अपने अपने भर्ताओं से जा कर झूठेही यह दोष लगाया कि तुम्हारा छोटा भाई विष्णुदत्त तो हम पर बलात्कार किया चाहता था । यह सुन वे दोनों मनही मन उससे अत्यन्त क्रुद्ध हुये ठीकही है "है कुनारि-परपञ्चरत विगलितविवुधविचार । साँच झूठ निर्णय कबहुँ करहिं न मूढ़ गँवार ॥" एक दिन उन दोनों बड़े

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भाइयों ने विष्णुदत्त से कहा कि तू जाकर खेतवाले उस मिट्टी के घूरे को जिसमें दीमक भरे हैं, खोद के बराबर कर दे। वह बहुत अच्छा कह खेत में जा कुदाली हाथ में ले उस घूरे को खोद बराबर करने लगा; मैंने बहुतेरा निषेध किया कि इसमें काला सांप रहता है तू इसे मत खोद, किन्तु उसने यही उत्तर दिया कि बड़े भैय्या की बात का कैसे उल्लङ्घन करूँ। लाचार मैं तो चुप हो रहा और वह घूरे को खोदने लगा; खोदते खोदते सांप तो न निकला एक ताम्बे का कलश सोने से भरा हुआ उसके हाथ लगा, यथार्थ है "सज्जन कपटविहीन कहँ धर्म सहायक होत" वह उस घड़े को लेकर अपने भाइयों के पास चला, मैंने कितनाही समझाया और मना किया परन्तु उसने एक न सुनी सीधा जाकर उन्हे वह हेम पूरित कलश दे आया। जब उन्होंने देखा कि वह सर्प से काटा न जाकर उलटा धन लेकर आया तो उन दोनों ने उसी धन में थोड़ा सा हत्यारों को देकर उन्हें इस काम पर नियत किया कि वे अवसर पाकर विष्णुदत्त का हाथ पैर काट डालें। उन्होंने ऐसाही किया किन्तु इतने पर भी उस छोटे भाई ने अपने जेठे भाइयों पर कुछ भी क्रोध न किया जिस सत्य के प्रभाव से उसके हाथ पैर पुनः ज्यों के त्यों हो गये। यह देख मैंने उसी दिन से सारा क्रोध परित्याग कर दिया और तू तापसी होकर क्रोध में लिप्त है? जो क्रोधरहित होता है वह स्वर्ग को भी जीतता है, देख—बस इतना कह हे नरनाथ! वह किसान मेरे देखतेही देखते शरीर परित्याग कर स्वर्ग को चला गया। एक तो मैंने यह आश्चर्य्य देखा। अब हे राजन्! दूसरा आश्चर्य्य सुनिये इतना कह वह ब्राह्मण पुनः राजा श्रुतसेन से कहने लगा कि—

मैं उसी तीर्थयात्रा में घूमता फिरता समुद्र के तट पर राजा वसन्तसेन के राज्य में पहुंचा। ज्योंही मैं राजा के सत्र में भोजन करने के लिये भीतर चला कि वहां के ब्राह्मणों ने मुझसे कहा कि हे ब्रह्मन्! उधर से मत जाओ, उधर राजा की पुत्री रहती है, उसका नाम विद्युत्द्योता है. मुनि लोग भी उसे देखकर उन्मत्त हो जाते और कामवाण से पीड़ित होने के उपरान्त पागल हो अपना जीवन गँवा बैठते हैं। मैंने कहा कि यह कोई आश्चर्य्य की बात नहीं है क्योंकि मैं भी दूसरे कामदेव राजा श्रुतसेन के पास रहता हूं जहां नित्यही यह कौतुक देखने में आता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है कि जब कभी वे यात्रा के निमित्त अथवा और किसी काम से बाहर निकलते हैं तो रक्षक लोग कुलाङ्गनाओं को उन स्थानों से हटा देते हैं कि जहां से राजा पर उनकी दृष्टि पड़ सके क्योंकि उससे सतीवृत्त के नाश होने का भय रहता है। मेरे इस कहने से जब उन्हें विदित हुआ कि मैं श्रीमान् के प्रजावर्ग में से हूं तो सत्र के अधिप और पुरोहित मुझे भोजन कराने के निमित्त राजा के समीप ले गये। वहां मैंने उस राजपुत्री विद्युत्द्योता को देखा जो साक्षात् कामदेव की जगन्मोहिनी मन्त्रविद्या की नाईं शरीर धारण किये खड़ी थी। उसके दर्शन से जो क्षोभ मेरे चित्त में हुआ उसे चिरकाल के उपरान्त दबाकर मैं विचारने लगा कि यदि यह मेरे प्रभु की भार्य्या होवे तो वे अपना राज्यही भूल जावें, तथापि इस का हाल मैं अपने स्वामी से कहूंगा नहीं तो कहीं उन्मादिनी और देवसेन का सा हाल न हो जावे।

राजा देवसेन के राज्य में उन्मादिनी नाम्नी कोई वणिक्सुता रहती थी जो अपने रूप से सारे जगत् को उन्मत्त करनेवाली थी। उसके पिता ने निज पुत्री का विवाह राजा के साथ करने के अभिप्राय से महाराज की सेवा में अपना निवेदन पत्र भेजा किन्तु ब्राह्मणों ने यह समझकर कि कहीं राजा को, इसका व्यसन न हो जाय, उसे कुलक्षणी बताया, इससे राजा ने उसे अङ्गीकार न किया। तब उसके पिता ने, राजा के मुख्य मन्त्री से उसको व्याह दिया। एक समय राजा ने अचानचक उस मन्त्री-भार्य्या को कहीं खिड़की में खड़ी देख पाया और उसी क्षण उस नागिनी का नयनविष महाराज को चढ़ गया जिससे वे मूर्छित हो गिर पड़े और खाना पीना सभी छूट गया। उसके भर्ता तथा दूसरे मन्त्रियों ने प्रार्थना भी करी कि आप इसे स्वीकार कर लीजिये, किन्तु उस धार्मिक राजा ने उसे ग्रहण करने की अपेक्षा अपना प्राण परित्याग करना अच्छा समझा। इसीलिये मैं आपसे पहिलेही इस बात को निवेदन कर देता हूं कि कहीं मुझ पर आपके प्राणनाश का पाप न लगे।

राजा श्रुतसेन ने जब उस ब्राह्मण के इस मदनाज्ञारूपी वचन को सुना तो वे विद्युत्द्योता पर आसक्त हो गये और उसी क्षण उस ब्राह्मण को वहां भेज उस राजसुता को वहां बुलवा उससे विवाह कर लिया। उसी क्षण से राजकुमारी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्युत्द्योता राजा श्रुतसेन के साथ यों अभिन्नहृदय हो गई जैसे सूर्य्य भगवान् से उनकी प्रभा। तदुपरान्त किसी महाधनी वणिक् की अत्यन्त रूपवती कन्या मातृदत्ता नाम्नी राजा से विवाह करने की इच्छा से स्वयं उनके पास आई। राजा ने इस ध्यान से कि इसे लौटा देने में अधर्म होगा उसका पाणिग्रहण कर लिया, यह हाल सुन विद्युत्द्योता का हृदय शोक से फट गया। राजा उसी क्षण अपने भवन में आये और उस प्यारी को गोद में उठा रोने लगे किन्तु फिर क्या हो सकता था। उसी दुःख में राजा ने भी अपना शरीर त्याग दिया। यह देख वह वणिक्सुता अग्नि में प्रवेश कर गई। इस प्रकार राजा के साथ सारा राज्यही नष्ट हो गया।

इसीलिये कहता हूं महाराज! कि चिरकाल के दृढ़ प्रेम का खण्डन असह्य होता है, विशेषकर आपकी मनस्विनी रानी वासवदत्ता से यह दुःख कभी न झेला जायगा। यदि आपने कलिङ्गसेना से पाणिग्रहण किया तो देवी वासवदत्ता अवश्य प्राणपरित्याग कर देंगी और रानी पद्मावती की भी वही दशा होगी क्योंकि दोनों का जीवन एकही है। तदुपरान्त आपके पुत्र नरवाहनदत्त की क्या दशा होगी आपही विचारिये। फिर आपका हृदय इस महादुःख को सह सकेगा कि नहीं इसे आपही जानिये मैं क्या कहूँ, बस हे राजन्! एकही पद आगे बढ़ने से यह सब सुख नाश हो जायगा। दोनों रानियों के बचन की गम्भीरता से उनके हृदय का छिपा हुआ भाव प्रतीत होता है कि उन लोगों ने अपना जीवन परित्याग करने का दृढ़ निश्चय किया है। इसीलिये आपको अपनी रक्षा स्वयं करनी उचित है, पशु पक्षी भी अपने स्वार्थ का संरक्षण करना जानते हैं फिर आप सरीखे बुद्धिमानों का क्या पूछना है। इस प्रकार अपने बुद्धिमान मन्त्री यौगन्धरायण की बात सुन, महाराज वत्सराज, जिनके हृदय में विवेक उत्पन्न हो चुका था, यों कहने लगे कि 'ठीक है, इसमें कोई सन्देह नहीं. मेरा सबही सुख नाश हो जायगा, सो कलिङ्गसेना के विवाह से मुझे क्या लाभ है। गणकों ने जो दूर का लग्न निश्चय किया सो बहुतही उचित हुआ, और क्योंकि वह स्वयं मुझे वरने के लिये आई है, अतएव उसके त्यागने में कुछ अधिक पाप भी नहीं है।' महाराज वत्सराज का बचन सुन यौगन्धरायण अत्यन्त प्रसन्न हुआ और सोचने

लगा कि हमलोगों का काम अब सिद्ध हुआही समान है। भला ऐसी कोई बात है कि नीति की महावेल जो उपयुक्त देशकाल में लगाई गई हो और उपायरूपी जल से सींची गई हो, न फले ? ऐसा विचार देशकाल का ध्यान करता हुआ यौगन्धरायण महाराज को प्रणाम कर आज्ञा ले निज घर को गया। तदुपरान्त महाराज भी निज रनवास में रानी वासवदत्ता के पास पहुँचे जिसने अपने हृदय का भाव छिपाकर उनका भली भांति सत्कार किया। फिर महाराज, वासवदत्ता से कहने लगे कि हे प्रिये ! हे हरिणाक्षि ! मैं क्या कहूं तुम तो स्वयं जानतीही हो कि कमल की जल की नाईं तुम्हारा प्रेमही मेरा जीवन है। क्या मैं कभी दूसरी स्त्री का नाम भी ले सकता हूं। कलिङ्गसेना तो आपही मेरे यहां आई है। यह बात सबही को विदित है कि जब तपस्या में स्थित अर्जुनजी को स्वयं वरने के लिये रम्भा अप्सरा आई थी और पार्थ ने उसको स्वीकार न किया था तो उसने क्रुद्ध हो अर्जुनजी को यह शाप दे दिया था कि 'जा तू नपुंसक हो जा' जिस शाप को उन्होंने विराट राजा के घर में विहण्डले के रूप से रहकर महा आश्चर्यरूप से अतिवाहन किया था। इसी कारण मैंने उस समय कलिङ्गसेना को निषिद्ध नहीं किया किन्तु मैं तुम्हारी इच्छा विना, प्रिये ! कोई काम नहीं कर सकता। यों रानी को सान्त्वना दे और उनके हृदयवर्ती क्रूरभाव को समझ महाराज ने निज मन्त्री यौगन्धरायण की प्रौढ़ता पर अत्यन्त सन्तुष्ट हो वह रात वहीं रानी वासवदत्ता के साथ बिताई।

इसी बीच में वह योगेश्वर नामक ब्रह्मराक्षस, जो यौगन्धरायण का मित्र था और जो मन्त्रीद्वारा कलिङ्गसेना की चलन गुप्तभाव से रात दिन जांचने के लिये नियत किया गया था, उसी रात को स्वयं मन्त्री के पास आ धीरे से कहने लगा कि मैं सदा कलिङ्गसेना के घर में भीतर बाहर बना रहता हूं, कभी भी मैंने किसी मनुष्य वा देवता का आना जाना वहां न देखा। परन्तु आज सन्ध्या के समय जब मैं छत के नीचे छिपा था तो मुझे वायुमण्डल में एक सर्राटे का शब्द सुन पड़ा, मैंने अपनी विद्या के बल से उसकी खोज चलाई किन्तु कुछ भी पता न लगा; तब मैं विचारने लगा कि यह शब्द निस्सन्देह किसी दिव्यप्रभाववाले का है जो कलिङ्गसेना के सौन्दर्य से लुब्ध हो आकाशमार्ग से भ्रमण करता हुआ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यहां आया है, और क्योंकि मेरी विद्या यहां फलवती नहीं होती, अतएव मैं कुछ ठहरकर इस विषय को जांच करूँगा क्योंकि "जे प्रवीण उत्साहयुत लागे रहत सदाहिँ । शत्रुछिद्र के लहन में तिन्हें विलम्ब सु नाहिँ" ॥ फिर मैंने आपको यह कहते सुनाही था कि देवता लोग भी इसके पाने की इच्छा रखते हैं। इसकी सखी सोमप्रभा से भी मुझे यही बात विदित हुई थी जिस समय वह कलिङ्गसेना से वात कर रही थो। इतना निश्चय कर मैं आपको यह सुनाने के लिये यहां आया था किन्तु एक बात मैं प्रसङ्ग से पूछता हूं जो आप क्षपा कर मुझे बतलाइये। मैंने अपने योगबल से छिपकर आपको राजा से यह कहते सुना था कि 'पशु पक्षी भी आत्मरक्षा करना समझते हैं' सो हे सन्मते! इसको कैसी कथा है मुझे सुनाइये। जब योगेश्वर ने यों पूछा तो यौगन्धरायण ने कहा कि हे मित्र! इसकी कथा बड़ी मनोहर है, मैं कहता हूं सुनो—

प्राचीन समय में विदिशा नगरी के बाहर बट का एक भारी वृक्ष था। उस महातरु के आश्रय में चार जीव बसते थे, नेवला, उल्लू बिल्ली और चूहा। नेवला और चूहा तो वृक्ष की जड़ के पास अलग अलग बिल में रहते थे, बिल्ली एक खोंड़रे में और उल्लू वृक्ष के ऊपर जहां कोई न पहुँच सके पत्तों में छिपकर रहता था। चूहे विचारे को तीनोंमार सकते थे और बिल्ली तीनों की जान पर भारी थी। नेउला और चूहा तो बिल्ली के डर के मारे रात को अन्न की खोज में निकलते और उल्लू का तो रात को फिरने का स्वभावही था। बस रातही को तीनों अपने अपने आहार की खोज में बाहर फिरते थे। बिल्ली दिन तथा रात दोनोंही समय निर्भय निकलती थी। पासही वाले जौ के खेत में वह चूहों को धरने को लालच से प्रायः जाया करती थी। वे तीनों भी अपना अपना अवसर पाकर अन्न की इच्छा से खेत में जाते थे। एक बेर कोई चाण्डाल बहेलिया वहां आया जिसने खेत में बिल्ली के पैरों का चिन्ह देख उसे पकड़ने के लिये जाल लगाया। रात के समय जब बिल्ली चूहों को मारने के लिये वहां पहुँची तो जाल में फँस गई। इतने में चूहा भी दबे पांव उसी खेत में पहुँचा, देखता क्या है कि बिल्ली जाल में फँसी है, वह मारे आनन्द के नाचने लगा। इतनेही में एक रास्ते से नेवला और उल्लू भी उसे दूर से आते दिखाई पड़े। उन्होंने भी देखा कि बिल्ली तो फँसी है सो वे दोनों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चूहे को पकड़ने के लिये लीछियाने लगे। चूहे ने देखा कि अब जान नहीं बची चाहती, सो विचारने लगा कि ये दोनों बिल्ली से भय खाते हैं यदि मैं दौड़ कर बिल्ली के पास जा रहूं तो ये दोनों डर के मारे उसके समीप तो न जांयगे किन्तु बिल्लीही मुझे कब छोड़ेगी, एकही थप्पड़ में मेरा काम समाप्त कर देगी; फँसी है तो क्या हुआ:—और यदि बिल्ली से दूर रहता हूं तो या तो नेवलाही धर लेगा या उल्लू का आहार बनूंगा, अब सभी ओर से शत्रुओं के बीच फँसा हूं कहां जाऊँ क्या करूँ। चलो बिल्लीही के पास चलूं क्योंकि यह भी आपद् में पड़ी है कदाचित् मुझ जाल काटनेवाले को अपने छुटकारे के लिये बचा ले। ऐसा विचार वह चूहा बिल्ली के समीप जाकर कहने लगा कि तुम्हें इस जाल में फँसी देख मुझे बड़ा दुःख होता है यदि कहो तो मैं जाल को अपने चोखे दांतों से काट दूं। एक साथ रहने के कारण सज्जन लोगों के हृदय में शत्रुओं पर भी स्नेह हो जाता हैं किन्तु तुम्हारे चित्त का हाल मुझे नहीं विदित है इसलिये तुम्हारे समीप आने की हिम्मत नहीं होती। यह सुन बिल्ली ने कहा कि हे सखे! तुम मेरा विश्वास रक्खो आज से तुम मेरे प्राण बचानेवाले मित्र हुए। यह सुन वह बिल्ली की गोद में जा रहा जिसे देख नेवला और उल्लू दोनों निराश हो चले गये। तब बिल्ली ने चूहे से कहा कि हे मित्र! अब रात बीती चाहती है तुम मेरे बन्धनों को शीघ्र काटो।

चूहा धीरे धीरे दाँत चलाने लगा, वह जान बूझ कर इस कारण विलम्ब करता था कि जिसमें बहेलिया आ जावे, झूठेही दांतों को कर्र कर्र करके विलम्ब करने लगा। रात बीतने पर ज्योंही बहेलिया निकट आया और बिल्ली ने कहा कि मित्र जल्दी करो कि चूहे ने चटपट जाल काट दिया। बन्धनों के कटतेही बिल्ली तो बहेलिये के डर के मारे जान लेकर भागी और चूहा भी मृत्यु के मुख से छूट दौड़कर बिल में घुस गया। दूसरी बेर जब बिल्ली ने चूहे को अपने पास बुलाया तो उसने उसका विश्वास न किया और यह उत्तर दिया कि "काल के फेरफार से कभी शत्रु मित्र हो जाता है किन्तु वह सदा मित्रता का बर्ताव नहीं करता। इस प्रकार एक चूहे ने पशु होकर बुद्धिमत्ताद्वारा अनेक शत्रुओं से अपनी रक्षा कर ली, तो फिर मनुष्यों का क्या कहना है। इसीलिये मैंने महाराज

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से उस समय वह बात कही थी जो तुमने सुनी कि वह देवी वासवदत्ता को बचाते हुये बुद्धिमानी से अपनी रक्षा करें। क्योंकि बुद्धिही मनुष्य की सच्ची उपकारिणी है, बल और पौरुष कुछ भी काम नहीं आते, हे मित्र योगेश्वर! सुनो मैं तुमसे एक दूसरी कथा कहता हूं—

श्रावस्ती नाम की एक अत्यन्त प्रसिद्ध नगरी है, वहां प्राचीन समय में प्रसेनजित् नामक राजा हो गये हैं। एक दिन कोई ब्राह्मण उस पुरी में आया, जो सूखाही अन्न खाता था। एक बनिये ने उसे अच्छा महात्मा समझ किसी ब्राह्मण के घर में टिका दिया और नित्य सूखा अन्न तथा दक्षिणा इत्यादि से उसकी सेवा करता था। जब दूसरे बनियों ने भी यह जाना तो देखादेखी अनेक लोग उसकी सेवा सूखे अन्न से करने लगे। उसी अन्न को बेंच बेंचकर धीरे धीरे उस क्षपण ब्राह्मण ने एक सहस्र अशर्फियां एकत्र कीं और जङ्गल में जाकर एक निराले स्थान में भूमि खोद उन्हें गाड़ आया। नित्य अकेले जाकर वह उस स्थान को देख आता था कि मेरा धन ठीक संरक्षित है न! एक दिन उसने देखा कि गड़हा खुदा पड़ा है और अशर्फियां एक भी नहीं। उसका चित्त तो रात दिन उसी द्रव्य में बसता था सो जब उसने गड़हा खाली देखा तो नकि केवल उसके हृदय मेंही चोट लगी किन्तु उसे सारा संसार शून्य जान पड़ने लगा। वह रोता हुआ उसी ब्राह्मण के घर में पहुँचा, जिसके यहां वह रहता था और पूछे जाने पर अपना सारा वृत्तान्त कह गया। फिर उसने यह इच्छा की कि अब किसी तीर्थ में जा उपवास कर प्राण छोड़ दूंगा। जब यह हाल उसके अन्नदाता वणिक् को विदित हुआ तो वह दूसरों के साथ वहां आया और उससे कहने लगा कि हे ब्रह्मन्! क्यों तुम धन के लिये व्यर्थ प्राण देते हो, यह तो अकाल के मेघ की नाईं अकस्मात् आता और चला जाता है। यद्यपि उसने उसे बहुत समझाया किन्तु वह प्राण देने का विचार किसी भांति परित्याग न करता था, क्योंकि—"प्राननहूं ते होत प्रिय सूमन कहँ निज दाम"। राजा प्रसेनजित् को जब यह हाल विदित हुआ कि कोई ब्राह्मण निज धन चोरी जाने से अपना प्राणपरित्याग किया चाहता है तो वे स्वयं आकर उसके गृह पर उपस्थित हुये और पूछने लगे कि हे ब्रह्मन्! जहां तुमने अपने धन गाड़ा था वहां का कोई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चिह्न बताओ । यह सुन उस ब्राह्मण ने कहा कि हे देव! जङ्गल में जहां मैंने अपना धन गाड़ा था वहां एक छोटा सा वृक्ष था, उसी की जड़ में मैंने अपनी अशर्फियां छिपाई थीं। राजा ने कहा कि तुम चिन्ता मत करो मैं तुम्हारे धन का पता लगाकर तुम्हें दूंगा और यदि वह न मिलेगा तो मैं उतना द्रव्य अपने कोष से तुम्हें दिलवा दूंगा, तुम धीरज धरो, अपना प्राणपरित्याग मत करो। इतना कह उसको उस बनिये के हाथ में सौंप राजा अपने भवन को गये। वर पहुँच राजा ने यह बहाना किया कि मेरे सिर में दर्द है सो प्रतीहारीद्वारा डुग्गी पिटवा कर नगर के सब वैद्यों को बुलवा भेजा। उनके आने पर राजा एक एक को एकान्त में ले गये और उससे पूछने लगे कि आजकल आप किन किन रोगियों को दवा करते हैं और उन्हें क्या क्या औषधि दी है। उन सभों ने एक एक करके महाराज के प्रश्नों का उत्तर अलग अलग दिया। एक वैद्य ने कहा कि महाराज मैंने मातृदत्त बनिये को जिसकी औषधि मैं करता हूं नागवल बूटी बताई है और आज दूसरा दिन औषधि का है। यह सुन राजा ने उस बनिये को बुलाकर पूछा कि तुम्हारे लिये नागवल बूटी जंगल से कौन खोद लाया था। उसने कहा महाराज! उस बूटी को मेरा सेवक ले आया था। राजा ने उस नौकर को बुलवाकर कहा कि कल उस वृक्ष के नीचे नागवल के लिये खोदते समय जो द्रव्य तुम्हें वहां से मिला था उसे शीघ्र उपस्थित करो, वह एक गरीब ब्राह्मण का धन है। यह सुन उस बनिये के सेवक ने सब यथार्थ हाल कह दिया और अशर्फियों को राजा की सेवा में रख आज्ञा पा चला गया। राजा ने झट उस ब्राह्मण को जो अब लों भूखा प्यासा बैठा था बुलाकर उसका धन उसे दिया और वह महाराज को अनेक आशीर्बाद देता हुआ अपने घर को गया।

इस प्रकार महाराज ने यह जानकर कि वह औषधि ऐसेही स्थान में होती है वृक्ष की जड़ से उस खोये हुये धन का पता अपनी युक्ति द्वारा लगा लिया। इसलिये यह बात सत्य है, पौरुष को जीतनेवाली बुद्धि सदा प्रधान मानी जाती है क्योंकि ऐसे ऐसे कामों में पराक्रम क्या कर सकता है? इसी कारण हे योगेश्वर! तुम भी इस काम को अपनी बुद्धि के द्वारा करो जिसमें कलिङ्गसेना का कोई न कोई दोष हमलोगों को विदित हो जावे। यह बात तो ठीकही है कि देवता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और असुर सभी उसके रूप पर लुभाये हैं, क्योंकि कल रात को वायुमण्डल में तुम किसी सर्राटे का शब्द सुनही चुके हो। कोई बहाना मिल जाने पर उसीका अकुशल होगा न कि हमारा—क्योंकि फिर महाराज उससे विवाह करेंगेही नहीं; और हमलोगों को भी कोई अधर्म्माचरण का अपराध न लगेगा। इस प्रकार उदारबुद्धि यौगन्धरायण मन्त्री की बात सुन वह योगेश्वर ब्रह्मराक्षस सन्तुष्ट हो कहने लगा कि "हे मित्र! नीति में. श्रीबृहस्पतिजी को छोड़ और कौन आपकी बराबरी कर सकता है? इस राज्यरूपी वृक्ष का सिञ्चन आपही के मन्त्ररूपी जल से होता है। बस अब कलिङ्गसेना की गति पर मैं विशेष ध्यान रक्खूंगा और पता लगाकर आपको सूचित करूँगा"। इतना कह योगेश्वर चला गया।

इस बीच में, कलिङ्गसेना जो महाराज के राजभवनही में रहती थी हरदम वत्सराज को इधर उधर आते जाते देख देख के अपने चित्त में उनसे मिलने के लिये उत्सुक होती थी। यद्यपि उसकी सखियां उसको कमल की शीतल मालायें धारण करातीं और शरीर में चन्दन का अङ्गराग लगातीं किन्तु किसी प्रकार भी उसका तप्त हृदय ठंढा न होता था। इस अवसर में वह मदनवेग नामक विद्याधर जो कलिङ्गसेना को उसके गृह की छत पर देख मोहित हो गया था, सदा कामदेव के बाणों से पीड़ित हो उसकी खोज में लगा रहता था। उसकी प्राप्ति के लिये तप करने और शङ्करजी से वर पाने पर भी, वह उसे दूसरे पर आसक्त होने और विदेश में रहने के कारण सहज में प्राप्त न हो सकी। इस कारण वही विद्याधरेश्वर उस दिन रात को राजभवन के ऊपर आकाश में मड़राता हुआ, अन्दर पैठने का अवसर ढूंढ़ रहा था। फिर तप से सन्तुष्ट किये हुये श्रीमहादेवजी के उस आदेश को स्मरण कर एक दिन उसने निज विद्या के बल से रात के समय महाराज वत्सराज का रूप धारण किया और कलिङ्गसेना के भवन में चला। द्वारपालों ने देखा कि महाराज आते हैं वे सब आदरपूर्वक उठ खड़े हुये और यह विचार कर कि इतने दूर का लग्न सहन न कर ये मन्त्रियों की चोरी से चले आये हैं, कुछ भी न बोले। अपने द्वार पर महाराज को अचानचक आये देख, कलिङ्गसेना भी घबड़ाकर उठ खड़ी हुई, उसके झनकार करते हुये भूषण मानो उसे यह चेता रहे थे कि यह व्यक्ति महाराज नहीं है तू किसके धोखे में पड़ी है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तदनन्तर वत्सराजरूपधारी उस मदनवेग विद्याधर ने, अनेक प्रकार की कपटवार्ता कर, और कलिङ्गसेना को अपना वत्सराज होना विश्वास दिला, उसके साथ गान्धर्वरीति से विवाह कर, उसको अपनी भार्य्या बनाया। योगेश्वर, जो अलचित रूप से वहां छिपा हुआ था, महाराज वत्सराज को इस प्रकार आया देख बड़ा विस्मित हुआ और उसने जाकर यौगन्धरायण को सब हाल सुनाया। मन्त्री ने जो युक्ति से पता लगाया तो विदित हुआ कि महाराज तो इस समय महिषी वासवदत्ता के रनवास में हैं। सो उसने अत्यन्त प्रसन्न हो योगेश्वर को आज्ञा दी कि जब वह नींद में सो जावे तो पहिचानो कि वह यथार्थ में कौन है जो इस प्रकार कलिङ्गसेना के सौन्दर्य्य पर मोहित हो रूप बदलकर आया है। यह सुन वह लौट आया और सोई हुई कलिङ्गसेना के भवन में पैठ, उसने मदनवेग को भी निद्रा में बेसुध पाया, ध्यानपूर्वक जो देखा तो उसके पैरों में छत्र और ध्वजा के चिन्ह दिखाई पड़े और चरणों को निर्धूलि देखकर तथा सो जाने के कारण यथार्थ रूप में आये हुये मदनवेन की मूर्ति निरख, उसने जान लिया कि यह कोई दिव्य पुरुष है। पुनः उसने जाकर मन्त्री को सब हाल सुना सन्तुष्ट किया और कहने लगा कि हे प्रभो! मैं तो इन आंखों से कुछ भी न देख सका किन्तु आप नीतिरूपी नयनों से सब देख लेते हैं। आपही की मन्त्रणा से यह दुःसाध्य काम सिद्ध हुआ। सच किसी कवि ने कहा है कि "गगन कहा बिन दिवसपति बिन जल सरवर काह। मंत्र बिना पुनि राज्य कह, बिना सत्य बच काह॥" योगेश्वर के इतना कहने के उपरान्त प्रातःकाल होने पर यौगन्धरायण उससे विदा हो महाराज वत्सराज से मिलने को चला अभी उनके पास पहुँचाही था कि उन्होंने कलिङ्गसेना के विषय में बातचीत छेड़ी। मन्त्री रात का सब हाल सविस्तर सुना गया और कहने लगा कि हे राजन्! वह स्वच्छन्दा है आपके स्पर्श करने योग्य नहीं, क्योंकि प्रथम तो यह अपनी इच्छा से प्रसेनजित् को देखने के लिये घर के बाहर निकली, उन्हें वृद्ध पा विरक्त हुई और आपके रूप पर मोहित हो यहां आई। यहां आने पर दूसरे पुरुष से भी प्रसंग किया करती है। महाराज ने कहा कि वह तो भले घर की कन्या है उसका आचरण ऐसा क्योंकर हो सकता है, फिर किस अन्य पुरुष की शक्ति है कि हमारे अन्तः-

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI,
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुर में पैठ आवे ? महाराज के इतना कहने पर बुद्धिमान् यौगन्धरायण ने कहा कि हे देव ! आजही रात को मैं दिखला दूंगा 'हाथ के कङ्गन को कहा आरसो'। उससे दिव्य सिद्धादि लोग प्रेम करते हैं फिर आपही कहिये कि किस मनुष्य की शक्ति है कि देवताओं की गति को रोक सके, फिर इसमें कहना सुनना क्या है आज रात मेरे साथ चलकर स्वयं देखही न लीजिये। महाराज ने कहा 'बहुत अच्छा' मैं आज रात के समय चलूंगा। मन्त्री वहां से विदा हो रानी वासवदत्ता के पास पहुँचा और प्रणाम कर कहने लगा कि "हे देवि ! मैंने जो आपसे प्रतिज्ञा की थी कि रानी पद्मावती के अतिरिक्त अब तीसरी कोई नहीं आ सकती, वह आज पूरी हुई।" इतना कह उसने रानी से सारा वृत्तान्त कह दिया। महारानी ने नम्रतापूर्वक कहा कि आपकी शिक्षा के अनुसार चलनेही से यह उत्तम फल प्राप्त हुआ है।

तदुपरान्त उसी दिन रात के समय जब सब लोग सो गये तो महाराज वत्स-राज अपने मन्त्री यौगन्धरायण को साथ ले कलिङ्गसेना के भवन में पहुंचे। चुप-चाप जाकर देखते क्या हैं कि मदनवेग अपने यथार्थ रूप से निद्रा में सोई हुई कलिङ्गसेना के पास पड़ा है। महाराज ने उस ऐसे साहस करनेवाले को मारने के लिये ज्योंही कृपाण खींचा कि वह अपनी विद्या के बल से जाग उठा और बा-हर निकलतेही हवा में फुर्र से उड़ गया। एक क्षण के उपरान्त कलिङ्गसेना की भी नींद खुली और शय्या को सूनी देख कहने लगी कि 'यह क्या हुआ कि महाराज वत्सराज मुझसे पूर्वही जाग, बिना मुझे जगाये और बिना मुझसे कहेही आज चले गये !' यह सुन यौगन्धरायण ने महाराज से कहा कि हे देव ! सुना आपने ? इस धूर्त ने आपका रूप धारण कर इसे छला है। इस बात को योगबलसे जानकर मैंने आपको साक्षात् दिखला दिया। उसको दिव्यप्रभाव के कारण कोई मार नहीं सकता। इतना कह मन्त्री महाराज के सहित कलिङ्गसेना के पास पहुँचा। उन दोनों को देख राजकुमारी झट आदर के साथ उठ खड़ी हुई और कहने लगी कि 'हे महाराज ! अभी क्षण भर में आप कहां चले गये और कैसे मन्त्री के साथ आ गये ?' यौगन्धरायण ने कहा 'हे राजकुमारि ! किसी छली व्यक्ति ने माया से हमारे महाराज का रूप धारण कर तुमसे विवाह कर लिया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हमारे स्वामी इन महाराज ने तुम्हारा पाणिग्रहण नहीं किया । यह सुन ही कलिङ्गसेना बहुत घबड़ाई और हृदय में मानो बाण सी चोट खा आखों में आंसु भर महाराज से पूछने लगी कि कि हे देव ! आप मुझे गान्धर्व रीति से विवाह कर दुष्यन्त की शकुन्तला की नाईं क्यों भूले जाते हैं ? । महाराज ने सिर झुका कर उत्तर दिया कि यह सत्य है मैंने तुम्हारे साथ विवाह नहीं किया मैं तो आजही यहां आया हूं । महाराज के इतना कहने पर मन्त्री ने उनका हाथ धर कर धीरे से कहा कि चलिये अब यहां ठहरना आवश्यक नहीं है इतना कह वह उन्हें लेकर राजभवन को चला गया ।

मन्त्री और महाराज के चले जाने पर, कलिङ्गसेना परदेशमें निज दल से छूटी हुई मृगी की नाईं अत्यन्त व्याकुल हुई । सम्भोग से मुख का रंग उड़ जाने के कारण उसकी दशा उस पद्मिनी की नाईं हो रही थी जो हाथी से भ्रमरावलि भगाये जाने के उपरान्त सरोवर से निकाल कर बाहर फेंक दी गई हो । कन्या-भाव के नाश हो जाने से निरुपाय हो कलिङ्गसेना ने आकाश की ओर दृष्टि कर यह प्रार्थना की कि जिस किसी ने महाराज वत्सराज के रूप से छल कर मेरे साथ विवाह किया है अब वह प्रगट हो जावै, क्योंकि वह मेरे क्वारेपन का पति हो चुका । उसके इतना कहने पर वही विद्याधराधिप हार केयूर धारण किये अपने यथार्थ रूप में आकाश से उतर आया । राजकुमारी ने पूछा कि 'आप कौन हैं'? उनने कहा कि हे तन्वि ! मैं मदनवेग नाम विद्याधरों का राजा हूं । इसके पूर्व में तुम्हें तुम्हारे पिता के घर में देख मोहित हो गया था, फिर तुम्हारी प्राप्ति के लिये कठिन तपस्या कर श्रीमहादेवजी से मैंने वर पाया कि वत्सराज पर प्रेम करनेवाली राजकुमारी को उन्हीं का रूप धारण कर तू उनसे विवाह होने के पहिलेही अपने से परिणय कर लें' फिर उसी युक्ति से हे प्रिये ! मैंने तुम्हें प्राप्त किया । इस सुधारूपी वाणी को सुन कलिङ्गसेना का व्याकुल हृदय कुछ शान्त हुआ ।

इस प्रकार मदनवेग उस सुन्दरी को आश्वासन दे, उसके धीरज बांधने पर, स्वर्ण का ढेर उसके आगे लगा, और राजकुमारी का प्रेम अपने ऊपर देख, पुनः मिलने की आशा दे, आकाशमार्ग से उड़ गया ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पिताभवन निज छांड़ि कै आपुहि आई धाय ।
अब कैसे तहँ जाइये जैबो नाहि सुहाय ॥
दिव्यभर्तृ-गृह मनुष को गम्य नहीं यह जान ।
पतिहिं पूछि तिनही रच्यो राजकुमारी थान ॥

आठवां तरङ्ग ।

महाराज वत्सराज को कलिङ्गसेना का अनुपम सौन्दर्य रात दिन हृदय में गुलाब के कांटे सा खटकता था। एक दिन वे कामदेव के वश हो हाथ में खड्ग ले अकेलेही उसके अन्त:पुर में जा पैठे; देखतेही कलिङ्गसेना ने आदरपूर्वक उठकर उनका आतिथ्यसत्कार किया। महाराज ने कहा कि तू मेरी भार्य्या हो जा, उसने हाथ जोड़ नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि हे नरनाथ ! आपको विदितही है कि मैं दूसरे पुरुष की पत्नी हूं, यह आप क्या कहते हैं ! राजा ने कहा कि तू तीसरे पुरुष को प्राप्त होने के कारण कुलटा है, तुझसे रमण करने में मुझे परस्त्रीगमन का पाप नहीं हो सकता ।

राजा का ऐसा बचन सुन, कलिङ्गसेना ने उत्तर दिया कि हे राजन् ! मैं तो आपही से विवाह करने की इच्छा कर घर से चली, यहां आने पर विद्याधर ने आपका रूप धारण कर छल से मुझे व्याह लिया, सो केवल वही एक मेरा भर्ता है, तो फिर मैं कुलटा क्योंकर हुई ? और इसमें पूछनाही क्या है अपने बन्धुओं को छोड़कर, स्वेच्छाचार में जो स्त्रियां रत होती हैं, उन पर ये विपत्तियां आतीही हैं, विशेष कर कुमारियों पर। यह मेरीही मूर्खता का फल है कि अशकुन देखने वाली सखी द्वारा निषेध किये जाने पर भी मैंने अपना दूत आपके पास भेजा। यदि आप बलपूर्वक मुझे हाथ लगावेंगे तो मैं अपना प्राण परित्याग कर दूंगी, क्योंकि ऐसी कौन कुलस्त्री होगी जो अपना धर्मनाश कर निज पति की ऐसी अप्रतिष्ठा करावेगी। हे राजन् ! मैं इसी विषय की एक कथा आपसे कहती हूं सुनिये—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन समय की बात है कि चेदि नामक प्रदेश में कोई इन्द्रदत्त नामक राजा हो गये हैं। उन्होंने विचारा कि यह पांचभौतिक शरीर तो नश्वर है सो यशरूपी शरीर को चिरस्थायी करने की इच्छा और निज कीर्ति को स्थापन करने के अभिप्राय से उन्होंने पापशोधन नामक तीर्थ में एक बहुतही भारी देव-मन्दिर बनवाया। महाराज निज भक्ति के कारण नित्य वहां दर्शनों को जाया करते थे और देश देशान्तर के यात्रियों की भीड़ भी स्नान के निमित्त नित्यही वहां एकत्र होती थी। एक दिन किसी वणिक् की भार्य्या जिसका पति विदेश को व्यापार करने गया था, स्नान करने के अभिप्राय से वहां आई। उसे सौन्दर्य्यामृत में स्नान किये और विचित्र लावण्यरूपी आभूषण धारण किये देख, राजा परम मोहित हो गये और ऐसे विह्वल तथा कामपीड़ित हुये कि उसके घर का पता लगा रात के समय अकेले उसके पास पहुँचे और अपने हृदय की बात कही। उसने कहा 'हे राजन्! आप असहायकों के रक्षक हैं आपको तो पराई स्त्री का स्पर्श भी न करना चाहिये। यदि आप मुझे बलपूर्वक स्पर्श करेंगे तो आपको महा अधर्म होगा और मैं भी इसी क्षण प्राण दे दूंगी क्योंकि मैं यह अत्याचार नहीं सह सकती। इतना समझाने पर भी राजा ने जब उस पर बल दिखाया तो निज धर्म के नाश होने के भय से उसका हृदय फट गया और वह परलोक को सिधारी। यह देख राजा लज्जित हो अपने राजभवन को चुपचाप चले आये और उसी पछतावे से उनका भी शरीर कुछ दिनों के उपरान्त छूट गया।

इतनी कथा सुना, भय और लज्जा से कुछ सङ्कुचित हो कलिङ्गसेना महाराज वत्सराज से पुनः कहने लगी कि हे राजन्! इसीसे कहती हूं कि आप अधर्म की ओर से अपना चित्त हटाइये, नहीं तो मैं अपने प्राणपरित्याग दूंगी, मैं यहां आपके राज्य में आई हूं तो मुझे यहां रहने दीजिये नहीं तो मैं और कहीं चली जाऊँगी। कलिङ्गसेना का ऐसा बचन सुन धर्मज्ञ राजा के हृदय में कुछ विरक्ति उत्पन्न हुई और उन्होंने अपना वह अभिप्राय छोड़ दिया और कहने लगे कि हे राजपुत्रि! तुम अपने पति के साथ स्वेच्छापूर्वक यहां रहो अब मैं तुमसे इस विषय में कभी कुछ न कहूंगा तुम भय मत करो। महाराज तो इतना कह चुपचाप अपने घर को चले गये, उधर मदनवेग जो आकाश में से यह सब चरित्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देख सुन रहा था नीचे उतर आया और कहने लगा कि 'हे प्रिये! तुमने बहुत अच्छा किया, हे शुभे! यदि तुमने ऐसा न किया होता तो तुम्हारा कल्याण न होता क्योंकि मैं कभी इस अपमान को न सह सकता'। इतना कह उसे धीरज दे वह रात मदनवेग ने वहीं बिताई, फिर बराबर वहां उसका आना जाना होता रहा। कलिङ्गसेना अपने विद्याधर पति के साथ इस लोक में रहकर भी दिव्य सुखों का अनुभव करती रही। महाराज वत्सराज ने भी उसकी चिन्ता छोड़ दी और मन्त्री का वचन स्मरण करते हुये इस बात से बहुत प्रसन्न रहते कि उन्होंने अपनी रानियों और राज्य तथा पुत्र का जीवन बचाया। महाराणी वासवदत्ता और मन्त्री यौगन्धरायण सदा इस बात से प्रसन्न रहते कि उनके नीतिवृक्ष का फल बहुतही उत्तम हुआ।

कुछ दिनों के उपरान्त गर्भ होने के कारण कलिङ्गसेना का मुखकमल कुछ पीला पड़ गया और उसके श्याममुखवाले ऊँचे कुच ऐसे जान पड़ते थे मानो कामदेव के निधान कुम्भों पर मद की मोहर लगी हो। तब उसके पति मदनवेग ने उसके पास आकर कहा कि हे प्रिये! हम दिव्य लोगों का यह नियम है कि मानुषीय गर्भ से सन्तति होने के उपरान्त उसे छोड़ हमलोग दूर चले जाते हैं, क्या मेनका ने शकुन्तला को कण्व ऋषि के आश्रम में परित्याग नहीं किया था? तुम भी यद्यपि पूर्वजन्म में अप्सरा थीं किन्तु हे देवि! अपने अविनय के कारण इन्द्र भगवान् के शाप से तुम्हें इस मर्त्यलोक में जन्म लेना पड़ा। इसी कारण परम साध्वी रहते भी तुम्हें इस कुलटा शब्द का कलङ्क सहना पड़ा, बस अब मैं जाता हूं तुम अपने भविष्य सन्तान की रक्षा करना, जब मुझे स्मरण करोगी मैं उसी क्षण तुम्हारे पास आ जाऊँगा।" यह सुनतेही कलिङ्गसेना के नेत्रों से आंसुओं की धारा चल पड़ी, मदनवेगने घर में सुवर्ण का ढेर भर दिया और उसे भली प्रकार समझा धीरज दे, निज घर को उड़ता हुआ चला गया। यद्यपि उसका चित्त भी कलिङ्गसेनाही में लगा था किन्तु नियम के आधीन होने के कारण वह विवश था इसीलिये उसे निरुपाय हो कलिङ्गसेना को छोड़ जाना पड़ा था। कलिङ्गसेना भी सन्तान होने की आशा बांध महाराज वत्सराज की भुजाओं की छाया त⁻, निश्चिन्त हो वहीं रहने लगी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसी अन्तर में यह हुआ कि कामदेव के भस्म हो जाने पर उसकी अर्धाङ्गिनी रति ने अपनी कठिन तपस्या से श्रीशङ्कर भगवान् को प्रसन्न कर लिया, रति की यही प्रार्थना थी कि मैं अपने प्यारे पति को अङ्गों सहित प्राप्त करूँ, सो उसके तप से सन्तुष्ट हो श्रीचन्द्रशेखरजी ने आज्ञा दी कि हे रति! सुन, मेरे प्रति ढीठता करने के अपराध में जो तेरा पति भस्म हुआ था, वह अब महाराज वत्सराज के घर में नरवाहनदत्त के रूप में उत्पन्न हुआ है। मेरी आराधना करने के कारण तू संसार में योनि से बिना जन्मे अवतार लेगी, तब तेरी भेंट अङ्गदार कामदेव से होगी।

रति से ऐसा कह शम्भु भगवान् ने प्रजापति को यह आज्ञा दी कि "कलिङ्ग-सेना से दिव्य पुत्र उत्पन्न होगा, तुम अपनी माया से उसे हरकर उसके स्थान में इस रति को मानुषी शरीर में बनाकर, वहां रख देना। श्रीशङ्करजी की ऐसी आज्ञा सुन ब्रह्माजी चले गये, इधर कलिङ्गसेना को पुत्र उत्पन्न हुआ। उसी क्षण ब्रह्मा ने उसे हटा दिया और निज माया से रति को मानुषी कन्यारूप में बना उसके स्थान पर गुप्त रीति से ला रक्खा। उपस्थित लोगों में से किसी ने भी न जाना कि बालक बदल गया, सबको यह ज्ञान हुआ कि यही परम रूपवती दिव्या कन्या चन्द्रकला की नाईं उत्पन्न हुई है। अपनी कान्ति से उसने समग्र वासगृह को प्रकाशमय कर दिया, और रत्नदीपों की ज्योति उसकी अनूठी प्रभा के आगे दब गई। कलिङ्गसेना ने ऐसी असाधारण रूपवाली कन्या को प्राप्त कर पुत्रजन्म से भी अधिक आनन्द माना, और बड़ा उत्सव किया।

महाराज वत्सराज उनकी रानी और मन्त्रियों ने भी यह सुना कि कलिङ्ग-सेना को एक परम रूपवती कन्या उत्पन्न हुई है। सुनतेही वत्सराज ने, मानो श्रीशङ्करजी की प्रेरणा से, मन्त्री के समक्ष रानी वासवदत्ता से यों कहा कि मुझे ऐसा जान पड़ता है कि यह कलिङ्गसेना कोई दिव्या स्त्री है जो शाप के कारण स्वर्गलोक से मर्त्यलोक में आई है उसकी कन्या भी वैसीही दिव्या और रूपवती होगी। वह मेरे पुत्र नरवाहनदत्त की महादेवी होने योग्य अवश्य प्रतीत होती है। यह सुन देवी वासवदत्ता ने कहा कि, हे महाराज! आज आप ऐसा अक-स्मात् क्यों कहते हैं। कहां आपका यह पुत्र, दोनों कुल से शुद्ध, और कहां वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कन्या जो बन्धकी (कुलटा) कलिङ्गसेना के गर्भ से उत्पन्न ! भला इन दोनों का क्या मेल ? यह सुन महाराज ने कुछ सोच कर उत्तर दिया कि हे प्रिये ! यह बात मैं स्वयं नहीं कहता मुझे ऐसा जान पड़ता है कि मेरे अन्तःकरण में कोई बैठकर ऐसा मुझसे कहवाता है। और मुझे ऐसा सुन पड़ता है कि आकाश में से कोई यों कह रहा है कि "नरवाहनदत्त की भार्य्या होने के लिये यही कन्या पहिले से नियत हो चुकी है, इसके अतिरिक्त कलिङ्गसेना अच्छे कुल की लड़की और अपनी पति की सच्चरित्रा पत्नी है, पूर्व कर्म्म के वश से उसे बन्धकी का अपवाद लग रहा है" । महाराज के ये बचन सुन यौगन्धरायण मन्त्री ने कहा कि 'हे देव ! ऐसा सुनते हैं कि कामदेव के भस्म हो जाने पर रति ने बड़ी कड़ी तपस्या की थी जिससे प्रसन्न हो श्रीशम्भु भगवान् ने यह बरदान दिया कि 'तू मर्त्यलोक में उत्पन्न होगी और वहीं तेरी भेंट शरीरवाले पति से होगी जो स्वयं मनुष्यरूप में वहां जन्म लेगा' । आकाशवाणी से यह बात पहिलेही विदित हो चुकी है कि आपका पुत्र कामदेव का अवतार है और श्रीशिवजी की आज्ञा से रति का अवतार भी मानुषी रूप में होनेवाला है। और आज मझसे दाई से जो बातचीत हुई है सो सुनिये । दाई कहती थी कि कलिङ्गसेना का गर्भ मैंने जो पहिले देखा था उससे भिन्नही इसको पाया । इसी आश्चर्य्य को देख वह स्वयं मुझसे इसका वृत्तान्त कहने आई थी। उस दाई की बात से मुझे जान पड़ता है कि देवताओं ने कलिङ्गसेना के यथार्थ सन्तान को तो चुरा लिया और उसके स्थान पर इस अयोनिजा कन्या को निर्माण करके रख दिया है जो निस्सन्देह आपके कामावतार पुत्र की यह भार्य्या रति है । इसको स्पष्ट करने के लिये मैं आपको एक यक्ष की कथा सुनाता हूं –

कुबेर भगवान् का विरूपाक्ष नामक कोई यक्ष, लाख निधानों का प्रधान नियत किया गया था। विरूपाक्ष ने एक दूसरे यक्ष को उस निधान (खजाने) की रक्षा के लिये नियत किया जो मथुरा नगरी के बाहर भूमि में गड़ा था, वह मथुराजी में जाकर शिलास्तम्भ की नाईं रात दिन उसी निधान पर बैठा रहता था। एक समय, उसी नगरी का रहनेवाला कोई शिवभक्त ब्राह्मण जिसकी वृत्ति निधान खोजने की थी, घूमता फिरता उस प्रान्त में जा निकला । मानुषीचर्बी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

की बत्ती के प्रकाश से वह निधान की खोज कर रहा था कि अचानचक वह बत्ती उसी स्थल पर उसके हाथ से गिरी । इस लक्षण से उसने स्थिर किया कि यहां अवश्य कोई निधान गड़ा है, बस अपने कतिपय मित्र ब्राह्मणों की सहायता से उसने वहां खोदना आरम्भ किया। उस यक्ष ने, जो उसकी रक्षा के लिये नियत किया गया था और जो वहां से एक क्षण भी न हटता था, यह देख, विरूपाक्ष से जाकर कुल वृत्तान्त सुनाया। उसने क्रुद्ध हो यह आज्ञा दे दी कि अभी जाकर उन सब क्षुद्र, निधान खोजनेवालों को मार डालो।" उस यक्ष ने आतेही अपनी युक्ति से उन सब ब्राह्मणों को जो निधान की खोज में भूमि खोद रहे थे, मार डाला, उन विचारों का मनोरथ सुफल न होने पाया।

जब यह हाल श्रीकुबेरजी को विदित हुआ तो उन्होंने रुष्ट हो विरूपाक्ष से कहा कि "क्यों रे पापी! यह तू ने सहसा कैसी ब्रह्महत्या करवाई, विचारे गरीब निर्धनी वृत्ति की खोज में लोभ के कारण क्या क्या नहीं करते? विघ्नों द्वारा भय दिखाकर उनका निवारण करना होता है, न कि उनकी जान लेनी चाहिए। जा तू इस पाप के कारण मनुष्यलोक में जन्म ले।" इतना शाप पाने के उपरान्त वह विरूपाक्ष इस मर्त्यलोक में किसी ब्राह्मण के यहां पुत्र होकर उत्पन्न हुआ। उधर उसकी पत्नी यक्षिणी ने हाथ जोड़ धनाधिप से प्रार्थना की कि हे देव! जहां आपने मेरे भर्ता को भेजा है वहीं कृपाकर मुझे भी भेज दीजिये क्योंकि मैं निज पति के बिना किसी प्रकार नहीं जी सकती। उस साध्वी के ऐसे बचन सुन श्रीकुबेरजी ने कहा कि "अच्छा, हे अनघे! जिस ब्राह्मण के घर में तेरा पति जन्मा है उसी की दासी के घर में तू विना योनि से उत्पन्न हुये अवतार ले। वहां तेरे भर्ता से तेरी भेंट होगी और तेरेही प्रसाद से वह शाप से उद्धार पा पुनः मेरे पास आवेगा। श्रीकुबेरजी की इस आज्ञा से वह साध्वी मानुषी कन्या होकर उस दासी के द्वार पर आकाश से आ गिरी। अकस्मात् उस दासी की दृष्टि जो उधर पड़ी तो वह उस अद्भुत रूपवाली कन्या को देख परम प्रसन्न हुई और उसे ले जाकर अपने स्वामी उस ब्राह्मण को जिनके यहां वह काम काज करती थी, दिखलाया। ब्राह्मण ने देखतेही कहा कि मेरा अन्तरात्मा कहता है कि यह कोई अयोनिजा दिव्या कन्या है, तू इसे निःशङ्क अपने पास रख, यह मेरे पुत्र की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भार्य्या होने योग्य है"। यह सुन वह दासी अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसी दिन से कन्या का लालन पालन करने लगी। क्रमशः वह कन्या तथा वह ब्राह्मणपुत्र दोनों धीरे धीरे सयाने होने लगे, ये दोनों एक दूसरे को देख कर अत्यन्त स्नेह करते और कुछ दिनों में उनका प्रेम बहुतही अधिक हो गया। उस ब्राह्मणने उन दोनों का विवाह कर दिया और यद्यपि उन दोनों को अपने पूर्व जन्म की कथा स्मरण न थी तथापि विवाह के अनन्तर ऐसे मिले मानो किसी प्राचीन विरह की शान्ति करते हों। कुछ दिनों के उपरान्त उस ब्राह्मणपुत्र का देहान्त हुआ उसकी भार्य्या उसके साथ सती हुई, जिस पुण्य के प्रताप से उसके पति का पाप नाश हो गया और वह यक्ष होकर अपने पद को प्राप्त हुआ।

इस प्रकार, आप देखते हैं कि किसी कारणवश दिव्य जीव कभी कभी दैव की प्रेरणा से इस भूतल में आ जाते हैं और पापरहित होने के कारण वे सर्व-साधारण की नाईं जन्म नहीं लेते। हे राजन्! इसलिये उस कन्या के इस कुल से आपको क्या प्रयोजन? जैसा कि मैं आपसे पहिले कह चुका हूं कि "कलिङ्गसेना की पुत्री को भाग्य ने आपके पुत्र की भार्य्या उत्पन्न की है।" जब यौगन्धरायण ने महाराज वत्सराज और रानी वासवदत्ता से यह बात कही तो दोनों ने इस बात को हृदय से स्वीकार किया और कहा कि "ठीक है ऐसाही होना चाहिये।" इसके अनन्तर मन्त्री ने आज्ञा पाकर अपने घर की राह ली, और महाराज ने पानादि क्रीड़ा के साथ सुखी हो रानी वासवदत्ता के सङ्ग वह दिन प्रसन्नतापूर्वक बिताया।

धीरे धीरे समय बीतने लगा, इधर कलिङ्गसेना की कन्या, निज प्राचीन जन्म का वृत्तान्त भूल गई और क्रमशः सयानी होने लगी, वह ज्यों ज्यों बढ़ती थी त्यों त्यों उसकी रूपसम्पत्ति भी उसी के साथ अधिक होती जाती थी, मदनवेग की कन्या होने के कारण नाम उसका मदनमञ्जुका रक्खा गया। लोग यही कहते थे कि इसके रूप के आगे दूसरी स्वर्गीया स्त्रियों का रूप न जाने कहां भाग जाता है, नहीं तो फिर वे सब उसके साम्हने कुरूपा क्यों हो जाती हैं। उसके रूप की अत्यन्त प्रशंसा सुन एक दिन देवी वासवदत्ता ने कौतुक से उसको अपने समीप बुलवा भेजा। वह अपनी धाई की गोद में यों चिपकी थी जैसे बत्ती में दीपशिखा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लगी हो, महाराज वत्सराज तथा यौगन्धरायण आदि मन्त्री उसे देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुये। नेत्रों को आनन्द देनेवाले उसके मनोहर अङ्गों को देख सब लोग यही कह उठते थे कि यह कन्या तो रति का अवतार जान पड़ती है। उसी समय देवी वासवदत्ता ने निज पुत्र नरवाहनदत्त को भी वहां बुलवा भेजा। वह अपने खिले हुये मुखकमल से, मदनमञ्चुका की शोभा देखता हुआ यों जान पड़ता था मानो कोई विकसित पद्म सूर्य की प्रभा को देख रहा हो। वह लड़की भी उस लोचनानन्ददायक राजकुमार को प्रसन्नमुख हो देखती और बार बार देखने पर भी यों सन्तुष्ट न होती थी जैसे चकोरी चन्द्रमा को देख तृप्त नहीं होती। उसी दिन से वे दोनों बालक परस्पर के दृष्टिजाल में ऐसे फँस गये कि अलग होने से क्षण भर भी न रह सकते थे।

फिर कुछ दिनों के उपरान्त महाराज वत्सराज ने यह विचारा कि यद्यपि इन दोनों का विवाह देवताओं द्वारा स्वर्ग में तो होही चुका है तथापि लौकिक रीति के अनुसार यहां भी होना उचित है। यह जान कलिङ्गसेना अत्यन्त प्रसन्न हुई, और नरवाहनदत्त को अपना भविष्य जमाई मान और भी अधिक प्रीति उससे करने लगी। मन्त्रियों की सम्मति लेकर, महाराज ने अपनेही महल की नाईं निज कुमार का भी एक अतीव सुन्दर भवन बनवा कर सुसज्जित किया। फिर, समय और अवसर को जाननेवाले महाराज वत्सराज ने निज पुत्र में सब उत्तम गुणों को देखकर उसे यौवराज्य पद पर अभिषिक्त किया। प्रथम तो उसके मस्तक पर माता पिता के आनन्दाश्रु का अभिषेक हुआ, तदनन्तर समस्त उत्तम तीर्थों का जल महामन्त्रों से पवित्र कर उस पर छिड़का गया। अभिषेकजल से तो राजकुमार का मुखकमल धोया गया, आश्चर्य्य तो यह है कि उस समय समग्र दिशाओं का भी मुखकमल उज्ज्वल हो गया। इधर तो माताओं ने पुष्प की मङ्गल मालायें उसे पहिनाईं, उधर उसी समय आकाश से देवताओं ने दिव्य पुष्पों की वृष्टि राजकुमार पर की। उधर आकाश में देवताओं की दुन्दुभि का शब्द हुआ इधर मानो उसी की स्पर्धा से राजभवन से भी आनन्द के बाजों की प्रतिध्वनि होने लगी। ऐसा कोई भी न दीख पड़ता था जिसने अभिषेक होने पर राजकुमार के आगे नम्रता स्वीकार न की, उस समय बिना अपने प्रभाव केही वह उन्नत हो रहा था।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तदनन्तर महाराज वत्सराज ने, राजकुमार के बालसखा निज मन्त्री के पुत्रों को भी बुलाकर उसी समय कुमार के मन्त्रीपद पर सभों को नियुक्त किया। यौगन्धरायण के पुत्र मरुभूति को तो मुख्य मन्त्री का पद दिया और रुमण्वान के पुत्र हरिशिख को सेनापति नियत किया। वसन्तक के पुत्र तपन्तक को सहचारी सखा बनाया और इत्यक के पुत्र गोमुख को प्रतीहारों का अधिपति स्थिर किया। पिङ्गलिका के पूर्वोक्त दोनों पुत्रों को पुरोहित का पद दिया गया। इन दोनों का नाम वैश्वानर और शान्तिसोम था, और ये दोनों पुरोहित शान्तिकर के भतीजे थे। महाराज ने जब इस प्रकार निज पुत्र के मन्त्रीपद पर उन लोगों को नियत कर दिया तो व्योम से पुष्पवृष्टि होने के उपरान्त यह आकाशवाणी हुई कि 'ये मन्त्री लोग सब काम को पूर्ण करनेवाले होंगे और गोमुख तो राजकुमार का अभिन्नहृदय सखा होगा।' ऐसी आकाशवाणी को सुन महाराज वत्सराज बहुतही प्रसन्न हुये और उन्होंने सबों का सन्मान वस्त्र और आभूषणों से किया। महाराज वत्सराज ने अपने अनुजीवियों और सेवकों को इतना धन दिया कि कोई भी दरिद्र न रहा। ऊँचे ऊँचे मन्दिरों पर जो रंग बिरंगी पताकायें फहरा रहीं थीं वेही मानो दूर दूर की नाचने गानेवालियों तथा चारणों को निज हाथ को हिला कर निमन्त्रण देती थीं और उनके उपस्थित होने पर महाराज उन्हें धन से परिपूरित कर देते थे।

कलिङ्गसेना भी अपने भविष्य जमाई के इस उत्सव में वहां आई, उसका आना क्या हुआ मानो भविष्य में आनेवाली विद्याधरों की लक्ष्मी साक्षात् पधारी हों। रानी वासवदत्ता और रानी पद्मावती, राजकुमारी कलिङ्गसेना से मिलकर हर्ष के मारे यों नांचने लगीं मानों महाराज की तीनों शक्तियां * एकत्र हो नृत्य करती हों। वायु से हिलती हुईं लताओं के देखने से यह प्रतीत होता था कि जब उद्यान के वृक्ष जड़ होकर नाच रहे हैं तो चेतन जीवों की इस समय कौन कहे।

अभिषेक हो जाने के उपरान्त युवराज नरवाहनदत्त जयकुञ्जर पर आरूढ़ हो प्रजावर्ग को दर्शन देकर सन्तुष्ट करने के निमित्त बड़े धूमधाम से राजभवन के बाहर निकले। पुर की स्त्रियां जो अपने नील सित और अरुण नेत्रों से राज-

* प्रभुत्व शक्ति, मन्त्रणा शक्ति और उत्साह शक्ति।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुमार को देखती थीं तो यही जान पड़ता था कि वे मानो उन पर नील कमल लावा और पद्म की अञ्जुलियां छोड़ रही हैं। उस नगरी के पूज्य देवताओं के दर्शन कर, बन्दी और मागधों की स्तुति के साथ वे मन्त्री सहित निज राजभवन को लौट आये। आरम्भ ने, जामाता के स्नेह से गद्गद हो, कलिङ्गसेना ने निज विभूति से बढ़कर दिव्य भोजन और पान नरवाहनदत्त को दिये, और उनके मंत्री तथा मित्र और सेवकों को भी उत्तम वस्त्र और दिव्य आभरणों से सत्कारित किया। इस प्रकार, अत्यन्त प्रसन्नता और आनन्द के साथ उस महोत्सव में महाराज वत्सराजादि का वह शुभ दिन व्यतीत हुआ।

रात होने पर कलिङ्गसेना को निज कन्या के विवाह का विचार होने लगा, उस समय उसे अपनी सखी सोमप्रभा याद आई। इधर ज्योंही इसने उस मयासुर-सुता को स्मरण किया, उधर त्योंही उसके महाज्ञानी भर्ता ने सोमप्रभा से कहा कि हे प्रिये! आज तुम्हें कलिङ्गसेना बड़ी उत्सुक हो स्मरण कर रही है, सो तुम जाकर उससे मिलो और उसकी कन्या के लिये एक अतिसुन्दर दिव्य उद्यान रच दो। यों कह, कलिङ्गसेना का भूत और भविष्य हाल सुना, उसके पति ने सोम-प्रभा को विदा किया। ज्योंही कलिङ्गसेनाने अपनी प्यारी सखी सोमप्रभा को आती देखा त्योंही वह प्रेम से गद्गद हो दौड़कर उसके गले से जा लगी और कुशल प्रश्न के अनन्तर बैठकर दोनों में यों बातचीत होने लगी। सोमप्रभा ने कहा कि हे सखि! मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि तेरा विवाह बड़े समृद्धिशाली विद्याधर से हुआ और श्रीशङ्कर भगवान् के अनुग्रह से तेरे यहां रति का अवतार कन्यारूप से हुआ है जिसका विवाह महाराज वत्सराज के पुत्र कामावतार नर-वाहनदत्त से होनेवाला है। यह नरवाहनदत्त समस्त विद्याधराधिपों का राजा होकर दिव्य एक कल्प लों राज्य करेगा और उसकी सब भार्य्याओं में तेरी कन्या का मान्य सब से अधिक होगा। तू पूर्वजन्म की अप्सरा है, इन्द्र भगवान् के शाप से इस लोक में मानुषी होकर जन्मी है और अपना कार्य्य पूर्ण करने के उपरान्त इस शाप से मुक्ति पावेगी। हे सखि! यह सब हाल मेरे ज्ञानवान् पति ने मुझे बताया है सो तू कुछ भी चिन्ता मत कर, क्योंकि भविष्य में तेरा सब प्रकार से शुभ होनेवाला है। अब मैं तेरी कन्या के निमित्त एक ऐसा दिव्य उद्यान बनाती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हूं कि जिसका जोड़ पाताल, भूमि और स्वर्ग में कहीं भी न होगा। इतना कह सोमप्रभा ने अपनी माया से एक परमोत्तम उद्यान क्षण भर में रच दिया और फिर कलिङ्गसेना से पूछ उसके गले मिल वह निज भवन को चली गई। भोर होतेही लोगों ने उस अद्भुत बाग को बड़े आश्चर्य से देखा कि अकस्मात् यह नन्दनवन कहां से इस भूलोक में उतर आया। महाराज वत्सराज ने जब इसका हाल सुना तो वे अपनी रानियों, अपने मन्त्रियों तथा नरवाहनदत्त और उसके अनुचरों के सहित उस उद्यान को देखने के लिये वहां आये। देखा कि उसमें सदा फलने फूलनेवाले पुष्प और फल लगे हैं और नाना प्रकार के मणिमय स्तम्भ, दीवाल, भूभाग और मनोहर तलाव बने हैं, स्वर्ण रङ्ग के नाना पक्षी विहार कर रहे हैं, और दिव्य सुगन्धित वायु मन्द मन्द बह रही है, बस यही जान पड़ता है कि मानो दूसरा स्वर्ग कहीं से इस पृथिवी तल पर उतर आया हो। कलिङ्गसेना महाराज के आतिथ्यसत्कार में व्यग्र हो रही थी, सो उन्होंने इस अद्भुत उद्यान को देखकर उससे पूछा कि यह ऐसा परम रमणीय उद्यान रातही रात में कैसे बन गया। उसने सबके साम्हने राजा से कहा कि "हे महाराज! विश्वकर्म्मा का अवतार मय नामक एक प्रसिद्ध असुर है जिनने महाराज युधिष्ठिर के रमणीय सभाभवन और इन्द्र की सुन्दर पुरी की रचना की है, उन्हीं की कन्या सोमप्रभा से मेरा प्राचीन सखीभाव है। उसने कल रात को यहां आ, प्रसन्न हो अपनी माया से मेरी कन्या के निमित्त यह दिव्य उद्यान रच दिया है। इतना कह, उसने राजा से अपनी कन्या का सब वृत्तान्त भूत और भविष्य जैसा कि सोमप्रभा से सुना था. कह दिया और निवेदन किया कि ऐसा ऐसा हाल मैंने अपनी सखी से सुना है। सब उपस्थित लोगों ने जब देखा कि उनका पूर्व का जाना हुआ हाल कलिङ्गसेना के कहने से ठीकोठीक मेल खा गया तो उनका समग्र संशय जाता रहा और वे लोग परम प्रसन्न हुये। कलिङ्गसेना के आतिथ्य से सत्कारित हो महाराज वत्सराज ने रानियों और पुत्र के सहित वह दिन आनन्दपूर्वक उसी उद्यान में बिताया।

दूसरे दिन, महाराज किसी देवमन्दिर में दर्शन के निमित्त गये, वहां उन्हें अनेक सुन्दरी स्त्रियां उत्तम वस्त्राभरण पहिने दीख पड़ीं। महाराज ने पूछा कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आप लोग कौन हैं, उन्होंने उत्तर दिया कि हम विद्या हैं और ये कलायें हैं, हमलोग आपके पुत्र के निमित्त यहां आई हैं अब जाकर उनमें प्रवेश करती हैं। इतना कह वे सब लोप हो गईं और महाराज वत्सराज विस्मित हो निज प्रासाद को लौट आये। वहां उन्होंने वह सारा वृत्तान्त अपने मन्त्री और महारानियों से कहा, वे लोग भी इसे सुन देवियों का परम अनुग्रह मान अत्यन्त प्रसन्न हुये। इतनेही में नरवाहनदत्त के वहां आने पर महाराज की आज्ञा से, रानी वासवदत्ता ने वीणा उठाई और बजाने लगीं। सुनकर राजकुमार ने विनयपूर्वक माता से कहा कि "हे अम्ब! यह वीणा अपने स्थान से च्युत है।" महाराज ने कहा, "अच्छा तुम तो बजाओ"—यह आज्ञा पा, राजकुमार ने वीणा लेकर बजाना आरम्भ किया, और ऐसी प्रवीणता दिखलाई कि गन्धर्वों को भी आश्चर्य हो गया। ज्यों ज्यों महाराज सब विद्या और कलाओं में राजकुमार की परीक्षा करते गये त्यों त्यों वे सब उसमें प्रवेश करती गईं और वह सभों का ज्ञाता आपही हो गया। इस प्रकार पुत्र को सब बातों में गुणी पाकर महाराज वत्सराज ने कलिङ्गसेना की पुत्री मदनमञ्चुका को नृत्य में शिक्षा दिलाई। ज्यों ज्यों वह चन्द्रमा की नाईं कलाओं से पूर्ण होती जाती थी त्यों त्यों नरवाहनदत्तरूपी समुद्र में क्षोभ होता जाता था। वह उसे नाचती गाती तथा प्रत्येक अङ्गों से कामाज्ञा का अभिनय करती देख अत्यन्त प्रसन्न होता था। मदनमञ्चुका भी यदि क्षण भर राजकुमार का सुधामय मुखचन्द्र न देखती तो उसके नेत्रों में आंसू भर आते और उसकी शोभा प्रातःकाल के ओस से भीगी हुई कुमुदिनी की नाईं हो जाती। राजकुमार भी उसका मुखचन्द्र देखे विना न रह सकते, सो वे व्याकुल हो उसी उद्यान में चले आते थे। कलिङ्गसेना उन्हें प्रसन्न करने के लिये निज पुत्री मदनमञ्चुका को भी वहीं ले आती और वे दोनों बड़ी प्रसन्नता के साथ उसी उद्यान में घूमते फिरते थे। निज स्वामी के चित्त का भाव जाननेवाला गोमुख, वहां विलम्ब से ठहरने के लिये, उत्तमोत्तम तथा मनोहर २ कथायें कलिङ्गसेना को सुनाया करता था। अपने चित्त की वृत्ति पहिचाननेवाले उस मित्र पर राजकुमार सदा सन्तुष्ट रहते थे। किसी कवि ने ठीक कहा है कि "प्रभु के हृदय प्रवेश लहि जयति सुभृत्य सुजान। जानबूझ उलटो चलै ता सम मूढ़ न आन"॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नरवाहनदत्त नृत्य गीतादि में स्वयं मदनमञ्चुका को शिक्षा देते थे, उस उद्यान में एक रङ्गशाला इसी हेतु प्रस्तुत की गई थी। मदनमंचुका का नृत्य तथा राजकुमार केउत्तम वाद्य से बड़े बड़े चारणों को भी लज्जित होना पड़ता था। देश देशान्तरों से अनेक विषयों के ज्ञाता और गुणी आ आकर एकत्र हुये थे, हाथी, घोड़े और रथ, के परिचालकों को भीड़ सी लग गई और शस्त्रास्त्र के चलानेवाले अनेक कोविदों की मण्डली जमा हुई किन्तु राजकुमार ने अपनी विद्या के प्रभाव से सबों को जीत लिया। इस प्रकार विद्याओं द्वारा वृत होकर कुमार नरवाहनदत्त के शैशव अवस्था के दिन आनन्द से बीतते थे।

एक समय राजकुमार, निज मन्त्रियों और प्रिया के साथ यात्रा के निमित्त नाग बन नामक उद्यान में गये। वहां गोमुख को देखकर किसी बनिये की भार्य्या उस पर आसक्त हो गई किन्तु गोमुख ने उसका निराकरण कर दिया, तब तो वह वणिक्‌भार्य्या मन्त्रीपुत्र को विष देने की इच्छा से एक पात्र में कुछ शर्बत बना लाई। गोमुख ने इसका हाल उसकी एक सखी द्वारा जान लिया था, सो उसने उस पान को ग्रहण न किया और स्त्रियों की निन्दा में यह वाक्य कहा कि—

कुण्डलिया।

धाता साहस विरचि के पाछे विरची बाम।
इन्हें विचार न होत है कौनेहु खोटे काम॥
कौनेहु खोटे काम सुधा विष की ये सानी।
अनुरक्ताहि पियूष विरक्ता विष की नानी॥
इनके हियतर गूढ़ पाप को को है ज्ञाता।
देखत भोली लगत अहो क्यों रची विधाता॥

दोहा।

जग मे खोटी नारि है फूले कमल समान।
जाके पातन तर छिप्यो मगर भयङ्कर जान॥
बड़े भाग्य लहियत कहूं पुण्यवती कोउ नारि।
पति-पद प्रेम-पगी प्रिया सची जासु अनुहारि॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परसक्ता कुलनाशिनी पापा सुनिय सुभूप ।
पति को पतिसंहारिणी काली नागिनि रूप ॥

हे राजकुमार! सुनिये मैं आपको इस पर एक कथा सुनाता हूं कि किसी गांव में शत्रुघ्न नाम कोई पुरुष रहता था उसकी पत्नी बड़ी व्यभिचारिणी थी। एक दिन उसने अपनी भार्य्या को उसके यार के साथ देख पाया जो सन्ध्या के समय उसके घर में चुपके से पैठ आया था। क्रोध के आवेग में आ शत्रुघ्न ने उसके यार का सिर घर के अन्दरही काट डाला, और निज भार्य्या को भीतरही रोक द्वारही पर इस आसरे से बैठ रहा कि रात होने पर मुर्दे को कहीं खपाऊँगा। इतने में कोई यात्री टिकने के लिये स्थान खोजता हुआ वहां आ गया। शत्रुघ्न ने उसे अपनेही यहां टिका लिया और युक्ति से उसकी सहायता ले, लाश को उठा जङ्गल में ले गया। ज्योंही उसने एक अन्धे कूप में लाश फेंका त्योंही उसकी भार्य्या ने धीरे पीछे से आकर एक धक्का ऐसा मारा कि शत्रुघ्न भी उसी कूप में जा गिरा और मर गया। इस प्रकार हे राजकुमार! खोटी स्त्रियां कौन सा साहस का काम नहीं करतीं?। बालक होने पर भी गोमुख ने इस प्रकार स्त्रीचरित्र की निन्दा की। तदनन्तर राजकुमार नरवाहनदत्त स्वयं उस नाग-बन में नागों की पूजा कर अपने साथियों के साथ राजभवन को लौट आये।

एक दिन राजकुमार ने यद्यपि वे स्वयं जानतेही थे तथापि गोमुखादिक अपने मन्त्रियों की परीक्षा लेने के लिये उनसे यह कहा कि हमें राजनीति का तत्व सुनाओ। उन्होंने आपस में विचार कर यह उत्तर दिया कि हे राजकुमार! यद्यपि आप सब जानतेही हैं तथापि आपके पूछने पर हम आपको राजनीति का सार सुनाते हैं—

सब से प्रथम राजा को उचित है कि अपने इन्द्रियरूपी घोड़ों को वश कर उन पर आरूढ़ हो शरीरान्तर्वर्ती अपने कामक्रोधादिक शत्रुओं को जीते। प्रथम अपने को जीत कर दूसरे शत्रुओं पर चढ़ाई करे, क्योंकि जब लों वह अपनेही को न जीतेगा तब लों दूसरों को क्योंकर परास्त कर सकेगा। तदनन्तर वह अपनेही देशवासियों में से गुणवान् मन्त्रियों को नियत करे, और ऐसे पुरोहित को स्थिर करे जो अथर्व वेद का ज्ञाता तथा कार्य्य में निपुण और तपस्वी होवे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसके उपरान्त वह अनेक युक्तियों द्वारा उन मन्त्रियों की परीक्षा भय, लोभ, धर्म्म और काम में लेवे और तब उन्हें सुयोग्य तथा परीक्षोत्तीर्ण पाकर उचित कार्य्यों पर नियुक्त करे। जब वे किसी विषय पर वादानुवाद करें तो राजा को उचित है कि वह उनके वाक्य की परीक्षा करे कि उनका भाषण सत्य है वा किसी द्वेष के कारण वे ऐसा कहते हैं वा स्नेह से कहते हैं वा निज अभिप्राय की सिद्धि के लिये ऐसा भाषण करते हैं। सत्य से प्रसन्न हो, और असत्यता पाने पर यथार्थ दण्ड देवे तथा गुप्त भेदियों के द्वारा सदा उनके आचरणों का अलग अलग पता लगाता रहै। इस प्रकार छिपे हुये नेत्रों से कामों को देखता हुआ, कण्टकों को उखाड़ कोष और बल को प्राप्त कर राजा अपने राज्य के मूल को दृढ़ करे। तदनन्तर उत्साह, प्रभुता और मन्त्रशक्ति से युत हो वह अपने तथा शत्रु के बल को जांच कर पराये के देश को जीतने की इच्छा करे। वह सदा ऐसे मन्त्रियों से सलाह लेवे जो विश्वासपात्र, विद्वान् और बुद्धिमान् हों और उनके निश्चित किये हुये विचारों का सर्वाङ्ग शोधन अपनी बुद्धि से करे। सामदामादि उपायों का ज्ञाता होकर राजा प्रथम अपना क्षेम साधन कर ले, तब सन्धिविग्रहादि छओ गुणों का प्रयोग करे अर्थात् अपनी दृढ़ता कर लेने के उपरान्त यह विचार करे कि किससे मेल रखना और किससे युद्ध करना। इस प्रकार सावधान होकर जो राजा सदा अपने तथा शत्रु के देश का विचार किया करता है वह सदा विजयी रहता है और कभी पराजय नहीं पाता। किन्तु अज्ञ राजा को, जो काम और लोभ के कारण अन्धा बना रहता है, उसके धूर्त नौकर लोग झूठा पथ दिखाकर भ्रमित मार्ग पर ले जाते और गड़हे में ढकेल देते हैं। इन धूर्तों के मारे राजा के पास किसी दूसरे प्रकार के सेवक की पहुँच नहीं हो सकती, जैसे कण्टकों से सुरक्षित धान के खेत के पास कोई बाहरी व्यक्ति जल्दी नहीं जा सकता। वैसे दुष्ट सेवक राजा के रहस्य से भेदू हो जाने के कारण उसे अपने वश में कर लेते हैं और तब लक्ष्मी उसे परित्याग कर दूर भाग जाती है क्योंकि उस राजा को भले बुरे की पहिचान नहीं रहती। अतएव राजा को उचित है कि वह प्रथम अपने को जीते और मनुष्यों का पहिचाननेवाला होकर उचित दण्ड का विधान करे क्योंकि ऐसा करने से वह प्रजा के प्रेम का भागी बन कर लक्ष्मी का भी भोगकरनेवाला होता है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राचीन समय में कोई शूरसेन नामक राजा थे जो अपने सेवकों पर अत्यन्तही अधिक विश्वास रखते थे, मन्त्री लोग उन्हें भकुआ बना अपने वश में कर खूबही लूटा करते थे। यदि कोई राजा का सच्चा सेवक होता और राजा उसे कुछ दिया भी चाहते तो वे मन्त्री लोग उसे फूटी कौड़ी भी न देते किन्तु हां जो उनका सच्चा सेवक होता उसे वे खूब माल देते और चाहे कैसाही अयोग्य क्यों न हो राजा से भी कहकर बहुत कुछ दिलवा दिया करते थे। जब राजा ने ऐसी बात देखी तो उन्हें धीरे धीरे उन धूर्तों के एके का पता लग गया, तब उन्होंने युक्ति और बुद्धि द्वारा उन लोगों में फूट उत्पन्न करा दिया। इस प्रकार भिन्न भिन्न हो जाने पर वे एक दूसरे की पिशुनता करने लगे और राजा ने फिर दूसरों के धोखे में न आ भली प्रकार राज्य का प्रबन्ध कर सुख पाया।

और सुनिये कि, हरिसिंह नामक कोई राजा हो गये हैं। यद्यपि उनका राज्य छोटा था किन्तु वे नीति के बहुत अच्छे ज्ञाता थे। वे सदा अपने पास सच्चे राजभक्त और बुद्धिमान् मन्त्रियों को रखते तथा दुर्ग और अर्थ का सञ्चय कर सुख से अपना समय बिताते थे। वे सदा अपनी प्रजा को प्रसन्न रख अपने पर ऐसा अनुरक्त बनाये रखते कि एक बेर चक्रवर्ती राजा से भी आक्रमण किये जाने पर वे परास्त नहीं हुये।

कहने का तात्पर्य्य यह है कि विचार और चिन्ता येही दोनों राज्यप्रबन्ध के लिये सारभूत वस्तु हैं इनसे अधिक और क्या चाहिये। इतना कहने में अपना २ भाग ले गोमुखादिक सब चुप कर रहे। उन लोगों का ऐसा बचन सुन नरवाहनदत्त ने उनकी श्रद्धा के लिये कहा ठीक है किन्तु बिचार और चिन्ता वहीं काम आते हैं जहां मनुष्य का बश चलता है, दैव को बात कौन जान सकता है ?।

इतना कह वे उठ खड़े हुये और अधिक विलम्ब हो जाने के कारण अपनी उत्कण्ठिता प्रिया मदनमंचुका को देखने के लिये चले। वहां पहुँचने पर कलिङ्गसेना ने बड़े आदर और आतिथ्योचित सत्कार से उन्हें एक आसन पर बैठाया। तदनन्तर वह गोमुख से विस्मयपूर्वक कहने लगी कि 'हे गोमुख ! राजकुमार नरवाहनदत्त के आने के पूर्व की बात है कि जब इन्हें कुछ विशेष विलम्ब हुआ तो इन्हें देखने के लिये उत्कण्ठित हो मदनमंचुका मेरे साथ कोठे पर गई, इतनेही में कोई व्यक्ति आकाश से उतरकर वहां आ गया। उसके किरीट और खड्ग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से मैंने अनुमान किया कि वह कोई दिव्य पुरुष है। अस्तु वह मुझसे कहने लगा कि मैं विद्याधरों का राजा मानसवेग नामक हूं, तू सुरभिदत्ता नामक अप्सरा है जो शाप के कारण इस भूतल पर अवतरी है और तेरी यह कन्या भी दिव्या है यह सब मैं जानता हूं, अतएव तू इसका व्याह मेरे साथ कर दे क्योंकि यह सम्बन्ध सदृश है। उसकी यह बात सुन मैंने हँसकर उससे कहा कि देवताओं ने नरवाहनदत्त को मेरी कन्या का भर्ता नियत किया है जो तुम सभों का चक्रवर्ती राजा होनेवाला है। मेरी यह बात सुन वह विद्याधर मेरी पुत्री की आंखों में विजुली सी चकाचौंध लगाता हुआ उड़कर आकाश में न जाने कहां लोप हो गया। यह सुन गोमुख ने कहा कि हमारे स्वामी के उत्पन्न होने पर एक आकाशवाणी हुई थी कि यह समस्त विद्याधराधिपों के राजा होंगे, उसी से पता पाकर ये विद्याधर लोग इनको हानि पहुँचाने के उद्योग में लगे हैं क्योंकि उच्छृङ्खल लोग कब चाहते हैं कि उनके सिर पर कोई ऐसा बली स्वामी हो जो उनकी इच्छा को दबावे। दुष्ट विद्याधरों की ऐसी दुरिच्छा देख श्रीशम्भु भगवान् ने अपने गणों को आज्ञा दे इनकी रक्षा कराई, मैंने यह सब हाल सुना है इसलिय ये विद्याधर लोग हमारे विरोधी हो रहे हैं। यह सुन कलिङ्गसेना अपनी सिर बीती आपत्ति के भय से कहने लगी कि कहीं ऐसा न हो कि मेरे नाईं मेरी कन्या भी ठगी जाय इससे उचित होगा कि अब राजकुमार का विवाह इसके साथ शीघ्र हो जाय। कलिङ्गसेना का ऐसा कहना सुन, गोमुखादिकों ने कहा तो इस विषय में तुम्हीं महाराज वत्सराज से बातचीत करो। वह दिन तो नरवाहनदत्त को उसी उद्यान में बीता, जहां वे एक टक से मदनमञ्जुका का मुख चन्द्र देखते रहे। मदनमञ्जुका अपने शिरीष पुष्प जैसे कोमल अङ्गों, और खिले हुये मुखकमल, तथा कुवलय नेत्रों से और बधूक सरीखे लाल लाल होठों तथा मन्दारगुच्छ सरीखे स्तनों से ठीक ऐसी शोभा पा रही थी मानो पञ्चबाण के पांचो पुष्पों से बनी हो जिससे कामदेव तीनों जगत् को जीत अपने वश में करता है।

दूसरे दिन कलिङ्गसेना ने स्वयं जाकर महाराज वत्सराज के सन्मुख निज सुता के विवाह का निवेदनपत्र उपस्थित किया। महाराज ने कहा कि तुम निज घर को जाओ हम इस विषय पर विचार कर शीघ्र उत्तर देंगे। इतना कह उसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो उधर भेजा और इधर अपने मन्त्रियों को बुलाकर देवी वासवदत्ता के सम्मुखही यों बात छेड़ी कि कलिङ्गसेना निज कन्या के विवाह के लिये जल्दी मचा रही है सो अब क्या करना चाहिये, लोग उस उत्तमा को वृथा बन्धकी का कलङ्क लगाते हैं। लोगों के कथन पर सब से प्रथम ध्यान देना उचित है, क्या इसी लोकापवाद के कारण श्रीरामचन्द्रजी ने परम शुद्धा और सती श्रीजानकीजी को परित्याग नहीं कर दिया था? क्या भीष्म ने निज भाई के लिये बड़े यत्न से अम्बा को हर ले जाने पर भी इसी कारण से नहीं परित्याग कर दिया कि वह पहिले किसी दूसरे को भर्ता रूप से वर चुकी थी? इसी प्रकार कलिङ्गसेना भी प्रथम मुझे वरने आई थी किन्तु उसका व्याह मदनवेग के साथ हो गया। इसी कारण लोग उसको निन्दिता बताते हैं, अतएव उचित होगा कि नरवाहनदत्त स्वयंही उसकी कन्या से गान्धर्वरीति पर विवाह कर लेवे क्योंकि वह भार्य्या उसकी अनुरूप है। यह सुन, मन्त्री यौगन्धरायण ने कहा कि हे प्रभो! इस अनुचित बात को भला कलिङ्गसेना कब स्वीकार करेगी! क्योंकि मैंने स्वयं देखा है कि वह और उसकी कन्या दोनों दिव्या हैं, कोई साधारण स्त्री नहीं, इस बात को मेरे बुद्धिमान् मित्र ब्रह्मराक्षस ने मुझसे कहा है। इस प्रकार वे लोग परस्पर बातें करही रहे थे कि श्रीमाहेश्वरी आकाशवाणी यों हुई कि "मेरे नेत्रानल से भस्म हुये कामदेव को मैंने नरवाहनदत्त के रूप में पुनः उत्पन्न किया है, और उसकी भार्य्या रति की तपस्या से सन्तुष्ट हो उसे मदनमंचुका रूप से जन्म दिया है, अतएव नरवाहनदत्त का विवाह इसी मदनमंचुका से होगा, मेरे प्रसाद से यह शत्रुओं को जीत कर अपनी इस मुख्य भार्य्या के साथ, देवताओं के एक कल्प तक, सब विद्याधराधिपों के ऊपर राज्य करेगा।" इतना कह आकाशवाणी चुप हो गई।

श्रीशङ्करजी का ऐसा भाषण सुन, महाराज वत्सराज ने अपने परिच्छद सहित उन्हें प्रणाम कर, आनन्दित हो पुत्र का विवाह करना निश्चित किया। तदुपरान्त महाराज ने, निज मुख्य मन्त्री यौगन्धरायण का जिनने पहिलेही से इसका तत्व जान लिया था अभिनन्दन कर विद्वान् ज्योतिषियों को बुलाया और उनका यथार्थ सत्कार और पूजन कर विवाह का शुभ लग्न पूछा, उन लोगों ने भी बतलाया कि थोड़ेही दिनों में उत्तम मुहूर्त आनेवाला है। फिर उन लोगों ने निवेदन किया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि हे महाराज! हमलोगों को निज शास्त्र दृष्टि से ऐसा प्रतीत होता है कि आपके चिरञ्जीव राजकुमार को निज भार्य्या का विरह कुछ दिनों के लिये सहना पड़ेगा। तब महाराज ने निज वैभव के अनुसार, अपने पुत्र के विवाह का संभार आरम्भ किया जिसके कारण न कि केवल उसी पुरी में किन्तु सारी पृथ्वी में धूम मच गई। विवाह का दिन उपस्थित होने पर कलिङ्गसेना ने अपनी कन्या को उन दिव्य आभूषणों से अलङ्कृत किया जो उसके पिता ने भेज दिये थे और इधर सोमप्रभा भी निज पति की आज्ञा पाकर अपनी सखी के पास आ पहुँची। मदनमंचुका की शोभा विवाह के दिव्य मङ्गल सूत्र धारण करने से और भी अधिक हो गई, चन्द्रमा की प्रभा कार्तिक के साथ और भी सुन्दर प्रतीत होती है। श्री शङ्कर भगवान् की आज्ञा से दिव्याङ्गनायें मङ्गल गीत गाने लगीं, यद्यपि मदनमंचुका के रूप से लज्जित होकर वे छिपी रहती थीं तथापि उनके गाने का स्वर स्पष्ट सुन पड़ता था। वे श्रीगौरीजी की प्रशंसा में यह गीत गाती थीं—

धनि धनि गौरी जी महारानी।
तो सम दीनभक्तजनरञ्जनि त्रिभुवन महँ न लखानी ।
सुफल करी रति की जु तपस्या धन्य देवि गुणखानी ॥
निज आसीस दियो तुम माता मङ्गलभवनि भवानी ।
वर अनुकूल रतिहिं ने पायो कामदेव जग जानी ॥
मदनमंचुका दुलहिन अब नरवाहनदत्त मिलानी ॥ १ ॥

तदनन्तर दूलह नरवाहनदत्त ने वरोचित वस्त्रालङ्कार से भूषित हो मदनमञ्चुका के घर, विवाह के अँगने में प्रवेश किया। वहां दूलह दुलहिन ने विवाह के सब मङ्गल कृत्यों को विधिवत् पूर्ण कर अग्निसंज्वलित बेदी पर यों आरोहण किया मानो उन्होंने अन्य राजाओं के रत्नमय शिरोभू पर पैर धरा हो। यदि चन्द्रमा और सूर्य दोनों एक साथ मिलकर सुमेर पर्वत के आसपास घूमते, तब कदाचित् उस शोभा की उपमा दी जाती जो बधू और वर की अग्निप्रदक्षिणा करने के समय हो रही थी। न कि केवल देवताओं की दुन्दुभिध्वनि ने विवाह के मङ्गलबाजोंही को दबा दिया किन्तु उनकी पुष्पवृष्टि ने स्त्रियों से करी हुई लावा की बर्सात को भी परास्त कर दिया था। परमोदार कलिङ्गसेना ने अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जामाता को इतने मणिमय आभूषण और स्वर्ण के अलङ्कार दिये कि लोगों ने उसके साम्हने अलकापुरी के स्वामी कुबेर को भी तुच्छ जाना, फिर दूसरे कृपण राजाओं की गिनती कौन करे । तदुपरान्त वधू और वर ने अपने चिरकाल के अभिमत पाणिग्रहण हो जाने पर स्त्रियों की भीड़ से रुधे हुये अन्तःपुर में प्रवेश किया और साथही उन्होंने जनसमूह के चित्त में भी जो विमल भक्ति से अलङ्कृत हो रहे थे स्थान पाया । महाराज वत्सराज की पुरी उन राजाओं से भर उठी जो अग्रहन्य होने पर भी नम्रता स्वीकार कर अपनी सेना के साथ, बहुमूल्य रत्नों का उपायन लेकर उनकी सेवा में रत्नाकर की नाईं उपस्थित हुये थे ।

यों बरस्यो धन नृपतिवर भयो हेममय को न ?
केवल माता-गर्भगत बालक भये न सोन ।
चहुँदिसि ते आवत भई नर्तक-गायक-भीर ।
दै दै धन पूरित कियो भूप दान-वरवीर ॥
वायुविकम्पित धुजा मिस बाहु-लता उत्सारि ।
मानहु नाचति ही पुरी पुरतिय करी-सिँगार ॥
यों विवाह-मङ्गल-मुदित विकसित विविध विनोद ।
परजन परिजन पौरजन पायो परम प्रमोद ॥
मदनमंचुका-प्रीतियुत नरवाहन युवराज ।
अतुलित सुख-उपभोग-रत विहरत सहित समाज ॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का भाषानुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

रत्नप्रभा नाम सातवां लम्बक।

सवैया।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालबिनैबल पाई।
शम्भुमुखार्णव ते निकसो या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई॥
प्रेम-समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस-दुहाई।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द असन्द बड़ो बिबुधाई॥

प्रथम तरङ्ग।

गौरी-नखक्षत लगत जनु प्रगटे चन्द्र अनेक।
चन्द्रभाल शतचन्द्र ह्वै शीतल करहिं स टेक॥
कुंचित करहिँ पसारि कै झर झर बहति प्रसेव।
सिद्धिदान कहँ देत जनु जयति गजानन देव॥

इस प्रकार महाराज वत्सराज के पुत्र, युवराज नरवाहनदत्त, अपनी प्राण समान प्यारी भार्य्या मदनमंचुका से विवाह कर सुख से रहते थे और सर्ब मनोरथों से परिपूर्ण हो, गोमुख आदि निज मन्त्रियों के सङ्ग, आनन्दपूर्वक विहार किया करते थे। एक समय बसन्त ऋतु के प्राप्त होने पर जब उन्मत कोकिल बन में कुहू कुहू मनोहर शब्द कर रहे थे, और शीतल मन्द सुगन्ध मारुत के बहने से सुन्दरी लताओं का नाच हो रहा था तथा च भौरों का मधुर गाना चारो ओर गूंज रहा था तो युवराज अपने मन्त्रियों को साथ लेकर वायुसेवनार्थ उद्यान में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गये। सभी लोग विहारार्थ इधर उधर घूम रहे थे कि युवराज का सखा तपन्तक जिसके नेत्रकमल प्रसन्नता से खिल रहे थे अकस्मात् समीप आ कहने लगा कि हे युवराज! मैंने अभी देखा है कि यहां से थोड़ी दूर पर एक अशोकवृक्ष के तले कोई दिव्या कन्या आकाश से उतर कर ठहरी है, उसके सौन्दर्य्य की कान्ति से चारो ओर प्रकाश सा हो गया है। निज सखी को मेरे समीप भेजकर उसने यह कहलाया है कि हमारी स्वामिनी आपके राजकुमार को बुलाती हैं, सो मैं उसके कहने से आपके समीप आया हूं कि तनिक चलकर देखिये तो कि यह कैसा कौतुक है, वह कौन है और क्यों आपको बुलाती है। यह सुन, उसे देखने के लिये उत्सुक हो, युवराज नरवाहनदत्त अपने मन्त्रियों के सहित उस वृक्ष के समीप पहुँचे, देखते क्या हैं कि एक परम सुन्दरी मृगनयनी जिसके ओष्ठ और अधर नवीन कोमल पत्तों से लाल हैं और जिसके युगल कुच पुष्प के गुच्छ की नाईं शोभित हैं उस वृक्ष के तले बड़ीही सज धज से बैठी है। निज छाया से ताप हरने-वाली तथा परागपुञ्ज की नाईं गोरी वह रमणी ऐसी जान पड़ती थी मानो साक्षात् बनदेवी शरीर धारण कर आ गई हो। राजकुमार तो उस दिव्यकन्या को देखतेही अपना हृदय गँवा बैठे। ज्योंहो वे वहां पहुँचे कि उसने उठकर इन्हें प्रणाम किया और राजकुमार ने भी उसका अभिनन्दन किया। जब सब लोग यथास्थान बैठ गये तो मन्त्री गोमुख ने उस दिव्या कन्या से पूछा कि हे कल्याणि! आप कौन हैं और किस कारण आपका शुभागमन यहां हुआ है? यह सुन, वह जो नरवाहनदत्त के मुखकमल की ओर एक टक देख रही थी, कामदेव की आज्ञा से लज्जा को दूर कर अपना वृत्तान्त विस्तारपूर्वक यों कहने लगी कि—

हे युवराज! तीनों जगत् में प्रसिद्ध हिमवान् नामक पर्वतराज को तो आप जानतेही होंगे जिनके अनेक शृङ्गों में श्रीगौरीपति शङ्कर भगवान् का भी एक शृङ्ग है, जो चमकते हुये रत्नों की माला धारण करते और हिम की द्युति से सदा प्रकाशित रहते हैं। आकाश के प्रसार की नाईं उसके माप का भी किसी को पता न चला। जिसकी चोटियां सिद्धि और विलक्षण ओषधियों का निधानस्थान हैं इनके कारण जन्तुओं को बुढ़ौती और मृत्यु का भय नहीं होता और ये केवल श्रीशम्भु भगवान्कीही कृपा से मिल सकती हैं। यह वही पर्वत है, जिसके शिखर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्याधरसमूह के गौर अङ्गों की कान्ति पा, देवपर्वत सुमेरु की शोभा को भी परास्त करते हैं। वहां काञ्चनशृङ्ग नामक एक सोने की नगरी बसी है जिसकी प्रभा से यही जान पड़ता है कि मानो यह सूर्य्य भगवान् के रहने का स्थान है। उस पुरी का विस्तार कई योजन का है और वहां हेमप्रभ नामक राजा रहते हैं जो श्रीशङ्कर भगवान् के परम उपासक और दृढ़ भक्त हैं। उनकी अनेक रानियों में से सब से प्यारी महादेवी का नाम अलङ्कारप्रभा है जो इन्हें ऐसी प्रिय है जैसे चन्द्रमा को रोहिणी। अपनी प्यारी भार्य्या के साथ वे परमधार्मिक राजा नित्य प्रातःकाल उठकर स्नान करने के उपरान्त श्रीगौरीजी के सहित महेश्वरजी का पूजन करते थे, तदुपरान्त वे नित्य इस मनुष्यलोक में आकर रत्नों सहित एक लाख स्वर्णमुद्रा दरिद्र ब्राह्मणों को दान देते थे। इसके अनन्तर वे लौटकर धर्मपूर्वक अपना राजकाज देखते और भोजन पान कर मुनियों की सी वृत्ति रखते थे। यौंही कुछ समय बीत जाने पर अकस्मात् राजा के हृदय में पुत्र न होने पर चिन्ता उत्पन्न हुई। उन्हें उदास तथा खिन्नहृदय देखकर उनकी प्यारी भार्य्या अलङ्कारप्रभा ने पूछा कि हे नाथ! आप ऐसे चिन्तित और दुःखित क्यों रहते हैं मुझे तो इसका कोई कारण प्रतीत नहीं होता। यह सुन राजा ने उत्तर दिया कि हे देवि! जगदीश्वर की दी हुई मेरे यहां सर्व सम्पत्ति है किसी बात की कमी नहीं, किन्तु एक पुत्र मुझे नहीं है जिस दुःख के कारण मेरा जी सदा उदास और खिन्न रहता है। यह चिन्ता मुझे उस कथा के स्मरण होने से उत्पन्न हो गई है जो मैंने पहिले एक धार्म्मिक पुत्रहीन मनुष्य की सुनी थी। रानी ने पूछा कि हे देव! वह कैसी कथा है मुझे भी सुनाइये तब राजा हेमप्रभ ने संक्षेप से उस कथा को यों कहना आरम्भ किया कि —

चित्रकूट नगर में कोई ब्राह्मणवर नामक राजा रहते थे। उनका ब्राह्मणवर नाम सार्थक था क्योंकि वे सदा ब्राह्मणों की सेवा में तत्पर रहते थे। उनके एक सेवक का नाम सत्वशील था जो सदा रण केही काम में रहता और ईश्वर की कृपा से सदा विजयी भी होता था। यद्यपि राजा के यहां से उसे एक सौ स्वर्णमुद्रा मासिक वेतन मिलता था तथापि दान में जो उसका हाथ सदा ऊँचा रहता इससे इतना धन भी पर्याप्त न होता था, विशेषतः अपुत्र होने के कारण उसकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दानशीलता और भी बढ़ी रहती थी। सत्वशील सदा चित्त में यह विचारा करता कि 'ब्रह्मा ने मेरे चित्तविनोद के हेतु एक भी पुत्र न दिया, दिया तो क्या कि दान का व्यसन, सो उसके हेतु भी पर्याप्त धन न दिया। संसार में पुराने सूखे वृक्ष वा पत्थर का जन्म अच्छा है किन्तु दरिद्र होकर दान का व्यसनी होना अच्छा नहीं'। एक दिन किसी उद्यान में घूमते फिरते दैवात् सत्वशील को एक निधि प्राप्त हुई। वह उस स्वर्ण के ढेर को जिसमें अनेक बहुमूल्य रत्न भी थे निज सेवकों द्वारा अपने यहां उठवा लाया। उस धन में से उसने ब्राह्मणों को बहुत सा दान दिया तथा च मित्रों और सेवकों को भी भरपूर धन देने के उपरान्त अपने निमित्त भी कुछ बचाकर वह सुख से रहने लगा। उसके गोत्रवालों ने उसकी यह उन्नति देख डाह खाकर राजा के पास जा निवेदन किया कि हे महाराज! सत्वशील ने भूमि में गड़ी हुई एक निधि पाई है, सो वह चुपके से अपने घर उठा ले गया है। यह सुन, राजा ने सत्वशील को बुलवा भेजा और जब वह महाराज की सेवा में उपस्थित हुआ तो प्रतीहारी ने उसे पहिले राजाङ्गण के एक निराले कोने में ठहरा दिया और स्वयं महाराज की सेवा में उसके आने की सूचना देने गया। वहां खड़े खड़े वह हाथ के लीलावज्र की नोक से पृथ्वी को खोद रहा था कि अचानचक एक ताम्बे के घड़े में गड़ा हुआ दूसरा निधान उसे प्राप्त हुआ। उसने विचारा कि मैं इस निधान को देकर राजा को सन्तुष्ट करूँगा, ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर यह निधान इसीलिये मुझे दिखलाया है। इतना सोच उसने पुनः मिट्टी को ज्यों का त्यों कर दिया, इतने में प्रतीहारी भी राजा को आज्ञा लेकर आ गया और उसे साथ ले महाराज की सेवा में पहुँचा। महाराज ने कहा कि हमने सुना है कि तुमने कोई निधान पाया है सो वह राजा का भाग होता है उसे हमारे यहां उपस्थित करो—इतना सुन उसने हाथ जोड़ निवेदन किया कि "हे पृथ्वीनाथ! उस दिन वाला निधान देऊँ या जो मैंने आज पाया है सो"। महाराज ने कहा कि 'जो आज पाया है सोही देओ'। यह सुन, वह राजा को साथ लेकर उस आंगन में आया और उन्हें वह निधान दिखलाकर बोला कि आज की पाई हुई निधि यही है। महाराज उस महत् निधान को देख अत्यन्त प्रसन्न हुये और सन्तुष्ट हो उन्होंने आज्ञा दी कि उस पहिलेवाले निधान को तुम अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काम में लाओ। यह सुन, सत्वशील महाराज को प्रणाम कर प्रसन्नतापूर्वक अपने घर को लौट आया और दान तथा भोग से अपने नाम की यथार्थता को बढ़ाता हुआ वह निज अपुत्रताजनित दुःख को किसी प्रकार दबाकर रहने लगा।

"हे देवि! यही उस सत्वशील की कथा है जो मैंने पूर्व में सुनी थी, और उसी को स्मरण कर मेरे चित्त में इन दिनों ऐसी उदासी छाई रहती है"। इस प्रकार जब विद्याधरेन्द्र हेमप्रभ ने, अपनी भार्य्या अलङ्कारप्रभा को सुनाया तो उसने नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि हे नाथ! यह सत्य है, सत्वशाली मनुष्यों की सहायता भगवान् करते हैं, देखिये क्या सत्वशील ने सङ्कट पड़ने पर दूसरा निधान नहीं पाया। सो आप भी निज सत्त्व के प्रभाव से अपना अभीष्ट पावेंगे इसके निदर्शन में मैं आपको विक्रमतुङ्ग की कथा सुनाती हूं—

पाटलिपुत्र नामक एक नगर है, जिसे इस संसार का अलङ्कार कहना चाहिये, वह नगर उत्तम रत्नों और धन से परिपूर्ण है। किसी समय वहां परम सत्वावान् विक्रमतुङ्ग नामक कोई राजा हो गये हैं, जिन्होंने दान में अर्थियों को या युद्ध में शत्रुओं को कभी पीठ नहीं दिखाई। एक समय राजा बन में मृगया खेलने गये थे, देखा कि वहां एक ब्राह्मण बेल के फल से होम कर रहा है। उसे देख महाराज ने पूछना चाहा कि वह ऐसा क्यों करता है किन्तु मृगया के ध्यान में लगे रहने के कारण वे उसके पास न जाकर दूरही से अपनी धुन में चले गये। चिरकाल तक वे बन में सिंह इत्यादि अनेक पशुओं से क्रीड़ा करते रहे, कोई उनके अस्त्र की चोट खाकर उछलता कोई गिरता और कोई साथही प्राणपरित्याग कर देता था। मृगया से लौटने पर राजा ने देखा कि वह ब्राह्मण उसी प्रकार होम में लगा है, वे उसके समीप जाकर पूछने लगे कि हे ब्रह्मन्! आपका क्या नाम है और इस होम का क्या फल है? ब्राह्मण ने राजा को आशीर्वाद देकर कहा कि हे नरनाथ! मैं ब्राह्मण हूं नाम मेरा नागशर्म्मा है और इस होम का यह फल है कि जब अग्निदेवता बेल के होम से सन्तुष्ट होंगे तो कुण्ड में से सोने के बेल निकलने लगेंगे। उस समय अग्निदेव साक्षात् प्रगट होकर बरदान देंगे, मुझे बेलों का होम करते चिरकाल हो गया किन्तु मुझ मन्दभाग्य पर आज तक अनलदेव की प्रसन्नता न हुई। यह सुन, उस धीरसत्व राजा ने कहा कि 'अच्छा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तुम एक बेल मुझे दो, तनिक मैं तो चढ़ाकर देखूं। हे ब्रह्मन् देखो मैं तुम्हारे अग्निदेव को इसी क्षण प्रसन्न किये देता हूं।' ब्राह्मण ने कहा कि यह आप कैसी बात कहते हैं! 'जब मैं व्रतधारी और पवित्र होकर भी अग्निदेव को सन्तुष्ट न कर सका तो आप अशुचि होकर बिना व्रत कियेही उन्हे कैसे प्रसन्न कर लेंगे?' राजा ने कहा कि 'आप मुझे बेल देवैं तो, देखिये इसी क्षण क्या आश्चर्य्य होता है!' ब्राह्मण ने कौतुक के साथ राजा के हाथ में बेल दे दिया। राजा ने चित्त में यह दृढ़सङ्कल्प किया कि 'हे अग्निदेव! यदि आप मेरे इस बेल के होम से प्रसन्न नहीं होंगे तो मैं इसी क्षण अपना सिर काटकर आपको चढ़ा दूंगा।' ऐसी प्रतिज्ञा मन में ठान, राजा ने वह बेल अग्निकुण्ड में चढ़ाया। उसी क्षण अग्निदेवता मानो उसके सत्वरूपी वृक्ष का फल हाथ में सोने का बेल लिये हुये कुण्ड से प्रगट हुये और उस महीपति से कहने लगे कि हे भूपति! हम तुम्हारे इस सत्व से परम सन्तुष्ट हुये मांगो क्या वर चाहते हो? यह सुन, उस महासत्व राजा ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे देव! और मैं क्या मागूं, मैं यही निवेदन करता हूं कि इस ब्राह्मण को आप अभीष्ट बरदान देवैं। राजा का ऐसा बचन सुन, प्रसन्न हो अग्निदेव ने कहा कि हे राजन्! यह ब्राह्मण महा धनशाली होगा और तुम्हारा भी कोष हमारे प्रसाद से सदा भरा रहेगा। अग्निदेव के ऐसा बरदान दे चुकने पर उस ब्राह्मण ने हाथ जोड़ पूछा कि हे देव! इस स्वेच्छाविहारी राजा के हवन करतेही आप आविर्भूत हुये और मुझ नियमधारी को होम करते चिरकाल बीते आपने दर्शन न दिया, हे भगवन्! इसका क्या कारण है? वरदायी वैश्वानर भगवान् ने उत्तर दिया कि यदि मैं इसे दर्शन न देता तो यह तीव्रसत्व राजा इसी क्षण अपना सिर काटकर चढ़ा देता! तीव्रसत्व लोगों को सिद्धि में विलम्ब नहीं लगता कि हे ब्रह्मन्! तुम्हारे जैसे मन्दसत्वों को सिद्धि बहुत दिनों में मिलती है। इतना कह अग्निदेव तो अन्तर्धान हुये और नागशर्म्मा राजा की आज्ञा ले अपने घर को गया और कुछ दिनों के उपरान्त महाधनी हो गया। सब लोग राजा का सत्व देखकर परम आश्चर्य्यान्वित हुये और उनकी प्रशंसा करते हुये राजा के साथ पाटलिपुत्र को लौट आये।

इस प्रकार वे धार्मिक राजा अपने राज्य में रहते थे कि एक दिन उनके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शत्रुञ्जय नामक प्रतीहारी ने सेवा में उपस्थित हो निवेदन किया कि हे धर्म्मा-
तार! कोई दत्तशर्म्मा नाम ब्राह्मणपुत्र द्वार पर आके खड़ा है वह कहता है कि
महाराज से कुछ एकान्त में निवेदन करना है। जब महाराज ने आज्ञा दी कि
अच्छा उसे ले आओ तो प्रतीहारी उस ब्राह्मणपुत्र को महाराज के समीप ले गया
उसने जातेहो महाराज को आशीर्बाद दिया, फिर उनकी आज्ञा पा बैठकर यों
कहने लगा कि हे देव! मेरे पास एक ऐसा चूर्ण है कि उसको ताम्बे में छू देनेही
से वह सोना हो जाता है। इस युक्ति को मैंने अपने गुरु जी से सीखी है और
मैंने अपनी आंखों से देखा है कि वे इस चूर्ण से ताम्बे का सोना बना लिया करते
थे। यह सुन; महाराज ने थोड़ा सा ताम्बा मँगवाया और जब वह गलाकर प्रस्तुत
किया गया तो उस ब्राह्मणपुत्र ने थोड़ा सा चूर्ण अपने हाथों से उसमें छोड़ दिया।
ज्योंही चूर्ण छोड़ा गया त्योंही एक यक्ष गुप्तरीति से उसे बीचही में उड़ा ले गया
इस हाल को और कोई भी न देख सका किन्तु राजा ने अग्नि को सन्तुष्ट करने
के प्रभाव से उस यक्ष को देख लिया। जब ताम्बे का मेल चूर्ण से न हुआ तो वह
सुवर्ण न हो सका, यह देख उस ब्राह्मणपुत्र ने तीन बेर उद्योग किया किन्तु हर
बेर उसका परिश्रम व्यर्थ हुआ। जब वह अत्यन्त विषण्ण हुआ तो उस तेजस्वी
राजा ने ताम्बा गलवाकर स्वयं अपने हाथ से उसमें चूर्ण छोड़ा। इस चूर्ण को
यक्ष ने न हरा किन्तु मुस्कुराता हुआ चुपचाप चला गया और इधर चूर्ण के संयोग
से वह ताम्बा सुवर्ण हो गया। ब्राह्मणपुत्र ने अत्यन्त विस्मित हो राजा से इसका
कारण पूछा और उन्होंने उस यक्ष का वृत्तान्त जैसा देखा था कह सुनाया। तदु-
परान्त उस ब्राह्मणपुत्र ने चूर्ण बनाने की युक्ति राजा को सिखला दी और राजा
ने भी उसे भरपूर धन दे कृतार्थ कर दिया, इसके अनन्तर वह विवाह कर वहीं
सुख से रहने लगा। राजा भी उस युक्ति से सोना बनाकर सदा पूर्णकोष रहते
और वह ब्राह्मण भी अपनी रुकावट के हट जाने के कारण धनी हो गया।

इसी से कहती हूं कि सत्वशालियों से न जाने डरकर अथवा उन पर प्रसन्न
होकर ईश्वर उनके मनोरथों को पूर्ण करता है। इसलिये हे देव! इस समय
आपके समान धीरसत्व अथवा दाता दूसरा कौन है? आप शोक को छोड़ दृढ़-
चित्त से शङ्कर भगवान् की आराधना करिये वे प्रसन्न होकर अवश्य आपको पुत्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देंगी । निज भार्य्या अलङ्कारप्रभा के मुख से ऐसे बचन को सुन राजा हेमप्रभ अत्यन्त प्रसन्न हुये और उनको विशेष श्रद्धा उत्पन्न हुई । उन्हें पूर्ण विश्वास हुआ कि श्रीगौरीशजी की आराधना से मुझे अवश्य पुत्र की प्राप्ति होगी और उनका यह विश्वास उनके उत्साहशाली हृदय से प्रतीत होने लगा । दूसरे दिन प्रातःकाल राजा ने, रानी के साथ स्नान करके श्रीशङ्कर भगवान् का पूजन किया और ९ कोटि स्वर्णमुद्रा ब्राह्मणों को दान दिया तथा निराहार रह कर शिवजी के आगे यह दृढ़ निश्चय कर तपस्या करने लगे कि या तो मैं देहही परित्याग दूंगा या शम्भु भगवान् प्रसन्न हो मुझे पुत्र देकर कृतार्थ करेंगे । इस प्रकार तपस्या में बरदायी गौरीपति की जिन्होंने हेलाही में अपने भक्त उपमन्यु को दुग्धसागर दे दिया था, वे यों स्तुति करते थे ।

नमो नमो श्रीगौरिपति शम्भुसदाशिव नाथ ।
जग सिरजन पालन हरन रहत तुम्हारेइ हाथ ॥
सुद्ध सुमानसवास कलहंस नमो जगदेव ।
अष्टमूर्ति सुर असुर सब कोउ न पावत भेव ॥
निर्मल दिव्य प्रकाशमय शुद्ध वारिमय जौन ।
दोषरहित देखत जिन्हैं सोममूर्ति प्रभु तौन ॥
ब्रह्मचारि भगवान प्रभु कृतगौरी-अर्धङ्ग ।
इच्छानिर्मितविश्ववर नमो विश्वमय-रङ्ग ॥

इस प्रकार निराहार तपस्या करते हुये जब तीन दिन राजा को बीते, तब प्रसन्न हो आशुतोष भगवान् ने स्वप्न में दर्शन देकर यों आदेश दिया कि 'हे राजन् उठो तुम्हें अत्यन्त वीर और वंश को चलानेवाला पुत्र होगा और गौरीजी की कृपा से तुम्हें एक परमोत्तमा कन्या भी होगी जो सर्वनिधिसम्पन्न आप लोगों के होनहार चक्रवर्ती राजा नरवाहनदत्त की भविष्य महिषी होगी । श्रीमहादेवजी का ऐसा बचन सुन, विद्याधरेश्वर राजा हेमप्रभ रात बीतने पर जाग उठे और अत्यन्त प्रसन्न हुये । उन्होंने निज भार्य्या अलङ्कारप्रभा को यह आनन्ददायक स्वप्न सुनाकर अत्यन्त सन्तुष्ट किया, उनने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे नाथ! मुझे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भी श्रीगौरीजी ने ऐसाही स्वप्न दिया है। तदुपरान्त महाराज ने स्नान किया और महिषी सहित श्रीशिवजी का पूजन कर उन्होंने व्रत का पारण कर दीन दरिद्री और ब्राह्मणों को खूब दान देके बड़ा उत्सव किया। कुछ दिनों के उपरान्त देवी अलङ्कारप्रभा ने गर्भ धारण किया, महाराज उनका वह गौर मुखकमल जिसमें मधु सी सुगन्धि आ रही थी और जिसमें भ्रमररूपी नेत्र चञ्चल हो रहे थे, देख देख कर अत्यन्त सन्तुष्ट होते थे। कुछ दिनों के अनन्तर रानी के गर्भ से एक प्रसिद्ध भाग्यशाली पुत्र का जन्म हुआ, जैसे आकाश से सूर्य्य का जन्म हो, जिसके उत्पन्न होतेही वह बासगृह लालसिन्दूर की नाईं प्रकाशमान् हो गया। शत्रुओं को भय देनेवाले उस बालक का नाम महाराज ने आकाशवाणी के अनुसार वज्रप्रभ रक्खा। तदुपरान्त क्रमशः सब कलाओं से परिपूर्ण हो पूर्णमासी के चन्द्र की नाईं वह बालक निज समुद्ररूपी कुल की वृद्धि के हेतु धीरे धीरे वृद्धि पाने लगा।

कुछ दिनों के अनन्तर महाराज हेमप्रभ की उसी रानी अलङ्कारप्रभा को पुनः गर्भ रहा। जिस समय वह स्वर्ण के आसन पर बैठती तो वह सारे अन्तःपुर में एक रत्न सी प्रतीत होती थी। रानी को जब आकाशसञ्चार की इच्छा होती तो विद्याबल से पद्मविमान पर बैठकर वह व्योमभ्रमण करती थी। ठीक समय पूर्ण होने पर रानी को वह सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई जिसके बारे में श्रीगौरीजी ने पहिले कहा था। उस समय श्रीशङ्करजी के वाक्य से मिलान पाती हुई यह आकाशवाणी सुनी गई कि "यह कन्या नरवाहनदत्त की भार्य्या होगी"। राजा हेमप्रभने ठीक उसी तरह का उत्सव किया जैसा उन्होंने पुत्रजन्म के समय किया था, और उस कन्या का नाम महाराज ने रत्नप्रभा रक्खा। वह बालिका निज विद्या से शुद्ध होकर क्रमशः अपने पिता के घर में पलने लगी और उसके सौन्दर्य्य की धूम चारो ओर देशदेशान्तरों में फैलने लगी। कुछ दिनों के उपरान्त महाराज हेमप्रभ ने अपने पुत्र वज्रप्रभ का विवाह कर उन्हें यौवराज्य पद पर अभिषिक्त किया। इस प्रकार राज्य का भार सुयोग्य पुत्र को दे वे उधर से तो निश्चिन्त हुये किन्तु अब कन्या के विवाह की चिन्ता रात दिन उनके हृदय को व्यग्र किये रहती थी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक दिन महाराज अपनी भार्य्या के साथ बैठे कुछ बातचीत कर रहे थे कि वह कन्या रत्नप्रभा भी वहां आन उपस्थित हुई, उसे विवाह योग्य प्राप्तयौवना देख महाराज ने अपनी प्यारी भार्य्या अलङ्कारप्रभा से कहा कि, हे देवि! यद्यपि कन्या कुल का अलङ्कार होती है तथापि खेद इस बात का है कि वह तीनों लोक में बड़े बड़े लोगों को भी महा दुःख देने का कारण होती है। देखो यह रत्नप्रभा विनीता, प्राप्तविद्या और रूपयौवनवती होने पर भी सदृश वर के न मिलने से मेरे हृदय में सदा खटका करती है"। रानी ने कहा कि आपको स्मरण होगा कि देवताओं की ओर से यह आकाशवाणी हुई थी कि यह नरवाहनदत्त की भार्य्या होगी, वह भविष्य में हम सब लोगों का चक्रवर्ती राजा होनेवाला है तो क्यों न यह कन्या उसी को विवाह में दी जाय? निज महिषी की ऐसी बात सुन महाराज ने उत्तर दिया कि यह तो तुमने बहुत ठीक कहा, निस्सन्देह वह कन्या धन्य होगी जो उसके साथ व्याही जायगी। वह यथार्थ में कामदेव का अवतार है किन्तु अभी तक उसने दिव्यता को प्राप्त नहीं किया है मैं उस समय की प्रतीक्षा कर रहा हूं कि जब उसे विद्याधरों की विद्या प्राप्त हो। उधर तो वे लोग यों आपस में बातचीत कर रहे थे इधर पिता के उन बचनों ने धीरे धीरे रत्नप्रभा के कानों द्वारा हृदय में प्रवेश कर उसे यों प्रेमविवश कर दिया जैसा किसी कवि ने किसी अनुरक्ता के बारे में कहा है कि –

जब तें कुँअरकान्ह रावरी कलानिधान कान परी वाकी कहूं सुजस कहानी सी।
तबहीं तें देव देखी देवता सी हँसति सी खीझति सी रीझति सी रूसति रिसानी सी॥
छोहीसी छलीसी छीनलीनीसी छकीसी छीन जकीसी चकीसी लागी थकी थहरानीसी
बींधीसी बँधीसी विषबूड़ीसी विमोहितसी बैठी बाल बकति बिलोकति बिकानीसी॥

तदुपरान्त वह माता पिता को प्रणाम कर वहां से उठ निज अन्तःपुर को गई और चिरकाल तक चिन्ता में निमग्न रहने के अनन्तर रात बीतने के समय उसे किञ्चित् झपकी सी आ गई स्वप्न में देखती क्या है कि श्रीगौरीजी खड़ी यों आज्ञा दे रही हैं कि हे पुत्रि! कल शुभ दिन है सो तू प्रातःकाल उठ कर कौशाम्बी नगरी को जाइयो और वहां महाराज वत्सराज के पुत्र का दर्शन करियो, तदुपरान्त हे कल्याणि! तेरे पिता उनको तथा तुझे यहां लाकर दोनों का पर-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आप विवाह कर देंगे। इस प्रकार श्रीगौरीजी ने कृपापूर्वक उसे स्वप्न में आज्ञा दी, प्रातःकाल जागने और उठने पर उसने स्वप्न का सब वृत्तान्त अपनी माता को सुनाया। फिर उनकी अनुमति ले और निज विद्या के प्रभाव से यह जानकर कि वे इस समय उद्यान में हैं, वह अपने नगर से उनका दर्शन करने चली।

सो हे आर्य्यपुत्र! मैं वही रत्नप्रभा हूं जो आपके दर्शनों की इच्छा कर आज क्षण भर में यहां आई हूं, इसके आगे का हाल तो आपको विदितही है। अमृत को भी माधुर्य को तिरस्कार करनेवाले उसके बचनों को सुन तथा उस विद्याधरी के शरीर की नेत्रानन्ददायिनी सुन्दरता को देख नरवाहनदत्त ने मनही मन इस बात पर पछतावा किया कि हाय! ब्रह्मा ने मुझे सारे शरीर में कानही कान और आंखही आंख क्यों न किया कि मैं जी भरकर इसकी अमृतमयी बाणी को सुनता और इसके मनोहर रूप को देखता। फिर कहा कि हे तन्वि! मैं धन्य हूं और अपना जन्म आज सुफल मानता हूं जो तुम स्नेह से मेरे पास स्वयं चल कर आई हो।

अभी वे लोग इस नवीन प्रेमसम्भाषण को करही रहे थे कि अकस्मात् विद्याधरों की सेना आकाश में चारो ओर छा गई। रत्नप्रभा ने कहा कि वह देखिये मेरे पिता जी आ गये, बस इतनेही में राजा हेमप्रभ अपने पुत्र वज्रप्रभ के साथ आकाश से उतर कर उस उद्यान में आ गये। समीप आने पर नरवाहनदत्त ने उठकर यथोचित सन्मानपूर्वक उनका सत्कार किया। अभी वे लोग परस्पर स्वागत कर बैठेही थे कि महाराज वत्सराज इस समाचार को सुन, निज मन्त्रियों सहित वहां आ पहुँचे। राजा हेमप्रभ ने आतिथ्यसत्कार कर उस समग्र वृत्तान्त को उन्हें सुनाया जो रत्नप्रभा ने अभी नरवाहनदत्त से कहा था। फिर निवेदन किया कि निज विद्या के बल से यह जानकर कि मेरी पुत्री यहां आई है मैं भी आन पहुँचा और यहां का सब वृत्तान्त मुझे विदित है। अब आज्ञा दीजिये तो मैं आपके चिरञ्जीव पुत्र को अपने विमान पर चढ़ाकर निज देश को ले जाऊँ, जब ये चक्रवर्ती होंगे तो इनके अनेक ऐसे विमान होंगे। वहां विवाह हो जाने के उपरान्त ये रत्नप्रभा के साथ पुनः आपकी राजधानी में आ जायंगे। महाराज वत्सराज ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक इस बात का अनुमोदन किया, तदनन्तर निज

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्या के प्रभाव से विमान प्रस्तुत कर राजा हेमप्रभ अपने पुत्र, पुत्री और भविष्य जामाता तथा उनके गोमुखादि मन्त्रियों के सहित उस पर आरूढ़ हो, निज काञ्चनपुर नगर को जा पहुँचे। महाराज वत्सराज ने अपने मुख्य मन्त्री यौगन्धरायण को युवराज के साथ कर दिया। नरवाहनदत्त ने वहां पहुँचकर देखा कि उनके ससुर का नगर बिलकुल सुवर्णही का बना है, रत्नमिश्रित हेममय प्राकार से जो किरणें छिटकती थीं तो यही जान पड़ता था कि वह नगरी मानो अनेक हाथों को फैलाकर नरवाहनदत्त का स्वागत कर रही है। राजा हेमप्रभ ने बड़े समारोह के साथ निज कन्या का विवाह रचा और अपनी राजकुमारी रत्नप्रभा को रत्नालङ्कार की राशियों के साथ नरवाहनदत्त को यों दिया जैसे रत्नाकर ने अपनी सुता लक्ष्मी को विष्णुभगवान् के समर्पण किया था। राजा हेमप्रभ ने उस नगरी में उत्सव कर हेम और अनेक प्रकार के वस्त्रों की खूबही वर्षा की, नगरी में जो घर घर भिन्न भिन्न रङ्ग की पताकायें फहरा रही थीं उनसे जान पड़ता था कि वहां के गृहों को भी वस्त्र बांटे गये हैं। विवाह हो जाने के उपरान्त, युवराज नरवाहनदत्त अपनी भार्य्या रत्नप्रभा के साथ दिव्य भोगों का उपभोग करते हुये कुछ दिनों तक उसी पुरी में रहे। और भार्य्या की विद्या के प्रभाव से आकाशसञ्चारी विमानों पर उसके साथ आरोहण कर अनेक दिव्य उद्यान और वापी तथा देवमन्दिरों के दर्शनों से चित्त का विनोद करते रहे।

कुछ दिनों तक वहां इस प्रकार आनन्दपूर्वक निवास कर, युवराज नरवाहनदत्त ने, यौगन्धरायण की अनुमति से निज राजधानी कौशाम्बी को, अपनी भार्य्या के सहित लौट आने का विचार किया। यह जान, सास ने अनेक प्रकार के मङ्गल सामान एकत्र किये और ससुर ने उनका भली प्रकार पूजन किया। इसके अनन्तर नरवाहनदत्त ने भार्य्या और अपने मन्त्रियों के सहित उसी आकाशसञ्चारी विमान पर आरोहण कर निज नगरी के लिये प्रस्थान किया, राजा हेमप्रभ भी अपने पुत्र वज्रप्रभ के साथ राजकुमारी को पहुँचाने के निमित्त साथही साथ आये। इस धूमधाम के साथ युवराज नरवाहनदत्त अपनी माता के नेत्रों को आनन्द देते हुये अपनी भार्य्या तथा सब लोगों के साथ कौशाम्बी में आन पहुँचे जहां नगरनिवासियों ने पहिलेही से अनेक प्रकार के मङ्गल सामानों से नगर को शोभाय-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मान कर उत्सव मनाया था। पुत्र और वधू दोनों ने जाते ही महाराज तथा रानी के चरणों में प्रणाम किया और उन लोगों ने प्रेम से आशीर्वाद दे उन्हें अभिनन्दन किया तथा महाराज वत्सराज ने अपने विभव के अनुसार निज सम्बन्धी राजा हेमप्रभ और उनके पुत्र का सत्कार किया।

कछु दिन तहां निवास करि हेमप्रभ महराज।
निज सुत सङ्ग पयान किय लीन्हे सकल समाज॥
मदनमंचुका औ प्रिया रत्नप्रभा समेत।
नरवाहन विहरत भये प्रमुदित पितरि-निकेत॥

दूसरा तरङ्ग।

जब नरवाहनदत्त को वह सुन्दरी विद्याधरी रत्नप्रभा नाम की भार्य्या प्राप्त हुई और जब वे एक दिन उसी के साथ अपने रङ्गमहल में अकेले बैठे थे तो प्रातः-काल के समय गोमुख आदि मन्त्री उनके दर्शनों के निमित्त द्वार पर आये। द्वार-पालिनी ने कहा कि आप लोग तनिक यहां ठहरिये मैं युवराज को आपके आने की सूचना दे लूं तो जाइयेगा, वे लोग वहीं ठहर गये और उसने जाकर सूचना दी कि श्रीमान् के मन्त्री लोग आपके दर्शन करने की इच्छा से आये हैं मैं उन्हें द्वार पर ठहरा के आप से निवेदन करने आई हूं। युवराज ने कहा कि उन्हें आने दो। इस प्रकार आज्ञा पाकर जब वे लोग युवराज के समीप आन प्रणाम कर आदरपूर्वक बैठ गये तो रत्नप्रभा उस द्वारपालिनी से कहने लगी, यदि भविष्य में मेरे आर्य्यपुत्र के ये सखा लोग यहां आवें तो इन्हें द्वार पर मत रोकना क्योंकि ये लोग हमें अपने शरीर से अधिक प्रिय हैं और दूसरी बात यह है कि मेरी जान में इस प्रकार की द्वाररक्षा उपयुक्त भी नहीं है, फिर वह अपने प्यारे पति से कहने लगी कि हे प्राणनाथ! प्रसङ्गवश मैं जो कहती हूं उसे सुनिये—

स्त्रियों की रक्षा जो इस प्रकार की जाती है वह मेरी जान एक नीतिमात्र है, जो ईर्ष्या अथवा मोह के कारण होती है, यथार्थ में उससे कोई कार्य्यसिद्धि नहीं होती, क्योंकि कुलस्त्रियों की रक्षा केवल उनके शील और धर्म्मही से होती है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चपला नारियों की रक्षा मनुष्य की कौन कहे ब्रह्मा भी नहीं कर सकते, मत्ता नदी तथा उन्मत्ता नारी को रोकने में कौन समर्थ है ? । सुनिये मैं आपसे एक कथा कहती हूं

समुद्र के मध्य में रत्नकूट नामक एक भारी द्वीप है, जहां महोत्साही, परम वैष्णव और यथार्थ नामधारी राजा रत्नाधिपति प्राचीन समय में हो गये हैं। उन्होंने समग्र पृथ्वी के जीतने और सब राजाओं की पुत्रियों को अपनी भार्य्या बनाने के निमित्त श्रीविष्णुभगवान् की आराधना में अत्यन्त कठिन तपस्या की। सन्तुष्ट हो भगवान् ने साक्षात् में उसे यह आज्ञा दी कि "हे राजन्! उठ खड़े होओ, मैं तुम पर सन्तुष्ट हो जो कहता हूं उसे सुनो। कलिङ्गदेश में कोई गन्धर्व मुनि के शाप से खेत गज के रूप में उत्पन्न हुआ है नाम उसका श्वेतरश्मि है, पूर्वजन्म की तपःसिद्धि के कारण तथा मेरी भक्ति के प्रसाद से वह इस जन्म में ज्ञानी, आकाशचारी, तथा पहिले जन्म की बातों का जाननेवाला है। उस हाथी को मैं स्वप्न में आज्ञा दूंगा और वह आकाश से उड़ता हुआ स्वयं ऐरावत तुल्य आपके समीप आन उपस्थित होगा, आप उसे अपना वाहन बनाइयेगा। फिर उस श्वेत हस्ती पर इन्द्र की नाईं आरोहण कर जहां जहां आप आकाशमार्ग से जांयगे वहां वहां के राजा दिव्य अनुभव से भयभीत हो और स्वप्न में मेरी आज्ञा पा अपनी २ राजपुत्रियों को आपकी भेंट करेंगे । इस प्रकार आप सारी पृथ्वी का विजय कर अपने अन्तःपुर के लिये अस्सी सहस्र रानियां प्राप्त करेंगे"। ऐसा कह जब श्रीविष्णुभगवान् अन्तर्धान हुये तो राजा ने व्रत का पारण किया, दूसरे दिन देखते क्या हैं कि वह शुभ हाथी आकाशमार्ग से उड़कर आन उपस्थित हुआ। जैसी विष्णुभगवान् की आज्ञा थी राजा ने उस हाथी पर आरोहण कर विजय यात्रा की और समग्र पृथ्वी को जीत राजकन्याओं को ले आये, जिनकी संख्या अस्सी सहस्र हुई। इन सब रानियों के साथ वे रत्नकूट पर रहते और इच्छानुसार विहार करते थे, और उस दिव्य हाथी शीतरश्मि की शान्ति के लिये वे नित्य पांच सौ ब्राह्मणों को भोजन कराते थे।

एक समय राजा रत्नाधिपति उस दिव्य हाथी पर चढ़ अनेक द्वीपों में भ्रमण करते हुये अपने द्वीप को लौटकर आये। जिस समय वह हाथी आकाश से उतर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहा था कि गरुड़वंश के किसी पच्ची ने उस हाथी के मस्तक पर अपने चोंच से अचानचक आघात किया। राजा ने तीक्ष्ण अङ्कुश से उस पच्ची को मारा, वह तो उड़ गया परन्तु हाथी, चोंच के आघात से भूमि पर मूर्छित हो गिर पड़ा। महाराज तो उतर पड़े किन्तु सुधि आने पर भी वह हाथी उठाये न उठता था, उसका खाना पीना सभी छूट गया। पांच दिन लों वह हाथी वहीं पड़ा रहा, महाराज ने भी उसके दुःख से दुःखित हो आहार परित्याग दिया और यों कहा कि "हे लोकपालो! मुझे बताओ कि मैं इस सङ्कट में क्या करूँ नहीं तो मैं अपना सिर काट कर चढ़ा देता हूं"। इतना कह ज्योंही महाराज ने अपना सिर काटने के लिये तलवार उठाया त्योंही यों आकाशवाणी हुई कि "हे राजन्! आप ऐसा साहस मत करिये, यदि कोई साध्वी स्त्री इसे अपने हाथ से छू देवै तो यह इसी चण उठ खड़ा होगा।" यह सुन महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुये और उसी चण उन्होंने अपनी मुख्य रानी अमृतलता को जिसकी बड़ी रचा होती थी वहां बुलवा भेजा। उनने हाथी को छूआ किन्तु वह उठा नहीं, इसके अनन्तर राजा ने अपनी सब रानियों को बुलाया। क्रमशः उन अस्सी सहस्र रानियों ने पारी पारी से उसे छूआ किन्तु वह हाथी एक तिल भी अपने स्थान से न टसका और कोई भी उनमें से सती न ठहरी। उन अस्सी सहस्र अन्तःपुर की रानियों में से जब एक भी उस हाथी को खड़ा न कर सका तो महाराज लोगों के साम्हने अत्यन्त लज्जित हुये। तदनन्तर महाराज ने नगर की सभी स्त्रियों को क्रमशः बुला बुला कर हाथी को छुआया किन्तु किसी से भी अभिप्रायसिद्धि न हुई। यह देख महाराज को बड़ी लज्जा उत्पन्न हुई और आश्चर्य भी हुआ कि क्या मेरे सारे राज्य में एक भी साध्वी स्त्री नहीं है। इतनेही में ताम्रलिप्ति * नामक पुरी से कोई हर्षगुप्त नामक बनियां वहां आया। वह इस हाल को सुनकर कौतुक के साथ

* ताम्रलिप्ति उसी स्थान का नाम है जिसे आजकल तामलुक कहते हैं। इस प्रान्त में प्रायः वेही सब प्रदेश हैं जो हुगली नदी के पश्चिम ओर पड़ते हैं, जिसके उत्तर में बर्दवान से कलना तक प्रदेश हैं और दक्खिन में कोसई नदी का किनारा चला गया है। (जेनरल कनिङ्गहाम की भारतवर्षीय प्राचीन भूगोल में ऐसा लिखा है, पन्ना ५०४)।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस विचित्र बात को देखने के निमित्त वहां पहुँचा जहां हाथी पड़ा था। उसके पीछे पीछे उसकी एक पतिव्रता दासी भी वहां पहुँची जिसका नाम शीलवती था, वह इस कौतुक को देख कहने लगी कि "मैं इसे हाथ से छूती हूं यदि मैंने अपने पति को छोड़ कभी ध्यान से भी दूसरे पुरुष की इच्छा न की हो तो यह हाथी उठ खड़ा होवे" । इतना कह उसने समीप जाकर उस हाथी को छूआ और वह उसी क्षण स्वस्थ हो उठ खड़ा हुआ और खाने पीने लगा । सब लोग यह आश्चर्य्य देख, शीलवती के बारे में कहने लगे कि धन्य है! ऐसी साध्वी स्त्रियां संसार में बिरली पाई जाती हैं ये साक्षात् शिवजी की शक्ति के समान हैं और संसार का सिरजना, पालना, तथा नाश करना इनके हाथ में रहता है । महाराज रत्नाधिपति भी सन्तुष्ट हो उसकी प्रशंसा करने लगे और उन्होंने असंख्य उत्तमोत्तम रत्नों से सती शीलवती का घर पूर्ण कर दिया। फिर उसके स्वामी हर्षगुप्त बनिये का भी राजा ने बड़ा सत्कार किया और अपने राजप्रासाद के समीपही एक घर उसे रहने के लिये पुरस्कार में दिया । तदुपरान्त राजा ने अपनी सब रानियों का संसर्ग छोड़ दिया उन्हें केवल खाने को भोजन पीने को जल और पहिनने को वस्त्र दिया जाता था।

महाराज ने स्नान, पूजन और भोजन से निवृत्त होने के उपरान्त उस साध्वी शीलवती को अपने यहां बुलवा भेजा और हर्षगुप्त के सन्मुख उससे कहने लगे कि हे शीलवति! यदि तुम्हारे पितृकुल से कोई कन्या हो तो उसे मुझे दिलवा दो क्योंकि वह भी निस्सन्देह तुम्हारीही जैसी सती होगी । महाराज के ऐसे बचन सुन शीलवती ने उत्तर दिया कि "हे राजन्! ताम्रलिप्ती नगरी में मेरी बहिन राजदत्ता नाम की है, वह अत्यन्त सुन्दरी है यदि आपकी इच्छा हो तो उससे विवाह कर लीजिये" । उसका ऐसा भाषण सुन, महाराज ने कहा कि बहुत अच्छा मुझे यह स्वीकार है। फिर दूसरे दिन विवाह का निश्चय ठान, महाराज शीलवती और हर्षगुप्त के साथ उस आकाशगामी श्वेतरश्मि पर चढ़ ताम्रलिप्ति को चले और हर्षगुप्त बनिये के स्थान पर जाकर टिके । वहां ज्यौतिषियों को बुलाकर उन्होंने शीलवती की बहिन राजदत्ता के विवाह का लग्न पूछा। दोनों का जन्मनक्षत्र पूछ कर गणकों ने उत्तर दिया कि हे राजन्। आप दोनों के वि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वाह का शुभ लग्न आज से तीन महीने को निकलता है । यदि ऐसे ग्रहों की योजना में जैसा अब है आप विवाह कर लेंगे तो हे प्रभो ! यह राजदत्ता अवश्य-ही असाध्वी हो जायगी। राजा को सुन्दरी भार्य्या प्राप्त करने की धुन लग रही थी, वह अकेले कब रह सकते थे, सो गणकों का ऐसा कहना सुनकर भी वे मन में सोचने लगे कि इन व्यर्थ के बिचारों से कुछ लाभ नहीं है मैं आजही राजदत्ता से विवाह करूँगा, वह परम शुद्धा शीलवती की बहिन है कभी भी असती नहीं हो सकती। मैं इसे उसी गृह में निवास दूंगा जो समुद्र के बीचवाले टापू में है, जहां मनुष्य की गन्ध भी नहीं पहुँच सकती। उसी दुर्गम स्थान में रखकर अनेक स्त्रियों को इसकी सेवा के लिये नियत कर दूंगा, फिर पुरुष के दर्शन तो वहां होंहीगे नहीं वह असती कैसे होगी। ऐसा निश्चय कर उसी दिन राजा ने राज-दत्ता से विवाह किया, जिसे उसकी बहिन शीलवती ने विधिवत् उन्हें समर्पण किया। विवाह हो जाने के अनन्तर महाराज, निजबधू, हर्षगुप्त और शीलवती के साथ उसी श्वेतरश्मि पर आरोहण कर निज राजधानी रत्नकूट को आकाशमार्ग द्वारा क्षण भर में आ पहुँचे, जहां समग्र प्रजा उनका मार्ग उत्साहपूर्वक देख रही थी। वहां पहुँच महाराज ने पुनः शीलवती को बहुत कुछ दिया, उसके सभी मनोरथ पूर्ण हुये और उसने निज साध्वीव्रत का फल पाया। तदुपरान्त महाराज राजदत्ता को उसी आकाशसञ्चारी हाथी पर चढ़ा के उस विचारे हुये द्वीप में ले गये जो समुद्र के बीच में था, और जहां मनुष्य की गन्ध भी न जा सकती थी। वहां महाराज ने अनेक दासियों को निज रानी को सेवा के लिये नियत कर दिया। जिन जिन वस्तुओं को आवश्यकता उसे होती उन उन वस्तुओं को महा-राज उसी हाथी पर लाद आकाशमार्ग से वहां पहुँचा देते थे। उसके प्रेम में अनु-रक्त हो महाराज रात को वहीं रहते, और दिन को राजकाज देखने के लिये अपनी राजधानी को लौट आते थे। एकदा प्रातःकाल के समय किसी दुःस्वप्न को नाश करने के लिये महाराज ने रानी के साथ मङ्गलपान किया। पान से उन्मत्त होने के कारण उस दिन रानी उन्हें न छोड़ती थी किन्तु किसी प्रकार उसे वहां छोड़ महाराज राजकाज देखने के लिये अपनी राजधानी को चले आये, क्योंकि राजतारूपी भार्य्या को सब के पूर्व देखना चाहिये । यद्यपि महाराज यहां का

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सब कामकाज देख रहे थे किन्तु उन्हें रह रह के यही चिन्ता होती थी कि क्यों वे पानोन्मत्ता रानी को वहां अकेली छोड़ आये। उधर राजदत्ता उस अति दुर्गम स्थान में अकेली बैठी थी क्योंकि उसकी दासियां सब रसोईं इत्यादि के प्रबन्ध तथा घर के कामकाज में लगी थीं। रानी ने देखा कि साम्हने से कोई पुरुष चला आता है, ब्रह्मा ने मानो उसकी रचा से डाह खाकर उस व्यक्ति को वहां ला दिया। उस व्यक्ति को वहां देखतेही रानी को बड़ा आश्चर्य हुआ और उनने उससे पूछा कि तू कौन है और क्योंकर इस अगम्य स्थान में तेरा आना हुआ। मदोन्मत्ता राजदत्ता से पूछे जाने पर उस व्यक्ति ने जो अनेक कष्टों को उठाकर वहां पहुँचा था, यों उत्तर दिया कि—

हे मुग्धे! मैं मथुरा जी का रहनेवाला यवनसेन नामक बणिक्पुत्र हूं। पिता की मृत्यु के उपरान्त मैं अनाथ हो गया और मेरे गोत्रवालों ने मेरा सब धन छीन लिया सो मैं परदेश में जाकर दूसरों की सेवा कर अपना पेट पालने लगा। अत्यन्त कष्ट सहकर, किसी किसी प्रकार मैंने वाणिज्य कर थोड़ा सा धन बटोरा और दूसरे देश जाने की इच्छा की, जब वहां से चला तो रास्ते में डाकुओं ने मुझे लूट लिया, फिर मैं कतिपय भिक्षा मांगनेवालों के साथ जो मेरेही समान दरिद्र थे, मांगता खाता कनकक्षेत्र नामक स्थान में पहुँचा जहां रत्नों की खान है। वहां मैंने राजा का भाग देने की प्रतिज्ञा कर रत्नों के खान खोदने का काम आरम्भ किया किन्तु लाख उद्योग करने पर भी मुझ भाग्यहीन को एक वर्ष पर्यन्त अर्थात् ठीके की अवधि लों एक भी रत्न न मिला। मेरे दूसरे साथी रत्न पा पाकर प्रसन्न होते थे किन्तु मेरे भाग्य में एक भी रत्न न लिखा था। अन्त में दुःखित हो समुद्रतट पर लकड़ियां चुनने लगा। चिता प्रस्तुत कर मैं उसमें प्रविष्ट हो अग्नि लगानेही को था कि इतने में जीवदत्त नामक कोई बनियां वहां आ पहुँचा, वह स्वर्णद्वीप को जा रहा था, सो उसने मुझे मरने से रोक अपने साथ समुद्रयान पर चढ़ा लिया और ले चला। हमलोग समुद्रयात्रा करही रहे थे कि पांचवां दिन बीत जाने पर अकस्मात् एक ओर से काले मेघों का दर्शन हुआ और मुसलाधार वृष्टि होने लगी तथा च वायु का वेग भी अत्यन्त भयङ्कर हुआ। इस वायुवेग तथा वृष्टि में पड़ने के कारण वह समुद्रयान उन्मत्त हाथी के सिर की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नाईं झूमने लगा दुर्भाग्यवश वह दूसरेही चण टुकड़े टुकड़े हो गया, मैं भी जल में जा पड़ा किन्तु डूबते डूबते एक पटड़ा जो मेरे हाथ लग गया तो मुझे कुछ सहारा हो गया। मैं उसी पर चढ़ बैठा और कुछ काल में इधर उधर जल की हिलोरों में टक्कर खाता बहता रहा। थोड़ी देर में भाग्यवश आंधी पानी बन्द हो गया और मैं बहता हुआ इस टापू पर आ लगा, सो पटड़े से उतर बन में पैठा कि कुछ भोजन के लिये खोजूं क्योंकि मैं भूख के मारे अधमूआ हो रहा था। कुछ कन्दमूल से क्षुधा मिटा भटकता हुआ इधर आ निकला और इस उत्तम अटारी को देख इधर जो बढ़ा तो हे शुभे! निज दृष्टि को सुधा से सींचनेवाले आपके चन्द्रमुख का दर्शन हुआ जिससे सब ताप शान्त हो गया।

उसका इतना कहना सुन, राजदत्ता ने, जो मद और मदन दोनों के कारण उन्मत्त हो रही थी उसे अपने पर्यङ्क पर बैठा लिया और गले लगा प्यार करने लगी। सच किसी कवि ने कहा है कि "यौवन, मद, एकान्त पुनि, पुरुष लाभ, अनटोक। शील तिनूका क्यों बचै पंचअग्नि के झोंक" ॥ यदि रानी उस अकाम्य, विपद् के मारे पर मुग्ध हो गई तो क्या आश्चर्य है क्योंकि "मदनविमोहित नारि कहँ, होत न नेक विचार"। इतने में राजा रत्नाधिपति राज का काम समाप्त कर बड़े उत्साह से उस आकाशसञ्चारी हाथी पर चढ़ रत्नकूट से चलकर उस द्वीप में आन पहुँचे। अन्दर पैठतेही देखते क्या हैं कि उनकी रानी राजदत्ता उस दरिद्री के गले में हाथ डाले पर्य्यङ्क पर बैठी है। ज्योंही महाराज ने उसे मारने की इच्छा से खड्ग उठाया कि वह गिड़गिड़ाता हुआ पैरों में आन गिरा और त्राहि मां, त्राहि मां मैं शरणागत हूं कहने लगा। महाराज ने उसे छोड़ दिया और भार्य्या को मद में चूर तथा डरी हुई देख विचारने लगे कि मद्य पीनेवाली स्त्री भला कामदेव के झोंक में पड़कर क्योंकर सती रह सकती है। "चपला नारी का कबहुं विधिहु सकत नहिं रोक। आंधी प्रबल प्रचण्ड कहँ, कौन सँभाले झोंक"? ॥ मैंने जो गणकों का कहना न माना उसी का यह फल है, ठीकही है "किये निरादर बड़न के वचनवृद्ध सन्मान। परम अमङ्गल को अवस कटु फल फरत

निदान" ॥ जब मैंने यह सोचा था कि यह शीलवती की बहिन है अवश्य साध्वी होगी उस समय इतना विचारना भूल गया था कि समुद्रही से अमृत और विष दोनों उत्पन्न हुये हैं, अथवा मनुष्य की शक्तिही कितनी है जो असम्भव कामों को सम्भव कर दिखनेवाले ब्रह्मा के कार्य्यों में हस्तक्षेप करे। यह बिचार महाराज ने किसी पर भी क्रोध न किया और उस दबके हुये कामुक बणिक्पुत्र को उसका हाल सुन छोड़ दिया। वहां से अपनी जान ले वह बणिक्पुत्र सीधा समुद्र तट पर चला आया, उसने देखा कि कोई समुद्रयान दूर सागर में जा रहा है। वह पुनः उसी तख्ते पर बैठ जल में आगे बढ़ा और जोर से चिल्ला चिल्लाकर पुकारने लगा "हे महाशयो! मेरी जान बचाओ नहीं तो मैं डूबा चाहता हूं।" उस जहाज पर कोई क्रोधवर्धन नामक बनियां व्यापार के निमित्त यात्रा कर रहा था। उसने यवनसेन की चिल्लाहट सुनी और अपना जहाज समीप ला उसने उस डूबते हुये बणिक्पुत्र को उठा लिया और अपना साथी बनाया। किन्तु ब्रह्मा ने जिसका जैसा नाश होना स्थिर कर दिया है वह चाहे जहां भागता फिरे, बलवान् कर्म्म उसके पीछे पीछे जाता है। इसी बणिक्पुत्र का हाल देखो कि वहां कुछ दिन रहने पर वह मूढ़ उस क्रोधवर्धन की भार्य्या से फँस गया और क्रोधवर्धन ने जब उसका यह कुकर्म्म देखा तो उठाकर समुद्र में फेंक दिया जहां वह मगरमच्छों का भोजन बन गया।

उधर महाराज रत्नाधिपति बिना क्रोध किये, राजदत्ता को, सब सखियों और दासियों के सहित श्वेतरश्मि पर बैठाल रत्नकूट को आ पहुँचे और उसे शीलवती के समर्पण कर उन्होंने सारा हाल उसे तथा मन्त्रियों को सुनाया और कहा कि 'हा! मैंने इन असार और विरस भोगों में आसक्त हो कितना दुःख उठाया, अब मैं बन में जाकर हरिभगवान की शरण लूंगा जिसमें पुनः मुझे ऐसे दुःखों का अनुभव न करना पड़े। यद्यपि शीलवती और उनके मन्त्री लोग महाराज को बहुत कुछ रोकतेही रहे किन्तु उनके चित्त में कुछ ऐसा वैराग्य हुआ कि उन्होंने अपना वह दृढ़ सङ्कल्प परित्याग न किया। बस संसार की भोगवासना से मुंह मोड़ महाराज ने निज कोष के दो भाग किये, एक भाग तो उन्होंने उस साध्वी शीलवती को दिया और दूसरा भाग ब्राह्मणों को बांट दिया। तदनन्तर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अपना सारा राज्य पापभञ्जन नामक एक गुणी ब्राह्मण को यथा विधि देकर महाराज ने तपोवन में आकाशद्वारा जाने की इच्छा से श्वेतरश्मि हाथी को बुलवाया। नगरनिवासी लोग आंखों में आंसू भरे चुपचाप शोक में निमग्न, यह सब देख रहे थे कि श्वेतरश्मि को हस्तिरचक ले आया, आतेही वह हाथी भूमि पर लोट शरीर परित्याग कर हारकेयूर से भूषित एक दिव्य पुरुष हो गया, जिसे देख लोगों को परम आश्चर्य हुआ। राजा ने जब इस कौतुक से विस्मित हो पूछा कि 'यह क्या वृत्तान्त है और आप कौन हैं?' तो वह दिव्य पुरुष कहने लगा कि मलय पर्वत पर निवास करनेवाले हम दो भाई पूर्वजन्म में थे। बड़े का नाम देवप्रभ था और मैं छोटा हूं जिसका नाम सोमप्रभ है। मेरे भाई की एक भर्य्या थी जो उन्हें अत्यन्त प्यारी थी, नाम उसका राजवती था। वे सदा उसे अपने साथ रखते और क्षण भर भी दूर न करते थे। एक समय हम दोनों भाई और मेरी भाभी घूमते फिरते सिद्धवास नामक स्थान में जा निकले जहां अनेक ऋषि और सिद्ध महात्मा रहते थे। वहां पहुँच हमलोगों ने स्नान इत्यादि से निवृत्त हो श्रीविष्णुभगवान् का पूजन किया और सब कोई उनके साम्हने मन्दिर में बैठ गाने बजाने लगे। मेरी भाभी का गाना बहुतही सुरीला और मनोहर था सो उसे सुनने के लिये एक सिद्ध जन आकर खड़े हो गये और एक टक उसकी ओर देखने लगे। मेरे भाई को यह देख क्रोध आया सो वे ईर्षा से सिद्धजी को डांट कहने लगे—"क्यों बे! तू सिद्ध होकर भी पराई स्त्री को ओर कामदृष्टि से देखता है! तुझे लज्जा नहीं आती?" यह सुन सिद्ध ने कोप से कहा कि 'रे मूढ़! मैं तो केवल गीत के आश्चर्य्य से उसकी ओर देखता था न कि किसी कामभावना से"। इतना कह उन्होंने शाप दिया कि 'जा रे ईर्ष्यालु! तू अपनी भार्य्या के साथ मर्त्ययोनि में जन्म ले और वहां अपनी आंखों से इसे दूसरे के साथ रमण करते देख'। सिद्ध का ऐसा बचन सुन मुझे जो क्रोध आया तो मैंने बालचपलता से मिट्टी का एक श्वेत हाथी जो वहीं पड़ा था उन पर कोप से खींच मारा। उन्होंने मुझे भी यों शाप दिया कि "जैसे श्वेत हाथी से तूने हमें मारा है जा तू वैसाही श्वेत हाथी होकर संसार में जन्म ले।"

तब तो मेरे भाई देवप्रभ ने बिनीत हो उनके दोनों चरण धर लिये और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बहुत कुछ बिनती की । कृपामय सिद्धजी ने दयाकर हम सबों के शाप का उद्धार यों कहा कि "यद्यपि तेरा मनुष्य का जन्म होगा तथापि श्री विष्णु भगवान् की कृपा से तू एक द्वीपका अधीश्वर हो अपने इसी छोटे भाई को जो हाथी होकर जन्मेगा दिव्य वाहन रूप से पावेगा । तेरे अन्त:पुर में अस्सी सहस्र रानियां होंगी, उनका दु:शील तू सब लोगों के सन्मुख जानकर परम लज्जित होगा । तदुपरान्त तेरा बिवाह इसी भार्य्या से होगा जो मनुष्य योनि में जन्म लेगी और तू इसे प्रत्यच्च में दूसरे के साथ रमण करते देखेगा । तदुपरान्त विरक्त हो अपना सारा राज्य एक ब्राह्मण को दे, शान्तभाव धारण कर जब तू बन जाने को उद्यत होगा तो पहिले यह तेरा छोटा भाई गजयोनि से मुक्ति पावेगा तदनन्तर तू भी अपनी इस भार्य्या सहित शाप से छूट जावैगा । इस प्रकार शाप का उद्धार सिद्ध जी ने नियत किया और प्राचीन जन्म के भिन्न भिन्न कर्म्मानुसार हमलोगों का जन्म जो भिन्न भिन्न रीति पर हुआ था उसका आज उद्धार हुआ ।

सोमप्रभ का ऐसा भाषण सुन राजा रत्नाधिपति को अपने पूर्व जन्म का वृत्तान्त स्मरण हो आया सो उन्होने कहा, ठीक है, अब मुझे स्मरण आया कि मैं वही देवप्रभ हूं, और यह राजदत्ता मेरी वही पत्नी राजवती है" । इतना कह उन्होंने भी उस भार्य्या के साथ निज शरीर को परित्याग कर दिया और उसी च्चण सब के सब गंधर्व होकर, लोगों के देखतेही देखते आकाश में उड़ अपने धाम मलयाचल को चले गये । शीलवती अपने सतीत्व धर्म के माहात्म्य से सम्पति को पाकर ताम्रलिप्ती पुरी में जाकर धर्म का सेवन कर रहने लगी ।

सो हे आर्य्यपुत्र ! कहने का तात्पर्य्य यह कि कोई भी बलपूर्वक नारी की रच्चा कर उसका सतीत्व नहीं बचा सकता, कुलयुवती की रच्चा केवल उसका सतीत्व रूपी पाशबन्धही कर सकता है ।

ईर्षा निज दुखदायिनी औरनहू दुख देत ।
याते रच्चा होत नहिँ प्रत्युत हानि-निकेत ॥
यों निज नारी की कही कथा सुनी हर्षाय ।
सचिव सङ्ग प्रमुदित भये श्री नरबाहनराय ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीसरा तरङ्ग।

रत्नप्रभा की कही हुई इस कथा के प्रसङ्ग से मन्त्री गोमुख ने युवराज नरवाहनदत्त से कहा कि सच है साध्वी नारियां बिरलीही होती हैं, क्योंकि स्त्रियां स्वभावत: चपल रहती हैं, हे देव! इनका विश्वास कभी करना उचित नहीं है। सुनिये मैं इस पर एक कथा कहता हूं—

उज्जयिनी नाम एक जगत्प्रसिद्ध नगरी है वहां प्राचीन समय में निश्चयदत्त-नामक कोई वणिक्पुत्र रहता था। वह जुआरी था और उसी जूये द्वारा उसने बहुत सा धन एकत्र किया था। वह उदार व्यक्ति नित्य सिप्रा नदी में स्नान करके श्रीमहाकाल महादेवजी का पूजन करता और उसका यह नियम था कि ब्राह्मण, दीन तथा अनाथों को दान देने के उपरान्त वह अपने शरीर में चन्दन लगा भोजन कर ताम्बूल खाता था।

प्रति दिन, वह स्नान पूजन से निवृत्त हो श्रीमहाकालेश्वरजी के समीपवर्ती श्मशान में जा शरीर में चन्दनादिक लगाता। दूसरे अङ्गों में तो वह सरलतापूर्वक चन्दन लगा लेता किन्तु पीठ में लेपन करती समय उसे बड़ी दिक्कत उपस्थित होती, सो वह एक पत्थर के खम्भे में पहिले चन्दन थोप देता, तदनन्तर अपनी पीठ उसी पर घँस लेता था। कुछ दिनों में वह खम्भा अत्यन्त चिकना हो गया, एक समय उसी मार्ग से जहां वह खम्भ था किसी चित्रकार और रूपकार का आना हुआ। चित्रकार ने खम्भे को चिकना देख उसमें श्रीगौरीजी की मूर्ति लिख दी और रूपकारने उसे खोदकर उस मूर्ति का आकार और भी स्पष्ट कर दिया। उन दोनों के चले जाने पर कोई विद्याधरी श्रीमहाकालेश्वरजी का पूजन करने आई उसने उस मूर्ति को देखा। मूर्ति की स्वच्छता देख उसने समझा कि अवश्य श्रीदेवीजी का सानिध्य इसमें होगा सो वह पूजन के अनन्तर विश्राम के निमित्त उसी खम्भ में पैठ गई। इतने में वह वणिक्पुत्र निश्चयदत्त भी यथानियम आ पहुंचा और श्रीउमादेवी की मूर्ति उस खम्भ में खुदी पाय परम आश्चर्य से उसे देखने लगा। फिर शरीर के अन्य अङ्गों में चन्दन लगा उस खम्भे के दूसरे भाग में उसने चन्दन पोता और पीठ घसने लगा। यह देख वह चञ्चल नेत्रवाली विद्या-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धरी जो उस खम्भ के अन्दर बैठी थी उसके रूप पर मोहित हो विचारने लगी कि इस पुरुष के इतने सुन्दर होने पर भी क्या इसके शरीर में चन्दन लगानेवाला कोई नहीं है ? तो अच्छा मैंही इसकी पीठ में चन्दन लगा देती हूं। ऐसा विचार वह विद्याधरी खम्भ के बाहर हाथ निकाल स्नेह से उसीके पीठ में चन्दन लगाने लगी। निज पीठ में किसी के हाथ का स्पर्श अनुभव कर और कङ्कण की झनकार सुन, उस वणिक्पुत्र ने पीछे फिरकर देखा और झट उस हाथ को धर लिया। वह विद्याधरी खम्भ के अन्दरही से कहने लगी कि हे महाभाग ! मैंने आपका क्या अपराध किया है ? आप मेरा हाथ छोड़ दीजिये। निश्चयदत्त ने कहा कि तुम प्रत्यक्ष होकर कहो कि तुम कौन हो तो मैं तुम्हारा हाथ छोड़ दूं। विद्याधरी ने कहा कि मैं शपथपूर्वक कहती हूं कि मैं प्रत्यक्ष होकर सब हाल तुमसे कहूंगी तुम मेरा हाथ छोड़ दो। यह सुन, उसने हाथ छोड़ दिया और वह सर्वाङ्गसुन्दरी विद्याधरी खम्भ से बाहर निकल वहीं बैठ उसके मुख की ओर एक टक निहार यों कहने लगी कि—

हिमालय पर्वत पर पुष्करावती * नाम की एक नगरी है जहां विन्ध्यपर नामक विद्याधरों के एक राजा रहते हैं। मैं उनकी कन्या हूं, नाम मेरा अनुरागपरा है। यहां श्रीमहादेवजी के पूजन के निमित्त आई थी और इसी खम्भ के अन्दर विश्राम कर रही थी, देखा कि आप खम्भ में चन्दन लगा कर उस पर पीठ रगड़ रहे हैं। आपको देखतेही प्रथम तो मेरा चित्त अनुराग से रञ्जित हो गया तदनन्तर मेरा हाथ आपकी पीठ पर चन्दन लगाने से शीतल हुआ। इसके उपरान्त जो हुआ सो तो आप जानतेही हैं। अब मैं अपने पिताजी के घर को जाती हूं।

यह सुन, वणिक्पुत्र ने कहा कि हे सुन्दरि ! आपने जो मेरा मन हर लिया है वह अब लौं लौट कर मेरे पास नहीं आया, सो पराये का मन बिना छोड़े आप भला कैसे चली जाती हैं !" उसके ऐसा कहने पर विद्याधरी के हृदय में प्रेम उमड़ आया सो वह बोली कि "यदि आप हमारी पुरी में आवैंगे तो वहां मैं आपसे विवाह करूँगी। वहां पहुँचना कुछ कठिन नहीं है, उद्योग करने से

* यह स्थान कदाचित् वही है जो कनिङ्हाम साहब के भूगोल में पुष्कलावती के नाम से लिखा है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आपका मनोरथ सुफल होगा, क्योंकि उत्साहियों के आगे कोई भी काम कठिन नहीं होता।” इतना कह अनुरागपरा तो उड़कर चली गई और निश्चयदत्त उसी का ध्यान करता हुआ अपने घर को लौट आया। वह उस खम्भरूप वृक्ष से निकले हुये करपल्लव को स्मरण कर करके बार बार यही कहता था कि धिक् है मुझे जो मैं उसका पाणिग्रहण करके भी पाणिग्रहण न करने पाया। अब मैं पुष्करावतीपुरी में जाकर उससे मिलूंगा, या तो दैव मेरी सहायताही करैंगे या मैं अपने प्राणही परित्याग करूँगा।” यों विचारता हुआ, कामदेव के बाणों से पीड़ित हो वह दिन तो उसने किसी किसी प्रकार बिताया, प्रातःकाल होतेही उठकर उत्तर की ओर चला। मार्ग में उसे तीन वणिक्पुत्रों से भेंट हुई जो उसी ओर जा रहे थे, उन लोगों ने इसे अपने साथ ले लिया। उनके साथ वह क्रमशः अनेक नगरों, गांवों और जङ्गल तथा नदियों से पार होता हुआ उस प्रदेश में पहुँचा जहां उत्तरीय म्लेच्छों की बस्ती थी।

मार्ग में वह अपने साथियों सहित ताजिकों द्वारा धर लिया गया, जिन्होंने उसे किसी दूसरे ताजिक के हाथ बेच डाला। उसने उन लोगों को अपने सेवकों के हाथ मुरुवार नामक तुरुष्क के पास उपायन (बतौर तोहफा) की रीति से भेज दिया। उन सेवकों ने उसे तथा उन तीनों बणिक्पुत्रों को ले जाकर मुरुवार के पुत्र को दे दिया क्योंकि मुरुवार का देहान्त हो गया था। मुरुवार के पुत्र ने बिचारा कि मेरे पिता के मित्र ने इन्हें “बतौर तोहफे” के मेरे पिता के लिये भेजा है, सो कल प्रातःकाल मैं इन्हें उसी कब्र में डाल दूंगा जिसमें ये लोग उनके पास पहुँच जांय। ऐसा बिचार उनने चारों के हाथ पैर में हथकड़ी और बेड़ी कस दी कि रात को कहीं भाग न जावैं। रात को निश्चयदत्त ने देखा कि उसके वे तीनों साथी मृत्यु के भय के मारे थर थर कांपते चुपचाप पड़े हैं सो उसने उन तीनों से कहा ‘कि भाई इस प्रकार विषाद करने से क्या लाभ है, धीरज धर के चैतन्य होकर बैठो, धीर लोगों के साम्हने से बिपत्तियां डर के मारे आपही भाग जाती हैं, इस समय आपद्विमोचिनी भगवती दुर्गा का स्मरण करो वही हमलोगों की रक्षा करेगी।’ इस प्रकार उन लोगों को भक्ति से धीरज दे वह देवी की स्तुति करने लगा—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नमो नमो हे भगवती शरणागत रखवार ।
तेरे चरणसरोज में हम सब करत पुकार ॥
आदि शक्ति तूही शिवे जगत तिहारो दास ।
विश्वविदित माया प्रबल सब कहँ तेरी आस ॥
हे महिषासुरनाशिनि ! मातु बचाओ आन ।
भक्तवत्सला जगत महँ नाहिन तोहि समान ॥

इस प्रकार अपने मित्रों सहित देवी की स्तुति करता हुआ निश्चयदत्त श्रान्त हो सो गया। स्वप्न में देखता क्या है कि श्रीदुर्गा देवी यों आदेश दे रही हैं कि 'हे पुत्रो ! उठ खड़े होओ और यहां से चले जाओ, तुम्हारे बन्धन खुल गये।' उन सबों की निद्रा खुल गई, देखा तो बेड़ी और हथकड़ी सब टूटी पड़ी हैं। बस परस्पर अपना २ स्वप्न सुना वे लोग प्रसन्नतापूर्वक उठकर चलते हुये। कुछ दूर निकल जाने पर जब रात थोड़ी रह गई तो वे तीनों बणिक्पुत्र जो इस आपत्ति से घबड़ा गये थे निश्चयदत्त से कहने लगे कि हे मित्र ! इस प्रान्त में तो म्लेच्छही म्लेच्छ भरे हैं हम यहां न रहेंगे, हमलोग तो दक्षिण दिशा को जाते हैं तुम्हारे मन में जैसा आवे वैसा करो। उन लोगों का ऐसा कहना सुन उसने उत्तर दिया कि जैसी आप लोगों की इच्छा हो करिये मैं तो उत्तरही को जाऊँगा। बस उन्हें दक्षिण की ओर बिदा कर, अनुरागपरा के अनुरागपाश से खींचा जाकर भय को दबा उसने सीधे उत्तर का मार्ग लिया। चलते चलते उसे चार महाव्रती मिले जिनके साथ वह वितस्ता नदी के पार उतरा। कुछ भोजन कर वह उन महाव्रतियों के साथ आगे बढ़ा, सन्ध्या के समय मार्ग में एक महा बन मिला। ज्योंही बन के अन्दर पैठे कि साम्हने से आते हुये कतिपय लकड़हारों ने जो सिर पर लकड़ी का बोझ लादे चले आते थे कहा कि इस बन में दिन बीतने पर कहां जाते हैं आगे कोई गांव नहीं है, किन्तु हां इस जङ्गल में आगे एक अकेला शिवालय मिलता है, वहां रात के समय जो कोई उसके अन्दर या बाहर ठहरता है वह यक्षिणी का भोजन बन जाता है, क्योंकि वह यक्षिणी उसे मन्त्रबल से बेसुध कर प्रथम उसके सिर में सींग उत्पन्न कर देती है, फिर इस प्रकार पशु बना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसे खा जाती है। इतना सुन वे चारों कहने लगे 'ओह! ऐसी यक्षिणी फक्षिणी बहुत देखी हैं, वह हमारा क्या कर सकती है हमलोग अमुक अमुक श्मशान में रात के समय रह चुके हैं। ऐसा कह वे लोग आगे बढ़े, निश्चयदत्त भी उनके सङ्गही सङ्ग चला गया। कुछ दूर जाने पर वह शून्य शिवालय मिला, सब के सब उसके आंगन में भस्म से एक बड़ा मण्डल बना उसके अन्दर पैठ, आग बाल, रात बिताने को मन्दिर में जा रहे। निश्चयदत्त तथा वे सब महाव्रती वहां बैठ कर रक्षा के निमित्त मन्त्र जपने लगे।

कुछ रात बीतने पर वह शृङ्गोत्पादिनी यक्षिणी दूरही से कङ्काल का ताल बजाती और नाचती हुई आन पहुँची। आतेही उसने मण्डल के बाहर खड़े हो उन चारों में से एक से आंखें मिला कुछ मन्त्र पढ़ पढ़कर नाचना आरम्भ किया। मन्त्र के प्रभाव से चट उसे सींग उत्पन्न हो गये और वह बेसुध हो उठ खड़ा हुआ और नाचने लगा। नाचता नाचता उसी बलती हुई अग्नि में गिर पड़ा और आधा जल गया। उस शृङ्गोत्पादिनी यक्षिणी ने झट उस अधजले मुर्दे को आग से खींच प्रसन्नता के साथ खा डाला। तदुपरान्त उसने दूसरे महाव्रती पर दृष्टि जमाई और शृङ्गोत्पादन मन्त्र पढ़ पढ़ कर नाचने लगी। उसके सिर में भी सींग उत्पन्न हो आये और वह भी बेसुध हो नाचता नाचता अग्नि में गिर पड़ा और यक्षिणी द्वारा सभों के देखते देखते खाया गया। योंही क्रम से उन बचे हुये दोनों महाव्रतियों को भी उसने सींग उत्पन्न कर खा डाला। जिस समय वह चौथे महाव्रती को खा रही थी उस समय नरमांस और रुधिर से मत्त हो उसने वह कङ्काल का ताल भूमि पर रख दिया था। निश्चयदत्त ने अवसर पा चट कूद के उस हड्डी के ताल को उठा लिया और बार बार के सुनने से जो शृङ्गोत्पादन मन्त्र उसे याद हो गया था उसे पढ़ पढ़ कर ताल बजाने और हँसने तथा नाचने लगा और अपनी दृष्टि उस यक्षिणी के सिर पर लगाये था। तब तो वह यक्षिणी बहुत घबड़ाई, उसने देखा कि मन्त्र के प्रभाव से उसके माथे पर सींग निकलाही चाहते हैं सो वह मृत्युभय से झट गिड़गिड़ाती हुई निश्चयदत्त के पावों पर गिर पड़ी और हाथ जोड़ कहने लगी कि मैं आपकी शरण हूं मुझ अबला स्त्री को छोड़ दीजिये, मैं भूल गई जो आपके सन्मुख आई। हे महासत्व! मेरी रक्षा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कीजिये, मैं आपकी इच्छा जानती हूं, उसे पूरा करने के निमित्त आपको अनुरागपरा के पास पहुँचा दूंगी। जब उसने शपथपूर्वक यह कहा तो धीर निश्चयदत्त ने 'बहुत अच्छा' कह मन्त्र का पढ़ना रोक दिया। तदुपरान्त यक्षिणी ने कहा कि आप मेरे कन्धे पर बैठ जाइये मैं आपको आकाश से उड़ती हुई ले चलूंगी और आपको प्यारी से मिला दूंगी। निश्चयदत्त 'बहुत अच्छा' कह उसके कन्धे पर चढ़ बैठा और वह उड़ चली। उड़ती उड़ती प्रभात के समय एक पर्वत के पास किसी जङ्गल में पहुँच कर यक्षिणी ने कहा कि हे प्रभो! अब दिन चढ़ा चाहता है, सूर्योदय होने पर हमलोगों में उड़ने की शक्ति नहीं रहती, सो इस रमणीय जङ्गल में आप दिन बिताइये, उत्तम स्वादिष्ट फलों को खाकर झरने का मीठा जल पीजिये, मैं अपने स्थान को इस समय जाती हूं, रात के समय फिर आऊँगी और आपको हिमाचल की चोटी पर पुष्करावती नगरी में ले चलकर अनुरागपरा से मिला दूंगी। निश्चयदत्त ने जब यह बात स्वीकार की तो उसे कन्धे से उतार, वह सत्य प्रतिज्ञा करनेवाली यक्षिणी, रात को आने का बचन दे अपने घर को चली गई।

उसके चले जाने पर निश्चयदत्त इधर उधर टहलने लगा, थोड़ी दूर जाने पर उसे एक स्वच्छ शीतल तलाव दिखाई पड़ा किन्तु जल उसका विषैला था। सूर्य्य की किरणें जो उस पर चमक रही थीं तो यह जान पड़ता था कि मानो सविता भगवान् निज करों से यह स्पष्ट बतला रहे थे कि हे अनुरागियो! देख लो स्त्रियों का चित्त ऐसा होता है। उसने अपने कृत्य से निवृत्त हो उस सरोवर में केवल हाथ पैर तो धो लिये किन्तु पीने के निमित्त जल खोजता हुआ वह इधर उधर घूमने लगा। देखता क्या है कि एक जगह भूमि कुछ ऊँची है और एक छेद के अन्दर कोई वस्तु चमक रही है जैसे दो टूकड़े लाल के हों। कौतुकवश उसने उस स्थान को खोदना आरम्भ किया, देखा कि एक जीते हुये बन्दर का सिर है उसी की दोनों आखें लाल सी चमक रही थीं। निश्चयदत्त विस्मित हो विचारता था कि यह क्या वृत्तान्त है कि इतने में वह मर्कट मनुष्यबाणी में कहने लगा कि, हे महात्मन्! आप मत डरिये, मैं यथार्थ में मनुष्य हूं किसी कारणवश बन्दर हो गया हूं आप मुझे यहां से निकालिये तो मैं अपना सारा हाल आपसे कहूंगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतना सुन, निश्चयदत्त को और भी आश्च बढ़ा सो उसने वहां की सारी मिट्टी हटा दी और उस बन्दर को बाहर निकाल लिया । बाहर आतेही वह बानर निश्चयदत्त के पैरों पर गिर पड़ा और बोला कि आपने मुझे यहां से निकाल कर मेरे प्राण बचाये हैं । अब मेरे सङ्ग आइये आप बहुत थके जान पड़ते हैं, कुछ फल खाकर जल पीजिये और विश्राम कीजिये. मैं भी कई दिन का भूखा हूं आपकी कृपा से कुछ खाकर इस उपवासरूपी व्रत का पारण करूँ । इतना कह वह बानर उसे साथ लेकर दूर नदी तीर पर जा पहुँचा जहां उत्तमोत्तम सुन्दर घने फलदार वृक्ष शीतल मन्द वायु में झूम रहे थे । वहां स्नान कर निश्चयदत्त ने स्वादिष्ट फलों को खाकर जल पीया तदनन्तर उस मर्कट से जो स्वयं खा पीकर प्रसन्नता से उछल कूद रहा था पूछा कि अब बतलाओ कि तुम मनुष्य होकर बानर क्योंकर हुये । उस बानर ने कहा, सुनिये मैं कहता हूं—

बाराणसी नगरी में कोई चन्द्रस्वामी नामक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते हैं, उनकी धर्म्मपत्नी से मेरा जन्म है । पिताजी ने मेरा नाम सोमस्वामी रक्खा, क्रमशः मैं युवा हुआ और मद से निरङ्कुश कामदेवरूपी मत्त गज की सवारी मुझे मिली । फिर क्या पूछना था, एक दिन की बात है कि उसी नगरी के रहनेवाले श्रीगर्भ नामक एक धनी बनिये की पुत्री ने अपनी खिड़की में से मुझे देख पाया । वह अत्यन्त सुन्दरी और तरुणी थी, विवाह उसका मथुरानिवासी किसी वणिक्पुत्र से हुआ था जिसका नाम बराहदत्त था, उस समय वह लड़की अपने पिता के घर में रहती थी । वह मुझे देखतेही मेरे रूप पर मोहित हो गई और अपनी चतुर दूती को मेरे पास भेज कर यों कहलाया कि मेरी सखी तुमसे मिला चाहती है, फिर बहुत कुछ मेरी भलाई की बातें समझा वह मुझे अपने घर ले गई वहां मुझे बैठा चुपके से जाकर उस वणिक्सुता को भी जिसका नाम बन्धुदत्ता था वहीं ले आई । वह तो उत्सुकता से लज्जा परित्याग कर उन्मत्त सी हो रही थी आतेही मेरे गले से लिपट गई, फिर कुछ देर लों वहां रह वह अपने पिता के घर चली गई । योंही प्रतिदिन चोरी से आकर वह वणिक्पुत्री अपनी सखी के घर में मुझसे मिलती थी और मैं भी उसके प्रेम में उन्मत्त था । चिरकाल, जो उसे अपने पिता के घर में रहते हो गया तो एक दिन उसका पति मथुराजी से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चलकर उसे लिवा ले जाने के लिये वाराणसी में आया। पिता ने भी अपने जामाता को उसे ले जाने की अनुमति दे दी और जब वह बणिक्पुत्र चलने को तयार हुआ तो बन्धुदत्ता अपनी उस भेद जाननेवाली दूती से कहने लगी कि, हे सखि ! अब मेरा पति मुझे सुसराल को निश्चयही ले जायगा, बताओ सोमस्वामी बिना मेरा जीवन क्योंकर होगा, मैं तो चण भर भी उससे अलग नहीं हो सकती, कोई उपाय हो तो बताओ।" वह सुखशया नाम्नी सखी योगिनी थी सो कहने लगी कि हे सखि ! तू कुछ चिन्ता मत कर, मुझे दो मन्त्र-प्रयोग ऐसे आते हैं कि यदि एक को पढ़कर एक धागा किसी मनुष्य के गले में बांध दिया जाय तो वह उसी चण बानर हो जाता है और दूसरा मन्त्र ऐसा है कि धागा खोल देने पर यदि वह मन्त्र पढ़ा जाय तो वह बानर पुनः ज्यों का त्यों मनुष्य हो जाता है। प्रथम मन्त्र में इतना गुण और भी है कि कपि हो जाने पर उसे मनुष्य का ज्ञान वैसाही बना रहता है। सो हे सुन्दरि ! यदि अपने प्यारे सोमस्वामी को सदा साथ रक्खा चाहती हो तो मैं अभी उसे बन्दर का बच्चा बना देती हूं। बस खेलने के बहाने से इसे अपने साथ मथुराजी ले जाना और जब चाहना दूसरे मन्त्र के प्रभाव से इसे मनुष्य बना लेना, उन दोनों मन्त्रों को मैं तुम्हें सिखा देती हूं। अपनी सखी की यह बात सुन बन्धुदत्ता ने एकान्त में मुझ से मिल स्नेहपूर्वक यह सब हाल कहा। मैंने कहा कि मुझे स्वीकार है, सखी ने मन्त्र पढ़कर मेरे गले में सूत्र बांध दिया, मैं उसी चण लोटपोट कर छोटा सा बन्दर का बच्चा बन गया। उसी रूप में बंधुदत्ता मुझे लेकर अपने भर्ता के पास पहुँची और कहने लगी कि मेरी सखी ने जो बहलाने के लिये यह बन्दर का बच्चा मुझे दिया है मैं इसे अपने साथ मथुराजी ले चलूंगी। वह मुझे देख कर बहुत प्रसन्न हुआ मैं भी कूद कर उसकी गोदी में कूं कूं कर खेलने लगा। यद्यपि मैं कपि रूप में था तथापि सब समझता और मनुष्य की नाईं बोल सकता था। मैं अपने मनही मन हंसता और विचारता था कि अहो! स्त्रियों का चरित्र बड़ा बिचित्र है और कामदेव किसे नहीं मूढ़ बना देता ! दूसरे दिन अपनी सखी से बंधुदत्ता ने दोनों मन्त्र सीख लिये और पिता के घर से बिदा हो भर्ता के साथ ससुराल को चली। बंधुदत्ता के पति ने निज भार्य्या को प्रसन्न रखने के लिये,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मुझे मार्ग में एक सेवक के कन्धे पर चढ़ा दिया जहां आराम से बैठा हुआ मैं चारो ओर का कौतुक देखता चलता था । चलते चलते हम सब दो तीन दिन के उपरान्त एक ऐसे बन में पहुँचे कि जहां बड़े बड़े भयानक मर्कट रहते थे। उन सबों ने जो मुझे मनुष्य के कांधे पर बैठे देखा तो चारों ओर से किलकारी मारते और अपने साथियों को बुलाते आकर हमें घेर लिया और उस सेवक को जिसके कांधे पर मैं बैठा था काटने लगे। उसने घबड़ा कर मुझे पृथ्वी पर पटक दिया और अपनी जान लेकर भागा। उन बानरों ने मुझे पकड़ लिया। मेरे स्नेह के कारण बंधुदत्ता, उसका पति और उनके नौकर चाकर सभी ईंट पत्थर और लाठियों से उन मर्कटों को मारने लगे किन्तु वे अत्यन्त प्रबल थे उन लोगों का कोई बश न चला । मैं बहुत घबड़ा गया, वे सब बानर मेरा प्रत्येक अङ्ग और रोम रोम नखों से नोचने लगे मानो मेरे कुकर्म से क्रुद्ध हो मुझे उसका दण्ड दे रहे थे। कण्ठसूत्र के माहात्म्य तथा शम्भुभगवान् के स्मरण करने के प्रभाव से मैं उन बानरों के हाथ से निकल भागा और दौड़ता हुआ गहन बन में उनकी दृष्टि से बच जा छिपा, फिर क्रमश: अनेक बनों में घूमता फिरता यहां आ निकला। मैं इस दु:ख से अन्धा हो बरसात के दिनों में इधर उधर मारा मारा फिरता और यह विचारता था कि "हाय! परदारा समागम का क्या मुझे इस जन्महो में यह फल मिला कि बंधुदत्ता को गँवा कर मैं बन्दर हो गया।" मेरी इतनी आपत्ति पर भी ब्रह्मा ने असन्तुष्ट होकर दूसरा कष्ट मुझ पर डाला कि अकस्मात् एक ओर से किसी हथिनी ने आकर मुझे सूंड़ से पकड़ एक ऐसे कीचड़ में फेंक दिया जो दीमकों के धुस के बह जाने से वहां एकत्र हो गया था। मैं समझता हूं कि भाग्य ने किसी देवताही को मेरे लिये नियुक्त कर दिया था कि अनेक यत्न करने पर भी भागने को कौन कहे मैं वहां से हिल भी न सका । वह तो सूखने लगा और न कि केवल मैं मरनेहो से बच गया किन्तु भगवान् शम्भु को ध्यान करने से मुझे कुछ ज्ञान भी उत्पन्न होने लगा, और हे सखे! तब तक मेरी भूख प्यास भी जाती रही जब तक आपने कृपा कर मुझे इस सूखी मिट्टी से अब बाहर निकाल कर मेरे प्राण बचाये। ज्ञान प्राप्त होने पर भी मुझे ऐसी शक्ति नहीं है कि मैं अपने तईं इस बन्दरपन से मुक्ति दे सकूं। यदि कोई योगिनी उसी मन्त्र के प्रयोग से मेरे गले का सूत्र खोल देवे तो सम्भव है कि मैं फिर मनुष्यरूप में आ जाऊँ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बस यही मेरा वृत्तान्त है। अब आप कहिये मेरे मित्र ! कि आप किस प्रकार और क्यों इस अगम्य वन में आये और अब कहां जाने की इच्छा रखते हैं? जब उस बानररूपी सोमस्वामी ब्राह्मण ने इस प्रकार पूछा तो निश्चयदत्त ने अपना सारा हाल उसे कह सुनाया कि क्योंकर वह विद्याधरी के हेतु उज्जयिनी से चला और क्योंकर उसके धैर्य्य से जीती जाकर यक्षिणी उसे रातोरात लाकर यहां तक पहुँचा गई है। यह आश्चर्य्य वृत्तान्त सुन, कपिरूपधारी उस बुद्धिमान् सोमस्वामी ने निश्चयदत्त से कहा कि हे मित्र ! तो आपने भी एक स्त्रीही के निमित्त इन दुःखों को उठाया है किन्तु लक्ष्मी और स्त्री इस संसार में किसी की स्थिर होकर नहीं रही। स्त्रियां सदाही सन्ध्या की लाली की नाईं क्षण भर अनुरागवती रहती हैं, उनका हृदय सदाही नदी के मार्ग की नाईं कुटिल रहता है, भुजङ्गी की नाईं कदापि उनका विश्वास न करना चाहिये क्योंकि वे बिजुली की नाईं चञ्चला होती हैं। उसी प्रकार इस अनुरागपरा विद्याधरी को भी समझिये यद्यपि इस समय वह आपसे स्नेह करती है किन्तु अपना स्वजातीय प्रेमी पाने पर वह उसी से प्रेम करेगी और मनुष्य होने के कारण वह आप पर फिर विरक्त हो जायगी। सो हे मित्र ! एक स्त्री के निमित्त आपका इतना कष्ट उठाना व्यर्थ है आप इस काम से हाथ खींच लीजिये क्योंकि यह सड़े हुये फल की नाईं है जिसका स्वाद अन्त में नीरस और कटु होता है। हे सखे ! आप विद्याधरपुरी पुष्करावती को न जाकर उत्तम होगा कि इसी यक्षिणी के कंधे पर बैठ, अपने देश उज्जयिनी को लौट जाइये। हे मित्र ! आप मेरा कहा मानिये, मैंने जो पूर्व में अपने मित्र का कहा न माना और प्रेम में फँसा रहा उसी का यह फल है कि मैं अब लों पछता रहा हूं। बन्धुदत्ता के प्रेम में मुझे फँसा देख, भवशर्म्मा नामक मेरे एक परमहितैषी मित्र मुझे निवारण कर बहुत समझाया और कहा था कि हे मित्र ! स्त्रियों के फेर में मत पड़ो, इनका चित्त अत्यन्त दुर्गम होता है, जो कुछ मुझ पर बीत चुकी है उसे सुन लो"—इतना कह जो हाल मेरे मित्र भवशर्म्मा ने मुझसे कहा था वह मैं आपको सुनाता हूं।

इसी वाराणसी नगरी में सोमदा नाम की एक ब्राह्मणी अत्यन्त रूपवती और तरुणी रहती थी, वह बड़ी चपला और छिपी योगिनी थी । दैवयोग से मेरी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसकी भेंट एक दिन एकान्त में हो गई और फिर नित्य के मिलने से मेरी प्रीति भी उस पर अधिक हो गई थी। एक दिन मैंने ईर्ष्या के क्रोध में आ उसे कुछ ताड़ना की जिसे वह क्रूरा उस समय अपना क्रोध छिपा चुपचाप सह गई। दूसरे दिन योंही हँसी हँसी में उसने मेरे गले में एक धागा बांध दिया जिसके प्रभाव से मैं उसी क्षण लोटपोट कर एक बैल बन गया। तदुपरान्त उसने मुझे किसी ऊँटवाले सौदागर के हाथ बेंच डाला। वह मुझ पर नित्य बोझा लादता और बहुत मारता था। एक दिन मुझ पर बहुतही अधिक बोझा लादा गया, मैं चल न सकता था। इतनेही में बन्धमोचनिका नाम दूसरी योगिनी ने मुझे देख पाया। उसने देखतेही समझ लिया कि मैं सोमदाद्वारा पशु बनाया गया हूं, सो उसने कृपाकर मेरे गले का धागा खोल दिया. उसी क्षण मैं मनुष्य हो गया और अपनी जान लेकर भागा। मेरे स्वामी ने पीछे फिर कर देखा और मुझे वहां न पा, भागा समझ मेरी खोज में इधर उधर घूमने लगा। मैं बन्धमोचनिका के साथ जा रहा था कि दैवात् वहां सोमदा आ गई और उसने दूर से मुझे देखकर पहिचान लिया और क्रोध के मारे जलती हुई उस ज्ञानिनी बन्धमोचनिका से कहने लगी कि तूने इस पापी का पशुपन से क्यों उद्धार किया? देख तो री दुराचारि! तुझे इस कुकर्म्म का कैसा फल मिलता है, कल प्रातःकालही मैं तुझे इस पापी के साथही साथ मार डालूंगी। जब वह इतना कहकर चली गई तो वह सिद्ध योगिनी बन्धमोचनिका सोमदा के प्रतिघात का बचाव करने के हेतु मुझसे बोली कि कल प्रातःकाल यह काली घोड़ी बनकर मुझे मारने के लिये आवेगी मैं उस समय लाल घोड़ी का रूप धर लूंगी। जब हम दोनों आपस में लड़ने लगें तो तुम सोमदा के पीछे जाकर कस के तलवार मारना। इस प्रकार हम दोनों उसे मार लेंगी सो तुम कल सबेरे अवश्य मेरे यहां आना, ऐसा कह उसने अपना घर मुझे दिखला दिया। इतना कह वह तो अपने घर के अन्दर चली गई और मैं भी इसी जन्म में अनेक जन्मों का अनुभव करता हुआ अपने घर आन पहुँचा। दूसरे दिन सबेरेही हाथ में तलवार ले मैं उसके घर गया, इतनेही में देखता क्या हूं कि एक काली घोड़ी साम्हने से चली आती है। मैं समझ गया कि यही सोमदा है, बन्धमोचनिका ने चट लाल घोड़ी का रूप धारण किया और दोनों में खूब लत्ती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चलने लगी। कभी वह लत्ती मारती तो वह दांत से काटती थी और जब वह दांत से काटती तो यह लत्ती फटकारती थी। मैंने पीछे जाकर उस दुष्टा सोमदा को एक तलवार कस के मारी और ज्योंही वह लड़खड़ाई कि बन्धमोचनिका ने उसे मार डाला। इस प्रकार जब मैं बैलयोनि से उद्धार पा निर्भय हुआ तो फिर उस दिन से किसी कुस्त्री का ध्यान भी चित्त में न लाया। स्त्रियों के ये तीन दोष प्राय: तीनों लोक को भय देनेवाले होते हैं। प्रथम तो इनकी चपलता, दूसरा इनकी साहसिकता और तीसरा इनका टोना टामर। सो हे मित्र! तुम क्यों इस बंधुदत्ता के पीछे पड़े हो यह डाकिनियों की सखी है, जो अपने पति की न हुई वह तुम्हारी कब होने लगी।

यद्यपि मेरे मित्र भवशर्म्मा ने मुझे बहुत समझाया किन्तु मैंने उसकी बात पर कान न दिया इसी कारण मेरी यह दुर्दशा हुई। इसीलिये आपसे कहता हूं कि आप अनुरागपरा के पीछे क्लेश मत उठाइये क्योंकि जब उसे अपनी जाति का कोई मिल जायगा तो वह निस्सन्देह आपको परित्याग कर देगी। जिस प्रकार भृङ्गी नये नये फूलों का रस लेती है उसी प्रकार ये कुलटा स्त्रियां भी नये नये पुरुषों को चाहती हैं, फिर आगे चलकर आपको भी मेरेही नाईं पछतावा होगा। यद्यपि इस प्रकार कपिरूपधारी सोमस्वामी ने निश्चयदत्त को बहुत समझाया परन्तु इसके अनुरागी हृदय में उसकी बातों ने कुछ भी स्थान न पाया। उसने कपि से कहा कि वह मेरे साथ कदापि धोखा न करेगी क्योंकि उसका जन्म शुद्ध विद्याधरकुल में है। वे लोग योंही बातें कर रहे थे कि सूर्य्य भगवान् मानो निश्चयदत्त को प्रसन्न करने के लिये उधर अस्ताचल पर पधारे और इधर वह शृङ्गोत्पादिनी यक्षिणी रात आने के साथही आन उपस्थित हुई। निश्चयदत्त उस कपि से पूछ कर अपनी प्रिया से मिलने के निमित्त उस यक्षिणी के कन्धे पर जा चढ़ा, कपि ने नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि अच्छा जाने को तो आप जातेही हैं पर अपने इस बन्दर को भी स्मरण रखियेगा। यों बातचीत कर, निश्चयदत्त वहां से चला, और आधी रात के समय हिमाचल पर अनुरागपरा के पिता की नगरी पुष्करावती में जा पहुँचा। उधर अनुरागपरा अपने विद्या प्रभाव से उसका आना जानकर उससे मिलने के लिये नगरी के बाहर आई। यक्षिणी ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निश्चयदत्त को कन्धे से उतार दिया और अनुरागपरा को दिखाकर यों कहा कि "यह देखिये आपके नेत्रों को आनन्द देनेवाली दूसरी चन्द्रमूर्ति की नाईं आपकी प्रिया वह साम्हने से आ रही है, बस मेरा काम हो चुका, अब मैं जाती हूं—" इतना कह निश्चयदत्त को प्रणाम कर वह तो चली गई, और अनुरागपरा ने चिरकाल तक उत्सुक रहने के कारण दौड़कर अपने प्यारे को प्रेम से आलिङ्गन कर लिया। निश्चयदत्त ने भी बड़ेही उत्साह और प्रेम से गद्गद हो इतना कष्ट सहने के उपरान्त जो उसे पाया तो हर्ष के मारे मानो उसके शरीर में पैठ गया। गान्धर्व बिधि से उन दोनों का विवाह हो गया और उसी क्षण अनुरागपरा ने अपनी विद्या के प्रभाव से एक नया नगर निर्माण किया। उसी नगर में बाहरही बाहर निश्चयदत्त उसके साथ रहने लगा, और अनुरागपरा की विद्या से उसके माता पिता की दृष्टि जो मानो बन्द हो रही थी इस कारण उन्हें इस बात की कुछ भी शङ्का न हुई। मार्ग का हाल पूछने पर निश्चयदत्त ने अपने क्लेशों और कष्टों का सब वर्णन उससे किया, जिसे सुन वह और भी अधिक सत्कार उसका करने लगी और सदा अनेक प्रकार के भोग विलास से उसका चित्त प्रसन्न रखती थी।

एक दिन निश्चयदत्त ने उस बन्दर सोमस्वामी का वृत्तान्त अपनी विद्याधरी भार्य्या को सुना कर यों कहा कि हे प्रिये! यदि हमारा वह मित्र किसी प्रकार तुम्हारे प्रयत्न से अपने बन्दरपन से छूट जाता तो बहुतही अच्छा होता। यह सुन अनुरागपरा ने उत्तर दिया कि यह योगिनी मन्त्र का मार्ग है इसमें हमलोगों की गति नहीं है तथापि जब आपकी ऐसी इच्छा है तो मैं इसे किसी प्रकार ठीक कर दूंगी, मेरी एक सखी भद्ररूपा नाम की सिद्ध योगिनी है, इस काम के लिये मैं उससे निवेदन करूँगी। यह सुन वह बणिक्पुत्र अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपनी प्रिया से कहने लगा कि यह बहुत अच्छी बात है तो चलो हम दोनों अपने उस मित्र के पास चलें मैं तुम्हें उसे दिखला दूं।" जब उसने स्वीकार किया तो दूसरे दिन निश्चयदत्त अपनी प्यारी के गोद में बैठ कर आकाशमार्ग से उड़ता हुआ उसी बन में अपने मित्र के पास जा पहुँचा। वहां उस कपिरूपधारी मित्र को देख उसके पास जा प्यारी के साथ प्रणाम कर उसने पूछा "कहो मित्र! कुशल तो है न?" उस सोमस्वामी बन्दर ने कहा कि हे मित्र! आपका मेल आप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

की प्यारी अनुरागपरा से जो हुआ यह देख आज मेरा सबही कुशल है ।' इस प्रकार उसका अभिनन्दन कर सोमस्वामी ने अनुरागपरा को भी आशीर्वाद दिया तदनन्तर वे तीनों वहीं एक स्वच्छ शिला के ऊपर बैठ गये और निश्चयदत्त ने जो कुछ उपाय अपने मित्र के उद्धार का अपनी प्यारी से बातचीत कर ठहराया था सब उसे सुनाया और बहुत देर तक इस बारे में बातचीत होती रही। इसके अनन्तर उसने अपने मित्र बानर से घर जाने की आज्ञा ली और अपनी प्यारी अनुरागपरा की गोद में बैठ आकाशमार्ग से पुनः अपने घर को लौट आया।

दूसरे दिन निश्चयदत्त ने अपनी प्यारी से पुनः कहा कि चलो अपने उस मित्र बानर के पास क्षण भर हो आवें । उसने कहा कि आज तुमही जाओ, मैं तुम्हें आकाश में उड़ने और उतरने की विद्यायें सिखा देती हूं। इतना कह उसने वह दोनों विद्या उसे बतला दीं और निश्चयदत्त आकाश से उड़ता हुआ अपने मित्र उस कपि के पास आन पहुँचा। इधर तो वह अपने मित्र से बातचीत करने लगा उधर अनुरागपरा घर से निकल उद्यान में वायुसेवनार्थ जा बैठी। इतनेही में कोई विद्याधरकुमार आकाश में घूमता फिरता उधर आ निकला । अनुरागपरा को देखतेही वह कामातुर हो गया और अपनी विद्या के प्रभाव से जान गया कि यह विद्याधरी है किन्तु इसका भर्ता कोई मनुष्य है। अनुरागपरा ने भी सिर नीचे कियेही किये देखा कि वह परम सुन्दर और युवा है, सो कौतुकवश धीरे से पूछने लगी कि आप कौन हैं और कैसे आपका आना यहां हुआ?। उसने उत्तर दिया कि हे मुग्धे! मैं अपनी विद्याओं का पूर्ण जाननेवाला रागभञ्जन नाम विद्याधर हूं, हे मृगनयनी! मैं आपको देखकर मोहित हो गया हूं और कामदेव के वश हो आपकी सेवा में आकर खड़ा हूं और इस शरीर को आपके समर्पण करता हूं। सो हे देवि! भूतलनिवासी मनुष्य के प्रेम से हाथ खींच लो और जब लों आपके पिताजी को यह वृत्तान्त विदित हो उसके पूर्वही आप मुझसे प्रेम कर लो।" उसका ऐसा वचन सुन उसने आधी दृष्टि से कुछ कटाक्ष कर उसकी ओर देखा और चञ्चल मन से विचारने लगी कि यह मेरे मन के योग्यही मिला है। उसके चित्त का भाव समझ रागभञ्जन ने उसे अपनी भार्य्या बनाया, ठीकही है, जहां दो का चित्त एक हुआ तहां एकान्त पाने पर कामदेव को अपना काम करने में क्या देर लगती है?

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्याधर के चले जाने के उपरान्त, निश्चयदत्त अपने मित्र सोमस्वामी से मिलकर घर में आन उपस्थित हुआ किन्तु अनुरागपरा ने उस प्रकार उसको प्रेमपूर्वक हृदय में न लगाया जैसा सदा किया करती थी। जब निश्चयदत्त ने पूछा कि आज तुम्हारा जी ऐसा क्यों है तो उसने उत्तर दिया कि मेरे सिर में पीड़ा है। उसने यह बहाना कुछ भी न समझा किन्तु उसके स्नेह से विमोहित हो रोग की चिन्ताही में वह सारा दिन बिताया। प्रातःकाल उसी प्रकार उदासचित्त से अपने मित्र कपि के पास उड़ता हुआ गया। उसके चले जाने पर वह कामी विद्याधर जिसे अनुरागपरा की प्रेमचिन्ता में रात भर नींद न आई थी इधर आन उपस्थित हुआ और सुरतोपरान्त थक जाने के कारण निद्रावश हो, अनुरागपरा की गोदही में जो स्वयं विरह में रात भर जागती रह गई थी, सो गया। अनुरागपरा ने जब देखा कि वह उसके गोदहो में सो गया तो उसे अपने विद्याबल से वहीं अदृश्य कर वह भी रात्रि के जागने के कारण सो गई। इतने में उधर निश्चयदत्त अपने मित्र उस कपि के पास पहुँचा, जिसने स्वागत कर बड़े प्रेम से पूछा कि कहो मित्र! आज आप कुछ उदास से क्यों दीख पड़ते हैं इसका क्या कारण है?' निश्चयदत्त ने कहा कि हे सखे! आज हमारी प्यारी अनुरागपरा का शरीर कुछ अस्वस्थ है इसी कारण मैं कुछ दुःखित हूं क्योंकि वह मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारी है। इतना सुन, उस ज्ञानी मर्कट ने कहा कि अच्छा आप इसी समय लौट जाइये वह सो रही है आप सोतीही को गोद में उठाकर यहां मेरे पास ले आइये मैं आपको एक परम आश्चर्य्य की बात अभी दिखाऊँगा। इतना सुन वह आकाशमार्ग से उड़कर पुष्करावती में पहुँचा, देखा कि अनुरागपरा निद्रा में बेसुध पड़ी है, निश्चयदत्त ने झट उसे ज्यों की त्यों गोद में धीरे से उठा लिया किन्तु उसके अङ्क में लिपटे हुये उस निद्रित विद्याधर को वह न देख सका, क्योंकि उसे तो अनुरागपरा ने पहिलेही अदृश्य कर दिया था। फिर आकाशमार्ग से उड़ता हुआ वह निद्रिता अनुरागपरा को लिये क्षण भर में अपने मित्र कपिरूपधारी सोमस्वामी के पास आ पहुँचा। दिव्यदृष्टि उस कपि ने निश्चयदत्त को योगविद्या का उपदेश दिया जिसकी सहायता से उसने अनुरागपरा के कण्ठ से चिपक कर सोये हुये उस विद्याधर को देख पाया। यह कौतुक दे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

खतेही उसने एक आह मारी ! और पूछने लगा कि 'हा ! धिक् ! यह क्या' ? तत्वदर्शी कपि ने उसे सब यथार्थ वृत्तान्त समझा दिया । निश्चयदत्त को बड़ाही क्रोध उत्पन्न हुआ; इतनेही में वह विद्याधर जाग उठा और झट आकाश में उड़ लोप हो गया ! अनुरागपरा भी उसी क्षण जाग उठी और अपना सब भेद प्रगट हो जाने से लज्जित हो नीचा मुंह कर खड़ी हो गई । निश्चयदत्त ने आंखों में आंसू भर के उससे कहा कि अरी पापिष्टे ! मुझ विश्वासी के साथ तूने यह कैसा विश्वासघात किया ! बुद्धिमान् लोगों ने बहुतही ठीक कहा है कि "अति चञ्चल पारदहुँ को बांधि सकत बुध लोग । पै चपलातिय-चित्त तें हारे सब उद्योग" । उसका ऐसा कहना सुन वह कुछ भी उत्तर न दे सकी चुपचाप खड़ी धीरे धीरे रोती रही, तदनन्तर एकाएक उड़ अपने घर को सिधारी । उसके चले जाने पर निश्चयदत्त के कपिरूपधारी मित्र सोमस्वामी ने कहा कि हे सखे ! कहो मैं आपको वारण करता न था कि इस अनुरागपरा के पीछे मत दौड़िये, यह उसी तीव्र अनुरागरूपी अग्नि का फल है जो आपको ऐसा अनुताप हो रहा है देखिये कवियों के बचन पर ध्यान दीजिये कि, "चपला सम्पति नारि पै मूढ़ करहिँ विसवास" बस अब परिताप को छोड़िये और हृदय में शान्ति धारण कीजिये क्योंकि "होनहार भवितव्यता विधिहु सकत नहि रोकि" । कपि का ऐसा बचन सुनि, निश्चयदत्त ने शोक और मोह दोनों का परित्याग कर, विरक्त हो, श्रीशङ्कर भगवान् की शरण ली, और उसी बन में अपने मित्र के साथ रहता हुआ सुख से दिन बिताने लगा ।

एक दिन अकस्मात् मोक्षदा नाम्नी किसी तपस्विनी का आना उस बन में हुआ उसने देखा कि एक स्थान पर एक मनुष्य और एक बन्दर बैठे बड़े प्रेम से बातें कर रहे हैं । उसके समीप आने पर निश्चयदत्त ने उठ कर सादर प्रणाम किया । तपस्विनी ने आश्चर्य्य से पूछा कि हे सज्जन ! क्या संसार में मनुष्यों की कुछ कमी थी जो आपने इस बानर को अपना मित्र बनाया, यह बड़े आश्चर्य्य की बात है यदि इसका कोई विशेष कारण हो तो कहिये ।

यह सुन, निश्चयदत्त ने पहिले अपना सब हाल कह सुनाया, तिसके पीछे सोमस्वामी का वृत्तान्त कह यों निवेदन किया कि यदि भगवती को कोई मन्त्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

या प्रयोग ऐसा ज्ञात हो कि जिसके प्रभाव से मेरे मित्र का यह बानरपन छूट जाय तो मैं अत्यन्तही अनुगृहीत होऊँ और आपको भी पुण्य हो।

यह सुन, उसने 'बहुत अच्छा' कह, मन्त्रयुक्ति सें उस कपि के गले का सूत्र खोल दिया, उसी क्षण वह भूमि में लोटपोट कर बानरी आकृति का परित्याग कर पूर्ववत् मनुष्यरूप में उठ खड़ा हुआ, और ज्योंही अनुगृहीत हो उसने तपस्विनी के चरणों में प्रणाम किया त्योंही वह दिव्यप्रभाववाली तड़िता की नाईं अन्तर्धान हो गई।

तदनन्तर निश्चयदत्त और सोमस्वामी ने वहां रहकर बड़ी कठिन तपस्या की जिसके प्रभाव से उन दोनों ने परमोत्तम गति को प्राप्त किया।

कहने का तात्पर्य्य यह कि संसार में स्त्रियां स्वभावही से ऐसी चपला होती हैं जिनके दुश्चरित्रों को देख बुद्धिमानों को विवेक और वैराग्य उत्पन्न होता है, किन्तु हां उनमें ऐसी ऐसी साध्वी भी हैं जो अपने विशाल कुल को यों शोभित करती हैं जैसे नवीन चन्द्रकला आकाश को उज्ज्वलित कर देती है।

रत्नप्रभा समेत नरवाहनदत्त सुराय।
मन्त्री गोमुख की कही कथा सुनी हरषाय॥

चौथा तरङ्ग।

गोमुख की कही हुई कथा से नरवाहनदत्त को सन्तुष्ट देख मरुभूति ने मानो स्पर्धा से यों कहा कि हे युवराज! यद्यपि स्त्रियां प्राय: चपल होती हैं परन्तु यह बात सदा सब के लिये सत्य नहीं है, देखा गया है कि कहीं कहीं वेश्या भी अपने सत्व में अत्यन्त दृढ़ रहती हैं फिर कुलबधुओं की कौन कहे। हे देव! मैं एक परम प्रसिद्ध कथा आपसे कहता हूं सुनिये।

पाटलिपुत्र नगर में किसी समय विक्रमादित्य नामक कोई राजा हो गये हैं, उनके दो मित्र बड़ेही प्रेमी थे, एक का नाम राजा हयपति और दूसरे का नाम गजपति था। एक के पास अनेक घोड़े और दूसरे के पास अनेकगज थे। उसके शत्रु राजा का नाम नरसिंह था जिसके पास पैदल सेना बहुतही अधिक थी, यह राजा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बड़ा मानी बली और प्रतिष्ठान का अधीश्वर था । निज मित्रों के बल से गर्वित हो, अमर्ष के साथ राजा विक्रमादित्य हठात् यह प्रतिज्ञा कर बैठे कि मैं राजा नरसिंह को जीत, अपने बन्दी और मागधों द्वारा यह कहला दूंगा कि वह मेरे द्वार पर खड़ा है। ऐसी प्रतिज्ञा कर उसने अपने दोनों मित्रों से मिल उनकी हयवाहिनी और गजवाहिनी सेना एकत्र कर, सारी पृथिवी में हलचल मचा दी, और इस भारी सेना को लेकर राजा नरसिंह से बलपूर्वक लड़ने के लिये उसके देश पर चढ़ गया। जब यह प्रतिष्ठान के समीप पहुँचे तो उसे इस बात को सूचना हुई, वह भी अपना दलबल साज युद्ध करने के लिये सन्नद्ध हो गया। दोनों विपक्षियों में ऐसा विलक्षण युद्ध हुआ कि लोगों को देखकर आश्चर्य होता था जहां घुड़सवारों और गजसवारों के विपक्ष में पैदल सेनावाले विलक्षण युद्ध कर रहे थे। अन्त परिणाम यह हुआ कि राजा नरसिंह के एक कोटि पैदल सैनिकों के साम्हने राजा विक्रमादित्य के हयारोही और गजारोही सब परास्त होकर भाग गये, और स्वयं राजा विक्रमादित्य और उनके दोनों मित्र भी हार कर अपने देश को लौट आये। उधर राजा नरसिंह ने शत्रुओं को परास्त कर, बन्दियों के द्वारा स्तुति किये जाते अपनी राजधानी में बड़े धूमधाम से प्रवेश किया।

जब राजा विक्रमादित्य की कार्य्यसिद्धि न हुई तो वे मनमें विचारने लगे कि इस शत्रु को, जो बल से नहीं जीता जाता, मैं बुद्धि और युक्ति से परास्त करूँगा। जिसके मनमें आवे वह भलेही मेरी निन्दा करे किन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा को सत्य कर दिखाऊँगा। ऐसा बिचार राज्य का भार सुयोग्य मन्त्रियों को दे वे चुपचाप नगर के बाहर हुये और अपने साथ बुद्धिवर नामक एक मन्त्री तथा पांच सौ कुलीन और शूर वीर राजपूतों को ले लिया। बस इस प्रकार जीविकान्वेषी का रूप धर वे अपने शत्रु के प्रतिष्ठानपुर में जा पहुँचे। वहां मदनमाला नाम की कोई परम सम्पदा वेश्या रहती थी, जिसका घर राजाओं के राजमहल के समान था। वायुमण्डल में जो पताकायें फहरा रही थीं उनसे ऐसा प्रतीत होता था कि वह गृह अपने हाथों के सङ्केत से उनका स्वागत कर रहा है। पूर्व के मुख्य द्वार पर रात दिन बीस सहस्र पैदल सिपाहियों द्वारा गृह की रक्षा की जाती थी, इन सिपाहियों के पास अनेक प्रकार के अस्त्र शस्त्र थे। दक्षिण, पश्चिम और उत्तर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के तीनों द्वारों में से प्रत्येक पर दस दस सहस्र वैसेही सिपाहियों का पहरा था। ऐसे समृद्धशाली भवन के चौक में राजा भेष बदले हुये, प्रतीहारी से पूछकर पहुँचे, जहां सात बड़े बड़े आगार थे। कहीं सवारों का निवासस्थान था, कहीं उन्मत्त हाथियों का समूह झूम रहा था, कहीं शस्त्रास्त्रों का ढेर पड़ा था, कहीं रत्नों का अटम्ब लगा था, कहीं नौकर चाकर और जनसमूह की भीड़ लगी थी, कहीं चारण, भाट इत्यादि कविता पढ़ रहे थे और कहीं गाना तथा नाच रङ्ग का आनन्द हो रहा था। इन सब कौतुकों को देखते भालते राजा विक्रमादित्य अपने परिजनों के सहित उस विशाल और उन्नत प्रासाद के समीप पहुँचे, जिसमें मदनमाला रहती थी। सहेलियों ने जब जाकर निवेदन किया कि एक व्यक्ति बड़े समारोह के साथ आ रहे हैं, उनके देखतेही और छूतेही घोड़े इत्यादिकों का रोग और घाव चङ्गा हो जाता है तो उसने अनुमान किया कि वह कोई भारी महात्मा हैं जो वेष बदल कर आ रहे हैं, सो उसने झट आगे से आकर प्रणाम किया और बड़े सत्कार से अपने साथ लिवा ले गई और ले जाकर एक राजोचित आसन पर बैठने को स्थान दिया। महाराज, मदनमाला का अपूर्व रूप लावण्य तथा सौजन्य देख चमत्कृत होकर मोहित हो गये, उन्होंने उसकी बड़ी प्रशंसा की, किन्तु अपना भेद न प्रकाश किया कि वे कौन हैं। विश्राम के अनन्तर मनदमाला ने महाराज को स्नान कराया और उत्तमोत्तम पुष्पमालाओं तथा वस्त्राभरण से उनका सत्कार किया और उत्तम स्वादिष्ट भोजन कराने के उपरान्त उनके सब प्रधान अनुचरों का भी विविध प्रकार से सत्कार किया। बाकी के सब लोगों की दैनिक वृत्ति बांधि दी गई। इस प्रकार विविध प्रकार के उत्सवों से दिन को बिताकर उसने रात के समय अपने तईं महाराज को समर्पण किया, क्योंकि वह भी उनके रूप पर मोहित हो रही थी। इस प्रकार अनेक भोगों का आनन्द लेते हुये और नित्य यथोचित दानादि करते महाराज परम सुख के साथ अपना समय बिताने लगे। मदनमाला भी अपने को परम धन्य और कृतार्थ मानती थी और निज शरीर तथा धन के उपभोग किये जाने से अत्यन्त प्रसन्न होती थी यहां लों कि उसने और सब लोगों का आना जाना अपने यहां बन्द कर दिया। महाराज विक्रमादित्य के प्रेम में मदनमाला का चित्त ऐसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

फँस गया कि उसने राजा नरसिंह का भी जो उसके अनुराग में अत्यन्त लीन थे, आना निषेध कर दिया।

इस प्रकार आनन्द से रहते हुये महाराज विक्रमादित्य ने एक दिन एकान्त में अपने उस बुद्धिवर मन्त्री से जो साथ में आया था कहा कि, "वेश्या सदा धन की भूखी रहती हैं, यद्यपि वह किसी को प्यार करती भी हो तथापि धन पाये बिना उनका सन्तोष नहीं होता क्योंकि ब्रह्मा ने याचकों को बनाकर, लोभ वेश्याओं को दे दिया। किन्तु देखो मैं इस मदनमाला का सारा धन लुटाता हूं तथापि यह मुझसे किञ्चित् भी विराग नहीं करती, प्रत्युत और भी अधिक स्नेह करती है, सो यह बतलाओ कि मैं इसके उपकार का बदला कैसे चुका सकता हूं और मेरी प्रतिज्ञा भी उधर पूरी होनी चाहिये। यह सुन उस बुद्धिवर मन्त्री ने राजा से कहा कि यदि ऐसीही आपकी इच्छा है तो उन बहुमूल्य रत्नों में से इसे कुछ दे दीजिये जो भिक्षुक प्रपञ्चबुद्धि आपको दे गया था। जब मन्त्री ने ऐसा कहा तो राजा ने उत्तर दिया कि, मैं उन सभों को भी इसे दे डालूं तौभी इसके उपकार का बदला नहीं चुक सकता, किन्तु मैं किसी दूसरे प्रकार से इस काम को करूँगा जो उसी भिक्षुक के वृत्तान्त से सम्बन्ध रखता है।" यह सुन मन्त्री ने पूछा कि हे देव! उस भिक्षुक ने क्यों और कैसे इन रत्नों को आपको दिया? इसका वृत्तान्त जानने के लिये मुझे बड़ी इच्छा है। मन्त्री का ऐसा वचन सुन राजा ने कहा अच्छा सुनो मैं वह कथा तुम्हें सुनाता हूं।

बहुत दिनों की बात है कि हमारे पाटलिपुत्र नगर में एक योगी जिसका नाम प्रपञ्चबुद्धि था नित्य दर्बार में आकर एक बन्द डिबिया मुझे दे जाता था, इस प्रकार वह एक वर्ष के लगभग देता रहा, मैं भी उस डिबिया को पातेही बिना खोले उसे ज्यों का त्यों निज भण्डाररक्षक के हाथ में दे दिया करता था। एक दिन जब उस योगी ने मेरे हाथ में डिबिया दी और मैं उसे भण्डाररक्षक को देने लगा कि अचानचक वह डिबिया मेरे हाथ से छटक कर भूमि पर गिरी डिबिया खुल गई और उसमें से एक परमोज्ज्वल रत्न अग्नि के समान प्रकाशवाला बाहर निकल पड़ा। यह देख मैंने उन सब डिबियाओं को मँगाया और खोल कर जो देखा तो सभी के अन्दर एक एक वैसाही बहुमूल्य रत्न पाया। मैंने पूछा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि हे योगिराज! आप जो नित्य ऐसा ऐसा अनूठा रत्न मुझे भेंट करते हैं इससे आपका क्या अभिप्राय है? उसने कहा कि मैं एकान्त में इसका हाल कहा चाहता हूं। जब मेरी आज्ञा से सब लोग हटा दिये गये तो उसने कहा कि हे देव! इस आगामिनी कृष्णचतुर्दशी की रात को मैं श्मशान पर किसी विद्या को सिद्ध करनेवाला हूं उस समय विघ्नों को दूर करने के लिये किसी वीर सहायक की आवश्यकता है, सो आपके अतिरिक्त मैं किसी दूसरे को इस योग्य नहीं पाता इसलिये आपसे प्रार्थना है कि आप उस समय वहां पधार कर मेरी सहायता कीजिये। उस योगी की यह बात सुन मैंने उससे प्रतिज्ञा की कि 'अच्छा मैं अवश्य उचित समय पर वहां उपस्थित होऊँगा' वह तो प्रसन्न हो चला गया, इधर कुछ दिनों के उपरान्त कृष्णचतुर्दशी आन पहुँची। मुझे उस योगी की बात याद आई सो मैं आह्निक कृत्य को समाप्त कर सन्ध्या होने का आसरा देखने लगा। सन्ध्या पूजन से निवृत्त हो दैवात् मैं सो गया। स्वप्न में देखता क्या हूं कि गरुड़ पर आरूढ़ भक्तवत्सल भगवान् विष्णु मुझे यों आज्ञा दे रहे हैं कि हे पुत्र! यह प्रपञ्चबुद्धि यथार्थ में प्रपञ्चबुद्धि है, यह तुझे धोखे में फँसाकर मण्डल की पूजन में प्रणाम करने के बहाने से बलिदान चढ़ाया चाहता है, सो जब वह तुझे मारने की इच्छा से प्रणाम करने को कहै तो तू कहियो कि पहिले आप मुझे सिखा दें फिर मैं भी वैसेही करूँगा, जिस समय वह तुझे सिखाने के लिये प्रणाम करै, तू अवसर पाकर खड्ग से उसका सिर उड़ा दीजियो तो जिस सिद्धि को वह चाहता है सो तुझे प्राप्त हो जायगी। इतनी शिक्षा देकर जब श्रीविष्णु भगवान् अन्तर्धान हो गये तो मैं जाग उठा और विचारने लगा कि हरि जी के अनुग्रह से आज मैंने उस मायावी धूर्त को जाना, सो वह अवश्य बध करने योग्य है। ऐसा निश्चय ठान रात के पहिले पहर बीतने पर मैं हाथ में तलवार ले अकेलाही श्मशानभूमि पर जा पहुँचा। वहां उस योगी को मण्डल का पूजन करते देख मैं उसके पास जा खड़ा हुआ, वह शठ 'आइये आइये पधारिये' कह मुझसे बोला कि हे राजन्! बस अब आंखों को बन्द कर, अङ्गों को फैलाय, नीचे मुख कर आप साष्टाङ्ग प्रणाम करिये, ऐसा करने से हम दोनों को सिद्धि प्राप्त होगी। मैंने कहा कि हे प्रभो! आप कृपा कर मुझे सिखा दीजिये कि मैं क्योंकर सा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ष्टाङ्ग * प्रणाम करूँ, सीख जाने पर मैं भी वैसाही करूँगा। इतना सुन ज्योंही उस मूढ़ योगी ने भूमि पर नीचे मुंह कर साष्टाङ्ग प्रणाम किया त्योंही मैंने एक हाथ खड्ग का ऐसा मारा कि उसका मुण्ड रुण्ड से अलग हो भूमि पर लोटने लगा। उसी क्षण यह आकाशवाणी हुई कि 'हे राजन्! आपने बहुतही अच्छा काम किया जो इस पापी भिक्षुक को उपहार में चढ़ा दिया । जिस सिद्धि को यह चाहता था सो आज आपको प्राप्त होवै, उस सिद्धि के बल से आप आकाश में उड़ सकेंगे। मैं कामचारी धनाधिप (कुबेर) हूं आपके इस धैर्य्य से परम सन्तुष्ट हुआ हूं। 'अब दूसरा वर भी जो आपकी इच्छा हो मुझसे मांगिये।' इतना कह उन्होंने प्रगट होकर मुझे दर्शन दिया। मैंने प्रणाम कर, हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे देव! इस समय तो नहीं पर दूसरे समय जब मैं उपयुक्त वर स्थिर कर लूंगा तो आपसे प्रार्थना करूँगा, उस समय स्मरण करने पर आप कृपा कर दर्शन देकर मुझे वह बरदान दीजियेगा जो मैं मांगूगा।" मेरा ऐसा निवेदन सुन श्री-कुबेरजी ने कहा "बहुत अच्छा ऐसाही होगा"—इतना कह वे अन्तर्धान हो गये और मैं सिद्धि प्राप्त कर अपने राजभवन को लौट आया। यही उस योगी भिक्षुक का तथा मेरा वृत्तान्त है जो मैंने तुम्हें सुनाया, सो मैं उन्हीं कुबेरजी के द्वारा इस मदनमाला के उपकार का बदला चुकाया चाहता हूं। अब हे बुद्धिवर! तुम मेरे इन राजपूतों को जो वेष बदले मेरे साथ हैं अपने सङ्ग लेकर राजधानी पाटली-पुत्र को लौट जाओ, मैं अपनी प्रिया का प्रत्युपकार करके तुम्हारे पास आऊँगा क्योंकि अभी फिर मुझे यहां आना होगा। इस प्रकार राजा ने मन्त्री को समझा कर अपने परिच्छद के सहित बिदा किया। उसके चले जाने पर महाराज ने वह रात मदनमाला के साथ बिताई किन्तु भविष्य विरह का दुःख उनके हृदय को कष्टदाई हो रहा था। मदनमाला के अन्तरात्मा ने भी मानो उससे कह दिया

* उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा ।
पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते ॥
कूर्म्मवच्चतुरः पादाः शिरस्तत्रैव पञ्चमम् ।
मनोबुद्ध्यभिमानैश्च प्रणामोऽष्टाङ्ग उच्यते ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि विरह शीघ्र होनेवाला है, सो वह भी जी भरकर मिलती और सारी रात जागतीही रही।

प्रातःकाल महाराज ने उठकर नित्यक्रिया से छुट्टी पाई, फिर जैसा उनका नित्य का नियम था जप करने के बहाने से देवमन्दिर में गये। वहां जातेही उन्होंने श्रीकुबेरजी को स्मरण किया और वे उसी क्षण आन उपस्थित हुये, महाराज ने प्रणाम कर निवेदन किया कि हे देव! अब मुझे वह वर दीजिये जो आपने पहिले देना अङ्गीकार किया था। कुबेरजी ने कहा "मांगो क्या चाहते हो?"। राजा ने कहा कि हे देव! मुझे बड़े बड़े पांच मनुष्य सोने के ऐसे दीजिये जो कभी नाश न हों, उनके कोई अङ्ग चाहे जै बेर काट लिये जावैं तो वे पुनः ज्यों के त्यों हो जाया करैं। कुबेरजी ने आज्ञा दी कि "बहुत अच्छा, ऐसाही होगा जैसा आप चाहते है।" इतना कह कुबेरजी उसी क्षण अन्तर्धान हो गये और राजा ने देखा कि उसी देवमन्दिर के एक कोने में पांच मूर्तियां सोने की बड़ी बड़ी मनुष्याकार खड़ी हैं। बस मन्दिर से बाहर निकल आकाश में उड़ राजा पाटलीपुत्र में आ पहुँचे, जहां मन्त्री, पुरनिवासी तथा रानियों ने उनका अतीव सत्कार किया। वहां रहकर महाराज अपना राजकाज भली प्रकार करने लगे परन्तु उनका ध्यान सदा प्रतिष्ठानपुर में मदनमाला के पास रहता था।

उधर जब राजा को मन्दिर में गये चिरकाल हो गया और वे लौट कर न आये तो घबड़ाकर उनकी प्यारी मदनमाला उन्हें खोजती हुई उसी देवमन्दिर में गई। राजा तो उसे कहीं भी दिखाई न पड़े, परन्तु एक कोने में उसने सुवर्णकी बड़ी बड़ी पांच मूर्तियां खड़ी पाई। मूर्तियों को देख और महाराज को न पाकर वह परम दुःखित हो विचारने लगी कि मेरे प्यारे निस्सन्देह कोई गन्धर्व या विद्याधर होंगे, जो मुझे ये स्वर्ण की मूर्तियां दे आप कहीं आकाश द्वारा चलते भये। अब मैं उनके बिना इस व्यर्थ के बोझ को लेकर क्या करूँ। ऐसा कह वह अपने परिजनों से महाराज का हाल बार बार पूछने लगी और पता लगाने के लिये सारे नगर में उसने अपने सेवकों को भेजा किन्तु कहीं भी महाराज की टोह न लगी। तब तो मदनमाला का चित्त बहुतही उदास हो गया, महल वा उद्यान में कहीं भी उसका जी न लगता था, अन्त रोते रोते वह प्राणपरित्याग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करने को उद्यत हुई। यह देख उसके एक कर्मचारी ने कहा कि 'हे देवि ! आप इतना दुःख मत कीजिये महाराज पुनः आपसे आनकर मिलेंगे'। इस प्रकार जब परिजन लोगों ने बहुत समझाया और आश्वासन दिया तो मदनमाला ने किसी किसी तरह धीरज बांध यह प्रतिज्ञा की कि अच्छा यदि आज से छः महीने के अन्दर वे मुझे अपना दर्शन न देंगे तो मैं अपना सर्वस्व दान करके अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगी। ऐसी कठिन प्रतिज्ञा कर उसने कुछ धीरज बांधा और नित्य ब्राह्मण तथा अभ्यागतों को दान देती, निज प्राणवल्लभ का ध्यान करती वहां रहने लगी। एक दिन उस दानशीला मदनमाला ने उन पांच मूर्तियों में से एक मूर्ति के दोनों हाथ काटकर किसी ब्राह्मण को दान दे दिये। दूसरेही दिन उसने देखा कि वे दोनों हाथ ज्यों के त्यों हो गये, रातही रात में मूर्ति के दोनों हाथ निकल आये, यह देख उसे परम आश्चर्य हुआ। तब तो उसने क्रम से बाकी सभों के भी हाथ दान के निमित्त काट डाले और दूसरेही दिन सभों के हाथ पुनः उत्पन्न हो गये। जब उसने देखा कि ये मूर्तियां नाश होनेवाली नहीं हैं तो उसने प्रतिदिन ब्राह्मणों को स्वर्णभुजाओं का दान देना आरम्भ किया; जो जै वेद का पढ़नेवाला आता उसे उतनीही भुजायें देती।

थोड़ेही दिनों में उसकी इस उदारता की धूम सब दिशाओं में फैल गई, जिसे सुनकर संग्रामदत्त नामक कोई ब्राह्मण पाटलीपुत्र से चलकर यहां आया। वह दरिद्र ब्राह्मण चारो वेद का ज्ञाता था, सो उसने दान पाने की इच्छा से यहां आ द्वारपाल के द्वारा अपने आने का सन्देश मदनमाला के पास भिजवाया मदनमाला ने उसे अपने सम्मुख बुला भेजा और स्वयं अपने हाथों से जो विरह के व्रत के कारण पीले और दुर्बल हो रहे थे उसका पूजन किया, तदनन्तर वेद की गिनती के अनुसार उसे चार स्वर्णभुजायें दीं। इसके उपरान्त उस ब्राह्मण ने मदनमाला के दुःखित होने का कारण लोगों से पूछा कि यह ऐसी क्यों हो रही हैं, ? लोगों ने जब उसे सारा हाल सुनाया तो उस वृत्तान्त को जान उसका चित्त अत्यन्त खिन्न हुआ। इसके उपरान्त वह हृष्ट तथा विषण्णचित्त से दो ऊँटों पर उन चारो भुजाओं को लाद अपने घर पाटलीपुत्र को लौट आया और विचारने लगा कि विना राजा की सहायता पाये मेरा यह धन रक्षित नहीं रह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सकता। ऐसा निश्चय ठान वह महाराज विक्रमादित्य की राजसभा में पहुँचा और निवेदन करने लगा कि हे महाराज! मैं आपके इसी नगर का रहनेवाला एक दीन ब्राह्मण हूं, दरिद्र होने के कारण धन की खोज में, मैं दक्षिण देश को चला गया, जाते जाते राजा नरसिंह के प्रतिष्ठान नामक पुर में पहुँचा। वहां सुना कि मदनमाला नाम की कोई गणिका वेदपाठी ब्राह्मणों को खूब दान देती है सो मैं भी धन के लोभ से उसके द्वार पर पहुँचा। वहां विदित हुआ कि कोई दिव्य पुरुष चिरकाल तक उसके साथ रहता था जो उसे पांच अक्षय पुरुषमूर्ति सोने की देकर न जाने कहां लोप हो गया। उसी दिव्य व्यक्ति के विरह में उसने संसार का सब सुख परित्याग कर दिया है और जीवन को एक बोझ समझती है, एक एक क्षण उसे एक एक वर्ष सा बीत रहा है। जब उसके अनुजीवियों ने उसे बहुत समझाया बुझाया तो उसने किसी प्रकार धीरज बांध अब यह प्रतिज्ञा कर ली है कि यदि उसका वह प्यारा दिव्य पति छ महीने के अन्दर उसे दर्शन न देगा तो वह अपना सर्वस्व दान करके अग्नि में प्रवेश कर जायगी। ऐसी कठिन प्रतिज्ञा करके अब वह रात दिन दान में लगी रहती है और अवधि के दिनों को गिनती हुई मरने के लिये उद्यत है। हे देव! मैंने स्वयं उसे अपनी आंखों से देखा है कि उपवास करते करते उसका सुन्दर शरीर सूख कर कांटा सा हो रहा है। मेरी समझ में तो वह दिव्य व्यक्ति, जिसके विरह में वह सुन्दरी अपने प्राण गँवा रही है, अत्यन्त निन्दा के योग्य क्या बध कर डालने योग्य है, क्योंकि उसे ऐसी अनुरक्ता सुन्दरी को परित्याग करते तनिक भी दया न आई और न अब आती है!!!

मुझको चारो वेद का ज्ञाता देखकर उसने चार स्वर्णभुजायें मुझे विधिवत् दी हैं। मेरी इच्छा है कि मैं एक सत्रगृह बनवाकर निज धर्म का निर्वाह करता हुआ अपना जीवन बिताऊँ, इस कार्य्य में श्रीमान् की सहायता की आवश्यकता है, सो आप मेरा हाथ पकड़िये।

उस संग्रामदत्त ब्राह्मण के मुख से यह वृत्तान्त सुन उसी क्षण राजा का चित्त मदनमाला की ओर खिँच गया। उसी क्षण उन्होंने प्रतीहार को बुलाकर आज्ञा दी कि इस ब्राह्मण की इच्छा के अनुसार सब काम कर दिया जाय। फिर वे यह विचारने लगे कि हमारी प्रतिज्ञा के पूरी होने में मदनमाला से सहायता मिलेगी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तथा उसके देह की अवस्था को सोच और यह विचार कर कि छ महीने में अब बहुतही कम दिन रह गये हैं, उन्होंने राज्य का भार तो मन्त्री के हाथ में दिया और आकाश से उड़ते हुये प्रतिष्ठान प्रदेश में अपनी प्यारी के घर में जा पहुँचे। देखा कि वह चांद की चांदनी की नाईं स्वच्छ श्वेत वस्त्र पहिने अपनी कुल सम्पत्ति विद्वानों को देकर, पर्व के इन्दुकला की नाईं क्षीण हो रही है। महाराज को अचानचक आये देख, मदनमाला उद्भ्रान्त हो, एक टक उनकी ओर देखने लगी, फिर सहसा उठकर उनके गले से लग गई। मानो इस भय से कि कहीं फिर न चले जावें, उसने महाराज के गले में अपनी भुजलता का बन्धन डाल दिया। तदनन्तर अश्रुपूरित नेत्रों से उसने कहा, "हे नाथ! इस दासी से ऐसा क्या अपराध हुआ था कि आपने इसे भुला दिया, चलिये एकान्त में बैठ कर बातें करें।" ऐसा कह वह महाराज को अन्त:पुर में ले गई। वहां महाराज ने स्पष्ट रूप से अपना वृत्तान्त मदनमाला को सुनाया कि वे कौन हैं और क्योंकर उन्होंने नरसिंह राजा को जीतने की प्रतिज्ञा करी है। क्योंकर प्रपञ्चबुद्धि को मार कर आकाश में उड़ने की शक्ति पाई और श्रीकुबेरजी को प्रसन्न कर अवसर पर वह बर प्राप्त किया। फिर यह भी सब सुनाया कि क्योंकर संग्रामदत्त ब्राह्मण से उसके विरह का हाल सुनकर वे पुन: उससे मिलने को आये। इस प्रकार सारा हाल कह महाराज विक्रमादित्य ने कहा कि हे प्रिये! इस नरसिंह राजा के पास बहुत सेना है, रण में यह जीता नहीं जा सकता। द्वन्द युद्ध में मेरी इसकी समानता नहीं है, मैं आकासंचारी ठहरा, वह बिचारा पृथ्वी से ऊपर उड़ नहीं सकता, यदि मैं चाहता तो उसे कभी मार डालता किन्तु क्षत्री होकर अधर्म युद्ध करना कदापि उचित नहीं है। अतएव मेरी जो यह प्रतिज्ञा है कि "नरसिंह राजा के प्रति बन्दियों से यह कहलवा देना कि वह आपके द्वार पर खड़ा है," इसमें मेरी सहायता करो।

इतना सुन उस गणिका ने कहा कि बस इतनीही बात है तो मैं परम धन्या हूं इसे तो मैं अभी पूर्ण कर देती हूं। बस महाराज के साथ कुछ सलाह कर उसने अपने बन्दीजनों को बुलाकर आज्ञा दी कि जिस समय राजा नरसिंह मेरे घर पर आवें तुम लोग द्वार पर खड़े रहना और उनके अन्दर आने पर बार बार

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यों कहना कि "हे महाराज! नरसिंह राजा आपके बड़े भक्त और अनुरक्त हैं, वे बाहर द्वार पर खड़े हैं"—जब वे पूछें कि यहां कौन है तो कह देना कि महाराज विक्रमादित्य अन्दर बैठे हैं। बन्दीजनों को इस प्रकार समझा उसने विदा किया और अपने प्रतीहारी से कहला दिया कि यदि नरसिंह राजा आवें तो उन्हें कोई न रोके। इतना प्रबन्ध बांध मदनमाला अपने प्राणनाथ को पा असंख्य धन दान करती सुखपूर्वक रहने लगी।

उड़ते उड़ते यह समाचार राजा नरसिंह के कानों तक भी पहुँचा कि मदनमाला के पास ऐसी मूर्तियां सुवर्ण की हैं कि वह चाहे कितनाही काट काटकर दान करती जाय वे मूर्तियां पुनः ज्यों की त्यों हो जाती हैं। यह आश्चर्य वृत्तान्त सुन वे स्वयं चलकर उन मूर्तियों को देखने के लिये आये। प्रतीहारी ने उन्हें द्वार पर न रोका और वे चलते हुये सीधे उस स्थान के द्वार पर पहुँचे, जहां मदनमाला और विक्रमादित्य बैठे थे। बन्दी लोगों ने पुकार कर कहा "हे देव! हे महाराज! राजा नरसिंह भक्तिपूर्वक प्रणत होकर द्वार पर खड़े हैं"—यह सुनतेही राजा चौंके और पूछने लगे कि यहां कौन है? जब बन्दीजनों ने बतलाया कि अन्दर महाराज विक्रमादित्य बैठे हैं तो राजा नरसिंह चिन्तापूर्वक विचारने लगे कि अहो! यह राजा बड़ा ओजस्वी है इसने अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। इसे बलपूर्वक मारना उचित नहीं है क्योंकि यह अकेला हमारे घर आया है। अच्छा चलो अन्दर चलकर इससे भेंट करें इतना विचार राजा नरसिंह अन्दर आये और विक्रमादित्य ने उठकर मुस्कुराते हुये उन्हें कण्ठ से लगा लिया। फिर दोनों महाराज परस्पर कुशल प्रश्न पूछ कर बैठ गये और मदनमाला को भी वहीं बैठने की आज्ञा दी गई। तदनन्तर राजा नरसिंह ने, राजा विक्रमादित्य से पूछा कि ये पांचो स्वर्णमूर्तियां कैसी हैं? और कहां से प्राप्त हुईं। यह सुन राजा विक्रमादित्य ने सब वृत्तान्त सविस्तर कह सुनाया। राजा नरसिंह ने जब देखा कि ये महा बलवान् और आकाश में उड़ने की शक्ति रखते हैं, तथा उनका हृदय स्वच्छ और पापरहित है तो उन्होंने राजा विक्रमादित्य से मैत्रीभाव स्थापन किया और अपनी राजधानी में ले जाकर बहुत सत्कार के साथ उनसे वर्ताव किया। यों सत्कार कर उन्हें विदा किया और महाराज विक्रमादित्य पुनः मदनमाला से आ मिले।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार महाराज विक्रमादित्य अपनी दुस्तर प्रतिज्ञा से उत्तीर्ण हो मदनमाला के घर आ निज नगरी को लौटने का विचार करने लगे। यह सुन मदनमाला बड़ी व्याकुल हुई, फिर विरह दुःख सहने में असमर्थ हो उसने अपना सारा धन ब्राह्मणों को दान कर महाराज के साथ चलने की इच्छा प्रगट की। जब महाराज ने उसकी बात स्वीकार की तो उसने अपना सर्वस्व दान कर दिया और महाराज उसे साथ ले हाथी घोड़े रथ पालकी और पैदल सिपाहियों के संग निज राजधानी को लौट आये और नरसिंह राजा के साथ मैत्री का वर्ताव निभाते हुये सुखपूर्वक रहने लगे।

यों इस कथा को समाप्त कर मरुभूति ने कहा कि हे राजकुमार! जब वेश्यायें राजमहिषी की नाईं सुशीला और दृढ़ अनुरागिणी पाई गई हैं तो कुलकामिनियों का क्या पूछना है।

यो सुनिकै उत्तमकथा शिक्षावलित उदार।
नरवाहन प्रमुदित भये लहि सुख हरष अपार॥

पांचवां तरङ्ग।

मरुभूति की कथा समाप्त करने पर, सेनापति हरिशिख ने राजकुमार नरवाहनदत्त की सेवा में निवेदन किया कि हे देव! यह बात बहुतही यथार्थ है कि सती स्त्रियां निज भर्ता के आगे सारे संसार को तुच्छ समझती हैं, मैं आपको एक अत्यन्त विचित्र कथा सुनाता हूं जो इससे भी अधिक रमणीय है।

भूलोक में बर्धमान नामक एक नगर है, जहां परम धार्मिक वीरभुज नामक कोई राजा हो गये हैं, उनकी एक सौ रानियां थीं, जिनमें गुणवरा नाम महिषी उनको सब से अधिक प्राणों से भी प्यारी थी। भाग्य की बात देखिये कि एक सौ रानियों के रहते भी एक से भी महाराज को कोई पुत्र उत्पन्न न हुआ। इस कारण एक दिन उस भूपति ने श्रुतवर्धन नामक वैद्यराज को बुलाकर पूछा कि क्या कोई ऐसी औषधि आपके पास है जिससे मुझे कोई पुत्र हो। यह सुन उस वैद्य ने उत्तर दिया कि हे देव! हां मैं ऐसी औषधि बना सकता हूं, आप एक जं-

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamwadi Math, VARANASI
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गली बकरा मुझे मँगा दीजिये। वैद्य की ऐसी बात सुन महाराज ने प्रतीहारी को जंगली बकरे को लाने की आज्ञा दी, जो उसी क्षण उपस्थित किया गया। वैद्य ने उस बकरे को रसोइयों को हवाले कर उन्हीं लोगों के द्वारा महारानियों के लिये एक उत्तम औषधि बनवा कर तयार किया। महाराज ने सब रानियों को एकही स्थान पर एकत्र होने की आज्ञा दी और आप देवपूजन के निमित्त किसी देवमन्दिर में चले गये। आज्ञानुसार ९९ रानियां एक जगह एकत्र होगईं केवल गुणवरा वहां न थी क्योंकि वह महाराज के साथ देवमंदिर में पूजन के निमित्त गई थी। इधर वैद्यराज ने सब रानियों के एकत्र होने पर चूर्णमिश्रित वह रस सबको बांटकर पिलादिया और गुणवरा की अनुपस्थिति पर उनका ध्यान न हुआ। इतनेही में महाराज भी रानी के साथ दर्शन करके लौटे और कुल औषधि खर्च होजाने का हाल सुन वैद्यराज से कहने लगे कि खेद का विषय है कि आपने रानी गुणवरा के निमित्त कुछ भी औषधि न बचा रक्खी। जिसको प्रधान मानकर यह कार्य्य आरम्भ किया गया उसे आपने एकदम भुला दिया। वैद्यराज इस बात को सुनकर अत्यन्त लज्जित हुये फिर महराज ने रसोइयों से पूछा क्या उस छाग-मांस का कुछ भी भाग नहीं बचा है"? उन्होंने उत्तर दिया कि केवल दोनो सींग बचे हैं। वैद्यराज ने कहा बस इतनेही में काम होजायगा मैं उस शृङ्ग का रस पका कर उत्तम औषधि बना सकता हूं। इतना कह सींग का रस पकवाकर वैद्यराज ने चूर्ण मिला गुणवरा को भी वही औषधि पिलाई। औषधि के प्रभाव से उन ९९ रानियों को गर्भ रहा और काल पाकर सबों को एक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। रानी गुणवरा को सब के पीछे गर्भ रहा और समय पाकर उन्हे एक ऐसा पुत्र उत्पन्न हुआ जो लक्षण में सबों से श्रेष्टतर था। और क्योंकि वह शृंग के मांस के रस से उत्पन्न हुआथा इसलिये राजा वीरभुज ने उसका नाम शृङ्गभुज रक्खा और एक भारी उत्सव किया। क्रमशः वह भी सयाना होने लगा और अपने दूसरे भाइयों के साथ खेलता था यद्यपि वह वय में सबों से छोटा था किन्तु गुण में सब से ज्येष्ठ था। वह राजकुमार रूप मे कामदेव, धनुर्वेद में अर्जुन और बल में भीमसेन के समान था। ऐसे गुणशाली पुत्र की माता गुणवरा से महाराज की दूसरी सब भार्य्यायें डाह खाने लगीं। उनमें अयशोलेखा नाम एक रानी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

थीं जो चित्त की बड़ीही कुटिला और दुष्टस्वभावा थी उसने सब रानियों के साथ मिलकर सलाह की कि किसी प्रकार गुणवरा और उसके पुत्र को निकालना चाहिये। ऐसा ठान वह एक दिन उदास सा मुंह बना बैठ रही। महाराज जब उसके पास गये और इस उदासी का कारण पूछने लगे तो वह कहने लगी कि कुछ नहीं मैं उदास तो नहीं हूं। महाराज ने जब हठपूर्वक बार बार इसका कारण पूछा तो वह कहने लगी कि अच्छा जब आप मुझ से पूछतेही हैं तो मैं कहती हूं हे नाथ! आप तो दूसरों के रक्षक कहलाते हैं परन्तु अपनेही घर में यह दूषण कैसे सहते हैं? आपने जिस सुरक्षित नामक युवा पुरुष को अपने अन्तःपुर का रक्षक नियत किया है उसपर आपकी रानी गुणवरा आसक्त हो रही है। किसी दूसरे पुरुष की पहुँच तो वहां तक हैही नही, किसी को क्या खबर, फिर किसे पड़ी है जो इस बात को आपके कानो तक पहुँचावे परन्तु यह बात किसी से छिपी नही है अन्तःपुर की सभी रानियों को यह गुप्त वृत्तान्त बिदित है, मारे भय के आपसे कोई नही कहतीं। इस वृत्तान्त को सुन महाराज बड़ेही ध्यान पूर्वक हृदय में बिचारने लगे। फिर महाराज ने क्रमशः एक एक रानी के महल में जाकर इस बिषय को पूछना आरम्भ किया और उन सबों ने भी वैसाही उत्तर दिया जैसा कि पहिले सलाह ठहर चुकी थी। बुद्धिमान् महाराज ने क्रोध को दबाकर यह बिचार किया कि इन दोनों में ऐसे नीच सम्बन्ध का होना सम्भव प्रतीत नहीं होता किन्तु अपवाद तो ऐसाही है और सभी रानियां उस कलङ्क की पुष्टि करती हैं अतएव जबलों इसका ठीक निश्चय न होजाय तबलों यह बात किसी दूसरे पर प्रगट न होनी चाहिये किसी युक्ति से इन दोनों को अलग कर इसका परिणाम निश्चय करना उचित है। ऐसा बिचार उन्होंने दूसरे दिन उस अन्तःपुराधिप को जिसका नाम सुरक्षित था अपने सन्मुख बुला भेजा और बनावटी क्रोध से उसको डांट कर कहने लगें क्यों रे पापी! तू ने जो ब्रह्महत्या करी है उसकी थाह हमें लग गई है सो जबलों तू तीर्थयात्रा करके इसका प्रायश्चित न करले तबलों हम तेरा मुंह नहीं देख सकते। सुरक्षित तो यह सुनतेही घबड़ा गया और हाथ जोड़ यों कहने लगा कि हे नाथ! मैंने कब और किस ब्राह्मण की हत्या की, ? मुझे तो स्मरण है कि मैंने कभी ऐसा दुष्कर्म नही किया। यह सुन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महाराज ने डांटकर पुनः कहा "बस! हमारे सामने ढीढता मत कर! जा काश्मीर के पापनाशन तीर्थ मे स्नान कर जहां पवित्र विजय क्षेत्र और नन्दिक्षेत्र हैं। वहीं पर वाराहक्षेत्र भी है जहां पतितपापिनी श्रीगंगाजी वितस्ता नाम से बहती हैं। श्री चक्रपाणि श्रीविष्णु भगवान् ने जिसे पवित्र किया वहीं पर प्रसिद्ध मण्डलक्षेत्र और उत्तर मानस नामक तीर्थ हैं, जब तेरा पाप इन तीर्थों मे स्नान करने से कट जायगा तब हम तेरा मुंह देख सकते हैं।

ऐसी आज्ञा दे, महाराज वीरभुज ने सुरक्षित को वहां से इस युक्ति द्वारा तीर्थ यात्रा के निमित्त निकाल बाहर किया, वह अन्तःपुराधिप विवश हो घर छोड़ काश्मीर की ओर चला। इसके अनन्तर महाराज रानी गुणवरा के समीप स्नेह, क्रोध और विमर्श के साथ पहुँचे। रानी ने जो महाराज को खिन्नमन देखा तो व्याकुल हो पूछा कि हे आर्य्यपुत्र! आज अकस्मात् आप ऐसे उदास और चिन्तित से क्यों जान पड़ते हैं।? यह सुन महाराज ने कुछ बात बनाकर उत्तर दिया कि हे देवि! आज एक महाज्ञानी ज्यौतिषी ने मेरे पास आकर यों कहा है कि राजन् आप रानी गुणवरा को भूतल के किसी तहखाने में बन्द कर दीजिये और स्वयं ब्रह्मचारी होकर रहिये नहीं तो आपका सारा राज नाश हो जायगा और रानी की तो अवश्य मृत्यु होगी। ऐसा कहकर वह ज्यौतिषी तो चला गया और मेरा चित इसी कारण उदास हो रहा है। महाराज का ऐसा भाषण सुन पतिव्रता और प्रेमपरायणा रानी गुणवरा ने भय तथा प्रीति के साथ यह उत्तर दिया कि हे नाथ! तो फिर इसी समय आप मुझे तहखाने में क्यों नहीं बन्दकर देते? यदि मेरे प्राणों के देने से भी आपका उपकार हो तो मैं अपने को धन्य मानूंगी। मेरी मृत्यु होवे तो होवे किन्तु आपको किसी प्रकार कुछ भी कष्ट न होना चाहिये क्योंकि

"मनक्रम बचन स्वामिपदपूजा। नारिधर्म्म पति देव न दूजा"॥

उस साध्वी का ऐसा बचन सुन महाराज के नेत्रों में आंसु आ गये और वे हृदय में विचारने लगे कि हमें तो इसमें अथवा उस सुरक्षित में किंचित् भी पाप की शंका नहीं जान पड़ती। मैंने देखा था कि जब सुरक्षित को डांटकर पूछा गया तो उसके मुखपर म्लानता की छाया तक भी न थी और वह निराशङ्क प्रतीत होता था। वैसीही दशा इस रानी की भी है। किन्तु फिर भी यह अपवाद कैसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है इसका निश्चय अवश्य करना चाहिये। इतना विचार महाराज ने रानी से कहा "अच्छा तो हे देवि! आपके लिये यहीं भूगृह बनाया जाता है आप उसी में वास करें"। रानी के स्वीकार करने पर महाराज ने वहीं भूगृह (तहखाना) बनवा उस में रानी को रहने की आज्ञा दी। जब महाराज के पुत्र शृङ्गभुज ने दुःखित हो कर इसका कारण पूछा तो उसे भी वही बात कह दी गई जो रानी को समझाई गई थी और उसे इस प्रकार सन्तोष दिलाया गया। रानी गुणवरा ने पति का हित विचार कर उस भूगर्भवास को स्वर्ग का सा सुख देनेवाला माना क्योंकि "निज सुख सती न जानहीं पतिसुख मुदित हमेस। प्राण समर्पण वरु करैं पतिहिँ न देहिं कलेस" इधर गुणवरा तो भूगृह में डाल दी गई उधर रानी अयशोलेखा ने अपने पुत्र निर्वासभुज से कहा कि हे पुत्र! हमारी सौत गुणवरा तो भलेही भूगर्भ मे स्थापित की गई अब यदि किसी प्रकार उसका सुत भी देश से निकाला जावैं तो अत्युतम हो, सो तुम अपने दूसरे भाइयों के साथ मिलकर कोई ऐसी युक्ति निकालो कि यह काम सरलतापूर्वक हो जावै। अपनी माता की ऐसी आज्ञा सुन द्वेषी निर्वासभुज ने अपने भाइयों से यह हाल कहा और वे सब मिलकर युक्ति बिचारने लगे। एकदिन वे सब राजा के पुत्र अपने राजमहल के समीपही अस्त्र शस्त्रों से खेल रहे थे कि कोई बहुत बड़ा गिद्ध दिखाई पड़ा। वे सब उस बिलक्षण पक्षी को देख रहे थे कि इतनेही में एक ज्ञानी भिखारी आकर कहने लगा कि हे राजकुमारो! यह पक्षी नही है किन्तु यह अग्निशिख नाम राक्षस है जो इस प्रकार का पक्षिभेष धारण कर नगरों का नाश करता फिरता है, सो इसे बाण मारकर यहां से भगा दीजिये! उस ज्ञानी का ऐसा भाषण सुन उन ९९ भाइयों ने गिद्ध पर बाण चलाये किन्तु एक भी शर उसे न लगा। यह देख उस नग्न भिखारी ने कहा कि आपलोगों का सब से छोटा भाई इसे मार सकता है इसलिये इसको उपयुक्त धनुष बाण दीजिये। यह सुन उस निर्वासभुज को अपनी माता की बात स्मरण आई सो वह उत्तम अवसर देख बिचारने लगा कि यही उपाय शृङ्गभुज को देश से बाहर निकालने का क्यों न किया जाय इस हेतु इसे पिताजी वाला धनुषबाण देना चाहिये। वह बाण सोने का है यदि गिद्ध बाण की चोट खा उसके सहितही उड़ जायगा तो हमलोग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाण की खोज करेंगे, लाचार शृङ्गभुज को पक्षी के पीछे पीछे दौड़ना पड़ेगा और जब लों वह गिद्धवाला बाण इसे न मिलेगा तबलों यह उसी की खोज में मारा २ फिरेगा और स्वदेश को न लौटेगा। ऐसा बिचार उस दुष्ट निर्वासभुज ने अपने पिता का धनुषबाण लाकर शृङ्गभुज को दिया और कहा कि इसी से इसे मार गिराइये। शृङ्गभुज ने धनुषबाण लेकर उस सुवर्णबाण से जिसके पंख मे रत्न जड़े थे, उस गिद्धरूपी राक्षस को मारा जिसके लगतेही वह बाणसहित उड़ भागा और उसके शरीर से रक्त की धारा बहने लगी। तब तो सब भाइयों ने निर्वासभुज से कहना आरम्भ किया कि तुमने क्यों वृथा पिताजीवाला धनुषबाण शृङ्गभुज को दिया अब उसी से बाण मँगाओ नहीं तो हमलोग पिताजी को क्या उत्तर देंगे यदि वह बाण न मिलेगा तो हमलोग यहीं प्राण परित्याग करदेंगे। यह सुन शठ निर्वासभुज ने बार बार इन्हीं बचनों से शृङ्गभुज को तङ्ग करना आरम्भ किया कि यदि बाण न मिलेगा तो पिताजी हम सबों को घर से निकाल देंगे, फिर दूसरा बाण भी तो वैसा नहीं बन सकता कि हमलोग किसी प्रकार उसकी नकल बनवा कर दूसरा रख दें। यह सुन उस बीर शृङ्गभुज ने कहा कि हे भाइयो क्यों घबड़ाते हो, धीरज धरो मैं अभी जाता हूं और उस राक्षस को मार कर पिताजी का बाण लाकर तुम्हारे सम्मुख रख देता हूं। इतना कह वह अपना धनुषबाण ले उसी दिशा की ओर जिधर वह गिद्धरूपी राक्षस उड़ कर गया था, रुधिर धारा से जो भूमि पर गिरी थी उसका अनुसन्धान लगाता हुआ भगवान के आसरे चल पड़ा। उसके भाई लोग तो अपनी २ माताओं के पास हँसते कूदते आगये और वह विचारा अकेला चलते २ एक भयानक घनघोर जङ्गल में जा पड़ा। देखता क्या है कि एक भारी सुन्दर नगर साम्हने शोभायमान् है मानो उसके परिश्रमरूपी वृक्ष का फल नेत्रों के सम्मुख भोग के लिये उपस्थित होगया। थकित होने के कारण वह एक सघन वृक्ष के नीचे बिश्राम के हेतु बैठगया, देखता क्या है कि साम्हने से एक परम सुन्दरी कन्या नेत्रों को आनन्द देती चली आती है। बिधाता ने मानों उसे अमृत और विष दोनोही से सिरजा था क्योंकि वह संगम में अमृत के समान सुखदायिनी थी और बिरह में हालाहल सी दाह उत्पन करती थी। जब वह क्रमशः समीप आई और प्रेमभरी दृष्टि से देखने लगी तो राजकु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मार का मन भी उनके हाथ से जाता रहा, उन्होंने पूछा कि हे हरिणलोचने ! इस पुरी का क्या नाम है और कौन इसका स्वामी है ? तुम कौन हो और कैसे तुम्हारा आना यहां हुआ है ? यह सुन उस सुन्दरी ने नीची दृष्टि कर मुंह फेर लिया और मधुर वचनों में यों कहने लगी कि सर्वसम्पत्तिवाले इस नगर का नाम धूमपुर है, यहां राक्षसों के राजा अग्निशिख का निवासस्थान है। मैं उनकी पुत्री हूं, नाम मेरा रूपशिखा है, मैं तुम्हारे इस असामान्य रूप पर मोहित होगई हूं। अब आप कहिये कि आप कौन हैं और किस निमित्त यहां आये हैं ? उसका ऐसा भाषण सुन शृङ्गभुज ने अपना सारा हाल उसे कह सुनाया कि मैं अमुक राजा का पुत्र हूं, यह मेरा नाम है और किस प्रकार राक्षस के तीर सहित उड़ जाने पर मैं उसकी खोज में चलता २ यहां आ निकला हूं ! राजकुमार का सारा हाल सुन रूपशिखा ने कहा कि आप जैसा धनुर्धारी त्रैलोक्य में नहीं है जो गिद्धरूपधारी मेरे पिताजी को आपने वाण से घायल किया। उस सुवर्ण वाण को तो मैंने अपने खेल के लिये ले लिया है। मेरे पिताजी के मंत्री का नाम महादंष्ट्र है, वह बाण के घावों को चङ्गा करने मे बड़े प्रवीण हैं सो उन्होंने मेरे पिताजी का वह घाव अच्छा कर दिया है और अब मेरे पिताजी बहुत प्रसन्नता पूर्वक बाहर आते जाते हैं। हे आर्य्यपुत्र ! मैंने अपना हृदय आपको दिया, अब मैं जाती हूं और पिताजी से पूछ कर आपको शीघ्र अन्दर ले चलती हूं। इतना कह राजकुमार को वहीं छोड़ रूपशिखा अपने पिता अग्निशिख के पास आज्ञा लेने के निमित्त गई और वहां जा कहने लगी कि हे तात ! शृङ्गभुज नामक राजकुमार यहां आये हैं वे रूपशील वय और गुण में अपने समान आपही हैं। मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि वे मनुष्य नहीं किसी देवता का अवतार हैं, यदि उनके साथ मेरा विवाह न होगा तो मैं इस शरीर को अवश्यही छोड़ दूंगी। यह सुन उसके पिता ने कहा कि हे पुत्रि ! मनुष्य तो हमारा भोजन है तथापि यदि तेरा ऐसाही आग्रह है तो जा तू उस राजकुमार को मेरे सम्मुख ले आ, मैं भी देखूं कि वह कौन और कैसा है ! यह सुन रूपशिखा राजकुमार शृङ्गभुज के पास लौट आई और वहां का सब हाल सुना उन्हें अपने पिता के समीप ले गई। अग्निशिख ने नम्र राजकुमार को देख आदर कर यों कहा कि हे राजपुत्र ! मैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अपनी कन्या इस रूपशिखा को तुम्हें देता हूं किन्तु तुम्हें मेरा एक कहना मानना पड़ेगा। यह सुन राजकुमार शृङ्गभुज ने भी नम्र हो उत्तर दिया कि बहुत अच्छा मैं भी आपकी आज्ञा का उल्लङ्घन न करूंगा आप जो कहेंगे सोही करूंगा। शृङ्गभुज की यह बात सुन प्रसन्न हो अग्निशिख ने कहा "बहुत अच्छा तो उठो और स्नानघर मे जा स्नान करके मेरे पास आओ"। राजकुमार से इतना कह उसने रूपशिखा को आज्ञा दी कि तू जाकर अपनी सब बहिनों को यहां बुला ला। अग्निशिख की ऐसी आज्ञा पा वे दोनों अर्थात् राजकुमार और रूपशिखा वहां से यह कहकर चली कि जैसा आपने कहा है हम वैसाही करेंगे। मार्ग में उस बुद्धिमती रूपशिखा ने राजकुमार से कहा कि हे प्राणनाथ! मेरी एक सौ क्वारी बहिनें हैं। सबका स्वरूप एकसां और सबके वस्त्राभरण भी एक से ही हैं, हम सबों के गले मे एकही सा सोने का कण्ठा रहता है। मेरे पिता सबों को एकही स्थान पर खड़ा कर आपको घवड़ा देने के लिये कहेंगे कि इन मे से अपनी प्रिया को पहिचान लो। मैं उनके इस बहाने को जानती हूं, नहीं तो मेरी सब बहिनों को एकही स्थान पर एकत्र करने का और क्या अभिप्राय है। सो जब सब कुमारियां यहां एकत्र होंगी तो मैं अपने सुवर्ण कण्ठे को सिर पर पहिन लूंगी जिस्से आप मुझे पहिचान कर बनमाला को मेरेही पर डाल सकैं। मेरे पिता कुछ प्रज्ञाहीन से हैं बिवेकिनी बुद्धि इन्हें नहीं है, इसके अतिरिक्त उनकी राचसी सिद्धि मुझ पर नहीं चल सकती। और आपकी बंचना के लिये वह जो जो कहें आप सब स्वीकार कर लीजियेगा, और उसका वृत्तान्त मुझ से कह दीजियेगा मैं सब ठीक करलूंगी। इस प्रकार राजकुमार को समझाय रूपशिखा अपनी बहिनों के स मोप गई और शृङ्गभुज भी "बहुत अच्छा" कह स्नान करने चला गया। कुछ देर के उपरान्त अपनी सब बहिनों को साथ लिये रूपशिखा निज पिता के पास आगई, उधर से शृङ्गभुज को भी दासी ने स्नान कराके ला उपस्थित किया। अग्निशिख ने शृङ्गभुज को एक बनमाला देकर यों कहा कि इनमे से अपनी प्रिया को पहिचान कर यह माला पहिना दो। शृङ्गभुज ने माला ले ली और पूर्वनिर्धारित संकेत से रूपशिखा को पहिचान कर वह माला उसके गले मे डाल दी। तदुपरान्त अग्निशिख ने निज कन्या और राजकुमार से कहा कि कल मैं आप दोनों का मङ्गल विवाह कर दूंगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतना कह उसने सब शेष की कन्याओं को तो घर भेज दिया और थोड़ीही देर में शृङ्गभुज को बुलाकर यों कहने लगा कि इस बैल की जोड़ी को साथ लेकर नगर के बाहर जाओ और खेत जोत कर सात सौ मन तिल उस ढेर मे से लेकर बो आओ। यह सुन शृङ्गभुज ने कहा "बहुत अच्छा" किन्तु चित्त में व्यग्र हो रूपशिखा के पास जा सब कह सुनाया। उसने कहा कि हे आर्य्यपुत्र! आप कुछ भी चिन्ता न करिये आप खेत पर जाइये मैं अपनी माया के बल से क्षण भर में इस काम को कर देती हूं। यह सुन राजकुमार उस तिल के ढेरको देख बिह्वल होगया किन्तु खेत पर जा निराश होने पर भी उसने भूमि के जोतने का उद्योग किया। हल में हाथ लगातेही देखता क्या है कि उसकी प्रिया के मायाबल से सारा खेत आप से आप जुत गया और तिल भी बोये गये। यह देख उसे बड़ा आश्चर्य हुआ; फिर उसने अग्निशिख के पास जाकर कहा कि हे आर्य्य! मैं आप की आज्ञा पूरी कर आया। यह सुन उस बंचक राक्षस ने राजकुमार से कहा कि मुझे इष्ट नही है जाओ सब बीज इकट्ठा करो। यह सुन "बहुत अच्छा" कह रूपशिखा के पास आ राजकुमार ने सब हाल सुना दिया। उसने कहा कि आप निश्चिन्त हो खेत पर चलिये। इधर रूपशिखा ने अपनी माया से करोड़ों चिउँटियों को उत्पन्न किया और उनके द्वारा इस कार्य्य को झटपट करा लिया। चिउँटियों ने थोड़ीही देर में तिलों को बीनकर एकत्र कर दिया। यह देख शृङ्गभुज ने पुनः उस राक्षस के पास जाकर निवेदन किया कि 'तिलों का ढेर तयार है चलकर देख लीजिये, तदुपरान्त उस मूर्ख शठ राक्षस ने कहा कि यहां से केवल दो योजन दक्षिण की ओर जाकर शून्य जंगल में एक शिवमंदिर मिलेगा जहां मेरा प्यारा भाई धूमशिख नामक रहता है। इसी क्षण वहां चले जाओ और शिवमंदिर के सन्मुख खड़े होकर यों कहना कि "हे धूमशिख! मैं तुम्हारे छोटे भाई अग्निशिख का भेजा हुआ दूत हूं, तुम्हें इसलिये निमंत्रण देने आया हूं कि कल प्रातःकाल रूपशिखा का विवाह है सो तुम शीघ्र चलो। इतना मेरे भाई से कहकर आजही झटपट लौट आओ तो प्रातः काल मैं अपनी पुत्री का बिवाह तुम्हारे साथ कर दूंगा"। उस दुष्ट का ऐसा भाषण सुन राजकुमार ने कहा "बहुत अच्छा" और स्वयं रूपशिखा के पास पहुँच सब वृत्तान्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कह सुनाया। उस साध्वी ने थोड़ी सी मिट्टी, कुछ पानी, कुछ कांटे और थोड़ी सी अग्नि राजकुमार को दी और एक शीघ्रगामी घोड़ा भी भेंट कर यों कहा कि इसी घोड़े पर चढ़कर आप शीघ्रही वहां जाइये और पिताजी का संदेश धूमशिख से कहकर इसी पर झट लौट आइये किन्तु मार्ग में आती समय मुंह फेर फेर कर पीछे देखते आना, यदि धूमशिख को अपने पीछे आते देखना तो इस मिट्टी को अपने पीछे अर्थात् उसके आगे फेंक देना। यदि इतने पर भी वह आपके पीछे पीछे दौड़ता आवे तो यह पानी भी उसी प्रकार फेंक देना, यदि इतने पर भी वह न माने तो कांटों को उसके आगे डाल देना, यदि फिरभी वह न रुके तो अपने और उसके बीच में अग्नि को फेंक देना। ऐसा करने से आप यहां राजी खुशी पहुँच जायंगे, सो आप किसी बात की चिन्ता न कर इसी क्षण चले जाइये और मेरे विद्याबल का प्रताप देखिये।

रूपशिखाकी इतनी बात सुन उसकी दी हुई मिट्टी इत्यादि साथ ले राजकुमार शृङ्गभुज घोड़े पर चढ़ जङ्गल में उस देवमन्दिर के समीप जा पहुंचे। वहां देखा कि श्रीशम्भु भगवान् की एक अतीवोत्तम मूर्ति है, बाईं ओर श्रीपार्वतीजी शोभा पा रही हैं और दाहिनी ओर गणनायक जी बिराजते हैं। ऐसी सुन्दर मूर्ति का दर्शन करतेही राजकुमार ने सादर प्रणाम किया और तदनन्तर बाहर खड़े हो ऊँचे स्वर से अग्निशिख का कहा हुआ निमंत्रणवाला सन्देश कह सुनाया फिर अपने घोड़े पर सवार हो उसी क्षण उसने लौटता धावा किया। थोड़ीही दूर जाकर ज्योंही उसने पीछे गर्दन फेरी देखता क्या है कि धूमशिख उसके पीछे दौड़ा चला आता है। यह देख उसने अपने पीछे रूपशिखा की दी हुई वह मिट्टी फेंक दी उसके फेंकतेही वहां एक पर्बत खड़ा हो गया,। वह राक्षस उस पर्बत को डांक पुनः उसके पीछे लपका, तब राजकुमार ने जल फेंक दिया उसी क्षण वहां एक बहुत बड़ी नदी बहने लगी किन्तु वह राक्षस नदी को भी डांक कर इसके पीछे दौड़ा। यह देख शृङ्गभुज ने कांटों को पीछे फेंका, उसी क्षण कांटेदार एक बड़ा जङ्गल उत्पन्न होगया किन्तु वह राक्षस कांटों के ऊपर दौड़ने लगा, यह देख राजकुमार ने अग्नि फेंकी तब तो वह सारा जङ्गल धू धू कर जलने लगा। खाण्डव वन की नाईं उसे जलता और लांघने योग्य न पाकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह राक्षस खिन्न और भयभीत हो लौट गया। रूपशिखा की माया से बिमोहित होकर वह राक्षस आकाश का उड़ना भूल गया और पैदलही घर को लौटा।

इसके अनन्तर शृङ्गभुज निर्भय हो अपनी प्यारी की प्रशंसा करता हुआ धूमपुर में आ पहुंचा और घोड़े को उसे समर्पण कर वहां का सारा वृत्तान्त कह गया जिसे सुन वह अत्यन्त प्रसन्न हुई। फिर अग्निशिख के समीप जा राजकुमार ने कहा कि मैं आपके भाई धूमशिख के पास जाकर उन्हें निमंत्रण दे आया। यह सुन घबड़ा कर अग्निशिख ने पूछा कि यदि तुम सचमुच वहां गये थे तो वहां का कुछ चिन्ह और पता बताओ कि वह स्थान कैसा है जिससे मुझे विश्वास हो। राजकुमार ने कहा कि उस मन्दिर के अन्दर जो शिवमूर्ति है उसके बांये हाथ श्रीपावतीजी और दाहिने हाथ श्रीगणेशजी विराजते हैं। यह सुन विस्मित हो अग्निशिख अपने मन में विचारने लगा कि क्या यह सचमुच वहां हो आया और मेरा भाई इसे खा न सका तो यह साधारण मनुष्य नहीं है, इसमें निस्सन्देह कोई देवांश है और यह मेरी कन्या के योग्य भर्ता है। ऐसा बिचार उसे जाने की आज्ञा दी और कहा कि इस समय तुम जाओ कल तुम्हारे बिवाह का प्रबन्ध किया जायगा। वह मूढ़ यह न समझ सका कि "घर का भेदिया, लङ्कादाह"।

शृङ्गभुज ने रूपशिखा के पास आकर वहां का सब हाल कहा; फिर उन दोनों ने खाया पीया और विवाह की उत्सुकता में किसी २ प्रकार वह रात बिताई। प्रात:काल अग्निशिख ने अग्निको साक्षी देकर विधिपूर्वक निज कन्या रूपशिखा का विवाह बिधि के अनुसार बड़ी धूम धाम से शृङ्गभुज के साथ कर दिया। विचारने की बात है कि कहां यह राक्षससुता और कहां यह राजकुमार! इन दोनों का विवाह कैसा! किन्तु नहीं "पूर्व्वजन्म के कर्म्म की गति नाहिँ जानी जाय। अनजाने संयोग कहँ बिधिना देत मिलाय"॥ राक्षससुता को पाकर राजकुमार की ऐसी शोभा होरही थी जैसी पङ्कसंभूता कमलिनी को पाकर राजहँस की होती है। राजकुमार अपनी भार्य्या पर जी जान से न्यौछावर थे और रूपशिखा भी अपने पति को ईश्वर समान मानती थी।

योंही सुखपूर्वक वहां कुछ दिन रहने के उपरान्त एक दिन शृङ्गभुज ने अपनी भार्य्या से कहा कि हे प्यारी! चलो अब हमलोग बर्धमानपुर को चलें क्योंकि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वही अपनी राजधानी है, दूसरी बात यह है कि शत्रुओं से हटाये जाकर मेरे जैसे मानी लोग कभी भी विदेश में नहीं रह सकते। यद्यपि अपनी जन्मभूमि तुम्हें अत्यन्त प्यारी होगी तौभी हे प्रिये! मेरे लिये तुम पिताजी से आज्ञा लेकर मेरे साथ चलो और उस सुवर्ण तीर को भी सङ्ग ले लो। यह सुन, रूपशिखा ने कहा कि हे प्राणनाथ! आपने जैसी आज्ञा दी है मैं वैसाही करूँगी। मुझे जन्म-भूमि और स्वजनों से कुछ काम नहीं है मेरे तो आपही सब कुछ हैं। साध्वी स्त्रियों को पति के अतिरिक्त दूसरी गतिही नहीं है। पिताजी से भी पूछने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि फिर वे हमलोगों को जाने न देंगे, आप देखही चुके हैं कि उनका स्वभाव क्रोधी है इसलिये उनसे बिना कहेही चले चलना अच्छा होगा। और यदि वे सेवकों और दासियों से जानकर हमारे पीछे दौड़ेंगे तो मैं अपने विद्याबल से उन्हें मूढ़ बना दूंगी क्योंकि वे कुछ बिलक्ष से और अल्पबुद्धिवाले हैं। इतना कह रूपशिखा उस सोने के बाण तथा शरवेग नामक घोड़े को ले आई, अपना आधा राज्य भी उसने पति के अर्पण किया तथा एक सन्दूक उत्तम रत्नों का भरा हुआ साथ ले लिया। तदुपरान्त वे दोनों उसी घोड़े पर चढ़, और सेवकों से उद्यान में जाने का बहाना कर, बर्धमानकी यात्रा के निमित्त चल पड़े।

जब वे दोनों कुछ दूर निकलगये तो अग्निशिख को यह हाल विदित हुआ, वह आकाशमार्ग से उड़ता हुआ उनके पीछे दौड़ा। उसके दौड़ने के वेग से जो शब्द उत्पन्न हुआ उसे सुनकर रूपशिखा ने मार्गही में शृङ्गभुज से कहा कि, हे प्राणनाथ! मेरे पिता जी तो हमलोगों को रोकने के लिये आ रहे हैं, आप निडर और निश्चिन्त रहिये देखिये मैं उन्हें कैसा धोखा देती हूं। न तो वह आपही को देख सकेंगे और न घोड़े को, मैं अपने विद्याबल से दोनों को लोप कर देती हूं। इतना कह वह घोड़े पर से उतर पड़ी और अपना रूप पुरुष का सा बना लिया। फिर एक लकड़हारे से जो जङ्गल में लकड़ी काटने आया था, समीप जाकर कहने लगी कि अभी एक महान् राक्षस यहां आ रहा है तुम तनिक ठहर जाओ और कुल्हाड़ी मुझे दे देओ। इतना कह उससे कुल्हाड़ी ले स्वयं लकड़ी काटने लगी। शृङ्गभुज मुस्कुराता हुआ यह सब कौतुक देख रहा था। इतनेही में वह राक्षस आ पहुँचा और उस लकड़ी काटनेवाले (रूपशिखा) से पूछने लगा—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

"क्यों भई ! तुमने एक स्त्री और एक पुरुष को इधर जाते देखा है ?" उसने उत्तर दिया "जी नहीं ! हमलोग तो अपनेही काम में चूर थे, हमने तो नहीं देखा आज राक्षसपति अग्निशिख की मृत्यु हो गई है सो उसी के जलाने के लिये हमलोग लकड़ी काट काटकर ढेर लगा रहे हैं।" यह सुन वह मूढ़ राक्षस विचारने लगा "तो क्या मैं सचमुच मर गया, जाने दो मुझे कन्या सन्या से क्या काम है, मैं जाकर अपने लोगों से पूछता हूं कि मैं जीता हूं कि मर गया !" यह विचार वह उसी क्षण घर की ओर लौटा, और रूपशिखा हँसती हुई पुनः अपने पति के साथ घोड़े पर चढ़ आगे बढ़ी। उधर वह राक्षस घबड़ाया हुआ क्षण भर में घर पहुँचा और अपने सेवकों से पूछने लगा कि मैं जीता हूं या मरा। जब उन लोगों ने कहा कि आप जीते हैं तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ और पुनः गरजता हुआ उन लोगों के पीछे दौड़ा। रूपशिखा ने उसकी गरज़ सुनकर अनुमान किया कि वह फिर आता है, सो झट घोड़े पर से उतर पड़ी और अपने पति तथा घोड़े को मन्त्रबल से अदृश्य कर स्वयं एक पत्रवाहक पुरुष का रूप धर मार्ग में खड़ी हो रही। अग्निशिख ने आतेही उससे पूछा कि 'तुमने किसी पुरुष को एक स्त्री के साथ इधर से जाते देखा है ?' उसने दीर्घ निश्वास लेकर कहा कि मैंने तो किसी को भी नहीं देखा क्योंकि मैं अपनी जल्दी में पड़ा हूं कारण यह कि आज किसी शत्रु ने अग्निशिख को रण में बहुतही घायल किया है सो उसके बचने की कोई आशा नहीं है उसने मुझे दूत बनाकर यह पत्र दिया है कि मैं उसके भाई धूमशिख को शीघ्रही बुला लाऊँ क्योंकि अब वह अपना सारा राज्य अपने भाई को दे दिया चाहता है।' यह सुन अग्निशिख विचारने लगा कि क्या शत्रुओं ने मुझे घायल कर दिया है, चलो मैं घर पर चल के देखता न हूं, इतना विचार वह घबड़ाया हुआ अपने स्थान पर पहुँचा। उस मूढ़ को यह न सूझी कि मैं तो राजी खुशी खड़ा हूं, आहत कौन हुआ ? किन्तु नहीं विधाता की सृष्टि में मूर्ख भी बड़े विचित्र होते हैं। घर पर आकर उसने लोगों से पूछा कि मैं घायल तो नहीं हुआ, सब हँसने लगे और बोले कि नहीं आप अच्छे हैं घायल नहीं हुये—तब उसे विश्वास हुआ कि मैं राजी खुशी हूं- फिर कई बार के दौड़ने धूपने से थक कर अपनी कन्या को भूल गया। इस प्रकार रूप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शिखा अपने पिता को विमोहित कर निज पति के साथ चली गई ठीकही है, साध्वी स्त्रियां अपने पति के हित के सिवाय दूसरी बातही नहीं जानतीं। उसी आश्व ग घोड़े पर शृङ्गभुज अपनी प्यारी के साथ बर्धमानपुर में जा पहुँचा।

पिता वीरभुज ने जब सुना कि उनका पुत्र शृङ्गभुज पत्नी के साथ आया है तो वे उसे लेने के लिये प्रसन्नतापूर्वक आगे चलकर आये और जब उसे, भामा के साथ कृष्ण की नाईं देखा तो उन्होंने निज राज्यसम्पत्ति को मानो पुनः पाई सी माना। शृङ्गभुज ने पत्नी सहित घोड़े पर से उतर पिता के चरणों में झुक कर प्रणाम किया और उन्होंने भी गद्गद हो उसे उठाकर हृदय से लगा लिया, और बड़े धूमधाम के साथ नगर में लिवा ले गये। महाराज ने जब उससे पूछा कि हे पुत्र! तुम हमलोगों को छोड़कर कहां चले गये थे तो शृङ्गभुज ने सारा वृत्तान्त आरम्भ से लेकर सुना दिया। इसके अनन्तर सब भाइयों को वहां बुलाकर सबके सन्मुखही उसने उस सोने के तीर को निर्वासभुज के आगे रख दिया। महाराज वीरभुज को जब सब हाल ठीकोठीक विदित हुआ तो वे अपने सब पुत्रों से अप्रसन्न हुये और केवल शृङ्गभुजही को अपना सुत माना।

बुद्धिमान् महाराज वीरभुज ने अच्छी तरह समझ लिया कि जिस प्रकार इन नाममात्र के भाइयों ने डाह खाकर इस विचारे निरपराधी को देशनिकाला दिया था उसी प्रकार इसकी निर्दोषी माता गुणवरा को भी जिसे मैं बहुत चाहता हूं सब रानियों ने मिथ्या कलङ्क लगाया है वह भी निस्सन्देह शुद्ध और निरपराधिनी है। अतएव अब विलम्ब करने का क्या काम है मैं अभी यथार्थ बात का निर्णय कर लेता हूं। ऐसा निश्चय ठान महाराज ने राजकाज में वह दिन बिताया और रात को भेद लेने के अभिप्राय से अयशोलेखा के अन्तःपुर में गये। महाराज को देख रानी अत्यन्त प्रसन्न हुई और इन्होंने खूब मद पिलाकर उसे उन्मत्त कर दिया जब वह सो गई तो बकने लगी कि यदि मैं ऐसा मिथ्या कलङ्क गुणवरा को न लगाती तो क्या कभी महाराज मेरे यहां आते! महाराज तो जागही रहे थे, उस दुष्टा के मुख से ऐसी बरबराहट सुन ठीक पता पाकर वे क्रोध से उठकर वहां से बाहर निकल आये और प्रतीहारी को बुलाकर आज्ञा दी कि अभी जाकर रानी गुणवरा को स्नान करा के मेरे समीप ले आओ, क्योंकि ज्योतिषी जी ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसी समय तक अनिष्टशान्ति के लिये उन्हें भूगर्भवास दिलाया था। यह सुन वे लोग झट वहां पहुँचे और दासियों को आज्ञा दी कि महारानी को मङ्गलस्नान करा के महाराज के समीप ले चलो। दासियों ने आज्ञानुसार महारानी को स्नान कराया और उत्तमोत्तम वस्त्रालङ्कार से सुशोभित कर क्षण भर में मङ्गल गीत गाती हुई महाराज के पास ले आईं। इस प्रकार महाराज तथा रानी गुणवरा ने विवाहरूपी समुद्र से उत्तीर्ण हो सुखपूर्वक वह रात विताई। निज पुत्र शृङ्गभुज का सारा वृत्तान्त महाराज ने गुणवरा को सुनाया और रानी के बन्धन तथा उसके छुटकारे का समग्र हाल उन्होंने अपने पुत्र से कहा। उधर अयशोलेखा की नींद जो खुली तो महाराज को अपने पास न पाकर वह बहुत घबराई, फिर क्रमशः सारा हाल विदित होने पर उसे अत्यन्त खेद हुआ। प्रातःकाल होने पर महाराज, शृङ्गभुज को रूपशिखा के साथ लेकर गुणवरा के समीप आये। भूगृह से बाहर निकली हुई माता को देखतेही शृङ्गभुज ने पत्नीसहित निज जननी के चरणों में प्रणाम किया और उसने भी पुत्र को हृदय से लगा उसका माथा चूम उसे तथा बहू को आशीर्वाद दिया। तदनन्तर पिता की आज्ञा से शृङ्गभुज ने अपना तथा रूपशिखा का सारा हाल सविस्तर निज माता को कह सुनाया। रानी गुणवरा ने प्रसन्न होकर कहा कि हे पुत्र! इस रूपशिखा ने तुम्हारे लिये अपने जीवन, अपने बन्धु और अपने देश इन तीनों को तृणवत् परित्याग कर दिया तो फिर बाकी क्या रहा! जान पड़ता है कि यह कोई देवी है जिसने विधिवश तुम्हारे लिये अवतार लिया है, इसने सब पतिव्रताओं को अपने सत्यधर्म से जीत लिया है। रानी का यह बचन सुन महाराज ने भी अपनी सम्मति दी और कहा कि तुम्हारा कहना बहुत ठीक है। रूपशिखा अपनी प्रशंसा सुन, शील लज्जा और विनय से अपना सिर नीचे किये जाती थी। इतनेही में वह सुरक्षित नामक प्राचीन अन्तःपुराध्यक्ष भी, जिसे अयशोलेखा ने झूठेही कलङ्क लगाया था, तीर्थ यात्रा करके आ पहुँचा। द्वारपाल ने उसके आने का हाल महाराज से निवेदित किया, और उन्होंने भी उसी क्षण उसे सम्मुख आने की आज्ञा दी, आतेही उसने महाराज के चरणों में प्रणाम किया, और महाराज ने जो अब यथार्थ हाल जान गये थे, उसका भली प्रकार आदर सत्कार किया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

फिर उसी सुरक्षित के द्वारा शेष की सब रानियों को वहां बुलवा भेजा और उसे आज्ञा दी कि 'इन सभों को ले जाकर उसी भूगृह में डाल कर बन्द कर दो।' वे सब इस आज्ञा को सुनतेही कांप उठीं और उसी क्षण कारागार में डाल दी गईं। यह देख करुणामयी महारानी गुणवरा के हृदय में बड़ी दया उत्पन्न हुई, उसने महाराज के चरण पकड़ कर निवेदन किया कि 'हे नाथ! वरुक आप मुझेही पुनः उस भूगृह में बन्द कर दीजिये किन्तु इन सबों को अब कृपा कर कारागार से छोड़ दीजिये क्योंकि इनका यह कष्ट मुझसे देखा नहीं जाता।' इस प्रकार बार बार महाराज से प्रार्थना कर उसने सबों को कारागार से छुड़वा दिया। ठीकही है, 'सज्जन सों दुर्जन पुरुष करै लाख अपकार। पै सुभाव उनको यही करैं तासु उपकार।' महाराज ने सब रानियों को मुक्त कर यह आज्ञा दी कि 'जाओ, गुणवरा की प्रार्थना करने पर हम तुम्हें छोड़ देते हैं, चुपचाप अपने अपने घर चली जाओ' यह सुन वे सब परम लज्जित हो नीचा मुंह कर चुपके खसक गईं, घर की अपेक्षा उन्हें मृत्यु के मुख में जाना स्वीकार था, पर क्या करें। महाराज सदा गुणवरा का आदर सत्कार करते और अपने को धन्य मानते थे कि हमने प्राचीन जन्म के किसी बड़े पुण्य के प्रताप से ऐसी सुशीला और पतिव्रता भार्य्या पाई है। फिर महाराज ने निर्वासभुज इत्यादि अपने बाकी के ९९ पुत्रों को सन्मुख बुलाकर यह आज्ञा दी कि 'तुम सब महा पापी हो; हमने सुना है कि तुम लोगों ने भी ब्रह्महत्या की है सो इसी क्षण मेरे राज्य से निकल जाओ और तीर्थ यात्रा करके आओ तो यहां रहने पाओगे।' यह सुन वे सब घबड़ा गये और किसी प्रकार महाराज को समझा न सके। ठीकही है—"हठ पै नृप कम्मर कसै कौन बुझावै ताहिँ"। भाइयों को जाते देख शृङ्गभुज की आंखों में करुणा से आंसू भर आये सो उसने हाथ जोड़ पिता से यों निवेदन किया कि हे तात! आप कृपा करके इन लोगों का यह एक अपराध क्षमा कर दीजिये, इतना कह वह प्रार्थना करता हुआ निज पिता के चरणों पर गिर पड़ा। महाराज ने जब देखा कि मेरा पुत्र राज्य का भार सँभाल सकेगा तो अपने अन्तःकरण के अभिप्राय को छिपा कर शृङ्गभुज का कहना मान लिया। यह देख भाइयों ने शृङ्गभुज को अपना प्राणदाता माना।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजकुमार के ऐसे उत्तम गुणों को देख सारी प्रजा उस पर मोहित हो गई और सब लोग उससे स्नेह करने लगी।

कुछ दिनों के उपरान्त महाराज वीरभुज ने ९९ जेठे भाइयों के रहतेही शृङ्गभुज को गुणों में जेठा पाकर उसेही यौवराज्य पद पर विभूषित किया। अभिषेक हो जाने के उपरान्त पिता की आज्ञा लेकर शृङ्गभुज ने समग्र सेना के साथ दिग्विजय के निमित्त यात्रा की और थोड़ेही दिनों के अनन्तर सब दिशाओं में अपना विमल यश स्थापन कर निज बाहुबल से समस्त राजाओं को जीत वह अपनी राजधानी में लौट आया। सब भाइयों ने उसके आगे नम्रता स्वीकार की और वह भी राज्यभार को उत्तम रीति से धारण कर माता पिता को सब प्रकार का सुख दे, प्रसन्न रख, आनन्द से अपने दिन बिताता था। ब्राह्मणों को दान देकर वह सन्तुष्ट कर देता, इस प्रकार रूपवती रूपशिखा के साथ वह सुखपूर्वक अपनी राजधानी में रह कर राजकाज निबाहता था। इस प्रकार साध्वी स्त्रियां पति की अनन्य भक्ति के साथही साथ अपने सास ससुर को भी सदा प्रसन्न रखती हैं जैसे रूपशिखा और गुणवरा ने प्रत्यक्षही कर दिखाया।

हरिशिखमुख ते सुनि कथा नरवाहन गुणखान।
रत्नप्रभा समेत कहि साधु साधु हरखान॥
पुन उठिकै नित्यक्रिया विधिवत कीन्ही जाइ।
वत्सेश्वराहिं प्रणाम करि भवन गये मुद पाइ॥

छठवां तरङ्ग।

दूसरे दिन प्रातःकाल जिस समय राजकुमार नरवाहनदत्त अभी रत्नप्रभा के भवनही में थे कि गोमुख इत्यादि मन्त्रीपुत्र आन उपस्थित हुये। किन्तु मरुभूति को मद पीने से ऐसा आलस्य हो रहा था कि वह कुछ विलम्ब से आया, गले में पुष्पों की माला पड़ी हुई और शरीर में चन्दनादिक का अनुलेप हो रहा था। उसकी यह दशा देख ठट्ठे से लड़खड़ाते हुये उसके समीप जाकर गोमुख ने कहा "क्यों मरुभूति! तुमने मन्त्री यौगन्धरायण के पुत्र होकर भी नीति नहीं सीखी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो प्रातःकाल मद्य पीकर प्रभु के सम्मुख ऐसे वेष से आते हो" यह सुन मदमत्त मरुभूति ने क्रोध से उत्तर दिया कि ऐसी शिक्षा प्रभु के द्वारा या गुरु के द्वारा दी जा सकती है, हे हत्यकपुत्र ! तू कौन है जो मुझे ऐसा उपदेश करता है ? इतना सुन गोमुख ने हँस कर कहा कि क्या अविनीत सेवक को प्रभु कभी निज मुख से डांटते हैं, उनके पासवालों का यह काम है कि उसको उचित शिक्षा देवें। इसमें सन्देह नहीं कि मैं हत्यक का पुत्र हूं किन्तु आप तो मन्त्री पुङ्गव हैं * कसर केवल इतनीही है कि आपके दो सींग नहीं हैं। गोमुख का ऐसा वचन सुन मरुभूति ने उत्तर दिया कि जो गोमुख है उसी को पुङ्गवत्व भी शोभा देता है। किन्तु तू जो अदान्त है इससे जातिसङ्करता प्रतीत होती है। गोमुख ने सब से कहा कि यह मरुभूति यथार्थ में एक रत्न हैं क्योंकि जो वज्र से भी बेधा नहीं जाता उसमें किसको सामर्थ्य है कि गुण † पोह दे। वे पुरुषरत्न दूसरे होते हैं जो बिना परिश्रमही वेधे जाते हैं, सुनिये मैं बालू के पुल का वृत्तान्त सुनाता हूं।

प्रतिष्ठानपुर में तपोदत्त नामक कोई ब्राह्मण रहता था। पिता के अनेक यत्न करने पर भी उसने बालकाल में विद्या न पढ़ी। सयाना होने पर जब सब लोग उसे बुरा कहने लगे तो वह विद्यासिद्धि के हेतु तपस्या करने के लिये श्रीगङ्गाजी के तट पर गया। उसकी उग्र तपस्या से विस्मित हो ब्राह्मण का रूप धर इन्द्र उसके समीप रोकने के लिये आये। गङ्गा के तट पर खड़े होकर वहीं से खोद खोद कर उनने जल में बालू फेंकना आरम्भ किया। तपोदत्त चुपचाप यह देख रहा था, कुछ देर के उपरान्त उसने पूछा कि हे ब्राह्मणदेव ! यह आप क्या करते हैं ? क्यों बालू उठा उठाकर गङ्गाजी में डालते हैं?। बार बार पूछे जाने पर ब्राह्मणरूपधारी इन्द्र ने कहा कि, मैं प्राणीमात्र के उपकारार्थ गङ्गाजी के पार जाने के हेतु पुल बांध रहा हूं। तपोदत्त ने उत्तर दिया कि तू बड़ा मूर्ख जान पड़ता है, भला इस प्रबल तरङ्ग में कभी बालू से पुल बँध सकता है ? यह सुन, द्विजरूपधारी शक्र ने कहा कि यदि आप इतना जानते हैं तो बिना पढ़े लिखे और शास्त्र का अवलोकन किये केवल व्रत और उपवासही से विद्या प्राप्ति का

* अर्थात् मन्त्रियों में बैल। † धागा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उद्योग क्यों करती हैं ? ऐसा करना मानो खरहे के सिर में सींग चाहना अथवा आकाश में चित्र लिखने की इच्छा करना है। यदि बिना पढ़े लिखे इस प्रकार विद्या आ जावे तो संसार में कोई काहे को अध्ययन का परिश्रम करे। उस ब्राह्मण की यह बात सुन तपोदत्त ने कुछ विचार कर उसी दम तपस्या छोड़ दी और अपने घर को चला गया। कहने का तात्पर्य्य यह कि जो लोग बुद्धिमान् हैं वे थोड़ेही से बुझाने में समझ जाते हैं किन्तु मरुभूति ऐसा दुर्मति है कि समझाने से उलटा लड़ने को उद्यत होता है। गोमुख के इतना कहने पर हरिशिख ने कहा कि हे देव! यह बात सत्य है कि बुद्धिमान् व्यक्ति थोड़ेही समझाने में झट मान जाता है, देखिये—

पूर्व समय की बात है कि, वाराणसीपुरी में कोई कुरूप और निर्धन ब्राह्मण रहता था, नाम उसका विरूपशर्म्मा था। अपनी विरूपता और निर्धनता से अत्यन्त खिन्न हो वह तपोवन में जाकर घोर तपस्या करने लगा। एक दिन सुरपति ने एक रोगी और विरूप सियार का रूप धारण किया और उस तपस्वी के सन्मुख जा खड़े हुये। उसके शरीर में मक्खियां भिनभिनाते देख विरूपशर्म्मा मन में विचारने लगा कि अहो! देखो ऐसे भी जीवधारी संसार में हैं जो अपने पूर्व कर्म के कारण इतना कष्ट भोगते हैं, विधाता ने बड़ी कृपा की जो मुझे वैसा न बनाकर ऐसाही बनाया। दैव के लिखे भोगों को कौन मिटा सकता है, ऐसा मन में विचार विरूपशर्म्मा धीरे से तपस्या छोड़ अपने घर को चला गया। इस कारण हे देव! जो सुबुद्धि होते हैं वे थोड़ेही में समझ जाते हैं किन्तु मूढ़ लोग बड़े २ परिश्रम करने पर भी नहीं सीखते।

हरिशिख के कहने को गोमुख ने और भी पुष्ट किया, तब तो मदमाते मरुभूति ने क्रोध से कहा कि गोमुख को मुंह की बक बक बहुत आती है, ऐसे लोगों की भुजा में कुछ भी बल नहीं होता, सच है बकवादियों की बकबक के आगे विचारे वीर पुरुष हार जाते हैं। जब मरुभूति ने ऐसा कह लड़ने की इच्छा प्रकाश की तो मुसकुराते हुये राजकुमार ने सबों को समुझा बुझाकर शान्त कर दिया। मरुभूति को उसके घर भिजवा दिया और उन्होंने आनन्द के साथ उस दिन का सारा आह्निक कृत्य किया। दूसरे दिन प्रातःकाल जब सब मन्त्रीपुत्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुनः एकत्र हुये, मरुभूति ने लज्जा से सिर झुका लिया तो रत्नप्रभा ने राजकुमार से कहा 'हे आर्य्यपुत्र! आप बड़े सुकृती हैं जो ऐसे ऐसे मन्त्री आपके पास हैं जो चित्त के अत्यन्त शुद्ध और बालपनही से आपके साथ परम दृढ़ भक्ति रखते हैं और ये लोग भी धन्य हैं जो इन्होंने आपको प्रभु रूप से पाया है, इसमें सन्देह नहीं कि आप लोगों ने अपने प्राचीन जन्म के पुण्योंही से एक दूसरे को पाया है। रानी का ऐसा कहना सुन वसन्तक के पुत्र तपन्तक ने कहा कि यह आपने बहुतही ठीक कहा, हमलोगों के पूर्व कर्म के प्रभावही से हमें ऐसे स्वामी मिले हैं, सुनिये मैं इस पर एक कथा कहता हूं –

श्रीमहादेवजी के नगर विलासपुर में कोई विलासशील नामक राजा रहते थे जिनका नाम गुण के अनुरूपही था। उनकी रानी का नाम कमलप्रभा था, जो उन्हें निज प्राणों से भी अधिक प्यारी थी, उसके साथ भोग विलास करते राजा को चिरकाल बीत गया। समय उपस्थित होने पर सौन्दर्य्य को नाश करनेवाली बुढ़ौती राजा को आ गई, उसे देख महाराज के चित्त में परम खेद हुआ। वे चित्त में बिचारने लगे कि मैं श्वेत बालोंवाला मुख रानी को कैसे दिखलाऊँगा इससे तो मरा मर जाना अच्छा है। ऐसा विचार उन्होंने एक दिन तरुणचन्द्र नामक वैद्य को सभा में बुलवा भेजा और उसे आदरपूर्वक स्थान दे कहने लगे कि हे भद्र! आप हमारे शुभचिन्तक और योग्य वैद्य हैं इसलिये हम आपसे यह प्रश्न करते हैं, "क्या आपके पास कोई ऐसी युक्ति वा औषधि है जिससे बुढ़ौती का वारण किया जाय?" यह सुन उस कुटिल तरुणचन्द्र ने अपनी पूर्णता प्राप्त करने की इच्छा से मन में यों विचार ठाना कि यह राजा मूर्ख है मैं क्यों न इस समय इसके द्वारा लाभ उठा लूं, ऐसा विचार उस दुष्ट ने उत्तर दिया कि 'हां महाराज मेरे पास निस्सन्देह ऐसी औषधि है किन्तु एक बात यह है कि यदि भूमि के अन्दर कोठरी बनाकर आप आठ महीने तक वहां अकेले रह मेरी औषधि का सेवन करें तो मैं आपकी इस बुढ़ौती को हटा कर पुनः आपको तरुण बना दूं। इतना सुनतेही महाराज ने वैसे घर बनने की आज्ञा दे दी, सच है "विषयी मूरख होत नहिँ तनिकौ बुद्धिविचार"। मन्त्री लोगों ने राजा को बहुत समझाया कि 'हे महाराज! प्राचीन समय में तपस्या, सत्व, दम और युग के

प्रभाव से रसायन सिद्ध होते थे किन्तु इस समय में ऐसी बातें नहीं होतीं प्रत्युत जहांलों देखने में आया है विपरीत फल पैदा होता है, भला तनिक आपही विचारिये कि क्या कभी गया हुआ समय पुन: लौट कर आया है ?' राजा के हृदय में तो भोगतृष्णा बस रही थी मन्त्रियों के बचन को वहां स्थान कैसे मिल सकता था। परिजन लोगों ने कितनाही समझाया बुझाया किन्तु महाराज ने किसी की न सुनी, वे उस वैद्य के कहने के अनुसार सबको छोड़ अकेलेही उस भूगृह में जा रहे जहां केवल उनका एक सेवक और वह वैद्य आ जा सकता था, वेही दोनों लोग उन्हें औषधि इत्यादि देते और उनकी सेवा सुश्रूषा करते थे। इस प्रकार उस अन्धकारमयी कोठरी में रहते रहते महाराज को छ महीने बीते, वह बुढ़ौती और भी अधिक हो गई, तब तो उस शठ वैद्य ने विचारा कि अब कोई चालाकी खेलनी चाहिये, सो उसने एक व्यक्ति से जिसकी आकृति महाराज से कुछ मिलती थी यह सलाह की कि मैं तुम्हें राजा बनवा देता हूं तू मुझे मानना। उसने कहा बहुत अच्छा। बस इस प्रकार उससे बातचीत ठहरा वह शठ वैद्य उस व्यक्ति को एक सुरङ्ग के मार्ग से वहां लेकर पहुँचा और सोये हुये महाराज को मार कर उसी सुरङ्ग की राह से बाहर निकाल किसी अन्धे कूंये में रात को फेंक आया। फिर उसी तरुण पुरुष को वहां बैठाल उसने सुरङ्ग का मार्ग भली प्रकार बन्द करवा दिया। इसके उपरान्त वह धूर्त वैद्य राजा के लोगों से कहने लगा कि मैंने छही महीने में राजा को तरुण बना दिया है अब दो महीने में इनका रूप और भी बदल जायगा सो आप लोग अभी दूरही दूर रहकर इनके दर्शन किया करिये। इतना कह सभों को भूगृह के द्वार पर लाकर उसने खड़ा कर दिया और एक एक का नाम लेकर मानो परिचय सा देने लगा, योंही उसने दो महीने के अन्दर अन्त:पुरपर्यन्त के लोगों का परिचय उस तरुण व्यक्ति से जो राजा के स्थान पर बैठा था करवा दिया। फिर उसने दो महीने में अनेक प्रकार के भोगों से इस नवीन राजा को हृष्ट पुष्ट किया और समय उपस्थित होने पर यह कह, भूगृह से बाहर निकाला कि अब राजा तरुण हो गये हैं। सब लोगों ने उसे देखकर प्रसन्नतापूर्वक वेही कहा कि यह हमारे वही महाराज हैं जो औषधि के बल से बुढ़ौती को परित्याग कर पुन: युवा होगये हैं। इसके अनन्तर उस युवा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुरुष ने स्नान कर राज्य पा मन्त्रियों के साथ राजकाज करना आरम्भ किया। उसी दिन से उसका नाम अजर राजा पड़ा और वह अन्तःपुर की रानियों के साथ आनन्दपूर्वक रहता हुआ सुख से राज्य करने लगा और सब लोगों ने यही जाना कि यह हमारे वही प्रभु हैं जो वैद्यजी के रसायन के प्रभाव से पुनः तरुण हो गये हैं। समस्त प्रजा तथा रानी कमलप्रभा को भी प्रसन्न कर वह नवीन अजर राजा अपने मित्रों के साथ राज्य का सुख भोगने लगा। उसने अपने एक मित्र भेषजचन्द्र तथा दूसरे मित्र पद्मदर्शन को भी अपनेही समान हाथी घोड़े तथा गांवों से परिपूरित कर सुखी कर दिया। वैद्य तरुणचन्द्र को भी वह साधारण रीति से मानताही था किन्तु उस पर विश्वास न करता था क्योंकि वह भली प्रकार जानता था कि यह व्यक्ति सत्यधर्म के मार्ग से भ्रष्ट हो चुका है। एक दिन उस वैद्य ने एकान्त में राजा से कहा कि आप मुझे कुछ न गिन कर क्यों स्वतन्त्र बने फिरते हैं क्या आप भूल गये कि मैंनेही आपको राजा बनाया है। यह सुन राजा अजर ने वैद्य को उत्तर दिया कि अरे मूर्ख कौन किसका काम करनेवाला अथवा कौन किसका दाता है? सब पूर्वजन्म के पुण्य से होता और मिलता है। तू वृथा अहङ्कार मत कर, यह राज्य मुझे मेरी सिद्धि के प्रताप से मिला है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण मैं तुझे कुछही दिनों में दिखला दूंगा। यह सुन वैद्य तो डर उठा और मन में विचारने लगा कि अहो! यह राजा भभकी में आनेवाला नहीं यह तो ज्ञानियों की सी बातें करता है; अब मैं यथार्थ हाल को भी प्रकाश नहीं कर सकता क्योंकि यह राज्य पर बैठ भली प्रकार दृढ़ हो गया है मेरी बात का कौन विश्वास करेगा उलटा मेरीही हानि होगी। ऐसा मन में विचार वह चुप हो रहा और सोचने लगा कि देखें यह कौन सा प्रत्यक्ष प्रमाण दिखलाता है। एक दिन वह अजर नाम राजा अपने मित्रों तथा तरुणचन्द्र के साथ घूमते फिरते नदी तीर पर जा निकले देखते क्या हैं कि पांच सोने के कमल नदी में बहते चले आते हैं। नौकरों को भेजकर राजा ने उन कमलों को नदी में से मँगवाया और उन्हें भली प्रकार देख कर वैद्य तरुणचन्द्र से जो पासही खड़ा था यों कहा कि हे वैद्यराज! आप इस नदी के किनारे किनारे चले जाइये और इस बात का पता लगाइये कि यह सोने के कमल कहां उत्पन्न होते हैं, आप स्वयं जाकर देखें और लौट कर इसका हाल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मुझे सुनावें मुझे बड़ा कौतुक हो रहा है आप मेरे मित्र और दाता पुरुष हैं इन अद्भुत कमलों के जन्मस्थान का पता आपही से चलेगा । इतना कह राजा ने वैद्यराज को विदा किया और उसे भी नदी के तीरही तीर जैसी कि आज्ञा थी जाना पड़ा। महाराज तो अपने नगर को लौट आये और वैद्यराज नदी के किनारेही किनारे चलते चलते एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहां नदी के तट पर एक सुन्दर शिवमन्दिर शोभायमान था । पासही उस नदी के तट पर बट का एक बहुत बड़ा वृक्ष था जिसकी डाल से लटकता हुआ मनुष्य का एक पञ्जर मात्र दिखलाई पड़ा। थक जाने के कारण वैद्यराज ने वहीं पर स्नान कर शिवजी के पूजनोपरान्त कुछ विश्राम किया। इतनेही में काली घटा घिर आई और घोर वृष्टि होने लगी। वैद्यराज ने देखा कि मेघवृष्टि के बुन्द जो उस बटवृक्ष के लटकते हुये मनुष्यपञ्जर से टपक नदी में टपकते थे वे सोने के कमल होकर बहने लगते थे । यह कौतुक देख वैद्यराज को बड़ा आश्चर्य हुआ और मन में विचारने लगे कि इस निरजन स्थान में मैं इसका भेद किससे पूछूं अथवा ब्रह्मा की इस आश्चर्यमई सृष्टि का हाल कौन जान सकता है । मैंने जो इस कनककमल के उत्पन्न करनेवाले नरपञ्जर को देखा है अब इसकी गति इसी तीर्थस्थान में कर देनी चाहिये इसमें धर्मही होगा और अनेक सोने के कमल भी पैदा हो जांयगे; ऐसा विचार उसने उस अस्थिपञ्जर को वृक्ष से नदी में गिरा दिया। फिर एक दिन वहां रहकर अपना काम हो जाने के उपरान्त वैद्यराज ने घर लौटने के लिये उसी मार्ग से प्रस्थान किया, चलते चलते कुछ दिनों के उपरान्त विलासपुर में आन पहुँचे और मार्ग के धूर से भरे हुयेही राजा के निकट जा द्वारपाल से अपने आने की सूचना दी । महाराज ने उसी क्षण उन्हें बुलवा भेजा, जातेही वैद्यराज ने महाराज के चरणों में प्रणाम किया और कुशल प्रश्न के उपरान्त वहां का सब हाल कह सुनाया। महाराज ने सभा के सब लोगों को हटा दिया और एकान्त हो जाने पर वैद्यराज से कहा कि आपने हेमकमल के उत्पत्ति का स्थान देखा ? उस पवित्र तीर्थ के तटवर्ती बटवृक्ष पर जिस पञ्जर को लटकते हुये आपने देखा है वह मेरा पहिले का शरीर है, मैंने उलटे पैर से लटक कर चिरकाल तक वहां तपस्या की, और उस शरीर को परित्याग किया। उसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तपस्या के माहात्म्य से जो दृष्टि का जल मेरे पंजर से छूकर गिरता था वह सोने का कमल हो जाता था, आपने जो उस अस्थिपंजर को उस पवित्र नदी में गिरा दिया तो बहुतही उचित किया क्योंकि आप भी मेरे पूर्वजन्म के मित्र हैं। यह भेषजचन्द्र और पद्मदर्शन दोनों मेरे उस जन्म के सखा हैं, हे मित्र! उसी पूर्व तपस्या के प्रभाव से मुझे पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण है और यह राज्य भी मुझे उसी के बल से प्राप्त हुआ है। मैंने यह सब आपको युक्ति के साथ प्रत्यक्ष में दिखला दिया है और यह भी मैंने आपको बतला दिया कि आपने क्योंकर मेरा वह पञ्जरशरीर जल में गिरा दिया है। इस कारण हे मित्र! आपका यह अहङ्कार करना कि मैंने तुम्हें राज्य दिया, वृथा है, और न आप किसी प्रकार का दुःख अपने चित्त में लाइये, क्योंकि बिना पूर्वजन्म के कर्मों के कोई किसी को देनेवाला नहीं है, जन्म से लेकर मृत्यु पर्य्यन्त प्राणीमात्र पूर्वजन्म की कमाई खाता है। महाराज का ऐसा कहना सुन वैद्यराज सन्तुष्ट हो गये और सदा उनकी सेवा से प्रसन्न रह अपना समय सुख से विताते थे। उदारहृदय महाराज अजर भी, जिन्हें अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त विदित था, वैद्यराज का सन्मान धन से कर, पृथ्वी को जीत कर जो उन्हें पूर्वजन्म के पुण्य से प्राप्त हुई थी अपनी रानियों और पुत्रों सहित सुख से राज्य करते थे।

हे देव! इस प्रकार इस संसार में सब शुभाशुभ काम प्राचीन जन्म के भले और बुरे कर्मों के अनुसार होते हैं। इसीलिये हमलोगों का यह विश्वास ठीक है कि हम लोगों ने अपने पूर्वजन्म के पुण्य के प्रताप से आपको स्वामी पाया है, नहीं तो दूसरे सैकड़ों लोगों के वर्तमान रहते आप हमीलोगों पर इतनी कृपा क्यों रखते हैं।

सुनी तपन्तक की यह बानी। रत्नप्रभा हिये हरखानी॥
नरवाहन युवराज सुखारे। मज्जन हेतु निकेत सिधारे॥
करि असनान गये पुनि तहवाँ। वत्सराज महराजा जहवाँ॥
सादर कीन्हों जाइ प्रणामा। आशिष दीन्ह नृपति गुणधामा॥
पुनि जननी के भवन पधारे। गद्गद मातु गोद बैठारे॥
विदा मांगि सचिवन ढिग आये। तब अपनेही महल सिधाये॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

खान पान रानी सग कीन्हा। मित्रन गमन सुआयसु दीन्हा॥
सुख सौं सारी रैन बिहानी। भये भोर जागे मुद मानी॥

सातवां तरङ्ग।

दूसरे दिन राजकुमार नरवाहनदत्त रत्नप्रभा और अपने मन्त्रीपुत्रों के साथ बैठे इधर उधर की बातें कर रहे थे कि इतने में राजभवन के अँगने में किसी के रोने की ध्वनि सुन पड़ी। 'यह कैसा शब्द है' पूछने पर किसी दासी ने आकर कहा कि हे प्रभो! यह श्रीमान् का सेवक धर्मगिरि नामक कंचुकी रो रहा था। उसके किसी मूर्ख मित्र ने यहां आकर कह दिया कि तुम्हारा भाई जो विदेश में तीर्थ यात्रा करने गया था, मर गया। यह सुन वह मोह से व्याकुल हो भूल गया कि मैं महाराज के घर में हूं और अचानचक फूट के रो उठा, लोगों ने उसको अब उसके घर पर पहुँचा दिया है। यह सुन युवराज को अत्यन्त खेद हुआ जिसे देख रानी रत्नप्रभा ने भी विषख होकर कहा कि अहो! प्रियबन्धु के बियोग का दुःख अत्यन्तही दुःसह होता है, खेद तो इस बात पर है कि विधाता ने मनुष्य को अजर और अमर न बनाया। महाराणी का ऐसा बचन सुन मरुभूति ने उत्तर दिया कि हे देवि! मनुष्यों में यह बात कहां हो सकती है, सुनिये मैं आपको एक कथा सुनाता हूं—

दीर्घायु नामक नगर में कोई चिरायु नाम राजा रहते थे जो यथार्थ में चिरायु और सर्वसम्पत्ति के निधान थे। बोधिसत्व के अंश से उत्पन्न कोई नागार्जुन-नामक उनके मन्त्री थे जो स्वयं भी अत्यन्त दयालु दानशील और ज्ञानवान पुरुष थे। इन मन्त्री महाशय ने कोई ऐसा सिद्ध रसायन बनाया था कि जिसके बल से उनने अपने को तथा राजा को भी अजर और चिरजीवी कर दिया था। एक समय की बात है कि उस मन्त्री का एक बालकपुत्र जिसे वह बहुतही अधिक चाहता था, मर गया। यह देख मन्त्री को परम खेद और सन्ताप हुआ, उसने लोगों को मृत्यु से अभयदान देने के लिये कुछ तो अपनी तपस्या और कुछ दिव्य औषधियों के बल से इसी लोक में अमृत बनाने का उद्योग आरम्भ किया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

केवल एक औषधि का मेल करना शेष रह गया था जिसके लिये वह कोई शुभ मुहूर्त विचारता था कि इतने में यह समाचार इन्द्र भगवान् को विदित हुआ। शक्र ने सब देवताओं को एकत्र कर विचार किया और दोनों अश्विनीकुमारों को यह आज्ञा दी कि आप लोग पृथ्वी पर जाकर मेरी ओर से, नागार्जुन से कहिये कि आपने मन्त्री होकर यह कैसी अनीति ठानी है क्या अब आप प्रजापति को जिनने मनुष्य मात्र के जीवन का अन्त मरनाही नियत किया है जीतने का उद्योग कर रहे हैं आप अमृत बनाकर उन्हें अमर करने की इच्छा कर रहे हैं। यदि ऐसा हो जायगा तो जगत् की स्थिति क्योंकर रहेगी ?। इसीलिये हमारा कहना मान कर आप इस उद्योग से हाथ खींच लीजिये, नहीं तो देवता लोग कुपित होकर आपको शाप दे देंगे। जिसके शोक से आप यह यत्न कर रहे हैं आपका वह पुत्र स्वर्ग में है—ऐसा समझाय, इन्द्र भगवान् ने दोनों अश्विनीकुमारों को भेजा। वे लोग नागार्जुन के पास आये, मन्त्री ने उन्हें अर्घ दे अत्यन्त आदर से उत्तम स्थान पर बैठाया, जिसके अनन्तर उन लोगों ने इन्द्र का सब सन्देश मन्त्री से कह सुनाया और यह भी कहा कि आपका वह पुत्र देवताओं के समान सुखी रह स्वर्ग में बास कर रहा है। यह सुन नागार्जुन अत्यन्त उदास हो मन में विचारने लगा कि यदि मैं इन्द्र का कहना नहीं मानता हूं तो देवता लोग तो दूर रहे अभी ये दोनों अश्विनीकुमारही शाप दे देंगे। अस्तु जाने दो अमृत को, मेरा मनोरथ सिद्ध नहीं हुआ, पुत्र तो मेरा निज प्राचीन जन्म के पुण्य के कारण अच्छी अवस्था में है। ऐसा विचार उसने अश्विनीकुमारों को उत्तर दिया कि बहुत अच्छा मैं श्रीइन्द्रदेव की आज्ञा से अमृत का बनाना छोड़ देता हूं, यदि आप लोग न आते तो आज से पांचवें दिन अमृत बनकर ठीक हो जाता, उस समय इस संसार से बुढ़ौती और मृत्यु दोनों का टण्टा चुक जाता। इतना कह, अश्विनीकुमारों की आज्ञा से नागार्जुन ने उसी क्षण भूमि में एक गड़हा खोदा और उस सिद्धप्राय अमृत को उसमें डाल कर मिट्टी भर दी। अश्विनीकुमारों ने स्वर्ग में जाकर इन्द्र से यह सब सन्देश कह सुनाया जिसे सुन सुरराज को बड़ी प्रसन्नता हुई।

इधर कुछ दिनों के अनन्तर राजा चिरायु ने अपने पुत्र जीवहर को युवराज

के पद पर अभिषिक्त किया। वह कुमार, अभिषेक किये जाने पर अपनी माता को प्रणाम करने के निमित्त अन्तःपुर में गया। उसे प्रसन्न देख उसकी माता धनपरा कहने लगी कि हे पुत्र! इस युवराजपद को पाकर तू वृथा प्रसन्न मत हो क्योंकि यह राज्य किसी को भी प्राप्त न हुआ। तेरे पिता ने तेरे पूर्व कितनेही पुत्रों को युवराज बनाया परन्तु किसी को भी राज्य प्राप्त न हुआ, सभी मुंह ताकते रह गये। कारण इसका यह है कि मन्त्री नागार्जुन ने कोई ऐसा रसायन तेरे पिता को दे दिया है कि जिससे उनकी अवस्था ८०० वर्ष की तो हो चुकी है और कौन जाने अभी कितने बर्षों तक जीवित और अजर रहकर वे राज्य करेंगे। इस बीच में कितनेही युवराज विचारे स्वर्गधाम को पधार चुके हैं पर राज्यलक्ष्मी उनके हाथ न आई। यह सुन युवराज जीवहर का चित्त बहुतही उदास हो गया, इस पर उसकी माता ने कहा कि हे पुत्र! तू खिन्न मत हो एक उपाय मैं तुझे बताती हूं जिससे तुझे राज्य प्राप्त हो जायगा। इस नागार्जुन मन्त्री का यह नित्य नेम है कि आन्हिक क्रिया समाप्त करने के अनन्तर भोजन के समय यह घोषणा देता है कि 'है कोई अर्थी, ? क्या चाहता है ? जो मांगे मैं उसे इसी क्षण दूंगा।' सो तू उस समय उसके पास जाकर उसका सिर मांग ले। वह सत्यवादी है, कभी नाहीं न करेगा, जब उसका सिर कट जायगा तो राजा उसके शोक से या तो मर जांयगे या राज्य छोड़ बन को चले जांयगे, इस उपाय से तुझे राज्य मिल सकता है।

माता का ऐसा बचन सुन, वह राजकुमार अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने निश्चय ठान लिया कि मैं ऐसाही करूँगा। हा! यह राज्यलोभ ऐसा प्रबल है कि बन्धुस्नेह को भी दबा देता है। अस्तु, दूसरे दिन कुमार जीवहर, मन्त्री महाशय के स्थान पर भोजन की बेला पहुँचा। जिस समय मन्त्री ने ऊँचे स्वर से पुकार कर पूछा कि 'है कोई अर्थी ? क्या चाहता है, ? जो मांगे मैं उसे इसी क्षण दूं' झट राजकुमार ने आगे बढ़कर कहा कि हां महाशय, आप कृपा कर अपना सिर मुझे दीजिये। मन्त्री ने कहा हे वत्स! आश्चर्य्य की बात है कि तुम मेरा सिर लेकर क्या करोगे, उसमें तो केवल मांस हड्डी और केश का ढेर है वह तुम्हारे किस काम आवेगा ? तौभी यदि तुम्हें इसी की आवश्यकता है तो लो काट लो' इतना कह मन्त्री ने अपना सिर उसके आगे पृथ्वी पर झुका दिया। राजकुमार

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ने अपने कई खड्गों से उसका गला काटना चाहा किन्तु रसायन के प्रभाव से वह ऐसा कड़ा हो रहा था कि उसके सभी खड्ग टूट गये । राजा चिरायु को जब यह वृत्तान्त विदित हुआ तो वे उसी क्षण वहां आ उपस्थित हुये और कुमार को ऐसे काम से निषेध करने लगे। मन्त्री ने कहा कि हे राजन्! मुझे अपने पूर्व-जन्म का हाल विदित है, सुनिये, मैं ९९ जन्मों में अपना सिर दे चुका हूं, शिरो-दान करने का मेरा यह सौवां जन्म है, सो आप इस काम में बाधा न दीजिये। दूसरी बात यह है कि आजतक कोई अर्थी मेरे द्वार से खाली नहीं गया है, सो यह क्यों विमुख जावे। मैं इसी क्षण आपके इस पुत्र को अपना सिर दूंगा, केवल आपके मुख देखने की इच्छा मुझे लगी थी इसी कारण मैंने इतना विलम्ब किया। इतना कह राजा को हृदय से लगा मन्त्री ने अपने कोष से एक प्रकार का चूर्ण लाकर कुमार की तलवार पर मल दिया जिसके प्रभाव से वह कृपाण ऐसा दृढ़ हो गया कि मारतेही मन्त्री का गला कमलनाल की नाईं कट कर अलग जा पड़ा। लोगों में हाहाकार मच गया और राजा चिरायु निज प्राणपरित्याग करने को उद्यत हुये, इतनेही में यों आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! ऐसा अनुचित काम मत करिये, आप निज सखा के लिये शोक मत कीजिये क्योंकि अब उसकी मुक्ति हो गई, अब पुनः उसका जन्म इस संसार में न होगा, वह बुद्ध भगवान् की गति को प्राप्त हो गया। इतना सुन राजा चिरायु ने मरने की इच्छा परित्याग कर दी, और बहुत दान पुण्य करने के उपरान्त राज्य को छोड़ वन में चले गये। वहां चिरकाल तक तपस्या कर उन्होंने परमधाम पाया और इधर जीवहर को समस्त राज्य की लक्ष्मी हाथ आई । राज्य पाने पर कुछ दिनों के उपरान्त वहां मतभेद हो गया और नागार्जुन के पुत्रों ने अपने पिता का बदला लेने के अभिप्राय से जीवहर को मार डाला । इसके शोक से उसकी माता का हृदय फट गया और वह भी परलोक को सिधारी। ठीक है "बुरो कर्म तें भलो फल कैसे पावै कोय। बोवै बीज बबूल को आम कहां ते होय" फिर मुख्य मन्त्रियों ने राजा चिरायु के दूसरे पुत्र को जिसका नाम शतायु था राजगद्दी पर बैठा दिया । इस प्रकार, मनुष्यों की मृत्यु को हटाने का उद्योग करनेवाला नागार्जुन मंत्री भी मृत्यु को प्राप्त हो गया और उसका उद्योग देवताओं

से न देखा गया। इससे "कर्म रेख नहि मिटै करै कोइ लाखों चतुराई"—जो कुछ विधाता की इच्छा है वह अवश्यही होगी।

कथा कही मरुभूति ने सुनी हरषि युवराज।
ता पाछे उठि करत भे दिन के सिगरे काज॥

आठवां तरङ्ग।

दूसरे दिन प्रातःकाल युवराज नरवाहनदत्त आखेट के लिये चले, रत्नप्रभा का चित्त अत्यन्त व्यग्र हुआ, युवराज ने कहा कि तुम चिन्ता मत करो मैं शीघ्रही लौट कर आ जाऊँगा। इतना कह वे अपने मित्रों को संग ले निज पिता वत्सराज के साथ घोड़े हाथियों से परिवेष्टित हो मृगया के लिये पधारे। बन में पहुँच नाना प्रकार के जङ्गली पशुओं के पीछे दौड़ते दौड़ते थक कर एक स्थान पर विश्राम के निमित्त बैठ गये, फिर एक घोड़े पर चढ़ गोमुख को जो दूसरे घोड़े पर आरूढ़ था साथ ले दूसरे जङ्गल में पैठे। वहां वे गेंद की क्रीड़ा कर रहे थे कि इतने में कोई तापसी उसी मार्ग से आ निकली। राजकुमार के हाथ से छूट कर वह गेंद उस तापसी के सिर पर जा पड़ा, तापसी ने हँस के कुमार से कहा कि यदि अभीही तुम्हें ऐसा मद है तो कर्पूरिका को भार्य्या पाने पर तुम्हारी क्या दशा होगी! यह सुन युवराज ने झट घोड़े से उतर तापसी के चरणों में प्रणाम किया और हाथ जोड़ यों प्रार्थना करी कि हे देवि! क्षमा कीजिये, मैंने आपको देखा नहीं इसी से गेंद मेरे हाथ से छूट कर आपके ऊपर जा पड़ा। यह सुन तापसी ने कहा कि हे पुत्र! मैं तुम पर क्रुद्ध नहीं हूं, इतना कह उसने युवराज को आशीर्वाद दिया। अपने पर तापसी को प्रसन्न देख युवराज ने विनयपूर्वक पूछा कि हे देवि! यदि आप मुझ पर सन्तुष्ट हैं तो कृपाकर यह बतलाइये कि यह कर्पूरिका कौन है जिसका वर्णन अभी आपने किया, मुझे कौतुक होता है। तापसी ने कहा कि हे पुत्र! समुद्र के पार कर्पूरसम्भव नामक एक नगर है, वहां यथार्थ नामधारी कर्पूरक नाम राजा रहते हैं उनकी परम सुन्दरी कन्या का नाम कर्पूरिका है। समुद्र ने जब यह देखा कि उसकी एक कन्या लक्ष्मी को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवता लोग मथकर हर ले गये तो इसी भय से मानो दूसरो को उसने वहां छिपा रक्खा है। उसे पुरुषों से द्वेष है, वह विवाह नहीं करा चाहती, किन्तु तुम्हें देखकर मैं जानती हूं कि वह तुम पर अवश्य मोहित हो जायगी। सो हे पुत्र! तुम वहां जाओ और उस सुन्दरी को प्राप्त करो किन्तु मार्ग में तुम्हें बन में जाती समय बहुत कष्ट होगा। तू किसी प्रकार घबड़ाना मत क्योंकि अन्त इसका परिणाम बहुत अच्छा होगा। इतना कह वह तापसी आकाश में उड़ अन्तर्धान हो गई। युवराज नरवाहनदत्त उस तापसी का ऐसा बचन सुन, मानो कामदेव से खींचे जाकर अपने साथी गोमुख से जो उनके पासही खड़ा था कहने लगे कि हे मित्र! चलो कर्पूरसम्भव नगर में कर्पूरिका के पास हमलोग चलें क्योंकि अब उसके देखे विना मुझसे क्षण भर भी नहीं रहा जाता। यह सुन गोमुख ने कहा कि हे देव! यह साहस करना अच्छा नहीं, कहां आप, कहां समुद्र, कहां वह मार्ग और कहां वह कन्या!। उसका नाम सुनतेही आप अपने दिव्य भार्य्याओं को छोड़कर अकेले उस मानुषी के पीछे जिसका कुछ अभिप्राय प्रगट नहीं होता नाहक क्यों दौड़ते हैं। गोमुख ने जब युवराज को यों समझाया तो उन्होंने उत्तर दिया कि तापसी का कहना कदापि झूठा नहीं है मैं उस राजकन्या की प्राप्ति के लिये अवश्य कर्पूरसम्भव नगर को जाऊँगा। इतना कह घोड़े पर चढ़, वे उसी क्षण एक ओर को चले, बस विवस हो गोमुख भी चुपचाप उनके पीछे चलने लगा, क्या करे जब प्रभु नहीं मानता तब सेवक को विवश हो उसकी इच्छानुसार चलनाही पड़ता है। इधर वत्सराज आखेट खेलकर अपनी पुरी को लौट आये उन्होंने यह समझा कि राजकुमार अपने लोगों के साथ चले गये होंगे और राजकुमार के साथी मरुभूति आदि ने यह समझा कि युवराज पिता की सेना के साथ चले गये होंगे। पुरी में पहुँच कर जब यह विदित हुआ कि अभी तक राजकुमार नहीं आये तो वत्सेश्वर आदि सभी लोग रत्नप्रभा के महल में खोजने गये। रानी रत्नप्रभा यह हाल सुनकर अत्यन्त व्याकुल हुई, फिर निज विद्या का ध्यान करने से उसे सब वृत्तान्त विदित हो गया। उसने अपनी सखी के द्वारा निज ससुर के पास यह कहला भेजा कि आप कुछ चिन्ता न करें, युवराज बन में एक तापसी से राजसुता कर्पूरिका का वृत्तान्त सुनकर उसे प्राप्त करने की इच्छा से कर्पूर-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सम्भव नगर को गये हैं । वे शीघ्रही अपना मनोरथ प्राप्त कर गोमुख के साथ लौट आवेंगे, आप इस विषय की चिन्ता न करें, मैंने यह सब हाल अपने विद्या-बल से जान लिया है। इतना कह रत्नप्रभा ने महाराज वत्सराज को उनके साथियों सहित धीरज दिलाया और निज विद्याओं में से एक को भर्ता के पास भेज दिया कि मार्ग में यदि कोई क्लेश आ पड़े तो वह उसे दूर करे। ठीकही है कि निज भर्ता की चाहनेवाली साध्वी स्त्रियां कभी ईर्षा नहीं करतीं।

इधर राजकुमार घोड़े की पीठ पर चलते चलते बहुत दूर निकल गये, उस घोर जङ्गल में अकेला गोमुखही उनके साथ था, इतने में कोई कुमारी मार्ग में आ उनसे कहने लगी कि मैं मायावती नाम्नी विद्या हूं, मुझे रत्नप्रभा ने इसलिये भेजा है कि मैं अदृश्य रहकर मार्ग में आपकी रक्षा करूं अब आप निश्चिन्त चले चलिये, इतना कह वह विद्या देखते देखते अन्तर्धान हो गई । उसके प्रभाव से उन दोनों की भूख प्यास रस्ते में जाती रही, राजकुमार अपनी भार्य्या रत्नप्रभा की प्रशंसा करते हुये चले जाते थे । सन्ध्या समय एक स्वच्छ सरोवर पर पहुँचे जहां घोड़े से उतर गोमुख के साथ स्नान कर कुछ मीठे फलों को खा उन्होंने जलपान किया। फिर उन दोनों घोड़ों के आगे कुछ घास डाल और किसी बड़े वृक्ष से उन्हें बांध रात बिताने के लिये उसी पर चढ़, एक शाखा पर बैठ गये। कुछ देर के अनन्तर घोड़ों के हिनहिनाने का शब्द उन्हें सुन पड़ा जिस्से उनकी आंख खुल गई देखते क्या हैं कि एक महा भयानक सिंह नीचे खड़ा है। देखतेही राज-कुमार ने चाहा कि वे घोड़ों की सहायता के लिये नीचे उतर आवें कि इतने में गोमुख ने रोक कर कहा कि अपने शरीर को आपत्ति में डाल यह आप क्या किया चाहते हैं! राजा का मूल शरीर है और राज्य का मूल मंत्र, भला जिन पशुओं का आयुध नख और दाँत है उनके साथ युद्ध करना कौन सी बुद्धिमत्ता है! उत्तम होगा कि हमलोग यहीं बैठे २ घोड़ों की रक्षा का यत्न करें। गोमुख द्वारा रोके जाकर राजकुमारने एक तीखा छुरा निकाला और जब देखा कि सिंह एक घोड़े को मार चुका है तो उन्होंने वृक्षही पर से उस छुरे को सिंह के ऊपर खींच कर फेंका, छुरा लगने से यद्यपि सिंह चुटैल हो गया तथापि उसने दूसरे घोड़े को भी मार डाला । तदनन्तर युवराज ने गोमुख से खड्ग लेकर ऐसा मारा कि वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सिंह दो टुकड़े हो गया। फिर नीचे उतर उन्होंने सिंह के देह में से अपना खड्ग और छुरा निकाल लिया और पुन: वृक्ष पर चढ़ वहां रात बिताई। प्रात:काल गोमुख के साथ वृक्ष से नीचे उतर नरवाहनदत्त ने कर्पूरिका से मिलने के लिये पुन: आगे पैर बढ़ाया। सिंह ने जो दोनों घोड़ों को मार दिया था इसलिये दोनों को पैदल चलना पड़ा, यह देख गोमुख ने मार्ग में राजकुमार के चित्तविनोदार्थ यह कथा आरम्भ की। गोमुख ने कहा कि हे युवराज! इसी प्रसङ्ग को मैं एक कथा आपको सुनाता हूं –

इस लोक में ईरावती नाम्नी एक नगरी है जो अपने सौन्दर्य्य से अलकापुरी को भी जीतती है वहां परित्यागसेन नामक राजा रहते थे, उन्हें दो रानियां प्राण समान प्यारी थीं। उनमें से एक का नाम अधिकसङ्गमा था जो उन्हीं के मन्त्री की पुत्री थी, और दूसरी का नाम, जो किसी राजवंश से उत्पन्न थी, काव्यालङ्कारा था। महाराज को कोई पुत्र न था सो उन्होंने इन दोनों रानियों से पुत्र प्राप्त करने की इच्छा से निराहार रहकर और दर्भशायी हो श्रीदेवीजी की आराधना आरम्भ की। भक्तवत्सला भवानी ने राजा की तपस्या से सन्तुष्ट हो, स्वप्न में दर्शन दिया और दो फल राजा को भेंट दे यों आज्ञा दी कि "हे राजन्! उठो और इन दोनों फलों को अपनी दोनों भार्य्याओं को खाने के लिये देओ, इनके प्रभाव से उन्हें दो वीर पुत्र उत्पन्न होंगे। इतना कह श्रीगौरीजी अन्तर्धान हो गईं और नींद खुलने पर अपने हाथ में दो फलों को देख महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुये। इस स्वप्न को सुनाय उन्होंने अपनी दोनों भार्य्याओं को आनन्दित किया तथा स्नान से निवृत्त हो श्रीगौरीजी के पूजनोपरान्त उन्होंने उस व्रत का पारण विधानपूर्वक किया। रात्रि को पहिले अधिकसङ्गमा रानी के पास जा उन्होंने वह फल उसे दिया जिसे वह उसी क्षण खा गई। निशा को महाराज वहीं रहे क्योंकि उन्हें निज मन्त्री के गौरव का विशेष ध्यान था। उस दूसरे फल को महाराज ने दूसरी रानी के लिये बचाकर सिरहाने रख छोड़ा, जब वे सो गये तो रानी अधिकसङ्गमा ने इस इच्छा से कि मुझेही दोनों पुत्र हो जांय, चुपके से उठकर वह दूसरा फल भी सिरहाने से उठा खा लिया, कारण यह कि स्त्रियों में सपत्नी का द्वेष स्वभाविकही होता है। प्रात:काल जब महाराज उस फल को खोजने

लगी तो रानी ने कहा कि मैं तो उसे भी खा गई। यह सुन वे अत्यन्त उदास हुये और दूसरे दिन रात के समय दूसरी रानी काव्यलङ्कारा के महल में गये। रानी ने जब पूछा कि मेरे भाग का फल कहां है तो राजा ने उत्तर दिया कि तुम्हारी सपत्नी ने छल से मेरे सोये रहने पर उसे खा लिया। बिचारी काव्यालङ्कारा फल न पाने से पुत्रोत्पत्ति से निराश और दुःखित हो चुप बैठ रही।

कुछ दिनों के अनन्तर रानी अधिकसङ्गमा को गर्भ रहा और समय पर दो पुत्र उसे साथही उत्पन्न हुये। राजा परित्यगासेन यह देख अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने बड़ा भारी उत्सव मनाया। बड़े पुत्र के नेत्र इन्दीवर के समान सुशोभित थे इसलिये उसका नाम इन्दीवरसेन रक्खा गया और दूसरे का नाम अनिच्छासेन धरा क्योंकि उसकी माता ने विना उनकी इच्छा के वह दूसरा फल खा लिया था। यह देख उनकी दूसरी रानी काव्यालङ्कारा को बड़ी ईर्षा हुई, वह मन में विचारने लगी कि देखो मेरी सपत्नी ने मुझे पुत्रप्राप्ति से बञ्चित रक्खा, जो सही जो मैं भी इसका बदला इससे न लूं, मैं इसके दोनों पुत्रों को किसी न किसी युक्ति से मरवा डालती हूं, इतना विचार वह अपनी इस दुष्ट अभिप्राय के साधन का उपाय ढूंढ़ने लगी। ज्यों ज्यों राजकुमार सयाने होते गये त्यों त्यों काव्यालङ्कारा के हृदय में भी बैर का वृक्ष बढ़ता गया। जब वे दोनों राजपुत्र अधिक सयाने हुये तो उन्होंने एक दिन अपने पिता से प्रार्थना की कि हमलोगों को दिग्विजय करने की आज्ञा दीजिये, आपने जो हमलोगों को शस्त्रविद्या में शिक्षा दिलवाई है उसका उपभोग यदि इस समय न किया जायगा तो फिर कब होगा। जिस क्षत्रापुत्र को जीतने की इच्छा न हुई उसके यौवन और बाहुबल दोनों को धिक्कार है! अतएव हे तात! हमलोगों को दिग्विजय के लिये प्रस्थान करने की आज्ञा दीजिये।

निज पुत्रों का ऐसा भाषण सुन राजा परित्यागसेन ने उन्हें दिग्विजय की आज्ञा देकर पूरी सामग्री इस महत् काम के लिये प्रस्तुत कर दी, और उन्हें यह बात समझा दी कि जब तुम्हें कहीं भी कोई सङ्कट आ पड़े तो आपद्विनाशिनी भगवती अम्बिका का स्मरण करना, क्योंकि उन्हीं की कृपा से मैंने तुम दोनों को पाया है। यों समझाय राजा ने दोनों पुत्रों को हृदय से लगाय आशीर्वाद दे यात्रा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के लिये आज्ञा दी और माता ने भी उन्हें आशीष देकर चतुरङ्गिनी सेना के साथ विदा किया। चलती समय महाराज ने अपने कार्य्यदक्ष और मुख्य मन्त्री प्रथमसङ्गम को जो दोनों राजकुमारों के नाना थे, उनके साथ कर दिया। प्रथम तो उन लोगों ने पूर्व दिशा की ओर यात्रा की और उसे जीत दक्षिण दिशा की ओर पैर बढ़ाया। अनेक राजा लोग उनके विक्रम को देख स्वयं उनके वशीभूत हो गये और उनकी सेना में आ मिले। ज्यों ज्यों उनके जीत का समाचार उनके माता पिता को मिलता त्यों त्यों उसे सुन सुनकर वे लोग प्रसन्न होते थे किन्तु वह दूसरी माता अन्दरही अन्दर द्वेष की अग्नि से जली जाती थी। उसने बहुत कुछ धन देकर उस कायस्थ लेखक को जो महाराज के लिये देशान्तर में सेनासामन्तों को सन्धिविग्रह का पत्र लिखा करता था अपनी ओर मिला लिया। उसी से रानी ने एक पत्र लिखवाकर सेना के सामन्तों के पास महाराज के नाम से भिजवाया, जिसमें लिखा था कि मेरे ये दोनों पुत्र अपने भुजाबल से सारी पृथ्वी को जीत मुझे मारकर मेरा राज्य छीनना चाहते हैं सो यदि तुम लोग हमारे सच्चे भक्त हो तो हमारा पत्र पातेही बिना कुछ विचारे उसी क्षण उन दोनों को मार डालना। इस अभिप्राय का पत्र लिखवाकर रानी ने एक पत्रवाहक के हाथ दक्षिण दिशा में अपने सेनासामन्तों के पास भिजवा दिया। लेखवाहक उस पत्र को लेकर चुपचाप सेना में जा पहुँचा और मुख्य सामन्त को दे एक ओर को चला गया। उन लोगों ने उस पत्र को बांचा और विचारने लगे कि राजनीति बड़ी टेढ़ी है, यह काम कैसे न किया जाय और प्रभु की आज्ञा क्योंकर टाली जाय। रात को एकत्र होकर सबों ने एक सभा की और यद्यपि वे सबही लोग राजकुमारों के गुण से मोहित हो रहे थे तथापि महाराज की आज्ञा को अलङ्घनीय मान सबों ने विवश उन्हें मार डालनाही निश्चित किया। किसी मित्र के मुख से इस बात का पता मुख्य मन्त्री अर्थात् कुमारों के नाना को जो साथही साथ था, लग गया, सो उसने राजपुत्रों को यह मर्मभेद समझाया और उसी क्षण शीघ्रगामी घोड़ों पर चढ़ा उन्हें सेना के बाहर ले भागा। चलते चलते वे लोग मार्ग से अनजान होने के कारण विन्ध्य पर्वत के जङ्गल में जा पड़े, रात बीतने के उपरान्त प्रातःकाल वे लोग पुनः आगे बढ़े किन्तु दो पहर के समय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोनों घोड़े अत्यन्त प्यासे हुये थे और जङ्गल में पानी कहीं भी न मिला, इससे विचारे दोनों घोड़े गिरकर मर गये। उनका नाना मन्त्री भी भूख प्यास से बहुत व्याकुल हो गया और थकित राजकुमारों के आंख के साम्हनेही देखते देखते परलोक को सिधारा। दोनों राजकुमार विचारे उस विपत्ति के समय विचारने लगे कि देखो हमारे पिताजी ने हम निरपराधियों की, ऐसी दुर्दशा क्यों की और क्या समझकर हमारी दुष्टा विमाता के कहने में आ गये? फिर उन्हें अपने पिता का उपदेश ध्यान पर चढ़ा, सो वे सङ्कटविनाशिनी श्रीभगवती को स्मरण करने लगे। देवी के ध्यान के प्रभाव से उन दोनों की भूख प्यास बन्द हो गई, सारी थकावट जाती रही और शरीर में उनके बल प्रतीत होने लगा। भगवती की इस प्रबल महिमा को देख उनके हृदय में विश्वास उत्पन्न हो आया सो वे विन्ध्यवासिनी देवी के दर्शन की इच्छा से उनके मन्दिरही की ओर चले। वहां पहुँच दोनों भाइयों ने निराहार रहकर देवीजी के मन्दिर के सम्मुखही तपस्या करनी आरम्भ की। उधर वे सेनासामन्त लोग एकत्र हो राजकुमारों को मारने की इच्छा से जो उनकी शिविर में आयें तो देखते क्या हैं कि शिविर खाली पड़ा है और उन दोनों का पता नहीं है। तब तो वे उन्हें चारो ओर ढूंढ़ने लगे और जब कुछ भी टोह न लगी तो वे समझ गये कि वे लोग अपने नाना के साथ कहीं भाग गये हैं। सभों ने स्थिर किया कि हमारा भेद खुल गया, सो अब महाराज परित्यागसेन के समीप चलना चाहिये नहीं तो अच्छा न होगा। ऐसा विचार वे लोग महाराज की सेवा में आ पहुँचे। महाराज की चिट्ठी को दिखाकर उन्होंने सब हाल कह सुनाया, देखतेही महाराज के तो शरीर में मानों दमही न रहा वे घबड़ा गये और क्रोध से कहने लगे कि हमने कदापि यह पत्र नहीं भेजा, यह क्या इन्द्रजाल है! और अरे मूर्खो! तुम्हें क्या इतनी बुद्धि नहीं है कि जिन दोनों पुत्रों को मैंने इतनी कठिन तपस्या से प्राप्त किया है क्या मैं उन्हें मारने की आज्ञा दूंगा? तुम लोग तो अपनी जान उन्हें मारही चुके थे वे अपने पूर्वपुण्य के प्रभाव से बच गये। उनके नाना ने अपने मन्त्रीपने का काम उत्तम रीति से कर दिखाया। इतना उन सामन्तों से कह महाराज ने उस दुष्ट कायस्थलेखक की ओर ध्यान दिया। विदित हुआ कि वह यह हाल सुनतेही भाग गया। महा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राज ने सैनिकों द्वारा उसे धर मँगाया और भली प्रकार से इसकी जांच कर उसे यथोचित दण्ड दिया। रानी काव्यालङ्कारा को जिसने ऐसा काम कराया था और जो राजकुमारों के हत कराने में मुख्य थी, महाराज ने भूगृह में डलवा दिया। ठीकही है—"आंख मूंदि कै द्वेषवश कीन्हों जौन अकाज। कैसे नहिं ता कुतरु में फरै विपत्तिसमाज॥" जो सामन्त लोग दोनों राजकुमारों के साथ गये थे और अब लौट आये थे उन्हें निकाल कर महाराज ने दूसरे योग्य सामन्तों को वे पद दिये। फिर रानी अधिकसङ्गमा के साथ सदा श्रीभगवती की पूजा करते और रात दिन राजकुमारों का पता लगाते दुःख के साथ, महाराज रहने लगे।

उधर भगवती विन्ध्यवासिनी राजकुमार इन्दीवरसेन पर जो अपने छोटे भाई के साथ कठिन तपस्या कर रहा था, अत्यन्त सन्तुष्ट हुईं और स्वप्न में खड्गदान-पूर्वक दर्शन दे उन्होंने यह आज्ञा दी कि हे पुत्र! इस खड्ग के प्रभाव से तू दुर्जय शत्रुओं को भी जीत लेगा, और जो बात तू मन में विचारेगा वह सत्य हो जायगी। इसके प्रभाव से तुम दोनों की इष्टसिद्धि होगी। देवी तो इतना कह अन्तर्धान हो गईं। इन्दीवरसेन की जो आंख खुली तो वह अपने हाथ में खड्ग देख अत्यन्तही प्रसन्न हुआ। स्वप्न का सारा वृत्तान्त छोटे भाई को सुना और उस खड्ग को दिखा उसने उसे भी आनन्दित किया, तदुपरान्त बन के फलों को खा उन्होंने व्रत का पारण किया। फिर देवीजी को प्रणाम कर, और उनकी कृपा से विगत-परिश्रम हो हाथ में खड्ग ले वह अपने भाई के सङ्ग वहां से चल पड़ा। कुछ दूर चलने पर उसे एक अतीव सुन्दर नगर मिला, जिसके ऊँचे ऊँचे सुवर्णरचित गृहों को देख सुमेरु पर्वत की हेममयी चोटियों का भ्रम होता था। नगर के बाहरी द्वार पर उस वीर ने एक भयङ्कर राक्षस को बैठा देख, पूछा कि इस नगर का क्या नाम है? और इसका स्वामी कौन है? राक्षस ने उत्तर दिया कि इस नगर का नाम शैलपुर है और इसके स्वामी, निज शत्रुओं को नाश करनेवाले, हम राक्षसों के अधीश्वर यमदंष्ट्र नामक हैं। राक्षस का ऐसा बचन सुन इन्दीवरसेन ने यम-दंष्ट्र को मारने की इच्छा से नगर में प्रवेश करना विचारा। उस द्वारपाल राक्षस ने उन्हें रोका, सो एकही हाथ खड्ग का इन्दीवरसेन ने ऐसा लगाया कि रुण्ड से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मुण्ड अलग हो पृथ्वी पर जा पड़ा। उसे मार राजभवन में पैठ देखता क्या है कि महा शूर यमदंष्ट्र राक्षस सिंहासन पर बैठा है। मुख के बड़े बड़े दांत बाहर निकले हैं जिनसे उसकी आकृति बड़ी भयानक हो रही है, बाईं ओर एक परम सुन्दरी और दाहिनी ओर एक दिव्य रूपवाली कुमारी बैठी है। उसे देख, भगवती का दिया हुआ खड्ग उठाकर इन्दीवरसेन ने राक्षस को युद्ध करने के लिये ललकारा और वह भी कृपाण खींच गरजता हुआ उठ खड़ा हुआ। दोनों का युद्ध घनघोररूप से होने लगा, बार बार इन्दीवरसेन अपने खड्ग से राक्षस का सिर काट देता था किन्तु वह पुनः ज्यों का त्यों हो जाता। राक्षस के दाहिने हाथ जो कुमारी बैठी थी वह इन्दीवरसेन का रूप देखतेही मोहित हो गई थी, उसने जो राक्षस की ऐसी माया देखी तो हाथ के सङ्केत से बताया कि शीघ्रता से कटे हुये सिर के पुनः दो टुकड़े कर दो। राजकुमार ने वैसाही किया, राक्षस की माया प्रतिमाया से नाश हो गई और वह कटा हुआ सिर फिर न जमा और वह राक्षस मर गया। उसके मारे जाने पर वह सुन्दरी स्त्री और कुमारिका दोनों अत्यन्त प्रसन्न हुईं, कुमार इन्दीवरसेन अपने छोटे भाई को साथ लेकर वहीं बैठ गये और उन लोगों से पूछने लगे कि यह राक्षस ऐसे नगर में क्यों रहता था जिसकी घररक्षा के निमित्त केवल एकही राक्षस था, आप दोनों कौन हैं? और इसके मारे जाने पर ऐसी प्रसन्न क्यों हुईं? यह सुन उन दोनों में से कुमारी ने उत्तर दिया कि हे भद्र! इस शैलपुर नगर में वीरभुज नामक राजा रहते थे, यह मदनदंष्ट्रा उनकी पत्नी है इस यमदंष्ट्र नामक राक्षस ने यहां आकर उन्हें अपनी माया के बल से खा लिया। वह राक्षस उनके सभी सेवकों को खा गया, केवल इसी मदनदंष्ट्रा को छोड़ दिया क्योंकि यह सुन्दरी थी, फिर उसने इन्हें अपनी भार्य्या बना लिया। यद्यपि यह नगर अत्यन्त मनोहर था तथापि वह इससे उदास हो गया, फिर यहां सोने के गृह बनवा कर, और अपने सब सेवक तथा लोगों को यहां से निकाल इन्हीं मदनदंष्ट्रा के साथ विहार करने और रहने लगा। मैं उस राक्षस की छोटी बहिन कुंआरी खड्गदंष्ट्रा नाम्नी हूं, आपको देख मेरा चित्त मोहित हो गया है। हम दोनों इसी कारण इसके मारे जाने से प्रसन्न हैं, हे आर्य्यपुत्र! अब आप मुझसे विवाह कीजिये, मैं स्वयं अपने को आपके हाथों में प्रेम से अर्पित करती हूं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुमारी खड्गसेना का ऐसा भाषण सुन, राजकुमार इन्दीवरसेन ने उसी क्षण उससे गान्धर्व रीति से विवाह कर लिया। फिर उसने अपने छोटे भाई का भी विवाह कर दिया। श्रीदेवीजी के उस खड्ग के प्रभाव से उसे किसी बात की कमी न होती, जिस भोग की वह इच्छा करता वह आपसे आप उसी क्षण आ उपस्थित होता। इस प्रकार वह आनन्दपूर्वक खड्गदंष्ट्रा के साथ उस नगर में रहने लगा। एक दिन इन्दीवरसेन ने उसी खड्ग के प्रभाव से ध्यान करतेही एक आकाशसञ्चारी बिमान बनाया और उसी पर अपने वीर भ्राता अनिच्छासेन को बैठाकर उसी के द्वारा निज पिता के पास अपना वृत्तान्त कहला भेजा। छोटा भाई उसी विमान पर उड़ता हुआ झट अपने पिता की राजधानी ईरावती नगरी में जा पहुँचा। उसके दर्शन से उसके माता पिता ऐसे प्रसन्न हुये जैसे चन्द्रमा के दर्शन से आतपत्रसित चकोर चकोरी आनन्दित हो जाते हैं। जातेही वह माता पिता के चरणों पर गिर पड़ा और उन लोगों ने गद्गद हो उसे उठाकर कण्ठ से लगा लिया। पूछे जाने पर बड़े भाई का सब कुशल वृत्तान्त सुना उसने उन लोगों की शङ्का दूर की, फिर आरम्भ से लेकर सारा हाल माता पिता को सुना गया कि क्योंकर उन लोगों पर अनेक आपत्तियां आईं किन्तु श्रीभगवती जी की कृपा से सब दूर होकर अन्त में परिणाम बहुत अच्छा हुआ। फिर उसने यह भी सुना कि क्योंकर उनकी विमाता ने उन लोगों को छल से मरवा डालने का प्रपञ्च रचा था। उसके प्रसन्नतापूर्वक लौट आने पर माता पिता ने बड़ा उत्सव मनाया और सब लोगों से आदर पाकर अनिच्छासेन ने कई दिन वहां व्यतीत किये। एक दिन उसने यह दुःस्वप्न देखा कि उसका भाई किसी आपत्ति में पड़ गया है सो भोर होतेही उसने माता पिता को वह दुःस्वप्न सुनाय यों निवेदन किया कि हे तात! अब मुझे भाई के पास जाने की आज्ञा दीजिये मैं आपलोगों की उत्कण्ठा का हाल सुनाय उन्हें साथ लेकर शीघ्रही आपकी सेवा में आ पहुँचता हूं। माता पिता ने जब यह बात सुनी तो बड़े पुत्र को देखने के लिये उत्सुक हो उसी क्षण उस बात का अनुमोदन किया और तदनन्तर उनकी आज्ञा पा विमान पर चढ़, अनिच्छासेन ने प्रस्थान किया और आकाशमार्ग से उड़ता हुआ शैलपुर में जा पहुँचा और प्रातःकाल अपने भाई के राजभवन में गया। देखता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या है कि इन्दीवरसेन तो बेसुध भूमि में पड़े हैं और पासही खड्गदंष्ट्रा तथा मदनदंष्ट्रा दोनों रो रही हैं। घबड़ा कर उसने पूछा कि 'यह क्या हुआ'?। मदनदंष्ट्रा यद्यपि खड्गदंष्ट्रा की बहुत कुछ निन्दा करने लगी पर खड्गदंष्ट्रा ने नीचे मुंह कर यों कहा कि 'आपके चले जाने के उपरान्त मैं एक दिन स्नान करने गई थी कि एकांत पा आपके भैया इससे रमण करने लगे। मैंने जो आकर यह दशा अपनी आंखों से देखी तो क्रोध से लाल हो गई और उन्हें भला बुरा कहने लगी। वे मुझसे क्षमा प्रार्थना करने लगे। मैंने मन में समझा कि मुझे तुच्छ जान यह जो दूसरी से प्रेम करते हैं इसका कारण यही है कि इन्हें अपने खड्ग के माहात्म्य पर इतना दर्प है। इसे कहीं छिपा दूं तो ठीक हो। ऐसा विचार मुझ मूढ़ा ने, इनके सो जाने पर, उस खड्ग को अग्नि की भस्म में गाड़ दिया। उसी क्षण वह खड्ग काला पड़ गया और इनकी यह दशा हो गई; मुझे अपनी दुर्बुद्धि पर बड़ा पछतावा हुआ और तभी से मदनदंष्ट्रा मुझे डांट कर भला बुरा कह रही है। हम दोनों शोक से अन्धी और व्याकुल होकर मरने को उद्यत थीं कि आप आ गये। अब आप इसी खड्ग को लेकर मेरा सिर काट डालिये क्योंकि मैंने स्त्री जाति की मूर्खता के अनुसारही यह क्रूरकर्म्म किया है,। खड्गदंष्ट्रा का यह कहना सुन, अनिच्छासेन ने उसे मारने की इच्छा न की क्योंकि उसे अपनी ऐसी भूल पर बड़ा पछतावा हो रहा था, उसने अपनाही सिर काट डालना मनमें विचारा, ज्योंही उसने निज बलिदान के लिये खड्ग उठाया त्योंही यह आकाशवाणी हुई कि हे राजकुमार! ऐसे साहस का काम मत करो, तुम्हारा भाई मरा नहीं है, किन्तु देवीजी ने उसे मूर्छित कर दिया है क्योंकि इसने उस खड्ग की रक्षा भली प्रकार नहीं की। इसमें खड्गदंष्ट्रा का भी कोई अपराध नहीं है, यह सब लीला तुम लोगों के पूर्वजन्म के कर्म्मानुसार है। ये दोनों तुम्हारे भाई के पूर्वजन्म की भार्य्या हैं, इस कारण तुम निज अभिप्रायसिद्धि के निमित्त जाकर उन्हीं देवीजी को सन्तुष्ट करो। ऐसी आकाशवाणी सुन, अनिच्छासेन ने अपने को बलिदान करने से हाथ खींच लिया और धूमिल खड्ग को ले उसी आकाशसञ्चारी विमान पर चढ़, श्रीविन्ध्यवासिनी देवीजी की शरण में गया। वहां चिरकाल तक निराहार कठिन तपस्या कर उसने श्रीदेवीजी को अपना मस्तक चढ़ा करने के उपरान्त प्रसन्न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करना चाहा कि यह आकाशवाणी हुई कि 'हे पुत्र ऐसा साहस मत कर, जा देख तेरा बड़ा भाई जीता है और तेरा खड्ग अभी निर्मल हो जाता है क्योंकि मैं तेरी भक्ति से प्रसन्न हुई हूं।' देवी का ऐसा बचन सुन उसने खड्ग की ओर जो दृष्टि फ़ेरी तो उसे परम स्वच्छ और निर्मल पाया, उसी क्षण भगवती की प्रदक्षिणा कर, वह बड़े उत्साह के साथ, भाई से मिलने के लिये उसी दिव्य विमान पर बैठ, चल पड़ा, और थोड़ीही देर के उपरान्त शैलपुर में जा पहुँचा। देखता क्या है कि उसके भाई चेतन होकर बैठे हैं, तत्क्षण उसकी आंखों में प्रेमाश्रु आ गये और वह दौड़ कर बड़े भैया के पैरों पर गिर पड़ा। इन्दीवरसेन ने झट छोटे भाई को उठाकर गले से लगा लिया। दोनों भौजाइयां अनिच्छासेन के पैरों पर गिर के कहने लगीं कि आपही ने हमारे प्राणनाथ की रक्षा की है, फिर जब बड़े भाई ने सारा हाल पूछा तो अनिच्छासेन ने सब कह सुनाया जिसे जानकर इन्दीवरसेन खड्गदंष्ट्रा पर रुष्ट न होकर अपने छोटे भाई पर अत्यन्त प्रसन्न हुये।

इसके उपरान्त उसने अपने भाई के मुख से सुना कि उसके माता पिता दर्शनोत्सुक हो रहे हैं और यह भी उसे विदित हुआ कि क्योंकर उसकी विमाता ने झूठा प्रपञ्च रचकर इतने दिनों तक उसे विदेश में रखकर कष्ट पहुँचाया। उसने भाई के हाथ से उस खड्ग को ग्रहण किया और उसके प्रभाव से स्मरण करतेही उसके लिये आकाशसञ्चारी विमान आ गया जिस पर चढ़ वह भाई तथा भार्य्या और हेममन्दिरों के साथ क्षण भर में अपने पिता की पुरी ईरावती में जा पहुँचा। ज्योंही वह आकाश से उतरा, लोग उसे देख विस्मित हो गये; फिर वह अपने समस्त लोगों के साथ राजभवन में पिता के समीप गया और माता पिता को देखतेही वह गद्गदाश्रु हो दौड़कर उनके चरणों पर जा गिरा। अचानचक उसे आया देख वे लोग अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने उसे तथा उसके भाई को उठाकर हृदय से लगा लिया। जिस समय उसकी दोनों दिव्यरूपवाली भार्य्याओं अर्थात् उनकी बहुओं ने आकर प्रणाम किया तो वे लोग उन्हें देख और आशीर्वाद दे बहुतही हर्षित हुये। जब उन्हें बातचीत में यह विदित हुआ कि किसी ज्ञानी ने यह कहा है कि ये दोनों इन्दीवरसेन की पूर्वजन्म की भी भार्य्यायें हैं तो उन्हें और भी आनन्द हुआ। अपने पुत्र में उड़ने की शक्ति तथा सोने के स-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

न्दिरों को ले आना देख वे लोग और भी अधिक विस्मित और प्रसन्न हुये। फिर इन्दीवरसेन प्रजा को हर्ष देता हुआ दोनों भार्य्याओं तथा सेवकों के साथ आनन्दपूर्वक अपने माता पिता के पास रहने लगा।

एक बेर अपने छोटे भाई को साथ ले माता पिता की आज्ञा प्राप्त कर, वह पुन: दिग्विजय के लिये बाहर निकला। उस पराक्रमी ने खड्ग के प्रभाव से सारी पृथ्वी को जीत लिया और परास्त किये हुये राजाओं के हाथी घोड़े और सुवर्ण तथा रत्नों को लेकर अपने देश में लौट आया। जिस समय वह अपनी राजधानी में पैठा और पीछे पीछे आती हुई सेना की धूलि उड़ती थी तो यही जान पड़ता था कि मानो जीती हुई भूमि स्वयं राजकुमार का अनुसरण कर रही है। राजधानी में प्रवेश करतेही पिता ने आगे से बढ़कर उसे सादर ग्रहण किया, उन दोनों पुत्रों को आया देख माता अधिकसङ्गमा प्रेम से गद्गद हो उठी। राजा लोगों का सन्मान कर, वह दिन इन्दीवरसेन ने अपनी भार्य्या भाई और साथियों के साथ प्रसन्नतापूर्वक बिताया। दूसरे दिन राजकुमार ने सारी पृथ्वी को जो राजाओं से कररूप में प्राप्त की थी, निज पिता के अर्पण की और इसके उपरान्त अचानचक उसे अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण हो आया। फिर मानो स्वप्न से चौंक कर वह अपने पिता से कहने लगा कि 'हे तात! मुझे अपने पूर्वजन्म का हाल जो स्मरण हो आया है सो मैं आपसे कहता हूं सुनिये—

प्राचीन समय में हिमवान् पर्वत की चोटी पर मुक्तापुर नामक कोई नगर था, वहां विद्याधरों के अधिपति राजा मुक्तसेन रहते थे। उन्हें कम्बुवती नाम्नी रानी से दो गुणवान पुत्र हुये, बड़े का नाम पद्मसेन और छोटे का नाम रूपसेन था। आदित्यप्रभा नाम्नी किसी कन्या ने, जो विद्याधराधिप की पुत्री थी, पद्मसेन के रूप पर मोहित हो, उसे अपना पति बनाया। यह सुन किसी दूसरी विद्याधराधिपपुत्री ने जिसका नाम चन्द्रवती था, राजकुमार के समीप आकर अपना प्रेम प्रकाश किया और उनसे विवाह किया। दो भार्य्याओं के होने से पद्मसेन को नित्यही कष्ट उठाना पड़ता, क्योंकि आदित्यप्रभा को अपनी सपत्नी चन्द्रवती से सदा द्वेष बना रहता था। नित्य की लड़ाई और झगड़े से दु:खित होकर एक दिन पद्मसेन ने अपने पिता मुक्तसेन से प्रार्थना की कि हे तात! मैं अपनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भार्य्या के इस कलह को नहीं सह सकता, वह तो ईर्षा और द्वेष के मारे अन्धी हो रही है, मुझे अब इस निर्वेद की शान्ति के लिये तपोवन में जाने की इच्छा होती है, सो आप कृपा कर मुझे इस बात की आज्ञा दीजिये।' बार बार के ऐसे आग्रह से पिता ने क्रुद्ध हो उन लोगों को यह शाप दिया कि 'तपोवन में जा-कर क्या करेगा, जा तू मर्त्यलोक में जन्म ले, वहां तेरी यह कलहकारिणी भार्य्या आदित्यप्रभा राक्षसी योनि को प्राप्त होकर पुनः तेरी भार्य्या होगी और यह दूसरी चन्द्रवती जो तुझसे प्यार करती है एक राजा की पत्नी होगी, फिर एक राक्षस की भार्य्या होकर अन्त तुझसे आकर मिलेगी। मैं देखता हूं कि तेरे इस छोटे भाई रूपसेन की बड़ी इच्छा तेरेही पास रहने की होती है, सो उस जन्म में भी यह तेरा भाई होगा। वहां भी दो भार्य्याओं के कारण तुझे कुछ कष्ट होगा।" इतना कहकर वे चुप हो गये और शाप का उद्धार इस प्रकार स्थिर किया कि "जब तू राजकुमार हो सारी पृथ्वी को जीतकर अपने पिता के अर्पण करेगा तब तुझे पूर्वजन्म की स्मृति हो जायगी और तू इन सबों के साथ मुक्ति पावेगा"। पिता से इस प्रकार शाप पा पद्मसेन उन सबों के साथ इस मर्त्यलोक में आ जन्मा। हे तात! मैं वही पद्मसेन हूं जो आपका पुत्र इन्दीवरसेन हुआ हूं और जो कुछ मुझे कर्तव्य था सो मैं कर चुका। वह जो दूसरा विद्याधरकुमार रूपसेन था वह मेरा यही छोटा भाई अनिच्छासेन है। आदित्यप्रभा और चन्द्रावती नामक जो दो भार्य्या मेरी थीं वेही दोनों अब खड्गदंष्ट्रा और मदनदंष्ट्रा के नाम से हैं। अब हमलोगों के शाप की अवधि आ गई है, सो हे तात! हमलोग अपने वैद्याधर पद को अब जाते हैं। इतना कह उसने भार्य्याओं और छोटे भाई के साथ पिता के चरणों में प्रणाम किया और मानुषी मूर्ति को परित्याग विद्याधर का रूप धारण कर दोनों पत्नियों को निज गोद में ले आकाशमार्ग से उड़ता हुआ अपने मुख्य देश को जा पहुँचा। वहां जा पिता मुक्तासेन और माता के नेत्रों को आ-नन्द दे भाई रूपसेन के साथ सुख से रहने लगा। फिर आदित्यप्रभा और चन्द्रा-वती में कभी द्वेषभाव न हुआ और वे दोनों भी ईर्षा को परित्याग कर आनन्द-पूर्वक रहती थीं।

यों इस मनोहर कथा को मन्त्री गोमुख ने सुनाकर पुनः नरवाहनदत्त से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

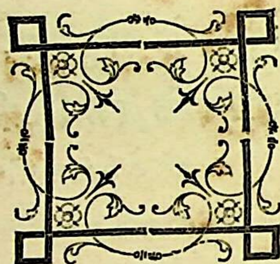
कहा कि हे देव! इस प्रकार बड़े लोगों को भी क्लेश सहना पड़ता है किन्तु फिर उनका महान् उदय होता है और छोटे लोगों पर छोटी मोटी आपत्तियां आती हैं सो उनका उदय भी ऐसाही वैसा होता है। आप रत्नप्रभादेवी की विद्याशक्ति से रक्षित रहकर अवश्यही बिना क्लेश के राजकुमारी कर्पूरिका को प्राप्त करेंगे इसकी चिन्ता मत करिये।

गोमुख की बरनी कथा सुनि नरबाहन राय।
उत्साहित ह्वै भूलि श्रम पंथ चले हरखाय॥
मारग में तिनको मिल्यो स्वच्छ सरोवर आन।
जाके तीर सुनीर में कमलभीर सरसान॥
तहँ अन्हाय शिवपूजि के मधुर स्वादु फल खाय।
किसलय-शय्या शयन कै रजनी दीन्ह बिताय॥

शेष पांचवें भाग में देखो—



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नवां तरङ्ग ।

दूसरे दिन प्रातःकाल नरवाहनदत्त ने सरोवर के तीर से उठकर यात्रा आरम्भ की और गोमुख मन्त्री से कहने लगे कि हे मित्र ! आज रात्रि शेष होने के समय मुझे ऐसा जान पड़ा कि कोई श्वेतवस्त्रधारिणी दिव्यरूपा कुमारी स्वप्न में मेरे पास यों कह रही है कि हे वत्स ! चिन्ता मत कर, इसके आगे जाकर बन के अन्त में समुद्र के तीर पर शीघ्रही तुझे एक भारी आश्चर्य्यदायक नगर मिलेगा। वहां विश्राम करने के उपरान्त बिना क्लेश के तू कर्पूरसम्भव पुर में जा पहुँचेगा, जहां तुझे राजकुमारी कर्पूरिका प्राप्त होगी । मुझसे ऐसा कह वह तो अन्तर्धान हो गई और मैं उसी क्षण जाग उठा। राजकुमार का ऐसा कहना सुन प्रसन्न हो गोमुख ने कहा कि हे देव ! आप पर जगदीश का अनुग्रह है, आपके लिये कोई काम कठिन नहीं है, जान पड़ता है कि आपकी इच्छा शीघ्रही पूरी होगी । इतना कह गोमुख नरवाहनदत्त के साथ जल्दी जल्दी मार्ग में चलने लगा। कुछ देर के उपरान्त वह समुद्रकूलवर्ती एक बहुत बड़े नगर में पहुँचा जिसमें ऊँचे ऊँचे सोने के महल ऐसे जान पड़ते थे कि मानो सुमेरु पर्वत की चोटियां खड़ी हैं, उस नगर में भोग की सभी सामग्री एकत्र थी, बस यही जान पड़ता था कि यह कोई दूसरा भूमण्डल है। बाजार के मार्ग से होकर वह नगर में पैठा, देखता क्या है कि सभी पशु और पुरुष काठ के बने हैं परन्तु सजीव की नाईं चलते फिरते और सभी चेष्टा करते हैं किन्तु मुंह से बोल नहीं सकते। गोमुख के साथ चलते चलते वह राजभवन के सम्मुख पहुँचा, देखा कि अनेक हाथी घोड़े चल फिर रहे हैं किन्तु सभी काठ के; इस आश्चर्य्यमय कौतुक को देखता वह अपने मन्त्री के सहित राजभवन के अन्दर पैठा। वहां देखा कि जैसे आत्मा इन्द्रियों से काम लेता है उसी प्रकार उन समस्त जड़ पदार्थों से चेतनवत् काम लेनेवाला एक भव्य व्यक्ति रत्नसिंहासन पर बैठा है । वह व्यक्ति राजकुमार को देखतेही उठ खड़ा हुआ और स्वागत कर आसन पर बैठाल स्वयं आगे बैठ सादर पूछने लगा कि आप कौन हैं ? और कैसे तथा किस कारण इस अमानुष प्रदेश में केवल एक साथी को लेकर आये हैं ? नरवाहनदत्त ने अपना सारा हाल आरम्भ से कह सु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नाया और उस पुरुष से जो नम्र हो उनके साम्हने बैठा था पूछा कि, हे भद्र! आप कौन हैं और आपका यह आश्चर्यप्रद नगर कैसा है?। इतना सुन, उस व्यक्ति ने अपना हाल कहना आरम्भ किया, वह बोला कि—

काञ्ची नाम्नी एक नगरी अनेक गुणों से गुम्फित है और जिसे पृथ्वीरूपी वधू ने मानो सचमुच काञ्ची (करधनी) जान अलङ्काररूप से धारण किया है। उस नगरी में बाहुबल नामक एक बड़े बलशाली और प्रसिद्ध राजा हो गये हैं जिन्होंने लक्ष्मी को अपने भुजबल से जीतकर उसके चञ्चला होने पर भी अपने कोष में बांध रक्खा था। उस राज्य में हमलोग दो भाई जाति के बढ़ई रहते थे। हम दोनों काष्ठ के बहुत विलक्षण २ यन्त्र, जैसे मय राक्षस ने निर्माण किये थे, बनाने में प्रवीण थे। मेरे बड़े भाई का नाम प्राणधर था, उसे वेश्याओं का व्यसन पड़ गया था; मैं अपने बड़े भैया का अत्यन्त प्रेमी भक्त, छोटा भाई हूं। हे प्रभो! नाम मेरा राज्यधर है। पिता का जितना धन था बड़े भाई ने सब फूंक दिया और मैंने भी जो कुछ उपार्जन किया था स्नेह पूर्ण होने के कारण उन्हें दिया था, सब का सब उन्होंने खाउड़ा डाला। इतने पर भी उनका व्यसन कम न हुआ वरन बढ़ताही गया, उस वेश्या को धन देने की इच्छा से उनने चोरी करना विचारा और इस अभिप्राय की सिद्धि के लिये उनने एक जोड़ा राजहंस काठ का बनाया और उनको कमानी में रस्सी बांधी। कमानी और रस्सी के बल से वह उन राजहंसों को रात के समय चलाकर राजा बाहुबल के कोषगृह में झँझरी से पहुँचा देता जहां जा वे राजहंस पिटारे में से रत्नों को निकाल अपनी चोंच से उठाकर मेरे भाई के समीप चले आते थे। उन्हें बेंच मेरा भाई वेश्या के साथ लहर करता; इसी प्रकार वह नित्य राजा के कोष से माल उठवा मँगाता था। यद्यपि मैंने बार बार उसे इस कुकर्म्म के करने से निषेध किया किन्तु वह मेरी कब सुनता था क्योंकि,— "व्यसनअन्ध उन्मत्त नहिँ देखहिँ पन्थ कुपन्थ" कोषाध्यक्ष ने जब देखा कि कपाट की अर्गला और ताला ज्यों का त्यों बन्द रहता है, कहीं चूहे भी नहीं हैं, पर रत्न नित्यही चोरी जाते हैं तो विवश और भयभीत हो उसने महाराज से जाकर निवेदन किया कि हे देव! कोषगृह में तो विलक्षण प्रकार की चोरी होती है जिसका भेद कुछ भी नहीं मिलता। महाराज ने उसे तथा अन्य

सिपाहियों को इस बात पर नियत किया कि कोषगृह के अन्दर जागते रहकर पहरा देओ और देखो कि इसमें क्या तत्व है । सब लोग यथास्थान पहरा देने लगे, देखते क्या हैं कि आधीरात के समय काठ के दो राजहंस कमानी और रस्सी के बल से झंझरी के मार्ग हो अन्दर चले आते हैं । ज्योंही उन दोनों ने आभूषणों को चोंच में उठाया कि उन लोगों ने डोरी काट दी, तब तो वे काष्ठमय राजहंस वहीं गिर पड़े । रक्षकों ने महाराज को दिखाने के निमित्त उन्हें धर रखा। रस्सी ढीली देख मेरे भाई ने मुझसे कहा कि भैया जान पड़ता है कि कोषरक्षकों ने मेरे हंसों को पकड़ लिया क्योंकि खींचने पर खाली रस्सी लौट आई और हंस वहीं रह गये, सो अब इसी दम हमलोगों को यहां से भागना चाहिये। यह सभी जानते हैं, कि हम्हीं दोनों इस नगर में ऐसे मायायन्त्र के बनानेवाले हैं। बस सबेरा होतेही चोरी में पकड़े जांयगे, राजा हमलोगों को जानतेही हैं इस्से यहां रहने में कुशल नहीं है । सो मेरे पास जो वह आकाशसञ्चारी विमान है जो कल के दबातेही आठ सौ योजन उड़कर चला जाता है उसी के द्वारा हम दोनों विदेश को इसी क्षण चले चलें । यद्यपि परदेश में अनेक कष्ट होते हैं पर क्या किया जाय, क्योंकि हित वाक्यों की उपेक्षा कर जो पापकर्म्म किया जाता है उसमें किसी को सुख क्योंकर मिल सकता है । मुझ दुर्बुद्धि ने जो तुम्हारी बात पर ध्यान न दिया उसी का यह फल है कि तुझ निरपराधी पर भी विपत्ति आया चाहती है। इतना कह मेरा वह प्राणधर नामक भाई अपने कुटुम्ब सहित उस विमान पर जा चढ़ा, और यद्यपि उसने मुझसे बार बार चलने के लिये आग्रह किया किन्तु मैंने चलना स्वीकार न किया और अपने घरही में बैठा रहा, वह तो विमान द्वारा उड़ता हुआ क्षण भर में कहीं दूरदेश को चला गया। भाई के चले जाने पर प्रातःकाल मुझे यह शङ्का हुई कि राजा के सेवक न जाने मेरी क्या क्या दुर्दशा करेंगे, सो मैं अपने बनाये हुये विमान पर जो दो सौ योजन जा सकता था बैठकर दूर चल दिया और फिर वहां से उड़ पुनः दो सौ योजन और भी आगे निकल गया । समुद्र के निकट पहुँचने तथा निज देश से बहुत दूर जा रहने पर मेरी शङ्का दूर हुई, सो मैं विमान से उतर पैदल चलते चलते इस शून्य नगर में आ पहुँचा । हे देव! मैं कौतुकवश इस राजमन्दिर में जो पैठा तो देखता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रखा हूं कि यहां वस्त्र आभरण शय्या इत्यादि सभी राजोपभोगी ठाठ प्रस्तुत हैं। सन्ध्या समय उद्यान में जा मैंने सरोवर के जल में स्नान किया और कुछ मधुर फलों को खा राजशय्या पर लेट अकेला पड़े पड़े सोचने लगा कि यहां निर्जन स्थान में क्या करूँगा कल प्रातःकाल उठकर किसी दूसरे देश को चलूं क्योंकि अब मुझे राजा बाहुबल का इतनी दूर पर कुछ भय नहीं है। योंही चिन्ता में पड़े हुये आंख लग गई, पिछले पहर स्वप्न में देखा कि मयूर पर आरूढ़ एक दिव्य व्यक्ति मुझसे कह रहा है कि हे भद्र! तू यहीं पर रहियो कहीं और मत जाइयो, आहार के समय तू आंगन के मध्य में जाकर बैठ रहियो। इतना कह वह पुरुष तो अन्तर्धान हो गया और मैं जाग उठा, विचारने लगा कि निस्सन्देह यह स्थान श्रीस्वामिकार्तिकजी का रचा हुआ है। मेरे पूर्वपुण्यों के कारण उन्होंने स्वप्न में मेरे ऊपर यह अनुग्रह किया है जान पड़ता है कि यहां रहने से मेरा कुछ न कुछ कल्याणही होगा। बस चित्त में आस्था बांध मैं उठ खड़ा हुआ और आन्हिक कृत्यों से निश्चिन्त हो भोजन के समय बीच आंगन में जा बैठा। थोड़ी देर में सोने की थालियों में घी दूध भात खीर इत्यादि आपसे आप आकाश से आन उपस्थित हुये। फिर जिन जिन खाद्य पदार्थों को मैंने हृदय में ध्यान किया वे सब क्षण भर में आन पहुँचे। भोजनोपरान्त मैं भली प्रकार तृप्त हो ईश्वर का धन्यवाद कर उठ खड़ा हुआ। तब से हे प्रभो! मैं इसी पुरी में रहता हूं, जिस समय जिस वस्तु की मैं इच्छा करता हूं उसी समय वह मुझे प्राप्त होती है किन्तु भार्या और नौकर चाकर तथा हाथी घोड़ों को लाख हृदय में ध्यान करता हूं कोई भी प्राप्त नहीं होता, इसीलिये मैंने ये सब काठ के बना रक्खे हैं। यद्यपि मैं जाति का बढ़ई हूं तथापि हे देव! विधिवश मैं उन भोगों का उपभोग कर रहा हूं जो राजों को भी जल्दी नहीं मिलते; नाम मेरा राज्यधर है।

"सो हे प्रभो! आज आप इसी स्वर्णनिर्मित नगर में विश्राम कीजिये मैं यथाशक्ति आपकी सेवा में तत्पर रहूंगा"। इतना कह राज्यधर, नरवाहनदत्त और गोमुख को अपने साथ नगर के उद्यान में ले गया जहां राजकुमार ने सरोवर में स्नान कर वहीं से कमल ले श्रीशिवजी का पूजन किया, तदनन्तर राज्यधर उन्हें भोजन के निमित्त उसी आंगन के मध्य में ले आया; वहां जो जो वस्तु उसने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्मरण की सब सुवर्ण की थालियों में आ उपस्थित हुईं और राज्यधर ने राजकुमार तथा मन्त्रीपुत्र के आगे परोस दीं । भोजनोत्तर देखते क्या हैं कि किसी अदृश्य हाथ ने भोजन का स्थान परिस्कृत कर दिया, फिर ताम्बूल खाकर नरवाहनदत्त ने एक उत्तम स्वच्छ स्थान पर विश्राम किया । जब राज्यधर ने भी भोजन से छुट्टी पाई तो रात के समय एक राजोचित शय्या पर राजकुमार जा पौढ़े और समीपही गोमुख तथा राज्यधर ने भी अपनी अपनी सोने का प्रबन्ध किया। कर्पूरिका से मिलने के उत्साह में राजकुमार को नींद न आती थी सो जब राज्यधर ने, पूछने पर उनका सारा वृत्तान्त जाना तो यों निवेदन किया कि हे प्रभो! आप सुख से सोइये कुछ चिन्ता मत कीजिये, आपकी भेट आपकी प्रिया से अवश्य होगी क्योंकि अङ्गना भी लक्ष्मी की नाईं उदारसत्व व्यक्ति को ही बरती है, मैंने इस बात को प्रत्यक्ष देखा है जिसका वृत्तान्त आपसे कहता हूं सुनिये—

जिस काञ्चीपति राजा बाहुबल का हाल मैंने आपको अभी सुनाया है उनके एक प्रतीहारी का नाम अर्थलोभ था जो अपने नाम के अनुसार बड़ाही लोभी किन्तु विशेष धनवान् था । उसकी भार्य्या अत्यन्त रूपवती मानपरा नाम्नी थी। वह अर्थलोभ प्रतिहारी व्यापार किया करता था किन्तु अपने नौकरों पर अविश्वास करने के कारण उसने वह काम अपनी उसी भार्य्या को दे रक्खा था । यद्यपि वह इस काम को करना न चाहती थी किन्तु पति की आज्ञा का उल्लङ्घन करना पाप समझ, नाहीं भी न करती थी। व्यापारी लोग उसके सुन्दर रूप और मीठे बचनो पर मोहित हो उसीसे लेनदेन करते थे। हाथी घोड़े रत्न और वस्त्रादि की विक्री जो उसके द्वारा होती थी उसमें अच्छा लाभ देख उसका पति अर्थलोभ अत्यन्त प्रसन्न होता था । एक बेर किसी दूरदेश से कोई सुखधन नामक बड़ा भारी व्यापारी वहां आया जिसके पास अनेक घोड़े और बहुमूल्य वस्त्राङ्कार थे। उसके आने का समाचार पा अर्थलोभ ने अपनी भार्य्या से कहा कि हे प्रिये! सुखधन नामक व्यापारी विदेश से अनेक प्रकार के वाणिज्य का माल लेकर यहां आया है, सुना है कि उसके पास बीस सहस्र घोड़े और चीन देश के बने हुये अनेक प्रकार के वस्त्र हैं, सो तू उसके पास जाकर, पांच सहस्र घोड़े और दश सहस्र जोड़े उत्तम वस्त्रों के मोल ले आ कि मैं अपने हजारों घोड़ों में पांच

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सहस्र और मिलाकर राजा से मिलूं और अपने व्यापार की वृद्धि करूँ। इस प्रकार उस पापी अर्थलोभ से भेजी जाकर मानपरा सुखधन के समीप पहुँची और पांच सहस्र घोड़े तथा दस सहस्र जोड़े वस्त्रों का मूल्य पूछने लगी। सुखधन उसका सौन्दर्य्य देख मोहित हो गया और कहने लगा कि मूल्य लेकर तो मैं एक भी घोड़ा या वस्त्र तुम्हें न दूंगा, हां यदि एक रात मेरे साथ रहो तो मैं पांच सहस्र घोड़े और उतनेही जोड़े वस्त्र तुम्हारी भेंट करूँगा"। इतना कह उसने और भी बहुत कुछ उस सुन्दरी को देने के लिये कहा; भला स्वतन्त्र घूमनेवाली सुन्दरी युवती के साथ किसे बुरी इच्छा नहीं उपजती!। मानपरा ने यह सुन, उत्तर दिया कि मैं अपने पति से पूछ लूं तो कहूं मैं जानती हूं कि वे धन लोभ से मुझे इस कार्य के लिये भी भेज देंगे। इतना कह वह घर को लौट आई और अपने पति से सारा हाल सुना गई कि वह व्यापारी ऐसा ऐसा कहता हैं। यह सुन वह पापी नीच लालची अर्थलोभ कहने लगा कि हे प्रिये! यदि तेरे एकही रात के वहां रहने से पांच सहस्र घोड़े और उतनेही जोड़े वस्त्र के मिल जावें तो इसमें अपनी हानि क्या है तू जाकर उसके पास रात को रह और प्रभात होने पर झट चली आइयो। उस कायर भर्ता का ऐसा बचन सुन, मानपरा को बड़ा आश्चर्य्य हुआ और वह हृदय में विचारने लगी कि इस सत्वहीन को धिक्कार है जिसे अपनी भार्य्या को भी बेंचते लज्जा नहीं आती! यह नित्य की लोभ-भावना से परम लोभी हो गया है, इससे तो मेरे उसी भर्ता का होना अच्छा जो मुझे अकेली एक रात के लिये सहस्त्रों घोड़े और सहस्त्रों जोड़े वस्त्र देकर मोल लेता है। ऐसा विचार उसने अर्थलोभ से कहा कि फिर पीछे मेरा दोष मत दीजियेगा उसने कहा 'नहीं तू अवश्य जा'। तब तो वह उस नीच भर्ता को छोड़ सुखधन के पास आ गई। वह उसे आई देख परम प्रसन्न हुआ, और पूछने पर सब हाल सुन, विस्मित हो, उसे पा, अपने को धन्य माना। फिर उसने उसी क्षण उसके पति अर्थलोभ के पास उतने घोड़े और चीन वस्त्रों के जोड़े अपने सेवकों के द्वारा भेज दिये जो उसकी भार्य्या के मूल्य में नियत हुये थे। तदुपरान्त वह सारी रात उसके साथ रहा, मानो चिरकाल से पाई हुई लक्ष्मी की फलश्री को उसने मूर्तिवती पाया। प्रातःकाल अपनी भार्य्या को बुलाने के लिये उस लालची और नीच

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अर्थलोभ ने जब निज सेवकों को सुखधन के घर पर भेजा तो मानपरा ने उन लोगों से कहा कि जाकर उस नीच से कह देओ कि जब उसने मुझे बेंच दिया तो मैं दूसरे की हो गई फिर उस निर्लज्ज की भार्य्या क्योंकर हो सकती हूं! क्या मैं भी उसके समान नीच हूं? आपही लोग कहें कि क्या अब यह मुझे शोभा देगा सो अब जाइये और उससे कह दीजिये कि जिसने मुझे मोल लिया है वही मेरा पति है। उसकी यह बात सुन वे सेवक लौट गये और नीचा मुँह कर सब हाल अर्थलोभ को सुना दिया। यह सुन उस नराधम ने बलपूर्वक भार्य्या को लौटाने की इच्छा की, तब हरबल नामक उसके एक मित्र ने उसे समझाया कि तुम सुखधन से लड़कर अपनी भार्य्या को नहीं ला सकोगे क्योंकि वह बड़ा वीर है और तुम में मैं इतनी सामर्थ्य नहीं देखता; तिस पर वह तुम्हारी त्यागी हुई भार्य्या का अनुराग पाकर अधिक शूर हो रहा है, वह स्वयं बली है और उसे बलवान मित्रों की सहायता है। तू तो अपनी कृपणता के कारण भार्य्या से भी त्यागा गया है और अपमान से निरुत्साहित हो नपुंसक हो रहा है। न तो तू स्वयं वैसा बली है और न तुझे वैसे बलवान मित्रों की सहायता है सो फिर किस बूते पर तू उससे विरोध करने और लड़ने चला है। यदि राजा को यह विदित होगा कि तूने अपनी भार्य्या को बेंच डाला है तो वे तेरे इस नीच कर्म्म पर अत्यन्त क्रुद्ध होंगे। इससे चुपकर बैठ रहना अच्छा है नाहक अपना उपहास मत करा यद्यपि उसके मित्र ने इस प्रकार निषेध भी किया तथापि वह क्रोधान्ध हो अपने लोगों को एकत्र कर सुखधन के गृह पर जा रहा, इतने में मित्रों की सेना की सहायता पा सुखधन ने क्षण भर में सबों को मार भगाया। भागा हुआ वह अर्थलोभ राजा के पास पहुँचा और दोहाई दोहाई चिल्लाता हुआ कहने लगा कि हे देव! सुखधन नामक एक व्यापारी ने मेरी भार्य्या को बलपूर्वक छीन लिया है। उसका ऐसा कहना सुन राजा ने क्रुद्ध हो सुखधन को बँधवा मँगाने की इच्छा की, कि इतने में सन्धाननामा मन्त्री ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे प्रभो! सहसा उस सुखधन को बँधवाकर मंगाना उचित न होगा। उसके साथ आये हुये ११ मित्रों की सहायता है और एक लाख से भी अधिक उत्तम घोड़े इस समय उसके पास हैं। अभी इस अर्थलोभ के कहने का पूरा तत्व विदित

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं हुआ, ऐसी बात किसी कारण बिना नहीं हो सकती, एक दूत को उसके पास भेजकर पूछना चाहिये कि वह इस विषय में क्या कहता है । मन्त्री का ऐसा बचन सुन राजा बाहुबल ने उसी क्षण अपना एक दूत सुखधन के पास इसका हाल पूछने के लिये भेजा। वह दूत जाकर अभी सुखधन से पूछही रहा था कि मानपरा स्वयं सन्मुख हो सारा हाल कहने लगी, दूत ने आकर महाराज को वहां का सब वृत्तान्त सुनाया, यह आश्चर्य्य हाल सुन महाराज को मानपरा के रूप देखने की इच्छा हुई, सो वे अर्थलोभ को साथ लिये स्वयं सुखधन के घर पर चले आये । सुखधन ने मानपरा के साथ आकर नम्रतापूर्वक महाराज के चरणों में प्रणाम किया। उन्होंने देखा कि मानपरा अपने रूप के आगे विधाता की लक्ष्मी को भी लज्जित कर रही है । फिर पूछने पर महाराज ने स्वयं मानपरा के मुख से सुनकर सारा हाल जाना और अर्थलोभ पासही खड़ा चुपचाप सब सुन रहा था। उसे निरुत्तर देख महाराज ने उस सुन्दरी से पूछा तो अच्छा अब क्या होना चाहिये, उसने उत्तर दिया कि हे देव ! जिस निःसत्व ने बिना किसी प्रकार की आपत्ति पड़े मुझ भार्य्या को दूसरे के हाथ बेंच डाला भला उस लोभी के पास अब मैं कैसे जा सकती हूं ! यह सुन महाराज ने कहा कि ठीक है हम भी इसका अनुमोदन करते हैं। तब तो वह अर्थलोभ काम क्रोध तथा लज्जा से व्याकुल हो कहने लगा कि हे राजन्! बिना किसी दूसरे की सहायता लिये मुझे और सुखधन को अपनी सेना लेकर लड़ने दीजिये, देखा जाय कि कौन सत्ववान् और कौन निःसत्व है ! सुखधन ने कहा कि महाराज ! सेना से क्या प्रयोजन, हम दोनों में अकेले अकेले युद्ध हो जाय ! जो जीते वह मानपरा को पावे। यह सुन महाराज ने कहा कि अच्छी बात है योंही हो जाय। महाराज और मानपरा दोनों खड़े देखही रहे थे कि सुखधन और अर्थलोभ अपने अपने घोड़ों पर चढ़ शस्त्र ले साम्हने युद्धभूमि में उतर आये। दोनों में युद्ध होने लगा इतने में सुखधन ने घोड़े को चक्कर दे बर्छी मार अर्थलोभ को भूमि पर गिरा दिया, इसके उपरान्त तीन बेर और भी अर्थलोभ पृथ्वी पर गिरा और उसका घोड़ा चोटैल हो गया, किन्तु सुखधन धर्म्मयुद्ध करनेवाला था इसलिये उसने ऐसे समय में अर्थलोभ को मार डालना उचित न समझा और अपना हाथ रोक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिया। पांचवीं बेर अर्थलोभ घोड़े के नीचे गिर पड़ा और पिस जाने से बेसुध हो गया, उसी क्षण उसके सेवक उसे वहां से उठा ले गये और सब लोग सुखधन की वाहवाही करने लगे। महाराज ने भी उसे विजयी माना और उसी क्षण मानपरा का हाथ उसे धरा दिया। फिर अर्थलोभ की सारी सम्पत्ति जो उसने कुरीतियों से उपार्जित की थी छीन कर सुखधन को दे दी और उसके स्थान पर दूसरे को नियत कर प्रसन्नतापूर्वक अपने स्थान को गये। ठीकही है "पाप मूल कहँ नाश करि सन्त लहहिँ हिय मोद।" वह सुखधन भी अपनी अनुरक्ता भार्य्या मानपरा के साथ आनन्दपूर्वक अपने दिन विताता था।

कहने का तात्पर्य्य यह है कि हीनसत्व की भार्य्या और लक्ष्मी दोनो परित्याग कर देतीं हैं और सुसत्व के पास आपसे आप चली जाती हैं। सो आप चिन्ता परित्याग कर सुख मे सोइये, शीघ्रही आपको राजपुत्री कर्पूरिका प्राप्त होगी। राज्यदत्त का ऐसा भाषण सुन, नरवाहनदत्त ने गोमुख के साथ निश्चिन्तता से रात काटी और भली प्रकार सोये।

दूसरे दिन आह्निक कृत्यों से निश्चिन्त हो भोजनोपरान्त बुद्धिमान् गोमुख ने राज्यदत्त से कहा कि हे सखे! हमारे प्रभु के लिये ऐसा कोई विमान प्रस्तुत करो जिसमें वे शीघ्रही कर्पूरसम्भव नगर को पहुँच अपनी प्यारी कर्पूरीका को पावें।

यह सुन राज्यधर ने, वह आकाशसञ्चारी विमान जो उसने पहिले बना रक्खा था और जिस पर चढ़ के वह यहां आया था, नरवाहनदत्त को अर्पण किया। मनोवेग की नाईं शीघ्र चलनेवाले उस विमान पर गोमुख के साथ चढ़, घोर समुद्र को पार कर तत्तीरवर्त्ती कर्पूरसम्भव नामक नगर में वह अति शीघ्र पहुँच गये। वहां वह विमान आकाश से नीचे लाया गया और उस पर से उतर राजकुमार, गोमुख को साथ लेकर कौतुकवश नगर में इधर उधर घूमने लगे। लोगों से पूछने पर उन्हें विदित हुआ कि निस्सन्देह यह वही नगर है जिसकी खोज उन्हें थी, बस प्रसन्न हो वह चलते चलते राजभवन के समीप पहुँचे। वहां उन्होंने देखा कि एक उत्तम गृह के द्वार पर एक बुड्ढी बैठी है, वहां टिकने की इच्छा से वे उसके पास गये और उसने भी इनका भली प्रकार स्वागत किया और ये बुड्ढी से आज्ञा ले वही ठहर गये। फिर बातचीत करते करते उन्होंने बुड्ढी से पूछा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि हे माता ! इस नगरी के राजा का क्या नाम है और उन्हें के सन्तान हैं? वे लोग कैसे हैं, तनिक उनका परिचय भी दीजिये क्योंकि हमलोग विदेशी हैं। यह सुन और इनकी आकृति उत्तम देख वह वृद्धा कहने लगी कि हे पुत्र! आपने जो पूछा तो मैं सब वृत्तान्त पूरा पूरा कहती हूं सुनो।

इस कर्पूरसम्भवदेश के राजा का नाम कर्पूरक है, उन्हें कोई सन्तति न थी, तो सन्तान पाने की इच्छा से उन्होंने अपनी रानी बुद्धिकारी के साथ निराहार रहकर शिवजी के प्रसन्नतार्थ कठिन तपस्या की। जब उन्हें इस प्रकार निराहार रहते तीन दिन बीते तो शङ्कर भगवान् ने स्वप्न में दर्शन दे आज्ञा दी कि हे राजन् उठो तुम्हारे यहां एक कन्या जन्म लेगी जो पुत्र की अपेक्षा अधिक श्रेष्ट होगी; उसका पति विद्याधरों का साम्राज्य पावेगा। शिवजी का ऐसा आदेश सुन महाराज की नींद प्रातःकाल के समय खुल गई और रानी को सब वृत्तान्त सुना उन्होंने हर्षित किया। फिर उनलोगों ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक उत्साह के साथ व्रत का पारण किया। कुछ दिनों के उपरान्त रानी को गर्भ रहा और समय उपस्थित होने पर एक सर्वाङ्गसुन्दरी कन्या उन्हें उत्पन्न हुई। कन्या की ज्योति के आगे सौरीगृह के रत्नदीप मन्द पड़ गये सो मानो कज्जल के बहाने वे अपने हृदय का निश्वास छोड़ते थे। महाराज ने उस कन्या का नाम अपनेही नाम के अनुसार कर्पूरिका रक्खा और राज्य में बड़ा भारी उत्सव किया गया। धीरे धीरे वह कन्या चन्द्रकला की नाईं बढ़ने लगी और इस समय वह पूर्ण यौवनवती हो रही है। यद्यपि उसके पिता उसका विवाह करना चाहते हैं किन्तु वह पुरुषमात्र से द्वेष रखती और विवाह करने की इच्छा नहीं करती। मेरी पुत्री से उसका सखीभाव है, इसने भी अनेक बार उसे समझाया कि हे सखि! कन्याजन्म का फल विवाहही है सो तू उसे क्यों नहीं चाहती। जब कई बेर उसने हठ पूर्वक उससे यह प्रश्न किया तो उसने उत्तर दिया कि हे सखि! मुझे अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण है सुन मैं तुझसे कहती हूं जो मेरे विवाह न करने का कारण है।

महासमुद्र के तीर पर एक बहुत बड़ा चन्दन का वृक्ष है उसके निकटही एक अति सुन्दर सरोवर है जहां अनेक मनोहर कमल खिले रहते हैं, पूर्वजन्म में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मैं तलाव में हंसी होकर जन्मी थी । एक बर मैंने समुद्र के भय से उसी चन्दनवृक्ष पर अपने पति राजहंस के साथ घोसला बनाया, वहां मुझे कई बच्चे हुये, अकस्मात् समुद्र की तरङ्ग जो बढ़ती हुई आई तो मेरे उन बच्चों को बहा ले गई। इस पर मैं दुःख से रोने लगी और मैंने कुछ भी भोजन न किया, समुद्रतीरवर्ती एक शिवलिङ्ग के सम्मुख चुपचाप बैठी रही । मेरे पति राजहंस ने आकर कहा कि उठ मरे हुये बच्चों के लिये क्या रो रही है, और बच्चे बहुतेरे हो रहेंगे, शरीर से बचेंगे तो ऐसे बच्चे कच्चे सैकड़ों मारे मारे फिरेंगे । उसके इस वचन रूपी बाण से दुःखित हो मैं हृदय में विचारने लगी कि अहो धिक्कार है उन पापी पुरुषों को जो अपने बालबच्चों पर भी ऐसे निःस्नेह और कृपाहीन हैं तथा भक्तिसती स्त्रियों पर भी करुणा नहीं करते; सो ऐसे पति से मुझे क्या लाभ ? और अब मैं इस शरीरही को रख कर क्या करूंगी ! यों विचार शिवजी को प्रणाम कर, उनका ध्यान भक्तिपूर्वक हृदय में धर, उस राजहंस के साम्हनेही मैं समुद्र में कूद पड़ी, कूदती समय मैंने शिवजी से यही प्रार्थना की कि हे भगवन् ! इस जन्म में मैं राजहंसी हूं उस जन्म में मुझे राजपुत्री बनाना और ऐसी कृपा करना कि मुझे इस जन्म का हाल स्मरण रहे । तदनुसार हे सखि ! मैं इस जन्म मे राजाके घर जन्मी हूं । पूर्वजन्म के उस भर्ता की कठोरता स्मरण कर, हे सखि, मेरा मन पुरुषों से विरक्त हो रहा है इसी कारण मैं विवाह नहीं किया चाहती, आगे भाग्य के आधीन है ।" इस प्रकार राजकुमारी कर्पूरिका ने मेरी कन्यासे कहा था और उसने आकर यह वृत्तान्त मुझे सुनाया था जो मैंने तुम्हारे पूछने पर तुम से कह दिया।

सो हे पुत्र ! उसी राजसुता से तुम्हारा विवाह होगा । पूर्व समय में श्रीशम्भु भगवान् ऐसी आज्ञा दे चुके हैं कि यह सर्वविद्याधरों के होनहार चक्रवर्ती महाराज की भार्य्या होगी । वे सब तिलक इत्यादि लक्षण मैं तुम में पाती हूं, जान पड़ता है कि विधाता उसी के निमित्त तुम्हें यहां ले आया है. सो तुम मेरेही घर में रहो, देखें क्या होता है, चलो कुछ भोजन करो । इतना कह बुड्ढी ने कुछ भोजन लाकर उन्हें दिया जिसे मंत्रीपुत्र गोमुख के साथ खा पीकर वह रात राजकुमार नरवाहनदत्त ने वहीं बिताई । प्रातः काल युवराज ने गोमुख से कुछ मंत्रणा कर कि भविष्य के लिये क्या करना चाहिये, एक महाव्रती का रूप धारण किया और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसे साथ ले राजद्वार के समीप जा बार बार "हा हंसी! हा हंसी" पुकारते हुये इधर उधर घूमने लगे। वहां के सबी लोग, कौतुक के साथ, उन्हें देख मन में यह बिचारते थे कि यह कौन है, इतने में अन्त:पुर की एक दासी ने राजकुमारी कर्पूरिका से कहा कि हे देवि! हमलोगों ने एक युवा महाव्रती को बाहर सिंहद्वार पर देखा है, सौन्दर्य्य में उसके समान कदाचित् दूसरा कोई भी इस संसार में न होगा, उसके साथ उसका एक मित्र भी जान पड़ता है। रात दिन "हा हंसी! हा हंसी" यही महामोह मंत्र जपा करता है"। राजकुमारी जो पूर्वजन्म में राजहंसी थी इतना सुनतेही चौंक पड़ी और दासी से बोली कि जा उसे मेरे सम्मुख तो लेआ, मैं देखूं कि वह कौन है। दासी बाहर जाकर, युवराज और गोमुख को बुला अन्त:पुर के द्वार पर ले गई। राजकुमारी ने देखा कि एक परम सुन्दर युवा महाव्रती सन्मुख खड़ा है मानो श्रीशङ्करभगवान को अपनी तपस्या से सन्तुष्ट करने के लिये कामदेव ने पुन: शरीर धारण किया है। विस्मय से उसकी ओर देख कर राजकुमारी ने पूछा कि यह आप "हा हंसी हा हंसी" क्या कहा करते हैं? युवराज कुछ भी ध्यान न किया वही हा हंसी! हा हंसी की धुनि लगाये रहा। राजपुत्री के प्रश्न का उत्तर गोमुख ने जो साथही था यों दिया कि, हे देवि मैं आपसे संक्षेप में इनकी कथा कह सुनाता हूं। पूर्वजन्म में ये कर्म्म के योग से हंस की योनि में जन्मे थे, वहां महासमुद्र के किनारे एक सरोवर के तट पर एक चन्दनवृक्ष के ऊपर ये अपनी हंसी के साथ घोसला बना कर रहते थे। एक समय इनके बच्चों को समुद्र अपनी लहरों द्वारा बहा ले गया सो हंसी ने शोक के कारण सागर में डूब कर अपने प्राण छोड़ दिये। ये उसी हंसी के वियोग में पागल से होगये और शरीर परित्याग करती समय श्रीशम्भु भगवान से हृदय में यह प्रार्थना की कि हे देव यदि मैं आपका सच्चा भक्त हूं तो दूसरे जन्म में मैं राजपुत्र होकर जन्मूं और मुझे इस जन्म की बात स्मरण रहै, मेरी यही इच्छा है कि मेरी यही राजहंसी उस जन्म में भी मेरी भार्य्या हो, और उस सती को भी अपने इस जन्म का हाल स्मरण रहै। ऐसा संकल्प कर, और शंकर भगवान का ध्यान हृदय में धर इन्होंने उस शरीर को जो राजहंसी के विरहानल में तप रहा था समुद्र जल में डाल दिया। इस जन्म में ये कौशाम्बी नगरी में महाराज वत्सराज के पुत्र होकर जनमे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हैं, नाम इनका नरवाहनदत्त है और हे शुभे ! इन्हें अपने पूर्व जन्म का वृत्तान्त सब स्मरण है। इनके जन्म के समय यह आकाशवाणी स्पष्ट हुई थी कि ये सकल विद्याधरेन्द्रों के चक्रवर्ती महाराज होंगे। पिता से यौवराज्य पद पाने के उपरान्त इनका विवाह दिव्या मदनमंचुका देवी के साथ हुआ जिसने किसी कारणवश इस लोक में अवतार लिया है। इसके अनन्तर विद्याधराधिपति महाराज हेमप्रभ की सुता रत्नप्रभा ने स्वयं आकर इनके साथ विवाह किया। किन्तु उस राजहंसी के ध्यान से इनके चित्त में स्थिरता न हुई, यह सब हाल इन्होंने मुझ से कहा, क्योंकि मैं बालपन से इनका सेवक हूं। एक दिन दैवयोग से मृगया के लिये मेरे साथ बन को गये थे वहां एक सिद्ध तपस्विनी से भेंट हुई। बातचीत होते २ उसने अनुग्रहपूर्वक कहा कि हे पुत्र प्राचीन समय में कर्मयोग से कामदेव ने हंस की योनि में जन्म लिया था, वह समुद्र के तीरस्थ एक चन्दनवृक्ष पर घोसला बनाकर अपनी हंसी के साथ रहता था कि उसके बच्चों को समुद्र की लहर बहा ले गई। वह हंसी शाप से जन्मी हुई कोई दिव्या स्त्री थी। अपने बच्चों के शोक मे वह हंसी समुद्र मे कूद कर मरगई और उसी के विरहदु:ख में राजहंस ने भी सागर में छाल मार अपने प्राण छोड़ दिये। वही तू है जो श्रीशम्भु भगवान् की कृपा से महाराज वत्सराज का पुत्र होकर जन्मा है और इसी कारण तुझे अपने पूर्व जन्म की कथा स्मरण है। वह राजहंसी भी इस समय समुद्र के पार कर्पूरसम्भव नामक नगर में कर्पूरिका नाम्नी राजकुमारी हो राजकुल में उत्पन्न हुई है। हे पुत्र तू वहां जा, तुझे तेरी वही हंसीरूपी भार्य्या जो अब राजकुमारी कर्पूरिका है प्राप्त होगी। इतना कह वह सिद्धतापसी आकाश में उड़कर अन्तर्धान होगई। जब से हमारे प्रभु ने यह वृत्तान सुना तभी से घरबार छोड़ मुझे साथ ले इस ओर पैर बढ़ाया। अपने जीवन का पण लगाकर, आपके स्नेह से खींचे जाकर अनेक बनों को डांकते हुये ये समुद्रतट पर आ पहुंचे। वहां हेमपुर के रहनेवाले राज्यधर बढ़ई से भेंट हुई जिसने इन्हें अपना बनाया हुआ आकाशसंचारी विमान उपायन मे दिया, उसी पर बैठ हम दोनों भयानक समुद्र से पार हो आपकी पुरी में आ पहुंचे हैं। इसी कारण ये "हा हंसी ! हा हंसी" रटते फिरते हैं और अब घूमते घामते आपके समीप आग हैंये और आपके मुखचन्द्रका

दर्शन कर अनेक दु:खरूपी अंधकार को नाश करने की आशा रखते हैं। गोमुख के रचे हुये ऐसे मनोहर बचनों को सुन राजसुता कर्पूरिका ने सब बातों का मिलान खाने से उसका कहना सत्य जाना और मन मे बिचारने लगी कि अहो! आर्य्यपुत्र ने मेरे स्नेह में वह शरीर परित्याग कर दिया और इस जन्म से भी इतना कष्ट उठाया। फिर कहने लगी कि हे आर्य्यपुत्र! मैं यथार्थ में वही धन्या हंसी हूं जिसके लिये दोनों जन्म में आपने इतना दु:ख सहा है। मैं आपकी प्रेम की मोल ली हुई दासी हूं—इतना कह वह युवराज को अपने भवन में ले गई और सखियों से बोली कि इन्हें सुगन्धित जल से भली प्रकार स्नान कराओ। फिर सखियों द्वारा अपने पिताजी के पास यह सब सन्देश कहला भेजा जिसे सुन वे उसी क्षण चले आये। नरबाहनदत्त ने सादर उन्हें प्रणाम किया और वे कन्या के योग्य वर पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुये। बिद्याधर महाचक्रवती के पूर्ण लक्षण युवराज में देखकर राजा ने अपने तईं कृतार्थ माना, फिर शास्त्र रीति से उन्होंने बड़ी धूम धाम पूर्वक अपनी कन्या कर्पूरिका का बिवाह युवराज नरवाहनदत्त के साथ कर दिया। अग्नि की प्रत्येक प्रदक्षिणा के साथ महाराज कर्पूरक ने अपने जामाता को तीसकोटी स्वर्णमुद्रा और उतनेही मन कपूर दिये जिनकी राशि से ऐसा प्रतीत होता था कि मानो श्रीपार्वतीजी के बिवाह देखनेवाले मेरु और कैलास दोनों पर्वत इस विवाह को भी देखने आये हों। क्षतो महाराज कर्पूरक ने एक कोटी वस्त्र और तीन सहस्र दासियां पूर्ण रीति से अलङ्कृतकर दायज में दिया। इस प्रकार राजकुमारी कर्पूरिका को बिवाह मे पाकर युवराज नरवाहनदत्त वहां सुख से रहने लगे। ऐसी प्रेमसंयुता युगल मूर्ति को देख किसका चित्त प्रसन्न नही होता था, उस दोनों का संगम वसन्त और मालतीलता की नाईं आनन्द-दायक था।

विवाह होजाने के कुछ दिन अनन्तर एक दिन नरबाहनदत्त ने राजकुमारी कर्पूरिका से कहा कि हे प्रिये! चलो अब कौशाम्बी को चलें। उसने कहा "अच्छी बात है तो उसी बिमान पर जिस पर आप यहां आये हैं हमलोग क्यों न चले चलें, और यदि वह छोटा हो तो उससे बड़ा एक मेरे यहां भी उपस्थित है जो मैं अभी मँगवा भेजती हूं—मेरे यहां बिमान बनानेवाला प्राणधर नामक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक बढ़ई रहता है जो किसी दूसरे देश से यहां आकर बसा है. उसके द्वारा बहुत बड़ा बिमान बनवा लिया जावेगा। इतना कह राजसुता ने एक प्रतीहारी को बुलवा भेजा और उसके आने पर आज्ञा दी कि जाकर प्राणधर बढ़ई से कहो कि वह हमारे लिये एक बहुत बड़ा आकाशसंचारी बिमान बना देवे जिस पर बैंठ कर हमलोग कौशाम्बी को जा सकें। प्रतीहारी को उधर भेज राजकुमारी ने एक सखी को अपने पिता महाराज कर्पूरक के समीप भेजकर अपने जाने की इच्छा कहलवाई। यह सुन महाराज वहीं चले आये, इधर नरवाहनदत्त मन में विचार रहे थे कि हो न हो यह प्राणधर उसी राज्यधर का बड़ा भाई है जो राजा बाहुबल के भय से भाग निज देश परित्याग कर चला आया है। अभी वह इतना सोचही रहे थे कि एक ओर से महाराज आ पहुँचे और दूसरी ओर से प्राणधर भी प्रतीहारी के साथ आन उपस्थित हुआ। प्राणधर ने हाथ जोड़ निवेदन किया कि हे देव! मेरे पास एक विमान बना बनाया ऐसा तयार है कि उसपर सहस्रों मनुष्य सहज में जा सकते हैं। नरबाहनदत्त ने कहा 'वाह। बहुत अच्छी बात है, फिर धीरे से सादर पूछा कि क्या तुम्हीं राज्यधर के जो स्वयं ऐसी कारागरी में अत्यन्त प्रवीण है बड़े भाई प्राणधर हो? प्राणधर ने उसी क्षण चरणों में प्रणाम कर कहा कि हां धर्म्मावतार! मैं वही प्राणधर हूं, श्रीमान् हमदोनों भाइयों को कैसे जानते हैं? इस पर युवराज ने वह सारा हाल कह सुनाया जो उन्होंने राज्यधर से सुना था जिसे जान प्राणधर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। महाराज कर्पूरक की अनुमति पा कुछ देर के उपरान्त प्राणधर ने वह विमान लाकर उपस्थित किया और युवराज ने निज श्वसुर की सम्मति पा उसी पर वह सब सुवर्ण और बहुतसा कपूर जितना उस पर लद सका रख लिया फिर सब दास दासियों को उसी पर बैठा राजकुमारी कर्पूरिका को भी साथ ले लिया। प्राणधर को भी युवराजने महाराज से मांग लिया, फिर ब्राह्मणों को धन और वस्त्रों का दान दे युवराज नरवाहनदत्त गोमुख के साथ उसी विमान पर बैठ, सास ससुर से पूर्ण आदर पा उन्हें प्रणाम कर आकशमार्ग से चल पड़े। उन्होंने प्राणधर से कहा कि पहिले समुद्र के उस पार चल कर राज्यधर से मिलना चाहिये फिर पीछे निज घर को हमलोग चलेंगे। इस आज्ञा के अनुसार प्राणधर ने उस विमान को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसी ओर चलाया, कुछ देर में समुद्र पार हो वे लोग क्षेमपुर नगर में राज्यधर के घर जा पहुँचे। वह युवराज और अपने बड़े भाई को देख हर्ष के मारे गद्गद हो उनलोगों के चरणों पर गिरपड़ा और क्षेम कुशल पूछ सानन्द बैठ बातें करने लगा। उसके यहां दासियां न थीं सो युवराज ने उन दासियों में से अनेक उसे देदीं जिन्हें पा वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। फिर जब प्राणधर युवराज के साथ चलने पर प्रस्तुत हुआ सो राज्यधर की आंखों में प्रेमाश्रु भर आये किन्तु विवश हो वह वहीं बैठ रहा। राजकुमार, प्राणधर, गोमुख, राजकुमारी और सब लोगों के साथ उसी विमान द्वारा कौशाम्बी में आन पहुँचे।

वहां के लोगों ने जब राजकुमारको, विमान पर चढ़े तथा अनुचरों और नवबधू सहित आकाश से उतरते देखा तो आश्चर्य के साथ निहारने लगे। महाराज वत्सराज को जब पुरवासियों के उत्साह से विदित हुआ कि उनका पुत्र इस धूम धाम से आया है तो वे हर्षित हो कर निज रानियों मंत्रियों और बधुओं के साथ आगे चलकर मिलने के लिये गये। नरवाहनदत्त ने उन्हें देखतेही कर्पूरिका के सहित आ चरणों में प्रणाम किया, महाराज ने बड़ी प्रसन्नता से पुत्र को उठा कर हृदय से लगा लिया और विचारने लगे कि वह आकाशवाणी जो हुई थी कि यह विद्याधरेन्द्रों का राजाधिराज होगा, उसकी सत्यता इसी बात से प्रतीत होती है कि यह आकाशसंचारी विमान से उतरा है। माता वासवदत्ता और पद्मावती ने भी बड़े प्रेम से उसे हृदय में लगा लिया, और गद्गद होने के कारण उनकी आंखों से अश्रुधारा बह निकली। राजकुमार की भार्य्या रत्नप्रभा और मदनमंचुका दोनों आनन्दित हो उनके चरणों पर जा गिरीं और साथ ही दोनों ने मानो उनका हृदय ग्रहण कर लिया यौगन्धरायण इत्यादि पिता के सचिवों तथा मरुभूति आदि निज मंत्रियों को भी, जब उन्हों ने आकर राजकुमार के चरणों में प्रणाम किया, यथोचित सत्कार से इन्होंने प्रसन्न किया। उन सबलोगों ने कर्पूरिका के निज कुल में आने से अपने को धन्य माना और अत्यन्त आदरपूर्वक बड़ी धूम धाम से राजभवन में ले गये। उसका आना क्या हुआ मानो साक्षात् लक्ष्मी की बहिन ने राजमहल में निवास किया हो। महाराज वत्सराज ने अपने समधी के प्रतीहारी का बहुत अच्छा सत्कार किया और उन्हें उस सुवर्ण, वस्त्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और कपूर में से बहुत कुछ दिया गया जो विमान में रख कर नरवाहनदत्त के ससुराल से आया था। तदुपरान्त युवराज के परमोपकारी प्राणधर का जिसने विमान की रचना की थी बहुत भारी सन्मान किया गया। इसके अनन्तर महाराज ने गोमुख का बहुत सत्कार कर बड़ी प्रसन्नता के साथ यह पूछा कि तुमलोग यहां से पहिले कैसे गये, मार्ग में क्या क्या हुआ फिर क्योंकर राजकुमारी से मिले और कैसे व्याह हुआ? गोमुख ने विनयपूर्वक सारा हाल आरम्भ से कह सुनाया कि क्योंकर बन में मृगया खेलते हुये वे लोग एक दूसरे बन में चले गये जहां इस सिद्ध तपस्विनी से भेंट हुई, क्योंकर राज्यधर के दिये हुये विमान पर बैठ वे लोग समुद्र के पार पहुंचे जहां राजकुमारी कर्पूरिका को विवाह की इच्छा न रहने पर भी उन्होंने विवाह पर उसे सम्मत किया, फिर क्योंकर प्राणधर के बनाये हुये विमान पर वे लोग लौट कर यहां तक पहुंचे। इस विलक्षण वृत्तान्त को महाराज दोनों रानियों तथा मंत्रियों और वधूओं के साथ सुनकर परम विस्मित और प्रसन्न हुये।

फिर महाराज ने कहा देखो—

कहां को अखेट कहां तापसी की भेंट कहां सागर के तीर पै सहायक को पाइबो। सुन्दर अकाशचारी बाहन को पाइ पुनि जाइ सिन्धुपार ससुरार सरसाइबो॥ यातें पहिलेही तहां प्राणधार तक्षा को आपनी सुरक्षा के हेतु पहुँचाइबो। कौन विधिना के बिन बानक बानवे ऐसो धन्य है विधाता तेरे हाथ है बनाइबो॥

सब लोगों ने गोमुख की प्रभुभक्ति की सादर प्रशंसा की और रत्नप्रभा की स्तुति भी वहां सबोलोगों के मुख से सुनी जाती थी, लोग उसके प्रातिव्रत की स्तुति करते थे कि उसने किसी प्रकार की ईर्षा न कर, मार्ग में अपनी विद्या के द्वारा पति की रक्षा और सहायता की। इसके अनन्तर जब सब आकाशसंचारियों की थकाहट दूर हुई तो नरवाहनदत्त ने माता पिता मंत्री तथा भार्य्याओं के साथ बड़ेही धूम धाम से राजधानी के अन्दर पैर धरा। समग्र नगरनिवासियों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ने आकर राजकुमार की भेट दे देकर दर्शन किया और उनलोगों का भलीप्रकार सत्कार किया गया। प्राणधर और ससुरार के प्रतीहारी को इतना धन दिया गया कि वे परिपूरित हो गये। भोजन करने के उपरान्त प्राणधर ने सविनय निवेदन कया कि हे देव! चलती बेर महाराज कर्पूरक ने हमदोनों को आज्ञा दी थी कि राजकुमारी को पहुँचा कर अत्यन्त शीघ्र मेरे पास लौट आना जिसमें मुझे उसके कुशलपूर्वक पहुँचने का वृत्तान्त विदित होवे सो हमलोगों को अब अवश्यही जाना चाहिये। कृपाकर राजकुमारी के हाथ का लिखा हुआ एक पत्र उनके पिता के नाम दिला दीजिये, नहीं तों महाराज के हृदय में सन्तोष न होगा क्योंकि वे अपनी कन्या से अत्यन्तही अधिक स्नेह रखते हैं। और क्योंकि वे कभी आकाशसंचारी विमान पर चढ़े नहीं हैं इससे उन्हें शङ्का होती होगी कि कहीं हमलोग मार्ग में गिर न पड़े हों। कृपाकर एक पत्र शीघ्र दीजिये और प्रतीहारी को जाने की आज्ञा प्रदान कीजिये, देखिये वह विमान पर चढ़ने के लिये अत्यन्त उत्सुक हो रहे हैं। हे युवराज! मैं पुनः अपने कुटुम्ब को लेकर आपकी सेवा में आ जाउँगा क्योंकि मुझसे आपके अमृतमय ये चरणकमल नहीं छोड़े जाते। प्राणधर के ऐसे वचन सुन युवराज ने उसी क्षण राजकुमारी कर्पूरिका से कहा कि तुम पत्र लिख दो। उनने इस अभिप्राय का पत्र लिखा कि हे तात! मैं प्रेम-पूरित निजभर्ता के साथ यहां सकुशल पहुँच गई आप मेरे लिये कुछ भी चिन्ता न कीजियेगा, क्या विष्णुभगवान् के साथ आई हुई कमला के लिये कभी समुद्र को चिन्ता हुई थी? इस प्रकार राजकुमारी के हाथ का लिखा हुआ पत्र देकर युव-राज नरवाहनदत्त ने प्राणधर और प्रतीहारी को सादर विदा किया। जिस समय वे लोग विमान पर चढ़ कर आकाश से चले, सारी प्रजा उन्हें देख आश्चर्य्य में आ गई और ये लोग क्षण भर में समुद्र पार हो कर्पूरसम्भव नगर में जा पहुँचे। यहां कुशलपूर्वक पहुँच जाने का हाल सुना कर दोनों ने राजकुमारी का लिखा हुआ वह पत्र महाराज को अर्पण किया जिसका समाचार पढ़ वे निज भार्य्या सहित अत्यन्त प्रसन्न हुये और उनलोगों को बहुत कुछ पुरस्कार में दिया।

दूसरे दिन प्राणधर ने महाराज कर्पूरक से आज्ञा मांगी और सकुटुम्ब राज्यधर से मिलकर उसी विमान द्वारा उड़ता हुआ युवराज नरवाहनदत्त की सेवा में आन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पहुँचा । निज कार्य्य करके जो वह प्रतिज्ञानुसार शीघ्रही लौट आया, इससे प्रसन्न हो राजकुमार ने अपने भवन के समीपही उसे रहने के लिये स्थान देकर हरप्रकार का सुबीता उसके लिये कर दिया । फिर निज भार्य्यायों के साथ नित्यही आकाश-संचारी विमानों पर बैठ कर युवराज इधर उधर वायुसेवनार्थ जाते और आनन्द क्रीड़ा किया करते थे; भविष्य में जो विद्याधरचक्रवर्ती पद पाने पर आकाश संचार करना होगा उसका अभ्यास मानो अभी से करने लगे ।

दै अनन्द निज परिजनहिं सचिवन मोद अपार ।
तीनहुँ रानिन के सहित बिहरत वत्सकुमार ॥



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का हिन्दी अनुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

सूर्य्यप्रभ नाम आठवां लम्बक।

सवैया।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालविनैबल पाई ।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा वसुधा महँ छाई ॥
प्रेम-समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस-दुहाई ।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ो बिबुधाई ॥

प्रथम तरङ्ग।

भाल-सिँदूर उड़ाइ कै अम्बर कीन्हों लाल ।
सन्ध्याभ्रम प्रमथन-हृदय उपजायो बिनुकाल ॥
तातें सब नाचन लगे थेइ थेइ दै दै ताल ।
लखि कौतुक गणराज को मुदित कलानिधि-भाल ॥
सोइ गजानन शम्भुसुत सकलसुमङ्गल-मूल ।
नित नूतन उत्सव रचहिं होइ सदा अनुकूल ॥

इस प्रकार वत्सराज के पुत्र नरवाहनदत्त उन भार्य्याओं को पाकर आनन्द के साथ अपने पिता के घर में रहते थे। एक दिन जब वे अपने पिता के आस्थान में बैठे थे तो देखा कि एक दिव्य पुरुष, आकाश से उतर कर वहां खड़ा हो गया। उस व्यक्ति ने इनदोनों पिता पुत्र को सादर प्रणाम किया और इन्होंने भी आदर सहित उसे बैठने के लिये उचित आसन दिया। फिर पूछा कि आप कौन हैं और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किस अभिप्राय से आपका आना यहां हुआ है? उसने उत्तर दिया कि हिमवान पर्वत की पीठ पर बज्रकूट नामक एक नगर बसा हुआ है, उसका यह नाम गुण से भी यथार्थ है, क्योंकि वह पुर बज्रसार सेही निर्मित है, मैं उसी नगर का रहनेवाला समग्र विद्याधरों का राजा हूं, नाम मेरा बज्रप्रभ है। मेरा यह नाम भी सार्थक है क्योंकि मेरा सारा शरीर बज्र का बना हुआ है। मेरी तपस्या से संतुष्ट होकर शम्भु भगवान ने मुझे आज्ञा दी कि यदि तू मेरे निर्मित चक्रवर्ती का भक्त समय पर बना रहेगा तो मेरी कृपा से कोई भी शत्रु तुझे न जीत सकेगा। इसी कारण मैं इस समय अपने प्रभु के चरणों में प्रणाम करने को आया हूं।" मुझे अपनी विद्या के प्रभाव से विदित हुआ है कि शशिशेखरजी के निर्मित कामदेवावतार महाराज वत्सराज के पुत्र श्रीनरवाहनदत्तजी हो, यद्यपि मनुष्य हैं, तथापि हम सब विद्याधरों के ऊपर उभयवेदी अर्धचक्रवर्तियों में एकछत्र राज्य करेंगे। यद्यपि इनके पूर्व श्रीशङ्कर भगवान् के अनुग्रह से सूर्य्यप्रभ मनुष्य होकर भी देवताओं के एक कल्प तक हमलोगों के चक्रवर्ती राजा हो गये हैं, तथापि वे दक्षिण के अर्धभाग के स्वामी थे, उत्तर में उस समय श्रुतशर्म्मा नामक दूसरे चक्रवर्ती राजा थे। किन्तु श्रीमान् अति पुण्यवान् हैं क्योंकि आप दोनों ओर के आकाशसंचारी विद्याधरों के अधीश्वर होंगे और अपका राज्य देवताओं के एक कल्पवर्षतक रहेगा। विद्याधर की यह बात सुन नरवाहनदत्त ने वत्सराज के समक्षही कुतूहलपूर्वक यों कहा कि प्राचीन समय में सूर्य्यप्रभ ने मनुष्य होकर क्योंकर विद्याधर का पद पाया था सो हमें सुनाओ। तब एकान्त में किन्तु रानी और मंत्रियों के समक्षही बज्रप्रभ ने यह कथा आरम्भ की कि।—

पूर्व समय की बात है कि मद्र में शाकल नाम कोई नगर था जहां अङ्गारप्रभव के पुत्र राजा चन्द्रप्रभ हो गये हैं। वे अपने नाम के अर्थ के अनुसारही सारे विश्व को आनन्द देनेवाले तथाच निज शत्रुओं को अग्नि की नाई सन्ताप देने वाले थे। उनको निज रानी कीर्तिमती से एक ऐसा पुत्र उत्पन्न हुआ कि जिसके शुभ उदय के लक्षण जन्म लेने पर, महाराज चन्द्रप्रभ के कानों में सुधा की बर्षा समान सुख देनेवाली यह आकाशवाणी हुई कि यह जो सूर्य्यप्रभ नाम राजा उत्पन्न हुआ है इसे श्रीशङ्कर भगवान् ने भविष्य के लिये समस्त विद्याधराधीशों का चक्र-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वर्ती राजा नियत किया है।" पिता ने ऐसे पुत्र के जन्म पर बड़ा भारी उत्सव मनाया और वह कुमार क्रमश: सयाना होने लगा। वह ऐसा सुमति था कि बालकपनही में उसने सब विद्या और क्रमश: सारी कलाओं को गुरुजी से सीख लिया। सोलह वर्ष की अवस्था प्राप्त करने पर सारी प्रजा का मन अपने गुणों से मोह लिया अतएव पिता चन्द्रप्रभ ने उसे युवराज के पद पर अभिसिंचित किया, फिर अपने अनेक मंत्रियों को जिनका नाम भास, प्रभास, सिद्धार्थ, और प्रहस्त इत्यादि था राजकुमार के मंत्रीपद पर नियत किया। अपने उन मंत्रियों के साथ राजकुमार यौवराज्य पद के कार्य्य को भली प्रकार करते थे कि एक दिन मय नामक असुर का वहां आना हुआ। महाराज चन्द्रप्रभ और युवराज सूर्य्यप्रभ ने यथोचित रीतिसे उनका आतिथ्यसत्कार किया जिसके उपरान्त मयासुर ने महाराज से यों कहना आरम्भ किया कि हे राजन् श्रीशम्भु भगवान् ने आपके पुत्र युवराज सूर्य्यप्रभ को विद्याधरेन्द्रों का भविष्य चक्रवर्ती राजा नियत किया है, सो अब इनको उन विद्याओं को प्राप्ति का साधन क्यों नहीं कराया जाता, जिनके सीख जाने पर इन्हें उस पद की प्राप्ति होगी। मुझे श्रीमहादेवजी ने इसी निमित्त आपके पास भेजा है, यदि आप अनुमति दीजिये तो मैं इन्हें अपने यहां ले जाकर पूर्ण रीति से शिक्षा दूं जिसकी समाप्ति होने पर इन्हें विद्याधरेन्द्र चन्द्रवती की पदवी प्राप्त होगी। अभी इनका एक विरोधी भी है जो आकाशचारियों का स्वामी है, नाम उसका श्रुतशर्म्मा है उसे शम्भुभगवान् ने नियत किया है। किन्तु आपके राजकुमार सिद्धविद्याओं के प्रभाव से हमारी सहायता पा कर उसे जीत लेंगे और तब विद्याधराधीशों के चक्रवर्तीपद को पावेंगे। मयासुर का ऐसा भाषण सुन महाराज चन्द्रप्रभ ने कहा कि "हमलोग धन्य हैं और यह भी बड़ा पुण्यमान् है; आप जहां चाहिये तहां इसे ले जाइये।" यों अनुमति पाने के उपरान्त, मयासुर महाराज चन्द्रप्रभ से विदा हो युवराज सूर्य्यप्रभ को उनके मंत्रियों सहित पाताललोक में ले गया, जहां उसने इस प्रकार की तपस्या का उपदेश दिया कि जिसके प्रभाव से राजकुमार ने अपने अमात्यों के सहित झट सब विद्याओं को सीख लिया इसके उपरान्त मयासुर ने विमान का बनाना भी उन्हें बतला दिया जिससे भूतासन नामक विमान उन्हें प्राप्त हुआ। इस प्रकार मंत्री सहित सब विद्याओं के सीख जाने के उपरान्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसी विमान पर बैठा कर मयासुर ने पाताल से लाकर युवराज सूर्य्यप्रभ को उनकी राजधानी में पहुँचा दिया और उनके माता पिता से कहा कि अब हम जाते हैं ये सिद्धिभोगों का भोग करेंगे, हम पुन: आकर मिलेंगे। महाराज ने मयासुर का भलीप्रकार पूजन किया जिसके अनन्तर वे पुन: अवसर पर पाताललोक को चले गये और महाराज चन्द्रप्रभ निज पुत्र की ऐसी विद्यासिद्धि पर बहुतही प्रसन्न हुये।

इधर युवराज सूर्य्यप्रभ निज विद्याप्रभाव से मंत्रियों के साथ नित्य विमान पर आरूढ़ हो नाना देश देशान्तरों में घूमते फिरते जी बहलाते थे। जहां जहां जो जो राजकन्या इन्हें देखती वहीं वे सब काममोहित हो इन्हें बर लेती थीं। पहिली तो ताम्रलिप्ति के महाराज वीरभट की कन्या मदनसेना थी जिसके समान त्रिलोक में दूसरी सुन्दरी न थी; दूसरी पश्चिमोय प्रान्त के महाराज सुभट की कन्या चन्द्रावती थी जिसे सिद्ध लोग उठा कर कहीं दूसरे स्थान पर ले गये थे। तीसरी काञ्चीनगरी के राजा कुम्भीर की पुत्री वरुणसेना नाम्नी थी जो अपने रूप में अद्वितीया गिनी जाती थी। चौथी लावानक के स्वामी पौरव नामक महाराज की कन्या सुलोचना थी जिसके परम रमणीय नेत्र कमलपत्रों की शोभा को दबा देते थे। पांचवीं, चीन देश के स्वामी महाराज सुरोह की कन्या विद्युन्माला थी जो अपने अङ्गों की प्रभा से सुवर्ण की आभा को नीचा दिखाती थी। छठवीं, श्रीकण्ठदेश के आधीश्वर राजा कान्तिसेन की सुता कान्तिमती नाम्नी थी जो निज कान्ति से अप्सराओं को भी जीत लेती थी। सातवीं, कौशाम्बी नगरी के पति राजा जनमेजय की तनया परपुष्टा नाम्नी थी जो परपुष्टा (कोकिल) की नाईं मधुरभाषिणी थी। यद्यपि इन कुमारियों के बान्धवों को पीछे से सब वृत्तान्त विदित हुआ कि उनकी राजपुत्रियां हर ली गई हैं तथापि युवराज के विद्याबल से भयभीत होकर ये लोग बेंत की नाईं काँपते थे। इन भार्य्याओं ने भी विद्या की प्राप्ति की और युवराज सूर्य्यप्रभ अपने विद्याबल से अनेक शरीर धारण कर एक समय मेंही सबों के साथ मिलकर आनन्द क्रीड़ा किया करते थे। नभोविहार करना, संगीत का आनन्द लेना और मंत्रियों के साथ वायुसेवन तथा अनेक प्रकार की क्रीड़ा करना नित्य का काम था। वे दिव्य चित्रों के लिखने में अत्यन्तही प्रवीण थे सो विद्याधराङ्गनाओं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के चित्र लिखकर प्राय: उनसे ठट्ठा किया करते थे जिससे उनको वे प्यारियां प्रणय कोप किया करती थीं और भ्रूभङ्ग के सहित टेढ़े कटाक्षों तथा मान के बचनों से उनका हृदयरञ्जन किया करती थीं। मदनसेना को साथ लेकर युवराज बिमान पर विराज प्राय: ताम्रलिप्ती पुरी को जाते और वहां के उद्यानों में आनन्द विहार किया करते थे। अपनी भार्य्याओं को वहां छोड़ वे एक समय उसी भूतासन बिमान पर प्रहस्त के साथ बज्रसार नामक नगर को चले गये। वह रम्भ नामक राजाकी पुत्री तारावली उन्हें देखकर मोहित होगई और कामाग्नि से जलने लगी सो उसका हृदय शीतल करने के लिये वे राजा के समक्षही उसे हर ले गये। उसे साथ लिये हुये वे ताम्रलिप्ती को आये जहां से पुन: उन्होंने दूसरी राजकन्या को जिसका नाम बिलासिनी था हर लिया। यह देख उसका भाई सहस्रायुद्ध क्रुद्ध हो शस्त्र सँभाल उनसे युद्ध करने को उद्यत हुआ किन्तु उन्होंने अपनी विद्या-बल से उसे जड़वत् बना दिया। तारावली का मामा अपने भाई और सेना के साथ इस अभिप्राय से आया कि मैं जाकर सूर्य्यप्रभ की सब भा॰ाओं को हर लाता हूं, सो युवराज ने सभों को सारी सेना सहित स्तम्भित कर तारावली के दोनो मामाओं का सिर मुड़वा दिया। यद्यपि युवराज को क्रोध तो बहुत आया किन्तु निज भार्य्या के बन्धु जान और अहङ्कारचूर्ण होने से उन्हें नम्र देख उन्होंने दोनों को जान छोड़ चुपचाप चले जाने की आज्ञा दी। तदनन्तर पिता से बुलाये जाकर राजकुमार सूर्य्यप्रभ अपनी नवी भार्य्यायों के साथ उसी विमान पर लौट-कर शाकलपुरी में आगये।

इसके अनन्तर राजा वीरभट ने ताम्रलिप्ती से अपना एक दूत महाराज चन्द्र-प्रभ के पास यह सन्देश लेकर भेजा कि आपके पुत्र मेरी दो कन्याओं को हर ले गये हैं, अस्तु इसको कुछ चिन्ता नही क्योंकि वे उन दोनों के पति होने के योग्यही हैं, कहना इतनाही है कि कि यदि आप हमलोगों से स्नेह रखते हैं तो कृपाकर यहां पधारिये जिसमें हमलोग रीतिपूर्वक बिवाहबन्धन को स्थिर कर परस्पर मैत्री बढ़ावें और हमे भी आपके सत्कार करने का अवसर प्राप्त हो। यह सुन महाराज चन्द्रप्रभ ने उस दूत का भली प्रकार सत्कार किया और दूसरेही दिन यात्रा करना निश्चित होगया। तथापि राजा बीरभट की सत्यता का निश्चय करने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के लिये उन्होंने प्रहस्त को दूत बना पहिलेही भेज दिया और उसे यात्रा के निमित्त भूतासन विमान दिया गया। प्रहस्त ने झट पहुंच कर राजा वीरभट से भेंट की और पूछा कि आपकी क्या इच्छा है। जब राजा वीरभट ने सब यथार्थ बात कह दी तो उसने कहा कि हमारे प्रभु कल सवेरेही यहां आ जावेंगे, इतना कह वह आकाश मार्ग से उड़ता हुआ झट महाराज चन्द्रप्रभ के पास लौट आया और कहने लगा कि राजा वीरभट आपका मार्ग जोह रहे हैं, आप निश्चिन्त हो चलिये। महाराज चन्द्रप्रभ ने सन्तुष्ट होकर उस मंत्रीपुत्र का भली प्रकार पूजन किया तदुपरान्त निज महारानी कीर्तिमती, पुत्र सूर्य्यप्रभ तथा वधू विलासिनी और मदनसेना के सङ्ग अपने मंत्री तथा साथियों को ले, वे भूतासन विमान पर जा बिराजे और दूसरेही दिन एक पहर दिन चढ़ने के पूर्वही ताम्रलिप्ती में जा पहुंचे। नगर की समस्त प्रजा आश्चर्य्य के साथ आकाश की ओर देख रही थी ज्योंही ये लोग पहुंचे सबों ने जय जयकार शब्द किया। राजा वीरभट ने आगे बढ़ सबको सादर ग्रहण कर बड़े उत्साहपूर्वक बाजे गाजे के सङ्ग नगर में प्रवेश किया। मार्ग मे पद पद पर चन्दनादिक सुगन्धि द्रव्य से मिला हुआ जल छिड़का गया था। प्रत्येक घर की खिड़कियों में सुन्दरी नारियां खड़ी हो कर महाराज तथा युवराज के दर्शनों से प्रसन्न होतीं और उनपर पुष्पवृष्टि करती थीं। राजा वीरभट ने दोनों कन्याओं का विवाह युवराज से बिधिवत् कर दिया। वेदीपर उक्त राजा ने दोनों कन्याओं को इतना कुछ दिया कि जिसकी गिनती कठिन है। एक सहस्र भार सुवर्ण, एक सौ ऊंट रत्न और आभूषणों से लदे हुये, पांच सौ ऊंट नाना प्रकार के वस्त्रों से लदे, पचास सहस्र घोड़े, पांच सहस्र हाथी, और एक सहस्र सुंदरी दासियां जो वस्त्राभूषण से सुशोभित थीं, वे सब दहेज में दी गयीं। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने समधी महाराज चन्द्रप्रभ और अपने जामाता सूर्य्यप्रभ को भी बहुत रत्न और अनेक ग्राम देकर सन्तुष्ट किया। प्रहस्त इत्यादि मंत्रीपुत्रों का सत्कार करने के उपरान्त राजा वीरभट ने बड़ा भारी उत्सव मनाया जिसमें नगर की सारी प्रजा ने बड़े हर्ष के साथ योग दिया। युवराज सूर्य्यप्रभ अपने माता पिता, तथा दोनो भार्य्याओं के साथ अनेक प्रकार के सुखों का उपभोग करते हुये वहां रहने लगे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतने में वज्ररात्र से राजा रम्भ का भेजा हुआ दूत आया और अपने प्रभु का सन्देश यों कहने लगा कि "विद्याबल से विश्वस्त हो युवराज नरवाहनदत्त ने हमारी कन्या को हरके हमारा अपमान किया है, आज हमें राजा बीरभट से जिनकी दशा हमारीहीजैसी थी यह विदित हुआ है आपका मेल उनसे होगया है। यदि किसी प्रकार आप हम पर भी कृपा करें तो अनुग्रह कर शीघ्रही यहां पधारिये नहीं तो हमसबों को मरा समझिये"। यह सुन महाराज चन्द्रप्रभ ने उस दूत का भली प्रकार सत्कार किया और उसी क्षण प्रहस्त को आज्ञा दी कि तुम जाकर हमारी ओर से राजा रम्भ से यों कहो कि "आप वृथा खेद क्यों करते हैं, श्रीशंभु भगवान् के द्वारा, यह सू प्रभ, समस्त विद्याधरेन्द्रों का भावी चक्रवर्ती नियत किया गया है और सिद्ध लोगों ने यह कह दिया है कि आपकी कन्या तथा च कुछ और राजपुत्रियां उसकी भार्य्या होंगी; सो आपकी कन्या ने यथोचित पद प्राप्त करलिया है आप से उसने इस कारण नहीं पूछा कि आप इस बात को न स्वीकार करेंगे। आप निश्चिन्त रहिये, आप हमारे सखा हैं हमलोग आपके स्थान पर अवश्य आवेंगे"। महाराज का ऐसा सन्देश लेकर प्रहस्त बिमान पर चढ़ कर चेला और एकही पहर मे वज्ररात्र प्रदेश में जा पहुंचा। राजा रम्भ को सारा सन्देश सुनाकर उसने उन्हे परम सन्तुष्ट किया और फिर लौट के महाराज चन्द्रप्रभ को वहां का समग्र वृत्तान्त सुना गया। उसी क्षण महाराज चन्द्रप्रभ ने निज राजधानी शाकलपुरी को अपने मंत्री प्रभास को भेज राजा रम्भ की पुत्री तारावली को बुलवा भेजा और सूर्य्यप्रभ के साथ बिमान पर चढ़ राजा बीरभट से सादर विदा हो वे बज्ररात्र मे जा पहुंचे जहां की सारी प्रजा बड़ी उत्सुकता के साथ इनका मार्ग देख रही थी। राजा रम्भ ने आगे बढ़कर सादर अगवानी की और बड़े समारोह से निज राजधानी में लिवा ले गये। राजा रम्भ ने बड़े उत्साह से विवाह का सारा सामान रचवाया और असंख्य हाथी घोड़े वस्त्र और रत्न अपनी पुत्री को वेदी पर दिये। जामाता सूर्य्यप्रभ को भी उन्होंने इतना दिया कि वे उसके आगे अपना बिभव भूल गये। अभी वहां पर ये सब उत्सव होही रहे थे कि काञ्ची नगरी से एक दूत राजा रम्भ का भेजा हुआ आया। उसका संदेश सुनकर उन्होंने महाराज चन्द्रप्रभ से कहा कि काञ्चीपुरी के स्वामी राजा कुम्भीरक मेरे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बड़े भाई हैं। उनके दूत ने आज आकर यों निवेदन किया है कि "युवराज सूर्य्य-प्रभ ने पहिले हमारी कन्या हरी थी पीछे आपकी, हमने सुना है कि उनका आपका मेल होगया है तो फिर हमारा मेल भी उनसे करवा दो। हमारी इच्छा है कि महाराज चन्द्रप्रभ हमारे यहां पधारें और हम अपनी कन्या वरुणसेना को अपने हाथों से सूर्य्यप्रभ को अर्पण करें। सो आप कृपाकर उनकी इतनी प्रार्थना स्वीकार करें। इतना सुन महाराज चन्द्रप्रभ ने कहा कि बहुत अच्छा हमें उनका कहना स्वीकार है। तदनन्तर उन्होंने प्रहस्त को भेजकर वरुणसेना को शाकल-पुर से बुलवा भेजा और उसके पिता कुम्भीरक के पास, वीरभट और रम्भ तथा अपने दलबल सहित जा पहुंचे। राजा कुम्भीरक ने पुरी के बाहर आकर अपनी सेना और मंत्रीयों सहित सबकी अगवानी बड़े आदर से की और सबको नगर में लिवा ले गये और यथोचित स्थान टिकने को दिये। इसके अनन्तर राजा कुम्भीरक ने निज सुता को सूर्य्यप्रभ के हाथ में विधिपूर्वक अर्पण किया, और बहुत अधिक धन बधू तथा वर दोनों को दिया। इस कार्य्य से निवृत्त होने के उपरान्त हाथ जोड़ प्रहस्त ने निवेदन किया कि हे देव! एक दिन घूमता फि-रता मैं श्रीकण्ठप्रदेश को चला गया था, वहां राजा कान्तिसेन से जो भेंट हुई तो उन्होंने आपकी सेवा में यों प्रार्थना करने के लिये मुझसे कहा कि "यदि श्रीमान् उनकी सुता कान्तिमती को जिन्हें युवराज हर लाये हैं लेकर उन्हें दर्शन दें तो वे इस बात की प्रतिष्ठा प्राप्त किया चाहते हैं कि उन्होंने निज हाथ से कन्यादान किया, और वे विधिपूर्वक आपका सत्कार करने के लिये उद्यत हैं। उन्होंने मुझसे यह भी कहा है कि यदि श्रीमान् उनकी यह प्रार्थना स्वीकार न करेंगे तो सुता के स्नेह से विमोहित हो वह शरीर परित्याग कर देंगे। मैं उनसे यह बचन दे आया हूं कि मैं महाराज से निवेदन कर दूंगा सो श्रीमान् को उनकी प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिये। प्रहस्त का ऐसा भाषण सुन, महाराज चन्द्रप्रभ ने आज्ञा दी कि "बहुत अच्छा हम चलेंगे, तुम जाकर शाकलपुरी से कान्तिमती को ले आओ और उसके पिता के समीप पहुँचा दो, इधर से हम लोग भी पहुँचते हैं।" महाराज की आज्ञा पाकर उसी क्षण प्रहस्त आकाशमार्ग से चल पड़ा और जैसा उसे समझा दिया गया था उसने पूरा कर दिया। दूसरे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिन आकाशसञ्चारी विमान पर बैठ महाराज चन्द्रप्रभ और सब कोई, कुम्भीर राजा को साथ लेकर श्रीकण्ठप्रदेश में जा पहुँचे । राजा कान्तिसेन ने सबकी अगवानी सादर की और अपने राजभवन में ले जाकर विधिपूर्वक कन्या का विवाह किया और पुत्री तथा जामाता को इतना धन दिया कि दूसरे राजाओं को यह देखकर आश्चर्य्य हो उठा।

अभी वे लोग वहीं आनन्दोत्सव करही रहे थे कि कौशाम्बी से एक दूत आकर यों निवेदन करने लगा कि "हे देव! हमारे प्रभु राजा जनमेजय ने आप से यों कहला भेजा है कि अभी हालही में न जाने किसने मेरी कन्या परपुष्टा को हर लिया था, अब मुझे विदित हुआ है कि वह सूर्य्यप्रभ के हाथ में है, आप उसे साथ लेकर बिना किसी प्रकार की शङ्का के मेरे स्थान पर चले आइये, मैं विधिपूर्वक विवाह कर सत्कार के सहित आपको बहू और पुत्र के साथ विदा कर दूँगा, नहीं तो मैं आपको अपना शत्रु जानूंगा और आप मुझे अपना वैरी समझियेगा।" अपने स्वामी का यह सन्देश सुनाय दूत चुप हो रहा । महाराज चन्द्रप्रभ ने अपने सब लोगों को एकान्त में एकत्र करके कहा कि जब उसने इस प्रकार अहङ्कारपूर्वक कहला भेजा है तो उसके घर पर जाना कैसे उचित होगा। यह सुन सिद्धार्थ नामक मन्त्री ने नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि हे देव! आप किसी दूसरे प्रकार का ध्यान चित्त में न लावें, उनका इस प्रकार कहना उचितही है क्योंकि वे महादाता, पण्डित और सत्कुलोत्पन्न हैं । वे अश्वमेधयज्ञ के करने वाले परम शूर योद्धा हैं जिन्होंने आज पर्य्यन्त कभी भी किसी को रण में पीठ नहीं दिखलाई, यथार्थभाषी वह मानी राजा क्योंकर दूसरी बात कह सकते हैं? शत्रुता की धमकी जो उनने दी है वह इन्द्र की मैत्री के कारण है, अतएव ऐसे राजा के स्थान पर आपको चलना अवश्य उचित है क्योंकि वह सत्यवादी और सत्यसन्ध राजा हैं । तथापि यथार्थ तत्व जानने के लिये आप पहिले वहां किसी को भेज दीजिये। सिद्धार्थ के इस भाषण का अनुमोदन सब लोगों ने किया। यह सुन महाराज चन्द्रप्रभ ने उस दूत का सत्कार किया और राजा जनमेजय के चित्त का यथार्थ हाल जानने के लिये प्रहस्त को दूत बनाकर भेजा। प्रहस्त ने जाकर कौशाम्बी के राजा से भेंट की और सब बातें ठीक ठीक कर उनका पत्र लाकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महाराज चन्द्रप्रभ को दे इन्हें प्रसन्न किया। उसी क्षण महाराज ने प्रहस्त को भेज शाकलपुरी से परपुष्टा को बुलवा राजा जनमेजय के पास भेजवा दिया, तदनन्तर कान्तिसेना और सूर्य्यप्रभ को आगे भेज महाराज चन्द्रप्रभ भी दूसरे राजाओं के साथ विमान पर बैठ कौशाम्बी में पहुँचे जहां राजा जनमेजय ने सादर सबकी अगवानी कर निज कन्या परपुष्टा को विधिपूर्वक युवराज सूर्य्यप्रभ के हाथ में अर्पण किया। विवाह के उपरान्त उन्होंने पांच सहस्र हाथी, एक लाख उत्तम घोड़े और पांच सहस्र ऊँट को, रत्न, सोना, वस्त्र, कपूर और चन्दन से लाद कर युवराज की भेंट की। फिर एक वहुत बड़ा उत्सव मनाया गया, जिसमें गाना बजाना नाच इत्यादि बहुतही अच्छा हुआ और ब्राह्मणों को इतना दान दिया गया कि वे अयाचक हो गये। महाराज जनमेजय ने सारी प्रजा को इस उत्सव में सन्तुष्ट कर दिया।

इतनेही में आकाश चारो ओर से लाल हो गया, मानो इस बात को पहिलेही से सूचना देने लगा कि वह भविष्य युद्ध में रुधिर से लालोलाल हो जायगा। सब दिशाओं में घोर भयानक शब्द होने लगा जिससे विदित हुआ कि किसी भारी शत्रु की सेना गरजती हुई वायुमण्डल में चली आती है। पवन वेग से बहने लगा, मानो कोई भारी आंधी आती हो। थोड़ीही देर में दीख पड़ा कि आकाश में विद्याधरों की सेना चारो ओर छा गई, उनके बीच में एक अति सुन्दर विद्याधर-कुमार भी था जिसे देख सूर्य्यप्रभ इत्यादि सभी आश्चर्य्य और कौतुक से एक दूसरे का मुंह निहारने लगे। उसी क्षण विद्याधरों के बन्दीजन ने आकाश में खड़े होकर दामोदर नामक उस विद्याधरकुमार के प्रति सङ्केत करके यों कहा कि—

जयति जयति अषाढ़सुत दामोदर युवराज।
रे रे सूर्य्यप्रभ सकल नमहु धरणिचर आज॥
रे रे जनमेजय तुहूं पद पै नावै सीस।
क्यों कन्या दीन्ही कुथल अरे मूढ़ अवनीस॥
तुम दोउ युवराज कहँ आराधहु शत बार।
न त क्रोधानल में अबहिँ जरि बरि ह्वै हौ छार॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

युवराज सूर्य्यप्रभ ने बन्दीजन का ऐसा कहना सुन अपना खड्ग लिया और अपनी ढाल सम्हाली और उसकी सेना को देख क्रोध में आ निज विद्या के बल से आकाश में उड़ गये। उनके सब मन्त्री लोग भी शस्त्र ले लेकर उनके पीछे आकाश में उड़कर जा जमे, उनके नाम ये हैं, प्रहस्त, प्रभास, भास, सिद्धार्थ, प्रज्ञाढ्य, सर्वदमन, वीतभीति और शुभङ्कर। विद्याधरों से और उनसे वहीं आकाश में घोर युद्ध होने लगा। एक ओर से सूर्य्यप्रभ और दूसरी ओर से कुमार दामोदर का आना हुआ, एक दूसरे को शस्त्र से मारते न थे किन्तु परस्पर की वार ढाल पर रोकी जाती थी। यद्यपि युवराज के लोग बहुत थोड़े थे और आकाशचारी विद्याधरों की संख्या लाखों की थी तथापि युद्ध में लड़ते हुये उनमें समानता प्रतीत होती थी। रुधिर स भरे हुये खड्गों की चमक ऐसी जान पड़ती थी मानो यमराज की दृष्टि शत्रुओं पर पड़ती हो। विद्याधरों के मस्तक और शरीर छिन्न भिन्न होकर जो आकाश से गिरकर भूमि पर आ पड़ते थे तो यही जान पड़ता था कि मानो वे लोग भयभीत होकर महाराज चन्द्रप्रभ के समीप शरणार्थी हो चले आते हैं। चारो ओर आकाश रुधिर से लालहीलाल हो गया मानो किसी ने सिन्दूर बिछा दिया हो। अन्त में सूर्य्यप्रभ और दामोदर का परस्पर घोर द्वन्द्वयुद्ध होने लगा। युवराज सूर्य्यप्रभ ने निज विद्यावल से ऐसा हाथ खड्ग का मारा कि दामोदर की ढाल बीच से दो टूक हो गई और वह भूमि पर गिर पड़ा। त्योंही युवराज ने उसका सिर काटने की इच्छा से खड्ग उठाया त्योंही श्रीविष्णुभगवान् ने आकर आकाश में खड़े हो हुङ्कार किया, जिसे सुन, हरि को पहिचान, उनके गौरव से नम्र हो सूर्य्यप्रभ ने दामोदर को मारने से अपना हाथ खींच लिया। इस प्रकार वध से बचे हुये अपने उस भक्त को लेकर श्रीविष्णु भगवान् कहीं चले गये क्योंकि "सांचे हरिजन को सदा प्रभुहि एक रखवार। सङ्कट घोर समुद्र तें लावत बेड़ा पार॥" दामोदर की सेना के योद्धा सब इधर उधर खसक गये और युवराज सूर्य्यप्रभ भी गगनमण्डल से उतर अपने पिता के पास आ पहुँचे। मन्त्रियों के सहित आये और बिना किसी प्रकार की चोट खाये सूर्य्यप्रभ को देख महाराज चन्द्रप्रभ तथा च दूसरे राजा लोग सभी हृदय में अत्यन्त प्रसन्न हुगे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अभी वे लोग बैठे हुये आनन्द से बातचीत करही रहे थे कि इतने में एक दूत राजा सुभट का भेजा हुआ आया और एक पत्र महाराज चन्द्रप्रभ के आगे रख हाथ जोड़ दूर जा खड़ा हुआ—महाराज की आज्ञा से सिद्धार्थ मन्त्री ने उस पत्र को खोला और यों बांच कर सभा में सबको सुनाया।

कवित्त।

उन्नत-सुवंस अवतंस महाराजवर चन्द्रप्रभ भूपति कौं विनती सुनाय कै।
एतो या सँदेस भेज्यो सुभटनरेश मेरी तनया वीरेश काहु हरी इत आय कै॥
अब हम जानी करनी कुमार रावरे की याते कछु सोच नाहि हिय हरषाय कै।
आइ कै हमारे गेह आदर सुदीजै अरु लीजै अपनाइ सुता सुत सौं विबाह कै॥

जब मन्त्री सिद्धार्थ ने पत्र बांचकर सुनाय दिया तो महाराज चन्द्रप्रभ अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने उस दूत के सत्कार करने की आज्ञा दी। फिर उन्होंने प्रहस्त को शाकलपुरी में भेज राजा सुभट की कुमारी चन्द्रिकावती को उसके पिता के पास भिजवा दिया। दूसरे दिन प्रातःकाल वे सब लोग सूर्य्यप्रभ को आगे कर जनमेजय को भी साथ ले विमान द्वारा कोङ्कण प्रदेश को चले। राजा सुभट ने (जो अपनी कन्या को पा जाने से प्रसन्नचित्त हो रहे थे) सब लोगों का बहुतही अच्छा और यथोचित सत्कार किया और बड़े धूमधाम से विवाह का सामान रचवाया। पाणिग्रहण हो जाने के उपरान्त उन्होंने चन्द्रावती को इतना धन रत्नादि दिया कि वीरभट इत्यादि अपने दिये हुये दायज को स्मरण कर लज्जित हो गये। अभी युवराज सूर्यप्रभ ससुरालही में थे कि लावानक से भेजा हुआ राजा पौरव का दूत आ पहुँचा और हाथ जोड़ महाराज चन्द्रप्रभ से निज स्वामी का सन्देश यों कहने लगा कि "मेरी सुता सुलोचना को जो आपके राजकुमार हर ले गये हैं उसके लिये मुझे कुछ भी सन्ताप नहीं है क्योंकि वे मेरी कन्या के योग्य पति हैं, अब इतनाही कहना है कि आप कृपाकर मेरे स्थान पर पधारिये जिसमें मैं विधिपूर्वक कन्या आपके पुत्र को अर्पण कर सकूं। यह सुन प्रसन्न हो महाराज चन्द्रप्रभ ने दूत का सत्कार किया और प्रहस्त के द्वारा सुलोचना को उसके पिता के घर पहुँचवा दिया। तदनन्तर सुभट इत्यादि राजाओं के साथ वे सूर्यप्रभ को लेकर विमान पर बैठ लावानक में जा पहुँचे। राजा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पौरव ने विधिवत् सबका सत्कार किया और अपनी कन्या सुलोचना का विवाह बिधानपूर्वक करके अत्यन्त प्रसन्न हुये और कन्या तथा जामाता को रत्नों से पूरित कर दिया। अभी वहां का उत्सव पूरा भी होने न पाया था कि चीन देश के राजा सुरोह का दूत आन उपस्थित हुआ, उसने भी अन्य लोगों की नाईं निवेदन किया और महाराज चन्द्रप्रभ ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर वहां चलने पर अपनी सम्मति प्रकाश की।

तदुपरान्त महाराज चन्द्रप्रभ ने उनकी पुत्री विद्युन्माला को प्रहस्त के हाथ उनके घर पहुँचवा दिया और दूसरे दिन सूर्यप्रभ तथा पौरव इत्यादि राजाओं के सहित चीनदेश में विमान द्वारा जा पहुँचे। राजा सुरोह ने सबकी अगवानी कर सत्कारपूर्वक सब लोगों को अपने कोट में टिकने का स्थान दिया, और असंख्य हाथी घोड़े ऊँट सुवर्ण रत्न और चीनवस्त्र अपनी सुता के विवाह में प्रदान किया। सब लोगों को अनेक दिनों तक उन्होंने अपने यहां टिका रक्खा और यथोचित् सत्कार से सबका आदर करते रहे।

इस प्रकार युवराज सूर्य्यप्रभ अपने बान्धवों के सहित भिन्न भिन्न ससुराल में रहकर निज भार्य्याओं के साथ आनन्दविलास करते थे। एक दिन उन्होंने सिद्धार्थ इत्यादि मन्त्रियों को अपने पास बुलाकर कुछ सलाह की, और क्रमशः वीरभट आदि राजाओं को अनेक उत्तम घोड़ों के साथ निज निज देश को विदा किया, फिर सुरोह महीपति से आज्ञा ले उनकी सुता विद्युन्माला के साथ अपने माता पिता और अनुचरों के सहित वे भूतासन विमान पर बैठ आकाशमार्ग से अपनी राजधानी शाकलपुरी के लिये चल पड़े।

निज नरपति आगम निरखि पुर मैं छयो उछाह।
कहूँ नृत्य संगीत कहुँ मङ्गलमय सब राह ॥
घर घर बजत बधावनो घर घर मङ्गल-दीप।
घर घर सबद सुहावनो आये भवन महीप ॥
बन्दीजन लहि दान बहु विरदनि कहत पुकारि।
देत असीस उठाइ कर भूसुर-भीर अपार ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सवैया ।

औरी हुतीं जे पिता-घर में निज नारि तिन्हें बुलवाय मँगायौ ।
आनि ठयो तिनके सँग में वर वैभवपुञ्ज पिता पठवायौ ॥
मेरु से ढेर लगे जे सुवर्ण के रत्न सुवस्त्र को पुञ्ज उठायौ ।
चक्कत ह्वै परजा सिगरी यह कौतुक देख महा मुद पायौ ॥

दोहा ।

यों सुख सों रहिवे लगे विहित सुमंगल साज ।
पत्नीसहित विनोदयुत सूर्य्यप्रभ युवराज ॥
पुनि आवन हित जो कह्यो मायासुर गुणधाम ।
ताकी बाट निहारतै बीतत आठौ याम ॥



दूसरा तरङ्ग ।

एक समय की बात है कि महाराज चन्द्रप्रभ अपने सभामण्डप में बैठे हुए थे, सूर्यप्रभ भी अपने मन्त्रिवर्ग के साथ वहीं विराजमान थे, कचहरी लगी हुई थी; सिद्धार्थ कथा कह रहा था कि कथाप्रसङ्ग से मय दानव की बात छिड़ गई, इतने में सभा के बीच की पृथ्वी अकस्मात् फट गयी। पहिले तो उस छेद से बड़े जोर शोर से सुगन्धित हवा उठी उसके पीछे मयासुर निकला जिस प्रकार रात्रि में काला पहाड़, जिसके ऊँचे काले शिर के ऊपर बाल ऐसे चमकते थे जैसे पहाड़ के शृङ्ग पर ओषधियां, उसका लाल कपड़ा कैसा मालूम होता था जैसे पहाड़ पर इंगुर का झरना बह रहा हो। राजा चन्द्रप्रभ से उचित सत्कार पाय, रत्नसिंहासन पर बैठकर वह दानवेन्द्र कहने लगा —"आप लोग पृथ्वी के ये सब भोग भोग चुके हैं अब अवसर है कि दूसरे लोकों के भोग भी भोगें, सो अब उनका उद्योग कीजिये। दूतों को भेजकर अपने अधीनस्थ राजाओं को तथा सम्बन्धियों और बन्धुबान्धवों को बुला भेजिये, तब हमलोग चलके विद्याधरों के राजा सुमेरु से मिलें और श्रुतशर्म्मा से युद्ध कर उन्हें जीतकर विद्याधर की राजलक्ष्मी को प्राप्त करें। सुमेरु तो हमलोगों को बन्धु मान कर सहाय करने पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उतारूही हैं क्योंकि उन्हें तो भगवान् शूलपाणि की आज्ञा पहिलेही हो चुकी है कि तुम सूर्यप्रभ से अपनी कन्या व्याह दो और सब तरह से उसकी रक्षा करो।" मयासुर के ऐसा कहने पर राजा चन्द्रप्रभ ने अपने आकाशचारी प्रहस्तादि दूतों को राजाओं के पास भेज दिया और मय की सम्मति से सूर्य्यप्रभ ने अपनी उन भार्य्याओं तथा मन्त्रियों पर मन्त्रविद्या का प्रयोग कर दिया जिन पर कि मन्त्र-प्रयोग अबलों नहीं हुआ था।

इस प्रकार सब लोग बैठे थे कि इतने में अपनी प्रभा से दिशाओं को प्रकाशित करते हुये भगवान् नारदमुनि आकाश से उतरे। राजा ने अर्घ्यपाद्य से उनकी पूजा की और उत्तम आसन पर बैठाया, तब नारदमुनि राजा चन्द्रप्रभ से कहने लगे। "राजन्! इन्द्र ने मुझे आपके पास भेजा है और यह सन्देश कहलाया है कि आप लोग जो महादेवजी के अवडेरने से मयासुर की मैत्री से अज्ञानवश इस मर्त्यशरीर सूर्य्यप्रभ को विद्याधरों के अधीश चक्रवर्त्ती का पद दिलाया चाहते हैं सो बात हमको मालूम है। आप लोगों का यह काम अनुचित होगा क्योंकि हमने श्रुतशर्म्मा को यह पद दिया है, इसके सिवा यह उनका वंशीयपद चला आ रहा है। यदि हमारे विपक्ष से धर्म्म के विरुद्ध आप लोग ऐसा करेंगे तो समझ रक्खें कि इसमें आप लोगों का नाश अवश्य है। पहिले जब आप रुद्रयज्ञ कर रहे थे तो उस समय हमने कहा था कि प्रथम आप अश्वमेध यज्ञ करें किन्तु आपने सो न किया। देवताओं की उपेक्षा कर केवल शिवजी के भरोसे अहङ्कारवश जो ऐसा कर रहे हैं इसमें आपका भला नहीं है।" इन्द्र का यह सन्देश कह जब नारदमुनि चुप हो गये तब हँस कर मय कहने लगा "हे महामुनि! इन्द्र का ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि यह जो उन्होंने कहा है कि सूर्यप्रभ मर्त्य है, यह ठीक नहीं है, क्या दामोदर के युद्ध की बात उनको नहीं मालूम है, जो बड़े शूर वीर होते हैं वेही सब सिद्धियों के अधिकारी हो सकते हैं, क्या पूर्व समय में नहुष इत्यादि इन्द्रपद को नहीं पहुँचे थे? और जो यह कहा कि श्रुतशर्म्मा को हमने यह साम्राज्य दिया है और यह उनका पैतृकपद है यह भी असमञ्जसही है, भला जहां महादेवजी वरदाता विद्यमान हैं वहां इन्द्रको कौन गिनता है, फिर जेठाई से तो हिरण्याक्ष को न इन्द्रपद मिला था सो छीन क्यों लिया?

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विपक्षता और धर्म्मविरोध की जो बात कही सो भी मिथ्या है, वेही तो स्वार्थवश हठपूर्वक हमारे विपक्ष में खड़े होने पर उतारू हैं। कहिये तो भला इसमें क्या अधर्म्म है कि हमलोग अपने प्रतिद्वन्दी को जीत लेवें, हमलोग मुनि की भार्य्या का हरण नहीं कर रहे हैं न ब्रह्महत्याही कर रहे हैं। यह जो कहा कि प्रथम अश्वमेधयज्ञ न करने से देवतों का अपमान हुआ सो भी ठीक नहीं है क्योंकि रुद्रयाग हो जाने से फिर और यज्ञों की क्या आवश्यकता है? भला जब देवाधिदेव महादेव की पूजा हो गई तो फिर किस देवता की पूजा बाकी रही? यह जो कहा कि केवल रुद्र के भरोसे काम न चलेगा यह भी ठीक नहीं है क्योंकि जहां त्रि-शूलधारी भगवान् शिव रक्षक हैं वहां और देवसमूहों से क्या प्रयोजन? जब मार्त्तण्ड का उदय हो जाता है तो क्या नक्षत्र चमकते हैं? सो हे नारद जी! आप यह सब जाके देवराज से कह देवें, हमलोग तो जिसमें लगे हैं उसे करेंहीगे उन्हें जो अच्छा लगे करें।" मयासुर की बात सुनकर ब्रह्मर्षि नारद बोले "बहुत अच्छा ऐसाही जाकर कह दूंगा," इतना कह प्रतिसन्देश ले महामुनि इन्द्र के पास चले गये।

नारदमुनि के चले जाने पर राजा चन्द्रप्रभ को इन्द्र के सन्देश से शङ्कित देख मयदानव उनसे कहने लगा "राजन्! आप पुरन्दर का भय न करें, यदि हमारे द्वेष से देवताओं को साथ ले देवराज श्रुतशर्म्मा की ओर से युद्ध में खड़े होंगे तो हमलोग प्रह्लाद के आधिपत्य में असंख्य दैत्य दानव आपकी ओर हैं। जब त्रिपु-रान्तक महेश्वर हमारी पीठ पर खड़े हैं तो तीनों जगत् में किस अदने की शक्ति हमारे समक्ष ठहरने की है, सो हे वीरो! अब इस काम में उद्योग करो।" मया-सुर की इतनी बात सुन सब लोग अत्यन्त प्रसन्न होकर बोले "हां ठीक है ऐसाही होना चाहिये।"

इधर इतनी बात होही रही थी कि उधर दूतों के द्वारा सम्वाद पाके क्रमा-नुसार वीरभटादि राजा तथा महाराज चन्द्रप्रभ के और २ इष्टमित्र बन्धुबान्धव आ पहुँचे। राजा चन्द्रप्रभ ने सैन्य सहित सभों का उचित सत्कार किया। तब मयासुर फिर राजा से कहने लगा कि महाराज आज रात में पहिले रुद्र भगवान् का महायज्ञ कीजिये तब पीछे जैसा मैं कहूंगा वैसा कीजियेगा। मयदानव की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह बात सुन राजा ने उसी चण रुद्रयाग की सब तैय्यारी करवा ली। तब राजा रात्रि में मय की शिक्षा के अनुसार अरण्य में जाकर रुद्रजी का यज्ञ करने लगे। महाराज निःशङ्क हो होम कर रहे थे कि इतने में भूतगणों के राजा नन्दी प्रत्यक्ष आ खड़े हुए, राजा ने विधिवत् उनकी पूजा की। तब नन्दीश्वर प्रसन्न हो कहने लगे, कि "राजन् स्वयं शम्भुदेव ने मेरे द्वारा आपके पास यह सन्देशा भेजा है कि हमारे प्रसाद से तुमको सौ इन्द्रों का भी भय नहीं है, सूर्य्यप्रभ आकाशचारियों का सम्राट् होवेहीगा।" इस प्रकार शङ्कर भगवान् का सन्देशा सुनाय, बलिभाग लेकर भूतगणों के साथ नन्दीश्वर वहीं अन्तर्धान हो गये। तब महाराज चन्द्रप्रभ को अपने पुत्र के अभ्युदय में विश्वास हुआ, सो होम समाप्त होने पर बलिप्रदान कर मयदानव के साथ नगर में आये।

सबेरे जब राजा चन्द्रप्रभ अपनी भार्य्या, पुत्र, तथा राजाओं और मन्त्रियों के साथ एकान्त में बैठे थे कि मयासुर कहने लगा – "राजन्! सुनो, अब एक बहुत दिन का रक्षित रहस्य तुमसे कहता हूं, तुम तो सुनीथ नामक दानव मेरे बलवान् पुत्र हो और यह सूर्य्यप्रभ सुमुण्डीक नामक तुम्हारा छोटा भाई है। देवताओं के युद्ध में तम दोनों मारे गये सो अब यहां पिता पुत्र होके जन्मे हो। मैंने तुम्हारे उस दानव शरीर को बड़ी युक्ति से दिव्य महौषधियों और घी का लेप करके अब लों बचा रक्खा है सो आओ अब इसी छेद से पाताल में चलो और जैसे मैं बतलाऊँ उसी उपाय से अपने शरीर में पैठो। तब उस शरीर में पैठने से तुम ऐसे बलवीर्य्यसम्पन्न हो जाओगे कि युद्ध में उन आकाशचारियों को जीत लेओगे, परन्तु सूर्य्यप्रभ जो सुमुण्डीक का अवतार है इसी मनोहर शरीर से शीघ्रही खेचरों का राजा हो जायगा।" मयासुर की ऐसी बात सुन अति प्रसन्न होके महाराज चन्द्रप्रभ झट उस बात पर सम्मत हो गये परन्तु सिद्धार्थक ने कहा कि जब महाराज दूसरे शरीर में पैठे तो मर न गये? सो हे दानवोत्तम हमलोगों का यह सन्देह कैसे छूटेगा। जैसे परलोकगत प्राणी सब बातें भूल जाता है वैसेही क्या महाराज दूसरी देह में जाकर हमलोगों को न भूल जावेंगे? तब यह कौन हैं और हम कौन हैं। सिद्धार्थ की ऐसी बात सुन मयदानव ने कहा कि जब महाराज योगबल से अपनी इच्छा से दूसरे शरीर में पैठने लगेंगे तब तुम लोग अपनी आंखों से आकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देख लेना। यह तुम लोगों को न भूलेंगी, सुनो इसका कारण मैं बतलाता हूं। जब मनुष्य मरता है तो विवश रहता है और विवश होकरही उसको दूसरे गर्भ में जाना पड़ता है, सो मरण और जन्म के उन २ क्लेशों से उसकी बुद्धि भ्रान्त हो जाती है इससे वह पूर्वजन्म की सब बातें भूल जाता है, परन्तु जो व्यक्ति योगबल से इच्छा-पूर्वक दूसरे शरीर में जाके अन्त:करण में प्रविष्ट होता और पुन: इन्द्रियों को चैतन्य करता है उसके मन और बुद्धि पर तो कुछ धक्का पहुँचताही नहीं; वह ज्ञानी योगीश्वर सब बातें स्मरण रखता है, मानो इस घर से उस घर में चला गया। सो तुम लोग किसी प्रकार का सन्देह मत करो प्रत्युत महाराज जरा-रोग से मुक्त दिव्य शरीर को प्राप्त करेंगे और तुम लोग भी दानव हो, ज्योंही रसातल में पहुँचे कि अमृत पी के दिव्य शरीर धारण कर नीरोग हो जाओगे।" मयासुर की ऐसी बात सुनकर सबका सन्देह दूर हुआ, सभों को उनकी बात का विश्वास हुआ अत: सब बोले "बहुत अच्छा जैसा आप कहें वैसाही सही।"

दूसरे दिन, मयदानव की सलाह से महाराज चन्द्रप्रभ सब राजाओं के साथ चन्द्रभागा और ऐरावती के सङ्गम पर गये। वहां राजाओं को बाहरही छोड़, सूर्य्यप्रभ की स्त्रियों को रक्षा का भार उनके हाथ में दे राजा चन्द्रप्रभ अपने पुत्र सूर्य्यप्रभ तथा अपनी पत्नी और सिद्धार्थादि मन्त्रियों को साथ ले मयदानव के दिखाये हुए पानी के विवर में पैठे। बहुत दूर निकल जाने पर एक देवालय दिखाई पड़ा, सो महा-राज सबको लिये दिये उसी में पैठे।

उधर विवर से बाहिर जो राजा लोग बैठे थे उनकी यह दशा हुई कि आ-काश से विद्याधर अपने दलबल के साथ उन पर टूट पड़े और माया से उनको मोहित कर सूर्य्यप्रभ की भार्य्याओं को हर ले चले। इतने में आकाशवाणी हुई, "अरे पापी श्रुतशर्म्मा सावधान चक्रवर्ती राजा की भार्य्याओं का स्पर्श किया कि सेना सहित नष्ट हुआ, देख इन्हें माता समान मान कर बड़े गौरव से इनकी रक्षा कीजियो। तुझे मार कर ये अभी छुड़ा ली जातीं, पर ऐसा न किया जायगा, क्योंकि इसमें एक विशेष कारण है। सो अब ये जिस दशा में हैं उसी में रहैं।" ऐसी आकाशवाणी सुन सब विद्याधर अन्तर्धान हो गये। जब वीरभटादिक राजाओं ने देखा कि वे राजपरिग्रह हर ली गयीं तब आपस में लड़ मरने पर उतारू हुए।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनका ऐसा उद्यम देख फिर आकाशवाणी हुई "हे पुत्रो ! ऐसा काम मत करो; तुम्हारा कल्याण हो, उनको किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँच सकती सुनो तुम उन्हें फिर पाओगे।" ऐसी आकाशवाणी सुन राजा लोग वहीं बैठ प्रतीक्षा करने लगे।

इधर पाताल लोक में अपने उन साथियों के साथ महाराज उस देवालय में बैठे थे कि मयासुर बोला "राजन् ! एकाग्रमन होकर सुनो अब मैं आपको कायाकल्प की विद्या सिखाता हूं।" ऐसा कह उसने सहरस्य सांख्य और योग सुना कर दूसरे शरीर में पैठने की युक्ति सिखा दी और योगीन्द्र ने फिर कहा कि यही वह सिद्धि है, वह स्वतन्त्र ज्ञान है, और अणिमादिकों का आगार वही ऐश्वर्य है; इसी ऐश्वर्य्य पर स्थित होकर सुरेश्वर मुक्ति को भी नहीं चाहते, इसी के लिये लोग जप तप करके अनेक प्रकार के क्लेश सहते हैं, महात्मा लोग स्वर्गभोग देने पर ग्रहण नहीं करते। सुनो प्रसङ्गवश मैं तुम लोगों को इसी प्रकार की एक कथा सुनाता हूं।

पूर्व्व कल्प में काल नामक कोई ब्राह्मण था, वह पुष्कर तीर्थ में जाकर रात दिन जप करने लगा। इस प्रकार उसको जप करते२ दिव्य दो सौ वर्ष बीत गये, तब उसके शिर से लगातार आग की ज्वाला निकली जिसमें दश सहस्र सूर्य्य की ज्योति थी, इससे सिद्धादिकों की गति रुक गयी और तीनों जगत् जलने लगे। तब ब्रह्मा और इन्द्रादि देव उसके पास जाकर बोले 'हे ब्रह्मन् जो वर चाहो मांग लो, देखो तुम्हारी ज्वाला से तीनों लोक जले जाते हैं"। ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि जपही में मेरी प्रीति बनी रहे यही वर मैं चाहता हूं और कोई दूसरा वरदान मुझको नहीं चाहिये। उनके बहुत आग्रह करने पर उद्विग्न हो ब्राह्मण और दूर जाके हिमालय के उत्तर में जप करने लगा। जब वहां भी उसका तेज क्रमानुसार असह्य होने लगा तब इन्द्र ने उसकी तपस्या में विघ्न डालने के लिये अप्सराओं को भेजा। वे अप्सरायें अपने हाव भाव कटाक्षों से उसे वश में लाने की चेष्टा करने लगीं परन्तु उस धीर ब्राह्मण ने उन्हें तिनके के बराबर भी न समझा; तब तो देवताओं ने काल को उसके पास भेजा। काल उसके पास जाकर कहने लगा कि हे ब्राह्मण ! मर्त्यलोग इतने दिन नहीं जीते सो तुम अपना शरीर त्याग कर दो,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मर्यादा का अतिक्रमण मत करो। इतना सुन ब्राह्मण बोला ' यदि मेरे जीवन की अवधि पूरी हो गई है तो मुझे ले क्यों नहीं चलते ? प्रतीक्षा किस बात की कर रहे हो । ऐ पाशहस्त ! मैं स्वयं अपना शरीर त्याग न करूंगा क्योंकि इच्छापूर्वक शरीर छोड़ने से आत्मघाती समझा जाऊँगा।" इस प्रकार ब्राह्मण की बात सुन जब काल अपने बल से भी उसे न ले जा सका तब जैसे आया था वैसेही छूछे हाथ चला गया । इन्द्र ने जब देखा कि उस काल ब्राह्मण ने काल को भी जीत लिया तब उनको बड़ा अनुताप हुआ सो वह स्वयं जाके ब्राह्मण को उठा स्वर्ग में ले गये। वहां भी वह ब्राह्मण स्वर्गसुख से विमुख हो जपही में लीन रहा. तब देवतों ने उसे नीचे उतार दिया, वह ब्राह्मण हिमालय पर जाकर जप करने लगा । वहां पर फिर इन्द्रादि जाकर उसे वर का प्रलोभन दे रहे थे कि इतने में उसी मार्ग से महाराज इच्वाकु आ निकले, उन्होंने सब वृत्तान्त सुना और ब्राह्मण से कहा कि हे देवता यदि देवताओं से वर नहीं मांगना चाहते तो मुझसेही मांग लो । यह सुन ब्राह्मण हँस के बोला "जब कि मैं देवतों से वर नहीं मांगता तब क्या आप मुझे वर दे सकेंगे ?।" ब्राह्मण की ऐसी बात सुन राजा इच्वाकु बोले "अच्छा, यदि मैं वर देने में समर्थ नहीं हूं , तो आप तो समर्थ हैं न, सो आपही मुझे वरदान देवें।" यह सुन उस जापक ब्राह्मण ने कहा कि अच्छा मांगिये क्या वर चाहते हैं, मैं वर देऊँगा । ब्राह्मण की ऐसी बात सुन राजा अपने मन मे विचारने लगे कि उचित तो यह है कि मैं (वर) देऊँ और यह ब्राह्मण ग्रहण करे; अब तो यह बड़ा विपरीत हुआ चाहता है कि यह ब्राह्मण देवे और मैं ग्रहण करूँ । इस प्रकार तर्क वितर्क में पड़ राजा विलम्ब कर रहे थे कि इतने में दो ब्राह्मण परस्पर झगड़ते वहीं आ पहुँचे और राजा को उसके सामने देखकर कहने लगे—"महाराज हमारा न्याय चुका दीजिये।" एक का कथन था कि इन्होंने दक्षिणा सहित यह गौ मुझे दान कर दी है, सो जब मैं इनको पुनः दान कर इन्हीं को देने लगा तो यह महाशय नहीं लेते। दूसरे ने कहा 'मैंने तो पहिले यह दान में नहीं पाया था और न मैंने मांगाही तो क्यों यह बलपूर्वक मुझे दान दिया चाहते हैं ?।' यह सुन राजा बोले 'बादी का कहना अनुचित है, क्यों जी यह क्या बात है कि आप पहिले दान लेकर अब फिर दाताही को वह दान दिया चाहते हैं ?।' राजा की यह बात सुन,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अवसर देखकर इन्द्र बोले 'राजन् ! जब आप जानते हैं कि यही बात न्याय है तो इस जापक द्विज से वर मांग के, पाने पर भी अब आप क्यों नहीं लेते।' इन्द्र की ऐसी बात सुन राजा निरुत्तर हो गये और तब उस जापक से बोले 'भगवन् ! अपने जप का आधा फल मुझे दीजिये'। यह सुन द्विज ने कहा 'बहुत अच्छा, मेरे जप का आधा फल आपको मिले।' इतना कह उस जापक ने राजा को वर दे दिया। इस वर के प्रभाव से राजा की गति सब लोकों में हो गई और जापक ब्राह्मण शिवलोक को गया। वहां बहुत कल्पों तक रह के वह ब्राह्मण फिर भूतल पर आया और योगबल से स्वतन्त्रता लाभ कर शाश्वती सिद्धि को प्राप्त हुआ।

इतनी कथा सुनाय मयदानव फिर कहने लगा कि "हे राजन् ! इसी प्रकार बुद्धिमान् लोग स्वर्गादि सुखों से विमुख रहते और सिद्धिही की कांक्षा रखते हैं, सो तो आपने प्राप्त की है अब निर्द्वन्द्व अपनी देह में प्रवेश कीजिये।" इस प्रकार मयासुर से योगज्ञान को पाय महाराज चन्द्रप्रभ अपने पुत्र, कलत्र और अमात्यों के सहित अत्यन्त प्रमुदित हुए।

इसके उपरान्त मयासुर, महाराज चन्द्रप्रभ को दूसरे पाताल में ले जाकर स्त्री पुत्र तथा मन्त्रियों के साथ एक दिव्य गृह के अन्दर ले गया, वहां वे क्या देखते हैं कि पलङ्ग पर एक गराण्डील विकराल पुरुष सोया है, उसके तमाम बदन में औषधि और घी पोता है, उसका मुंह सूखा हुआ है और दैत्यराजाओं की कन्यायें उसे घेरे (बैठी) हैं। तब मयासुर ने महाराज चन्द्रप्रभ से कहा कि हे राजन् ! यही आपका शरीर है और आपकी पूर्व भार्य्यायें आपको घेरे बैठी हैं, सो आप अब इसमें पैठिये। मय की इतनी बात सुन महाराज उपदिष्ट योग का अवलम्बन कर, एकान्त में अपना शरीर त्याग उस शरीर में पैठ गये। इतने में वह सोया हुआ पुरुष जम्हाया, और धीरे २ आंखें खोल पलङ्ग पर उठ बैठा जैसे कोई निद्रा से जाग उठे। तब असुर की भार्य्यायें आनन्द के मारे चिल्लाने लगीं कि हमारे बड़े भाग्य से हमारे पति सुनीथ आज जी उठे हैं। इधर तो राजा के शरीर को एकाएक सूर्यप्रभ इत्यादि निर्जीव देखकर फक हो गये। चन्द्रप्रभ (सुनीथ) ने, जैसे सोये से उठकर, मय पिता को साम्हने देख, झट उसके चरणों पर गिर के प्रणाम किया। पिता ने भी पुत्र को आलिङ्गन कर सबके साम्हने पूछा "कहो पुत्र तुम अपने दोनों जन्मों को स्मरण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करते हो ?" । "जी हां स्मरण करता हूं' इतना कह उन्होंने जो कुछ चन्द्रप्रभ के जीवन में और जो कुछ सुनीथ के जीवन में हुआ था सब कह सुनाया, पश्चात् सूर्य्यप्रभादिकों को तथा अपनी भार्य्याओं को और अपनी पूर्व्व दानवी भार्य्याओं को भी एक २ करके सभों का नाम ले ले समझाया, बुझाया । कदाचित् कभी इसका उपयोग पड़े, यह विचार उन्होंने अपने चन्द्रप्रभ शरीर को औषधि और घृतादि से पोतवाय के भली भांति सावधानी से रखवाय दिया। जब सूर्य्यप्रभ इत्यादि को विश्वास हुआ तो उन सभों ने भी बड़ी प्रसन्नता से जाकर चन्द्रप्रभ सुनीथ को झुक कर प्रणाम किया।

तब मयासुर, बड़े हर्ष से उन सभों को वहां से निकाल के एक दूसरे रत्न-काञ्चन निर्मित नगर में ले गया। वहां जाकर सब लोग क्या देखते हैं कि वैडूर्य्य की एक बावड़ी है जिसमें सुधारस भरा है, सब लोग उसी के तट पर बैठ गये। वहां सुनीथ की भार्य्यायें मणिमय रचित पात्रों में वह सुधा पान लाईं, सो सबों ने अमृत से भी उत्तम वह सुधापान पीया। उसके पीतेही सब लोग ऐसे हो गये मानों नशे से जगे हों, सभों का शरीर दिव्य हो गया और सब लोग बलवीर्य्य-पराक्रम से परिपूर्ण हो गये। तब मयासुर ने चन्द्रप्रभ सुनीथ से कहा कि पुत्र आओ चलें बहुत दिनों के उपरान्त तुम अपनी माता को देख आओ। 'बहुत अच्छा चलिये'। इतना कह सुनीथ उठ खड़े हुए। आगे २ मयासुर और साथ में सूर्य्यप्रभ आदि भी चले, चलते २ सब लोग चौथे पाताल में पहुँचे। वहां नाना प्रकार के धातुओं के बने विचित्र नगरों को देखते हुए अन्त में एक स्वर्णमय नगर में पहुँचे जहां रत्न के खम्भों से बने, सब सम्पत्ति से पूर्ण भवन में उन लोगों ने लीलावती नाम्नी सुनीथ की माता को देखा, जिसके रूप के साम्हने अप्सरायें भी लजातीं, सम्पूर्ण आभरणों से सुसज्जित, जिसे असुरकन्यायें चारों ओर से घेरे हुई थीं। वह सुनीथ को देखतेही अपने आसन से एकाएक उठ खड़ी हुई और सुनीथ भी उसे प्रणाम कर उसके चरणों पर गिर पड़ा । बहुत दिनों के बिछुड़े अपने पुत्र को गोद में लेने से माता के नेत्रों में आनन्द के आंसू भर आये, वह अपने पति मय की प्रशंसा कर कहने लगी कि आपही के प्रसाद से मेरा पुत्र पुनः आ मिला। तब मय ने उससे कहा "देवि! तुम्हारा दूसरा पुत्र सुमुण्डीक भी तुम्हारे इस पुत्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

का पुत्र होके जन्मा है, सो यह सूर्य्यप्रभ है। श्रीशंकर भगवान् ने इसे इसी शरीर से विद्याधरों का भावी चक्रवर्त्ती राजा ठहराया है। यह सुन वह बड़ी उत्कण्ठा से सू प्रभ की ओर देखने लगी। जिसे देख सूर्य्यप्रभ अपने मन्त्रियों के साथ उसके चरणों पर (गिर) पड़े। लीलावती ने आशीष देकर कहा "बेटा सुमुण्डीक की देह से क्या, तुमतो इसी देह से सौम्य लगते हो।" पुत्रों का ऐसा अभ्युदय देख मय ने अपनी कन्या मन्दोदरी और विभीषण को स्मरण किया, उसी क्षण वे दोनों आ पहुँचे। उस उत्सव में उचित सत्कार पाय विभीषण मय से कहने लगे "दानवेन्द्र! यदि मेरी बात मानें तो मैं कहूं, दानवों के बीच आपही सुकृती और प्रसिद्ध है, सो अमरों के साथ आपको अकारण बैर न करना चाहिये, क्योंकि उनके साथ विरोध करने से मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ लाभ आपलोगों को नहीं हो सकता। देखिये जब जब युद्ध हुआ है तब २ असुरही मारे गये, असुर कभी देवतों को न मार सके" यह सुन मय ने कहा कि सो तो ठीक है, हमलोग कुछ आपस की लड़ाई नहीं ठान रहे हैं; इन्द्र ही हठ करके ऐसा किया चाहते हैं तो कहो हम कैसे सहें। और जो असुर देवों से मारे गये वे अचेत थे, भला सचेत बलि इत्यादिकों को उन्होंने क्यों नहीं मार लिया? मयासुर की इतनी बात सुन राक्षसेन्द्र विभीषण आज्ञा ले मन्दोदरी सहित अपनी नगरी को चले गये।

इसके उपरान्त मयासुर, सूर्य्यप्रभ इत्यादिकों के साथ सुनीथ को बलिराजा से भेंट कराने को तीसरे पाताल में ले गया, वहां जाकर सब लोग क्या देखते हैं कि स्वर्ग से भी उत्कृष्ट स्थान में राजा बलि छत्र मुकुट और हारों से सुशोभित विराजमान हैं; दैत्य और दानव चहुँ ओर घेरे हुए हैं। सुनीथ इत्यादि क्रमानुसार जाकर उनके पांव पड़े, उन्होंने भी सबों का बड़ा सत्कार किया। मय ने सब वृत्तान्त कह सुनाया जिसे सुन राजा बलि बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने अतिशीघ्र प्रह्लाद तथा और दानवों को बुला भेजा। सुनीथादि ने उनके चरणों पर गिर के प्रणाम किया उन सबों ने भी आनन्द से परिपूर्ण हो इनलोगों को आशीर्वाद दिया। तब बलि बोले "सुनीथ पृथ्वी पर चन्द्रप्रभ होके जन्मा, अब यह हमलोगों की खातिर फिर अपनी देह पाके जीवित हुआ है, और यह सूर्य्यप्रभ सुमुण्डीक का अवतार है; भगवान् शङ्कर ने कहा है कि यह विद्याधरों का राजा होगा। इस चन्द्रप्रभ

के यज्ञ के प्रभाव से मेरा बन्धन ढीला हो गया अब इन दोनों के आने से हमलोगों का अवश्य अभ्युदय हुआ है " इस प्रकार बलि की बात सुन उनके गुरु शुक्राचार्य्य बोले "जो लोग धर्म्म से सत्य पर चलते हैं उनका कभी पतन नहीं होता, सो तुम लोग धर्म्मपूर्व्वक कार्य्य करते चलो और जो मैं कहता हूं वैसा करो ।" गुरु की यह बात सुन के सब दानव तथा सातों पातालों के स्वामी जो वहां उपस्थित थे बोल उठे 'हमलोग प्रतिज्ञा करते हैं कि जो आप कहेंगे अवश्य किया जायगा ।' इसके उपरान्त सुनीथ की प्राप्ति की प्रसन्नता में बलि ने एक बड़ा उत्सव मनाया।

इतने में नारद भगवान् फिर उनके बीच आ विराजे, और बलि ने अर्घ्यपाद्य से उनकी पूजा कर एक उत्तम आसन पर उन्हें बैठा दिया । महर्षि ने कहा – "सुनो दानवो ! महेन्द्र ने मुझे भेजकर यह सन्देशा कहलाया है कि सुनीथ के जी उठने से हमको बड़ा हर्ष हुआ ; अब हमसे अकारण बैर फिर न करना ; और यह भी स्मरण रहे कि हम श्रुतशर्म्मा के पक्षपाती हैं सो उससे भी विरोध न करना ।" जब इन्द्र की बात कह चुके तब प्रह्लाद ने नारदजी से कहा कि निःसन्देह सुनीथ के जी उठने से इन्द्र को प्रसन्नता हुई होगी, यह बात झूठी नहीं है, परन्तु हमलोग अकारण बैर तो उनसे करही नहीं रहे हैं, देखिये आजही हमलोगों ने गुरुजी के साम्हने प्रतिज्ञा की है । सो जब श्रुतशर्म्मा का पक्ष उठा के बलपूर्व्वक वेही हमसे विरोध बेसाहते हैं तो कहिये इसमें हमारा क्या दोष है ? और भी तनिक विचारिये कि देवाधिदेव महादेव ने सूर्य्यप्रभ की ओर से पहिलेही यह कह दिया है, क्योंकि इसने पूर्व्वकाल में भगवान की आराधना कर उनको सन्तुष्ट किया था, सो अब ईश्वर के ठहराये हुए कार्य्य में हमारा क्या चारा ? यह जो इन्द्र कह रहे हैं कि निष्कारण बैर मत करो सो ठीक नहीं है।" दानवेन्द्र प्रह्लाद की बात सुन महर्षि नारद इन्द्र को निन्दा कर बोले कि आपका कहना ठीक है । इतना कह नारदमुनि अन्तर्धान हो गये ।

ब्रह्मर्षि नारद के चले जाने पर शुक्राचार्य्य ने दानवेन्द्रों से कहा कि "इस विषय में तो ऐसा मालूम होता है कि इन्द्रही हमलोगों से बैर करना ठान बैठे हैं, किन्तु जब हमारी ओर भगवान् महेश्वर कमर कसे खड़े हैं तब इन्द्र का क्या सामर्थ्य ? अथवा उनकी विष्णु की भक्तिही से क्या होने का ।" शुक्राचार्य्य की ऐसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बात सुनकर सब दानवों ने कहा कि गुरुजी बहुत ठीक कह रहे हैं। इसके उपरान्त प्रह्लाद और बलि से आज्ञा ले ले सब लोग अपने २ घर चले गये। प्रह्लादजी के अपने घर चौथे पाताल में चले जाने पर राजा बलि भी सभा से उठकर गृह के भीतर चले गये और मय, सुनीथ तथा सूर्य्यप्रभ इत्यादि भी बलि को प्रणाम करके अपने घर चले गये।

घर पहुँचने के उपरान्त जब सब लोग खा पी के सुचित हुए तब सुनीथ की जननी लीलावती आकर उनसे कहने लगी कि "हे पुत्र! तुम जानते हो कि ये तुम्हारी भार्य्यायें बड़े लोगों की बेटियां हैं, देखो यह तेजस्वती कुबेर की कन्या है, यह मङ्गलावती तुम्बुरु की बेटी है, और चन्द्रप्रभ शरीर से जिसका पाणिग्रहण तुमने किया देखो यह कीर्त्तिमती प्रभास नामक वसु की दुहिता है। सो पुत्र इन तीनों को तुम एकही दृष्टि से देखना।" इतना कह उसने तीनों बधुओं को सुनीथ के हवाले किया। उस रात में सुनीथ अपनी ज्येष्ठा पत्नी तेजस्वती के साथ शयनागार में गये। वहां चिरकाल से उत्कण्ठित उस भार्य्या के साथ सुख से भोग-विलास किया। यद्यपि पूर्व में भोग कर चुके थे तथापि यह क्रीड़ासुख उनको नवीन सा प्रतीत हुआ।

सूर्य्यप्रभ तो अपने मन्त्रियों के साथ दूसरे घर में एक पलङ्ग पर अकेले पड़े थे चिन्ता में उन्हें निद्रा न आई, वह विचारते थे कि हा! मैं कैसा निःस्नेह हूं जो अपनी भार्य्याओं को बाहरही छोड़ आया। उसी प्रकार प्रहस्त को भी डाह से नींद न आई क्योंकि वह सदा अपने कार्य्यही की चिन्ता में लीन रहता, बाकी सब मन्त्री सूर्य्यप्रभ के चारों ओर खुर्राटे भर सो रहे थे। इतने में सूर्य्यप्रभ और प्रहस्त क्या देखते हैं कि एक अनुपम बड़ी सुन्दर कन्या सखी के साथ भीतर चली आ रही है। उसकी सुन्दरता का वर्णन कहां लों किया जाय, ऐसा जान पड़ता है कि ब्रह्मा ने उसे बनाया पर पीछे इस डर से कि कहीं इसकी सुन्दरता के आगे हमारी सृष्टि और सुराङ्गनायें भद्दी न पड़ जांय, इसे पाताल में छिपा आये। सूर्य्यप्रभ सोचतेही थे कि यह कौन है कि इतने में वह भीतर जाकर उनके सब साथियों को एक एक करके देखने लगी। चक्रवर्त्ती के लक्षण न पा के उसने सभों को त्याग दिया और जब सूर्य्यप्रभ को देखा तो सब लक्षण मिल गये सो वह सब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मन्त्रियों के बीच में सोये हुए उनके पास चली गयी और अपनी सखी से कहने लगी कि सखि जिन्हें मैं ढूंढ़ती हूं वे यही हैं, तुम जल सम शीतल अपने हाथों से इनके चरण छूकर जगाओ। यह सुन उस सखी ने वैसाही किया, सूर्य्यप्रभ को तो नींद आईही नहीं थी, नकल किये पड़े थे, सो उन्होंने आंखें खोलीं और उन दोनों कन्याओं को देखकर कहा तुम दोनों कौन हो और किस लिये यहां आई हो?'

ऐसा सुन सखी बोली कि देव सुनिये, दूसरे पाताल में हिरण्याक्ष के पुत्र बड़े बलवान् विजयी अमील दैत्येन्द्र रहते हैं, यह उनकी कन्या, प्राणों से भी प्यारी है, सो इसके पिता आज बलि राजा के यहां गये थे वहां से आकर कहने लगे कि बड़े भाग्य की बात है कि आज मैंने सुनीथ को पुनः जीवित देखा, और सुमुण्डीक के अवतार युवराज सूर्य्यप्रभ को भी देखा, महादेवजी ने उसे विद्याधरों का राजा बनाया है। अब मैं सुनीथ का आदरसन्मान किया चाहता हूं, सो अपनी कन्या कलावती को उसके पुत्र सूर्य्यप्रभ के साथ व्याह देता हूं। सुनीथ स गोत्र हैं अतः उसे यह नहीं दी जा सकती और उसके राजा के जन्म में सूर्य्यप्रभ उसका बेटा है, असुर ज न्म में नहीं, सो बेटे के सम्मान से बाप का भी आदर हो जाता है। अपने पिता के मुख से आपके गुण सुन यह मेरी सखी आपके पास आई है कि आपका दर्शन करे।

सखी की ऐसी बात सुन सूर्य्यप्रभ ने उसके भाव की जिज्ञासा के हेतु ऐसी नकल ठान ली मानों सो गये हैं। तब वह कन्या धीरे धीरे प्रहस्त के निकट गयी, वह भी तो जाग रहा था, और अपनी सखी से समस्त वृत्तान्त उसे सुनवा वहां से चली गयी। तब प्रहस्त सूर्यप्रभ के पास जाकर कहने लगा "देव जाग रहे हैं या नहीं," इतनी बात सुनतेही सूर्य्यप्रभ आंख खोल कर बोले 'मित्र जागता हूं, भला अकेले नींद कहां! मैं तुमसे एक अनोखी बात कहता हूं, भला तुमसे क्या छिपा है। अभी मैंने देखा है कि एक कन्या अपनी सखी के साथ आई, मित्र! उसकी जोड़ी की तीनों लोक में कोई सुन्दरी न निकलेगी, वह मेरा मन चुरा के एक क्षण में न जानें क्या हो गई, सो उसे खोजो, देखो वह यहीं कहीं होगी।' इतनी बात सुन प्रहस्त बाहर गया और सखी के संग उसे खड़ी देख कहने लगा "मैंने तुम्हारे अनुरोध से अपने स्वामी को जगा दिया, है

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सो अब तुम मेरे निहोरे जाके उ‍ें फिर दर्शन देओ। न‍ीं को कृतार्थ करनेवाले उनके रूप को विलोको और वह तुम्हारे रूप को निहारें, जो तुम्हें देखतेही तुम्हारे वश में हो गये हैं। जब मैंने उ‍ें जगाया तो जाग के उन्होंने मुझसे कहा कि, सखे! कहीं से लाकर उन्हें दिखाओ तो जाऊँ नहीं तो अब जीने की कौन आशा है सो मैं तुम्हारे पास आया हूं, बस अब चलकर स्वयं देख लो।" प्रहस्त की ऐसी बात सुन लज्जावती कलावती एकाएक जाने से हिचकिचाई और इधर उधर करने लगी तब प्रहस्त उसका हाथ पकड़ के सूर्यप्रभ के पास ले गया। सूर्यप्रभ ने उसे समीप आई देख कहा "क्यों जी! क्या यही उचित है कि जब मैं सोया था तो चुपके से आकर मेरा मन चुरा ले जाओ. मैंने चोर को पकड़ लिया अब तो विना दण्ड दिये न छोड़ूंगा।" सूर्यप्रभ की ऐसी बात सुन उसकी विदग्धा सखी बोली "महाराज! इसके पिता ने तो पहिलेही से सोच विचार के इस चोर को आपके हाथ में दण्ड पाने के लिये सौंप देना ठान लिया है तो इसमें प्रतिबन्धक कौन हो सकता है, आप इसके साथ चोरी के उचित काम करते क्यों नहीं।" सखी की ऐसी बात सुनकर ज्यों सूर्यप्रभ उसके आलिङ्गन करने को लपके कि कलावती ने लाज से कहा 'आर्यपुत्र! ऐसा न कीजिये, मैं अब लों वान्धा हूं।' उसकी इतनी बात सुन प्रहस्त बोला 'देवि! हिचकिचाओ मत, सुनो सब प्रकार के विवाहों में गन्धर्व्वविवाह अति उत्तम है।' इतना कह प्रहस्त सखी के साथ बाहर चला गया और सूर्यप्रभ ने कलावती को अपनी भार्या बना उस पातालकन्या के साथ, मर्त्य दुर्लभ सम्भोग किया और आनन्दपूर्वक नवसङ्गम का सुख लूटा।

प्रातःकाल होने पर जब कलावती अपने घर चली गयी तब सू‍र्यप्रभ और सुनीथ मय के पास गये और सब लोग मिल के प्रह्लाद के निकट पहुँचे। उन्होंने सब का यथोचित सम्मान कर मय से कहा "इस उत्सव के दिन में हमलोगों को वह काम करना चाहिये जिससे सुनीथ को प्रसन्नता हो, सो आओ आज हमलोग मिल के एक साथ भोजन करें।" 'हां ऐसाही होवे, इसमें क्या दोष है।' मय के ऐसा कहने पर प्रह्लाद ने दूत भेजकर सब असुरों के राजाओं को बुला भेजा। सो सब पातालों से वे क्रमानुसार आने लगे। पहिले असंख्य बड़े २ असुरों को लिये हुए बलि पहुँचे,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनके पीछे अमील और वीर्यवान वरारोह; तब सुमाय, तन्तुकच्छ, विकटाक्ष, प्रकम्पन, धूमकेतु और महाकाय तथा और २ कई एक असुरों के अधीश्वर आ उपस्थित हुए। प्रत्येक अपने २ साथ हज़ार सर्दार लेके आया था। सब आ २ कर प्रह्लाद को प्रणाम करने लगे, जिससे उनकी सभा भर गयी। जब सब लोग यथा स्थान बैठ गये तब प्रह्लाद ने सबका उचित सम्मान किया। जब भोजन का समय हुआ तब सब लोग मर्यादिकों के साथ गङ्गास्नान कर महासभा में आ उपस्थित हुए। महासभा ऐसी वैसी न थी, सौ योजन चौड़ी थी वहां की गच सोने की और मणिजटित तथा जहां मणियों के खम्भे लगे थे और मणियों के पात्र रक्खे थे। वहां प्रह्लाद के सहित, तथा सुनीथ और मय के साथ सूर्य्यप्रभ और उनके मन्त्रियों के संग सब असुरों ने भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्यादि दिव्य षट् रस व्यञ्जन का भोजन किया और पश्चात् उत्तमोत्तम पान पिया। खा पीकर जब सुचित हुए तब सब लोग रत्नजटित एक दूसरी सभा में जा बैठे वहां दैत्य और दानवों की कन्याओं का उत्तम नृत्य होने लगा। इतने में पिता की आज्ञा से नाचती हुई महल्लिका नाम्नी प्रह्लाद की कन्या पर जिसकी कान्ति से सब दिशायें प्रकाशित हो रही थीं सूर्य्यप्रभ की दृष्टि पड़ी, आंखों से मानों अमृत बरसता था, ऐसा भासता था कि मानो ऐन्दवी देवी (चन्द्र की छाया) कौतुक से पाताल में आ गई हो। माथे पर सुन्दर तिलक लगा था, पांव में पैजनी मनोहर झनकार कर रही थी, चेहरा मुस्कुराता हुआ, मानों स्रष्टा ने नृत्य की मूर्तिही बना दी है। घुंघुराले केश, जुही की कली सरीखे दाँत, उन्नत पीनस्तनमण्डल; इनसे मानो नृत्यकी नई २ छटा उपजाती थी। ज्योंहीं सूर्य्यप्रभ की दृष्टि उस पर पड़ी कि उनका मन यद्यपि दूसरी स्त्रियों के वशीभूत हो गया था तथापि उस सौम्य मूर्ति द्वारा हरा गया। उस ललना ने भी दूर से असुरों के बीच में बैठे हुए सूर्य्यप्रभ को देख लिया, मानों महादेवजी के द्वारा कामदेव के भस्म किये जाने पर विधाता ने यह दूसरा काम रच दिया हो। देखतेही उसका मन ऐसा लुभा गया कि नाचने की सब कला भूल गयी जो उसकी निर्लज्जता देख मानों क्रोध से पयान कर गयी। सभासद लोग उन दोनों का मनोगत भाव जान गये और यह कह के उसका नाच बन्द कर दिया गया कि राजकन्या थक गयी। तब पिता की आज्ञा से नाच बन्द

कर मल्लिका दानवेन्द्रों को प्रणाम करके सूर्यप्रभ को कटाक्ष मारती हुई अपने घर चली गयी। सब दानव अपने २ घर सिधारे और सायङ्काल में सूर्यप्रभ भी अपने निवास को गये।

जब रात हुई तो कलावती भी आ पहुँची, सूर्यप्रभ उसे लेके चुपचाप भीतर सो रहे और सब सहचर लोग बाहर सोये। इतने में मल्लिका भी अपनी दो सखियों को सङ्ग लिये वहीं राजा के दर्शनार्थ उपस्थित हुई। ज्योंही वह भीतर पैठा चाहती थी कि सूर्यप्रभ के प्रज्ञाढ्य नामक मन्त्री की आंख खुल गई, वह देखतेही पहिचान गया और उठकर बोला "देवि! ज़रा ठहरिये, मैं भीतर से हो आऊँ।" उसने चौंक कर पूछा "हां! रोकते क्यों हो, और तुम लोग बाहर क्यों सोये हो?" तब प्रज्ञाढ्य बोला कि भला जो पुरुष निश्चिन्त सोया हो उसके पास क्या एकाएक जाया जाता है, हमारे प्रभु व्रत का अनुष्ठान कर अकेले सोये हैं। यह सुन प्रह्लाददैत्य की बेटी लज्जित हो गई और फिर बोली "अच्छा तो तुम्ही जाओ,' प्रज्ञाढ्य भीतर जाके क्या देखता है कि कलावती सो गई है, उसने धीरे से सूर्यप्रभ को जगाया और कहा कि मल्लिका आई है। यह सुन सूर्यप्रभ जाग के धीरे से पलङ्ग से उठके बाहर आये और मल्लिका को दो सखियों के साथ देखके बोले "आज यह अभ्यागत कृतार्थ हो गया, अब इस स्थान को भी धन्य कीजिये, आइये बैठिये।" इतना सुन मल्लिका अपनी दोनों सखियों के साथ बैठ गयी और प्रज्ञाढ्य के साथ सूर्य्यप्रभ भी बैठ गये। बैठने के उपरान्त सूर्य्यप्रभ बोले "शोभने! यद्यपि सभामें नाचने के समय आपने सबकों एक समान देखने से मेरा अपमान किया, तथापि हे चञ्चलनेत्रे! आपके दर्शन मात्र से मेरे नेत्र कृतार्थ हो गये।" सूर्य्यप्रभ की ऐसी बात सुनकर; मल्लिका ने उत्तर दिया कि आर्यपुत्र! इसमें मेरा अपराध नहीं है, इसमें उनका अपराध है जिन्होंने मुझे बीच सभा में नाचने की कला भुलवा के लज्जित करवा दिया। यह सुन कर सूर्य्यप्रभ हँसकर बोले "बस अब मैं हार गया। फिर उसका हाथ उन्होंने पकड़ लिया, सो वह कांपने लगी और उसे पसीना हो आया मानों बलपूर्वक खींचने से भयभीत हो गयी हो।" तब प्रह्लादसुता बोली "आर्य्यपुत्र! छोड़ दीजिये, मैं अभी कन्या हूं और पिता के अधिकार में हूं।"

उसकी ऐसी बात सुन प्रज्ञाढ्य बोला "देवि! क्या कन्याओं का गन्धर्व्वविवाह नहीं होता ? आपके पिता आपका भाव जानते हैं, तो कदापि वह किसी दूसरे के साथ आपका विवाह न करेंगे, और फिर इनकी खातिरदारी भी असुरेन्द्र अवश्यही करेंगे, इस कातरता से क्या, देखिये ऐसा समागम व्यर्थ न जाने पावे।" इस प्रकार तो इधर बातचीत हो रही थी कि उधर घर के भीतर कलावती की नींद खुली तो सूर्य्यप्रभ को पलङ्ग पर न देख कुछ क्षण प्रतीक्षा करती २ घबड़ा गई विलम्ब होने से तो उसे औरही शङ्का उपजी, सो बाहर निकल आई। इधर देखा प्यारे महल्लिका से उरझे हैं देखतेही उसको क्रोध चढ़ आया और साथही लज्जा और भय से सहम सी गयी। महल्लिका भी उसे देखकर लज्जित और भयभीत हो गयी और सूर्य्यप्रभ तो फक्क हो गये ऐसे मानों चित्र लिखे से हों। कलावती ठिठक कर सोचने लगी कि अब तो मुझे देखही लिया, अब मैं क्योंकर भाग सकती हूं, अब लाज करूं कि डाह ? इस प्रकार की चिन्ता कर वह भी सूर्य्यप्रभ के बगल में जा पहुँची और ताने के साथ महल्लिका से पूछने लगी "अच्छी हो बहिना, तुम यहां रात में कैसे आई ?" महल्लिका ने उत्तर दिया कि यह तो मेरा घरही है, हां तुम दूसरे पाताल से आई हो इससे तुम मेरी पाहुन हो। यह सुन कलावती हँसकर बोली, "ठीक है सखि! जो कोई तुम्हारे घर आता है तुम उसकी अच्छी पहुनई करती हो," कलावती की ऐसी बात सुनकर महल्लिका ने कहा कि मैं तो प्रीति से कहती हूं सखि! तुम अँठिला के ताना क्यों छोड़ती हो ? तुम्हें लाज नहीं आती कि इस प्रकार बोल रही हो, क्या मैं तुम सी हूं? क्या मैं बिना पिता के दान किये दूर से आकर पराये स्थान में पराये के पलङ्ग पर निराले में अकेले रात में सोई हूं। मैं तो अभी थोड़ी देर हुई अपने पिता के पाहुन को अपनेही घर में देखने आई हूं कि उसका आतिथ्य करूँ, फिर भी देखो ये दो सखियां मेरे साथ हैं। यह मन्त्री जब पहिले हमें धोखा दे भीतर गये थे मैं तो तभी जान गई थी पर तुमने अब खोलही दिया। इस प्रकार महल्लिका की बातें सुन अपने प्रिय को क्रोध से तिरछी दृष्टि से देखती हुई कलावती वहां से चली गयी। तब महल्लिका भी उठ खड़ी हुई और कोप से सूर्य्यप्रभ से यह कह कर चली गयी कि "हे बहुवल्लभ! मैं जाती हूं"। सूर्य्यप्रभ उदास हो गये, उनका मन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो दोनों प्रियाओं में लग गया था सो उनके साथ चला गया; अब यह उदास हों न तो करें क्या ?

इसके उपरान्त उन्होंने अपने मन्त्री प्रभास को जगाया और कोप के अनन्तर कलावती का क्या भाव है यह जानने के लिये उसे भेज दिया और महल्लिका के पीछे प्रहस्त को भेजा और प्रज्ञाढ्य के साथ आप वहीं उनकी प्रतीक्षा में बैठे रहे। कलावती के व्यापार का पता लगा प्रभास अपने प्रभु के पास लौट आया और पूछने पर इस प्रकार कहने लगा "महाराज ! यहां से मैं अपनी विद्या के बल से गुप्त होकर दूसरे पाताल में कलावती के रहने के घर को चला गया, वहां द्वार पर दो सखियां परस्पर बात कर रही थीं, मैं उनकी बात सुनने लगा। एक बोली "सखि ! आज कलावती उदास क्यों है ?" तब दूसरी कहने लगी कि-हे सखि ! सुनो, बात इसमें यह है कि सुमुण्डीक के अवतार सूर्यप्रभ आज कल चौथे पाताल रसातल में हैं, अपने रूप से उन्होंने कामदेव को भी लज्जित कर दिया है; सो गुप्त रूप से जाकर इसने अपने तई उन्हें दे दिया। आज रात में यह उनके पास गयी थी सो महल्लिका भी वहाँ आ पहुँची; दोनों में सौतिया डाह से कुछ कहा सुनी हो गयी। सो यह आत्मघात करने पर उतारू हो गई थी पर यह बात उसकी बहिन सुखावती को मालूम हो गई तो उसने इसे बचाया। सो वह घरमें आकर अपनी बहिन के साथ पलंग पर पौढ़ी है और उसकी बहिन ने जब यह वृत्तान्त सुना तो वह भी व्याकुल हो गई; इस प्रकार चेरियों की बात सुन कर मैं घरके भीतर जाकर क्या देखता हूं 'कि दोनों सोई है, दोनों की आकृति, महाराज ! एकही सी है'। प्रभास इस प्रकार एकान्त में कहही रहा था कि उधर से लौट कर प्रहस्त भी पहुँचा, और पूछने पर वह भी इस प्रकार कहने लगा। "देव ! यहाँ से जो मैं महल्लिका के घर गया तो उसी समय वह भी अपनी सखियों के साथ उदास हुई घर में पैठी, मैं भी विद्या के बल से अदृश्य होकर भीतर घुस गया और वहाँ जाकर क्या देखता हूं कि ठीक उसी के समान उसकी १२ सखियाँ वहाँ बैठी हैं। जब यह रत्नजटित पलङ्ग पर बैठी कि वे सब भी इसे घेर कर बैठ गयीं; तब महल्लिका की ओर देख कर एक सखी पूछने लगी "सखि ! तुम अकस्मात् उदास क्यों दिखाई पड़ती हो ? देखो, तुम्हारे तो विवाह

की तैय्यारी हो रही है तो तुम विषाद क्यों कर रही हो ?" जब महल्लिका ने विवाह की बात सुनी तो आश्चर्य्य में आकर सखी से पूछा "आलि विवाह कैसा ? किसके साथ मेरा व्याह होगा, किस ने तुम से यह कहा ? उसके ऐसा कहने पर सब बोल उठीं कि तुम्हारा विवाह कल सबेरे निश्चय होगा, हे सखि ! तुम सूर्य्यप्रभ को दी गई हो । आज जब तुम यहाँ नहीं थीं तबही तुम्हारी माताने हमलोगों से कहा और हमलोगों को सब तयारी करने कह गयी हैं । सो तुम धन्य हो कि सूर्य्यप्रभ तुम्हें पति मिले, जिनके रूप से लुभायके यहाँ की ललनाएँ सुखनींद नहीं सोतीं । सखि ! हमलोगों को तो इस बात की चिन्ता हो गयी है कि अब कहाँ तुम जा पड़ोगी और कहाँ हम रहेंगीं, तुम ऐसा पति पाय कर हमें भूल जाओगी । उनकी बात सुनकर महल्लिका "बोली क्या तुमने उनको देखा है ? और क्या तुम्हारा मन उनपर लुभाय गया है ?" यह सुनकर वे बोली कि हाँ हमलोगों ने अँटारी पर से उन्हें देखा है, और जो लुभाने की पूछती हो तो ऐसी कौन स्त्री है जिसका मन वह हरण न कर लें । यह सुन महल्लिका बोलीं "तो कोई चिन्ता नहीं मैं पिता जी से कहके तुम सभोंका भी व्याह उनसे करवा दूंगी । इस प्रकार हम सब एक साथ रहेंगी और कभी अलग न होंगी ।" उसकी ऐसी बात सुन सब सहम कर बोलीं कि आलि ! ऐसा मत कहना यह लज्जा कि बात है । तब महल्लिका फिर कहने लगी कि भला इसमें अनुचित कौन सी बात है, क्या अकेली मैं ही उन से व्याही जाऊंगी ? जितने दैत्य दानव हैं वे सब अपनी अपनी कन्या उन्हें देंगे, और पृथ्वी पर कितनी राजकन्याएं उनको व्याही हैं; और फिर वह विद्याधरों की बहुतेरी कन्याएं व्याहे होंगे, सो उनके संग यदि तुम्हारा भी व्याह हो जाय तो मेरी क्या हानि है, प्रत्युत हम लोग मिल जुलके सुख से रहेंगी और वे सब सौतिनें ठहरीं उनसे मुझे क्या ? और इस में लाज क्या ? यह सब तो मैं ही न जोगाड़ कर दूंगी" । सो देव ! इस प्रकार आप पर मन लगाये वे सब बातें कर ही रही थीं कि मैं अवसर देख निकल आया । प्रहस्त के मुख से ऐसी बात सुन सूर्य्यप्रभ पलङ्ग पर लेट रहे पर आनन्द के मारे नींद न आई और रात बीत गयी ।

प्रात:काल होने पर राजा सूर्यप्रभ, सुनीथ, मयासुर तथा अपने मन्त्रियों के संग असुराधिराज प्रह्लाद से भेंट करने के लिये उनकी सभा में गये । आदर सम्मान के उपरान्त प्रह्लाद ने सुनीथ से कहा कि मैं अपनी कन्या महल्लिका का व्याह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सूर्यप्रभ से कर देता हूं क्योंकि मुझे उसका दुलार और तुम्हारा प्रिय कुछ तो अवश्य करना चाहिये। यह सुन सुनीथ बड़े प्रसन्न हुए। तब वेदी बना उसपर अग्नि प्रज्वलित की गयी जिसकी प्रभासे वहाँ के रत्न के खम्भे सब चमाचम चमकने लगे। प्रह्लाद ने वेदी पर सूर्यप्रभ को बैठा कर महल्लिका का पाणिग्रहण करा दिया और साथ ही असुर-साम्राज्य से योग्य विभूति भी दहेज में दी। जो उत्तम रत्न देवतों से युद्ध कर के लाये थे मेरु समान उनकी ढेरियां कन्या और जामाता को दीं। तब महल्लिका ढिठाई से बोली "तात! वे जो मेरी १२ सखियां हैं उनको भी आप इन्हें दे दीजिये"। प्रह्लाद ने कहा कि बेटी वे मेरे भाई के अधिकार में हैं क्योंकि वेही उन्हें बन्दी कर लाये हैं मेरा अधिकार नहीं है कि मैं उनका दान कर दूं। विवाहोत्सव समाप्त हो जाने पर, जब दिन बीता और रात आई तब सूर्यप्रभ महल्लिका के साथ शयनागर में गये। वहाँ कामक्रीड़ा कौतुक करके दोनों ने अपने जी की कलक बुझाई।

सवेरे जब प्रह्लाद सभा में अपने इष्टमित्रों के साथ बैठे थे, उसी समय दानवेन्द्र अमील आये और बोले " आज आप सब लोग मेरे घर चलिये, वहाँ सूर्यप्रभ की पहुँनई होगी; यदि आप लोगों की सम्मति हो तो मैं अपनी कन्या कलावती इन्हें व्याह दूं।" यह सुन सभों ने कहा "हां हां बहुत ठीक है"। उसीक्षण सब लोग सूर्यप्रभ तथा मयादि के साथ दूसरे पाताल में गये, वहाँ अमील ने अपनी कन्या कलावती को सूर्य्यप्रभ के हाथ में सौंप दिया परन्तु वह तो पहिलेही अपने तईं सूर्य्यप्रभ को सौंप चुकी थी। सूर्यप्रभ ने विवाह के उपरान्त असुरों के साथ प्रह्लाद के घर भोजनकर वह दिन वहीं विताया।

इसी प्रकार दूसरे दिन दानवेश्वर दुरारोह सबोंको नेवत के अपने पांचवें पाताल में ले गये और वहाँ आतिथ्य कर दूसरों की नाईं उन्होंने भी अपनी कन्या कुमुदावती का विवाह विधिवत् सूर्य्यप्रभ से कर दिया। तब सबके साथ खान-पान करके रात होने पर सूर्य्यप्रभ कुमुदावती के वासगृह में गये और वहाँ नव संगम के लिये उत्सुक उस त्रिलोकसुन्दरी के साथ उन्होंने सुख पूर्वक रात बिताई।

दूसरे दिन सबेरे प्रह्लादिकों के साथ निमन्त्रण दे सूर्यप्रभ को दैत्येन्द्र तन्तुकच्छ अपने वासस्थान सातवें पाताल में ले गये और वहाँ उचित आतिथ्य कर असुरेश्वर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ने तप्त सुवर्ण की आभाके समान अपनी कन्या मनोवती को सूर्य्यप्रभ के साथ व्याह दिया। सो उसी प्रकार सब के साथ सुखपूर्व्वक दिन बिताके सूर्यप्रभ ने मनोवती के साथ रात बिताई।

उसके उपरान्त दूसरे दिन सुमायु नाम असुराधिप सबको नेवता दे अपने स्थान छठें पाताल में लेगये और उचित सत्कार कर उन्होंने भी दूब के समान श्यामाङ्गी रति की मूर्ति अपनी कन्या सुभद्रा का पाणिग्रहण सूर्यप्रभ से करा दिया। उस रात सूर्यप्रभ उस चन्द्रवदनी श्यामा के साथ भोग विलास करते रहे।

दूसरे दिन राजा बलि उसी प्रकार सबको निमन्त्रित कर अपने लोक तीसरे पाताल में ले गये वहाँ भी विधिपूर्व्वक माधवीलता की मञ्जरी के समान कोमलाङ्गी, अपनी कन्या सुन्दरी सूर्यप्रभ को व्याह दी। यहां दिव्य भोगों का भोग करते हुए राजा सूर्यप्रभ ने उस स्त्रीरत्न के साथ अनेक प्रकार के भोग विलास कर दिन बिताया।

अब दूसरे दिवस मयासुर भी उसी प्रकार राजपुत्र को चतुर्थ पाताल में अपने मन्दिर में ले गये वहाँ विचित्र विचित्र रत्नों के प्रासाद बने थे, मयदानव ने अपनी माया से वह मन्दिर बनाया था, चण २ में उसकी शोभा पलटती और प्रतिचण वह नया नया दिखाई पड़ता था, वहाँ ले जाकर मयने भी सुमाया नाम्नी अपनी पुत्री सूर्यप्रभ को व्याह दी, सुमाया की सुन्दरता का वर्णन कहाँ लों किया जाय, जगत् में जितने आश्चर्य हैं मानों वही सब की मूर्ति है और मयासुर की शक्ति मानों अवतार धारण कर आई है। पहिले मय, उन्हें मनुष्य समझके अपनी कन्या नहीं दिया चाहते थे पर कहावत है कि 'देखादेखी पाप देखा देखी पुण्य'। अब सूर्यप्रभ उसके साथ रमण कर कृतार्थ हुए। सूर्यप्रभ अपनी विद्या के बल से अनेक शरीर धारण कर एकही समय में उन सब असुरकन्याओं के साथ रमण करते परन्तु अपने सच्चे शरीर से प्रह्लाद की कन्या प्रियतमा महल्लिका के साथ रहते थे।

एक दिन रात के समय महल्लिका और सूर्यप्रभ एकत्र थे, कलोलें हो रही थीं, अनेक प्रकार की कथा वार्त्ता चल रही थी कि इतने में सूर्यप्रभ ने उससे पूछा "प्रिये, उस दिन रात में जो दो सखियां तुम्हारे साथ गयीं थीं वे कहाँ हैं, मैं उनको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कभी नहीं देखता, वे कहां चली गयीं और वे दोनों कौन थीं?" महल्लिका ने कहा "आर्यपुत्र! भली सुधि दिलाई, वे दो हो नहीं, किन्तु वे बारह हैं, मेरे चाचा उन्हें स्वर्ग से हर लाये हैं। एक का नाम अमृतप्रभा है, दूसरी का केशिनी; ये दोनों पर्वत मुनि की शुभलक्षणी बेटियां हैं, तीसरी का नाम कालिन्दी है, चौथी भद्रिका है; पांचवी सुलोचना दर्पकमाला है; ये तीनों महामुनि देवल की दुहिता हैं। छठीं का नाम सौदामिनी है, सातवीं उज्वला है; ये दोनों हाहा नामक गन्धर्व की कन्या हैं। आठवीं हूहू गन्धर्व की बेटी है उसका नाम पीवरा है, नवीं अञ्जनिका है, यह कालविभु की कन्या है; दशवीं पिङ्गलगण की पुत्री केशवावती है, ग्यारहवीं कम्बलसुता मालिनी है, और बारहवीं वसु की पुत्री मन्दारमाला है। ये सब अप्सराओं से जन्मी हैं सो सब दिव्य स्त्रियां हैं। जब मेरा विवाह हो गया तब वे सब प्रथम पाताल में पहुँचा दी गयीं। मैं इस उद्योग में लगी हूं कि उनका विवाह आप से करा दूं और मैंने उनसे इस बात की प्रतिज्ञा भी की है,—मैं उनको बहुत प्यार करती हूं। मैंने पिता जी से कहा भी था पर उन्होंने भाई के संकोच से ऐसा नहीं किया।" यह सुन सूर्यप्रभ ने धीमे कंठ से कहा कि प्रिये! तुम महानुभावा हो, परन्तु मैं ऐसा कैसे कर सकता हूं। सूर्य्यप्रभ की ऐसी बात सुन महल्लिका को क्रोध आ गया सो वह कहने लगी "मेरे साम्हने ही आप इतने इतने विवाह कर रहे हैं पर मेरी सखियों को नहीं व्याहा चाहते, मैं उनके विना एक क्षण भी सुख से नहीं रह सकती।" तब तो सूर्य्यप्रभ ने प्रसन्न होकर उसकी बात स्वीकार कर ली। तदनन्तर प्रह्लादसुता ने प्रथम पाताल में ले जाके उन बारहों को इनके हवाले किया और सूर्य्यप्रभ ने क्रमानुसार अमृतप्रभा इत्यादि बारहों अप्सराओं का पाणिग्रहण कर उनके साथ रात्रि में भोगविलास किया। प्रातःकाल होने पर महल्लिका की अनुमति से प्रभास के द्वारा भेजकर उन बारहों को चौथे पाताल में छिपवा दिया और आप गुप्तरूप से महल्लिका के साथ जाकर वहीं रमण करते रहे परन्तु पूर्ववत् प्रह्लादही के यहां भोजनादिक क्रिया सम्पादन किया करते थे।

एक दिन सब लोग प्रह्लाद की सभा में बैठे थे कि असुरेन्द्र ने मयासुर और सुनीथ से कहा कि तुम लोग जाकर दिति और दनु देवियों से भेंट कर आओ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

"बहुत अच्छा" कह मय, सुनीथ और चन्द्रप्रभ असुरों के साथ पाताल से निकले, स्मरण करतेही भूतासन नामक विमान आ पहुँचा सो सब लोग उस पर आरूढ़ होकर चल पड़े और कुछ कालोपरान्त सुमेरु पर्वत के ऊपर कश्यप मुनि के आश्रम में पहुँच गये। वहां पहुँचने पर मुनियों ने उनका बड़ा सत्कार किया और उनके आने की सूचना दिति और दनु को जनाई। सब लोगों ने जाकर दोनों देवियों का दर्शन कर उनके चरणों पर अपना २ शिर रख २ प्रणाम किया। असुरों की माताओं ने भी अनुचरवर्गों के साथ उन्हें देखकर बड़े आदर से आंखों में आंसू भर सभों के मस्तक चूमे और आशीष दी; फिर मय से कहा — "पुत्र! तुम्हारे आत्मज सुनीथ को पुनर्जीवित देखकर हमारी आंखें जुड़ाईं हम तुम्हें पुण्यात्मा समझती हैं। सुमुण्डीक को दिव्याकृति और असाधारण-गुणसम्पन्न सूर्य्यप्रभ के शरीर में जन्मा देख इसके भावी उचित अभ्युदय का विचार कर हमारा अन्तरात्मा अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। सो बच्चो! उठो और जाके हमारे पति प्रजापति का दर्शन करो, उनके दर्शन से तुम्हारे कार्य्य की सिद्धि होगी, उनकी आज्ञा से काम करना उसमें तुम्हारा कल्याण होगा।" इस प्रकार उनकी आज्ञा पाय मयादि ने दिव्याश्रम में जाकर कश्यप मुनि का दर्शन किया जिनका वर्ण तप्तशुद्ध-सुवर्ण सा तेजोमय है, जिनके शिर पर अग्निज्वाला के रंग की जटा बँधी है और जो ऐसे दुराधर्ष हैं जैसे कृशानु। महामुनि का दर्शन कर सभों ने उनके चरणों पर झुक झुक के प्रणाम किया, मुनि भी उनको प्रसन्नतापूर्वक आशीष दे, बैठाय सन्तुष्ट हो कहने लगे "हे पुत्रो! आज तुमको देखकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ, मय! तुम्हारी प्रशंसा कहां लों करूँ तुम इसीलिये धन्य हो कि सत्पथ से रञ्चक न हटे, पुत्र! तुम सब विद्याओं के घर हो; बेटा सुनीथ, तुम धन्य हो तुम मर के जो उठे हो; सूर्य्यप्रभ! तुम भी धन्य हो, तुम विद्याधरों के भावी राजा हो। सो हे पुत्रो सदा धर्म्म में तत्पर रहो, मेरी बात सुनो, इसी के प्रताप से परम श्री को प्राप्त कर तुम लोग सदा सुख का भोग करोगे। जिस प्रकार पूर्व में शत्रुओं से तुम्हारी हार हुई थी वैसी अब न हो, देखो धर्म्म का अतिक्रमण करके ही असुर लोग मुरारि के चक्र के आखेट हो गये थे। सुनीथ! जो असुर देवतों से मारे गये थे वेही अब शूर वीर मनुष्य होके जन्मे हैं और जो सुमुण्डीक नामक तुम्हारा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

छोटा भाई था सो यह सूर्य्यप्रभ हुआ है। जो तुम्हारे दुष्टमित्र असुर थे वे इसके बन्धुबान्धव होके जन्मे हैं और जो शम्बर नामक महा-असुर था सो यह मन्त्री प्रहस्त हुआ है, त्रिशिरा नाम का जो असुर था सो इसका सिद्धार्थ नामक मन्त्री हुआ है। वातापी प्रज्ञाढ्य नाम करके मन्त्री हुआ हैं, उलूक नामक जो दानव था सो शुभङ्कर नामक इसका मित्र होके जन्मा है। इसका मित्र जो यह वीतभीति है सो पूर्वजन्म में काल नामक देवारि था, यह जो भास नामक इसका सचिव है सो वृषपर्व्वनामा दैत्य जन्मा है और हे पुत्र! यह जो प्रभास है सो प्रबल नामक दैत्य का अवतार है। उस महानुभाव दैत्य का शरीर रत्नमय था, देवतों से मांगेजाने पर यद्यपि वे शत्रु थे तथापि इसकी कुछ चिन्ता न कर उसने अपना शरीर टुकड़े २ कटवा डाला और आप फिर दूसरे शरीर में जन्मा, उसीसे सब रत्न जगत् में उत्पन्न हुए। उसकी आराधना से भगवती चण्डिका प्रसन्न हुईं, महामाया ने उसे वरदान दिया और दूसरे शरीर की प्राप्ति भी दी। बस उसी वरदान के प्रभाव से वह प्रबल महाबलवान् यह प्रभास हुआ है जिसका जीतना शत्रुओं को बड़ाही कठिन है। पहिले काल में जो सुन्द उपसुन्द नामक दो दानव थे सोही यहां इसके सर्वदमन और भयङ्कर नामक मन्त्री हुए हैं। जो हयग्रीव और विकटाक्ष दो असुर थे सो इसके स्थिरबुद्धि और महाबुद्धि मन्त्री होके जन्मे हैं, और भी जो इसके ससुर, मन्त्री तथा बन्धुबान्धव हैं वे सब पूर्वजन्म के असुर हैं जिनने इन्द्रादि देवों को बहुत बार जीत लिया था। सो तुम लोगों का पक्ष फिर इस प्रकार से धीरे धीरे बढ़ गया है। धैर्य्य रक्खो, धर्म्म से जो न हटोगे तो बड़ी समृद्धि पाओगे।"

इस प्रकार कश्यप ऋषि कह रहे थे कि उनकी अदिति इत्यादि पत्नियां मध्यान्हकाल के होम के समय आ पहुँची मयादिकों के प्रणाम करने पर उन्हें आशीष दे जब पति की आह्निक क्रिया की आज्ञा सम्पादन कर चुकी थीं कि उधर से इन्द्र भी लोकपालों के साथ मुनि के दर्शन निमित्त आन पहुँचे और बड़े आदर से सपत्नीक कश्यप मुनि को प्रणाम कर तथा मयादिकों से प्रणाम पाय सूर्य्यप्रभ की ओर क्रोध से देखकर मय से कहने लगे "मैं समझता हूं कि यही लड़का विद्याधरों का चक्रवर्त्ती राजा हुआ चाहता है; सो यह थोड़ेही में क्यों सन्तुष्ट हुआ है, इन्द्रपद क्यों नहीं लेने चाहता?" यह सुन मय ने उत्तर दिया "देवेश! महा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देव जी ने आपही को इन्द्र बनाया है और उन्होंने इसे विद्याधरों का राजा ठहराया है।" मय की बात सुन मघवा हँस कर क्रोध से बोले कि इसकी ऐसी सुलक्षण आकृति के साम्हने तो वह पद भी अत्यल्प है। यह सुन मय ने कहा कि जब श्रुतशर्म्मा का मुँह विद्याधरों के राजा होने योग्य है तो निस्सन्देह इसकी आकृति इन्द्रपद पाने के योग्य है। इतना सुनतेही इन्द्र आग बबूला हो गये और झट वज्र उठाय मय को मारने चले थे कि कश्यप मुनि ने क्रोध से हुंकार किया और दिति इत्यादि का मुंह क्रोध से लाल हो गया, वे सब इन्द्र को धिक्कारने लगीं। तब तो इन्द्र डरे कि ऐसा न हो कि शाप दे देवें; सो धीरे से वज्र उतार नीचे शिर कर बैठ गये और पत्नी सहित उन देवासुर के जनक कश्यप मुनि के चरणों पर गिर प्रणाम कर, उनको प्रसन्न कराय, हाथ जोड़ उनसे कहने लगे 'भगवन्! मैंने श्रुतशर्म्मा को जो विद्याधरों का अधिराजपद दिया है सो यह सूर्य्यप्रभ उसके छीनने पर अब उतारू हुआ है और मय सब तरह से उसके दिलाने में उद्योग कर रहे हैं" इन्द्र की ऐसी बात सुन दिति दनु के साथ कश्यप मुनि ने कहा 'मघवन्! श्रुतशर्म्मा तुम्हारा प्यारा है और महादेव जी सूर्य्यप्रभ को प्यार करते हैं, उनकी इच्छा तो व्यर्थ होही नहीं सकती. फिर उन्हीं की आज्ञा से मय यह सब कर रहा है, तो तुम मय का क्यों नाम लेते हो, कहो न इसमें मय का क्या दोष है? यह तो धर्म्मपथ पर स्थिर है, ज्ञानी है, सावधान रहता है और सदा गुरुओं की आज्ञा मानता है। यदि तुम ऐसा पाप कर बैठते तो मेरी क्रोधाग्नि तुम्हें भस्म कर डालती, फिर तुम्हारी क्या शक्ति कि तुम इसे हानि पहुँचा सको, क्या तुम इसका प्रभाव नहीं जानते?' पत्नियों के सहित इतना कह मुनि के चुप हो जाने पर इन्द्र ने लज्जा और भय से शिर नीचा कर लिया; तब अदिति बोलीं कि श्रुतशर्म्मा है कैसा तनिक उसको यहां लाके दिखलाओ तो। माता का इतना बचन सुन इन्द्र ने मातलि को भृत्य भेज कर उसीक्षण विद्याधरों के अधीश श्रुतशर्म्मा को बुला मंगाया। श्रुतशर्म्मा ने आके उनको प्रणाम किया, तब कश्यपमुनि की भार्य्याओं ने उनको तथा सूर्य्यप्रभ को देख कर कश्यपमुनि से पूछा कहिये इन दोनों में से कौन सुरूप और सुलक्षण है?" यह सुन मुनि बोले "श्रुतशर्म्मा तो इसके मन्त्री प्रभास के तुल्य हैही नहीं, तो भला इस अनुपम के तुल्य कब हो सकता है। इस सूर्य्यप्रभ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में ऐसे २ दिव्य लक्षण हैं कि जिनसे यदि यह चेष्टा करै तो इस इन्द्रपद भी सुलभ है" कश्यप मुनि की ऐसी बातों का सभों ने समर्थन किया और कहा 'हां ऐसाही है' तब मुनि ने महेन्द्र के सुनते मय को यह वर दिया 'पुत्र! इन्द्र के बज्र उठाने पर भी जो तुम स्थिर बने रहे इससे मैं आशीष देता हूं कि तुम्हारा अङ्ग वज्रमय हो जावे और तुम अजर अमर हो जाओ, और ये दोनों सुनीथ और सूर्यप्रभ भी तुम्हारेही समान पराक्रमी और सदा शत्रुओं के अजेय होंगे। शरत्काल के चन्द्र के समान सौम्य यह मेरा पुत्र सुवासकुमार, जब तुम लोग विपत्ति की रात्रि में इसे स्मरण करोगे, उसी समय पहुँच कर तुम्हारी सहायता करेगा'। इस प्रकार मुनि के बरदान देने पर, उनकी स्त्रियों ने तथा सम्पूर्ण ऋषियों और लोकपालों ने सभा के बीच उन सभों को वरदान दिये। तब अदिति ने इन्द्र से कहा 'पुत्र! उद्धतपना छोड़ो, मय को प्रसन्न करो, नम्रता का फल तुमने देखा न, कि इसने कैसे २ अच्छे वर पाये।' इतना सुन इन्द्र ने मय का हाथ पकड़ उसे सन्तुष्ट किया और सूर्य्यप्रभ से पराभूत होकर श्रुतशर्म्मा, दिन के चन्द्र के समान क्षीणकान्ति हो गये।

दोहा।

इहि विधि गुरुहिं प्रणाम करि तुरतहिँ तब सुरराज।
जेहि विधि आये तौन विधि गवने सहित समाज॥

सोरठा।

मुनिवर आयसु पाय, करि प्रणाम मय आदि सब।
चले अधिक हरषाय, सिद्ध करण हित काज निज॥

तीसरा तरङ्ग।

अब मय, सुनीथ और सूर्य्यप्रभ, तथा और सब लोग कश्यप ऋषि के आश्रम से विदा होके चले और चलते २ चन्द्रभागा और ऐरावती के सङ्गम पर पहुँचे जहां सूर्यप्रभ के मित्र तथा बन्धुबान्धव राजा लोग बैठे उनकी बाट जोह रहे थे। सूर्य्यप्रभ को देखतेही सब राजा लोग रोते हुए उदासमुख आगे आ खड़े हुए,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सबके सब मरने पर उतारू थे। सूर्य्यप्रभ ने जाना कि ये लोग चन्द्रप्रभ के न देखने से व्याकुल हो रहे हैं सो उन्होंने सब वृत्तान्त कह सुनाया। तौभी उनको शोकित देख सूर्यप्रभ ने पूछा कि आपलोग उदास क्यों हैं तब तो सभों ने बड़ी कठिनता से श्रुतशर्म्माकर्तृक उनकी भार्य्याओं का हरा जाना कह सुनाया और यह भी कहा कि इसी हार से हमलोग अपने शरीर त्यागने पर उद्यत हो गये थे सो आकाशवाणी ने हमें ऐसा करने से रोका और कहा कि चिन्ता मत करो कुछ भय नहीं है। यह सुन सूर्य्यप्रभ के क्रोध का ठिकाना न रहा उन्होंने प्रतिज्ञा की कि चाहे ब्रह्मादिक देव भी उसको रक्षा करें तौभी मैं श्रुतशर्म्मा को जड़ से उखाड़ फेकूंगा, दुष्ट कहीं का छिप कर दूसरों की स्त्रियों का हरण करना सीखा है!। इस प्रकार प्रतिज्ञा कर ज्योतिषियों से विजय का मुहूर्त पूछा उन्होंने गिनगुन के बताया कि आज से सातवें दिन अच्छा बनता है। जब मय ने देखा कि सूर्य्यप्रभ श्रुतशर्म्मा के जीतने के लिये चलने की ठान चुके हैं और विजय की तैयारी भी कर रहे हैं तब वह और दृढ़ करके उनसे कहने लगे "यदि आपने सचमुच युद्ध करनाही ठान लिया है, तो मैं आपसे कहे देता हूं कि मैं ही माया दिखाय आपकी प्रिय भार्य्याओं को हरके पाताल में रख आया हूं, मैंने ऐसा इसलिये किया कि इस प्रकार आप बहुत शीघ्र उद्योग करेंगे; क्योंकि आग आपसे आप वैसी नहीं भभकती जैसी कि हवा लगने से धधकती है। आइये पाताल में चलिये वहां आपको प्रियाओं को दिखा दूंगा।" मयासुर की ऐसी बात सुनकर सब लोग प्रसन्न हो गये। उसी प्रथम बिल में घुसकर सब लोग चले, आगे २ मय और पीछे २ दूसरे लोग, चलते २ चौथे पाताल में पहुंचे जहां मयासुर ने एक घर से सूर्य्यप्रभ की मदनसेनादि सब भार्य्याओं को लाके उन्हे सौंप दिया।

तदनन्तर सूर्यप्रभ इन पत्नियों को तथा जिन २ असुर कन्याओं के साथ व्याह किया था उनको लेके मयदानव की सम्मति से प्रह्लाद से भेंट करने गये। वहां मय ने वरप्राप्ति की सब कथा उन्हें कह सुनाई तब प्रह्लाद ने सोचा कि तनिक परीक्षा तो ले लूं, इस विचार से उन्होंने क्रोध से खड्ग निकाल प्रणाम करते हुए सूर्यप्रभ से कहा "रे दुष्ट! मैंने सुना है कि मेरे भाई की लाई हुई बारहों कन्याओं को तू हर ले गया, मैं तुझे मारता हूं देख तो"! इस बात के सुनने से सूर्यप्रभ के मुख

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर तनिक भी भेद न पड़ा, वह प्रह्लाद की ओर मुंह उठा बोले "महाप्रभो! मरा शरीर आपके वश में है, अवश्य मुझ को दण्ड दीजिये क्योंकि मुझ से अपराध तो बन पड़ा।" यह सुन प्रह्लाद हँसकर बोले "बेटा मैंने देख लिया, रंचक मात्र भी तुममें क्रोध नहीं है, वर मांगो, मैं तुष्ट हूं,"। सूर्यप्रभ ने यही वर मांगा कि गुरुजनों में और शम्भु में मेरी भक्ति बनी रहे। यह सुन सब लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए, तब असुरेन्द्र ने अपनी दूसरी कन्या यामिनी सूर्यप्रभ को व्याह दी और सहायता के लिये अपने दो पुत्रों को भी उन्हें दे दिया। तब सब के साथ सूर्यप्रभ अमील के घर गये, उसने भी उनकी वरप्राप्ति की बात सुन अपनी दूसरी कन्या उन्हें व्याह दी और दो पुत्रों को उनकी सहायता के लिये दे दिया। इस प्रकार और २ असुराधिपों को सहायता के लिये उभाड़ते हुए राजा सूर्यप्रभ अपनी प्रियाओं के साथ सुख से उन दिनों को बिताने लगे।

एक दिन सूर्यप्रभ मयासुरादिकों के साथ बैठे थे कि उनको यह सम्वाद मिला कि सुनीथ की तीनों पत्नियां तथा उनको और सब पत्नियां भी जो राजकन्यायें थीं गर्भिणी हैं। जब उनसे सधउर के विषय में पूछा गया तब सभों ने यही कहा कि हम एक बड़ा भारी युद्ध देखने चाहती हैं। इस बात के सुनने से मयासुर को बड़ाही आनन्द हुआ, उन्होंने कहा कि इन गर्भों में वेही राक्षस आये हैं जो पहिले युद्ध में मारे गये थे, यही कारण है कि इनकी ऐसी अभिलाषा हुई है।

इस प्रकार छः दिन बीत गये, सातवें दिन सूर्यप्रभादिक सब लोग अपनी स्त्रियों के साथ रसातल से निकले। शत्रुओं ने उत्पात करके विघ्न डालना आरम्भ किया बस उनने सुवासकुमार का स्मरण किया उन्होंने आतेही सब उत्पातों का नाश कर डाला। तब चन्द्रप्रभ के पुत्र रत्नप्रभ को पृथ्वी के राज्य पर अभिषिक्त कर सब लोग भूतासन नामक विमान पर आरूढ़ हुए। मयासुर की सम्मति से सब लोग पहिले गङ्गा के किनारे तपोवन में विद्याधरों के राजा सुमेरु के यहां गये। सुमेरु ने उन इष्टमित्रों को देखकर उनका बड़ा आदर मान किया, मय ने आद्योपान्त सब वृत्तान्त कह सुनाया, इससे उन्हें महादेवजी की आज्ञा भी स्मरण आगई। वहां सब लोगों ने अपने २ उस देश के रहनेवाले इष्टमित्रों को तथा उनकी सेना को बुला भेजा। सबसे पहिले सूर्यप्रभ के १६ राजपूत साले आये, ये युद्ध के लिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बड़ेही उत्कण्ठित थे क्योंकि मयदानव से इनकी शिक्षा हुई थी। उन हरिभटादि सोलहों राजपूतों में प्रत्येक के साथ दस हजार रथ, और बीस हजार पैदल थे। इनके पश्चात् सूर्यप्रभ के जो दानव साले, ससुर और इष्टमित्र बन्धुबान्धव थे वे सब भी अपनी प्रतिज्ञा पर आ पहुँचे। हृष्टरोम, महामाय, सिंहदंष्ट्र, प्रकम्पन, तन्तुकच्छ, दुरारोह, सुमाय, वज्रपञ्जर, धूमकेतु, प्रमथन, विकटाक्ष दानव तथा और २ भी बहुतेरे राक्षस सातवें पाताल तक के आये। किसी के साथ एक लाख रथ, किसी के साथ ८० हजार, किसी के साथ ७० हजार किसी के साथ ६० हजार और किसी के ३० हजार, और जो सबसे छोटा था वह भी अपने साथ दश हजार रथ लेके आया था। कोई अपने साथ तीन लाख पैदल लाया था, कोई दो लाख, कोई एक लाख, जो सबसे छोटा था वह भी पचास हजार पैदल लेके आया। इसी हिसाब से प्रत्येक हाथी घोड़े भी लाया था। मय और सुनीथ की तो असंख्य सेना आई। सूर्यप्रभ की अपनी सेना अगिनित आ जुड़ी वैसेही वसुदत्त आदि राजाओं की तथा सुमेरु के अपरिमित सैन्य भी आ पहुँचे।

तब मयदानव ने, स्मरणमात्र से आ पहुँचे सुवासकुमार मुनि से सूर्य्यप्रभादि के समक्ष यह प्रश्न किया कि भगवन्! हमलोगों की सेना यहां छितिरबितिर है इससे ठीक २ अटकल नहीं लगता सो अब ऐसी जगह बतलाइये जहां सारी सेना को एक साथ खड़ी कर देख लूं कि सेना कहां तक फैलती है। मुनि ने उत्तर दिया कि यहां से योजन भर दूर पर एक स्थान कलापग्राम करके है सो वहां जाके सब सेनाओं को एकत्रित करके देख लो। मुनि की यह बात सुन सब राजा लोग अपनी २ सेना ले लेकर मय और सुमेरु के साथ कलापग्राम में गये। वहां असुरों की और राजाओं की सेनायें अलग २ खड़ी की गयीं सो सब लोगों ने एक ऊँचे स्थान पर चढ़के उन्हें भली भाँति देख लिया। तब सुमेरु ने कहा कि हमलोगों की अपेक्षा श्रुतशर्म्मा की सेना अधिक है क्योंकि उसके हाथ में एक सौ एक विद्याधरों के अधीश हैं, उनमें से प्रत्येक के अधीन बत्तीस २ राजा हैं, अब उनमें से कुछ एक को फोड़ के मैं तुम्हारी सेना में मिला दूंगा। सो आओ कल वल्मीक नामक स्थान में चलें, कल फाल्गुण की कृष्णाष्टमी महातिथि भी है, सो उस दिन वहां जाने से चक्रवर्त्ती का लक्षण भी मालूम हो जाता है इसलिये विद्या-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धर लोग उस तिथि को वहां बड़ी शीघ्रता से जा रहे हैं। सुमेरु की ऐसी बात सुन लोगों ने नियमानुसार वह दिन बिताया, प्रातःकाल होतेही सब लोग अपने २ दलबल के साथ रथ पर आरूढ़ होकर चले और कुछ देर में वल्मीक नामक स्थान में पहुँच गये। वहां हिमालय की दक्षिण तराई में पड़ाव पड़ा और योद्धाओं के गर्जने से पर्वतराज के कन्दर खोह गूंज उठे। उधर देखा तो बहुतेरे विद्याधराधिप पहिलेही से आ डँटे थे। विद्याधरों के वे राजा लोग कुण्डों में अग्नि प्रज्वलित कर कोई तो होम कर रहे थे, और कोई जप करते थे। सूर्यप्रभ ने भी एक बड़ा भारी कुण्ड बनवाया और उनकी विद्या के प्रभाव से अग्नि उसमें स्वयं प्रज्वलित हो गई। यह देख सुमेरु को बड़ी प्रसन्नता हुई किन्तु दूसरे विद्याधरों के हृदय में डाह उत्पन्न हो गया। इतने में एक सुमेरु से कहने लगा "धिक्कार है सुमेरु! कि तुम विद्याधरेन्द्रत्व छोड़ इस पृथ्वीवासी सूर्यप्रभ के अनुगामी बने हो।" यह सुन सुमेरु ने उसे क्रोध से डांटा। सूर्यप्रभ ने पूछा कि इसका नाम क्या है, तब सुमेरु कहने लगे कि भीम नामका एक विद्याधर है उसकी स्त्री से ब्रह्मा की आंखें लड़ गयी थीं, बस इसी प्रकार यह जन्मा। क्योंकि यह छिपाछिपी ब्रह्मा से पैदा हुआ इसीसे इसका नाम ब्रह्मगुप्त पड़ा, और इसीसे जैसा यह है वैसी बातें बोलता है। इतना कह सुमेरु ने भी एक वह्निकुण्ड बनाया और उनके साथ सूर्यप्रभ ने भी अग्नि में हवन किया।

इधर सब लोग हवन में लीन थे कि उधर पृथ्वी पर बिल से महा भयङ्कर एक बड़ा भारी अजगर निकला। उसे देखतेही वह विद्याधराधीश ब्रह्मगुप्त, जिसने सुमेरु को दुत्कारा था मारे अहङ्कार के उस अजगर को पकड़ने चला। इतने में अजगर ने ऐसा फुफकार छोड़ा कि ब्रह्मगुप्त सूखे पत्ते की नाईं सौ हाथ पर जा गिरा। तब विद्याधरेश्वर तेजप्रभ उसे पकड़ने आया उसने उसी प्रकार उसे भी उड़ा दिया। तब विद्याधराधीश दुश्दमन गया, वह भी फुफकार से उसीकी नाईं फेंका गया। तदनन्तर खेचरेन्द्र विरूपशक्ति चला वह भी फुफकार से तृणवत् दूर फेंक दियागया। इसके उपरान्त अङ्गारक और विजृम्भक दो राजा एक साथ दौड़े परन्तु अजगरने अपने निःश्वास से उन्हें भी दूर फेंक दिया। इस प्रकार सब विद्याधर क्रम २ से गये और उसने सबों को उसी तरह अपनी फुफकार से उड़ा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिया। गिरने से सबके अङ्ग चूर २ हो गये, विचारे किसी २ प्रकार उठे। तब श्रकड़के श्रुतशर्म्मा भी उसे पकड़ने चले उन्हें भी उस अजगर ने फुफकार से उड़ा फेंका, वह थोड़ीही दूर पर गिरे थे अत: उठके फिर दौड़े सो अबकी उसने और जोर से फूंका कि बड़ी दूर पर जा गिरे और उनका अङ्ग भङ्ग हो गया, किसी तरह उठे। तब सुमेरु ने उसके पकड़ने के लिये सूर्यप्रभ को भेजा। यह देख सब विद्याधर चुहुल करने लगे कि देखो यह भी अजगर पकड़ने चले हैं। अहो! ये बन्दर के समान विचारशून्य मनुष्य दूसरों की नकल करने चले हैं। इस प्रकार कह २ वे विद्याधर सूर्यप्रभ की हँसी करने लगे। वे इस प्रकार ठट्ठे उड़ाही रहे थे कि सूर्यप्रभ ने उस अजगर को पकड़ के बिल से निकालही तो लिया। तुरत वह अजगर तरकस हो गया, आकाश से सूर्यप्रभ के ऊपर फूल बरसने लगे और यह आकाशवाणी हुई कि "हे सूर्यप्रभ! यह सिद्ध अक्षय, तूणरत्न तुम्हारा है, इसे ले लो" यह सुन सब विद्याधर फक्क हो गये, सूर्यप्रभ ने उस तरकस को ग्रहण कर लिया; मयासुर सुनीथ तथा सुमेरु मारे आनन्द के फूले न समाये।

विद्याधरों के सैन्य सहित श्रुतशर्म्मा के चले जाने पर उनका दूत आकर सूर्य्य-प्रभ से कहने लगा 'महाप्रभो! श्रुतशर्म्मा यह आज्ञा देते हैं कि यदि जीवन की इच्छा हो तो तरकस मुझे दे दो।' दूत के मुख से ऐसी बात सुन सूर्य्यप्रभने उत्तर दिया कि 'दूत! तुम जाकर कह दो कि आपका शरीरही मेरे वाणों का तरकस बन जायगा फिर यह तरकस लेकर क्या करियेगा।" दूत के ऐसा प्रत्युत्तर लेके चले जाने पर श्रुतशर्म्मा की ऐसी उग्र कहनूति पर सब लोग हँसी करने लगे। इसके उप-रान्त सुमेरु ने सूर्यप्रभ को आलिङ्गन कर कहा कि मुझे जो आनन्द हुआ है सो उसका क्या बखान करूँ, यह बड़े भाग्य की बात है अब निश्चय ही शम्भु भगवान् का वचन फलित हुआ। इस तूणरत्न के मिल जाने से अब चक्रवर्त्तीपद आपका रक्खा है, सो अब चलिये निर्द्वन्द्व हो धनुषरत्न को सिद्ध करिये।"

सुमेरु की इतनी बात सुन आगे २ तो वे और पीछे २ सूर्यप्रभादि सब लोग चले, चलते २ हेमकूट पर्वत पर गये, उसके उत्तर बगल में मानसरोवर पर पहुँचे जो ऐसा भासता था कि जब ब्रह्मा समुद्र बनाने चले थे तो यह उनका प्रथम कौशल था। जहां स्वर्ग की अप्सरायें जल में कलोल कर रही हैं उनके मुखारविन्द

की छाया जल पर पड़ने से ऐसा प्रतीत होता था मानो सुवर्ण के फूले कमल वायु से लहरा रहे हैं। इस प्रकार सब लोग उस सरोवर की शोभा निरख रहे थे कि उधर से श्रुतशर्म्मा इत्यादि भी आ पहुँचे। वहां सूर्यप्रभ और वे लोग भी घी और कमल का होम कर रहे थे कि इतनेही में उस सरोवर से अकस्मात् एक घनघोर घटा उठी, देखते २ बादल सारे आकाश में घिर गया। मूसलाधार पानी बरसने लगा और उसी वर्षा के बीच मेघ से एक काला नाग गिर पड़ा। सुमेरु ने सूर्य-प्रभ से कहा कि इसे उठा लीजिये, सो उन्होंने बड़ी दृढ़ता से उसे पकड़ लिया, यद्यपि उसने उन्हें बहुतेरा काटा भी, परन्तु पीछे वह नाग धनुष हो गया। उसके धनुष हो जाने पर, आकाश से फिर एक दूसरा नाग गिरा। उसकी विषाग्नि से व्याकुल हो सब विद्याधर भाग चले। सूर्यप्रभ के पकड़ लेतेही वह भी पहिले की नाईं प्रत्यञ्चा बन गया और बादल तुरत विलाय गये। तत्पश्चात् सूर्य्यप्रभ के ऊपर पुष्पवृष्टि होने लगी और यह आकाशवाणी हुई कि हे सूर्य्यप्रभ! यह अमित बल सिद्ध तुम्हारा धनुष है, और यह अच्छेद्य प्रत्यञ्चा है सो इन दोनों रत्नों को ग्रहण करो। तब सूर्य्यप्रभ ने प्रत्यञ्चा सहित उस धनुषरत्न को ले लिया। सूर्य्यप्रभ तथा मयासुर इत्यादि बड़े प्रसन्न हुए, पर श्रुतशर्म्मा यह तमाशा देख उदास हो अपने अनुचरवर्ग के साथ तपोवन में चले गये।

लोगों ने सुमेरु से धनुष की उत्पत्ति पूछी तब वह कहने लगे कि यहां पर पतले २ बांसों का एक बड़ा और दिव्य जङ्गल है, वहां से जितने बांस काट के इस सरोवर में डाले जाते सबके बड़े और दिव्य धनुष बन जाते हैं। ऐसे २ धनुष पहिले समय में देवते, दैत्य, गन्धर्व तथा विद्याधरों ने बना लिये हैं। उनके नाम भिन्न २ हैं परन्तु जो चक्रवर्त्तियों के होते हैं वे अमितबल कहलाते हैं सो देवों ने इसमें फेंक दिये थे, सो जो पुण्यात्मा लोग चक्रवर्त्ती होनेवाले होते हैं वे भगवान् शङ्कर के प्रसाद से ऐसेही ऐसे उद्योगों से उन्हें प्राप्त करते हैं। सूर्य्यप्रभ को तो यह महत् धनु मिल गया अब इनके साथी भी अपने २ योग्य धनु प्राप्त करें क्योंकि ये वीर सिद्धविद्य हैं, और इसीसे उनकी योग्यता भी रखते हैं फिर वे भव्यों के लिये सिद्ध होतेही हैं। सुमेरु की ऐसी बात सुन सूर्य्यप्रभ के सहचर प्रभास इत्यादि कीचकवन की ओर चले गये, वहां के रक्षक राजा चण्डदत्त को जीतकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बहुत से बांसों को लाकर उस सरोवर में डाल, तीर पर बैठकर उपवास करके जप और होम करने लगे, सो सात दिन में उन वीरों के भी धनुष सिद्ध हो गये।

जब सब लोगों ने आकर धनुषप्राप्ति का हाल सूर्यप्रभ को कह सुनाया तब वह उनके तथा मयादिकों के साथ सुमेरु के उस तपोवन में गये, वहां सुमेरु ने कहा कि आपके मित्रों ने वेणुवन के राजा चण्डदत्त को जीत लिया; यह बड़ेही आश्चर्य की बात है क्योंकि वह राजा अजेय है । उसके पास मोहिनी विद्या है इसीसे उसका जीतना कठिन है, पर जान पड़ता है कि किसी विशेष शत्रु के लिये उसने वह विद्या रख छोड़ी है इसीसे आपके मित्रों पर न चलाई क्योंकि एक बार चला देने से फिर तो वह बेकाम हो जाती । एक बार उस विद्या का प्रभाव देखने के लिये उसने अपने गुरुही पर उसका प्रयोग किया था, इससे गुरु ने शाप दे दिया कि बस इससे एकही बार काम चलेगा, यह बार २ फल न देगी। यह विषय विचारणीय है, क्योंकि विद्याओं का प्रभाव बड़ा कठिन होता है, सो इसका कारण आप भगवान् मय से पूछ लें, उनके आगे मैं क्या कहूं, भला सूर्य के आगे दीपक क्या है । जब सुमेरु सूर्यप्रभ से इतना कह चुके तब मय ने कहा कि सुमेरु का कहना बहुत ठीक है, अच्छा सुनिये संक्षेप में मैं इसका कारण बतलाये देता हूं—

अव्यक्त से सम्पूर्ण शक्तियां और अनुशक्तियां उत्पन्न होती हैं, तहां अनुस्वार से द्योतित नाद (शब्द) प्राण (श्वास) शक्ति से निकला (निकलता है) । वही जब परमतत्व की कला से युक्त हो जाता है तब विद्यादि में मन्त्र हो जाता है। तब ज्ञान, तप, अथवा सिद्धों की आज्ञा से उन मन्त्रविद्याओं का प्रभाव दुरतिक्रम हो जाता है अर्थात् उसका पार पाना कठिन होता है । सो हे पुत्र ! सूर्यप्रभ तुम्हें सब विद्यायें प्राप्त हो गयो हैं केवल दो की कसर है अर्थात् अबलों तुमने मोहिनी और परिवर्त्तिनी विद्यायें नहीं पायी हैं । याज्ञवल्क्य मुनि उन विद्याओं को जानते हैं सो उनके पास जाके मांगो । इस प्रकार मय की बात सुन सूर्यप्रभ महर्षि याज्ञवल्क्य के पास गये । मुनि ने उन्हें सात दिन भुजगह्रद (सांपों की झील) में रखा, पीछे तीन दिन अग्नि के बीच में तपस्या कराई। मुनि ने उन्हें सात दिन तक सांपों का डँसना सह लेने पर मोहिनी, और तीन दिन लों आग में रहने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर परिवर्त्तिनी विद्यायें सिखा दीं। जब वह दोनों विद्यायें पा चुके तब मुनि ने अग्निकुण्ड में फिर पैठने की आज्ञा दी, उन्होंने वैसाही किया, तत्क्षण उनके समक्ष एक महापद्म विमान आ पहुँचा जिसको आकाश में जिधर चाहें ले जा सकते हैं, वह विमान नाना प्रकार के रत्नों से बना तथा एक सौ आठ पह्नों से विभूषित था और उतनेही उसमें घर भी थे। इसके उपरान्त अन्तरीक्ष से यह वाणी हुई कि यह चक्रवर्त्ती के योग्य विमान भी तुमको मिला। इसके घरों में तुम अपनी भार्य्याओं को रखना इनमें रहने से तुम्हारे शत्रु उनका कुछ भी न कर सकेंगे। तब उन्होंने प्रणाम कर अपने गुरु याज्ञवल्क्य से निवेदन किया कि महाराज कहिये गुरुदक्षिणा क्या दूं? मुनि ने कहा "अपने अभिषेक के समय हमको स्मरण करना बस यही हमारीदक्षिणा है, अब तुम अपनी सेना में जाओ।" मुनि का ऐसा वचन सुन उन्हें प्रणाम कर सूर्य्यप्रभ उस विमान पर बैठे और बात की बात में सुमेरु के तपोवन में अपने सैन्य के पास जा पहुँचे। विद्या और विमान के सिद्ध होने की बात सुनकर सुनीथ सुमेरु और मयादि बड़े प्रसन्न हो सूर्य्यप्रभ को बधाई देने लगे।

अब सुनीथ ने सुवासकुमार को स्मरण किया तो वे तत्क्षण आ पहुँचे और सब राजाओं के सहित मयादि से कहने लगे "सूर्य्यप्रभ को सब विद्यायें सिद्ध हो गईं, विमान भी मिल गया सो आप लोग शत्रु के जीतने में अब भी क्यों उदासीन हैं?" यह सुन मय बोले 'भगवन्! आपका कहना बहुत ठीक है, किन्तु पहिले दूत भेजना उचित है, क्योंकि यह नीति है।' मयासुर की यह बात सुन वह मुनिपुत्र बोले 'हां, क्या चिन्ता, प्रहस्त को भेजिये, यह पारखी, सुवक्ता और समय तथा कार्य्य के अनुसार काम करनेवाला है, कर्कस और सहिष्णु तथा दूत के गुणों से युक्त भी है।' उनका बचन सुनकर सभों ने समर्थन किया फिर सन्देशा दे श्रुतशर्म्मा के पास प्रहस्त को दूत रुप से भेज दिया।

प्रहस्त के चले जाने पर सूर्यप्रभ ने अपने साथियों से कहा कि सुनिये मैंने एक अनूठा स्वप्न देखा है। बहुत थोड़ी रात बाकी रही होगी, उस समय मैं क्या देखता हूं कि जल का एक बड़ा भारी वेग हमलोगों को बहा ले गया है, हमलोग बहते २ नाचते चले जाते हैं पर डूबते नहीं हैं। इतने में हवा उलटी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वही और बहाव का वेग फिरा, तब एक दीप्तिमान् पुरुष ने आकर हमलोगों को निकाल के अग्नि में डाल दिया पर वहां भी हमलोग नहीं जले । इसके उपरान्त आकाश में मेघ घिर आये और लोहू की वर्षा होने लगी; सब दिशायें रुधिर से भर गईं । इतने में मेरी नींद टूटी और रात भी बीत गयी ।' इस प्रकार का स्वप्न सुन सुवासकुमार बोले "स्वप्न तो अभ्युदय बतलाता है परन्तु पहिले परिश्रम (युद्ध) है; जो जल का बहना देखा वह तो संग्राम है; जो न डूबना और नाचना है वह धीरज है; जो पवन चला और वेग फिर गया, वह कोई शरण्यरक्षक हैं; जो दीप्तिमान् उद्धार करनेवाला पुरुष है सो साक्षात् शङ्कर भगवान् हैं । जो आग में फेंके गये हो सो फिर घोर युद्ध है; और जो बादल का उठना है उसका तात्पर्य्य फिर भय का होना है; जो लहू की वृष्टि है, सो भय का नाश है। दिशाओं का जो लहू से भर जाना है उसका यह अभिप्राय है कि चारो ओर से सम्पत्ति मिलेगी । स्वप्न कई तरह के होते हैं जैसे अन्यार्थ, यथार्थ और अपार्थ; अन्यार्थ वह है जो तुरत फल दे; यथार्थ वह, जिस में देवतादि प्रसन्न हो कुछ कहें; अपार्थ स्वप्न वह है जो दिन भर की चिन्ता और ध्यान स्वप्न में दिखाई दें । जब मनुष्य निद्रा के वश हो जाता है उस समय मन में रजोगुण के समावेश से बाहिरी चिन्ता दूर हो जाती है तब कई कारणों से स्वप्न दिखाई देते हैं । शीघ्र फल देना अथवा विलम्ब से, यह समय पर स्थिर है जैसा समय होगा उतनेही दिन लगेंगे पर क्योंकि यह स्वप्न रात्रि के बीतते बीतते देखा गया है इससे बहुत शीघ्र फल देगा"। मुनिकुमार से इस प्रकार स्वप्न का फल सुन सूर्य्यप्रभ इत्यादि बड़े प्रसन्न हुए फिर उठकर दिनकृत्य करने लगे ।

इतने में श्रुतशर्म्मा के यहां से प्रहस्त लौट आया, और भय इत्यादि के पूछने पर यों कहने लगा, "यहां से ताबड़तोड़ मैं त्रिकूट पर्व्वत पर बसी हुई सुवर्ण की बनी त्रिकूटपताका नगरी में चला गया, वहां पहुँच के द्वारपाल से सूचना भेजकर भीतर जाकर देखता क्या हूं कि विद्याधरों से घिरे हुए श्रुतशर्म्मा बैठे हैं, उनके पिता त्रिकूटसेन भी वहीं विद्यमान थे, तथा विक्रमशक्ति, धुरन्धर, तथा और २ भी कईएक शूर उपस्थित थे, वहीं दामोदर भी थे । मैं बैठ गया और श्रुतशर्म्मा से कहने लगा कि श्रीमान् महाप्रभु सूर्य्यप्रभ ने मुझे आपके पास भेजा है और यह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सन्देशा कहा है कि भगवान् धूर्जटि के प्रसाद से नाना विद्याएँ, भार्य्याएँ और सहायक मुझे मिल चुके हैं, सो आओ अपने सब विद्याधर सर्दारों के साथ मेरे सैन्य में मिल जाओ, मैं विरोधियों का नाशक और नम्रों का रक्षक हूं। सुनीथ की कामचूड़ामणि नाम्नी आगम्या कन्या को जो उसके भाई बन्धुओं से छुड़ा के हर ले गये हो, उसे छोड़ दो, यह बात अच्छी नहीं है।" सो जब मैं इतना कह चुका तब वे सब क्रोध कर बोले 'यह कौन है जो अहङ्कार से हमलोगों के पास ऐसा सन्देशा भेजता है?' मर्त्यों के बीच रह ऐसी आज्ञा भेजे, विद्याधरों पर उसका क्या अधिकार है, साधारण मनुष्य होके इतनो हांकता है तो अवश्य मरने पर उतारू है। यह सुनकर मैंने कहा "क्या, क्या कहा? वह कौन है? सुनो मैं बतलाता हूं वह जो हैं, वह महादेवजी से आपलोगों के चक्रवर्त्ती ठहराये गये हैं। यद्यपि वह मर्त्य हैं, तो मर्त्यों ही ने देवत्व प्राप्त किया है, विद्याधर उन मर्त्यों का पराक्रम देखही चुके हैं, और जो मरने की बात कही, तो उनके यहां आने पर कदाचित् आपही लोगों का नाश होगा।" इतना जब मैं कह चुका तब सारी सभा क्रोध से खड़बड़ा उठी और श्रुतशर्म्मा तथा धुरन्धर मुझे मारने दौड़े, मैं भी डँट गया और बोला, 'आओ तुम्हारा भी बल देख लूं', इतने में दामोदर ने उठके यह कहकर उनको बर्जा कि शान्त हो, ब्राह्मण और दूत का बध करना उचित नहीं है। तब विक्रमशक्ति ने मुझसे कहा कि 'दूत! तुम जाओ, तुम्हारे स्वामी के अनुसार हमलोग भी महादेवजीही के बनाये हैं, सो वह प्रसन्नतापूर्व्वक आवें तब हमलोग देख लेंगे कि उनकी पहुनई हमलोग कर सकते हैं या नहीं।' इस प्रकार उसके गर्वीले बचन सुन मैंने हँसकर कहा कि हां! कमलबन में हंस तभी तक मौज से कलरव करते हैं जबतक कि आकाश को घेर लेनेवाले मेघ को आते नहीं देखते। इतना कह मैं अवज्ञापूर्व्वक उठ खड़ा हुआ और सभा से बाहर निकल यहां चला आया।' प्रहस्त की इतनी बात सुन मय इत्यादि सब लोग सन्तुष्ट हुए।

अब युद्ध की तयारी होने लगी, रणदुमर्द प्रभास सेनापति ठहराये गये, तदुपरान्त सूर्य्यप्रभादि सब सुवासकुमार से रणदीक्षा में दीक्षित हो, उनकी आज्ञा से नियमव्रत करने लगे। रात के समय सूर्य्यप्रभ व्रत का अनुष्ठान किये हुये एक घर में सोये थे, नींद तो आई न थी, क्या देखते हैं कि एक अपूर्व सुन्दरी कन्या उस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

घर में आई है। मन्त्री तो सब सो गये थे पर सूर्यप्रभ गुम्मी साधे पड़े हुये थे सो वह उनके निकट जाकर अपनी साथ की सखी से कहने लगी "देखो सखि! इस समय यह विश्राम करके सो रहे हैं सो जब इस सोते समय इनकी ऐसी शोभा है तो जब जागते रहते होंगे तब कैसी छवि होती होगी! अच्छा! इनको जगाना उचित नहीं है, नेत्रों का कौतुक तो पूरा होही गया अब अधिक हृदय लगाना क्या? श्रुतशर्म्मा के साथ इनका युद्ध होगा, सो कौन जाने किसका क्या होगा। समर आता है शूरों के प्राण लेने को, भगवान् करें कि उसमें इनका कल्याण हो, तो फिर देखा जायगा। यह तो आकाश में घूमते २ कामचूड़ामणि को देखही चुके हैं तो मुझ सी कब इनके हृदय को मोह सकती है?" उसकी ऐसी बात सुन सखी बोली 'शोभने! ऐसा क्यों कहती हो, तुम्हारा हृदय क्यों इनमें नहीं लग सकता? देखो देखते मात्रही इन्होंने कामचूड़ामणि का चित्त चुरा लिया सो यह किस स्त्री का मन हरण नहीं कर सकते चाहे वह साचात् अरुन्धतीही क्यों न हो। क्या तुम अपनी विद्या के बल से युद्ध में इनका कल्याण नहीं जान सकती हो? सिद्ध लोग कहते हैं कि जब यह चक्रवर्ती राजा होंगे तब सगोत्रा कामचूणामणि, सुप्रभा और तुम इनकी भार्या होगी और अभी यह सुप्रभा का तो पाणिग्रहण करही चुके हैं। सो क्या युद्ध में इनका कभी पराजय हो सकता है? सिद्धों का बचन मिथ्या नहीं होता। सो जब सुप्रभा ने इनका चित्त मोह लिया तो तुम कब नहीं हर सकती हो तुम तो उससे कहीं सुन्दर हो। बन्धु बान्धवों के बिचार से यदि तुम्हारे मन में कुछ सङ्कल्प बिकल्प हो तो वह भी ठीक नहीं, क्योंकि सती स्त्रियों का, पति के अतिरिक्त कोई बन्धु नहीं है।" सखी की ऐसी बात सुन वह बराङ्गना बोली "सखि! तुम्हारा कहना ठीक है। बान्धवों से मुझे क्या? मैं अपनी बिद्या के बल से जानती हूं कि संग्राम में आर्य्यपुत्र का जय होगा; यह सब रत्न और विद्या पा चुके हैं पर अबलों इन्होंने ओषधियां नहीं सिद्ध की हैं, इसी से सखि, मेरा मन खिन्न है। चन्द्रपाद पर्वत की गुफाओं में वे ओषधियां हैं पुण्यात्मा चक्रवर्ती ही उन्हें पा सकते हैं। सो यह आजही यदि जाकर उन्हें सिद्ध करें तो बहुत उत्तम हो क्योंकि कलही तो महायुद्ध होनेवाला है।" यह सुन नकली नींद छोड़ सूर्य्यप्रभ झट उठ खड़े हुए और उस कन्या से विनयपूर्वक पूछने लगे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

"मुग्धाक्षि ! तुम्हारी बड़ी कृपा मुझ पर है मैं अभी वहां जाता हूं, पर यह तो बतलाओ कि तुम हो कौन ?" 'इतना सुनतेही वह यह सोच कर लाज के मारे चुप हो गयी कि इन्होंने सब सुन लिया; किन्तु उसकी सखी बोली "यह विद्याधरेन्द्र सुमेरु की भतीजी है। इसका नाम विलासिनी है, आपके देखने को इसे बड़ी लालसा थी।" सखी के ऐसा कहने पर वह बोली 'आओ अब चलें' इतना कह वह चली गयी।

तब सूर्य्यप्रभ ने प्रभासादि अपने मन्त्रियों को जगाया और उस कन्या की बात लाई औषधि साधनकी बात उन्हें कह सुनाई और काम पूरा करने के लिये प्रहस्त को योग्य समझ, मय, सुनीथ और सुमेरु के पास वृत्तान्त कहने को भेज दिया। जब सबलोगों ने आकर उसका समर्थन किया तब सूर्य्यप्रभ अपने मंत्रियों के साथ रातही मे चन्द्रपाद पर्वत की ओर प्रस्थित हुए। वे लोग चले जा रहे थे कि यक्ष, गुह्यक और कूष्माण्ड नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र लिये मार्ग रोक के खड़े हो गये। बहुतों को शस्त्रों से मोहित कर, अनेकों को विद्या से स्तम्भित कर सूर्य्य-प्रभादि सबलोग चन्द्रपाद गिरि पर पहुंच गये। जब ये लोग गुफा के द्वारपर पहुंचे तो श्रीशङ्कर के विचित्र मुंह के गण आकर इन्हें भीतर जाने से रोकने लगे। तब सुवासकुमार ने सूर्यप्रभादिकों से कहा कि इनके साथ युद्ध न करना चाहिये, नहीं तो भगवान् हर कुपित हो जावेंगे; सो आओ हमलोग उनके आठहजार नामों से उन्हीं वरदाता की स्तुति करें इसी उपाय से उनके गण प्रसन्न होजावेंगे। सबलोगों को यह बात भाई सो वे लोग भगवान् शङ्कर की स्तुति करने लगे। स्वामीकी स्तुति सुन गणलोग प्रसन्न हो बोले "हमलोगों ने गुफा खाली कर दी तुमलोग आकर औषधियां लेओ, परन्तु सूर्य्यप्रभ इसमें न आवें, प्रभास आवें, इनके लिये कुछ रुकावट नहीं है"। गणों को यह बात सभों ने स्वीकार की और प्रभास उस गुहा में घुसा। उसके पैठतेही वह अन्धेरी गुहा प्रकाशित होगयी और चार महा-घोर रूप राक्षस, जो वहां चौकसी के लिये नियत थे, उठके सिर नवाय बोले "आइये"। तब प्रभास ने भीतर जाय दिव्य सातों महौषधियों को ले लिया और बाहर आके सब औषधियां सूर्य्यप्रभको दे दीं। साथही यह आकाशवाणी हुई "हे सूर्य्यप्रभ! इन औषधियों का बड़ा प्रभाव है सो आज से ये सातों भी तुम्हें सिद्ध (प्राप्त)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होगयीं ।" यह आकाशवाणी सुन सूर्य्यप्रभ इत्यादि बहुत प्रसन्न हुए और चलके शीघ्रही सुमेरु के आश्रम पर अपने सैन्य में आ पहुंचे।

सब समाचार सुनने के उपरान्त सुनीथ ने सुवासकुमार से पूछा "कहिये मुनिजी ! गणों ने उस गुहा में प्रभास को क्यों जाने दिया और सूर्य्यप्रभ को नहीं ? फिर वहां के नौकरों ने प्रभास का इतना आदर क्यों किया ?" सुनीथ की इतनी बात सुन मुनिने उत्तर दिया 'सुनो मैं इसका भेद बतलाता हूं, प्रभास सूर्य्यप्रभका बड़ा हितकारी है अधिक क्या कहूं सूर्य्यप्रभ का आत्मरूप है इनदोनों में रंचक भेद नहीं है। फिर बात यह है कि प्रभास के समान शूर और प्रभावी दूसरा कोई नहीं है और वह गुहा, पूर्व्वजन्म के पुण्यों से प्रभासही की है। सुनिये पूर्व्व जन्म में यह जैसा था, सो कथा आपलोगों को सुनाता हूं।"

पूर्व्वकाल में एक बड़ा उत्तम दानव नमुचि नाम करके था, वह महावीर ऐसा दानी था कि शत्रुही क्यों न हो पर यदि वह जो कुछ मांगे तो यह अवश्य उसे वह चीज दे देता। दश सहस्र वर्ष तक उसने केवल धूआं पीकर तपस्या की तब ब्रह्मा ने उसे बरदान दिया कि लोहे, काष्ठ वा पत्थर से तेरी मृत्यु न होगी। उसने कईबार इन्द्रको जीतकर उन्हें इन्द्रलोक से भगा दिया था तब कश्यप ऋषिने काह सुनके देवों के साथ मेल करा दिया। वैर शान्त होजाने पर देव और असुरों ने आपस में सलाह की और क्षीरसागर में जाकर मन्दराचल से उसको मथा। उस समय विष्णु तथा और २ अमरों ने लक्ष्मी तथा और जो कुछ निकला बांट लिया; नमुचि ने उच्चैः श्रवा नामक घोड़ा पाया, तथा और २ सुर और असुरों ने जो कुछ उसमें से निकला ब्रह्माकी आज्ञा से बांट लिया। अन्त में मथते २ अमृत निकला सो देवों ने छीन लिया, तब देवतों और असुरों में फिर से वैर खड़ा हुआ, दोनों में युद्ध होने लगा; उस समय जो २ राक्षस अमरों से मारे गये उच्चैः श्रवा ने तत्क्षण उन सभों को सूंघ २ के जिला दिया। जब देवतों को दैत्य और दानवों का जीतना कठिन होगया, तब इन्द्र को उदास देख बृहस्पति ने उनसे कहा कि बस अब एकही उपाय बाकी है सो झटपट करो, नमुचि के पास स्वयं जाकर वह उत्तम घोड़ा मांग लो। तुम शत्रुको वह घोड़ा न दे ऐसा कभी न होगा; आजन्म से जो दानीपने का पण रखता आया है वह कभी अपना व्रत खण्डित न करेगा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवगुरु की ऐसी बात सुन, देवतों के साथ जाके इन्द्रने नमुचि से उच्चैःश्रवा घोड़े को माँगा। यह सुन उदारचेता नमुचि विचारने लगा कि "आजतक कोई अर्थी मेरे यहां से विमुख नहीं गया और यह तो स्वयं इन्द्र हैं, सो मैं नमुचि होके इन्हें यह घोड़ा क्यों न दे दूं। सम्पूर्ण जगत् में जो मैं दानी कहके प्रसिद्ध हूं और यह जो मेरी कीर्त्ति चली आ रही है सो वही यदि चली गयी तो मेरे जीने से क्या?" इतना सोच दानवीर नमुचि ने इन्द्रको उच्चैःश्रवा घोड़ा दे दिया, शुक्राचार्य्य रोकते ही रहगये पर उसने एक न मानी। तब इन्द्र ने घोड़ा पाय, उसे विश्वास देके भी अपने बज्र के ऊपर गङ्गा का फेन लगाय उसे मारडाला क्योंकि वह तो जानते थे कि यह शस्त्र से न मरेगा। हा! संसार में भोगतृष्णा भी कैसी वलवती है कि जिसके वश में पड़के देवता लोग भी अनुचित कर्म्म और अकीर्त्ति से नहीं डरते!! जब नमुचि की माता दनुको यह खबर लगी तब शोकसन्तप्त हो तपोवल से शोकशान्ति के लिये उसने यह सङ्कल्प किया कि वही बलवान नमुचि फिर मेरे गर्भ से उत्पन्न हो और युद्ध में सब देवों का अजेय होवे। तब वह दनु के गर्भ में आके फिर सर्वरत्नमय असुर होके जन्मा और बड़ा बली हुआ इससे उसका नाम प्रबल पड़ा वह भी तपस्या करके सिद्ध हुआ और अपने प्राणों से भी अर्थियों को सन्तुष्ट करके बड़ा धर्म्मिष्ट हुआ। दानवेश्वर प्रबल ने सौ बार इन्द्रको जीत लिया। तब फिर सब देवों ने सलाह कर जाकर उससे मागा कि हमलोग पुरुष मेध यज्ञ किया चाहते हैं सो आप अपनी देह हमें दीजिये। यह सुन उसने अपना शरीर उन्हें दे दिया और इसका बिचार न किया कि ये शत्रु हैं। ठीक है, उदार लोग अपने प्राण दे देते पर अर्थियों को बिमुख नही फेरते हैं। तब देवों ने उस दानव को टुकड़े २ कर डाला सो वही प्रबल अब मनुष्यलोक में प्रभास होके जन्मा है। इस प्रकार यह प्रभास पहिले नमुचि था, तब प्रबल हुआ, अपने पुण्य प्रताप से यह शत्रुओं से अजेय है। औषधिवाली गुफा प्रबल की थी, इसी से वह प्रभासकी अपनी होने से अपने नौकर चाकरों के साथ इसके वश में है। उसी गुहा के नीचे पाताल में जो प्रबल का मन्दिर है वहां इसकी बारह प्रधान भार्य्याएं खूब सजी धजी हैं। वहां नाना प्रकार के रत्न, और तरह २ के शस्त्र हैं, चिन्तामणि भी है; एक लाख योद्धा और घोड़े हैं। वे सब पूर्व्व जन्म में कमाये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रभासही के हैं सो यह प्रभास इस तरह का है इसके विषय मे यह कोई नई बात नहीं है ।

इस प्रकार मुनिकुमार से प्रभास की कथा सुन, सूर्य्यप्रभ इत्यादि मय और प्रभास के साथ रत्नादि की प्राप्ति के लिये उसी मार्ग से पाताल में प्रबल के भवन को गये । प्रभास अकेले अपने घर में पैठे और पहिली भार्य्याओं को तथा चिन्तामणि योद्धाओं और घोड़ों को तथा सम्पूर्ण द्रव्य को लेके बाहर आये; उन्हें देख सूर्य्यप्रभ को बड़ा आनन्द हुआ ।

तब सुनीथ, मय, आदि सब मन्त्रि, सुमेरु प्रभास ।
सूर्य्यप्रभ लहि सिद्धि सब, पहुँचे सेननिवास ॥

चौथा तरङ्ग ।

दूसरे दिन प्रात:काल सूर्य्यप्रभ अपने सैन्यों के साथ सुमेरु के तपोवन से श्रुतशर्म्मा को जीतने चले और श्रुतशर्म्मा के निवासस्थान त्रिकूट पर्व्वत के निकट पहुँचे बलपूर्वक वहां से उनकी सेना को भगाकर वहीं पड़ाव डाला । सभा लगी हुई थी सुमेरु और मयादि के साथ सूर्य्यप्रभ बैठे थे कि त्रिकूटेश्वर का दूत आकर खेचरेश्वर सुमेरु से कहने लगा कि श्रुतशर्म्मा के पिता राजा त्रिकूटसेन ने आपके पास यह सन्देशा भेजा है कि आप बहुत दूर रहते हैं इससे हमलोग आपका सत्कार न कर सके । अब आप अपने पाहुनों के साथ हमारे राज्य में आ गये हैं इससे हम आप लोगों का उचित आतिथ्य करेंगे । इस प्रकार शत्रु का सन्देशा सुन सुमेरु ने दूत से कहा "ठीक है, हमारे समान पात्र अतिथि आपलोगों को दूसरा कौन मिलेगा, आतिथ्य परलोक में नहीं किन्तु इसी लोक में अपना फल दे देगा, सो हमलोग यहां उपस्थित हैं आइये आतिथ्य सत्कार कीजिये" । इस प्रकार सुमेरु की बात सुन वह दूत अपने स्वामी के पास चला ।

तदनन्तर सूर्य्यप्रभ इत्यादि ने एक ऊँची जगह पर चढ़ के अलग २ पड़ी हुई अपनी २ सेनायें देखीं । सुनीथ ने अपने पिता मयासुर से कहा कि कहिये अब हमलोगों के सैन्य में रथादि का कैसा विभाग किया जाय ? 'सुनो मैं कहता हूं" इतना कह वह सर्वज्ञ दानवेन्द्र अंगुली से बता कर २ के कहने लगा "वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखो सुबाहु निघतित, मुष्टिक, गोहर, प्रलम्ब, प्रमाथ, कङ्कट, पिङ्गल और वसुदत्त इत्यादि राजा हैं, ये सब अर्द्धरथी हैं। वह देखो, अङ्कुरी, सुविशाल, दण्डी भूषण, सोमिल, उन्मत्तक, देवशर्म्मा, पितृशर्म्मा, कुमारक और हरिदत्तादिक जो हैं ये सब पूर्ण-रथी हैं। उधर देखो, प्रकम्पन, दर्पित, कुम्भीर, मातृपालित, महाभट, उग्रभट, वीरस्वामी, सुराधर, भण्डीर, सिंहदत्त, गुणवर्म्मा, कीटक, भीम और भयङ्कर ये सब द्विगुण रथी हैं। वह देखो, विरोचन, वीरसेन, यज्ञसेन खुज्जर, इन्द्रवर्म्मा, शबरक, क्रूरकर्म्मा और निरासक, हे पुत्र! ये राजपूत त्रिगुण रथी हैं। वह देखो, सुशर्म्मा, बाहुशाली, विशाख, ग्रहक्रोधन तथा प्रचण्ड ये सब राजपुत्र चौगुने रथी हैं। वह देखो, जुञ्जरी, वीरवर्म्मा, प्रवीरवर, सु॰तिज्ञ, अमराराम, चण्डदत्त, जालिक और तीनों सिंहभट, व्याघ्रभट तथा शत्रुभट ये राजा और राजपुत्र सब पंचगुने रथी हैं। वह देखो उग्रवर्म्मा है, यह राजपुत्र स्वयं छगुना रथी है। उधर देखो राजपूत विशाख, सुतन्तु, सुगम और नरेन्द्रवर्म्मा, ये लोग सतगुने रथी हैं। फिर यह राजपुत्र सहस्रायु महारथी हैं, और यह शतानीक जो है महारथियों के समूह के समूह का स्वामी है। सुभास, हर्ष और विमल ये तीन जो सूर्य्यप्रभ के सङ्गी हैं तथा महाबुद्धि और अचलबुद्धि, प्रियङ्कर और शुभङ्कर ये भी महारथी हैं। वह देखो यज्ञरुचि, धर्म्मरुचि तथा विश्वरुचि, भास और सिद्धार्थ ये तीन जो सूर्य्यप्रभ के मन्त्री हैं सो सब महारथियों के समूह के स्वामी हैं। प्रहस्त और महार्थ जो मन्त्री हैं वे अतिरथ के यूथप हैं। प्रज्ञाढ्य और स्थिरबुद्धि रथ समूहों के स्वामी हैं, तथा सर्वदमन दानव और वह प्रमथन, तथा धूमकेतु, प्रवहण, वज्रपञ्जर, कालचक्र और मरुद्वेग ये सब अतिरथ के अध्यक्ष हैं। प्रकम्पन और सिंहनाद अतिरथ समूह के स्वामी हैं। वह देखो, महामाय, काम्बलिक, कालकम्पन तथा प्रहृष्टरोमा ये चारों असुरेश्वर, हे पुत्र! अतिरथ यूथाधिपतियों अधिप हैं। फिर यह सेनापति प्रभास, जो सूर्य्यप्रभ के समान है तथा सुमेरु का पुत्र यह श्रीकुञ्जरकुमार ये दोनों महारथियों के समूहों के अधिपतियों के झुण्डों के अधिप हैं। ये सब तथा और २ बड़े वीर अपने २ सैन्यों के साथ हमारी सेना में हैं। यद्यपि शत्रु की सेना में कुछ अधिक लोग हैं परन्तु श्रीमहेश्वर के प्रसाद से वे हमारा साम्हना न कर सकेंगे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार सुनीथ को मयासुर अपनी सेना के विषय में बतला रहे थे कि श्रुतशर्म्मा के पिता के पास से एक दूसरा दूत आया और कहने लगा कि त्रिकूटाधिपति कहते हैं कि शूरों के लिये संग्राम एक बड़ा उत्सव है; इसके लिये यह भूमि सकरी है, सो आइये यहां से हमलोग कलापग्राम को चलें वहां बड़ा भारी मैदान है। दूत की यह बात सुन सुनीथ और सैन्यों ने कहा "बहुत अच्छा"। सो सब लोग सूर्य्यप्रभ के साथ कलापग्राम को चले गये। उधर से श्रुतशर्म्मादिक भी लड़ने की इच्छा से विद्याधरों की सेनाओं के साथ आ पहुँचे। सूर्य्यप्रभादिकों ने श्रुतशर्म्मा की सेना में हाथियों को देखकर अपने हाथियों का दल भी, जो विमान में था, बुला लिया। व्यूहरचना होने लगी, श्रुतशर्म्मा के सेनापति, विद्याधरों में श्रेष्ठ दामोदर ने अपनी सेना में महासूचीव्यूह बनाया, उस व्यूह के बगल में अपने मन्त्रियों के साथ श्रुतशर्म्मा स्वयं खड़े हुए, दामोदर साम्हने खड़े हुए तथा और २ स्थानों में दूसरे २ महारथी लोग डट गये। इधर सूर्य्यप्रभ की सेना में सेनापति प्रभास ने अर्द्धचन्द्राकार व्यूह रचा। स्वयं प्रभास बीच में खड़े हुए, दोनों नोकों पर कुञ्जरकुमार और प्रहस्त डँट गये, सूर्य्यप्रभ और सुनीथ इत्यादि पीठ पर रहे। सूर्य्यप्रभ के पास सुमेरु और सुवासकुमार खड़े हुए। अब दोनो सेनाओं में डङ्का और मारू बाजा बजने लगे।

इतने में संग्राम देखने की इच्छा से लोकपाल और अप्सराओं के साथ आये हुए इन्द्रादिक देवों से आकाश भर गया। श्रीविश्वेश्वर-शङ्कर भगवान् पार्वती के साथ, देवियों, गणों, भूतों और मातृकाओं को लेके आ पहुँचे। भगवान् ब्रह्मा, गायत्री के साथ आये उनके संग में मूर्त्तिमान् वेद और शास्त्र तथा सब महर्षि आये। शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म को धारण किये, गरुड़ पर चढ़े भगवान् विष्णु भी लक्ष्मी, कीर्त्ति जया आदि देवियों के साथ आ विराजे। कश्यप मुनि भी अपनी भार्य्याओं को साथ ले वहां युद्ध देखने के लिये आ उपस्थित हुए। आदित्य, वसु, यक्ष, राक्षस, नागेन्द्र तथा प्रह्लाद इत्यादि असुर भी आये। इन लोगों से आकाश भर गया।

युद्ध आरम्भ हो गया, दोनों ओर से जलधारा की नाईं बाणवर्षा होने लगी, नाना प्रकार के अस्त्रशस्त्रों की बौछार छूटने लगी, वीरों की ललकार से आकाश गूंज उठा। बाणों की काली घटा से दशों दिशायें अन्धकारमय हो गयीं, वहां

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वाणों के संघर्षण से जो चिनगारी निकलती थी वही मानो बिजुली चमकती थी। शस्त्रों से कटे हुए हाथी और घोड़ों से लोहू की नदियां बह चलीं जिनमें मकर और घड़ियाल के समान वीरों के शरीर बहे जाते थे। शूर लोग, तथा भूत प्रेत, पिशाच, और सियार नाचते, उछलते, कूदते, कोलाहल मचाते थे मानों यह रण उनके लिये एक बड़ा भारी उत्सव हो रहा था।

जब असंख्य योधा कट चुके तब कुछ शान्ति हुई, धीरे २ अपना और पराया जान पड़ने लगा। उस समय सुमेरु, शत्रुओं की ओर के वीरों का नाम ले ले के सूर्य्यप्रभ इत्यादि को बताने लगे तब पहिले विद्याधरों के राजा सुबाहु और अट्टहास का द्वन्द्वयुद्ध होने लगा, कुछ क्षण तक दोनों में भयङ्कर संग्राम होता रहा। सुबाहु की देह में घावों के मारे तिल रखने की जगह न रही इतने में अट्टहास ने अर्द्धचन्द्राकार वाण से सुबाहु का शिर धड़ से अलग कर दिया। सुबाहु को मरा देख मुष्टिक क्रोध कर दौड़ा, अट्टहास ने एक ऐसा वाण उसके हृदय में मारा कि वह ठांवही गिर के कण्डा हो गया। मुष्टिक के मरतेही प्रलम्ब नामक राजा दांत कटकटाता दौड़ा और अट्टहास पर वाणों की वर्षा करने लगा। अट्टहास ने उसकी सैन्य का संहार कर पश्चात् प्रलम्ब को मर्मस्थल में मार के रथ पर गिरा दिया। प्रलम्ब के मरने पर राजा मोहन दौड़ा और तीर का प्रहार करने लगा। अट्टहास ने उसका धनुष काट, उसके सारथी को मार डाला और पीछे मोहन को ऐसे बल से मारा कि वह निर्जीव होके धरती पर गिर पड़ा। यह देख कि चतुर अट्टहास ने अकेलेही चार वीरों का काम पूरा कर डाला, श्रुतशर्म्मा की सेना हर्षनाद करने लगी, उनको जय की पूरी आशा हो गई। यह देख सूर्य्यप्रभ का सङ्गी हर्ष, क्रोध कर अपनी सेना सहित अट्टहास पर दौड़ा, अपने वाणों से उसके वाणों को काट सेना का संहार कर हर्ष ने उसके सारथी को मार डाला, पीछे दो तीन वार उसके धनुष और ध्वजा को काट वाणों से अट्टहास का शिर उड़ा दिया, वह रुधिर वमन करता पृथ्वी पर गिर पड़ा। अट्टहास के मरतेही उसके सैन्य में घबराहट सी मच गयी, वीर ऐसा छक्का छोड़ लड़े कि क्षण भर में दोनों ओर की सेना आधी हो गयी, हाथी घोड़े और पैदल धरती पर मरे पड़े रहे, केवल रणक्षेत्र में कबन्ध खड़े रह गये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तदनन्तर अट्टहास के मरने पर क्रोध पूर्वक विद्याधरेश्वर विकृतदंष्ट्र दौड़कर हर्ष के ऊपर बाणों की वृष्टि करने लगा। हर्ष ने भी उसके बाणों को काट, पताकाओं को गिरा सारथी और घोड़ों को मार गिराया, पीछे जिसमें कुण्डल हिल रहे हैं ऐसे उसके शिर को धड़ से अलग कर दिया। इतने में विकृतदंष्ट्र को मरा देख विद्याधरों का राजा चक्रबाल दांत पीसता हर्ष पर दौड़ा, उसने हर्ष के धनुष को बार २ काट डाला, उसकी समस्त शस्त्रों को टूकड़े २ कर डाला तौभी हर्ष लड़ता जाता था अन्त में जब वह थक गया तो चक्रबाल ने उसका बध कर दिया। तब राजा प्रमाथ आकर उससे लड़ने लगा, चक्रवाल ने उसे भी मार गिराया। इसी प्रकार ककट, विशाल, प्रचण्ड और अङ्करी चार मुख्य मुख्य राजाओं को क्रमानुसार चक्रबाल ने मार के रणभूमि में गिरा दिया। यह देख निर्वात नाम राजा उस पर दौड़ा बहुत देर तक दोनों में घमासान युद्ध होता रहा, दोनों के रथ चूर २ हो गये तब दोनों भूमि पर उतर पड़े और ढाल तलवार से लड़ने लगे अन्त में दोनों के खड्गप्रहारों से दोनों के शिर कट गये और वे मर कर पृथ्वी पर गिर पड़े।

दोनों वीरों के मरतेही उभय दलों में उदासी छा गयी, तब कालकम्पन नाम विद्याधरेन्द्र रणभूमि में उतरा, राजपुत्र प्रकम्पन उसके साम्हने आ डटा, परन्तु कालकम्पन ने एक क्षण में उसे मार गिराया। उसके मरतेही जालिक, चण्डदत्त गोपक, सोमिल और पितृशर्म्मा ये पांच रथी उस पर दौड़े और एक साथ बाणवृष्टि करने लगे, परन्तु कालकम्पन ने उन पांचों को विरथ कर पांचों के हृदय में एक साथ पांच बाण मार उन्हें गिरा दिया। यह देख विद्याधर आनन्दध्वनि करने लगे तथा मनुष्य और असुरों में शोक छाय गया। तब उन्मत्तक, प्रशस्त, विलम्बक और धुरन्धर नामक चार रथी एक साथ उसपर दौड़े, परन्तु कालकम्पन ने बात की बात में उन्हें भी मार गिराया। उसी प्रकार तेजिक, गेयिक, वेगिल, शाखिल, भद्रकर, दण्डी और भूरिसैन्य इन छः महारथियों को भी उसने साम्हने आने पर मार डाला। फिर पांच राजा अर्थात् भीम, भीषण, कुम्भीर विकट और विलोचन उसपर दौड़े, उसने उन्हें भी रणशायी कर दिया। कालकम्पन का इस प्रकार संहार करना देख सुगण नामक राजपूत उसके साम्हने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आया; दोनों में घोर युद्ध होने लगा, घोड़ों और सारथियों के हत हो जाने पर दोनों भूमि पर उतर पड़े और ढाल तलवार से लड़ने लगे। लड़ते २ कालकम्पन ने सुगण को एक ऐसा हाथ मारा कि वह पृथ्वी पर लोट गया। इतने में मनुष्यों के साथ विद्याधरों का ऐसा लोमहर्षण युद्ध देख, खिन्न होकर सूर्य्यनारायण अस्ताचल पर जा विराजे। रक्त की नदियों के प्रभाव से न केवल रणभूमिही लाल २ हो गयी थी किन्तु सायङ्काल की लालिमा से आकाश भी रक्तवर्ण हो गया। सन्ध्या के समय कबन्ध के साथ भूत प्रेत पिशाच नाचने लगे तब युद्ध बन्द कर दोनों दल अपने २ शिविर में चले गये। आज के युद्ध में श्रुतशर्म्मा की ओर के तीन वीर मारे गये परन्तु सूर्य्यप्रभ की सेना के तैंतीस योद्धा खेत आये।

इतने बान्धवों और मित्रों की मृत्यु से सूर्य्यप्रभ को बड़ा शोक हुआ, उस रात वह किसी पत्नी के यहां नहीं गये किन्तु रात भर बैठे अपने मन्त्रियों से युद्ध के विषय में बातचीत करते तथा कल कैसा प्रबन्ध होना चाहिये, क्या २ करना उचित होगा इत्यादि बातें करते २ जागतेही रह गये।

बन्धु बान्धवों के मारे जाने से खिन्न हो सूर्य्यप्रभ की सब रानियां भी उस रात एकत्रित हो एक दूसरी को समझाने बुझाने और धीरज देने लगीं। विलाप सन्ताप के उपरान्त उनमें इधर उधर की बात छिड़ी, ठीक है ऐसा कोई अवसर नहीं है जब कि स्त्रियां एकट्ठी हो के इधर उधर की गप्प सप्प न लड़ावें यह उनका स्वभावही है। प्रसङ्गवश एक राजपुत्री बोली "बड़े आश्चर्य्य की बात है कि आर्य्यपुत्र आज अकेलेही सोये, कोई स्त्री उनके साथ न रही," यह सुन दूसरी ने कहा कि बन्धुबान्धवों की मृत्यु से आज उनका चित्त उदास है सो भला वह स्त्रियों में कैसे विहार कर सकते हैं। तब एक तीसरी बोली "अजी यदि उन्हें कोई नयी स्त्री मिल जाय तो सब शोक अभी भूल जायें।" यह सुन एक दूसरी स्त्री ने उत्तर दिया "ऐसा मत कहो, यद्यपि वह स्त्रियों के खिलौने हैं तथापि इस दुःख के अवसर पर ऐसा नहीं कर सकते।" इस प्रकार उनकी बात सुन एक बोल उठी "बड़े आश्चर्य्य की बात है कि तुम कहती हो कि आर्य्यपुत्र स्त्रियों के खिलौने हैं, देखो हमलोगों से व्याह करके भी रोज २ नयी २ राजपुत्रियों को लेते हैं तौभी उनका जी नहीं भरता। यह सुन उनमें बड़ी चतुर मनोवती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नाम्नी एक रानी बोली "सुनो मैं इसका कारण बतलाती हूं, राजा लोग बहु-तेरी स्त्रियों को क्यों व्याहते हैं; देश, रूप, वय, चेष्टा, और ज्ञान के भेद से ललनाओं के गुणों में भी भेद होता है, सब गुण एकत्र नहीं मिलते । कर्णाटक, लाट सौराष्ट्र और मध्य देश की स्त्रियां अपने २ देश के अनुसार भिन्न २ गुणों से पुरुष को प्रसन्न करती हैं । कोई २ ललनायें शरदमयङ्कवदन से मन मोह लेती हैं; कोई अपने कनककुम्भ समान उन्नत तथा सुदृढ़ पयोधरों से पुरुषों को लोटन कबूतर बना लेती हैं; दूसरी कामदेव के सिंहासनस्वरूप अपने जघनस्थल से बश में कर लेती हैं; किसी २ के मनोहर कोमल अङ्गों से पुरुष का चित्त लुभा जाता है; कोई कञ्चन के समान गौराङ्गी होती हैं; कोई प्रियङ्गु की नाईं श्याम-वर्ण होती है; दूसरी गुलाबी होती हैं कि देखतेही आंखें लुभाय जांय । किसी की आकृतिही मोहिनी होती है, कोई यौवनावस्था पर पहुंचके चटकीली हो जाती हैं, कोई प्रौढ़ाही रसीली जान पड़तीं, कोई अपने हावभाव कटाक्षों से मन मोह लेती हैं । कोई जब हँसती हैं तब मनोरम लगती है, कोई क्रोध करके सोहती है, कोई गजगामिनी कोई हंसगामिनी अच्छी लगती है । किसी का भाषण अमृत की नाईं कान को सुहावना लगता है, किसी का भोलेपन से निरखनाही मन को डँवाडोल कर देता है । कोई नाचके, कोई गाके कोई बी-णादि बाजे बजाने से मन को मोह लेती है । कोई बाहिरी बातों में चतुर होती है, कोई भीतरी में, कोई अपनी सजधज मेंही बड़ी प्रवीण होती है कोई अपनी चतुराईही से शोभित होती है । कोई इसी बात में प्रवीण होती है कि किस तरह अपने पति का चित्त मोह ले, वह उसी प्रकार अपने सौभाग्य का उप-भोग करती है, इसी प्रकार और कहां लों कहूं, भिन्न २ स्त्रियों के भिन्न २ गुण होते हैं; हां सब उत्तम स्त्रियों में एक न एक उत्तम गुण रहता है किन्तु सब गुणों की आगरी कोई भी नहीं होती । यही कारण है कि राजा लोग नित्य २ नई २ प्रमदाओं की अभिलाषा किया करते हैं, नई २ स्त्रियां नये २ ढंग से उनके मन को सदा मोह लिया करती हैं । परन्तु जो लोग श्रेष्ठ होते हैं वे पर-नारियों पर कदापि मन नहीं लगाते, सो आर्य्यपुत्र में यह दोष नहीं है इसलिये हमलोगों को इसके बारे में उनसे डाह न करना चाहिये ।" सूर्य्यप्रभ को मदन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सेनादि भार्य्याएँ मनोवती की इस प्रकार की बातें सुन वैसीही वैसी बातें करने लगीं। इस प्रकार सब की सब कुछ क्षण तक बातें करती रहीं सभों का मन ऐसा मिल गया कि जो कुछ गुप्त बातें रहीं सो सब भी कह सुनायी गयीं। ठीकही कहा है कि "स्त्री के पेट में बात नहीं पचती।"

एहि विधि कथा प्रसङ्ग तें बीत गयी सब रात।
सूर्य्यप्रभ रिपुविजय हित जोहत रहे प्रभात॥

पांचवां तरङ्ग।

अब प्रातःकाल होतेही सूर्य्यप्रभ तथा उनके साथी युद्धक्षेत्र में उपस्थित हुए उधर से श्रुतशर्म्मा और उनके सहचर अपने २ दल बल के साथ आ डटे। उसी प्रकार से इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, और अन्य अमर तथा यक्ष, राक्षस, नाग और गन्धर्व्व सब लोग युद्ध देखने के लिये आकाश में आ विराजे। उधर श्रुतशर्म्मा की सेना में दामोदर ने चक्रव्यूह की रचना की, इधर प्रभास ने सूर्य्यप्रभ की सेना में वज्रव्यूह बनाया। जुझाऊ बाजे बजने लगे, दोनों सैन्यों के वीर लोग ललकार २ लड़ने लगे; बाजों के शब्द और वीरों की ललकार से दशों दिशायें गूंज उठीं। ऐसी बाणवृष्टि हुई कि सूर्य्य भी छिप गये ऐसा जान पड़ता था कि मानों कोई योद्धा मेरे मण्डल को तोड़ न डाले इस भय से सूर्य्यनारायण शरजाल में छिप गये। दामोदर का बनाया वह चक्रव्यूह दूसरे का अभेद्य था, अतएव, सूर्य्यप्रभ की आज्ञा से प्रभास स्वयं उसे तोड़ पैठे। उधर से दामोदर भी जिस जगह व्यूह टूटा था वहीं आकर रोक कर खड़ा हो गया तब प्रभास अकेले उससे लड़ने लगे। जब सूर्य्यप्रभ ने देखा कि प्रभास अकेलेही व्यूह भेदके चले गये हैं तो उन्होंने पीछे से प्रकम्पन, धूमकेतु, कालकम्पन, महामाय, मरुद्वेग, प्रहस्त, वज्रपञ्जर, कालचक्र प्रमथन, सिंहनाद, कम्बल, विकटाक्ष, प्रवहण, कुञ्जरकुमारक तथा प्रहृष्टरोमा इन पन्द्रह महारथियों को प्रभास की सहायता के लिये भेजा वे सब महारथी भी व्यूह के द्वार पर पहुंच गये। वहां पर दामोदर ने अपूर्व्व पौरुष दिखाया कि अकेले उन पन्द्रहों से लड़ते रहो।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह देख बगल में खड़े हुए नारदमुनि से इन्द्र कहने लगे कि देखिये ये जितने सूर्य्यप्रभ इत्यादि हैं सो सब असुरों के अवतार हैं, श्रुतशर्म्मा मेरा अंश है और ये सब विद्याधर देवों के अंश हैं सो हे मुने! यह एक प्रकार से देवासुर संग्राम है। देवतों के सहायक सर्वदा से भगवान् विष्णु होते आये हैं, सो यह दामोदर उनका अंश है तब न ऐसी खूबी के साथ लड़ रहा है।

इस प्रकार इन्द्र नारदजी से बात करही रहे थे कि दामोदर की सहायता के लिये उधर से चौदह महारथी आ गये अर्थात् ब्रह्मगुप्त, वायुबल, यमदंष्ट्र, सुरोषण, रोषावरोह, अतिबल, तेज:प्रभ, धुरन्धर, कुबेरदत्त, वरुणशर्म्मा, कम्बलिक, वीर दुष्टदमन, दोहन और आरोहन। दामोदर को लेके वे भी पन्द्रह हो गये, सो वे पन्द्रहों वीर व्यूह के मोहड़े पर जमकर इन पन्द्रह वीरों से लड़ने लगे, अब द्वन्द्व युद्ध हुआ। दामोदर से प्रकम्पन, ब्रह्मदत्त के साथ धूमकेतु, अतिबल के साथ महामाय, तेज:प्रभ से दानव कालकम्पन, बायुबल से महासुर मरुद्वेग, यमदंष्ट्र के साथ वज्रपञ्जर, सुरोषण के साथ असुरश्रेष्ठ कालचक्र, कुबेरदत्त के साथ प्रमथन, वरुणशर्म्मा से दैत्येन्द्र सिंहनाद, दुष्टदमन के साथ प्रवहण, रोषावरोह के साथ प्रहृष्टरोमा दानव, धुरन्धर के साथ विकटाक्ष, कम्बलिक के साथ कम्बल, आरोहण के साथ कुञ्जरकुमार तथा प्रहस्त के साथ दोहन जिसका दूसरा नाम महोत्पात भी था।

इस तरह महारथी व्यूह के अग्रभाग में द्वन्द्वयुद्ध कर रहे थे कि इतने में सुनीथ मय से कहने लगे "देखिये, बड़े कष्ट की बात है कि यद्यपि हमारी ओर के ये शूर महारथी युद्ध की नाना कलाओं में प्रवीण हैं तौभी व्यूह में पैठने से इनके अतिरथ योद्धा इनको रोके खड़े हैं। विना विचारेही प्रभास अकेले आगे चला गया, न जानें उसका वहां क्या (होता) होगा।" सुनीथ की यह बात सुन सुवासकुमार बोले कि त्रैलोक्य में जितने सुरासुर और मनुष्य हैं वे सब तो इस अकेले प्रभास के साम्हने ठहरही नहीं सकते तो ये विद्याधर बापुरे किस गिनती में हैं, आपलोग जान बूझके व्यार्थ यह क्या शङ्का कर रहे हैं।

मुनिकुमार इस प्रकार कहही रहे थे कि उधर कालकम्पन नाम विद्याधर युद्ध में प्रभास के समक्ष आया प्रभास ने उससे कहा "अरे तू ने हमारा बड़ा अप-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कार किया है सो आ तेरा पौरुष आज देखता हूं” इतना कह प्रभास उसपर वाणों पर वाण छोड़ने लगे, उसने भी प्रभास पर नाराचों की झड़ी लगा दी। इस प्रकार अस्त्र प्रत्यस्त्र से द्वन्द्वयुद्ध करते हुए उन विद्याधर और मनुष्य को देख कर सम्पूर्ण भुवनों को आश्चर्य्य हो गया। इसके उपरान्त प्रभास ने एक वाण से कालकम्पन की ध्वजा गिरा दियी और दूसरे से उसके सारथी को मार डाला चार वाणों से उसके चारों घोड़ों को तथा एक से उसका धनुष काट डाला, दो वाणों से उसके दोनों भुज, और दो से उसके दोनों कान उड़ा दिये और एक चोखे वाण से बड़ी सफाई से उसका शिर काट गिराया। कालकम्पन ने जो पहिले दिन प्रभास की ओर के बहुत वीरों का वध किया था उससे कुपित हो प्रभास ने मानों उसको वधरूप यह दण्ड दिया। इस प्रकार उस विद्याधरेश के वध से मनुष्य और असुर हर्षनाद करने लगे पर विद्याधरों के बीच विषाद फैल गया।

तब कालञ्जरगिरि का अधीश्वर विद्याधरों का राजा विद्युत्प्रभ क्रोध करके प्रभास पर दौड़ा। प्रभास ने उसकी भी ध्वजा काटके धनुष काट डाला, फिर उसे दूसरा धनुष लेते देर नहीं कि प्रभास के काटते देर न हो। इस प्रकार धनुषों के काटते २ जब वह व्याकुल हो गया तब लजाके लगा माया करने, झट माया से छिप कर आकाश में उड़ गया और वहां से प्रभास के ऊपर तलवार गदा तथा नाना प्रकार के आयुध बर्साने लगा। प्रभास ने भी अपने अस्त्रों से उसके सब अस्त्र काट डाले, और प्रकाशनास्त्र छोडके उस खेचर को प्रगट किया, पश्चात् महाआग्नेयास्त्र छोड उसके तेज से विद्युत्प्रभ को जलाके आकाश से पृथ्वी पर गिरा दिया।

यह देख श्रुतशर्म्मा ने उन महारथियों से कहा “देखो तो सही, इसने तो महारथयूथपों को मार डाला, से तुम लोग क्यों मुंह देख रहे हो सब लोग मिलके इसे मारो” श्रुतशर्म्मा की ऐसी बात सुन आठ रथियों ने प्रभास को घेर लिया। एक वङ्कटाद्रीन्द्र का रहनेवाला विद्याधरों का राजा विख्यात ऊर्द्धरोमा था; दूसरा धरणीधरशैलाधिपति विद्याधरों का अधिप महारथी विक्रोशन था; तीसरा लीलापर्व्वतनिवासी विद्यारेश्वर अतिरथ यूथ का पति वीर इन्दुमाली था, मलयाद्रिनिवासी रथयूथपति खेचरोत्तम राजा काण्डक चौथा था; निकेताद्रि का

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजा दर्पवाह पांचवां था; छठां अञ्जनगिरि का धूर्त्तवयन था; ये दोनों विद्याधर अतिरथ यूथ के पति थे; कुमुदपर्वत का राजा वराहस्वामी सातवां था जिसका रथ गदहे खींचते थे और जो महारथ के यूथ का अधिपति था; और आठवां उसी के समान योद्धा दुन्दुभिपर्व्वत का राजा मेधावर था। इन सब राजाओं ने आकर प्रभास पर वाण छोड़ना आरम्भ किया परन्तु प्रभास ने सभों के तीर काट कर अपने वाणों से सभों को एक साथ छेद डाला; किसी के घोड़ों को मारा; किसी के सारथि को मार डाला; किसी की पताका काट डाली, किसी का धनुष काट दिया; परन्तु मेधावर के हृदय में चार वाण ऐसे मारे कि वह तुरन्त मर कर पृथ्वी पर गिर पड़ा। फिर सब विद्याधरों से लड़ते २ ऊर्द्धरोमा पर अ-ञ्जलि नामक वाण चलाया और उसका शिर जिसमें घुंघुरारे केश की जुलफी थी, काट गिराया, बाकी छः राजाओं के सारथी और घोड़ों को मार पश्चात् एक एक भाले मार २ उनके शिर भी काट गिराये। तब प्रभास के ऊपर आकाश से पुष्पवृष्टि हुई जिस से असुरेन्द्रों का उत्साह बढ़ा और विद्याधरों पर अन्धकार छा गया। तब श्रुतशर्म्मा ने फिर चार और महारथियों को भेजा उन धनुर्धरों ने प्रभास को घेर लिया। एक तो कुरण्डकगिरि का राजा काचरक दूसरा पञ्च-काद्रि का रहनेवाला दिण्डिमाली, जयपुरपर्वतनिवासी राजा विभावसु तीसरा, और चौथा भूमितुण्डकेश्वर धवल था। उन महारथयूथाधिपति खेचरोत्तमों ने प्रभास पर एक संग पांच २ सौ वाण छोड़े। पर प्रभास ने बड़ी तीव्रता के साथ एक २ करके सभों पर आठ २ वाण चलाये, एक से ध्वजा, एक से धनुष, एक से सारथि को, चार से चारो घोड़ों को तथा एक से महारथी के शिर को काट गिराया, इस तरह आठ २ वाणों से उनको समाप्त कर सिंहनाद किया। इसके उपरान्त श्रुतशर्म्मा की आज्ञा से फिर दूसरे चार विद्याधर प्रभास के सामने युद्ध में आय खड़े हुए। पहिला विश्वावसु के क्षेत्र में बुध से उत्पन्न नील कमल के समान श्यामवर्ण भद्रङ्कर था, दूसरा नियन्त्रक, जो जम्भ के घर में मङ्गल से पैदा हुआ था, अग्नि के समान उसकी कान्ति थी, तीसरा दामोदर के क्षेत्र में शनैश्वर से उत्पन्न हुआ कालकोप था, यह महाकृष्ण वर्ण था इसके केश भूरे २ थे; और चौथा चन्द्र के घर में वृहस्पति से जन्मा कनक, (सुवर्ण) के समान कान्तिमान् विक्रमशक्ति था।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनमें से तीन तो अतिरथयूथाधिपतियों के यूथप थे परन्तु चौथा बड़ा वीर था, उन तीनों की अपेक्षा अधिक विक्रमशाली। इन चारों महावीरों ने दिव्यास्त्रों का प्रहार करना आरम्भ किया। प्रभास ने नारायणास्त्र से उनके अस्त्रों को दूर किया पीछे बड़ी शीघ्रता से एक २ के धनुष को आठ २ वार काट डाला, तत्पश्चात् सभों के फेंके प्रास, गदादि हथियारों को काट, घोड़ों और सारथियों को मार सभों को विरथ कर दिया। यह देख श्रुतशर्म्मा ने और दश रथयूथपयूथाधिपति विद्याधरों के राजाओं को भेजा। दम और नियम ये दोनों ठीक एक से थे, केतुमालेश्वर के क्षेत्र में अश्विनीकुमार के पुत्र थे, विक्रम, संक्रम, पराक्रम, आक्रम, सम्मर्दन, मर्दन, प्रमर्दन और विमर्दन ये आठों, वसु के पुत्र मकरन्द के घर में पैदा हुए थे और आठों एक समान थे। उन दशों के आ जाने पर पहिले चार भी दूसरे रथों पर सवार हुये। उन चौदहों ने मिल के प्रभास पर एक साथ वाणों की झड़ी लगा दी परन्तु आश्चर्य्य कि वह अकेलेही उनसे निर्भय लड़ रहा था। तब सूर्य्यप्रभ की आज्ञा से व्यूह के अग्रभाग की लड़ाई छोड़ कुञ्जरकुमार और प्रहस्त दोनों गौर और श्यामवर्ण, हथियार ले ले, आकाशमार्ग से उड़कर प्रभास के पास पहुँच गये मानों दूसरे राम और कृष्णही आ पहुँचे। ये दोनों पैदलही लड़ते थे दम और नियम रथ पर थे परन्तु इन दोनों ने उन दोनों को व्याकुल कर डाला, उनके कोदण्ड काट डाले सारथियों को मार डाला। भय के मारे वे दोनों जब आकाश में उड़ गये तो ये दोनों भी शस्त्र लिये हुए वहीं पहुँचे। जब सूर्य्यप्रभ ने देखा कि वे दोनों किस प्रकार पैदलही लड़ाई कर रहे हैं तब तुरत महाबुद्धि और अचलबुद्धि नामक अपने दो मन्त्रियों को उनके सारथि बना के भेज दिया। दम और नियम तब अदृश्य होकर लड़ने लगे परन्तु प्रहस्त और कुञ्जरकुमार ने सिद्धाञ्जन के प्रयोग से उन्हें देख लिया और उन पर वाणों की ऐसी झड़ी लगा दी कि दोनों भाग गये। उधर प्रभास ने उड़ते २ उन बारहों के कोदण्ड काट डाले, जितने धनुष उन्होंने लिये, प्रभास ने सब काट डाले। इधर से प्रहस्त ने पहुँच के सभों के सारथियों को मार डाला, उसी तरह कुञ्जरकुमार ने घोड़ों का संहार कर दिया। जब वे बारहों एक साथ विरथ हो गये, और ये तीनों उन्हें वाणों से व्याकुल किये डालते थे तब वे विचारे लज्जा छोड़ रणक्षेत्र से भाग गये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह देख श्रुतशर्म्मा को दुःख, क्रोध और लज्जा ने आ घेरा, व्याकुल हो उन्होंने फिर दो रथातिरथयूथप विद्याधरों को भेजा, एक तो चन्द्रकलाद्रि के राजा के क्षेत्र में चन्द्र से जन्मा चन्द्रगुप्त था जो ऐसा सुन्दर था जैसा कि दूसरा चन्द्रमा, दूसरा नगरङ्गम नामक बड़ा द्युतिमान् उनका मन्त्री था, जो धुरन्धराचल के राजा के क्षेत्र में जन्मा था। वे दोनों वाण बर्साने लगे परन्तु इन तीनों ने बात की बात में उन्हें विरथ कर दिया तब वे भी व्याकुल हो युद्ध छोड़ ताबड़तोड़ भाग गये, यह देख मनुष्य और असुर जयध्वनि करने लगे।

अब, महौघ, आरोहण, उत्पात और वेत्रवत् नामक चार बड़े पराक्रमी महारथियों को साथ ले श्रुतशर्म्मा स्वयं रणक्षेत्र में आ विराजे। वे चारों महारथी क्रमानुसार त्वष्टा, भग, अर्य्यमा और पूषा के पुत्र थे जो मलयाचल के नाथ चित्रपदादि विद्याधर राजाओं के पुत्र थे। अब श्रुतशर्म्मादि पांचो महावीर क्रोधान्ध हो प्रभासादि तीनों के साथ लड़ने लगे। दोनों ओर से ऐसे वाण चले कि उनके जालों से सूर्य्यनारायण भी छिप गये, ऐसा जान पड़ता था कि कड़ाकी धूप में छाया करने के निमित्त रणलक्ष्मी ने चँदवा तान दिया हो। इतने में वे विद्याधर भी आ पहुँचे जो पहिले विरथ हो रणभूमि से भाग गये थे। जब सूर्य्यप्रभ ने देखा कि उधर बहुत से महारथी इकट्ठे हो गये और इधर तीनही हैं तब तुरन्त वीरसेन और शतानीक को प्रधान बना उनके साथ अपने मित्र प्रज्ञाढ्यादि महारथीं को प्रभासादि की सहायता के हेतु भेजा, वे आकाशमार्ग से उड़ गये। उनके चले जाने के पीछे सूर्य्यप्रभ ने भूतासन विमान में बैठा के और भी कईएक रथियों को व्योममार्ग से भेज दिया। इन सब रथारूढ़ धन्वियों के वहां पहुँचने पर श्रुतशर्म्मा की ओर के और जो विद्याधरों के राजा थे वे सब भी आ डँटे। एक ओर विद्याधरों के राजा दूसरी ओर प्रभासादि वीर, दोनों दलों के बीच महाभीषण सङ्ग्राम होने लगा और वीर कट २ धड़ाधड़ गिरने लगे। इस द्वन्दयुद्ध में दोनों ओर के महारथी, मनुष्य, असुर और विद्याधर हत हो २ धरणी पर सो गये। वीरसेन ने धूम्रलोचन और उसके साथियों को मार गिराया, हरिसेन ने वीरसेन को विरथकर मार डाला। विद्याधर-वीर हिरण्याक्ष अभिमन्यु से मारा गया, सुनेत्र ने अभिमन्यु का काम तमाम किया, प्रभास से सुनेत्र का शिर काटकर गिरा दिया गया। ज्वाला-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

माली और महायु आपसही में लड़ मरे । भुजों के कट जाने से कुम्भीरक और नीरसक दन्तकटौवल करने लगे। उसी प्रकार खर्व और महापराक्रमी सुशर्मा दांतों से काटाकाटी करने लगे। शत्रुभट, व्याघ्रभट और सिंहभट ये तीनों विद्याधरेन्द्र प्रवहण से मारे गये, सुरोह और विरोह ने प्रवहण को मार डाला, श्मशानवासी सिंहबल से वे दोनों हत हुए। वह प्रेतवाहन सिंहबल, तथा कपिलक, चित्रापीड़ विद्याधरेन्द्र, जगज्ज्वर, शूर कान्तापति, महाबली सुवर्ण, कामघन क्रोधपति ये दोनों विद्याधरेश्वर, राजा बलदेव और विचित्रापीड़ ये दशों वीर राजपुत्र शतानीक से मार डाले गये। इस प्रकार वीरों के संहार होने पर विद्याधरों का क्षय देखकर श्रुतशर्म्मा क्रोध कर स्वयं शतानीक पर दौड़े, दोनों में लोमहर्षण युद्ध होने लगा, योद्धा लोग कट २ कर धरती पर गिरने लगे, यह संग्राम ऐसा भयङ्कर हुआ कि देवों को भी आश्चर्य्य हो गया, इतने में सन्ध्या हो गयी, सैकड़ों कबन्ध भूतों के साथ चारों ओर सायङ्काल में नाचने लगे। इस प्रकार सन्ध्या हो जाने पर बहुत सैन्यों के विनाश होने से व्यग्र और बन्धुबान्धवों के मारे जाने से दुःखित हो विद्याधर, तथा जय होने से प्रमुदित मनुज और राक्षस अपनी २ सेना बटोर कर शिविर में चले गये।

इतने अवसर में रथयूथपों के अधिपति दो विद्याधर श्रुतशर्म्मा का पक्ष त्याग वहां आये। सुमेरु ने उन्हें ले जाके सूर्य्यप्रभ से भेंट करा दी तब वे दोनों प्रणाम कर कहने लगे "महाराज! हम दोनों महायान और सुमाय हैं हमारा तीसरा साथी सिंहबल था महाश्मशानाधिपतित्व हमलोगों को सिद्ध है कोई विद्याधरेन्द्र हमलोगों पर आक्रमण नहीं कर सकता। एक समय की बात है कि जब हमलोग श्मशान में सुख से बैठे थे कि दिव्यप्रभाव रखनेवाली शरभानना नाम्नी एकभली योगिनी हमारे पास आई, वह हमलोगों से सदा प्रसन्न रहती है। उसको देखकर हमलोग प्रणाम कर पूछने लगे कि भगवति! आप इतने दिन कहां रहीं, कहिये वहां क्या अपूर्व्व बात देखी? हमारी यह बात सुन वह इस प्रकार कहने लगी,—

"मैं योगिनियों के सहित अपने प्रभु महाकाल के दर्शन करने गयी थी कि उसी समय एक बेतालपति आकर उनसे कहने लगा "हे देव! हमारे बड़े सेनापति अग्निक को विद्याधरेशों ने मार डाला अब उनकी परमसुन्दरी बेटी को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तेजःप्रभ बलपूर्वक लिये जाता है, हे प्रभो! सिद्धों का यह बचन है कि वह विद्याधरों के चक्रवर्त्ती की पत्नी होगी, सो कृपाकर उसे छोड़ाइये नहीं तो वह दुष्ट उसे और दूर ले जायगा"। उस दुःखित बेतालपति की बात सुनकर महाप्रभु ने हमलोगों को आज्ञा दी कि जाकर उसे छोड़ा लाओ सो हमलोगोंने आकाश-मार्ग से जाकर उस कन्या को पाया. तेजःप्रभ कहता था कि मैं इसे श्रेष्ठ चक्रवर्त्ती श्रुतशर्म्मा के हेतु लिये जाता हूं, यह सुन हमने अपनी विद्या के बल से उसे स्तम्भित कर वह कन्या अपने प्रभु को ला सौंपी। उन्होंने भी उसे उसके कुटुम्बियों के हवाले किया, यह अनूठी बात मैंने अपनी आंखों देखी। तब वहां कुछ दिन रह के उन देव को प्रणाम कर यहां आई हूं"।

शरभानना योगिनी की ऐसी बात सुन हमलोगों ने उससे पूछा— "भगवति! आप सब जानती हैं, भला कहिये तो विद्याधरों का चक्रवर्त्ती कौन होगा?" उसने उत्तर दिया कि सूर्य्यप्रभ। इतना उसके कहतेही सिंहबल ने सबसे कहा "यह बात असत्य है; क्योंकि श्रुतशर्म्मा के पक्ष पर इन्द्रादि अमर कमर बांधे खड़े हैं।" यह सुनकर वह हमसे बोली कि यदि तुमको विश्वास न हो तो सुनो मैं कहती हूं, बस अब बहुत शीघ्र सूर्य्यप्रभ और श्रुतशर्म्मा का युद्ध होगा। जब यह सिंहबल तुम्हारे साम्हने मनुष्य से मारा जायगा तब तुम दोनों यह चिन्ह देख के जान जाओगी कि मेरा यह कहना सत्य है।" इतना कह योगिनी तो चली गयी और वे दिन भी बीत गये, परन्तु हम दोनों ने आज अपनी आंखों देखा कि वह सिंहबल मनुष्य से मारा गया। उसीसे हमको विश्वास हुआ कि आपही सब विद्याधरों के अधिराज हैं सो हम दोनों आपके चरणकमल में उपस्थित हुए हैं; हम आपके शासनवर्त्ती हैं। महायान और सुमायक की ऐसी बात सुन सूर्य्यप्रभ ने मयादिकों के साथ उन दोनों खेचरेन्द्रों का यथोचित सम्मान किया जिससे वे दोनों अति प्रसन्न हुए।

जब यह बात श्रुतशर्म्मा के कान में पड़ी तब उनको बड़ा उद्वेग हुआ। यह देख इन्द्र ने विश्वावसु को भेज कर उनसे यह संन्देश कहला के धीरज दिलाया कि घबड़ाओ मत, कल सबेरे सब देवों के साथ आके हम लड़ाई के मैदान में तम्हारी सहायता करेंगे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

छन्द।

इत सूर्य्यप्रभ रणभूमि महँ लखि शत्रुदल विचलन्तहू ।
इमि नाश तिन्हकर निरखि मन सन्तोष लह्यउ अनन्तहू ॥
आजहु न तिय संग शयन कीन्ह, ऽरु, मित्र सचिव बुलाइ कै।
निशि वासगृह विश्रामहित पुनि पलँग पौढ़े जाइ कै ॥

छठवां तरङ्ग।

सूर्य्यप्रभ रात में अकेले पलङ्ग पर पौढ़े थे पर मन तो उनका लगा था युद्ध में, इससे करवटें भरते २ जब उकता गये तब अपने सचिव वीतभीति से कहने लगे कि मित्र! नींद नहीं आती सो वीरों की कोई अपूर्व्व कथा सुनाते तो कुछ मनबहलाव होता। सूर्य्यप्रभ का इतना कहना सुन वीतभीति बोला 'बहुत अच्छा महाराज सुनिये मैं एक कथा सुनाता हूं' ऐसा कह वह यह कथा कहने लगा।

इस पृथ्वी की अलङ्कारस्वरूपा एक उज्जयिनी नगरी है, जहां अनेक प्रकार के उत्तम २ रत्न विद्यमान हैं, पानी वहां का बड़ा स्वच्छ और निर्मल है। उस पुरी में महासेन नामक राजा रहते थे जो गुणियों के प्रिय थे, सम्पूर्ण कलाओं के मानों आगार, रूप और सुन्दरता में मानों सूर्य्य और चन्द्र दोनों के अवतार थे। उनकी रानी अशोकवती थी, जिसे राजा अपने प्राणों से भी अधिक प्यार करते थे। रानी ऐसी रूपवती थी कि तीनों जगत् में वैसी कोई सुन्दरी ललना नहीं होगी। राजा रानी सहित राज्य करते थे, गुणशर्म्मा नामक एक ब्राह्मण राजा का प्रेम-पात्र था, जो बड़ा शूर, रूपवान् युवा और वेदज्ञ था, सम्पूर्ण शास्त्रों की कला में वह ब्राह्मण बड़ा निपुण था और सदा राजा के साथ रहता था।

एक समय राजा और रानी अन्तःपुर में विराजमान थे, गुणशर्म्मा भी उनके पास बैठा था, नाच की बातचीत हो रही थी कि प्रसङ्गवश राजा और रानी ने उससे कहा "अजी तुम सब गुणों में निपुण हो, इसमें कोई सन्देह नहीं है, तो यदि तुमको नाचना आता हो तो कृपा करके जरा नाच तो दिखाओ, क्योंकि इस बात की हमें बड़ी उत्कण्ठा है।" यह सुन गुणशर्म्मा हँसकर बोला कि नाचना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो मैं जानता हूं, परन्तु राजसभा में नाचना अच्छा नहीं, यह हँसी हँसारत की बात है और शास्त्र ऐसे नाच की अनुमति नहीं देते तिसपर राजा और रानी के सामने, तो यह बड़ी निर्लज्जता का काम है। इतना सुनतेही रानी का कुतूहल और बढ़ा, वह बार २ हठपूर्वक राजा से उसे नचवाने को कहने लगी तब राजा ने गुणशर्म्मा से कहा कि यह तो राज सभा का नाच है नहीं कि लाज लगे, यह तो मित्रों के बीच एकान्त में अपनी कुशलता दिखानी है। और इस समय मैं तुम्हारा राजा नहीं हूं, इस समय तो तुम्हारा अन्तरङ्ग मित्र हूं, सो स्मरण रक्खो कि जब लों तुम्हारा नाच न देख लूं तबलों भोजन न करूंगा। जब ब्राह्मण ने देखा कि राजा ऐसी धरना कर बैठे तब लाचार हो उसने स्वीकार कर लिया। भला यह कब सम्भव है कि आश्रित अपने आग्रही प्रभु की आज्ञा टाल देवे।

अब वह युवा ब्राह्मण नाचने लगा, नाचते २ उसने हावभाव कटाक्ष की ऐसी उत्तमता दिखाई कि राजा और रानी आनन्द के मारे लोटपोट हो गये। इसके पीछे राजा ने उसे बजाने के लिये वीणा दी, ब्राह्मण ने गत छेड़तेही राजा से कहा "महाराज! यह वीणा अच्छी नहीं है, कोई दूसरी वीणा दी जाय, इसके भीतर पिल्ला है, क्योंकि तार के झंकारही से मुझे विदित हो गया।" इतना कह उस गुणशर्म्मा ने बगल से वीणा उतार के रख दी। राजा ने उस पर पानी छिड़क पेंच खोल ज्यों देखा कि भीतर से एक पिल्ला निकल पड़ा। यह देखतेही राजा को बड़ाही आश्चर्य्य हुआ, वह उसकी प्रशंसा करने लगे कि वाह वाह तुम तो सचमुच बड़ेही गुणी हो। इसके उपरान्त महीपति ने दूसरी वीणा मँगवा दी, वह ब्राह्मण तीनों ग्राम की मूर्च्छना दे बीणा बजा इस प्रकार गाने लगा कि उसका गाना कानों को ऐसा मनोहर लगा मानों तीनों लोकों को पावन करनेवाली गङ्गा की धारा हो। राजा और रानी उसका गाना सुन चित्र के समान देखते रह गये तब वह ब्राह्मण अपनी विद्या दिखाने लगा दिखाते २ उसने शस्त्र और अस्त्र की विद्या भी दिखा डाली, राजा ने उससे कहा कि यदि तुमको लड़ाई भी आती हो तो मुझको एक यही दिखा दो कि बिना किसी प्रकार के हथियार के लिये शत्रु के अङ्ग क्योंकर बांध दिये जाते हैं। ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि महाराज तलवार लें और मुझ पर वार चलावें तो मैं दिखा दूं। तब राजा ने खड्ग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इत्यादि जो २ अस्त्र उठाये गुणशर्म्मा सबको बचाता और अपने बन्धकरण मन्त्र के प्रभाव से बांधता गया, यहां लों कि अन्त में राजा के हाथ पैर भी बांध दिये और अपने ऊपर एक भी वार न पड़ने दी । तब राजा ने यह विचारा कि यह पुरुष मुझे राजकाज में बड़ी सहायता दे सकता है इसलिये उन्होंने उसे सर्व्वश्रेष्ठ मान के उसकी बड़ी प्रशंसा की ।

स्त्रियों की प्रकृति बड़ी चञ्चला होती है, कर्त्तव्याकर्त्तव्य का ज्ञान तो उनको होता नहीं, जो कुछ मन में आया कर बैठती हैं, वही बात रानी अशोकवती की भी हुई, ज्यों ज्यों रानी उस ब्राह्मण के रूप और गुणों को देखती त्यों त्यों उसके मन में कुछ दूसराही भाव उत्पन्न होता यहां लों कि वह उस पर आशक्त हो गई, सदा उसी का ध्यान बना रहता, उसी की चिन्ता किया करती, वह सोचती थी कि यदि इस ब्राह्मण को न पाऊं तो मेरे जीने से क्या फल ? ऐसी चिन्ता कर उसने एक युक्ति निकाली और राजा से कहा कि आर्य्यपुत्र कृपाकर इस गुण-शर्म्मा को आज्ञा दीजिये कि मुझे वीणा बजाना सिखाया करे । आज जो मैंने इसका वीणा-बजाना सुना तो मत पूछिये, मेरे मन में बड़ा आनन्द हुआ इस से मैं सीखना चाहती हूं । रानी की इतनी बात सुनते ही राजाने गुणशर्म्मा से कहा कि सुनो जी तुम देवी को वीणा बजाना सिखाया करो । "जो आज्ञा महाराज की, मैं वैसाही करूंगा, परन्तु कोई शुभ दिन आवे तो आरम्भ किया जाय" इतना कह राजा की आज्ञा ले गुणशर्म्मा अपने घर चला गया परन्तु रानी की कुदृष्टि वह ताड़ गया था इस से बुराई के डर से दिन टालता ही गया ।

एक दिन की बात है कि राजा भोजन कर रहे थे, वह ब्राह्मण भी पास में बैठा था कि इस अवसर में रसोइया कुछ व्यञ्जन परोसने आया । ब्राह्मण ने कहा हां हां, यह मत दो; राजा को बड़ा कौतुक हुआ सो उन्होंने इस रोकने का कारण पूछा, तब उस बुद्धिमान् ब्राह्मण ने उत्तर दिया "महाराज ! इस व्यञ्जन में विष है, मैंने लक्षण ही से पहिचान लिया; जब यह रसोइया पक्वान्न लाया और देने लगा तो मेरी ओर देख के यह भय से कांप उठा और इसकी दृष्टि से कुछ शङ्का की बात झलकी, बस मैं ताड़ गया कि दाल में कुछ काला है। अभी इसकी परीक्षा हुई जाती है, यह व्यञ्जन किसी को खिलाया जाय, कोई चिन्ता न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कीजिये, मैं पीछे विष उतार दूंगा।" उसकी ऐसी बात सुन राजाने उसी रसोंइये को खिलाया, खातेही वह मूर्छित हो गया किन्तु गुणशर्म्मा ने मंत्र पढ़कर उसका विष उतार दिया। तब तो राजा को बड़ा ही क्रोध आया उन्होंने रसोइये से पूछा कि सच सच बतला बात क्या है ? यह सुन वह हाथ जोड़ कहने लगा "महाराज ! आपके शत्रु गौड़ाधीश्वर विक्रमशक्ति द्वारा मैं आपको विष देने के हेतु यहां भेजा गया हूं, मैंने आपको यह बताया कि मैं परदेशी हूं और व्यञ्जन बनाने में बड़ा प्रवीण हूं, सो श्रीमान् ने मुझे रसोइं बनाने में नियत कर दिया। आज मैं विष देतेही पकड़ा गया, इस बुद्धिमान् ने ताड़ लिया; बस आगे की बात तो महाप्रभु जानते ही हैं।" तब राजा ने सूपकार को दण्ड दिया और अति प्रसन्न हो उस प्राण बचानेवाले ब्राह्मण को एक सहस्र गांव से पुरस्कृत किया।

दूसरे दिन रानी ने बड़ाही हठ किया कि बस आज वीणा सिखाने का आरम्भ करही दिया जावे। इस प्रकार रानी का आग्रह देख, राजा ने बड़ी चिरौरी और विनती से गुणशर्म्मा से वीणाशिक्षा का आरम्भ करा दिया। लाचार हो गुणशर्म्मा सिखाने लगा, पर रानी के मन में तो पाप समाया था, सीखने का तो केवल बहाना ही था। वह सीखने के समय, अनेक चोचले हावभाव कटाक्ष और नखरे किया करती पर ब्राह्मण अपने धर्म्म पर अचल बना रहा। एक समय की बात है कि रानी बड़ी कामातुर हो गयी, यहां लों कि बार बार उसको गुदगुदाने लगी पर ब्राह्मण बार बार उसे बरजताही गया अन्त में रानी ने मुंह खोलके उससे कहा "सुन्दर! यह वीणा सिखाने का बहाना इसी लिये किया गया है, सच तो यह है कि मैं तुम पर मोहित हो गयी हूं, अब जो सम्भलता नहीं सो मुझे स्वीकार करो।" रानी की ऐसी बात सुन गुणशर्म्मा ने उससे कहा "महारानी ! ऐसा मत कहिये, आप मेरे स्वामी की पत्नी हैं, ऐसा नहीं हो सकता; भला मुझ सा पुरुष प्रभुद्रोह कैसे करे; सो आप ऐसे व्यापार से मुझे क्षमा करें।" ब्राह्मण की इतनी बात सुन रानी ने फिर कहा कि प्यारे तुम बड़े बोदे हो, देखो तुमने ऐसा रूप पाया है उसे निष्फल क्यों करते हो, इतनी कला में तुम प्रवीण हो, क्या यह कला नही जानते, देखो मैं तो तुम्हारे प्रेम में मरी जा रही हूं और तुम फूटी आंखों भी नहीं देखते, हा! । राजमहिषी की ऐसी बात सुन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गुणशर्म्मा उपहास कर बोला "आपका कहना बहुत ठीक है, उस रूप, उस नैपुण्य का फलही क्या जो पराई स्त्री पर हाथ लगा के बदनामी न कमावे! और यहां तथा परलोक में किसी को नरककुण्ड में न ढकेले !!! ।" इतना सुनतेही रानी नकली क्रोध दिखा के बोली "जो तुम मेरी बात न मानोगे, तो मैं सच कहती हूं कि प्राण त्याग दूंगी; जान रखो पहिले मैं तुमको मार लूंगी तब मरूंगी, तुम मेरा ऐसा अपमान करते हो, चेत रखना।" यह सुन गुणशर्म्मा बोला "कुछ चिन्ता नहीं, सब तरह से ऐसा आप कर सकती हैं; सुनिये; धर्म्मबन्धन में बँधा हुआ एक क्षण भी जीना अच्छा है, परन्तु अधर्म्म से करोड़ों कल्प जीवन धारण करना कदापि उचित नहीं। यदि मैं निष्पाप हो के मरूं तो मेरा मरण भी अच्छा है क्योंकि किसी प्रकार का धब्बा तो न लगेगा, पर जो पाप कर के राजाज्ञा से मारा गया तो क्या रहा।" ब्राह्मण के इतना कहने पर भी रानी को ज्ञान न हुआ वह फिर कहने लगी "देवता! सुनो अपना और मेरा सर्व्वनाश मत करो; अच्छा मैं एक बात कहती हूं, राजा मेरी बात कभी नहीं टालते वह चाहे कितनीही कठिन क्यों न हो, सो मैं उनसे कहके तुम्हें राजपाट दिला दूँगी, तुम्हारे नौकर चाकरों को सर्दार बनवा दूंगी इस प्रकार तुम एक राजा जैसे हो जाओगे, गुण का क्या पूछना तुममें सब गुण विद्यमानही हैं; तब तुम्हें किस बात का खटका रहेगा और कौन तुम पर हाथ फेर सकेगा; सो बस अब निःशङ्क मेरी इच्छा पूर्ण करो, यह समझ रखो कि मैं जो कहती हूं वह कभी अन्यथा नहीं होने का। इस प्रकार जब गुणशर्म्मा ने राजमहिला का हठ देखा तो सोचा कि अच्छा अब किसी उपाय से यह अवसर तो टालना चाहिये, यह विचार उसने रानी से कहा कि यदि आपका बड़ाही आग्रह है तो मैं अपका कहना करूंगा पर देवि! यह सब काम जल्दी का नहीं है, ऐसा न हो कि कहीं भेद खुल जावे, सो कुछ दिन और धैर्य्य कीजिये, और यह निश्चय रखिये कि मैं जो कहूंगा सो करूंगा; भला यह तो विचारिये कि आप से विरोध विसाह कर मैं अपना सर्व्वनाश क्यों कराऊं; इसमें मुझे क्या मिलेगा। ऐसे २ बचनों से रानी को दम दिलासा दे वह ब्राह्मण गुणशर्म्मा किसी प्रकार पिण्ड छुड़ा उस समय तो निकल गया परन्तु उसके मन में इस घटना से बड़ाही आश्चर्य्य उत्पन्न हो गया था।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुछ दिनों के उपरान्त महाराज महासेन ने सोमक राजा पर चढ़ाई की और जाकर उसका किला घेर लिया। यह खबर गौड़ेश्वर राजा विक्रमशक्ति को लगी, उन्होंने आकर राजा महासेन ही को घेर लिया। अब तो राजा महासेन बड़े संकट में पड़े, कुछ बुद्धिही काम न देवे तब वह गुणशर्म्मा से पूछने लगे कि कहो मित्र अब क्या किया जाय! हम तो एक को घेरे हुए हैं अब दूसरे शत्रु से स्वयं घिर गये। हमारी सेना भी इतनी नहीं है कि हम दोनों वैरियों से लड़ सकें, और यदि यह कहो कि लड़ाई मत कीजिये तो के दिन ऐसे चलेगा, सो इस सङ्कट में बताओ क्या किया जाय? राजा की यह बात सुन गुणशर्म्मा बोला, "महाराज धीरज रखिये, घबड़ाने का अवसर नहीं है; कोई चिन्ता नहीं मैं एक ऐसा उपाय रचूंगा कि जिससे इस संकट से आपका निस्तार हो जाय।" इस प्रकार राजा को सांत्वना दे. आखों में अन्तर्धान करनेवाला अञ्जन लगा, उसके प्रभाव से अदृश्य हो, रात्रिही में गुणशर्म्मा राजा विक्रमशक्ति के कटक में पहुँचा और राजा के पास जा उन्हें जगा कहने लगा "राजन्! मैं देवदूत हूं तुम्हारे पास इस लिये आया हूं कि महासेन राजा से मेल करके झट यहां चले जाओ, इसी में तुम्हारा कल्याण है, जो ऐसा न करोगे तो सेना सहित यहीं नष्ट हो जाओगे। सुनो, जब तुम दूत भेज के सन्धि की बात चलाओगे तो वह अवश्य स्वीकार कर लेगा; बस इतनाही कहने के लिये भगवान् विष्णु ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है। तुम भक्त हो और भगवान् सदा अपने भक्तों का कल्याणही चाहते हैं। यह सुन राजा विक्रमशक्ति विचार करने लगे कि सचमुच यह भगवान् का दूतही है नहीं तो यहां किसका गम है कि आ सके। यह काम तो मनुष्य का कभी होही नहीं सकता; इतना सोच राजा ने उस से कहा कि आहा मैं परम धन्य हूं कि मेरे पास भगवान् ने ऐसा सन्देश कहला भेजा है; बहुत अच्छा, जो प्रभु की आज्ञा है मैं वैसाही करूंगा। जब राजा इतना कह चुके तब गुणशर्म्मा राजा के विश्वास के लिये फिर उसी प्रकार अञ्जन के प्रभाव से अन्तर्धान हो वहां से लोप हो गया और जाकर महीपति महासेन से जो कुछ किया था कह सुनाया। सुनतेही नरेन्द्र आनन्द में मग्न हो गये और उसे गले लगा कहने लगे बस तुम्हीं ने मेरे प्राण और राज्य दोनों बँचाये। प्रातःकाल होतेही राजा विक्रमशक्ति का दूत आ पहुँचा, चलो दोनों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में सन्धि हो गयी, राजा विक्रमशक्ति सेना सहित अपने देश को चले गये। राजा महासेन भी गुणशर्म्मा के प्रभाव से सोमक राजा को जीत, बहुत हाथी घोड़े पाय, उज्जयिनी में जा विराजे। एक बार राजा नदी में स्नान कर रहे थे कि एक घड़ियाल ने उन की टांग पकड़ ली, गुणशर्म्मा ने राजा को वहां से उबारा; दूसरी बार एक सांप ने महाराज को डँस लिया, ब्राह्मण ने सर्पविष से भी राजा की रक्षा की।

इस प्रकार बहुत दिन बीत गये। एक बार राजा सैन्य सजाय अपने बैरी महीपति विक्रमशक्ति को जीतने चले, वह भी यह खबर पाय लड़ाई के लिये निकल आया, दोनों नरेशों में घोर संग्राम होने लगा, क्रम २ से दोनों नरेन्द्र द्वन्द्व युद्ध में प्रवृत्त हुए, एकाएक दोनों महीपति विरथ हो गये। तब खड्ग ले एक दूसरे पर दौड़े, महासेन महीपति कुछ घबड़ा गये थे इससे फिसल कर पृथ्वी पर गिर पड़े। विक्रमशक्ति ज्यों ही महासेन पर प्रहार किया चाहते थे कि गुणशर्म्मा ने एक चक्र से उनके खड्गयुक्त भुज को काट डाला फिर हृदय में एक तलवार मार उन्हें पृथ्वी पर गिरा दिया। जब राजा महासेन उठे तो यह देख अत्यन्त प्रसन्न हुये और गुणशर्म्मा से बार २ कहने लगे "विप्रवीर! क्या कहूं यह पांचवीं बार तुमने मेरे प्राण बचाये। तदनन्तर गुणशर्म्मा द्वारा हत राजा विक्रमशक्ति की सेना और राज्य पर महीपति महासेन ने आक्रमण किया और उसे जीत लिया, तत्पश्चात् गुणशर्मा की सहायता से और दूसरे २ नरेशों को परास्त कर महाराज महासेन उज्जयिनी में आकर सुख से रहने लगे।

इतने दिन बीत गये पर रानी अशोकवती अपने हठ से न हटी, वह रात दिन गुणशर्मा से बड़ी उत्कण्ठा से बुरे काम की प्रार्थना करतीही गयी परन्तु वह धर्मिष्ट ब्राह्मण कभी उस बात पर सम्मत न हुआ। ठीक है सज्जन लोग मरना स्वीकार कर लेते हैं पर निषिद्ध बात की ओर नहीं जाते। जब रानी को निश्चय हो गया कि यह ब्राह्मण हाथ पर नहीं चढ़ेगा तब उसे बड़ा खेद हुआ, उसने ठाना कि अच्छा अब इसको दण्ड दिलाना चाहिये। यह सोच एक दिन उदास-मुख हो बैठ रही, आंखों से आंसू की धारा भी बहा रही थी कि इतनेही में महाराज महासेन महल में आ गये, देखतेही भौचक्र से हो लगे रानी से पूछने—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चौपाई।

कहहु, प्रिये, केहि कोप चढ़ावा! केहि तोहि कहँ दुख दुसह सहावा॥
कहु केहिकर धन प्राण नसावौं। कहु केहि लै तुव चरण गिरावौं॥

रानी ने उत्तर दिया।

क्या पूछहु, जेहि दीन्ह दुख, नहिं अस सो महराज॥
दण्ड सकहु तेहि देइ तुम, क्यों पूछत बेकाज॥

यह सुनतेही राजा चकपका गये, रानी से बार बार हठ करके पूछने लगे तब रानी ने मिथ्या बात बना कहना आरम्भ किया,—"आर्य्यपुत्र! जब आप आग्रह करके पूछतेही हैं तो मैं बतलाये देती हूं, सुनिये, यह जो गुणशर्म्मा ब्राह्मण है, आप समझते हैं कि राजभक्त है परन्तु वह बड़ा छली है, वह गौड़ेश्वर से धन पाने की इच्छा से आपकी बुराई किया चाहता है। उस दुष्ट ने गौड़राज के पास गुप्तरूप से अपना विश्वासी दूत भेजकर धन इत्यादि मांगा था परन्तु उसे देख उस राजा के विश्वासी रसोइये ने कहा कि महाराज व्यर्थ धन नष्ट मत कीजिये मैं आपका यह काम सहज में कर दूंगा। उसका इतना कहना सुन राजा ने गुणशर्म्मा के दूत को कैद कर लिया और वह रसोइया सलाह गुप्त रख यहां आपको विष देने आया। इतने में किसी प्रकार बन्धन से छूट गुणशर्म्मा का दूत भी भाग के इसके पास चला आया। गुणशर्म्मा ने सब वृत्तान्त जान लिया और हमारी रसोई में लाकर उसे पहिचनवा दिया। वह धूर्त तो सब सुनही चुका था, जब सूपकार आपको भोजन परोसने लगा तो उसने रोक कर आपसे विष का हाल कह कर उसे मरवा डाला। आज उस रसोइये की पत्नी माता और छोटा भाई पता लगाने यहां आये, यह बात गुणशर्मा को विदित हो गयी सो उस दुष्ट ने उस विचारे की माता और पत्नी को मार डाला, भाई किसी प्रकार भाग के मेरे महल में आ छिपा। वह शरणार्थी मुझसे सब हाल कहही रहा था कि गुणशर्म्मा मेरे भवन में चला आया, उसको देख और उसका नाम सुनतेही वह विचारा ताबड़-तोड़ मेरे साम्हने से न जाने कहां भाग गया। गुणशर्म्मा भी उसे देख के, जिसे कि उसके नौकर ने पहिले दिखा दिया था, कुछ चिन्ता करता सा जान पड़ा; मुझको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह देख आश्चर्य हुआ तो मैंने उससे पूछा "गुणशर्मा! आज तुम कुछ औरही प्रकार के क्यों दीख पड़ते हो, क्या शरीर कुछ अस्वस्थ है?" तब वह भेद खुल जाने के भय से और मुझे अपनी ओर मिलाने की इच्छा से कहने लगा,—'देवि! प्रेमाग्नि से मैं जला जाता हूं सो मेरी अभिलाषा पूरी कर दीजिये, देखिये यदि आप ऐसा न करेंगी तो मैं नहीं जीने का, सो मुझे प्राणदक्षिणा दीजिये"। इतना कह वह निगोड़ा सूने घर में मेरे चरणों पर गिर पड़ा। तब मैं घबड़ा गई और अपना पांव हटा उठ खड़ी हुई कि इतनेही में उस दुष्ट ने भी उठकर मुझ अबला को बलपूर्वक दबका लिया। भाग्यवश उसी समय पल्लविका दासी पहुँच गई उसे देखतेही वह डर के मारे निकल भागा। महाराज! यदि पल्लविका न पहुँच जाती तो वह पापी मुझको भ्रष्ट कर चुका था, ऐसा तो आज का हाल है, यही मुझ पर बीता है सो आपको कह सुनाया। इस प्रकार झूठी बात बना कर सुनाने के उपरान्त रानी चुप हो गयी और फिर रोने लगी। ठीकही है—

"जनमी प्रथम असत्यता ता पीछे कुलटा भई"।

इतना सुनतेही राजा क्रोध से जल उठे। स्त्रियों के वचन पर विश्वास करने से महात्माओं का भी विवेक चला जाता है, राजा हैं किस गिनती में?। तब महीपति रानी को समझा बुझा कहने लगे कि हे सुन्दरि! शान्ति रक्खो, मैं उस दुष्ट को अवश्य प्राणदण्ड देऊँगा किन्तु यह काम एक युक्ति से किया जायगा नहीं तो बड़ाही अपयश होगा, क्योंकि यह बात तो सारा संसार जानता है कि उसने पांच वार मेरे प्राण बचाये हैं। फिर उसने तुम्हारे साथ जो अनर्थ किया है सो प्रकाश करने योग्य तो है नहीं, इससे इस समय शान्ति रक्खो, मैं उसके उपाय में लगता हूं। यह सुन रानी ने उत्तर दिया कि अच्छा यह दोष तो प्रकाश करने योग्य नहीं है तो यह बात क्यों न खोल दी जाय कि गौड़ेश्वर की मित्रता से वह अपने प्रभु से द्रोह रखता है। रानी की ऐसी बात सुन राजा बोले 'हां हां, ठीक कहा', इतना कह राजा महासेन अपनी सभा में चले गये।

राजसभा लग गई, धीरे धीरे राजा, राजपूत, सर्दार और मन्त्री सब लोग दर्शनों को आने लगे। सभा का समय हुआ जान गुणशर्मा भी अपने घर से निकला, मार्ग में उसे असगुन दीख पड़ने लगे, बाईं ओर कौआ दिखाई दिया, कुत्ता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाईं ओर से दक्षिण की ओर चला गया, दहिने एक सांप पड़ा, बाईं भुजा फड़क उठी। अब ब्राह्मण अपने मन में विचारने लगा कि निश्चय इन अशकुनों से कोई भारी विपत्ति मुझ पर आनेवाली है, अस्तु जो कुछ हो सो मुझेही हो किन्तु मेरे प्रभु राजा अच्छी तरह रहें, उन्हें कुछ न हो, और न राजकुल का किसी प्रकार अनिष्ट हो। इस प्रकार राजभक्ति से सोचता हुआ गुणशर्म्मा राजसभा में जा उपस्थित हुआ और जयजयकार मनाकर अपनी जगह पर बैठ गया। आज राजा ने पहिले के समान उसे प्रणाम नहीं किया प्रत्युत क्रोध की दृष्टि से तरेर उसे देखने लगे। यह देख गुणशर्म्मा शङ्कित होके अपने मनमें विचारही रहा था कि आज है क्या, कि इतने में राजा सिंहासन से उठ के उसके बगल में जा बैठ, इससे सभ्यों को भी बड़ा आश्चर्य हुआ तब महीपति बोले कि सुनो गुणशर्म्मा के साथ मेरा कुछ न्याय है। गुणशर्म्मा ने राजा से कहा कि महाराज मैं कहां नौकर, आप प्रभु, भला हम दोनों का व्यवहार कब एक समान हो सकता है, जाके सिंहसन पर बैठिये तब जैसी इच्छा हो वैसी आज्ञा दीजिये। जब उस धीर ब्राह्मण ने ऐसा कहा और मन्त्रियों ने भी समझाया तब महाराज अपने सिंहासन पर जा विराजे और फिर सभासदों से कहने लगे कि यह बात आप लोगों को विदित है कि मैंने अपने कुलागत मन्त्रियों को छोड़ के इस गुणशर्म्मा को यहां लों बढ़ाया कि अपने बराबर कर लिया, अब सुनिये कि क्योंकर इसने दूतों को भेज भाज के गौड़ेश्वर से मेल कर मेरी बुराई विचारी है। इतना कह राजा ने जो कुछ अशोकवती से गढ़न्त सुना था सब कह सुनाया, इतनाही नहीं किन्तु अपने सतीत्वभङ्ग को जो बात अशोकवती ने मिथ्या कही थी राजा ने अपने विश्वासी मन्त्रियों के साम्हने वह भी कह डाली। यह सुन गुणशर्म्मा बोला "महाराज! किसने आप से ऐसी झूठी २ बातें कहीं हैं, किसने आकाश में चित्र खींचा है?" इतना सुन महीपति बोले कि पापिष्ट! यदि यह बात झूठी है तो भला यह बता तूने क्योंकर जाना कि भोजन में विष था?। "महाराज! विद्या से सब कुछ जाना जाता है" गुणशर्म्मा के इतना कहतेही अमात्य लोग डाह से बोले "यह असम्भव है।" गुणशर्म्मा बोला कि महाराज सत्य का निर्णय बिना किये आपको ऐसा कहना उचित नहीं, जो प्रभु होके विचार न करे, नीतिज्ञ लोग उसकी प्रशंसा नहीं करते।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यही बात वह ब्राह्मण बार २ कह रहा था कि इतने में राजा ने दौड़ के, यह कहते हुए कि 'ढीठ कहीं का', उस ब्राह्मण पर छूरी चलाई, ब्राह्मण बचा गया यह देख राजा के नौकर चाकर उसपर टूट पड़े और प्रहार करने लगे । गुणशर्म्मा तो सब गुणों में निपुण था ही उसने भी अपना कौतुक दिखाया; झट मंत्र विद्या से सभों के खड्ग छीन लिये जब सब निरस्त्र हो गये तो सबों की चुटैया एक दूसरे की चुन्दी से बांध दी और यह दिखा दिया कि देखो मैं भी कुछ गुण रखता हूं। इतना कर ब्राह्मण उस सभा से निकल खड़ा हुआ; तब कोई सौ एक योद्धा उसे मारने को उसके पीछे दौड़े पर उसने सब का काम तमाम कर डाला । गुणशर्म्मा ने विचारा कि अब इस देश में रहना अच्छा नहीं, सो कपड़े के कोने में जो अदृश्य करनेवाला अंजन बँधा था झट उसे आखों में लगा लोप हो वह विप्र तत्क्षण वहां से निकल गया।

गुणशर्म्मा अब दक्षिण की ओर चला और रास्ते में यह सोचता चला जाता था कि हो न हो यह अशोकवती की ही करनी है, उसी की प्रेरणा से राजा ने ऐसा किया। अहो ! अनुरागिणी स्त्रियां अपमान करने पर विष से भी बढ़ कर हो जाती हैं ! ओह ! जो राजा अविवेकी हो साधु पुरुषों को उचित हैं कि उसका संसर्ग कभी न करें। इस प्रकार की चिन्ता करते २ वह एक गांव में पहुँचा वहां जाकर देखता क्या है कि बड़ के नीचे एक द्विजोत्तम विद्यार्थियों को पढ़ा रहे हैं, सो उनके सामने जाकर उसने प्रणाम किया। उन ब्राह्मण ने भी इसको आशीर्वाद दिया और तत्क्षण यह पूछा "ब्राह्मण ! कहो तो कौन शाखा पढ़ते हो ?" गुणशर्म्मा ने उत्तर दिया "ब्रह्मन् मैं बारह शाखा पढ़ना जानता हूं। सामवेद की दो, ऋग्वेद की दो, सात यजुर्वेद की और एक अथर्वणवेद की । यह सुन के उन्होंने कहा "तब तो तुम देवस्वरूप हो" इतना कह गुणशर्म्मा से कि जिसके आकार ही से श्रेष्ठता प्रगट होती थी, बड़ी नम्रता से फिर पूछा "कहो तो किस देश को, किस कुल को तुमने अपने जन्म से अलङ्कृत किया है ? तुम्हारा नाम क्या है और तुमने इतना कहां पढ़ा ?" यह सुन गुणशर्म्मा कहने लगा।

उज्जयिनीपुरी में आदित्यशर्म्मा नामक एक ब्राह्मणसन्तान रहते थे, वह जब पांच ही वर्ष के थे तब ही उनके पिता का देहान्त हो गया, माता उनकी अपने पति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के साथ सती हो गई । तब वे उसी नगरी में अपने मामा के घर में रहके चारों वेद, सब विद्या और कलाएं सीखने लगे; कुछ दिनों के उपरान्त बड़े होने पर सम्पूर्ण विद्याओं को पढ़ के जब वह पण्डित हुये और जप करने लगे कि इसी अवसर में किसी सन्यासी से उनकी मित्रता हो गयी । वह परिव्राट् अपने मित्र आदित्यशर्म्मा के साथ पितृवन (श्मशान) में जाकर यक्षिणी सिद्ध करने के लिये होम करने लगा । तब उत्तम कन्यायों से घिरी अच्छे २ भूषणों से खूब सजी एक दिव्य कन्या सोने के विमान में बैठी उसके पास आई और मधुर वचन से कहने लगी "सन्यासिन् ! मैं विद्युन्माला नाम्नी यक्षी हूं और ये सब भी यक्षिणी हैं; सो इस मेरे परिवार में से जिसे चाहो एक को चुन लो, क्योंकि तुम्हारे इस मन्त्र के साधने से बस इतनाही सिद्ध हुआ है; तुम मेरे साधन का पूरा मन्त्र नहीं जानते हो इससे मैं सिद्ध न हुई; अस्तु अब और क्लेश करने से कुछ लाभ नहीं, जो हुआ सो हुआ" । उस यक्षी की इतनी बात सुन, उस पर सम्मत हो योगी ने उनमें से एक यक्षी को चुन लिया और विद्युन्माला अन्तरित हो गयी । तदुपरान्त जो यक्षिणी उस सन्यासी को सिद्ध हुई थी उससे आदित्यशर्म्मा ने पूछ "क्या विद्युन्माला से भी उत्तर कोई यक्षिणी है ?" यह सुन कर उसने उत्तर दिया कि हे सुन्दर । हां है; विद्युन्माला, चन्द्रलेखा तीसरी सुलोचना, सब यक्षिणियों में येही तीनों उत्तम हैं फिर इन तीनों में सुलोचना । इतना कह ठीक समय पर आने की प्रतिज्ञा कर यक्षिणी चली गयी औरआदित्यशर्म्मा के साथ वह योगी भी उनके घर चला गया । अब वह प्रसन्न यक्षिणी प्रति दिन ठीक समय पर आती और परिव्राट् जो २ मांगता सो देती । एक दिन आदित्यशर्म्मा ने सन्यासी के द्वारा उस यक्षिणी से यह पुछवाया कि सुलोचना के सिद्ध करने का मन्त्र कौन जानता है; यक्षिणी ने भी उसी योगी के मुख से यह उत्तर कहला भेजा कि दक्षिण दिशा में तुम्बवन नाम एक स्थान है तहां वेणानदी के तीर पर बौद्धसन्यासियों में श्रेष्ठ विष्णुगुप्त नामक एक परिव्राट् रहता है वह उसके सिद्ध करने का मन्त्र विधिपूर्व्वक जानता है। यक्षिणी से ऐसा सुन कर आदित्यशर्म्मा बड़ी उत्कण्ठा के साथ उस देश के लिये चले, प्रेम के कारण परिव्राजक भी पीछे २ चला । वहां पहुंचने पर उस योगी का पता लग गया, उसके पास जाय आदित्यशर्म्मा उसकी सेवा तीन वर्षलों बड़ी भक्ति से करते रहे ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और उस परिव्राट् की सिद्ध की हुई यक्षिणी से विविध प्रकार के स्वर्गीय उपचार मंगा २ उसकी परिचर्य्या किया करते थे। इस प्रकार की सेवा शुश्रूषा से वह सन्यासी अत्यन्त सन्तुष्ट हो गया सो उसने आदित्यशर्म्मा को विधानसहित सुलोचना के सिद्ध का मन्त्र बतला दिया। तदनन्तर आदित्यशर्म्मा किसी एकान्तस्थान में जाकर उस मन्त्र का जप करने लगे समाप्त होने पर उन्होंने विधिपूर्व्वक उसका हवन भी किया। तब वह सुलोचना यक्षिणी विमान पर बैठी प्रगट हुई उसका रूप ऐसा था कि जिसे देख तीनों जगत् को आश्चर्य्य हो जाय, वह बोली "आओ २ अब तो मैं सिद्ध हो गई अब तुम्हें क्या चाहिये; पर एक बात है कि यदि तुम मुझ से एक महावीर, ऋद्धिशाली, सुलक्षण, सर्वज्ञ, सर्वदा विजयी ऐसा पुत्र चाहते हो तो छः महीने तक मेरा कुमारीपन नष्ट न करना।" इतना उसका कहना सुन आदित्यशर्म्मा उसकी बात पर सम्मत हुए तब वह उन्हें अपने विमान पर बैठा अलका पुरी को ले गयी। आदित्यशर्म्मा सदा अपने समीप उसे देखते रहते, इस प्रकार वह छः मास लों असिधारा व्रत * करते रहे, अन्त में उनकी तपस्या से कुबेर अति प्रसन्न हुए सो दिव्य विधि से सुलोचना का उनके साथ विवाह कर दिया। महाराज। उसी सुलोचना के गर्भ से मैं उनका पुत्र हुआ मेरे उत्तम गुणों के कारण पिताजी ने मेरा नाम गुणशर्म्मा रक्खा और वहीं मणिधर नामक यक्षाधिपति से क्रमशः वेदों, सब विद्याओं तथा नाना कलाओं की शिक्षा मैंने पाई।

एक समय की बात है कि कुबेर से भेंट करने इन्द्र महाराज आये, उनको देखतेही सभा के सब लोग खड़े हो गये पर दैवयोग से मेरे पिता झटपट न खड़े हुए, उस समय उनका ध्यान कहीं अन्यत्र लगा था। पुरन्दर को बड़ा क्रोध आया बस उन्होंने तुरत शाप देही तो दिया कि धिक्मूर्ख! जा तू अपने उसी मर्त्यलोक में, तू यहां रहने के योग्य नहीं है, इतना सुनतेही मेरी माता सुलोचना उनके पैर पकड़ प्रार्थना करने लगी तब शक्रने कहा कि मेरा शाप तो अन्यथा हो नहीं सकता; अच्छा यह स्वयं मर्त्यलोक को न जावे किन्तु इसका यह जो पुत्र है वही जावे, क्योंकि पुत्र तो पिता का आत्मस्वरूपही है। इतना कहके

* ऐसा व्रत जो कि तलवार की धार पर खड़े होने की नाईं कठिन हो।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किसी २ प्रकार पाकशासन महाराज का कोप शान्त हुआ। तब मेरे पिता मुझे लाके उज्जयिनी में अपने मामा के घर रख गये क्योंकि जो जिसके कर्म मे लिखा है वही न होता है। दैवात् वहां के राजा से मेरी मित्रता हो गयी आगे वहां भी जो कुछ मुझ पर बीता सोभी कह सुनाता हूं; सुनिये।

इतना कह, आदि में क्या २ हुआ, अशोकवती की करनी, राजा ने क्या किया अन्त में कैसे २ युद्ध हुआ, सो सब वृत्तान्त गुणशर्म्मा ने आद्योपान्त कह सुनाया, फिर कहा कि ब्रह्मदेव! इस २ प्रकार से मैं किसी देश को भाग चला कि मार्ग में आपके दर्शन हो गये। इतना सुन वह ब्राह्मण गुणशर्म्मा से बोला "मैं धन्य हूं कि तुम मेरे अतिथि हुए, आओ मेरे घर चलो; मेरा नाम अग्निदत्त है, यह गांव मुझे राजा की ओर से मिला है, सो किसी बात की चिन्ता मत करो।" इतना कह अग्निदत्त, गुणशर्म्मा को अपने घर ले गया जहां अनेक गौ भैंसें और घोड़े थे। वहां सुगन्धित उपटन लगाके पश्चात् स्नान कराया गया पीछे उत्तमोत्तम वस्त्र और आभूषण पहिराये गये तदुपरान्त नाना प्रकार के पकवान खिलाये गये इस प्रकार उस अतिथि का उत्तम सन्मान किया गया। पश्चात् लक्षण दिखाने के बहाने से उस ब्राह्मण ने सुन्दरी नाम्नी अपनी कन्या को ला उसे दिखाया कि जो सचमुच सुन्दरीही थी जिसके रूप से अमर भी मोहित हो जावें। गुणशर्म्मा भी उस अनन्य सुन्दरी को देखकर, लक्षण विचार के बोला "महाराज! इसके कई एक सौतें होंगी; देखिये इसकी नाक पर तिल है, और इसीके भरोसे मैं कहता हूं कि इसकी छाती पर भी एक दूसरा तिल है, और इन दोनों स्थानों के तिलों का ऐसाही फल कहा गया है।" इस प्रकार गुणशर्म्मा के कहने पर उसका भाई पिता की आज्ञा से जो उसकी छाती उघार के देखता है तो वहां भी एक तिल दिखाई पड़ा। तब तो अग्निदत्त को बड़ाही आश्चर्य्य हुआ, उसने गुणशर्म्मा से कहा कि सचमुच तुम तो सर्व्वज्ञही हो, अच्छा यह तो कहो कि इसके ये दोनों तिल अशुभ तो नहीं है! यह सुन गुणशर्म्मा ने कहा कि भला ऐसी सुलक्षणा के ऐसी आकृति का फल कभी असुभ हो सकता है। जब पति श्रीमान् होता है तब न सौतें होती है, दरिद्र को तो एक स्त्री का पालन करना महाकष्ट हो जाता है तो वह बहुतेरो पत्नियों का भरणपोषण कब कर सकता है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रसङ्गवश पूछने पर गुणशर्म्मा ने स्त्री और पुरुषों के तिल और मसे आदि के फल अलग २ कह सुनाये। गुणशर्म्मा को देखतेही वह सुन्दरी बड़ी उत्कण्ठा से टकटकी लगाये चकोरी की भांति उसका चन्द्रवदन निरखतीही रह गयी।

तदनन्तर एकान्त में अग्निदत्त ने गुणशर्म्मा से कहा "महाराज! यह सुन्दरी कन्या मैं तुमको व्याह देता हूं, विदेश जाके क्या करोगे यहीं मेरे घर में सुख से रहो।" उस ब्राह्मण की ऐसी बात सुन गुणशर्म्मा ने उत्तर दिया "आपका कहना बहुतही ठीक है, ऐसा करने से मुझे क्या सुख न मिलेगा; किन्तु मिथ्या दोषा रोपण करके राजा ने जो मेरा अपमान किया उसके सन्ताप से मेरा चित्त तो इस समय उत्तप्त हो रहा है तो इससे मुझे कब प्रसन्नता हो सकती है। मनो हारिणी कान्ता, चन्द्रमा का उदय तथा वीणा का पञ्चमस्वर इनसे सुखी लोगों कोही आनन्द होता है दुःखियों को तो केवल व्यथा होती है। जो स्त्री आपही आप अनुरागिणी हो के पत्नी होती है वह व्यभिचारिणी नहीं होती परन्तु विवश होके जो पिता से दी जाती है वह तो व्यभिचारिणी हो जाती है जैसे अशोकवती। और फिर उज्जयिनी पुरी यहां से समीपही है जो कहीं राजा को मेरा पता लग गया तो वह मुझे सताने लगेंगे। इससे मेरी इच्छा यह है कि तीर्थस्थानों में घूम २ कर आजन्म के पाप को छोड़ा डालूं पुनः इस शरीर का त्याग कर अनन्त शान्ति प्राप्त करूं।" ऐसी बात सुन अग्निदत्त ने कहा कि जब तुम सरीखे ज्ञानी को ऐसा मोह हुआ है तो कहो दूसरों की क्या गति होगी, तुम्हारा आत्मा तो शुद्ध है किसी मूर्ख के अपमान करने से शोक कैसा, कीचड़ ऊपर उछालने से फेंकनेवालेही के शिर पर गिरता है। राजा अपनी अविवेकता का फल शीघ्रही पा जावेंगे क्योंकि जब कोई मोहान्ध और विवेकहीन हो जाता है तब उसकी लक्ष्मी बहुत दिन नहीं ठहरती। फिर जो अशोकवती के चरित्र से स्त्रियों पर तुम्हारा वैराग्य हो गया है तो किसी सती को देख कर तुम उनपर श्रद्धा क्यों नहीं कर सकते, तुम तो लक्षण भी जानते हो। और यह जो कहा कि उज्जयिनी यहां से निकट है, सो सुनो मैं तुम्हें यहां इसप्रकार रक्खूंगा कि कोई भी न जान सकेगा कि तुम यहां हो। जो तीर्थ यात्रा करने की तुम्हारी इच्छा है तो मैं यह कहताहूं कि तीर्थयात्रा उस व्यक्ति के लिये ज्ञानियों द्वारा ठहराई गयी है जिसके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पास वैदिक कर्म्म को विधिपूर्वक सम्पादन के लिये पर्य्याप्त धन न हो, नहीं तो गृह में रह करही, देव, पितृ और अग्नि के कार्य्य तथा जप और व्रतादि करने से जो पुण्य की प्राप्ति होती है वह तीर्थयात्रा करनेवाले को कहां मिले । जो यात्री अपनी बांह की तकिया लगाके पृथ्वी पर ही शयन करता, भिक्षा मांग पेट भरता, अकेला और अकिञ्चन रहता; चाहे वह मुनि की समता को पहुंच जाय पर सांसारिक क्लेशों से कदापि मुक्त नहीं हो सकता । और जो तुम देहत्याग करके अनन्त सुख की वांच्छा रखते हो यह तो बड़ा भारी काम है क्योंकि आत्मघातियों को यहां से भी अधिक कष्ट परलोक में होते हैं। सो तुम युवा और विद्वान हो तुम को ऐसा वैराग करना अच्छा नहीं है, तुम स्वयं विचार कर सकते हो, यह जो मैं कह रहा हूं तुम को अवश्य मानना चाहिये । मैं तुम्हारे लिये पृथ्वी के भीतर एक सुन्दर मकान बनवा देता हूं सुन्दरी को व्याहके सुख से वहीं रहो कोई तुम्हें न जानेगा । इस प्रकार अग्निदत्त के समझाने बुझाने पर गुणशर्म्मा उसकी बात पर सम्मत हुआ और फिर बोला "मैं आपकी बात शिरोधार्य्य करता हूं, भला सुन्दरी (ऐसी) भार्य्या को कौन त्याग देगा, महाराज जबलों मैं अपना कार्य्य न साधन कर लूंगा तबलों आपकी कन्या को न व्याहूंगा, जबलों मैं बड़े संयम के साथ किसी देवता की आराधना करके उस कृतघ्न राजा से बदला न चुका लूंगा तबलों मेरे पेट का पानी न पचेगा ।" उसकी यह बात अग्निदत्त ने सहर्ष मान ली फिर उस रात्रि में गुणशर्म्मा ने सुख से विश्राम किया ।

दूसरे दिन अग्निदत्त ने गुणशर्म्मा के सुबीते के लिये एक अत्यन्त गुप्त पातालवसति नामक भूगृह बनवाया, उसमें वास करके गुणशर्म्मा ने एकान्त में अग्निदत्त से कहा "कहिये इसके भीतर रहके किस वरदाता देव को मैं व्रतचर्य्या से भक्तिपूर्व्वक आराधना करूं, और कौन सा मन्त्र जपूं ।" इस प्रकार उस धीर ब्राह्मण की बात सुन अग्निदत्त ने कहा कि मेरे गुरुदेव का बतलाया स्वामिकार्तिक का मन्त्र मुझ को आता है सो उसी मन्त्र से तुम तारकासुर के नाशक देवताओं के सेनापति षड़ानन की आराधना करो । जब शत्रुओं से विबुध लोग बहुत सताये गये तब उनके जन्म की इच्छा से उन्होंने कामदेव को भगवान् शूलपाणि के पास भेजा, परन्तु शम्भु की क्रोधाग्नि से वह पंचशर भस्मीभूत हो गया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब देवाधिदेव महादेव ने सङ्कल्पजन्मा बना दिया। उन स्वामिकार्तिक के जन्म की कथा बड़ी विचित्र है, महेश्वर से, अग्निकुण्ड से, अग्नि से, शरवण से फिर कृत्तिकाओं से, ऐसा महात्मा लोग बतलाते हैं; उनके जन्म तेही उनको दुष्प्रधर्ष्य तेज सारा संसार आनन्द से भर गया तदुपरान्त उन्होंने दुर्जय तारकासुर का संहार किया। सो लो उनका मन्त्र मैं तुम को देता हूं, इतना कह अग्निदत्त ने गुणशर्म्मा को कार्तिकेयजी का मन्त्र बतला दिया। अब वह गुणशर्म्मा नियमपूर्व्वक उसी भूरुह में स्कन्द भगवान् की आराधना करने लगा और सुन्दरी उसकी परिचर्य्या करती। तब साक्षात् भगवान् षड़ानन प्रगट हो बोले "हे पुत्र! मैं तुमसे बड़ा प्रसन्न हूं वर मांगो"। * * * हे पुत्र! तुम्हारा कोष अक्षय होगा, तुम जाके महासेन को जीतोगे, और तुम अप्रतिहत होके पृथ्वी का राज्य करोगे"। इतना उत्तम वर देकर षण्मुख तो वहीं अन्तर्धान हो गये और गुणशर्म्मा को तुरत रुपयों से खचाखच भरा अक्षय कोष मिल गया।

तदनन्तर गुणशर्म्मा ने अपना मनोरथ पाकर अग्निदत्त की उस कन्या रूपवती सुन्दरी का विधिपूर्वक पाणिग्रहण कर लिया। वही सुन्दरी जिसका भाव नित्यप्रति उसके साथ बढ़ताही जाता था और जो कि उसकी भाविनी अर्थसिद्धि की मानो मूर्त्ति थी। अक्षयकोष के प्रताप से उस ब्राह्मण के हाथी घोड़े लाव लश्कर सब हो गये, सब राजाओं को धन देदे मिलाकर एक बड़ी भारी सेना जुटाकर ब्राह्मण गुणशर्म्मा उज्जयिनी को चला। पहुँचतेही सबसे पहिले उसने वहां की प्रजा से अशोकवती का चारित्र कह सुनाया, पश्चात् महासेन से युद्ध किया सो उसमें महाराज महासेन को जीत राज्यासन से उतार दिया और पृथ्वी का राज्य अपने हाथ में कर लिया। अब गुणशर्म्मा महाराज हो गये, समुद्र तक उनकी आज्ञा चलने लगी, तदुपरान्त और राजाओं की कन्याओं से विवाह कर अनेक प्रकार के अभीष्ट भोगों के भोग-विलास कर वे सुखपूर्वक सुन्दरी के साथ रहने लगे।

दोहा।

इहि विधि निज अविवेकते, महासेन महिपाल॥
पूर्व्वकाल में हीनमति, पायो विपति कराल॥१॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सोरठा।

करि धीरजहिं सहाय, गुणशर्म्मा गुणआगरो ॥
ऋद्धि सिद्ध अधिकाय, पावत भो निज बुद्धिबल ॥ १ ॥

दोहा।

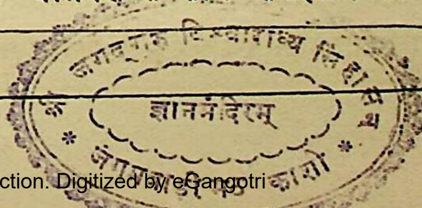
एहिविधि सुनि निज सचिव तें, कथाउदार भुआल।
सूर्य्यप्रभ उत्साहयुत, सोइ गये तेहि काल ॥ २ ॥

सातवां तरङ्ग।

सबेरा होतेही सूर्य्यप्रभ अपने मन्त्रियों के संग जागे और दैत्यदानवादि की सेना के साथ युद्धक्षेत्र में गये, उधर से सब विद्याधरों के सैन्य लिये दिये श्रुतशर्म्मा आ डँटे और उसी प्रकार समस्त देवता और असुर युद्ध देखने के लिये आकाश में आ विराजे। दोनों ओर अर्द्धचन्द्राकार व्यूह बनाया गया और युद्ध होने लगा आज का युद्ध अद्भुत हुआ पत्रयुक्त वाण जो छूटते थे, सो परस्पर लड़के एक दूसरे के फल को काट डालते थे, लम्बी २ लपलपाती तलवारें म्यानों से निकल के वीरों का लहू पीती ऐसी जान पड़ती थी कि मानो यमराज की जिह्वायें रक्त पान कर रही हैं। वह युद्धभूमि राजहंसों के नाश के निमित्त एक झील के समान जान पड़ती थी जिसमें शूरों के कटे शिर मानो फूले कमल थे जिन पर चक्ररूपी कलहंस उड़ते थे। वह रणभूमि मानो यमराज की गेंद खेलने की जगह * थी जहां वीरों के शिर ऊपर उछल उछल कर नीचे गिरते थे। जब रणभूमि की धूलि योद्धाओं के रक्त से सिंच कर शान्त हो गयी तब महारथी लोग परस्पर द्वन्द्व युद्ध करने लगे।

आज सूर्य्यप्रभ भी युद्धक्षेत्र में उतरे और श्रुतशर्म्मा के साथ युद्ध करने लगे, दामोदर के साथ प्रभास भिड़ गये, महोत्पात के साथ सिद्धार्थ लड़ने लगा, ब्रह्मगुप्त से प्रहस्त और वीतभीति संगम से, प्रज्ञाढ्य चन्द्रगुप्त के साथ लड़ने लगा, प्रियङ्कर अक्रम के संग समर में खड़ा हुआ, अतिबल के साथ सर्वदमन का द्वन्द्वयुद्ध

* क्रिकेट् ग्राउण्ड।


CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होने लगा, धुरन्धर के साथ कुञ्जरकुमार तथा और जो महारथी रहे सो दूसरे महारथियों से भिड़कर पृथक् २ द्वन्द्वयुद्ध करने लगे । अब पहिले महोत्पात ने अपने बाणों से सिद्धार्थ के शर का भंग कर उसके धनुष को काटकर सारथी सहित घोड़ों को मार डाला । सिद्धार्थ विरथ हो गया और क्रोध कर दांत कटकटाता दौड़ा और लोहे की बड़ी भारी गदा से महोत्पात के रथ को घोड़ों सहित चकनाचूर कर डाला। अब दोनों पैदल लड़ने लगे, होते २ दोनों में बाहु युद्ध आरम्भ हुआ तब तो सिद्धार्थ उसे पृथ्वी पर पटक मटियामेट कियाही चाहता था कि उसके पिता खेचरभग ने आकर बचा लिया तब तो महोत्पात उठके रण से भाग गया। प्रहस्त और ब्रह्मगुप्त भी परस्पर लड़ते २ विरथ हो गये तब दोनों खड्ग ले नाना प्रकार के दांव पेंच से लड़ने लगे। इतने में प्रहस्त ने उसकी ढाल काट डाली और युक्ति से उसे धरती पर गिरा दिया। अब ज्योंही प्रहस्त ब्रह्मगुप्त का शिर काटा चाहते थे कि दूर से उसके पिता ब्रह्मा ने स्वयं निवारण कर दिया। यह देख सब दानव हँस हँसकर कहने लगे कि हे देवो! तुम लोग अपने अपने पुत्रों को बचाने आये हो, युद्ध देखने नहीं आये हो । इतने में वीतभय ने संक्रम का धनुष काट सारथी मार, उसके हृदय में प्रद्युम्नास्त्र चुभो उसे मार डाला। प्रज्ञाढ्य और चन्द्रगुप्त भी युद्ध करते २ रथहीन हो गये, तब पैदलही खड्गयुद्ध करने लगे कि इतने में प्रज्ञाढ्य ने फुर्त्ती से उसका शिर उड़ा दिया। पुत्र के बध से चन्द्रमा को बड़ाही क्रोध हुआ तब वह स्वयं आकर प्रज्ञाढ्य से लड़ने लगे दोनों का परस्पर संग्राम होने लगा। उधर लड़ते २ प्रियङ्कर विरथ हो गया और उसने भी आक्रम को रथहीन कर दिया फिर तलवार से ऐसा प्रहार किया कि आक्रम का शिर धड़ से पृथक् हो गया। अतिबल ने सर्वदमन का धनुष काट डाला सो उसने ऐसा निशाना ताक के इसके हृदय में अङ्कुश मारा कि यह ठांवही कण्डा हो गया। उस ओर कुञ्जरकुमार ने अस्त्रप्रत्यस्त्र से युद्ध करते करते बार २ धुरन्धर को विरथ कर डाला, परन्तु विक्रमशक्ति फिर २ उसको रथ पहुँचाता तथा कुञ्जरकुमार के अस्त्रों को दूर कर उसकी रक्षा करता गया, तब तो कुञ्जरकुमार को बड़ाही क्रोध आया उसने दौड़कर एक भारी शिला उसके रथ पर फेंकी कि उसका रथ चूर २ हो गया और वह भाग गया, तब उसी पत्थर से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसने धुरन्धर को चूर २ कर डाला। सूर्य्यप्रभ तो उधर श्रुतशर्म्मा के साथ लड़ रहे थे तथापि विरोचन के बध से क्रुद्ध हो उन्होंने एक वाण चलाय दम के दम में दम निकाल दिया। इसीसे कोप कर दोनों अश्विनीकुमार दौड़े परन्तु सुनीथ ने उनपर तीरों की झड़ी लगा दी सो तीनों में घोर संग्राम होने लगा। और स्थिरबुद्धि ने अपनी शक्ति से पराक्रम को मार डाला, इससे आठों वसु दांत पीसते दौड़े सो वह इन आठों से अकेलेही लड़ने लगा। मर्दन ने लड़ते २ भास को विरथ कर दिया। यह देख दामोदर के साथ लड़ते हुये भी प्रभास ने ऐसा वाण चलाया कि वह स्वर्ग का बटोही हो गया। अस्त्रयुद्ध करते २ जब तेज:प्रभ प्रकम्पन के द्वारा बध किया गया तब अग्निदेव क्रोध कर दौड़े तब वह दानव इनसे भी लड़ने लगा। यमदंष्ट्र को धूमकेतु ने मार डाला तब महा कोप कर यम-राज युद्ध में आ विराजे तव उसे इनसे भी अतिदारुण समर करना पड़ा। यमदंष्ट्र सुरोषण को पत्थर से चकनाचूर कर उसके बध से आमर्षयुक्त निर्ऋति से लड़ने लगा। कालचक्र ने भी चक्र से वायुबल को दो टुकड़े कर डाला, सो देख कोप से जलजलाते पवनदेव युद्ध में आ विराजे सो वह इनसे भी लड़ने लगा। महामाय और कुबेरदत्त लड़ते २ रूप बदलौवल करने लगे, जब यह सर्प बना तब वह गरुड़ हो गया, जब यह पर्वताकार हुआ तब वह बज्र बन गया और जब यह वृक्षरूप में हो गया तब उसने अग्निरूप धारण कर लिया। इस प्रकार उसने इस विमोह देनेवाले को मारही तो डाला। तब क्रोध कर स्वयं कुबेर आकर उससे लड़ने लगे। इसी प्रकार अपने २ अंश (पुत्र) के बध होने से क्रोध कर २ सब सुर आय आय युद्ध करने लगे। और दूसरे २ जो विद्याधरेन्द्र रण में आये आतेही आते मानवों और दानवों के द्वारा मार डाले गये।

इतने में उधर प्रभास का दामोदर के साथ अस्त्र और प्रत्यस्त्रों के प्रहारों से महाभयङ्कर युद्ध होता रहा। इस अवसर में दामोदर का धनुष कट गया और सारथि हत हुआ तब वह झट दूसरा कोदण्ड ले स्वयं घोड़ों का लगाम पकड़के युद्ध करने लगा। यह देख ब्रह्माजी उसकी वाहवाही करने लगे तब इन्द्र ने उनसे पूछा "भगवन्! यह विचारा तो क्रमशः क्षीण हुआ जा रहा है तो आप इससे ऐसे सन्तुष्ट क्यों हुए हैं?" तब परमेष्टी (ब्रह्मा)ने यों उत्तर दिया कि क्यों न इसपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रसन्नता दिखाई जावे, देखो कितनी देर से वह प्रभास के साथ लड़ रहा है, हरि के अंश दामोदर के अतिरिक्त और कौन ऐसा कार्य्य कर सकता है क्योंकि सम्पूर्ण देवता भी युद्ध में प्रभास के साम्हने कुछ नहीं हैं। सुरों का मर्दनकारी जो नमुचि नाम का असुर था, वह पीछे सम्पूर्ण रत्नों से युक्त प्रबल नाम करके हुआ सो वही अब भास का दुर्जय पुत्र प्रभास होके जन्मा है, भास भी पूर्वजन्म में बड़ा प्रतापी असुर कालनेमि था, फिर वह हिरण्यकशिपु तत्पश्चात् कपिञ्जल हुआ। सुमुण्डीक नाम का जो असुर था सोही यह सूर्य्यप्रभ हुआ है। पहिले जमाने में जो हिरण्याक्ष था वही यह सुनीथासुर है और जो ये प्रहस्तादि हैं वे सब दैत्यदानव ही हैं। जो असुर तुम लोगों से मारे गये वेही ये अब फिर जन्मे हैं, यही कारण है कि मयादि इनके पक्ष पर हैं। देखो न सूर्य्यप्रभ इत्यादि ने ऐसा रुद्रयज्ञ किया कि उसके प्रभाव से बलि का बन्धन ढीला हो गया सो देखो वह भी युद्ध देखने आया है। यह बलि अपने वचन का प्रतिपालन करके पातालही में रहता है, फिर जब तुम्हारा राजत्वकाल बीत जावेगा तब वही इन्द्र होगा। सम्प्रति त्रिपुरारि का इनके ऊपर अनुग्रह है, यह तुम्हारे विजय का समय नहीं है इसलिये सन्धि कर लो, युद्ध करने से कुछ लाभ नहीं है।

इस प्रकार कमलासन सुरपति से कह रहे थे कि उधर प्रभास ने महापाशुपतास्त्र छोड़ा, उस सर्वसंहारी रौद्र अस्त्र को देखके विष्णु ने भी अपने पुत्र के स्नेह से सुदर्शनचक्र का प्रयोग किया। अब दोनों दिव्य अस्त्र रूपधारी हो परस्पर युद्ध करने लगे जिनसे अचानक विश्व का संहार होने लगा और तीनों जगत् भयभीत हो गये। विष्णुभगवान् ने प्रभास से कहा कि तुम अपने अस्त्र का संहार कर लो तो मैं भी अपना अस्त्र लौटा लूं। हरि की इतनी बात सुन प्रभास ने कहा कि मेरा अस्त्र तो व्यर्थ नहीं हो सकता सो दामोदर पीठ दिखा रण से अलग हो जावें तो मैं अपना अस्त्र लौटा लूं। उनकी ऐसी बात सुन भगवान् बोले तो तुम भी मेरे चक्र का मान रक्खो तो दोनों अस्त्र निष्फल न हों। अच्युत की इनी बात सुन कालज्ञ प्रभास ने कहा "बहुत अच्छा महाराज! आपका यह चक्र मेरा रथ नष्ट कर देवे" हरि के तथास्तु कहने तथा दामोदर के युद्ध से विमुख होने पर प्रभास ने अपना पाशुपतास्त्र लौटा लिया और तुरत भगवान् का चक्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनके रथ पर गिरा, तब प्रभास दूसरे रथ पर चढ़ सूर्यप्रभ के निकट चले गये और दामोदर भी श्रुतशर्म्मा के समीप गये।

इतने में वासव के अंश होने से श्रुतशर्म्मा का सूर्यप्रभ के साथ जो द्वन्द्वयुद्ध हो रहा था उसका रूप और भयङ्कर हो गया। श्रुतशर्म्मा बड़ी चेष्टा से जो जो अस्त्र चलाते थे सूर्यप्रभ तत्क्षण प्रत्यस्त्र से सो सो अस्त्र नष्ट कर देते थे। तब श्रुतशर्म्मा अनेक माया दिखाने लगे, इधर सूर्यप्रभ भी अपनी माया से उनकी माया को व्यर्थ करने लगे। तब तो श्रुतशर्म्मा को बड़ा कोप हुआ सो उन्होंने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया तब वीर सूर्यप्रभ ने झट पाशुपतास्त्र को छोड़ा, अब रुद्र का वह महाअस्त्र ब्रह्मास्त्र को पराजित कर ज्यों श्रुतशर्म्मा पर लपका कि इतने में इन्द्रादि लोकपाल अति क्रुद्ध हो चारों ओर से वज्र आदि नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्र बरसाने लगे। वह पाशुपतास्त्र सब अस्त्रों को जीत बड़ा प्रज्वलित हुआ और श्रुतशर्म्मा को मारने चला कि इतने में सूर्यप्रभ ने उसको बड़ी स्तुति कर कहा कि हे महास्त्र! श्रुतशर्म्मा को मत मारिये किन्तु बन्दी कर मेरे हवाले कर दीजिये। तब सम्पूर्ण अमर बलपूर्व्वक लड़ने पर उतारू हो गये, इधर जितने असुर तमाशा देखने आये थे वे भी देवताओं के जीतने की अभिलाषा से लड़ने को तत्पर हो डँटके खड़े हो गये। इसी अवसर में भगवान् शम्भु के भेजे वीरभद्र आकर इन्द्रादि सुरों से कहने लगे कि हे अमरो! देवाधिदेव महादेव का सन्देशा सुनो, त्रिपुरारि कहते हैं कि तुम लोग तो यहां तमाशा देखने न आये हो सो तुम्हारे लड़ने का कौन अवसर है, देखो तुम लोग मर्य्यादा का उल्लङ्घन करते हो इससे अच्छा न होगा। यह सुन विबुध बोले "हम सबों के पुत्र इस युद्ध में मारे गये और मारे जा रहे हैं सो हमलोग युद्ध क्यों न करें, बच्चों का स्नेह छोड़ते नहीं बनता, सो जहां तक हमसे बन पड़ेगा हमलोग उनके मारनेवालों से बदला लिये बिना न छोड़ेंगे, भला आपही कहिये इसमें क्या अनुचित है?"

इस प्रकार देवों की बात सुन, जब वीरभद्र चले गये तब सुरों और असुरों में घोर युद्ध होने लगा। सुनीथ अश्विनीकुमारों के साथ, चन्द्रमा से प्रज्ञाढ्य, स्थिरबुद्धि वसुओं के संग और वायु से कालचक्र, अग्नि से प्रकम्पन, सिंहदंष्ट्र निर्ऋति से, वरुण से प्रमथन, धूमकेतु यमराज से और कुबेर से महामाय परस्पर द्वन्द्वयुद्ध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करने लगे, उधर से जितने अस्त्रशस्त्र आते थे इधर से उनके मुकाबिले के अस्त्रशस्त्र छूटते थे। अन्त में ऐसा हुआ कि जो २ देव जो २ महास्त्र छोड़ते शङ्कर भगवान् तुरत हुङ्कारमात्र से नष्ट कर देते। इतने में कुबेर ने गदा उठाई परन्तु महादेव ने सामप्रयोग से उन्हें विरत कर दिया। इसी प्रकार जब सब सुरों के अस्त्र टूट टाट नष्ट हो गये तब वे रण छोड़ भाग चले। तब इन्द्र क्रोध कर सूर्य्यप्रभ के ऊपर नाना प्रकार के अस्त्रों की वर्षा कर उनसे लड़ने लगे परन्तु सूर्य्यप्रभ ने सब अस्त्रों को काट डाला पश्चात् कान तक धनुष तान शक्र पर सौ वाण छोड़े। तब शतक्रतु ने अति कुपित हो बज्र उठाया पर रुद्रभगवान् ने हुंकार कर उसे नष्ट कर दिया, तब तो सुरेश पीठ दिखा रणभूमि से हट गये।

जब पराङ्मुख हो देवराज चले गये तब स्वयं भगवान् नारायण आकर बड़े क्रोध से प्रभास के साथ युद्ध करने लगे, भगवान् ने तेज २ तीर * तथा अनेक अस्त्र छोड़े पर प्रभास अचल हो लड़ते रहे, पश्चात् प्रभास के घोड़े मारे गये, रथ चूर २ कर दिया गया तब वह दूसरे रथ पर चढ़ दैत्यारि हरि के साथ बराबर युद्ध में डटे रहे। तब तो मुरारि को बड़ाही कोप हुआ, उन्होंने अपना जल जलाता चक्र चलाया प्रभास ने भी तुरत अभिमन्त्रित कर एक खड्ग चलाया, दोनों आयुध परस्पर लड़ने लगे। तब खड्ग को चक्र से धीरे २ हारते देख भगवान् रुद्र ने हुंकार किया इससे खड्ग और चक्र दोनों अन्तर्धान हो गये। इस प्रकार सूर्य्यप्रभ के विजय होने तथा श्रुतशर्म्मा के बांधे जाने पर असुर जयध्वनि करके आनन्द मचाने लगे और सम्पूर्ण देव विपक्ष हो गये। तदुपरान्त सब अमर मिलके वृषध्वज भगवान् की स्तुति करने लगे आशुतोष तो महाप्रभु का नामही है सो सन्तुष्ट हो अम्बिकापति बोले "सुनो देवो; सूर्य्यप्रभ से मैं जो प्रतिज्ञा करा चुका हूं उसे छोड़ और जो वर चाहो मांग लो।" यह सुन सुरों ने कहा कि हे देव! जो अपने प्रतिज्ञा की है, महाप्रभो! वह भी सत्य हो और हमारे बच्चों का संहार न हो इतना कह जब अदितिनन्दन चुप हो गये तब भगवान् शङ्कर ने देवतों को आज्ञा दी कि सन्धि कर लेने पर ऐसा हो सकता है सो तुम लोग सन्धि कर लो, शर्त्त यह कि श्रुतशर्म्मा अपने अनुचरवर्ग के साथ सूर्य्यप्रभ को प्रणाम करे, तब तैसा

* करोड़ फरके वाण ऐसा अर्थ भी होता है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उपाय बतावेंगी जिसमें दोनों का कल्याण हो। शङ्कर के वचन का सब देवों ने समर्थन किया पश्चात् श्रुतशर्म्मा को सूर्य्यप्रभ के साम्हने झुकाय दिया दोनों बैरभाव त्याग गले लगके मिले तब सब सुरों और असुरों ने भी बैर छोड़ परस्पर मेल कर लिया। तदनन्तर सब देवों के सुनते भगवान् शम्भुने सूर्यप्रभ से कहा "वेदी के दक्षिण आधे में तुम चक्रवर्त्ती राज्य करो और उत्तर आधा श्रुतशर्म्मा को दे देओ। हे पुत्र थोड़ेही दिनों में तुम इससे चौगुना, समस्त खेचर किन्नरादिकों का साम्राज्य पाओगे। और जब उस साम्राज्य को पाके तुम एक विशेषपद पर स्थित होओगे तब यह दक्षिणार्द्धवेदी कुञ्जरकुमार को दे दीजियो। और ये जितने वीर दोनों ओर के रण में कट मरे हैं वे सब अक्षत शरीर हो जी उठें"। इतना कह भगवान् शम्भु वहीं अन्तर्धान हो गये और सब योद्धा जो युद्ध में मारे गये थे, उठ बैठे; शरीर में कहीं भी चोट नहीं; मानों नींद से जाग उठे हों

इसके उपरान्त शत्रुदमन सूर्य्यप्रभ शङ्कर का अनुशासन अपने मस्तक पर रख एकान्त स्थान में एक मैदान में सभा लगा बीच में बैठे कि इतने में श्रुतशर्म्मा भी आ गये सो उन्होंने स्वयं उन्हें आधे सिंहासन पर बैठा लिया। उनके संगी प्रभासादि तथा श्रुतशर्म्मा के साथी दामोदर इत्यादि दोनों के अगल बगल बैठ गये। मय, सुनीथ तथा और २ जो विद्याधराधीश थे सो अपने २ उचित आसन पर बैठे। उस समय सातों पातालों के अधीश्वर प्रह्लादादि दैत्य और दानवेन्द्र अति प्रमुदित हो वहां आये, गुरु बृहस्पति को आगे कर लोकपालों के साथ मघवा भी आये, विद्याधर सुमेरु और वह सुवासकुमार आ विराजे। कश्यप की दनुप्रभृति पत्नियां आईं तथा भूतासन पर बैठी सूर्य्यप्रभ की सब रानियां आईं। जब सब लोग परस्पर प्रीतिपूर्व्वक शिष्टाचार करके अपने २ आसन पर बैठ गये तब दनु की सिद्धि नाम्नी सखी उनकी ओर से बोलीं "हे हे देवो। और असुरो! सुनो देवी दनु तुम लोगों से क्या कह रही हैं कि कहो तो सही जो आनन्द जो सुख हमलोगों को हुआ है? सो तुम लोगों को परस्पर विरोध न करना चाहिये क्योंकि उसका फल दारुण दुःख के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता! हिरण्याक्ष इत्यादि ज्येष्ठों ने स्वर्ग के राज्य के हेतु विरोध मचाय युद्ध किया, सो बीत गये, अब तो इन्द्र ही ज्येष्ठ है तो विरोध क्या? इसलिये तुम लोग बैर त्याग परस्पर सुख से रहो

जिससे हमलोगों को सन्तोष और जगत् का कल्याण हो।" इस प्रकार सिद्धि के मुख से भगवती दनु का वचन सुन शक्र गुरु बृहस्पति का मुंह निरखने लगे तब उन्होंने सिद्धि से कहा कि देवतों के हृदय में असुरों की ओर किसी प्रकार का बैर नहीं है, यदि ये अमरों से दुश्मनी न करें तो वे उपतके कुछ न (खड़ा) करें। देवगुरु के कहने पर दानवेन्द्र मय बोले कि यदि असुरों के मन में किसी प्रकार का कल्मष होता तो नमुचि देवराज को मृतकों को जिलानेवाला उच्चैःश्रवा घोड़ा कैसे दे देता; यदि दानवों के हृदय में किसी तरह की बुराई होती तो प्रलम्ब अपना प्यारा शरीर अमरों को क्योंकर अर्पण कर देता; यदि दैत्यों के दिल में देवों की ओर किसी तौर की दुश्मनी होती तो बलि, भगवान् वामन को तीनों लोक देकर आप कैदी कैसे बनता; यदि राक्षसों की इच्छा विबुधों से बैर रखने वा करने की होती तो अयोदेह विश्वकर्म्मा को अपनी देह काहे को दे देता; और कहांलों कहे असुर सदा से मिलनसार होते आये हैं, यदि किसी प्रकार का छल छिद्र इनसे न किया जाय तो दानव लोग कदापि विरोध न करें। मयासुर के इतना कहने पर सिद्धि ने एक ऐसी सुललित वक्तृता दी कि देव और असुर प्रीतिपूर्व्वक परस्पर गले लगकर मिले।

इतने में जगदम्बाभवानी की भेजी जया प्रतीहारी आई और सभों से पूजा पाय सुमेरु से कहने लगीं कि देवी अम्बिका ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है और यह सन्देश कहा है कि कामचूड़ामणि नाम्नी जो तुम्हारी कन्या है उसे तुम सूर्य्यप्रभ से व्याह देओ क्योंकि वह मेरी भक्त है। जया की इतनी बात सुन सुमेरु ने नम्रता से उत्तर दिया "भगवती की आज्ञा शिरोधार्य्य है यह उनका परम अनुग्रह है; पहिले भगवान् शम्भु ने भी मुझे यही आज्ञा दी थी।" सुमेरु के इतना कह चुकने पर जया ने सूर्य्यप्रभ से कहा कि गौरीदेवी ने प्रसन्न होकर तुम्हें भी यह आज्ञा दी है कि तुम इस कामचूमणि को प्रधान पट्टरानी बनाना और सभों से इसका मान अधिक करना। इतना कह सूर्य्यप्रभ से पूजा पाय जया वहीं अन्तर्धान हो गयीं।

उसी दिन सुमेरु ने झट एक शुभलग्न धरवाया, उत्तमोत्तम रत्नों की वेदी बनवाई गयी जिसमें रत्नों का ऐसा प्रकाश था मानों भीतर अग्नि प्रज्वलित है। कामचूड़ामणि अपनी कन्या को सुमेरु ने बुलाय भेजा, जिसकी ऐसी सुन्दरता कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देव और असुर ललक २ देखने लगे, और कहालों उसके लावण्य का वर्णन किया जाय बस इसी से समझ लेना चाहिये कि रूप और सौन्दर्य्य में वह भगवती उमा के समानही थीं, भगवती पार्वती हिमालय से जन्मी थीं और यह सुमेरु से। तब सम्पूर्ण भूषणों से आभूषित अपनी कन्या कामचूड़ामणि को वेदी पर बैठा, विवाह के सब संस्कार कराके सुमेरु ने सूर्य्यप्रभ के हाथ में उसका दान कर दिया। सूर्य्यप्रभ ने दनुप्रभृति से जिसमें कङ्कण बान्धा गया था ऐसा कामचूड़ामणि का पाणिपङ्कज ग्रहण किया। अब लावा परछा जाने लगा, जब पहिली बार लावा छोड़ा गया तो उसी समय भगवती की भेजी जया ने आकर दिव्य अक्षय माला दी, सुमेरु ने भी अनेक बहुमूल्य रत्न, ऐरावत से उत्पन्न दिव्य एक उत्तम हाथी भी दिया। दूसरी बार लावा गिराने पर जयाने रत्नों का एक हार दिया जिनका यह प्रभाव कि जबलों वह गले में रहे भूखप्यास कुछ भी न लगे और क्या मृत्यु भी बाधा नहीं कर सकती। और सुमेरु ने अबकी पहिले की अपेक्षा दूने रत्न दिये तथा उच्चैश्रवा से जन्मा एक अनुत्तम घोड़ा दिया। तीसरे लाजविसर्ग में रत्नों की एक लड़ी दी जिसका यह प्रताप कि कण्ठ में रहने से जवानी कभी नहीं उतरती; सुमेरु ने इस बार रत्नों की तिगुनी ढेरि दी और सब सिद्धि देने वाली एक दिव्य गुलिका भी दी।

विवाहसंस्कार होजाने पर सुमेरु ने, देवता, असुर, विद्याधर देवों की माताएँ तथा सभों से कहा कि अब मैं शीश नवाय हाथ जोड़ विनति करता हूं कि आज आप लोग मेरे घर भोजन करें, मुझपर यह अनुग्रह किया जावे। सुमेरु की यह अभ्यर्थना वे लोग अस्वीकार कियाही चाहते थे कि इतने में नन्दी आ विराजे और सभों से प्रणाम किये जाने पर कहने लगे कि त्रिपुरारि भगवान् शम्भु ने तुम लोगों को आज्ञा दी है कि आज तुमलोग सुमेरु के घर में भोजन करो क्योंकि वह हमारा आत्मीय है, जब तुमलोग इसका अन्न खाओगे तो अनन्त तृप्ति पाओगे। नन्दी के मुख से यह सन्देश सुन सभों ने सुमेरु का नेवता मान लिया। इतने में वहां शङ्कर के भेजे असंख्य गण आये जिनके सर्दार विनायक, महाकाल और वीरभद्रादि थे। उन्होंने भोजन स्थान की सजावट कर यथाक्रम, सुर, विद्याधर, असुर और मनुष्यों को बैठा दिया और सुमेरु ने अपनी विद्या के बल से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो २ पकवान तैय्यार करवाये थे, तथा शङ्कर की आज्ञा से कामधेनु के दिये हुए उत्तमोत्तम पदार्थ ला ला के परोस दिये और वीरभद्र, महाकाल, भृङ्गिप्रभृति देव एक एक के साम्हने खड़े रहे कि जो कुछ घटे तुरत ला देवें। तब नाच होने लगा अप्सरायें नाच २ लोगों का आनन्द बढ़ाने लगीं पद २ पर प्रसन्न हो कर विद्याधर भी आके उसमें शामिल हो जाते थे। भोजन के उपरान्त नन्दीश्वरादि ने सब को दिव्य मालायें तथा वस्त्र और आभरण पहिनाये। इस प्रकार नन्दी इत्यादि गणेश्वर देवादिकों का सम्मान कर अपने गणों के साथ जहां से आये थे वहां चले गये। पश्चात् अमर, असुर, और उनकी माताएँ, तथा श्रुतशर्म्मा इत्यादि सुमेरु से विदा मांग २ अपने २ स्थान को गये। सूर्य्यप्रभ अपनी नव विवाहिता पत्नी तथा पूर्व्वपत्नियों और इष्टमित्रों के साथ विमान पर चढ़ सुमेरु के उस तपोनव में गये और वहां से उन्होंने अपने मित्र हर्ष को, सब राजाओं के पास तथा अपने भाई रत्नप्रभ के समीप विजय सन्देश कहने को भेज दिया। इसके बाद जब सांझ हुई तब सूर्य्यप्रभ कामचूड़ामणि के घर में गये जहां उत्तम २ रत्नों से बना पलङ्ग बिछा था, और उसकी सजावट हुई थी। वहां आलिङ्गन करने और गुदगुदाने इत्यादि से धीरे २ उसकी लज्जा दूर करा सूर्य्यप्रभ उस नवोढ़ा कामचूड़ामणि के साथ रतिक्रीड़ा करने लगे, पीछे यह कह २ उसे प्रसन्न करने लगे कि हे प्यारी और सब जो मेरी भार्य्यायें हैं वे मेरे हृदय के बाहिर रहती हैं परन्तु तुम उसके भीतर रहती हो, ऐसी बातें कह २ उसे आलिङ्गन कर सो रहे, ऐसी सुख नींद सोये कि इधर नींद टूटी उधर सबेरा हो गया।

प्रातःकाल में उठकर सूर्य्यप्रभ वहां गये जहां उनकी पहिली सब स्त्रियां बटुरी थीं सो वह उन्हें प्रेमभरी रसीली बातें कह २ प्रसन्न करने लगे। "अब तो नयी स्त्री मिली है, नया माल हाथ लगा है, खूब मजा उड़ाया क्या बात है" इत्यादि २ बातें कह २ वे सब ठठोली, ताने, मधुर, स्निग्ध वचनों से उनकी हंसी कर रही थी, हंसी ठट्ठा हो रहा था, गुलछर्रे उड़ रहे थे कि इतने में द्वारपाल ने खबर दी कि महाराज! सुषेण विद्याधर आये हैं। बुलाये जाने पर वहां पहुंच कर प्रणाम कर सुषेण कहने लगा "देव! त्रिकूटनाथादि सब विद्याधरों ने मुझे आपके पास भेजा है और यह कहा है कि परसों ऋषभाद्रि पर आपका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शुभ अभिषेक है, सो यह बात सबको जना दी जाय और तैयारी की जावे।" यह सुन सूर्य्यप्रभ ने दूत से कहा कि जाकर मेरी ओर से त्रिकूटाधिपति प्रभृति से यह कह दो कि आपही लोग सब तयारी कीजिये और तब क्या करना होगा सो कहिये, हमलोग तो तैयारही हैं पर हां सबको इस बात की सूचना कर दी जावेगी। इस प्रकार प्रतिसन्देश ले सुषेण चला गया। इधर सूर्य्यप्रभ ने अपने प्रभास इत्यादि एक एक मित्र को भेज दिया कि जाकर देवों को, याज्ञवल्क्य आदि ऋषियों को, राजाओं को, विद्याधरों को और असुरों को नेवता दे आओ कि परसों मेरा अभिषेक है सो आपलोग कृपा कीजियेगा। सूर्य्यप्रभ इस प्रकार नेवता देने के लिये अपने मित्रों को भेज स्वयं भगवान् शङ्कर और भगवती अम्बिका को निमन्त्रण देने कैलास पर्व्वत को चले, पर्व्वत पर चढ़ते २ देखते हैं कि वह गिरि विभूति के समान शुभ्रवर्ण है जहां देवर्षि और सिद्ध लोग निवास करते हैं, मानों दूसरे शङ्करही हैं। जब आधे से अधिक चढ़ गये तब आगे देखते हैं तो चढ़ना बड़ा कठिन हैं, इतने में एक ओर मूंगे का द्वार नज़र पड़ा। अनेक सिद्धि रखने पर भी जब वह द्वार में प्रवेश न कर सके तब एकाग्र मन से शशिशेखर की स्तुति करने लगे। इतने में गजमुख एक पुरुष द्वार खोल बोला "आओ, भीतर आओ; भगवान् हेरम्ब तुम पर प्रसन्न हैं।" भीतर पैठतेही सूर्य्यप्रभ अचम्भित हो गये, आगे जाकर क्या देखते हैं कि एकदन्त गजानन लम्बोदर, त्रिनेत्र भगवान् विनायक प्रशस्त ज्योतिरसशिला पर विराजमान हैं, जिनकी ज्योति द्वादश आदित्य के समान हैं; जाज्वल्यमान परशु और मुद्गर धारण किये हुए हैं; नाना प्राणियोंके मुखके समान मुखवाले गण चहुंओर से घेरे बैठे हैं। ऐसे भगवान् गणनाथ गणेश को देखकर सूर्य्यप्रभ ने उनके चरणों पर गिरके प्रणाम किया। विघ्नजित् जीने प्रसन्न हो उनसे आगमन का कारण पूछ मधुरवाणी से कहा कि इस मार्ग से चढ़ जाओ। उसी मार्ग से चलते२ जब पांच योजन चढ़ गये तब एक बड़ा भारी पोखराज का दूसरा फाटक दिखाई पड़ा, जब उसमें भी न प्रवेश कर सके तब वहीं पिनाकी देव को उनके सहस्र नामों से एकमन हो स्तुति करने लगे। तब स्कन्द के पुत्र विशाख्य ने द्वार खोलके उन्हें भीतर बुला लिया। भीतर जाकर क्या देखते हैं कि ज्वालानल के समान प्रकाशमान स्कन्द अपने सदृश शाखविशाखादि पांच पुत्रों के साथ बैठे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हैं। जिनके जन्म से ही अशुभग्रह, बालग्रह शिर झुकाये चहुंओर घेरे हुए हैं तथा चारों तरफ करोड़ों गणेश झुकके प्रणाम कर रहे हैं। शरजन्मा ने भी उनसे आगमन का कारण पूछ पर्व्वत के ऊपर चढ़ने का मार्ग दिखा दिया। इसी प्रकार क्रमानुसार रत्नों के और पांच फाटक डांकते गये, जहां भैरव, महाकाल, बीरभद्र, नन्दी और भृङ्गी अपने २ गणों के साथ रखवाली करते थे, अन्त में पर्व्वत के पृष्ठ पर आठवें द्वार पर पहुँचे जो कि स्फटिक मणि का बना था। वहां भी देवदेव महादेव की स्तुति करने लगे कि इतने में रुद्रजी के एक गण बड़े आदर भाव से उन्हें भीतर ले गये। भीतर जाकर देखते हैं तो भगवान् शिव का वह स्थान स्वर्ग से भी उत्तम है, जहां दिव्य गन्ध लेके वायु बह रहा है, जहां वृक्ष सदा फूले और फले रहते हैं, जहां गन्धर्व स्वर्गीय गीत गाय रहे हैं अप्सरायें नृत्य कर रही हैं। वहां एक ओर स्फटिक मणि के सिंहासन पर स्वच्छ स्फटिक की आभा के समान त्रिलोचन शूलपाणि भगवान् बैठे हैं, पिङ्गलवर्ण की जटा शिर पर बँधी है, मस्तक पर सुन्दर अर्द्धचन्द्र विराजमान हैं पास में बैठी गिरिनन्दिनी गिरिजा सेवा कर रही हैं। ऐसे भगवान् शङ्कर को देखकर सूर्यप्रभ जाके देवी सहित महादेव के चरणों पर गिर पड़े। तब आशुतोष शिव ने उनको पीठ ठोंक उठा बैठाया और पूछा कि कहो बच्चा किस निमित्त आना हुआ? सूर्यप्रभ ने उत्तर दिया कि प्रभो मेरा अभिषेक निकट आ पहुँचा है, सो मेरी इच्छा है कि महाप्रभु चलकर मुझे कृतार्थ करें। तब शम्भु ने कहा "पुत्र! इतने कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता थी, स्मरण कर लेते तो हम वहीं उपस्थित हो जाते, अस्तु, हम तुम्हारे अभिषेक में आवेंगे।" इतना कह भक्तवत्सल ने पास के एक गण को बुलाके उससे कहा कि 'जाओ इन्हें ऋषभ पहाड़ पर पहुँचा आओ, वहां इनका अभिषेक होगा, क्योंकि वहां चक्रवर्त्ती राजाओं का राज्याभिषेक होता आया है।' भगवान् शङ्कर की आज्ञा सुन, वह गण तुरत उठ खड़ा हुआ और जब सूर्यप्रभ ईशान की प्रदक्षिणा कर चुके तब वह उन्हें गोद में उठा ले चला और अपनी विद्या से बात की बात में ऋषभ पर्वत पर पहुँचाय वहीं अन्तर्धान हो गया। जब सूर्यप्रभ वहां पहुँच गये तब उनके इष्टमित्र मन्त्री, कामचूड़ामणि इत्यादि भार्य्यायें, तथा सब विद्याधराधीश; इन्द्रादि देव, मयादि असुर, सम्पूर्ण महर्षि, श्रुतशर्म्मा, सुमेरु और सुवास-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कुमार सब लोग आ उपस्थित हुए। सूर्यप्रभ ने सबका यथोचित सम्मान किया, पश्चात् शङ्कर भगवान् के दर्शन का वृत्तान्त कह सुनाया सो सुन सब लोग अति प्रसन्न हुए।

दोहा।

तब प्रभास आदिक सचिव, भरि मणि-कञ्चन-झारि ॥
आनेहु विविधौषधिसहित, नद नदि-वारिध वारि ॥ १ ॥
तेहि अवसर गौरी सहित, शङ्कर पहुंचे आय ॥
देव, असुर, खेचर, नृपति, रहे शीश पद नाय ॥ २ ॥

वसन्ततिलका।

पुण्याहघोष सुर दानव खेचरों के,
होते, तबै मुनिन पावन वारि लैके।
बैठारि सूर्य्यप्रभको युवराधिराज्ये,
सिंहासने मुदित ह्वै अभिषेक कीन्हो ॥

छन्द।

शिर पाग बांधि चढ़ाइ छत्र प्रसन्न भो मायासुरा।
नभ दुन्दुभी बाजति मधुरसुर गाइ नाचति अपसरा ॥
तब कामचूड़ामणिहुं कर अभिषेक करि मुनि अस कह्यो।
पटरानि तुम्हरो सूर्य्यप्रभ यह सुनत मन आनँद लह्यो ॥

दोहा।

देव असुर जब चलि गये, तब निज सखनसमेत ॥
तहँ उत्सव मनवत भये, सूर्य्यप्रभ अति हेत ॥ ३ ॥

सोरठा।

कछु दिन गै, अस कीन्ह, उत्तर आधी वेदिका ॥
श्रुतशर्म्महिं दै दीन्ह, जस अदेस शिव कर रह्यो ॥ १ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अरु व्याहीं प्रिय नारि, स्वर्गभोग भोगन लगे ॥
जेहि पर द्रवहिं पुरारि, तेहि नाहीं दुर्लभ कछुक ॥ २ ॥
अस हैं शम्भु प्रसाद, जा प्रभाव ते मनजहू ॥
पायो बड़ मरजाद, चक्रवर्तिपद सूर्य्यप्रभ ॥ ३ ॥

दोहा।

इहि बिधि विद्याधर प्रवर, सादर कथा सुनाइ ॥
वज्रप्रभ परनाम करि, गगनहिं चल्यो उड़ाइ ॥ ४ ॥
तब नरबाहनदत्त नृप, मदनमंचुका सङ्ग ॥
रहन लगे निज पितु भवन, नितप्रति बढ़त उमङ्ग ॥ ५ ॥

इति श्री सूर्य्यप्रभ नामक आठवां लम्बक समाप्त।



राजा सूर्य्यप्रभ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का हिन्दी अनुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

अलङ्कारवती नामक नवां लम्बक।

सवैया।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालबिनैबल पाई।
शम्भुमुखार्णव ते निकसौ या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई॥
प्रेम-समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस-दुहाई।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ो बिबुधाई॥

प्रथम तरङ्ग।

बन्दौं श्री गणराज, जेहि नाचत अवलोकि मनु।
नमते अचल समाज निशुंभभारझुकि माहि झुके॥

इस प्रकार महाराज वत्सराज के पुत्र नरवाहनदत्त विद्याधरों के राजाओं से पूजित होकर कौशाम्बी में अपने पिता के महल में रहने लगे। एक समय वह आखेट करने के लिये निकले और अपनी सेना पीछे छोड़कर गोमुख के साथ बन में पैठे। ज्योंही वह बन में घुसे कि उनको दहिनी आंख फड़की जिससे शुभ की सूचना हुई। वहां उन्हें दिव्य वीणा के साथ गाने की आवाज़ सुन पड़ी। गाने का अनुसरण करते हुये वह आगे बढ़े, थोड़ीही दूर पर उन्हें स्वयम्भू शिवजी का एक मन्दिर दीख पड़ा, घोड़े को बाहर बांधकर वह मन्दिर में पैठे। वहां जाकर देखते क्या हैं कि एक देवकन्या वीणा बजाके शिवजी की स्तुति कर रही है और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बहुतेरी सुन्दरियां उसे घेरे खड़ी हैं। जिस प्रकार पूर्ण चन्द्र के दर्शन से समुद्र क्षुभित होता है वैसेही उसकी सुन्दरता देख नरवाहनदत्त का भी मन चञ्चल हो गया। उस देवकन्या की दृष्टि भी उनपर पड़ी और वह प्रेमभरी चितवन से इन्हें देख ऐसी मोहित हो गयी कि उसे वीणा के बजाने की भी सुध न रही। नरवाहनदत्त के चित्त की बात जानकर गोमुख उस देवकन्या की सखियों से पूछने लगा,—"यह कौन हैं, और किसकी कन्या हैं?" इतनेही अवसर में ठीक उसी के सदृश लहलहाते सोने के समान गौर वर्ण एक प्रौढ़ा विद्याधरी आकाश से उतरी और उसी कन्या के पास जाकर बैठ गयी। कन्या झट अपने आसन से उठके उसके चरणों पर गिर पड़ी। उस प्रौढ़ा ने आशीर्वाद दिया कि सब विद्याधरों का राजा तुझे पति मिले। इसके उपरान्त नरवाहनदत्त ने उसके पास जाके उसे प्रणाम किया और आशीष पाकर धीरे से यह पूछा कि हे माता! यह तो बतलाइये यह कन्या आपकी कौन लगती है? तब वह विद्याधरी बोली सुनिये, मैं आपको इसकी कथा सुनाती हूं।

हिमाचल पर श्रीसुन्दर नाम का एक नगर है, उस नगर में अलङ्कारशील नामक विद्याधरों के राजा रहते हैं। उस उदारचित्त राजा की रानी का नाम काञ्चनप्रभा है। कुछ कालोपरान्त उसके एक पुत्र हुआ। जगज्जननी उमाजी ने स्वप्न में राजा को दर्शन देकर कहा कि यह तुम्हारा पुत्र बड़ा धर्मात्मा होगा, इसलिये पिता ने उसका नाम धर्म्मशील रक्खा। धीरे२ राजपुत्र की युवावस्था प्राप्त हुई तब सम्पूर्ण विद्याओं की शिक्षा दिलाने के उपरान्त राजा ने उसे युवराज बना दिया। धर्म्मशील सचमुच धर्म्मशीलही था, जब वह युवराजपद पर अभिषिक्त हुआ अपने पिता से भी अधिक प्रजाओं को प्रसन्न रखने लगा। कुछ दिनों के उपरान्त अलङ्कारशील की रानी काञ्चनप्रभा फिर गर्भिणी हुई और समय पर एक कन्या जनी। जिस समय लड़की भूमि पर गिरी उसी समय यों आकाशवाणी हुई कि "यह कन्या चक्रवर्त्ती राजा नरवाहनदत्त की भार्य्या होगी।" पिता ने नामकरण करके उसका नाम अलङ्कारवती रक्खा। कन्या चन्द्रकला की नाईं दिनोदिन बढ़ने लगी। क्रमानुसार जब उसकी युवावस्था हुई तब अपने पिता से सब विद्यायें सीखकर अब भक्ति से महादेवजी के एक मन्दिर से दूसरे मन्दिर में घूमती फिरती है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक समय की बात है कि इसका भाई यद्यपि युवा था तथापि उसको वैराग्य व्यापा सो वह निराले में जाके अपने अलंकारशील पिता से कहने लगा — हे तात ! ये सब भोग विलास क्षणभङ्गुर (क्षणिक) हैं इससे उनसे मुझे कुछ आनन्द नहीं मिलता क्योंकि इस जगत् में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो अन्त में विरस (फीकी) न निकले। क्या आपने इस विषय में श्रीवेदव्यासजी का कहना नहीं सुना है कि सञ्चय का एक न एक दिन नाश होताही है और जहां ऊँचा होना है वहां परिणाम में पतन भी है अर्थात् ऊँचा होके पीछे नीचा होनाही पड़ता है। जहां संयोग है वहां अन्त में वियोग होवेहीगा, और जीवन का अन्त मरणही है।" सो हे पिता ! मनस्वी लोगों को इन नश्वर विषयों में क्या आनन्द मिल सकता है। ये जितने प्रकार के भोग विलास तथा धन दौलत हैं ये सब पर लोक में किसी काम न आवेंगी केवल धर्मही एक सच्चा मित्र है जो एक पग भी साथ छोड़ अलग नहीं होता । इससे अब मैं यह चाहता हूं कि बन में जाके कठिन तपस्या करूँ और उससे अक्षय परमपद को पाऊँ । बेटे की ऐसी बातें सुनकर राजा अलङ्कारशील का चित्त व्याकुल हो गया, आंखों में आंसू भर आये। राजा अपने बेटे से यों कहने लगा—पुत्र ! अभी तो तू बालक है तुझे यह क्या सूझी है, जान पड़ता है कि तेरी बुद्धि में भांग पड़ गयी है नहीं तो ऐसा न कहता । साधु पुरुषों की बात तो ऐसी है कि जब अच्छी तौरपर जवानी का सुख भोग लेते हैं तब कहीं बैराग्य की ओर झुकते हैं । यह समय तेरा ऐसा है कि अपना व्याह कर विविध प्रकार के भोग भोगे और न्यायपूर्व्वक प्रजा का पालन करे नकि लंगोटी बांध जङ्गल की राह पकड़े । पिता की बात सुनकर धर्म्मशील फिर कहने लगा कि हां बात तो ऐसीही है पर आत्मा के बशीकरण अथवा अबशीकरण के लिये उमर का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यदि भगवान् का अनुग्रह हुआ तो बालक भी आत्मा का दमन कर सकता है और नहीं तो कोई वृद्ध होके भी ऐसा नहीं कर सकता । मैं राज्य नहीं चाहता न विवाह करके भोगों के उपभोग कीही इच्छा रखता हूं, मेरे जीवन का तो यही उद्देश्य है कि तपस्या करके शिव को प्रसन्न करूँ। पुत्र की ऐसी बात सुन जब राजा अलङ्कारशील ने देखा कि यह किसी प्रकार अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा से हटाया नहीं जा सकता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब यह युक्ति निकाली। पिता आंखों में आंसू भरके बोला, पुत्र ! तू जब युवा होके ऐसी बैराग की बातें कर रहा है तो मैं वृद्ध होके ऐसा क्यों न करूँ इससे मैं भी जङ्गल में जाकर तपस्या करूँगा।

इतना कह राजा मर्त्यलोक को चला गया और वहां दश सहस्र भार सोने और रत्न ब्राह्मणों और दरिद्रों को दान देके अपने नगर को लौट आया और अपनी भार्य्या काञ्चनप्रभा से बोला प्रिये मैं तो अब तपस्या का निश्चय कर चुका हूं पर तुम्हें आज्ञा दिये जाता हूं कि तुम यहीं अपनी नगरी में पड़ी रहना और बेटी अलङ्कारवती की सब तरह से रक्षा करना। एक वर्ष के बाद ठीक आजही के दिन इसके विवाह का लग्न होगा तब मैं आकर नरवाहनदत्त से इसका व्याह कर दूंगा। वह चक्रवर्त्ती दामाद हमारे इस नगर का प्रतिपालन करेगा। इतना कह रानी से शपथ लेके पुत्री सहित उसे वहीं छोड़ राजा अपने पुत्र के साथ बन में चला गया। रानी काञ्चनप्रभा अपनी एकमात्र आधार उस कन्या को लेके उसी नगर में रहने लगी। भला क्या कोई साध्वी स्त्री अपने पति की आज्ञा का उल्लङ्घन कर सकती है? कन्या अलङ्कारवती बहुतेरे मन्दिरों के दर्शनार्थ भ्रमण करने लगी उसकी माता भी वात्सल्य के कारण जहां २ वह जाती उसके साथ २ रहती। एक दिन की बात है कि प्रज्ञप्ति नाम्नी विद्या उससे बोली कि तू काश्मीर देश में जाकर स्वयम्भू नाम क्षेत्रों को पूजा कर और वहीं तू अनायास सब विद्याधरों के ईश चक्रवर्त्ती राजा नरवाहनदत्त को पति पावेगी। इस प्रकार विद्या की बात सुनकर अलंकारवती अपनी माता के साथ काश्मीर में जाकर पुण्य क्षेत्रों में श्रीशङ्कर भगवान् की पूजा करने लगी। नन्दीक्षेत्र, महादेवगिरि, अमरकण्टक, सुरेश्वर्य्याद्रि. विजय तथा कपटेश्वर इत्यादि क्षेत्रों में श्रीगिरिजारमण की पूजा कर मां बेटी घर को लौट आईं। सो हे सौम्य! यह वही अलङ्कारवती कन्या है और मैं इसकी माता काञ्चनप्रभा हूं। आज यह मुझसे बिना पूछे यहां शिव भगवान् की पूजा करने चली आई सो प्रज्ञप्ति विद्या से इसकी खबर पाके मैं यहां आई हूं। उसी विद्या ने मुझे यह भी बतलाया कि आज तुम भी यहीं आये हो सो इस मेरी कन्या से तुम विवाह करलो। इसके पिता का बतलाया हुआ दिन भी कल ही है सो हे पुत्र! आज तुम अपनी नगरी कौशाम्बी को लौट

जाओ, हम दोनों भी अब जाती हैं, कल राजा अलंकारशील वन से आवेंगे सो वह स्वयं तुम्हारे हाथ में इस कन्या का दान कर देंगे।

इस प्रकार उसकी बात सुनके नरवाहनदत्त और अलंकारवती की जो दशा हुई सो वर्णनातीत है, दोनों के नेत्रों में आंसू भर आये दिन के अन्त में चकवा चकवी की दशा के समान रात्रि का अलग रहना उनके लिये पहाड़ हो गया। उन दोनों की ऐसी दशा देखकर काञ्चनप्रभा बोली क्या एकही रात्रि के निमित्त पृथक् रहने से तुम्हारा धैर्य्य छूट गया, धीर लोग तो इतने दिनों का भी विरह सह लेते हैं जबकि उन्हें यह भी नहीं मालूम रहता कि हम फिर कब मिलेंगे। सुनो मैं तुम्हें रामचन्द्र और सीता देवी की कथा सुनाती हूं।

प्राचीन काल में अयोध्याधिपति राजा दशरथ थे, उनके राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न नामक चार पुत्र थे, जिनमें रामचन्द्र ज्येष्ठ थे। श्रीरामचन्द्र विष्णु के अंशावतार थे जो पृथ्वी पर रावणादि दुष्टों के नाश के लिये आये थे। जनक की पुत्री जानकी उनकी प्राणवल्लभा पत्नी हुई। भाग्य की बात है, राजा दशरथ ने भरत को तो राज्य दिया और रामचन्द्र को उनकी भार्य्या सीता, तथा भाई लक्ष्मण के साथ वन में भेज दिया। वहां वन में रावण माया करके उनकी प्रियपत्नी को हरके लङ्कापुरी में ले गया मार्ग में जटायु ने उसको रोका था, रावण ने उसे वहीं समाप्त कर डाला। तब सीताजी के विरह से दुःखित रामचन्द्र ने बाली को मारके सुग्रीव को अपना सखा बनाया और हनुमान जी को भेजकर सीताजी की खोज कराई। तब रामचन्द्र समुद्र में पुल बांधकर लङ्का में गये, रावण को मार विभीषण को लङ्का की राजगद्दी पर अभिषिक्त कर सीता का उद्धार किया। जब बनबास से लौटे तब भरत ने राज्य उनके हाथ में सौंपा और रामचन्द्रजी धर्म्म से अयोध्या का राज्य करने लगे। कुछ दिनों के उपरान्त सीता के गर्भ रहा। एक समय रामचन्द्र अपने साथ कुछ थोड़े से अनुचरवर्ग लेके प्रजा की चेष्टा जानने के लिये इधर उधर घूम रहे थे कि एक स्थान में उन्होंने देखा कि एक पुरुष अपनी स्त्री को घर से निकाल रहा है और कह रहा है कि मैं इसे न रक्खूंगा क्योंकि यह दूसरे के घर में रह चुकी है। उसकी स्त्री यह कहती थी कि यह रामचन्द्र से भी बढ़के भये हैं, जिन रामचन्द्र ने राक्षस के घर में रही हुई सीता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को भी नहीं त्यागा, यह मुझे एक सजातीय के घर में रहने से निकाल रहे हैं। यह बात रामचन्द्र के कान में पड़ी, सुनके उनका मुख उदास हो गया, दुःखित हो घर लौट आये। लोकापवाद के भय से रामचन्द्र ने सीता को बन में निकाल दिया। ठीक है यशस्वी पुरुष विरह का क्लेश सह लेता है पर अपयश कदापि उससे सहा नहीं जाता।

सीता गर्भ के बोझ से धीरे २ चलती हुई, भाग्यवश से बाल्मीकि ऋषि के आश्रम में पहुँचीं। ऋषि ने उन्हें बहुत कुछ समझा बुझाके धीरज दिया, और सीता वहीं रहने लगीं। उस आश्रम में और २ जो ऋषि मुनि थे सो कुड़कुड़ाके आपस में कहने लगे कि निश्चय इस सीता में दोष है नहीं तो भला इसका पति इसे क्यों छोड़ देता, सो इसके दर्शन मात्र से हमें पाप लगता है। बाल्मीकि मुनि तो कृपालु हैं वह इसे आश्रम से निकालते नहीं हैं और इसके दर्शन से जो पाप होता है उसे वह अपनी तपस्या से मार्जन कर देते हैं, सो आओ अब हमलोग किसी दूसरे आश्रम में चलके रहें। इस प्रकार उन ऋषियों का बड़बड़ाना सुन बाल्मीकि मुनि बोले हे "ब्राह्मणो! मैंने अपने योगबल से देख लिया है यह सीता सर्व्वथा शुद्ध है इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।" तौभी उन ऋषियों का सन्देह न गया, तब सीता बोलीं हे, "महात्माओ! जिस प्रकार से आपका सन्देह दूर हो वैसाही कीजिये और मेरी शुद्धता की जांच कर लीजिये, यदि मैं अशुद्ध ठहरूँ तो मेरा मस्तक काट लिया जाय।" सीता की ऐसी बात सुन मुनियों के दिल में करुणा आई तब वे कहने लगे कि इसी बन में टिट्टिभ सर नाम करके एक बड़ा तीर्थ है, पहिले समय में टिट्टिभ नामक किसी स्त्री पर उसके पति ने व्यभिचार का मिथ्या दोष लगाया था। वह साध्वी अपनी शुद्धि जनाने के लिये माता धरित्री और लोकपालों का नाम लेकर फूट २ रोने लगी सो उन्होंने उसकी सचाई बतलाने के लिये यह तीर्थ बनाया। सो यह राघवबधू वहीं चलकर अपनी शुद्धि का परिचय देवे। मुनियों का ऐसा वचन सुन जनकनन्दिनी उनके साथ वहां गई और तलाव के किनारे खड़ी होकर बोली "हे मातः वसुधे! यदि मेरा मन स्वप्न में भी आर्य्यपुत्र (रामचन्द्र) से हटके अन्यत्र न गया हो तो मैं बेखटके इस सरोवर के उस पार पहुँच जाऊँ।" इतना कहके वह सती श्रीजनकराजतनया तलाव में उतर गई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसी अवसर में पृथ्वी देवी प्रगट हुईं और सीता को गोद में उठा उस पार पहुँच गयीं। यह चरित्र देख सब मुनियों ने साध्वी सीता को प्रणाम किया और सीता के त्याग से क्रोधित होकर वे रामचन्द्र को शाप देने पर उतारू हो गये। इतने में सीताजी ने हाथ जोड़कर उनसे विनती किई "हे महर्षियो! आर्य्यपुत्र का कदापि अमंगल न करना जो कुछ शाप देना हो सो मुझ पापिनीही को दे लो, मैं तुम्हें हाथ जोड़ती हूं।" पतिव्रता सीता के इस प्रकार निवारण करने से वे मुनि बड़ेही सन्तुष्ट हुए और उन्होंने सीता को आशीर्बाद दिया "तुझे पुत्र होवे।"

सीता वहीं महर्षि के आश्रम में रहने लगीं। अब समय आ पहुँचने पर उनके एक पुत्र हुआ जिसका नाम बाल्मीकि मुनिने लव रक्खा। एक समय की बात है कि सीताजी अपने पुत्र को लेके स्नान करने चली गईं इधर बाल्मीकिजी ने देखा तो कुटि में बालक नहीं यह देख मुनि को चिन्ता व्यापी आप सोचने लगे "वह तो प्रतिदिन बच्चे को यहीं छोड़कर नहाने जाया करती है तो वह बच्चा क्या हुआ? जान पड़ता है कोई हिंसक पसु उसे उठा ले गया। अच्छा क्या हुआ मैं एक दूसरा बच्चा सृज देता हूं क्योंकि जब सीता स्नान कर आवेगी और बच्चे को यहां न पावेगी तो शोक से मर जावेगी!" इस प्रकार चिन्ता कर मुनि ने कुशा से ठीक लव के आकार का एक बालक बनाके वहीं रख दिया। जब जानकी लौटकर आईं तो वहां एक अन्य बच्चे को देखकर अति विस्मित हुईं और मुनि के पास जाकर कहने लगीं "हे मुनिराज! मैं तो अपना बालक अपने साथ लेती गई थी सो यह दूसरा कहां से आगया।" सीता की ऐसी बात सुनके मुनिजी ने जो कुछ हुआ था सो कह सुनाया। तदनन्तर मुनि ने कहा "हे निष्पापे! यह तुम्हारा द्वितीय पुत्र है इसका नाम कुश होगा क्योंकि मैंने इसे अपने प्रभाव से कुश का बनाया है"। मुनि की यह बात सुन सीता लव और कुश नामक दोनों पुत्रों का लालन पालन करने लगीं; और वाल्मीकि ने स्वयं उनका जातिसंस्कार किया। उन दोनों क्षत्रियकुमारों ने बालकपनही में बाल्मीकि ऋषि से दिव्य अस्त्रों का प्रयोग तथा सब विद्यायें सीख लीं। एक समय की बात है कि उन दोनों ने आश्रम के एक मृग का शिकार कर उसका मांस भक्षण किया, और बाल्मीकि महर्षि जिस लिङ्ग की पूजा करते थे उसे उन्होंने अपना खिलौना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बना लिया। यह देख मुनि को खेद हुआ परन्तु सीता देवी के अनुनय करने पर ऋषिने उन दोनों के लिये यह प्रायश्चित बतलाया कि यह लव जाके कुबेर के तलाव से सोने के कमल तथा उन्हीं के बाग से मन्दार के फूल झट ला देवे और उन्हीं पुष्पों से दोनों भाई इस लिङ्ग की पूजा करें तो इन दोनों का पाप छूटे। ऋषि की इतनी बात सुन लव, यद्यपि बालकही थे; कैलास कों चल पड़े और वहां पहुँच के कुवेर के तलाव और बगीचे को हिंलोड़ने लगे। रखवाले यक्ष जो रोकने आये उनको वहीं बध करके कमल और फूलों को लेकर चल दिया। मार्ग में जब आ रहे थे तो थककर एक पेड़ के नीचे आराम करने को बैठ गये। इतने में श्रीरामचन्द्र के नरमेध यज्ञ के लिये एक सुलक्षण पुरुष की खोज करते हुए लक्ष्मणजी भी उसी जगह आ पहुँचे। उन्होंने क्षत्रियधर्म्म के अनुसार लव को युद्ध के लिये ललकारा, लव भी उठ खड़े हुए तब लक्ष्मण मोहनास्त्र से उन्हें मोहित कर बांध अयोध्या में ले गये।

पुत्र अबलों न लौटा इस शोच से सोताजी बहुत व्याकुल हो गयीं। बाल्मीकि मुनिने उन्हें धीरज देके कुश को अपने आश्रम में बुलाके यह कहा "बच्चे लव को बन्दी करके लक्ष्मण अयोध्या में ले गया है सो तू इन अस्त्रों को ले और वहां जाके लक्ष्मण को जीत लव को छुड़ा ला"। मुनिने इतना कहके सम्पूर्ण दिव्य अस्त्र कुश को दे दिये। कुश चलते २ अयोध्या में पहुँचे और पहुँचतेही यज्ञभूमि को छेंक लिया। लक्ष्मण साम्हना करने को निकले कुश ने उन्हीं दिव्य अस्त्रों से उन्हें पराभूत कर दिया। यह देख श्रीरामचन्द्र भी दौड़े पर बाल्मीकि मुनि के प्रभाव से उस बालक को जीत न सके जब रामचन्द्र ने कुश का ऐसा प्रभाव देखा तो उनसे पूछा "आप कौन हैं? और किस निमित्त आपका आना यहां हुआ है?" कुश ने उत्तर दिया "मेरे बड़े भाई को लक्ष्मण बांध लाये हैं सो उन्हींके छोड़ाने के लिये मैं यहां आया हूं। हम दोनों लव और कुश रामचन्द्र के पुत्र हैं ऐसा हमारी माता जानकी कहती हैं"। इतना कह कुशने आद्योपान्त सब कथा कह सुनाई। इतनी बात के सुनतेही रामचन्द्र गद्गद हो गये नेत्रों में आंसू भर आये, उन्होंने लव को बुलवाके दोनों भाइयों को गले लगा लिया और कहा "बच्चे! वह दारुण राम मैंही हूं।" इतने में पुरवासी घिर आये और सीता देवी

की प्रशंसा करने लगे और उन दोनों बच्चों को भर नयन निहारते थे। रामचन्द्र ने अपने पुत्रों को पहिचाना और ग्रहण किया और सीता को बाल्मीकि के आश्रम से बुला लिया। पीछे पुत्रों पर राज्य का भार रख सीता के साथ रामचन्द्र सुख से रहने लगे।

इतनी कथा सुनाय काञ्चनप्रभा बोली कि धीर लोग इस प्रकार का बहुदिनव्यापी विरह सह लेते हैं और हे पुत्रो! तुम एक रात्रि का विछोह नहीं सह सकते। काञ्चनप्रभा विवाह के लिये उकताई हुई अपनी कन्या के साथ आकाशमार्ग से उड़ गयी और नरवाहनदत्त भी उदासीनभाव से अपनी नगरी कौशाम्बी को लौट गये। नरवाहनदत्त को कल क्यों पड़े रात में नींद भी न आई तब गोमुख उनके मनबहलाव के लिये बोला देव! सुनिये, मैं आपको पृथ्वीरूप की कथा सुनाता हूं—

दक्षिण देश में प्रतिष्ठान नाम एक नगर है वहां के राजा पृथ्वीरूप अति रूपवान् थे। एक समय की बात है कि राजा के पास दो बौद्ध सन्यासी आये और राजा का अद्भुतरूप देखकर बोले, "हे देव! हम दोनों समस्त पृथ्वी घूम आये पर आपके समान सुन्दर पुरुष कहीं न देखा, न तो कोई स्त्रीही सुन्दरी दीख पड़ी। किन्तु मुक्तिपुर द्वीप में राजा रूपधर की हेमलता देवी से जन्मी जो रूपलता नाम्नी कन्या है वह आपकी जोड़ी है और आप भी उसी के योग्य हैं, यदि आप दोनों का संयोग हो जावे तो बड़ा अच्छा काम होय।" सन्यासियों की यह बात सुन राजा कामबाण से व्यथित हो गये और अत्यन्त उत्सुक हो अपने चित्रकार कुमारिदत्त को बुलाके राजा पृथ्वीरूप ने उससे कहा मेरा चित्र उतार के तुम इन दोनों भिक्षुकों के साथ मुक्तिपुरद्वीप को जाओ और वहां के राजा रूपधर को तथा किसी युक्ति से उनकी पुत्री रूपलता को मेरा चित्र दिखाना और यह पता लगाना कि राजा अपनी कन्या का विवाह मुझसे कर देंगे या नहीं और उस रूपलता का चित्र उतार के यहां लाना। इतना कह चित्रपट पर अपनी तस्वीर उतरवाके राजाने भिक्षुकों के साथ उस चित्रकार को विदा किया। वे तीनों चलते २ समुद्र किनारे पत्रपुर नाम नगर में पहुँचे, वहां जहाज पर सवार होकर पांच दिन में मुक्तिपुरद्वीप में पहुँचे। नगर में पहुँचकर चित्रकार ने राजा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के फाटक पर एक विज्ञापन चिपका दिया कि मेरी जोड़ी का कोई चित्रकार दुनिया में नहीं है। राजा रूपधर ने यह खबर पाय उस चित्रकार को बुलाया चित्रकार राजा को प्रणाम कर बोला "देव ! मैं दुनिया भर में घूम आया पर अपने समान बुद्धिमान चित्रकार कोई न देखा सो कहिये देवता, राक्षस वा मनुष्य जिसको आज्ञा हो उसका चित्र खींचकर धर्म्मावतार को दिखाऊँ"। चित्रकार की यह बात सुन राजा ने अपनी कन्या रूपलता को बुला भेजा और चित्रकार से कहा कि मेरी इस बेटी का चित्र खींचकर मुझे दिखलाओ । कुमारिदत्त ने चित्रपट पर राजकन्या का चित्र उतारकर राजा को दिखलाया और वह चित्र ज्यों का त्यों उतरा। राजा उस चित्रकार की कारीगरी से बड़े प्रसन्न हुए और एक उपयुक्त दामाद पाने की लालसा से चित्रकार से कहने लगे "भाई तुम देश देशान्तर में घूम आये हो भला बताओ तो सही कि मेरी पुत्री के समान कोई सुन्दर स्त्री तुम्हारी दृष्टि में आई अथवा इसके समान सुन्दर कोई पुरुष तुमने देखा है ?" राजा को ऐसी बात सुन चित्रकार बोला "राजन्। इसके समान तो मैंने कोई स्त्री नहीं देखी है न कोई ऐसा पुरुषही दीख पड़ा परन्तु हां प्रतिष्ठानपुरमें पृथ्वीरूप एक राजा हैं वह इनकी जोड़ी के है उनसे यदि इनका विवाह हो जाय तो बड़ी बात हो । राजा ने अपने समान सुन्दरी स्त्री कहीं न पाई अतः इस नई जवानी में भी अबलों वह क्वारेही हैं । देव! जब मैंने उन्हें देखा तो उनकी अलौकिक सुन्दरता से मोहित हो गया सो मैंने उनका चित्र उतार लिया। राजाने कहा कि क्या यह उन्हीं का चित्र तुम लिये हो, अच्छा दिखाओ तो सही। राजा को यह बात सुन चित्रकार ने कहा, "जी हां यह उन्हीं नरेश का चित्र है" ऐसा कहके राजा पृथ्वीरूप का चित्र दिखा दिया । राजा रूपधर ने जब पृथ्वीरूप का वह अद्भुत रूप देखा तो विस्मय से उनका मस्तक चकरा गया और बोले कि मैं धन्य हूं कि इन राजा का चित्र तो देख पाया मैं उन लोगों को साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूं जो उन्हें साक्षात् देखते हैं। पिता की ऐसी बात जब रूपलता ने सुनी तब चित्र की ओर निहारा और देखतेही ऐसी मोहित हो गई कि अपनी सुधबुधि सब भूल गई। जब राजा ने देखा कि मेरी कन्या राजा पृथ्वीरूपके ऊपर लुभाय गई है तब कुमारिदत्त चित्रकार से कहा, "भाई तुम्हारा चित्र तो ठीक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उतरता है सो पृथ्वीरूप राजा मेरी कन्या के लिये उपयुक्त पति होंगे, अब मेरी कन्या के इस चित्रपट को ले जाके पृथ्वीरूप राजा को दिखाओ और यहां की बात सुनाओ। यदि राजा को पसन्द आवे तो शीघ्र आकर मेरी कन्या से विवाह करलें।" चित्रकार से इतना कहके राजा ने उसे बहुत कुछ पुरस्कार दे भिक्षुकों के साथ विदा किया और साथ में अपना एक दूत भी कर दिया।

चित्रकार, दूत और दोनों भिक्षुक वहां से चले और समुद्र पार कर प्रतिष्ठानपुर में पहुँचे और राजा पृथ्वीरूप के समक्ष जा उपस्थित हुए। राजा के आगे भेंट धर, जो कुछ वहां हुआ था सो और राजा रूपधर का सन्देशा कह सुनाया। इतने में कुमारिदत्त चित्रकार ने रूपलता का चित्र निकाल के राजा को दिखाया। राजा की दृष्टि उसके शरीर की सुघरता देखतेही रह गई, वह रूपसागर में मग्न हो गई अब राजा वहां से उसे न हटा सके। राजा उस रूपलता की कान्ति-सुधा में ऐसे मग्न हो गये थे कि वहां से हटने का जी नहीं चाहता था, टकटकी लगाये उसी को निरख रहे थे जैसे चकोर चन्द्रमा को देखे। अन्त में किसी प्रकार सँभलकर चित्रकार से बोले "धन्य विधाता! जिसने इसकी सृष्टि की और इसे ऐसा लावण्य दिया तथा भाई धन्य तुम्हारा हाथ जिसने इसका चित्र उतारा।" इतना कह राजा फिर कहने लगे कि रूपधर भूप की बात मैं माथे धरता हूं और मुक्तिपुर द्वीप को चलके उनकी कन्या का विवाह करता हूं। इतना कह राजा ने चित्रकार, दूत तथा भिक्षुकों को बहुतसा धन देके उनका बड़ा सम्मान किया। राजा पृथ्वीरूप चित्र को देखतेही रह गया उसपर से दृष्टि उनकी न हटी। विरहव्यथा से व्याकुल हो राजा ने बगीचों में इधर उधर किसी प्रकार दिन बिताया। दूसरे दिन लग्न सधवाय अनेक हाथी, घोड़े, सर्दार और राजपुत्र तथा कटक ले प्रस्थान किया, साथ में राजा रूपधर का दूत, चित्रकार तथा दोनों सन्यासी भी चले। राजा पृथ्वीरूप मङ्गलघट नामक गजेन्द्र पर चढ़कर चले और कई दिनों में विन्ध्याटवी के द्वार पर पहुँचे, सायङ्काल हो गया था इसलिये वहीं पड़ाव पड़ा।

दूसरे दिन राजा पृथ्वीरूप अरिमर्दन नामक हाथी पर सवार हुए और जंगल में पैठे। राजा ज्यों आगे बढ़े त्यों क्या देखते हैं कि आगे चलनेवाली सेना में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अकस्मात् गड़बड़ी मच गई है जो जहां सो तहां भागने लगा। राजा यह देख विस्मित हो गये इतने में निर्भय नामे राजपुत्र हाथी पर चढ़ा राजा के पास आया और कहने लगा, "महाराज भिल्लों की एक बड़ी सेना ने आगे से हमलोगों पर चढ़ाई किई और युद्ध छिड़ गया हमारे पचास हाथी मारे गये, हजार पैदल और तीन सौ घोड़े भिल्लों ने मार डाले। हमलोगों ने दो सहस्र भिल्लों को बध कर डाला सो इस प्रकार जहां उनके दो शव देख पड़ेंगे वहां हमारी ओर का एकही होगा। पीछे उनके बज्र समान वाणों के प्रहार से हमारे सैनिक छितिर बितिर हो गये।" यह सुनतेही राजा पृथ्वीरूप क्रोध से भरकर भिल्लों की सेना पर दौड़े और जिस तरह अर्जुन ने कौरवों का नाश किया था उसी प्रकार भिल्लों की सेना का नाश करने लगे। दूसरी ओर से निर्भयादिकों ने डाकुओं का संहार कर डाला और राजा ने भिल्लों के सेनापति का मस्तक भाले से उड़ा दिया। राजा का हाथी शत्रुमर्दन बाणों से छिन्नभिन्न हो गया था, घावों से लहू बहते थे उस समय वह कज्जल के पहाड़ की नाईं दीख पड़ता था जिसमें से गेरू समान के झरने झरते थे। राजा की शेना जो इधर उधर छितर बितर हो गई थी जीत होने पर बटुर गयी और भिल्ल जो भाग बचे थे तीन तेरह हो गये। राजा पृथ्वीरूप की ऐसी बहादुरी देख रूपधर राजा का दूत उनकी प्रशंसा करने लगा। विजयी राजा पृथ्वीरूप अपनी घायल सेना के विश्राम के लिये वहीं बन में तलाव के किनारे टिक रहे।

प्रात:काल राजा ने कूच किया। चलते २ सब लोग समुद्र किनारे बसे हुए पद्मपुर नगर में पहुँचे। वहां के राजा उदारचित्त ने उनका उचित सत्कार किया, उस दिन वहीं सब का निवास हुआ उसी राजा ने जहाज इत्यादि का जोगाड़ कर दिया और राजा पृथ्वीरूप समुद्र में यात्रा करते २ अपने दलबल सहित आठ दिन में मुक्तिपुर द्वीप में पहुँचे।

राजा रूपधर को जब खबर मिली कि राजा पृथ्वीरूप आ पहुँचे तो वह उनसे मिलने को आये और दोनों गले लगके परस्पर मिले। राजा रूपधर पृथ्वीरूप को लेकर अपने नगर में चले। नगर की स्त्रियां अटारियों पर चढ़कर उनके अद्भुत रूप को निरख २ अपने नेत्रों को सफल करने लगीं। रानी हेम-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लता और राजा रूपधर अपनी कन्या के अनुरूप पति को देखके मारे आनन्द के फूले न समाये। राजा पृथ्वीरूप की पहुनाई होने लगी। राजा रूपधर से उचित सत्कार पाय पृथ्वीरूप सुख से रहे।

दूसरेही दिन वह शुभ अवसर आया जिसके लिये रूपलता बड़ीही उत्कण्ठित थी। शुभ लग्न में वह विवाह की वेदी पर उपस्थित की गयी और राजा पृथ्वी-रूप ने उसका पाणिग्रहण किया। जब दोनों की एक नजर हुई तो एक दूसरे को आंख फाड़ २ देखने लगे मानों दोनों के नेत्र कान के पास पहुँच के यह कह रहे हैं कि जो तुमने सुना था सो सब ठीकही उतरा। अग्नि में लावा फेंकने के उप-रान्त राजा रूपधर ने उन दोनों को इतने रत्न दिये कि लोग यह विचार करने लगे कि राजा मानों रत्नाकर हैं। कन्या के विवाह सम्पन्न हो जाने पर राजा ने उस चित्रकार और दोनों सन्यासियों को तथा और २ जो लोग आये थे उन्हें अनेक २ प्रकार के कपड़े और आभूषण देकर सन्तुष्ट किया। राजा पृथ्वीरूप ने अपने साथियों के साथ उस द्वीप के उत्तमोत्तम भोजन और पान का सेवन किया। दिन भर नाचना गाना बजाना होता रहा; जब दिन आनन्द में बीता और रात आई तब राजा पृथ्वीरूप रूपलता के भवन में गये, जहां रत्न के खम्भे, रत्न की फर्श, रत्न के पलङ्ग बिछे थे और रत्नही की दीवट और रत्नही के दीपक प्रकाशित थे। वहां राजा ने उस रूपलता के साथ आनन्दपूर्वक विहार किया बहुत दिनों की चिन्तित कामना आज पूर्ण हुई। सुखपूर्वक रमण करने के उपरान्त राजा ने निद्रा ली। प्रात:काल वन्दी मागध और सूत जगाने लगे। राजा जाग के उठ बैठे। उस समय उनकी ऐसी शोभा थी जैसे कि आकाश में इन्द्र शोभायमान हों † । रोज नयी २ खातिरदारी होने लगी, अनेक प्रकार के भोग विलास की चीजें राजा के लिये मौजूद की जातीं। इस तरह राजा पृथ्वीरूप दश दिन उस द्वीप में रहे और ग्यारहवें दिन ज्योतिषियों से शुभ मुहूर्त्त पूछ रूपलता के साथ अपने नगर के लिये प्रस्थानित हुए। ससुर ने समुद्र तक पहुँचाया पीछे राजा पृथ्वीरूप अपनी स्त्री के सहित जहाज पर सवार होकर आठ दिन में समुद्र के इस पार आये

† कहीं "इन्दु" (चन्द्रमा) ऐसा पाठान्तर है। यही शुद्ध प्रतीत होता है अर्थात् राजा पृथ्वीरूप चन्द्र के समान शोभायमान हुए।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वहां तीर पर उनकी सेना जो पहिलेही से टिक रही थी उन्हें आ मिली और राजा उदारचित्त ने अगवानी की, सब लोग मिलजुल के पद्मपुर को चले। राजा पद्मपुर में कई दिन रहे, उदारचरित राजा ने अच्छी तरह उनकी पहुनाई की। तत्पश्चात् राजा पृथ्वीरूप अपनी प्रियतमा रूपलता को जयमङ्गल नाम हाथी पर चढ़ाके आप कल्याणगिरि नामक कुञ्जर पर सवार हुए और वहां से सब लोग चले। लगातार चलते २ राजा प्रतिष्ठानपुर में पहुँचे जहां कि ध्वजायें और पताकायें फहरा रही थीं। नगर की स्त्रियों ने जब रूपलता का अनुपम रूप देखा तो सबों का मान भङ्ग हो गया और सब निर्निमेष दृष्टि से उन्हें देखने लगीं। राजा पत्नीसहित राजधानी में पहुँचे, और अनेक २ प्रकार के मङ्गलाचार और उत्सव दिन प्रतिदिन होने लगे। राजा पृथ्वीरूप ने उस चित्रकार को कई एक गांव तथा बहुतसा धन दिये, तथा उन दोनों सन्यासियों का समुचित सत्कार करके उन्हें विपुल धन देकर सन्तुष्ट किया तदनन्तर सर्दार, मन्त्री, तथा राजपुत्रों को भी उपहार दे दे सबका सत्कार किया। सब लोगों का उचित सत्कार कर राजा पृथ्वीरूप अपनी प्रिया रूपलता के साथ संसार का सुख भोगने लगे।

राजा नरवाहनदत्त को प्रसन्न करने के लिये इतनी कथा सुनाय मन्त्री गोमुख उन्हें उत्कण्ठित देखकर फिर कहने लगा, "देव देखिये धीर लोग बहुत दिनों तक विरह का क्लेश सह लेते हैं और आप एक रात का विछोह भी नहीं सह सकते यह कैसे आश्चर्य्य की बात है। कल सवेरे तो आप अलङ्कारवती का पाणिग्रहण करेंहीगे।" इतना कह गोमुख चुप हुआ कि उसी समय यौगन्धरायण का बेटा मरुभूति आकर कहने लगा "अरे तू बहुत बक २ करेगा, तेरे माथे अभी नहीं न बीती है, तू काम का सन्ताप अभी नहीं भोग चुका है। मनुष्य के धैर्य्य विवेक और शील तभी तक रहते हैं जब तक कि काम के बाण उसे नहीं लगते। जगत् में सरस्वती, स्वामिकार्तिक और बुद्धदेव येही तीनों तो धन्य हैं जिन्होंने काम का ऐसा त्याग किया जैसे कोई कपड़े में लगा तिनका निकाल फेंके।" जब मरुभूति इतना कह चुका तब नरवाहनदत्त ने देखा कि गोमुख का मुख उदासीन हो गया तब वह उसे प्रसन्न करने के लिये कहने लगे "गोमुख ने जो कुछ कहा सो मुझे प्रसन्न करने के लिये इसलिये उसका कहना ठीक है क्या कोई मित्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विरही को समझा सकता है ? यह तो मित्रों का कामही है कि यथाशक्ति विरहातुर को शान्ति देवें आगे पञ्चवाण महाप्रभु के हाथ में है।" इस प्रकार अपने भृत्यों के साथ बात करते और उनकी कथा सुनते २ नरवाहनदत्त की पहाड़सी रात किसी तरह बीत गयी।

दूसरे दिन सवेरे नरवाहनदत्त उठे और सब आवश्यक बातों से छुट्टी पाकर क्या देखते हैं कि अपने पति अलङ्कारशील, पुत्र धर्म्मशील तथा कन्या अलङ्कारवती के साथ काञ्चनप्रभा आकाश से उतर रही है। वे सब * उतर कर उनके पास पहुंचे, राजाने उनका स्वागत किया परस्पर प्रणाम अशीर्वाद हुए। इतने में हजारों विद्याधर सुवर्ण और रत्नों के भार लिये दिये वहां पहुंच गये। राजा वत्स को यह समाचार मिला वह भी अपने मन्त्री और पत्नी के साथ वहां आ विराजे और पुत्र के उद्योग से बड़े प्रसन्न हुए। राजा वत्स के उचित आतिथ्य करने पर अलङ्कारशील राजा प्रणाम कर बोले, "राजन् ! अलङ्कारवती नाम्नी यह मेरी कन्या है जिस समय यह पैदा हुई उसी समय यह आकाशवाणी हुई थी कि आपके पुत्र इस नरवाहनदत्त के साथ इसका व्याह होगा जो कि सम्पूर्ण विद्याधरों के चक्रवर्त्ती राजा होंगे। सो आज मैं अपनी कन्या इन्हें दान करूंगा। लग्न भी शुभ है इसी लिये मैं इन सभों के साथ यहां आया हूं"। विद्याधरों के अधीश्वर अलङ्कारशील की यह बात सुन राजा वत्सराज अत्यन्त प्रसन्न हुए और बोले "आपकी बड़ी कृपा है।"

इसके उपरान्त विद्याधरों के ईश राजा अलङ्कारशील ने अपने हाथ में जल लेकर आंगन की भूमि में मन्त्र पढ़कर छिड़का, वहां से तुरन्त सोने की एक वेदी निकली जिसपर दिव्य वस्त्र ओढ़ाया था और जो अनेक प्रकार के अकृतिम रत्नों से परिपूर्ण थी। राजा अलङ्कारशील ने नरवाहनदत्त से कहा, "उठो शुभ लग्न आ पहुँचा है, स्नान करो।" राजा नरवाहनदत्त ने स्नान करके कङ्कण धारण किया राजा अलङ्कारशील ने अपनी कन्या को, जो दुलहिन के वेश में थी, वेदी पर ला प्रसन्नमन होके उसका दान नरवाहनदत्त के हाथ में कर दिया। लाजोत्सर्ग होजाने पर राजा अलङ्कारशील और उनके पुत्र धर्म्मशील ने हजारों भार मणि,

* 'रथ से' कहीं इतना अधिक है।


ज्ञानमंदिरम्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सोना, वस्त्र और भूषण दिये तथा हजारों दिव्य स्त्रियां भी दी गयीं। विवाह-संस्कार समाप्त हो जाने पर राजा अलङ्कारशील सबका उचित सम्मान कर पीछे उनसे विदा हो अपने पुत्र और पत्नी के साथ जिस आकाशमार्ग से आये थे उसी मार्ग से चले गये। इस प्रकार वत्सराज ने जब देखा कि मेरा पुत्र ऐसा सुयोग्य हुआ कि विद्याधरों के राजा जिसके साम्हने शिर झुकावें तब उनका आनन्द उनमें न समाया और बहुत दिनों तक उत्सव मनाते रहे।

अलङ्कारवति गुणभरी, पाइ सुलच्छनि तीय।
वत्सराजसुत मुदित जिमि, सुकवि उक्ति कमनीय॥

दूसरा तरङ्ग।

अब वत्सराज के पुत्र नरवाहनदत्त अपनी नई पत्नी अलङ्कारवती के साथ आनन्दपूर्वक अपने पिता के घर में रहने लगे। नाना वेश्याओं का नाच और गाना होता, प्रतिदिन विविध प्रकार के खान पान हुआ करते। राजा के मन्त्री और अमात्य सदा उसके समीप विद्यमान रहते। इस प्रकार नरवाहनदत्त के दिन आनन्द में बीतने लगे।

एक समय की बात है कि अलङ्कारवती की माता राजा की सास आईं। राजा ने उनका उचित सत्कार किया, तब वह कहने लगीं "ऐ बच्चे! हमारे नगर सुन्दरपुर को चलो और वहां हमारे महलों में निवास कर, वहां के उपवनों में अलंकारवती के साथ विहार करो।" सास की इतनी बात सुन राजा ने कहा कि बहुत अच्छा और अपने पिता से जाकर अनुमती मांगी, और उनके कहने से बसन्तक को साथ ले अपनी पत्नी और मन्त्री के साथ प्रस्थान किया। सास ने विद्या के प्रभाव से झट वहीं एक विमान पैदा किया, सब लोग उसपर चढ़ बैठे और विमान आकाशमार्ग से उड़ चला। विमान में बैठे २ राजा ने नीचे जो पृथ्वी की ओर देखा तो वह बहुतही छोटी नज़र आई बड़े बड़े समुद्र छोटे २ गड्ढों के समान दीख पड़ते थे। इस प्रकार चलते २ वे सब हिमाचल पर पहुँचे जहां पर किन्नरियां गान कर रही थीं, अप्सरायें अपनी सुन्दरता से अपूर्व छटा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिखा रही थीं। वहां मार्ग में अनेक प्रकार के आश्चर्यों को देखते हुए नरवाहनदत्त सुन्दरपुर में पहुँचे जहां सोने और जवाहिरों के खचित महल बने हैं और यद्यपि वह हिमालय पर ही बसा हुआ था तौभी ऐसा प्रतीत होता था मानों सुमेरु की चोटी पर है। वहां विमान आकाश से उतरा और सब लोग उसपर से उतर पड़े और राजा अपनी पत्नी और मन्त्री बसन्तक के साथ राजधानी में पैठे जहां राजा के आने से ध्वजा और पताका फहरा रही थीं। राजा के नगरप्रवेश के समय सास ने स्वस्तिवाचन कराया, उस दिन सास के अद्भुत प्रभाव से मँगाये गये दिव्य भोगों का भोग करते हुए राजा स्वर्ग तुल्य अपने ससुर के महल में रहे। दूसरे दिन सास ने आकर कहा कि हे बच्चे! इस नगर में स्वयम्भू भगवान् उमापति हैं † उनके दर्शन और पूजन से प्राणी को नाना प्रकार के भोग और मोक्ष प्राप्त होते हैं। वहां अलङ्कारवती के पिता का बनाया एक उद्यान है, उन्होंने गङ्गासर नामक तीर्थ निर्माण किया है सो आज जाके उन महादेवजी की पूजा करो और उस उद्यान में घूम फिर के आनन्द लूटो। इस प्रकार सास की बात सुन राजा नरवाहनदत्त अनुचरवर्ग तथा अपनी भार्य्या को साथ ले महादेव जी के उस उद्यान में गये जहां वृक्षों की पेड़ियां सोने की, डालियां सुन्दर २ रत्नों की और जिनमें मोतियों के गुच्छे तिन में मूगों के फूल लगे हैं। वहां पर गङ्गासर में स्नान कर राजाने जाकर उमापति की पूजा की, तदुपरान्त वह अलंकारवती के साथ घूम २ बावड़ियों की शोभा निरखने लगे। उन बावलियों की सीढ़ियां स्फटिक मणि की बनी थीं, जिनमें सुवर्ण के कमल खिले हुए हैं, तीरों पर कल्पलतायें लगी थीं। इस प्रकार अलङ्कारवती तथा अपने अमात्यवर्ग के साथ राजा नरवाहनदत्त विविध प्रकार के भोजन तथा पान का अनुभव करते मरुभूति के साथ हँसी ठट्ठा उड़ाते उन आनन्दमय स्थानों में रहके भांति २ के सुख लूटते उन उद्यानों में विहार करते हुए एक महीना वहां रहे और उनकी सास अपनी विद्या के प्रभाव से उत्तम २ विभूति का जोगाड़ कर दिया करतीं। तदनन्तर सास से देवोचित वस्त्र और अलङ्कारों से पूजित हो राजा अपनी पत्नी तथा अमात्यों के साथ उसी विमान पर चढ़कर अपनी नगरी कौशाम्बी में आ विराजे,

† शिवजी का मन्दिर है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनकी सास काञ्चनप्रभा भी पहुँचाने आई थीं। पिता वत्सराज अपने पुत्र को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

चलते समय काञ्चनप्रभा ने, राजा वत्सराज और वासवदत्ता के साम्हने अपनी पुत्री से इस प्रकार कहा कि पुत्री! तू क्रोध अथवा ईर्ष्या से कदापि अपने पति को अप्रसन्न न रखियो क्योंकि इसका परिणाम विरह होता है सो पीछे सन्ताप होता है। पहिले जो डाह करके मैंने अपने पति को दु:खित किया था उसका फल मैंने यह पाया और अब उनके वन में चले जाने से सन्ताप भोग रही हूं। इतना कह आंखों में आंसू भर प्रेम से गद्गद हो अलङ्कारवती को गले से लगा काञ्चनप्रभा आकाशमार्ग से उड़कर अपनी नगरी को चली गई।

दिन बीता, रात हुई वह भी बीत गई। सबेरे नरवाहनदत्त उठे और सब नित्य कर्म्मों से निवृत्त हो अपने मन्त्रियों के साथ बैठे थे कि इतने में अत्यन्त भयभीत एक स्त्री अलङ्कारवती के साम्हने आकर कहने लगी, "देवि! मुझे बचाओ मेरी रक्षा करो, देखो एक ब्राह्मण मुझे मारने को आया है, वह बाहर खड़ा है, उसके डर से भागी हुई मैं तुम्हारी शरण में आई हूं।" रानी ने कहा, "तू भय मत कर, कह तो सही कि बात क्या है? यह कौन है और क्यों तुझे मारने चाहता है?" रानी के ऐसे पूछने पर वह कहने लगी कि—

"रानी! इसी नगर के रहनेवाले बलसेन नामक क्षत्रिय की मैं पुत्री हूं नाम मेरा अशोकमाला है। हठशर्म्मा नाम एक धनी ब्राह्मण मेरी सुन्दरता पर लुभाय गया और जब मैं कन्याही थी उसने मेरे पिता से मुझे मांगा, उस समय मैंने अपने पिता से कहा कि इस घोरमुख और कुरूप को मैं अपना पति नहीं बनाया चाहती, यदि आप इसे दे भी देंगे तो मैं इसके घर में नहीं रहने की। इतनी मेरी बात सुन वह हठशर्म्मा ब्राह्मण अनठन (अनशन) कर पिता के द्वार पर बैठ गया कि जबतक इसका व्याह न कर दोगे मैं यहां से कभी न टलूंगा। पिता ने ब्रह्महत्या के भय से मुझे उसको समर्पण किया। मैं नहीं चाहती थी तौभी वह ब्राह्मण मुझे व्याहके अपने घर ले गया किन्तु मैं उसे छोड़कर एक क्षत्रिय-कुमार के पास चली गई। हठशर्म्मा ने अपने धन के बल से उसे दबा लिया, तब मैंने एक दूसरे धनवान् क्षत्रिय की शरण ली। तब उस ब्राह्मण ने रात्रि में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसके घर में आग लगा दी सो उसने मुझे छोड़ दिया तब मैं एक तीसरे क्षत्रिय के पास गई हठशर्म्मा ने उसका भी घर रात में जला दिया तब उसने भी मुझे छोड़ दिया सो जिस प्रकार हुँड़ार (भेड़िये) से भेड़ी डरे वैसेही उस हठशर्म्मा से डरती हुई मैं भाग निकली वह भी मेरे बध की इच्छा से मेरे पीछे २ दौड़ा। सो भागी २ मैं तुम्हारे एक नौकर वीरशर्म्मा * नामक क्षत्रिय के यहां दासी हुई, वह शरणागतवत्सल है इसलिये उसने मेरी रक्षा की । जब ब्राह्मण ने देखा कि यहां मेरी दाल नहीं गलती तब मारे विरह के सूख कर ठठरी हो गया। वीरशर्मा ने तो मेरी रक्षा के लिये उसे क़ैद कर लेना विचारा था परन्तु मैंने बहुत विनती की कि ऐसा मत करो जाने दो ब्राह्मण है। दैवात् आज जो मैं घर से निकली त्यों उसकी दृष्टि मुझपर पड़ी बस चट वह तलवार खींच मेरे मारने के लिये मेरे पीछे २ दौड़ा और यहां तक पीछा करता आया। मैं हांफती प्यासी दौड़ती २ यहां आई, प्रतिहारी ने दया कर द्वार खोल के मुझे भीतर ले लिया और मैं जानती हूं कि वह बाहर खड़ा है।"

इस प्रकार अशोकमाला की बात सुनके राजा नरवाहनदत्त ने हठशर्म्मा को अपने साम्हने बुलाय भेजा। आतेही अशोकमाला की ओर देखकर के उसकी आंखें क्रोध से लाल २ हो गयीं, मुख की रंगत बदल गई, उसके शरीर की गांठ गांठ कांपने लगीं। राजा ने उससे कहा, "हे ब्राह्मणापसद ! स्त्री को मारा चाहते हो और उसके लिये दूसरों के मकान जलाकर के पापी हुए हो सो तुम ऐसा कुत्सित काम क्यों करते हो ?" राजा की यह बात सुन वह ब्राह्मण बोला "राजन् ! धर्म्म-पूर्व्वक मैंने इसका विवाह किया सो यह मेरी धर्म्मपत्नी हुई अब यह मुझे छोड़ दूसरे के पास चली गई तो आपही कहिये यह अत्याचार मैं क्योंकर सह सकता हूं।" उसके ऐसा कहके चुप होने पर अशोकमाला कहने लगी "हे लोकपाल ! तुम्हीं कहो, तुम साक्षी हो, क्या इसने मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझसे व्याह नहीं किया ? क्या मैं यह नहीं कह रही थी कि मैं कदापि इसके घर न रहूंगी, तौभी यह बलपूर्वक मुझे व्याहके अपने घर ले गया।" जब वह इतना कह चुकी तो यह आकाशवाणी हुई "अशोकमाला ठीक कह रही है। यह मानुषी (स्त्री) नहीं है इसकी कथा इस प्रकार है सुनो।"

* वीरवर्म्मा ऐसा पाठ उचित जान पड़ता है।

अशोककर नामक विद्याधरों के एक वीर राजा हैं, उनके कोई पुत्र न था, दैवात् एक कन्या हुई जिसका नाम उसने अशोकमाला रक्खा। कन्या अपने पिता के घर में बढ़ने लगी। जब यह विवाहने योग्य हुई तो राजा ने अपने वंश के लिये इसका विवाह कर देना विचारा पर यह अपने रूप के अभिमान से किसी को पसन्दही न करै। तब इस प्रकार के हठ से पिता को बड़ा क्रोध आया सो उन्होंने शाप दिया "तू मनुष्ययोनि में जन्म ले वहां भी तेरा यही नाम होगा। तुझे कोई कुरूप ब्राह्मण जबर्दस्ती व्याहेगा, उसे छोड़ तू तीन पुरुष और करेगी। वहां भी वह तुझे सताता रहेगा तब तू एक बलवान राजपूत की दासी होगी तहां भी वह ब्राह्मण तुझे कष्ट देने को उद्यत होगा। जब एक बेर तुझे देख पावेगा तो तेरे मारने को दौड़ेगा तब तू भागी २ राजभवन में घुसेगी उस समय तू इस शाप से मुक्ति पावेगी"। "सो वही अशोकमाला विद्याधरी अपने पिता का शाप पाके उसी नाम में अब मानुषी हुई है, अब इसका शाप छूट गया सो अब यह अपने विद्याधरपुरको जाके निज शरीर में प्रवेश करेगी। तदनन्तर अपने शाप का स्मरण करविद्याधरों के राजा अभिरुचित नाम से व्याह कर सुखपूर्वक रमण करेगी।"

जब इतना कह आकाशवाणी चुप हो गई। अशोकमाला धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ी और उसका जीव निकल गया। यह घटना देख अलंकारवती के नेत्रों में आंसू भर गये, राजा नरवाहनदत्त के नेत्र भी डबडबा आये और जितने अनुचर थे सब गद्गद हो गये। शोक से हठशर्म्मा का क्रोध दूर हो गया, अब वह प्रेम के मारे अन्धा होकर रोने लगा परन्तु तत्क्षणात् अकस्मात् उसके मुंह पर प्रसन्नता छाय गई। यह देख सब लोगों ने पूछा, यह क्या? तब वह ब्राह्मण बोला "सुनो मुझे अपने पूर्वजन्म की बात स्मरण आगई है सो कहता हूं"।

हिमाचल पर मदनपुर नाम का एक बहुत सुन्दर नगर है, वहां विद्याधरों के राजा प्रलम्बभुज हैं। हे राजन्! स्थूलभुज नामे उनके एक लड़का हुआ, वह राजकुमार बड़े होनहार थे, क्रमानुसार सयाने हुए। एक समय की बात है कि विद्याधरों के राजा सुरभिवत्स अपनी कन्या के साथ प्रलम्बभुज के घर आये और बोले "यह मेरी कन्या सुरभिदत्ता है मैं इसे आपके पुत्र स्थूलभुज को देता हूं वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गुणवान् इसे व्याह लें"। यह बात प्रलम्बभुज के मन में बैठ गई सो उन्होंने अपने पुत्र को बुलाके सब बात उन्हें कह सुनाई। तदनन्तर अपने रूप के मदमाते वह स्थूलभुज अपने पिता से बोले "पिता। मैं इससे व्याह न करूँगा, यह बहुत सुन्दरी नहीं है"। यह सुन, पता ने कहा "बेटा तू अत्यन्त रूप लेकर क्या करेगा? उत्तम कुल चाहिये, यह बड़े कुल की बेटी है, इसके पिता ने तेरे लिये इसे मुझे दिया और मैंने उसको स्वीकार किया सो तू तिरस्कार न कर।" पिता के ऐसा कहने पर भी स्थूलभुज ने उनकी बात न मानी तब पिता को बड़ा क्रोध आया उन्होंने शाप दिया, "तू अपने रूप के घमण्ड से ऐसा कह रहा है, जा तू मनुष्य हो जा, वहां भी तू बड़ाही कुरूप होगा। शाप के कारण अपने लोक से च्युत अशोकमाला नामक स्त्री से तू बलपूर्वक व्याह करेगा और वह तुझे न प्यार करने के कारण छोड़ जावेगी तब तू विरह से दुःखित होगा। जब वह तुझे छोड़ दूसरे के यहां चली जावेगी तब तू उसकी प्रीति से दुःखी होके आग लगाकर पाप का भागी होगा"। जब प्रलम्बभुज इस प्रकार शाप दे चुके तब साध्वी सुरभिदत्ता उनके चरणों पर गिरके रो २ कर कहने लगी "आप मुझको भी शाप देवें, हम दोनों की गति एक समान हो, देखिये, मेरे लिये अकेले मेरे पति कोही क्लेश न हो"। इस तरह उसके कहने पर प्रलम्बभुज ने उस पतिव्रता को धीरज दिया और अपने पुत्र के शाप का अन्त इस प्रकार ठहरा दिया कि जब अशोकमाला का शाप छूट जावेगा तब यह भी अपनी जाति का स्मरण करेगा और अपने शरीर को पावेगा और इस शाप के स्मरण से इसका स्वरूप का मान जाता रहेगा तब तुरत तुझसे विवाह करलेगा और तेरे साथ सुख से रहने लगेगा। इस प्रकार प्रलम्बभुज की बात सुन उस साध्वी सुरभिदत्ता ने किसी तरह धीरज धरा।

इतना कह हठशर्म्मा फिर कहने लगा "राजन्! वही स्थूलभुज मैं हूं जो कि अपने पिता के शाप से यहां मनुष्ययोनि में आ पड़ा और अहङ्कार के कारण यह बड़ा भारी दुःख पाया। चाहे भूत हो चाहे वर्त्तमान पर अहङ्कारी पुरुषों को किसी दशा में आनन्द नहीं। आज मेरा वह शाप छूट गया। इतना कह हठशर्म्मा उस शरीर को त्याग के विद्याधर कुमार हो गया और दयावश अपनी विद्या के प्रभाव से अशोकमाला की लोथ उठा के अदृश्य रूप से गङ्गा में फेंक दी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और वहां से विद्याप्रभाव से गङ्गाजल लाके अलङ्कारवती के घर में सर्वत्र छिड़क दिया। पश्चात् अपने भावी प्रभु नरवाहनदत्त को प्रणाम कर आकाशमार्ग से उड़के अपने लोक को चला गया। यह दृश्य देख सब लोग विस्मित हो गये तब गोमुख बोला देव सुनिये मैं आप लोगों को अनङ्गरति की कथा सुनाता हूं जो ठीक ऐसीही है।

पृथ्वी में शूरपुर नामक एक नगर है, वास्तव में वह शूरपुर (बलवानों का नगर) ही है, वहां अत्यन्त दुर्म्मद महावराह नामक राजा रहते थे। राजा के कोई सन्तति न थी। जगज्जननी श्रीगौरी देवी की आराधना से उनको स्त्री पद्म-रति के अनङ्गरति नाम्नी कन्या हुई। काल पाय कर वह कन्या युवती हुई। बड़े बड़े राजा उसकी कामना करने लगे पर वह ऐसी रूपगर्विता थी कि किसी को पसन्दही न करती थी। वह कहती कि जो शूर और रूपवान् हो तथा कोई उत्तम विज्ञान (विद्या) जानता हो उसी से मैं व्याह करूंगी।

इसके बाद ऐसा हुआ कि दक्षिण की ओर से चार बीर उसके साथ व्याह करने की लालसा से चल कर वहां पहुंचे। उन सभोंने इसकी प्रतिज्ञा सुनली थी और चारों इसके चाहे हुए गुणों से युक्त थे। राजा के द्वार पर आके सभोंने पौं-रिये से खबर कहला भेजी, राजा महावराह ने उन्हें भीतर बुलाके अनङ्गरति के साम्हनेही उनसे पूछा "तुम सभों का क्या २ नाम है, क्या २ जाति है और कौन २ सी कला तुम लोग जानते हो?" राजा की ऐसी बात सुन उनमें स एक बोला "मैं जात का शूद्र हूं, नाम मेरा पंचपट्टिक है; मेरी विद्या यही है कि मैं रोज पांच जोड़े कपड़े बिनता हूं, उनमें से एक तो ब्राह्मण को दे डालता हूं, दूसरा शिवजी को चढ़ाता हूं, तीसरा आप पहिनता हूं और चौथा अपनी स्त्री के लिये बचा रखता हूं, जब मेरा व्याह हो जायगा तो अपनी भार्य्या को दूंगा; पांचवां बेंच कर अपने खानेपीने का काम चलाता हूं।" दूसरे ने कहा कि, "मैं वैश्य हूं, मेरा नाम भाषाज्ञ है; मैं सब पशु और पक्षियों की बोली समझता हूं।" तब तीसरा बोला, "मेरा नाम खड्गधर है, मैं जाति का क्षत्रिय हूं; कोई ऐसा क्षत्रिय अपनी माई का लाल नहीं पैदा हुआ है जो मुझे खड्गयुद्ध में जीत ले।" चौथे ने कहा कि, "मैं ब्राह्मण हूं मेरा नाम जीवदत्त है। श्रीगौरीजी देवी के प्रसाद से मुझे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो विद्या आती है उससे मैं मरी हुई स्त्री को जिला देता हूं।" इस प्रकार जब चारों अपनी २ बात सुना चुके तब शूद्र, वैश्य और क्षत्रिय ये तीनों पृथक २ अपने रूप, बल और शूरता की प्रसंशा करने लगे परन्तु ब्राह्मण तो सुन्दर था ही नहीं सो वह अपने बल और पराक्रम की प्रसंशा करता रहा। इस प्रकार उनकी बात सुन राजा महावराह ने अपने द्वारपाल से कहा कि तुम इन चारों को अपने घर में ले जाकर विश्राम कराओ। राजा की ऐसी आज्ञा पाय द्वारपाल उन्हें अपने घर ले गया।

तब राजा ने अपनी कन्या अनङ्गरति से पूछा कि, ! "बेटी कहो इनमें से तुम किसको पसन्द करती हो?" पिता की यह बात सुन वह बोली, "पिता सच तो यह है कि मैं इनमें से किसी को भी नहीं पसन्द करती हूं, पहिला तो शूद्रही है फिर भी जोलाहा सो उसके गुणों से क्या काम! दूसरा वैश्य ठहरा सो पक्षियों की बोली जानता है उससे मुझे क्या? सो मैं तो क्षत्रिय हूं उन दोनों से क्योंकर विवाह कर सकती हूं! हां तीसरा मेरी जात का है और गुणी है किन्तु वह सेवक है अपने प्राण बेंच के जीविका निर्वाह करता है सो मैं राजा की बेटी होकर क्योंकर उसकी गृहिणी हो सकती हूं। चौथा जीवदत्त ब्राह्मणही ठहरा वह भी मुझे पसन्द नहीं है क्योंकि एक तो वह कुरूप है दूसरे अपने धर्म्म के विरुद्ध कर्म्म करता तीसरे वेद से रहित होके पतित भी हो गया है। वह आपका दण्ड्य है सो हे पिता आप उसके साथ मेरा व्याह कैसे कर सकते हैं। हे तात! आप वर्णाश्रमधर्म्म के रक्षक हैं। जो राजा खड्गशूर होता है उससे धर्म्मशूर श्रेष्ठ है क्योंकि धर्म्मशूर हजारों खड्गशूरों का राजा हो सकता है।" अपनी कन्या की इस तरह की बातें सुन राजा उसे अन्तःपुर में भेज कर नित्य क्रिया के निमित्त उठ खड़े हुए।

दूसरे दिन वे चारों द्वारपाल के घर से निकल के कौतुक (तमाशा) देखने के लिये नगर में घूमने लगे। इतने में राजा का पद्मकवल नामक मतवाला हाथी सिक्कड़ तोड़ाय हथशाला से निकल भागा और नगर के लोगों को कुचलता इधर उधर दौड़ने लगा। हाथी मार्ग में इन चार वीरों को देखके मारडालने को उनकी ओर दौड़ा। वे भी अपना २ खड्ग ले उसके साम्हने दौड़ परे। उनमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से खड्गधर नामक जो क्षत्रिय था वह और तीनों को बगल में कर आप हाथी के साम्हने डट गया। हाथी सूड़ बढ़ाके दौड़ा राजपूत ने एकही वार में उसकी सूंड़ काट डाली जैसे कोई कमल का डंठा काट देवे। तब झट उसके पावों के बीच से होके फुर्त्ती से उसकी पीठ की ओर जा पहुँचा और वहां पीठ पर एक गहिरी दूसरी चोट जमाई। तीसरी वार में उसके दोनों पांव काट डाले वह हाथी चिघाड़ मारके गिर पड़ा और ठांवही मर गया। उस राजपूत का ऐसा पराक्रम देख सब लोग बड़े अचम्भित हो गये। जब राजा महावराह ने यह वृत्तान्त सुना तो बड़ा आश्चर्य माना।

दूसरे दिन राजा हाथी पर चढ़के शिकार करने चले और खड्गधरादि चारों वीर राजा के साथ थे। वहां राजा ने अपने सैन्य के साथ बाघ, हरिण और सूकरों का शिकार किया इतने में हाथियों का चिंघाड़ सुन क्रोध में आकर कतिपय सिंह राजा पर झपटे। उस समय जो सिंह आगे आ रहा था, खड्गधर ने अपनी तेज तलवार की एकही चोट से उसके दो टुकड़े कर डाले और दूसरे की टांगें बायें हाथ से पकड़ घुमाकर जमीन पर ऐसा पटका कि वहीं उसका दम निकल गया। भाषाज्ञ, जीवदत्त और पञ्चपट्टिक प्रत्येक ने उसी प्रकार एक एक सिंह को भूमि पर पटक २ मार डाला। इस प्रकार उन चारों पैदल वीरों ने राजा के देखतेही देखते बहुतेरे सिंह और बाघों का काम तमाम कर दिया। राजा को यह देख कर बड़ा आश्चर्य्य हुआ, आखेट समाप्त कर राजा अपने नगर में आये और वे चारों द्वारपाल के घर गये। राजा अन्तःपुर में पहुँचे और यद्यपि थक गये थे तौभी उसी समय अपनी कन्या अनङ्गरति को वहीं बुलवा के कहने लगे कि उन वीरों ने आखेट में कैसा पराक्रम दिखाया। प्रत्येक का अलग २ बखान अपने पिता के मुख से सुन राजपुत्री को बड़ा आश्चर्य्य हुआ तब भूपति पुनः अपनी कन्या से कहने लगे, "बेटी! पञ्चपट्टिक और भाषाज्ञ ये दोनों तो अन्यजाति ठहरे, और जीवदत्त ब्राह्मणही है, फिर उसे विरुद्धकर्म्म करनेवाला और कुरूप बतलाती हो, तो उस खड्गधर क्षत्रिय में क्या दोष पाती हो, वह तो स्वजातीय है, सुन्दर भी है फिर बलवान् और पराक्रमी भी है। देखो उसने कैसा मतवाला हाथी मार डाला, उसने सिंहों को पकड़ २ पृथ्वी पर पटक कर हनन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किया। माना मैंने कि वह दरिद्र और सेवक है, यदि यही दोष है तो मैं चण भर में उसे धनाढ्य कर दूंगा कि हजारों उसकी सेवा करने लगें, सो पुत्रि यदि तुझे पसन्द आवे तो उसे अपना पति बना"। पिता की ऐसी बात सुन लज्जा से शिर नीचे कर अनङ्गरति ने कहा, "अच्छा उन सब वीरों को यहां बुलाकर आप किसी ज्योतिषी महाराज से पूछिये देखिये वह क्या कहते हैं।" इस प्रकार कन्या का कथन सुन राजा ने उन वीरों को वहां बुला भेजा और ज्योतिषियों से स्वयं पूछा कि, "महाराज! बतलाइये तो इन चारों में से मेरी कन्या की गन्या (गणना) किसके साथ ठीक बैठती है और यह भी बतलाइये कि विवाह का लग्न कब अच्छा होगा?" राजा की इतनी बात सुन उस श्रेष्ठ गणक ने सभों का जन्मनक्षत्र पूछा और कुछ देर तक गिनगुनके राजा से कहा कि महाराज! यदि क्रोध न करें तो सच २ कहूं, आपकी कन्या का विवाह तो इनमें से किसी के साथ नहीं बनता, और पृथ्वी पर इसका व्याह तो लिखताही नहीं, यह तो विद्याधरी है जो शाप से मनुष्ययोनि में जन्मी है, सो आज से तीन महीने में इसका शाप छूट जायगा। तीन महीने तक इन सभों को यहीं ठहरना चाहिये जो यह निज लोक को न चली जावेगी तब व्याह हो जायगा! इस प्रकार ज्योतिषी की बात सुनकर सभों ने उसपर विश्वास किया और वे चारों वीर तीन महीने वहां रहे।

जब तीन मास व्यतीत हो गये तब राजा ने उन वीरों को, उस गणक को तथा अनङ्गरति को अपने पास बुला भेजा। उस समय राजा ने देखा कि अनंगरति अकस्मात् अधिक सुन्दरी हो गई यह देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ किन्तु ज्योतिषी ने विचारा कि बस अब इसका समय आ गया अब ज्यों राजा ने ज्योतिषी से पूछा कि महाराज वे तीनों महीने तो बीत गये कहिये अब क्या करना चाहिये त्योंही अनङ्गरति को अपनी जाति का स्मरण हो गया, उसने अञ्चल से अपना मुंह ढांक लिया और मानुषी शरीर छोड़ दिया। "यह मुंह ढांके क्यों बैठी है" ऐसा कहके राजा ने ज्यों उसके मुंह पर से वस्त्र हटाया तो क्या देखा कि पाले की मारी पद्मिनी की तरह वह मरी पड़ी है, उसका सरोज बदन पीला पड़ गया है नेत्रभ्रमर अचल हो गये, हंस के समान मनोहर स्वर उड़ गया है। कन्या की यह दशा देख राजा अपने वंश के उच्छिन्न हो जाने से शोकरूपी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वज्र से आहत हो पछाड़ खाकर पृथ्वी पर गिर पड़े और बेसुध हो गये। रानी पद्मरति भी शोक से मूर्छित हो गिर पड़ीं उनके सम्पूर्ण केश इधर उधर बिखर गये जैसे कि हाथी की तोड़ी मञ्जरी, जिसके फूल पृथ्वी पर छिटके हों। परिजनों में रोना पीटना मच गया, वे चारों वीर यह दृश्य देख फक्क हो गये, विचारों के दुःख की सीमा न रहा, इतने में राजा को होश हुआ, नृपति ने जीवदत्त से कहा, "महाराज! अब इसमें इन तीनों का तो बल नहीं चल सकता है, अब तो आपही का अवसर है आपने कहा था कि मरी स्त्री को जिला देता हूं, सो यदि आपको विद्या का बल है तो मेरी इस कन्या को जिला दीजिये, मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि जो यह जी जाय तो आपही के साथ इसका विवाह कर दूंगा।" राजा की ऐसी बात सुन जीवदत्त ने जल अभिमन्त्रित कर, राजपुत्री के ऊपर छिड़क कर आर्य्या छन्द में यह मन्त्र पढ़ा।

अट्टाट्टहाससहिते कङ्कमालाकुले दुरालोके।
चामुण्डे विकराले साहाय्यं मे कुरु त्वरितम्॥

इस प्रकार जीवदत्त के मन्त्र पढ़ने पर भी जब वह बाला न जीयी तब तो उसका मुंह उदास हो गया और कहने लगा कि विन्ध्यवासिनी देवी की दी हुई भी यह विद्या जब निष्फल हो गई तो मेरे इस जीवन से क्या लाभ जिससे मेरी हँसी हुई। ऐसा कह वह ज्योंही खड्ग से अपना शिर काटाही चाहता था कि यह आकाशवाणी हुई, "हे जीवदत्त! साहस मत कर (प्राण मत दे) सुन यह श्रेष्ठ विद्याधर की कन्या अनङ्गप्रभा है। माता पिता के शाप से इतने दिनों तक मानुषी बनकर रही, आज अपना यह मानुषी चोला छोड़ निज लोक को चली गई और अपना निज शरीर धारण किया सो अब तू जाकर फिर उन्हीं विन्ध्यवासिनी भगवती की आराधना कर और उन्हीं के प्रसाद से तू इस विद्याधरी को पावेगा। यह दिव्य भोग भोगनेवाली है इससे इसके विषय में न तो तुझे और न राजाही को शोक करना उचित है।" इस प्रकार उसकी सच्ची कथा सुनाय आकाशवाणी चुप हो गई। तब राजा ने अपनी कन्या का अग्निसंस्कारादि क्रिये की, पीछे धीरे २ राजा और रानी का शोक दूर हुआ। चारों वीर जैसे आयेथा वैसेही चले गये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जीवदत्त ब्राह्मण को तो विद्याधरी के मिलने की आशा थी सो वह विन्ध्याचल पर्व्वत पर जाके श्रीविन्ध्यवासिनी देवी की आराधना करने लगा। जगन्माया उसकी आराधना से प्रसन्न हुईं और स्वप्न में दर्शन देके उस ब्राह्मण से कहने लगीं, "हे ब्राह्मण! मैं तेरी भक्ति से सन्तुष्ट हूं, उठ और जो मैं कहती हूं सुन—हिमालय पर्वत पर वीरपुर नामक एक नगर है वहां पर विद्याधरों का समर नामक राजा है उसकी अनङ्गवती नाम्नी भार्य्या से अनङ्गप्रभा नाम्नी एक कन्या उत्पन्न हुई है। वह अपने रूप और युवत के गर्व से किसी को पसन्दही न करे तब उसके दुराग्रह से उसके माता पिता को बड़ा क्रोध आया सो उन्होंने उसे शाप दे दिया कि जा तू मनुष्ययोनि में जन्म ले परन्तु वहां भी तू पति का सुख न पावेगी, जब तू सोलह वर्ष की कन्याही रहेगी कि उस शरीर को त्याग कर फिर यहां चली आवेगी । खड्ग चलाने में चतुर एक कुरूप मनुष्य तेरा पति होगा, वह भी एक मुनि की कन्या के प्रेम में फँस जाने के कारण शाप पाके मर्त्यलोक में जन्मा है । वह तेरी इच्छा के न होने पर भी तुझे बलपूर्वक मर्त्यलोक में ले जायगा सो तू उसे छोड़ दूसरे के साथ निकल जायगी। पूर्वजन्म में उसने आठ परनारियां हरण की थीं इसलिये आठ जन्म तक वह स्त्री वियोग का दुःख सहता रहेगा परन्तु तू अपनी विद्याओं के नाश हो जाने से मानवीयोनि में जन्म लेकर आठों जन्म का दुःख इसी एक जन्म में भोग लेगी क्योंकि ठीकही है कि पापियों के संसर्ग से पाप का भागी होना पड़ता है सो जब किसी पापी के साथ स्त्री का सम्बन्ध हो जाता है तो दोनों का पाप बराबर हो जाता है। सो तेरा ज्ञान नष्ट हो जायगा इससे तू बहुतेरे पुरुषों से संसर्ग करेगी। तूने दुराग्रह करके बहुतेरे योग्य वरों का तिरस्कार किया है उसी का यह फल होगा। जो मदनप्रभ नामक विद्याधर पूर्णरूप से तेरे योग्य था, और जो तुझसे व्याह किया चाहता था वही मनुष्य होके राजा होगा जो अन्त में तेरा पति होगा। तदनन्तर जब तेरा शाप छूट जायगा तब तू पुनः अपने लोक में चली आवेगी और वही फिर विद्याधर हो जायगा तब तू उसी को अपना पति बनावेगी। सो हे ब्राह्मण! वही अनङ्गप्रभा अपने माता पिता के शाप से अनङ्गरति होके पृथ्वी में जन्मी थी अब शाप छूट जाने से फिर अनङ्गप्रभा की अनङ्गप्रभाही हो गई और अपने माता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पिता के निकट जा विराजो। सो अब उठ, और वीरपुर को जाके उसके पिता को जीत, यद्यपि वह विद्याओं का ज्ञाता है और अपने उच्च जन्म से रक्षित है तथापि तू उसे जीत लेगा। वहां तू उस अनङ्गप्रभा को प्राप्त करेगा। यह खड्ग ले, इसके हाथ में रहने से तू आकाश में उड़ सकेगा और कोई तुझे जीत न सकेगा।" इतना कहके, उसके हाथ में खड्ग देकर देवी अन्तर्धान हो गयीं।

जब ब्राह्मण की नींद टूटी तो क्या देखता है कि सचमुच खड्ग हाथ में है, अब तो फूला न समाया, जीवदत्त ने जगदम्बा को प्रणाम किया। जगज्जननी की कृपारूपी सुधा से उसकी तपस्या का सम्पूर्ण क्लेश शान्त हुआ। तब वह खड्ग हाथ में लिये आकाशमार्ग में उड़ा और हिमालय पर परिभ्रमण करता हुआ वीरपुर में विद्याधरों के ईश्वर, समर राजा के पास पहुँचा। राजा समर समर में हार गये अत: उन्होंने अपनी कन्या का व्याह उसके साथ कर दिया। ब्राह्मण जीवदत्त उस अनङ्गप्रभा विद्याधरी के साथ नाना प्रकार के भोग विलास करता आनन्द से रहने लगा। जब रहते २ कुछ दिन बीत गये तब जीवदत्त ने अपने ससुर समर से कहा कि मुझे यहां रहते बहुत दिन हो गये अब मेरी इच्छा है कि अपने मनुष्यलोक को जाऊँ, जन्मभूमि कैसीही निकम्मी क्यों न हो पर प्राणियों को बहुत प्यारी लगती है। ससुर ने भी इसकी बात का अनुमोदन किया परन्तु अनङ्गप्रभा तो आगे की बात जानती थी झटपट इसपर राजी न हुई, अस्तु किसी प्रकार उसको मना चुना उसे अपने गोद में रख ब्राह्मण आकाशमार्ग से मर्त्यलोक में उतरा। मार्ग में एक रमणीक पर्वत देखकर अनङ्गप्रभा ने अपने पति से कहा कि मैं थक गई हूं सो आओ यहां विश्राम कर लें। अपनी प्रिया की ऐसी बात सुन वह उस पहाड़ पर उतरा और विद्याओं के प्रभाव से दोनों ने अनेक प्रकार के उत्तम २ खान पान किये। यहां से जीवदत्त का भाग्य पलटा, दैववश उसने अपनी भार्य्या अनङ्गप्रभा से कहा, "प्रिये! कुछ मधुर गान करो।" पति का ऐसा वचन सुन वह भक्तिपूर्वक श्रीधूर्जटि शङ्कर भगवान् की स्तुति गाने लगी। इस मधुर गीत से ब्राह्मण को नींद आ गयी वह खर्राटे मारके सुखनींद सो गया।

इतने में थके मांदे राजा हरिवर, पानी के सोते की खोज में मार्ग से जा रहे थे सो जैसे मधुर गान से हरिण मोहित हो जाता है वैसेही उस मनोहर मधुर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गीत को सुन के मोहित हो राजा अपना रथ छोड़ अकेले वहां पहुँचे। पहिलेही शकुनों ने उन्हें शुभ सूचना दे दी थी । वहां पहुँच के राजा क्या देखते हैं कि, कामदेव की सच्ची प्रभा के समान अनङ्गप्रभा बैठी गान कर रही है। उसके गीत और रूप से राजा का मन हाथ से बाहर हो गया और कामदेव के वाणों से हृदय बिधने लगा। मदन के समान सुभग उन राजा को समीप में आये देखकर अनंगप्रभा भी सोचने लगी, "अहो यह कौन हैं, क्या यह अपना पुष्पधनुष फेंक के कामदेव तो नहीं चले आये हैं अथवा श्रीशङ्कर भगवान् मेरी स्तुति से प्रसन्न हुये हों तो यह उनका मूर्त्तिमान् अनुग्रह तो नहीं है । इस प्रकार की चिन्ता कर कामबाण से पीड़ित हो अनंगप्रभा राजा से पूछने लगी "सौम्य ! आप कौन हैं? और इस वन में किस निमित्त आये हैं वह बतलाइये ?" जिस प्रकार उनका वहां आना हुआ था उन्होंने कह सुनाया, पीछे अनंगप्रभा से पूछा कि "शोभने ! आप कौन हैं सो तो बतलाओ ? हे कमलनयने ! यह आपके पास सोया है सो कौन है ? ।" इस प्रकार राजा के प्रश्न सुनकर अनंगप्रभा ने संक्षेप में कहा कि मैं विद्याधरी हूं और यह खड्गसिद्ध मेरे पति हैं । हे राजन् ! आपको देखतेही मेरा मन आप पर लुभाय गया, सो आइये जबलों यह न जागें तबलों आपके नगर को झटपट चल चलें, वहां चलके तब विस्तार से अपनी कथा सुनाऊँगी । राजा के तो मन की हुई उसकी बात सुन वह ऐसे प्रसन्न हुए मानो तीनों लोक का राज्य मिल जाय, आप उसकी बात पर झटपट सम्मत हो गये। अनङ्गप्रभा अपने मनमें सोच रही थी कि राजा को गोद में उठाके आकाशमार्ग से उड़ जाऊँगी कि इतने में पतिद्रोहरूपी महा पाप से उसकी विद्या भूल गई तब उसको पिता का शाप स्मरण हुआ इससे शोक करने लगी । यह सहसा विषाद देखकर राजा ने उससे पूछा, "प्रिये क्यों विषाद करती हो ?" उसने बतलाया कि ऐसी २ बात है, यह सुनकर राजा हरिवर फिर बोले कि अब विषाद करने का अवसर नहीं है, देखो ऐसा न हो कि यह तुम्हारा पति जाग पड़े, सुनो यह बात दैवाधीन है इसमें मनुष्य का चारा नहीं, सो हे प्रिये ! शोक मत करो। भला ऐसा कौन है जो अपने शिर की छाया और दैव की गति का अतिक्रमण करे, सो आओ चलें। राजा की ऐसी बात सुनकर अनङ्गप्रभा सम्मत होगई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब राजा हरिवर उसे गोद में उठाके झटपट वहां से चल पड़े राजा उसे पाके ऐसे सन्तुष्ट और प्रसन्न हुए थे मानों निधि मिल गई हो। जल्द चलते २ अपने सैनिकों के पास पहुँचे, सभों ने उनका स्वागत किया, राजा हरिवर चट रथ पर सवार हुए और बात की बात में उस नगर में पहुँच गए। राजा के साथ उस रमणी को देखकर प्रजा को बड़ा कौतुक हुआ। राजा हरिवर अपनेही नाम के उस नगर में अनङ्गप्रभा के साथ स्वर्गसुख का भोग करते हुए आनन्दपूर्वक रहने लगे। वह अनङ्गप्रभा भी शाप के कारण अपने प्रभाव को भूल गई और राजा के साथ बड़े अनुराग से रहने लगी।

उधर जब ब्राह्मण की नींद टूटी तो उठके क्या देखता है कि न केवल अनङ्गप्रभाही नहीं है किन्तु खड्ग भी गायब है, अपनी यह दशा देख वह सोचने लगा कि हैं! अनङ्गप्रभा कहां है, अरे वह तलवार क्या हुई? क्या वह मेरी तलवार लेकर कहीं चली तो नहीं गई अथवा उन दोनों को कोई ले तो नहीं गया, इस प्रकार चिन्ता करता हुआ वह ब्राह्मण कामवाण से पीड़ित हो तीन दिन तक उसी पहाड़ पर चारों ओर ढूंढ़ता रहा, पश्चात् पहाड़ से उतरकर दश दिन तक जङ्गलों में पागल की नाईं इधर उधर उसे खोजता फिरता और भ्रमण करता रहा पर कहीं पता न लगा। "हा दुर्भाग्य! अनङ्गप्रभा मुझे बड़े कष्ट से मिली थी, अरे तलवार भी बड़ी कठिनता से प्राप्त हुई थी सो दोनों को तूने हर लिया।" इस प्रकार कहता और बिलखता हुआ निराहार वह ब्राह्मण घूमते २ एक बड़े गांव में पहुँचा और वहां एक धनवान् ब्राह्मण के गृह में गया। ज्योंही ब्राह्मण घर में पैठा कि उत्तम वस्त्र पहिने अति सुन्दरी प्रियदत्ता नाम्नी घर की स्वामिनी सामने आई और ब्राह्मण को आसन पर बैठाकर अपनी दासियों से बोली कि जीवदत्त के पांव चटपट धोओ देखो विरहातुर निराहार इस ब्राह्मण को आज तेरहवां उपवास है। यह सुन जीवदत्त अपने मनमें विस्मित हो सोचने लगा कि क्या अनङ्गप्रभा यहां आई अथवा क्या यह योगिनी है। इस प्रकार की चिन्ता वह करही रहा था कि दासियों ने उसके पांव धो दिये और प्रियदत्ता ने अनेक २ प्रकार के पक्वान्न ब्राह्मण के साम्हने ला धरे। जब ब्राह्मण खा पी के सन्तुष्ट हुआ तो बड़ी नम्रता से उस प्रियदत्ता से पूछने लगा—"हे अनिन्दिते!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पहिले यह बताओ कि मेरा वृत्तान्त तुमने क्योंकर जाना, दूसरे यह कहो कि मेरी प्रिया और तलवार क्या हुई?" ब्राह्मण की बात सुन प्रियदत्ता बोली कि अपने पति को छोड़ मैं स्वप्न में भी किसी परपुरुष की चिन्ता नहीं करती, दूसरे पुरुषों को मैं पुत्र और भाई के समान मानती हूं, कोई भी अतिथि मेरे घर से विमुख नहीं जाता। इसी के प्रभाव से मैं भूत भविष्य और वर्त्तमान तीनों काल की बातें जानती हूं। सुनो तुम्हारी अनङ्गप्रभा को राजा हरिवर ले गया वह अपनेही नाम के नगर में रहता है। जब तुम सो गये थे उस समय वह राजा दैवात् उसी मार्ग से जा रहा था कि गीत सुनकर वहां आगया। वह राजा बड़ा बलवान् है सो तुम अनङ्गप्रभा को नहीं पा सकते परन्तु वह कुलटा उसे भी छोड़कर कहीं चली जायगी। और उसकी प्राप्तिही के लिये देवी ने तुम्हें खड्ग दिया था सो खड्ग अपना काम कर चुका अब उसके हर जाने पर वह दिव्य खड्ग देवी केही पास चला गया। फिर देवी ने तो स्वप्न में अनङ्गप्रभा के शाप की कथा तुम्हें सुनाही दी थी उसे तुम क्यों भूल गये। जो होना था सो हो गया अब इसमें तुम वृथा शोक करके क्या करोगे। छोड़ो इस पाप की चिन्ता को इसमें वारम्बार दुःखही होता जायगा। और फिर अब तुम उस पापिनी को लेही के क्या करोगे वह तो कुलटा हो गयी, दूसरे पर उसका मन लुभाया है और भाई! अब वह मानुषी हो गयी है और तुम्हारे द्रोह के कारण उसकी सब विद्या भूल गयी। इस प्रकार साध्वी प्रियदत्ता की बात सुन जीवदत्त का मन अनङ्गप्रभा की ओर से हट गया, उसकी चंचलता का स्मरण कर उसका आत्मा विरक्त हो गया, अब वह ब्राह्मणी से कहने लगा "मातः! आपके इस सत्य वचन से मेरा मोह शान्त हुआ, भला पुण्यात्माओं का संसर्ग किसका कल्याण न करेगा। पूर्वजन्म के पाप के कारण मेरे ऊपर यह ऐसा दुःख पड़ा सो अब मैं डाह छोड़ उनके छुड़ाने के लिये तीर्थ यात्रा करूँगा। अनङ्गप्रभा के निमित्त दूसरे से बैर करने में मुझे क्या मिलेगा, एक क्रोध के जीत लेने से सम्पूर्ण जगत् का विजय हो जाता है।" इस प्रकार ब्राह्मण कहही रहा था कि प्रियदत्ता का पति, जो अत्यन्त धार्मिक और अतिथिवत्सल था, घर आया, उसने भी ब्राह्मण का सत्कार कर उसे बहुत कुछ समझाया बुझाया। तब कुछेक विश्राम कर, उनकी आज्ञा ले, ब्राह्मण तीर्थयात्रा करने चला गया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार वह ब्राह्मण पृथ्वी भर के तीर्थस्थानों में भ्रमण करता हुआ फल मूल भक्षण करके बन २ पहाड़ २ घूमता २ विन्ध्याचल पर्वत पर पहुँचा, वहां श्री विन्ध्यवासिनी भगवती की आराधना में कठोर तपस्या करने लगा। आहार छोड़ कुशासन पर बैठ महामाया के ध्यान में मग्न हुआ। श्रीजगदम्बा उसकी तपस्या से सन्तुष्ट हो प्रत्यक्ष होकर कहने लगीं "हे वत्स! उठ, तुम चारों मेरे गण हो। शेष के तीन पञ्चमूल, चतुर्वक्त्र और महोदरमुख नामक हैं और तू चौथा विकटवदन है। एक समय की बात है कि तुम सब विहार करने के लिये गङ्गाकिनारे गये, वहां तुम लोगों ने एक मुनिकन्या को नहाती देखा, वह कपिलजटा नामक मुनि की चापलेखा नाम्नी कन्या थी। तुम सब काममोहित हो उसका कामना करने लगे। उसने कहा कि मैं मुनि कन्या हूं सो तुमलोग यहां से दूर हो, यह सुन वे तीनों तो चुप हो रहे पर तूने हठकर उसका हाथ पकड़ लिया। तब वह "हे पिता बचाओ, हे तात! बचाओ" ऐसा कह २ चिल्लाने लगी। मुनि समीपही में थे, उसका चिल्लाना सुन क्रोध कर वहां दौड़े हुए आये। तूने उनको देखतेही उसे छोड़ दिया, तब मुनिने तुम सबों को झट शाप दिया कि हे पापियो! तुम सब मनुष्ययोनि में जाके जन्म लेओ। जब तुम सभों ने चरण पकड़ के मुनि की बड़ी प्रार्थना की तब उन्होंने प्रसन्न होकर तुम्हारे शाप का यह उद्धार ठहरा दिया कि जब राजसुता अनङ्गप्रभा को तुम सब जाके व्याह करने की इच्छा से मांगोगे उस समय वह अपने विद्याधर लोक को चली जावेगी तब ये तीनों तो शाप से उसी समय छूट जावेंगे परन्तु हे विकटवदन! तू उस विद्याधरी को पावेगा किन्तु उससे तेरा वियोग हो जायगा तब तू अत्यन्त शोकित होगा और बहुत दिनों तक देवी की आराधना करने पर इस शाप से मुक्ति पावेगा। तुझे इतना कष्ट इसलिये उठाना पड़ेगा कि प्रथम तो तूने इस चापलेखा का हाथ पकड़ा, दूसरे बहुतेरी पराई स्त्रियों का अपहरण किया है इससे बहुत पाप बटुर गया है। सो तुम चारो मेरे गण महर्षि के शाप से जाकर दक्षिण देश में वीर होके जन्मे। पञ्चपट्टिश, भाषाज्ञ और तीसरा खड्गधर, ये तीनों तेरे मित्र हैं और तू चौथा जीवदत्त है। वे तीनों अनङ्गरति के निज लोक चले जाने पर मेरे प्रसाद से शापमुक्त हो यहां आगये और तेरी आराधना से मैं सन्तुष्ट हुई सो आज तेरे शाप का भी अन्त हो गया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सो अब इस आग्नेयीधारणा विद्या को ले इससे अपना शरीर त्यागकर और आठ जन्मों में भोग्य पापों को तुरन्त एकही वार में भस्म कर डाल।" इतना कह, धारणा विद्या देकर देवी वहीं अन्तर्धान हो गयीं। सो वह जीवदत्त उस धारणा के द्वारा अपने पापमय मर्त्यशरीर को दग्ध कर बहुदिनव्यापी शाप से मुक्त हो पुन: जगज्जननी श्रीविन्ध्यवासिनी का गण हो गया। सो जब परस्त्री के सङ्गम से देवतों को ऐसा क्लेश उठाना पड़ता है तो इतर अर्थात् मनुष्यों की कैसी दुर्गति होगी इसका क्या पूछना ?

इतने अवसर में वह अनङ्गप्रभा हरिवरपुर के राजा हरिवर की पटरानी हो गयी। राजा को उसने ऐसा मोह लिया था कि राजा राजकाज का सब भार सुमन्त्र नामक मन्त्री के ऊपर छोड़ आप रात दिन उसी के पास बैठे रहते और उसी का ध्यानकिया करते थे। एक समय की बात है कि मध्यदेश से लब्धवर नामक एक नया नाट्याचार्य्य * राजा के पास आया, राजा उसके नाचने और गाने बजाने से बड़े प्रसन्न हुए सो उन्होंने उसे अन्त:पुर में नाट्याचार्य्य नियुक्त कर दिया। वह अनङ्गप्रभा ऐसी कुशल थी अति शीघ्र सीख लेती सो नाट्याचार्य्य ने उसे ऐसा माजा कि जब अनङ्गप्रभा नाचती तो उसकी सौतें देखके दङ्ग हो जातीं। उस नृत्याचार्य्य के सहवास और गुणों से तथा नृत्य के रस से वह अनङ्गप्रभा उसकी अनुरागिणी हो गयी और वह नाट्याचार्य्य भी उसके रूप और नाच से ऐसा मोहित हो गया कि एकान्त में कामवश हो कुछ औरही नाच नाचने लगा। एक समय की बात है कि नृत्यशाला में एकान्त पाय अनङ्गप्रभा उस नाट्याचार्य्य के पास रति की लालसा से गयी और सुरत के उपरान्त बड़े अनुराग के साथ बोली "प्यारे, तुम्हारे बिना मैं एक क्षण भी नहीं रह सकती, और जब राजा हरिवर के कानों तक यह बात पहुँचेगी तब वह कदापि यह अत्याचार न सह सकेंगे सो आवो कहीं ऐसी जगह चलचलें जहां राजा को भी पता न लगे। राजा ने प्रसन्न होकर घोड़े ऊँट और सोना इत्यादि धन तुमको दियाही है सो तुम्हारे पास हैही, और मेरे पास भूषण हैं, सो आओ अब झट निकल चलें और ऐसे स्थान में जावें जहां निर्भय रह सकें।" नाट्याचार्य्य उसकी ऐसी बात सुन फूला न समाया, झट राजी हो

* नाचने गाने बजाने का शिक्षक (कथक)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गया। तब अनंगप्रभा पुरुष का भेष बना अपनी सधीबधी दासी के साथ उस नृत्याचार्य के घर पहुँची। तदनन्तर उन्हीं घोड़ों और ऊँटों पर सब धन लाद आप घोड़े पर सवार हो उसी नाट्यशिक्षक के साथ चल पड़ी। पहिले विद्याधर की लक्ष्मी का त्याग कर पश्चात् राजश्री को छोड़ अब कथक की आश्रिता हुई। हा धिक्! स्त्रियों का मन कैसा चञ्चल होता है। चलते २ दोनों बहुत दूर निकल गये और वियोगपुर नामक नगर में पहुँचे वहां दोनों सुख से रहने लगे। वह नाट्याचार्य अनंगप्रभा को पाके अपने नाम लब्धवर को सार्थक समझता था।

इधर जब राजा हरिवर को यह खबर लगी कि अनंगप्रभा न जाने कहां चली गई तब उसके शोक से मरने पर उतारू हो गये तब सुमन्त्र मन्त्री राजा को समझाके कहने लगा कि महाराज! ऐसे क्यों बन बैठे हैं मानों कुछ जानतेही नहीं, टुक बिचारिये तो सही, देखिये आपको देखतेही अपने पति खड्गविद्याधर को छोड़कर आपके साथ चली आई तो आपके यहां वह कब रह सकती है? वह उत्तम वस्तु का त्याग कर किसी नीच के साथ चली गई जो तिनके को रत्न मानता है उसका अनुराग तृणही में होता है। यह निश्चय होता है कि वह नृत्याचार्य्य के साथ चली गई क्योंकि वह भी कहीं नहीं दिखाई देता। मैंने सुना है कि आज प्रातःकाल वे दोनों नाट्यशाला में थे। सो देव! कहिये जान बूझ करके भी आपका उससे ऐसा अनुराग क्यों है? सच तो यह है कि विलासिनी स्त्रियां संध्या के समान चञ्चल होती हैं। मन्त्री की ऐसी बात सुनके राजा ने सोचा कि मेरा बुद्धिमान् मन्त्री ठीक कह रहा है। विलासिनी स्त्री मनुष्य के जीवन के समान चञ्चल है, उसका सम्बन्ध क्षण २ पलटता रहता है और अन्त में विषादही उसका फल है। बुद्धिमान् मनुष्य गहिरी नदी और स्त्री के फेर में कदापि नहीं पड़ते, पहिले तो व्यर्थ के आनन्दादि देख पड़ते हैं पश्चात् जहां उसमें पड़ा कि डूबा। वेही मनुष्य सचमुच बड़े धीर हैं जो विपत्ति में घबड़ा नहीं जाते, सम्पत्ति में गर्वित नहीं होते और कार्य्य में कातर नहीं होते; उन्होंही ने जगत् को जीत लिया है। इस प्रकार सोच बिचार अपने मन्त्री के वचन से शोक त्यागकर राजा हरिवर अपनी स्त्रियों मेंही सन्तोष कर रहने लगे।

उधर अनङ्गप्रभा नाट्याचार्य्य के साथ वियोगपुर में कुछ दिनों तक सुख से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रही । दैवात् नाट्याचार्य्य की मित्रता सुदर्शन नामक एक युवा जुवाड़ी से होगई । उस जुवाड़ी ने अनङ्गप्रभा के देखते २ थोड़ेही दिनों में नाट्याचार्य्य का सब धन जूए में जीत लिया, वह बिचारा निर्धन ही गया । जब अनङ्गप्रभा ने देखा कि इसके पास कौड़ी न रही तब उसे छोड़ सुदर्शन को जा घेरा और उसे पति बना लिया । नाट्याचार्य्य को धन और स्त्री के वियोग से वैराग्य उत्पन्न हुआ सो वह जटाजूट बांध तपस्या करने के लिये गङ्गाकिनारे चला गया । दिनोंदिन नये नये पुरुषों की अभिलाषिणी वह अनङ्गप्रभा उस जुवाड़ी के साथ वहीं रहने लगी । एक दिन रात के समय उस जुआरी के घर में चोर घुसे और जो कुछ लिबड़ी बड़ताना रहा चोरा ले गये । अब द्रव्यादि के अभाव से अनङ्गप्रभा को अत्यन्त क्लेश होने लगा यह देख सुदर्शन ने उससे कहा कि हिरण्यगुप्त नामक एक मेरा मित्र बड़ा धनवान् है सो चलो उससे कुछ कर्ज मांग लावें ऐसा कह दैव का मारा वह उसके साथ हिरण्यगुप्त के घर गया और उसने उससे कर्ज मांगा । उस महाजन की दृष्टि अनङ्गप्रभा पर पड़ी चार नजर होतेही दोनों के मनमें प्रीति उपज गयी तब वह उन दोनों से बोला कि आज तुम दोनों मेरे यहांही भोजन करो कल रुपये दूँगा । यह सुन उन दोनों का औरही भाव देखके सुदर्शन ने कहा कि मैं तो आज भोजन नहीं करूँगा, तब बनिये ने कहा कि मित्र ! तो तुम्हारी स्त्री खा लेवे देखो यह तो हमारे घर पहिले पहिल आई है । यद्यपि वह बड़ा धूर्त्त था तथापि उसकी ऐसी बात सुन के चुप रह गया और वह वणिक् अनङ्गप्रभा को लेके अपने घर के भीतर चला गया । वहां पहुँच के वह वणिक् अकस्मात् आई हुई उस अनङ्गप्रभा के साथ अनेक प्रकार के पक्वान्नादि का भोजन कर उत्तम २ पान से छकाछक हो आनन्द लूटने लगा और सुदर्शन बाहर बैठा हुआ अपनी स्त्री की बाट जोह रहा था । फिर उस महाजन के नौकरों ने आकर सुदर्शन से कहा कि तुम्हारी स्त्री तो खा पीकर चली गई क्या तुमने उसे निकल के जाती नहीं देखा अब सो तुम यहां बैठे २ क्या कर रहे हो घर चले जाओ । उसने कहा कि वह कब आई वह तो भीतर बैठी है मैं तो न जाऊँगा, इतना कहना था कि नौकरों ने लतिया के उसे बाहर निकाल दिया । तब सुदर्शन अत्यन्त दुःखित हो विचारने लगा देखो तो मेरा मित्र होके इसने ऐसा काम किया, मेरी स्त्री को हर लिया ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मैंने अपने पाप का प्रत्यक्ष फल पा लिया, जैसा मैंने दूसरे के साथ किया वैसाही एक तीसरे ने मेरा किया। सो मैं दूसरे पर क्रोध कर क्या करूँगा मेरा कामही ऐसा है सो अब मैं वह काम करूँगा जिससे फिर मेरा ऐसा पराभव न हो। इस प्रकार चिन्ता कर वह सुदर्शन क्रोध को त्याग बदरिकाश्रम में जाके ऐसी तपस्या करने लगा कि जिससे पुनः संसार में जन्म न हो।

जिस प्रकार भौंरी एक फूल से उड़के दूसरे फूल पर बैठती है वैसेही वह अनङ्गप्रभा उस सुन्दर बनिये को पति पाकर आनन्दपूर्वक रमण करने लगी। क्रमानुसार वह धन दौलत क्या उसके प्राण तक की स्वामिनी बन गयी। वहां के राजा वीरबाहु के कानों में उस अनङ्गप्रभा की अलौकिक सुन्दरता की बात पहुँची परन्तु राजा बड़े धार्म्मिक थे अतः धर्म्म की मर्य्यादा की रक्षा करने के हेतु उन्होंने उसका ग्रहण नहीं किया। अनंगप्रभा के व्यय के आगे धीरे २ महाजन का धन खसक चला। भला जिस घर में रखनी रहे वहां लक्ष्मी और साध्वी स्त्री कब हरी भरी रह सकती हैं। तब वह वणिक् हिरण्यगर्भ वर्त्तन भराय के व्यापार करने के लिये सुवर्णभूमि नामक द्वीप को चला और साथ में अनंगप्रभा को भी लेता गया कि कहीं ऐसा न हो कि यह कहीं चली जावे। चलते २ वह सागरपुर नामक नगर में पहुँचा। वहां समुद्र के निकट मछुओं का राजा सागरवीर नामक रहता था सो उससे मिला और उसको साथ ले समुद्रकिनारे गय। और उसके लाये हुए जहाज में अपनी प्रिया के साथ सवार हुआ। इस प्रकार उस सागरवीर के साथ वह व्यग्र वणिक् समुद्र में कई दिन लों चला जा रहा था कि एक दिन उमड़घुमड़ के काले बादल घिर आये और बिजुली चमकने और कड़कने लगी यह देख सब भयभीत हो गये कि अब सर्वनाश हुआ। बड़ी भारी आंधी और घोर वर्षा से जहाज डगमगा के लहरों में डूबने लगा। जहाजियों में चिल्लाना मच गया और जहाज टूटने लगा जैसे अपना मनोरथ टूटे, यह देख वह हिरण्यगुप्त बनिया बड़ा व्याकुल हुआ और चट कमर में दुपट्टा बांध, अनंगप्रभा का मुंह न देख चिल्लाया "हा प्रिये! तू कहां है" और झम्म से समुद्र में कूद पड़ा। भाग्यवश तैरना आता था सो तैरता २ एक सौदागर के जहाज पर जा लगा और उसे पकड़ ऊपर चढ़ गया। इधर सागरवीर ने चट कईएक पल्लों को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रस्सी से बांध उसपर अनंगप्रभा को बैठा दिया और आप भी उसी पर बैठकर उसको समझाता बुझाता और दिलासा देता अपने बाहुओं से जल को काटता निकल चला। जहाज के टूटफूट जाने पर एक क्षण में सब शान्त हो गया, आकाश निर्मल हो गया और समुद्र ऐसा शान्त हो गया जैसा क्रोध उतर जाने पर साधु शान्त हो जाता है। दैव का मारा हिरण्यगुप्त जहाज पर चढ़ा हुआ पांच दिन में समुद्र के किनारे लगा। प्रिया के विरह से दुःखित वह जहाज से उतरा और सोचने लगा कि विधिगति में किसका चारा। तब वह किसी प्रकार धीरज धर धीरे २ अपने नगर में पहुँचा और फिर धन का उपार्जन कर सुख से रहने लगा।

उधर अनङ्गप्रभा भी पटरे पर बैठी २ उस सागरवीर से एकही दिन में समुद्र किनारे पहुँचा दी गयी, तब वह मल्लाहों का सर्दार उसे समझा बुझा के सागरपुर नामक अपने नगर में ले गया। जब अनङ्गप्रभा ने देखा कि यह केवटों का स्वामी सुन्दर युवा और वीर तथा राजा के समान श्रीमन्त है, इसी ने मेरे प्राण बचाये और यह आज्ञाकारी भी है तब उसी को अपना पति बना लिया। ठीक है दुश्चरित्रा स्त्री ऊँच नीच का विचार नहीं करती। वहां उस मल्लाहों के राजा के साथ अनंगप्रभा उसके सम्पूर्ण धन की मालकिन हो आनन्दपूर्वक रहने लगी।

एक समय की बात है कि अनंगप्रभा अपनी अटारी पर बैठी हुई थी कि उसी सड़क से विजयवर्म्मा नामक एक सुन्दर क्षत्रियकुमार आ निकला, अनंगप्रभा उसको देखतेही मोहित हो गयी और झट अटारी से उतर के उसके पास पहुँची और बोली प्यारे आपको देखतेही मेरा चित्त चंचल हो गया सो अब मुझको स्वीकार करो।" वह भी उस त्रैलोक्यसुन्दरी को जो मानो आकाश से उतर पड़ी थी, देखके अत्यन्त प्रसन्न हो गया और उसकी बात मान उसे लेके अपने घर चला गया। जब सागरवीर को मालूम हुआ कि मेरी प्रिया कहीं चली गई तब अपने शरीर के त्यागने की इच्छा से तपस्या करने के लिये घर से निकल गङ्गाकिनारे चला गया। इसमें आश्चर्य्यही क्या कि उसे ऐसा बड़ा दुःख न हो क्योंकि भला कहां वह मल्लाह और ऐसी सुन्दरी विद्याधरी से सङ्गम!। वह तो निर्वेद से तपस्या करने चला गया और अनङ्गप्रभा उसी नगर में विजयवर्म्मा के साथ निर्द्वन्द्व सुखपूर्व्वक रहने लगी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसी देश के राजा सागरवर्म्मा एक दिन हथिनी पर चढ़के नगर में घूमने को निकले और अपने नाम पर बसाये हुए उस नगर को देखते भालते विजयवर्म्मा के घर के पास पहुँचे। राजा के आने का सम्वाद पा के अनङ्गप्रभा उनके दर्शन के निमित्त अटारी पर चढ़ गयी और राजा को देखतेही मोहित हो गई और पुकार के महावत से कहने लगी "हे महावत मैं कभी हाथी पर नहीं चढ़ी हूं सो ज़रा मुझे चढ़ा लेते तो देखती कि कैसा सुख होता है।" यह सुन महावत राजा का मुंह निरखने लगा, राजा ने जो शिर उठाके उसकी ओर देखा तो कैसा मालूम हुआ कि मानों चन्द्रमा आकाश से चू पड़ा हो। राजा चकोर की भांति उसका चन्द्रबदन देखने लगे और उसकी प्राप्ति की पूर्ण आशा करके महावत से बोले, "अच्छा हथिनी को इसके पास ले चलो और इसका मनोरथ पूर्ण कर दो और इस चन्द्रबदनी को शीघ्र चढ़ा लो।" राजा की ऐसी बात सुनकर महावत उस घर के नीचे हथिनी को ले गया। जब अनङ्गप्रभा ने देखा कि हथिनी निकट आ गई तब वह सागरवर्म्मा राजा की गोद में कूद पड़ी। कहां पहिले पति की वह अनिच्छा कहां अब पतियों से सन्तोष न होना? हा! पिता के शाप से उसको कैसे २ उलटपुलट देखने पड़े। गिरने के डर के मारे अनङ्गप्रभा राजा के गले से लिपट गई, उसके अमृतरूपी अङ्गस्पर्श से सिंच के राजा अत्यन्त आनन्दित हुए। इस युक्ति से चुम्बन की लालसा से उस आत्मसमर्पण करनेवाली अनङ्गप्रभा को लेकर राजा शीघ्र अपने महल में जा बिराजे। वहां पहुँच के अनङ्गप्रभा ने अपनी कहानी राजा को कह सुनाई, सुन के राजा उसे अपने अन्तःपुर में ले गये जहां वह पटरानी बना दी गई। जब विजयवर्म्मा को यह खबर लगी कि राजा मेरी पत्नी को हर ले गये तब वह युवा राजा के फाटक पर पहुँच उनके नौकरों पर कटकटा के टूट पड़ा और वहीं युद्ध में लड़ मरा पर पीछे न फिरा। ठीक है, भला शूर लोग स्त्री के कारण पराभव कब सह सकते हैं! युद्ध में अपराङ्मुख मर जाने से ऐसा भासता था कि मानों देवाङ्गनायें यह कह के उसे स्वर्ग में ले गईं कि आओ हमसे विवाह करो इस नीच नारी से तुम्हें क्या काम"। जिस प्रकार समुद्र में मिल के नदी रुक जाती है फिर आगे नहीं बढ़ती वैसेही अनङ्गप्रभा उस नृपति के पास पहुँच के स्थिर हो गयी अब आगे न बढ़ी। भवितव्यता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के बल से उस राजा को पति पाकर अनङ्गप्रभा अपने को कृतकृत्य समझती और राजा भी उसे (अपनी) भार्य्या पाके अपने जन्म को सफल समझते।

कुछ दिनों के उपरान्त सागरवर्म्मा की रानी अनङ्गप्रभा को गर्भ रहा, और समय पर पुत्र हुआ। राजा ने इस उदार पुत्र के जन्म से बड़ा भारी उत्सव मनाया और उसका नाम समुद्रवर्म्मा रक्खा। क्रमानुसार राजकुमार युवा हुए. राजा ने उन्हें बलवान और गुणसम्पन्न देख युवराज बना दिया। अपने पुत्र के विवाह को लिये समरवर्म्मा राजा की कमलवती कन्या को हर लाये। जब राजकुमार का विवाह हो गया तो राजा ने अपने पुत्र के गुणों से मोहित होके अपना राज-काज सब उन्हें सौंप दिया। जब पराक्रमी और क्षात्रधर्म्म के ज्ञाता समुद्रवर्म्मा राजा हुए तब प्रणाम कर अपने पिता से कहने लगे "पिता मुझे आज्ञा दीजिये, मैं दिग्विजय के लिये जाता हूं, जो भूपति विजय की इच्छा नहीं रखता वह निन्दनीय होता है जैसा स्त्री का नपुंसक पति। इस लोक में उन्हीं भूपालों की लक्ष्मी धर्म्मसंयुक्त और कीर्त्तिकारिणी है जो दूसरे का राज्य जीत के अपने भुज-बल से उपार्जन की गयी हो। हे तात! उन राजाओं का राजत्व किस काम का, जो कि अपनीही प्रजा का भक्षण करते हैं जैसे मार्जार अपनेही बच्चों को खा जाते हैं।" पुत्र की ऐसी बात सुन राजा सागरवर्मा बोले "बेटा, तुम्हारा राज्य अभी नया है सो पहिले उसको साधना कर लो. सुनो. जो राजा धर्मपूर्वक अपनी प्रजाओं का प्रतिपालन करता है उसकी न तो अकीर्तिही होती और न अधर्म्मही होता, और यह भी तो है कि जबलों अपनी शक्ति को पूरे२ तौर से जांच न कर ले तबलों दूसरे राजाओं से विग्रह करना नहीं चाहिये। बच्चा, यद्यपि तुम बल-वान् हो और तुम्हारे पास बहुत सेना भी है तौभी विश्वास नहीं, क्योंकि युद्ध में जयश्री बड़ी चंचल होती है।" यद्यपि पिता ने इस प्रकार समझाया तथापि बड़े २ यत्नों से पिता की आज्ञा लेकर पराक्रमी समुद्रवर्म्मा दिग्विजय के लिये चल पड़े। क्रमानुसार चारो दिशाओं को जीत, राजाओं को वश में करके बहुतेरे हाथी घोड़े और धन सम्पत्ति के साथ अपने नगर को लौट आये। वहां बड़ी न-म्रतापूर्वक अपने माता पिता के चरणों की पूजा नाना देशों से लाये हुए बहुमूल्य रत्नों से की. कि दोनों अत्यन्त सन्तुष्ट हो गये। फिर उनकी आज्ञा लेकर यशस्वी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समुद्रवर्मा ने ब्राह्मणों को बड़े २ दान, हाथी, घोड़े, सोने और रत्न दिये। पश्चात् अपने सेवकों और प्रार्थियों पर ऐसा सोना बर्साया कि एक दरिद्र शब्दही अर्थ-हीन रह गया अर्थात् निरर्थक हो गया। इस प्रकार अनङ्गप्रभा के संग निवास करते हुए राजा सागरवर्मा अपने पुत्र का ऐसा माहात्म्य देख अपने जन्म को सफल मानने लगे।

इस प्रकार उन दिनों को उत्सवों में बिताकर एक दिन राजा सागरवर्म्मा ने मन्त्रियों के समक्ष अपने सुत से कहा कि हे पुत्र जो कुछ इस जन्म में मेरा कर्त्तव्य था सो मैं कर चुका, राज्य का सुख भोगा और कभी शत्रु से हार न हुई, तुम्हें भी साम्राज्य का स्वामी देख लिया अब मुझे क्या पाना रह गया, सो अब मेरी यह इच्छा है कि शेष जीवन किसी तीर्थ में जाकर बिताऊँ। देखो, बुढ़ौती मेरे कानों में कह रही है "शरीर नाशमान है सो तुम अबलों गृह में क्यों बने हो।" यद्यपि पुत्र की इसमें सम्मति न हुई तौभी राजा सागरवर्म्मा अपनी प्रिया अनङ्ग-प्रभा के साथ प्रयाग को चले गये क्योंकि अब तो उन्हें कुछ कर्तव्य शेष न रह गया था। राजा समुद्रवर्मा अपने पिता के साथ २ उन्हें पहुँचाने चले पश्चात् वहां पहुँचा के अपने नगर को लौट गये और विधिवत् राज्य का शासन करने लगे। राजा सागरवर्मा अपनी प्रिया अनङ्गप्रभा के साथ प्रयाग में श्रीशङ्करजी की तपस्या करने लगे। आशुतोष त्रिपुरारि भगवान् (महादेवजी) उनकी तपस्या से परम सन्तुष्ट हो एक समय रात्रि के शेष भाग में स्वप्न में राजा को दर्शन देकर बोले "राजन्! तुम दोनों की तपस्या से हम सन्तुष्ट हुए, सो जो हम कहते हैं सो सुनो, यह अनङ्गप्रभा और तुम दोनों विद्याधर हो. पुत्र! कल प्रातःकाल शाप के क्षय से तुम दोनों अपने लोक को चले जाओगे।" यह सुनकर दोनों जनों की नींद टूटी तो अपना २ स्वप्न एक दूसरे से कहने लगे। तब अनङ्गप्रभा अति प्रमुदित हो राजा सागरवर्मा से कहने लगी "आर्य्यपुत्र! मुझे अपनी जाति का अब पूरा २ स्मरण हो आया, मैं विद्याधरों के राजा समर की पुत्री हूं, वहां वीरपुर में भी मेरा नाम अनङ्गप्रभाही था, पिता के शाप से यहां मर्त्यलोक में आके विद्याधरत्व भ्रष्ट हो जाने से मानुषी होके अब अपने विद्याधरी भाव को भूल गयी थी अब मैं जागी।" इस प्रकार वह बात करही रही थी कि उसके पिता राजा समर आ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काश से उतरे। राजा सागरवर्मा ने प्रणाम किया और अनङ्गप्रभा पिता के पावों पर आ गिरी। तब राजा समर ने अपनी पुत्री से कहा "बेटी! आ, अपनी विद्याओं को ले, तेरा शाप अब दूर हुआ, तूने आठ जन्म का दुःख एकही जन्म में भोग लिया।" इतना कह राजा ने उसे गोद में बैठा लिया और उसकी विद्या फिर दे दी, पुनः राजा सागरवर्मा से कहा "तुम विद्याधरों के राजा मदनप्रभ हो, मेरा नाम समर है और यह मेरी बेटी अनङ्गप्रभा है। पहिले जब कि यह विवाहने योग्य हुई तो कईएक वर इसके अभिलाषी हुए परन्तु रूप के गर्व के मारे यह किसी को पसन्दही न करे, तब समान गुणवाले तुमने बड़ी उत्कण्ठा से इसको मांगा परन्तु दैवयोग से इसने तुम्हें भी अङ्गीकार न किया तब मैंने इसे मर्त्यलोक में जाने का शाप दिया। तब तुमने इसके प्रति बड़े अनुराग के कारण यह सङ्कल्प करके कि मर्त्यलोक में भी यह मेरी भार्या हो, वरदानी श्रीगिरिजापति महादेव का ध्यान किया, और योगबल से वह विद्याधर का शरीर त्याग दिया। सो तुम मनुष्य हुए और यह तुम्हारी पत्नी हुई। सो अब तुम दोनों मिले जुले अपने लोक को चलो।" इस प्रकार राजा समर की बात सुनकर राजा सागरवर्मा को अपनी जाति याद आ गई सो वह प्रयाग के जल में अपना शरीर त्याग तुरत मदनप्रभ हो गये और अनङ्गप्रभा को विद्या स्मरण हो गई सो वह उसी देह से झट देदीप्यमान होकर मानों एक दूसरी विद्याधरी हो गई। मदनप्रभ और अनङ्गप्रभा के आनन्द का ठिकाना अब न रहा. दोनों अपना २ शरीर देखके गाढ़े अनुराग में मग्न हो गये। खेचरपति श्रीमान् राजा समर भी बड़े प्रसन्न हुए सो तीनों जन एक साथ उड़के आकाशमार्ग से विद्याधरों के नगर वीरपुर में जा विराजे। वहां पहुँच के राजा समर ने विद्याधरों के राजा मदनप्रभ से विधिपूर्वक अनङ्गप्रभा का विवाह कर दिया और राजा मदनप्रभ शाप से छूटी उस अनङ्गप्रभा के साथ बड़े आनन्द से अपने नगर में जाकर सुखपूर्वक रहने लगे। इस प्रकार देवता लोग भी अपनी दुर्विनीति (दुष्टता) वश शाप के कारण गिर के मनुष्यलोक में जन्म लेते हैं और अपनी करनी का उचित फल भोग पूर्वजन्म में कमाये हुए अपने पुण्य के प्रताप से पुनः अपनी गति को प्राप्त होते हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एहि विधि गोमुख से कथा सुनि नवाहनदत्त।
अलङ्कारवति-सह मुदित, कीन्ह दिवस कर कृत्त॥



तीसरा तरङ्ग।

दूसरे दिन जबकि राजा नरवाहनदत्त अपनी प्रिया अलङ्कारवती के साथ बैठे थे कि इतने में उनका मित्र मरुभूति (आकर) कहने लगा "देखिये महाराज! यह बिचारा आपका सेवक चमड़े का एक टुकड़ा लपेटे, जटा बढ़ाये, दुबला पतला, धूल रमाये, सिंहद्वार पर दिन रात बैठा रहता है, जाड़ा हो चाहे गर्मी, पर यह वहां से नहीं टलता, सो आप उस पर क्यों नहीं कृपा करते? समय पर जो कुछ थोड़ा भी दिया जाय वह असमय के बहुत देने से कहीं अच्छा है सो देव! जबलों यह मर न जाय इस पर कृपा करें।" मरुभूति को यह बात सुन गोमुख बोला "मरुभूति का कहना ठीक है, किन्तु, महाराज इसमें आपका भी तो कोई दोष नहीं है, जबलों संसार के बटोहो के पाप का क्षय नहीं हो जाता तबलों राजा दान देने पर उद्यत होके भी कुछ नहीं दे सकते, और जब मनुष्य अपने पाप का फल भुगत लेता है तो कितनाही रोको परन्तु प्रभु देतेही हैं इससे ठीक कहा है "कर्म प्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा"॥ सो मैं प्रसङ्गवश राजा लक्षदत्त और उनके सेवक लब्धदत्त की कथा कहता हूं, सुनिये—

पृथ्वी में लक्षपुर नाम एक नगर था, वहां के राजा लक्षदत्त दानियों के शिरोमणि थे। वह अर्थी को एक लाख से कम देना तो जानतेही नहीं थे, जिस किसी से बात करते राजा उसे पांच लाख देते, जिस पर द्रवते उसको धनाढ्य कर देते, इसीसे उनका नाम लक्षदत्त पड़ा। उन्हीं राजा के सिंहद्वार पर लब्धदत्त नामक एक सेवक रात दिन कमर में एक टुकड़ा चमड़ा लपेटे रहता था, वह जटा बढ़ाये, जाड़ा गर्मी और बर्सात में वहीं पड़ा रहता और क्षण भर कहीं न जाता और राजा की दृष्टि भी कभी उस पर न पड़ती। इस प्रकार वह बहुत दिनों तक वहां पड़ा२ क्लेश भोग रहा था पर राजा ऐसे दयालु और दानी होके भी उसे कुछ न देते।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक समय की बात है कि राजा जङ्गल में शिकार खेलने को निकले वह सेवक भी अपनी लकुटी ठेगता राजा के पीछे २ चला । राजा हाथी पर बैठे बाण चला रहे थे पीछे से सेना भी बाणों की वर्षा कर रही थी, बाघ, सूअर और हरिणों का शिकार हो रहा था, उधर क्या देखते हैं कि वह सेवक अकेले पैदलही आगे २ चलता हुआ अपनी लकुटीही से बहुतेरे सूअर और हरिणों को मार रहा है । उसका ऐसा पराक्रम देख राजा ने बड़ा आश्चर्य किया और अपने मन में कहा "अहो ! यह कैसा बड़ा शूर है," परन्तु उस बिचारे को तब भी कुछ न दिया । आखेट से लौटकर राजा नगर को आ के अपने महल में जाके आराम करने लगे और वह नौकर पहिले की तरह सिंहद्वार पर बैठ रहा ।

एक वार राजा अपनी सीमा पर के एक अपनेही वंश के राजा के जीतने को चले, महा घोर सङ्ग्राम हुआ, वहां भी वह दास राजा के आगे २ अपने खैर डण्डे से बहुतेरे शत्रुओं का संहार कर रहा था । राजा लड़ाई जीत अपने नगर को लौट आये परन्तु उसका ऐसा पराक्रम देखके भी उन्होंने उसे कुछ भी नहीं दिया । इस प्रकार वह लब्धदत्त राजा के सिंहद्वार पर पड़ा २ कष्टपूर्वक जीवन धारण करता पड़ा रहा और पांच वर्ष के दिन बीत गये । जब छठें वर्ष का आरम्भ हुआ, एक दिन राजा की दृष्टि दैवात् उस पर पड़ गयी; राजा को उस पर बड़ी दया आई सो वह सोचने लगे "अहो ! इतने दिनों से यह कष्ट भोग रहा है और मैंने इसे आज तक कुछ न दिया सो मैं एक युक्ति से इसे कुछ देकर देखूं कि इसके पाप का क्षय हो गया कि नहीं, देखूं लक्ष्मी आज भी इस पर सन्तुष्ट होके कृपादृष्टि करती हैं या नहीं ।" ऐसा विचार कर राजा गुप्तरूप से अपने खजाने में गये और वहां एक चकोतरा रत्नों से भरकर उन्होंने उसे एक डिब्बे के समान बनाया, और फिर अपने महल के बाहर एक सभा की, जिसमें पुरवासी लोग, सर्दार तथा मन्त्री लोग उपस्थित हुए । उनमें वह नौकर भी आया तब राजा ने उससे बड़े प्रेम से कहा "इधर मेरे निकट आओ" राजा की ऐसी प्रेममयी वाणी सुन लब्धदत्त बड़ाही प्रसन्न हुआ और राजा के साम्हने जाकर बैठा । महीपति ने उससे कहा कुछ कविता सुनाओ ऐसा राजा का वचन सुन उस दास ने निम्न लिखित आर्य्या सुनाई—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूरयति पूर्णमेषा तरङ्गिणीसंहतिः समुद्रमिव।
लक्ष्मीरधनस्य पुनर्लोचनमार्गेऽपि नायाति॥

दोहा।

भरै भरत, ज्यों जलनिधिहिं, नदियां मिलें सहेत।
लक्ष्मी निरधन कहँ कबहुं, भूलि न दरशन देत॥

यह सुन राजा ने उससे कहा कि एक बार फिर सुनाओ और जब वह सुना चुका तब महीपति ने वह रत्न भरा चकोतरा उसे दिया। यह देख लोग परस्पर फुसफुसाने लगे कि भला देखो तो सही यह महाराज जिस पर द्रव जावें उसको अयाच्य कर देते हैं, शोक इस दास पर कि जिसे भूपति ने बड़े आदर से, और अति प्रसन्न होके दिया क्या कि एक जम्भीरी नीबू। ठीकही कहा है "सकल पदारथ यहि जग मांही। करमहीन नर पावत नाहीं॥" अभागी के लिये कल्पवृक्ष भी पलास हो जाता है। दर्बारियों का ऐसा कहना ठीक था क्योंकि उन्हें क्या मालूम कि उस नीबू में बहुमूल्य रत्न भरे थे। वह दास नीबू लिये बाहर निकल गया, जबकि वह बैठा शोक कर रहा था कि राजवन्दी नामक एक भिक्षुक सन्यासी उसके साम्हने आया, राजवन्दी ने देखा कि यह चकोतरा बड़ा खूबसूरत है सो उसने एक कपड़ा देके उसे बदल लिया और राजसभा में जाकर वही फल राजा को नज़र कर दिया। राजा ने फल पहिचान उस सन्यासी से पूछा "आपने यह नीबू कहां पाया?" तब उसने बतला दिया कि उस दास ने दिया। राजा को यह सुनकर बड़ा विषाद तथा आश्चर्य हुआ वह सोचने लगे कि अब तक भी उसका पाप दूर नहीं हुआ। राजा लक्षदत्त वह फल उठाके सभा से तुरत उठ खड़े हुए और जाकर दिनकृत्य करने लगे। वह कार्पटिक उस कपड़े को भी बेंच के खा पीकर उसी सिंहद्वार पर पूर्ववत पड़ रहा। दूसरे दिन राजा ने फिर दर्बार किया और उसी प्रकार सब लोग एकत्रित हुए। राजा ने उस कार्पटिक दास को आया हुआ देख के उसी तरह बुलाकर फिर अपने पास बेठाया और उसी आर्य्या को पढ़ा के प्रसन्न होकर उसी रत्न भरे चकोतरे को फिर उसे दे दिया। यह देख दर्बारी बड़े अचम्भित हुए और कहने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लगी कि आज दूसरा दिन है राजा इस पर प्रसन्न हुए पर इसे कुछ मिला नहीं। वह दास फल उठाके निराश हो यह विचारता हुआ वहां से निकला कि आज भी राजा की इच्छा इसी फल के देने की हुई। इस अवसर में कोई अध्यक्ष राजा से भेंट करने के दे अभिप्राय से आया, उसने देखा कि इस दास के हाथ में जो यह एक चकोतरा है सो अच्छा उपहार होगा, सो उसे अच्छा शकुन मान दास को एक जोड़ा कपड़ा देके वह चकोतरा मोल ले लिया और राजा की सभा में जाकर नम्रतापूर्वक झुक के प्रणाम किया और पहिले वही चकोतरा उपहार दे पीछे और जो कुछ भेंट लाया था सो महाराज के आगे धर दी। राजा ने फल पहिचान के उस सर्दार से पूछा कि तुमको यह फल कहां से मिला। उसने उत्तर दिया कि महाराज उस कार्पटिक से। यह सुन राजा अपने मन में यह सोच कर बड़े उदास हुए कि अहो अब लों भी लक्ष्मी की कृपादृष्टि उस पर न हुई! राजा चकोतरे को लिये हुए उठ खड़े हुए और वह कार्पटिक भी बाजार में वह कपड़े का जोड़ा बेंचने चला गया। एक को तो खा पका गया और दूसरे को फाड़ के दो टुकड़े कर लिये। तीसरे दिन महिपाल ने वैसेही फिर दर्बार किया और सब लोग फिर उपस्थित हुए, उस दास के आने पर राजा ने अपने निकट बुला वही आर्य्या गवाय कर वही नीबू हाथ में धर दिया। यह देख लोग फिर विस्मय करने लगे और वह कार्पटिक नीबू लिये दिये बाहर चला गया और राजा की रण्डी को दे दिया। राजा के सम्मानरूपी तरुलता के समान उस चञ्चल वेश्या ने उस फल के बदले में उसे सोना दिया जो कि पहिलेही से फलसूचक पुष्प के समान था। वह कार्पटिक वह सोना भी बेंच बांच के खा पी गया। वह विलासिनी राजा के दर्बार में चली गयी और राजा के वही नीबू नज़र कर दिया। राजा ने फल पहिचान के उससे पूछा "कहो कहां पाया?" उसने कहा "कार्पटिक दास ने।" यह सुन राजा सोचने लगे कि आज लों भी लक्ष्मी की उस पर कृपादृष्टि नहीं हुई। निश्चय है कि इसका पूर्वजन्म का पुण्य बहुत न्यून है नहीं तो यह अवश्य जान लेता कि मेरा प्रसाद कदापि निष्फल नहीं जाता, देखो तो सही ये रत्न घूम फिर के मेरेही पास चले आते हैं। इतना सोच राजा ने उस चकोतरे को लेके उसे यत्नपूर्वक रख छोड़ा और उठकर जाके आह्निक क्रिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सम्पन्न थी। चौथे दिन उसी प्रकार फिर समाज जुटा और उस दास के आने पर राजा ने अपने आगे बुलाके वही आर्या गवाई और वही नीबू उसे दिया। कार्पटिक दास ने आधाही पकड़ा था कि अकस्मात् वह फल उसके हाथ से गिर के दो टुकड़े हो गया और सीअन टूट जाने से सब रत्न बिखर पड़े और जगमग २ चमकने लगे, उनके प्रकाश से सभा में प्रकाश सा हो गया। यह देख सब सभासद कहने लगे "हमलोग भीतरी बात तो जानतेही नहीं थे इसीसे तीनों वार कैसे भ्रम में पड़ गये, देखो तो महाराज का प्रसाद ऐसा है।" उनकी यह बात सुन राजा ने कहा कि मैंने इसी युक्ति से इसे गुप्तदान दे इस बात की परीक्षा ली कि लक्ष्मी की इसपर कृपादृष्टि हुई है अथवा नहीं । तीन दिन तक इसके पाप का अन्त नहीं हुआ था, आज हो गया इसीसे लक्ष्मीदेवी ने अब इसे दर्शन दिया। इतना कह राजा ने उसे उन रत्नों को देके और ग्रामादि हाथी घोड़े दिये और उसे एक सर्दार बना दिया। इतना देकर राजा स्नान करने के लिये उठ के चले गये, लोग उनकी स्तुति करने लगे, वह कार्पटिक भी कृतार्थ होकर अपने घर चला गया। सो इसी प्रकार जबलों भृत्य के पाप का अन्त नहीं हो लेता तबलों वह कितना भी कष्ट क्यों न उठावे प्रभु का प्रसाद उस पर कदापि नहीं होता।

इतनी कथा सुनाय प्रधान मन्त्री गोमुख राजा नरवाहनदत्त से फिर कहने लगे "महाराज जान पड़ता है कि आपके इस कार्पटिक का पाप क्षय नहीं हुआ इसीसे आपकी कृपादृष्टि इस पर नहीं हो रही है।" इस प्रकार गोमुख की बात सुन महाराज वत्सराज के पुत्र नरवाहनदत्त बोले "हां ! बहुत ठीक है।" इतना कह उन्होंने कार्पटिक नामक अपने उस दास को बुलाकर उसे कई एक गांव, हाथी घोड़े एक करोड़ मोहर और अनेक उत्तम २ कपड़े और आभूषण दिये। वह कार्पटिक भी इतनी सम्पत्ति पाकर एक राजा के तुल्य हो गया । ठीक है जो राजा कृतज्ञ होते और जिनके मन्त्री और अमात्य भले होते हैं ऐसे राजा की सेवा कभी निष्फल नहीं जाती।

इस प्रकार राजा नरवाहनदत्त बैठे हुए थे कि युवा, वीर, प्रलम्बबाहु नामक एक दक्षिणी ब्राह्मण नौकरी की इच्छा से आकर राजा के साम्हने उपस्थित हुआ और कहने लगा "महाराज ! आपकी कीर्त्ति सुनकर मैं आपके निकट आया हूं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मुझ में यह गुण है कि श्रीमान् चाहे हाथी पर, चाहे घोड़े पर सवार होके चलें पर मैं पैदल ही चलके एक डग भी आप से पीछे नहीं हो सकता, पर हां पृथ्वी परही ऐसा कर सकता हूं, आकाश में मेरी गति नहीं है, मेरे ऐसे कथन का तात्पर्य्य यह है कि आप विद्याधरों के राजा होनेवाले हैं इससे पहिले ही कह लेना अच्छा है, मेरा वेतन प्रतिदिन एक सौ मुहर होगा।" उस अतुल तेजस्वी ब्राह्मण की बात सुन राजा नरवाहनदत्त ने उतनेही वेतन पर उसे नौकर रख लिया। यह देख गोमुख ने कहा कि राजाओं के यहां ऐसे २ चाकर होतेही हैं सुनिये मैं ऐसीही एक कथा सुनाता हूं।

इसी देश में विक्रमपुर नाम का एक बड़ा उत्तम नगर है। पूर्वकाल में वहां विक्रमतुङ्ग नामक एक राजा रहते थे। राजा बड़े न्यायी थे, उनकी तलवार में तीखापन था पर दण्ड में नहीं, धर्म्म में आसक्ति थी परन्तु स्त्रियों और शिकार इत्यादि में नहीं। उनके राजत्वकाल में यदि कुछ बुराई थी तो यही कि पृथ्वी में धूल थी, यदि गुण से अलग होना था तो यही कि धनुष की प्रत्यञ्चा से बाण छूटते थे (अलग होते थे) और यदि अविचार था तो यही कि गोरखियों के गोष्ठ में पशु विचरण करते थे * एक समय की बात है कि मालवदेशीय वीरवर नामक एक सुन्दर ब्राह्मण राजा के यहां नौकरी के लिये आया, उसके धर्म्मवती नाम्नी स्त्री, वीरवती नाम कन्या और सत्त्ववर नाम पुत्र कुल ये तीनही कुटुम्बी थे और नौकर भी कुल तीनही थे अर्थात् कमर में कटार, एक हाथ में चमकती हुई तलवार और दूसरे में ढाल। इतने छोटे परिवार होने पर भी उसने राजा से प्रतिदिन पांच सौ मुहर की तनखाह मांगी। राजा ने उसका साहस देख अपने मनमें यह विचारा कि अच्छा इसके पराक्रम की परीक्षाही सही, सो उन्होंने उतनेही वेतन पर उसे नौकर रख लिया और पांच भेदिये नियत कर दिये कि देखा करें कि वह दो हाथ वाला उतनी अशर्फियों को क्या करता है। वीरवर प्रतिदिन सौ अशर्फियां तो भोजनादि के लिये अपनी भार्य्या के हाथ में रख देता, और सौ मोहरों से कपड़े और माला इत्यादि खरीदता, और तीसरी सौ अश-

* मूल में यहां श्लेषालङ्कार है, यथा कु=बुराई और पृथ्वी, गुण=धर्म वा सत्कर्म और रस्सी वा धनुष की डोरी, अविचार=अन्याय और पशुओं का विचरण।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

र्फियों को, स्नान कर विष्णु भगवान् और शिवजी की पूजा में लगाता और बाकी दो सौ मोहर ब्राह्मण और दीन दुखियों को बांट देता । इस प्रकार प्रतिदिन पांच सौ अशर्फियों का लेखा लग जाता । काम क्या करता कि मध्याह्न तक तो राजा के सिंहद्वार पर रहता, पश्चात् वहां से लौट कर घर पर आ आह्निक क्रियादि कर, भोजनादि से छुट्टी पाय फिर वहीं सिंहद्वार पर जा डँटता और रात में भी वहीं रहता। इस प्रकार उसकी दिनचर्य्या दूत लोग जाके राजा से प्रतिदिन निवेदन कर दिया करते । राजा उसकी इस प्रकार की दिनचर्य्या सुन बड़े सन्तुष्ट हुए सो उन्होंने भेदियों को इस काम से अलग कर दिया। इस प्रकार वीरवर, स्नान भोजनादि के समय को छोड़ रात दिन तलवार लिये राजा के सिंहद्वार पर खड़ा रहता।

अब एक दिन की बात है कि अकस्मात् घनघोर घटा छा गई मानो शूरों के प्रताप का सहन न कर मेघ वीरवर को जीतने आये हों । मूसलधार वर्षा होने लगी परन्तु वीरवर सिंहद्वार पर खम्भे के समान अचल बना रहा । ऐसे समय में राजा विक्रमतुङ्ग उसको वहां खड़ा देखकर भी जब रात हुई तो अपने प्रासाद के ऊपर चढ़ गये कि देखें इस समय वह क्या कर रहा है। राजा ने ऊपर से पुकारा "सिंहद्वार पर कौन है ?" सुनतेही वीरवर ने उत्तर दिया "मैं हूं सरकार" । उत्तर सुन राजा सोचने लगे कि अहो! ऐसी घोर वर्षा हो रही है तौभी यह सिंहद्वार से नहीं टलता इससे यह शूर बड़े ऊँचे पद के योग्य है। राजा इस प्रकार का विचार करही रहे थे कि उनके दूर पर किसी स्त्री के रोने की आवाज सुनाई पड़ी। राजा को चिन्ता हो गयी कि अहो! मेरे राज्य में तो कोई दुःखित नहीं है तो यह कौन है जो विलख २ रो रही है। इस प्रकार सोच कर राजा वीरवर से बोले "वीरवर! सुनो तो. देखो, दूर पर कोई स्त्री रो रही है सो जाकर पता लगाओ तो कि वह कौन है और उसको क्या दुःख है ।" "बहुत अच्छा महाबली" इतना कह वीरवर कमर में कटार बांधे तलवार घुमाता हुआ चल पड़ा। राजा ने देखा और मनमें कहा कि देखो तो सही ऐसी घोर वृष्टि हो रही है और बिजली चमक रही है, इस समय आकाश और पृथ्वी के बीच जलधारा के सिवा और कुछ नहीं है सो ऐसे विकराल समय में यह सि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाही चला गया यह बड़े आश्चर्य्य की बात है सो राजा को बड़ी दया आई, तुरत महल से उतर तलवार ले उसके पीछे २ छिप कर आप भी चलने लगे। जिधर से रोने की आवाज आती थी उसी ओर आगे २ वीरवर चला जाता है और पीछे २ महाराज। नगर के बाहर एक तालाव पर पहुँच के वीरवर क्या देखता है कि तालाव के बीच में एक स्त्री विलख २ रो रही है कि हे नाथ! हा दयामय! हा शूर! तुम्हारे विना मैं कैसे रह सकूंगी। वीरवर ने पूछा कि आप कौन हैं? और किस नाथ का शोक कर रही हैं?। उसके पूछने पर वह बोली "पुत्र वीरवर! मैं पृथ्वी हूं, मेरे स्वामी राजा विक्रमतुङ्ग बड़े धार्मिक हैं सो आज से तीसरे दिन उनकी मृत्यु अवश्य होगी। अब ऐसा पति मैं फिर कहां पाऊँगा, इसी शोच में उनको और अपने को शोचकर मैं दुःखित हूं, दिव्यदृष्टि से मैं होनेवाली भली बुरी सब बातें देख लेती हूं जैसे कि देवतनय सुप्रभ ने स्वर्ग ही में बैठे २ अपनी भावी दशा देख ली थी। इतनी बात कह धरित्री देवी सुप्रभ की कथा सुनाने लगी।

देवपुत्र सुप्रभ क्या देखते हैं कि सात दिन के बाद पुण्य के क्षय होने से अब मेरा स्वर्ग से पतन होगा और मैं जाकर सुअरी के गर्भ में पड़ूंगा। तब सुअरी के पेट में रहने का दुःख विचार, स्वर्ग के विविध भोगों का स्मरण कर विलपने लगे "हा! कहां ऐसा सुखमय स्वर्ग, हा कहां ऐसी २ अप्सरायें, कहां नन्दनलता भवन और कहां अब सुअरी के गर्भ में रहना होगा" पीछे कीचड़ में लोटना पड़ेगा। हा महा कष्ट!। उनका रोना सुन देवराज इन्द्र वहां आकर पूछने लगे "पुत्र! क्यों विलाप करते हो? देवेन्द्र की यह बात सुन उन्होंने अपने दुःख का कारण कह सुनाया। सो सुन शक्र बोले "सुनो एक उपाय तुमको बतलाय देता हूं "ओं नमः शिवाय २" इस मन्त्र का जप करते २ महादेव की शरण में जाओ भगवान् शूलपाणि की शरण में जाने से तुम्हारा पाप छूट जायगा और पुण्य होगा जिससे न तो तुम सूअर की योनि में जन्मोगे और न स्वर्ग से तुम्हारा पतनही होगा।" पाकशासन की ऐसी बात सुन सुप्रभ "ओं नमः शिवाय" इस मन्त्र का जप करते करते महा प्रभु शङ्कर की शरण में पहुँचे और छ दिन लों भगवान् चन्द्रशेखर का ध्यान करते रहे। वरदानी पशुपति के प्रसाद से यही नहीं हुआ कि वह सुअरी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के गर्भ में न फेंके गये प्रत्युत स्वर्ग से भी एक ऊँचा स्थान उनको मिला। सातवें दिन पुरन्दर महाराज उन्हें स्वर्ग में न देख पता लगाने लगे तो क्या मालूम हुआ कि वह तो और ऊँचे लोक में चले गये।

इतनी कथा कह पृथ्वी फिर कहने लगी कि जिस प्रकार सुप्रभ अपने भावी दुःख का विचार कर शोक करते थे वैसेही मैं भी इस महीपति की होने वाली मृत्यु की चिन्ता से शोकित हुई हूं। धरणी की ऐसी बात सुन बीरवर बोला "अम्ब! जिस प्रकार इन्द्र के बचन से सुप्रभ के बचने का उपाय हो गया वैसेही यदि महाराज की रक्षा का यदि कोई उपाय हो तो आप बतला देवें। बीरवर का कहना सुन पृथ्वी बोलीं कि हां एक उपाय तो है सो भी तुम्हारेही हाथ में है। वसुन्धरा की बात सुन वह ब्राह्मण बीरवर प्रसन्न बदन हो बोला "भगवति! सो शीघ्र बतावें, यदि मेरे प्राणों से, मेरे पुत्र के जीवन से अथवा मेरी भार्य्या के जीव से प्रभु का कल्याण हो तो मेरा जन्म सफल हो जाय। बीरवर की बात सुन पृथिवी बोलीं कि राजा के गढ़ के समीप जो चण्डिका देवी हैं उनके साम्हने अपने पुत्र सत्वबर का बलिप्रदान कर दो तो राजा जीवें इसके सिवा और कोई दूसरा उपाय नहीं है। वसुधा की ऐसी बात सुन धीर बीरवर बोला "देवि! मैं जाकर अभी यह काम करता हूं।" "तुम्हारे समान स्वामिभक्त और कौन होगा, जाओ पुत्र तुम्हारा कल्याण हो" इतना कह धरित्री वहीं अन्तर्द्धान हो गयी, और राजाने, जो गुप्त रूप से पीछे २ आये थे अपने कानों से यह बात सुनी। बीरवर झटपट रातही में अपने घर चला गया और राजा बिक्रमतुङ्ग भी छिपे २ उसके पीछे गये। घर पहुंच के बीरवर ने अपनी भार्य्या धर्म्मवती को जगा कर उससे कहा कि पृथ्वी देवी की आज्ञा है कि राजा के कल्याण के लिये तुम अपने पुत्र को बलिदान कर दो। यह सुन वह बोली कि हां स्वामी का हित तो अवश्य करना चाहिये सो पुत्र को जगा के आप उससे यह हाल कह दीजिये। तब बीरवर ने अपने पुत्र को जगा के उससे सब हाल कह सुनाया कि पृथ्वी ने कहा है कि राजा कल्याण के लिये तुम्हारा बलिदान किया जाय। यह सुन यथार्थ नामा बालक सत्ववर बोला "पितः जो मेरे प्राण प्रभु के कार्य्य के लिये जावें तो क्या मैं पुण्यवान नहीं हूं, देखिये मैंने उनका अन्न खाया है सो उसका बदला

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चुकाना मेरा धर्म्म है ! सो आप लेचल के राजा के निमित्त भगवती को मेरा बलिदान चढ़ा दीजिये । उस सत्त्ववर बच्चे की ऐसी बात सुन बीरवर निःशङ्क हो बोला "सच है तू मेराही सबेटा न है ।" राजा बिक्रमतुङ्ग बाहिर खड़े २ सब बात सुन रहे थे सो अपने मन में बिचारने लगे कि अहो ये सब के सब एकही समान शूर हैं ।

तदनन्तर बीरवर ने अपने पुत्र सत्त्ववर को कन्धे पर उठा लिया और उसकी भार्य्या धर्म्मवती ने बीरवती कन्या को पीठ पर रख लिया और दोनों रातही में भगवती श्रीचण्डिका के मन्दिर में पहुंचे, पीछे २ राजा विक्रमतुङ्ग भी छिपे २ पहुंचे । मन्दिर में पुत्र सत्त्ववर पिता के कन्धे से उतर पड़ा; यद्यपि वह बालक था तथापि धैर्य्य का भण्डार था, सो वह भगवती को प्रणाम कर कहने लगा "हे देवि ! मेरे शिर के वलिप्रदान से हमारे प्रभु जीवें, राजा विक्रमतुङ्ग पृथ्वी में अकण्टक राज्य करें ।" पुत्र के इस प्रकार कहने पर बीरवर ने कहा धन्य बेटा, और झट तलवार निकाल चट उसका शिर काट दिया और ले जाके चण्डिका देवी को चढ़ा के यह प्रार्थना की कि मातः महाराज का कल्याण हो । ठीक है जो लोग स्वामिभक्त होते हैं वे न अपने पुत्र की न अपनीही कुछ चिन्ता करते हैं इतने में आकाशवाणी हुई "धन्य बीरवर धन्य ! ! तुमने अपने पुत्र को बलिदान कर अपने स्वामी को जीवनदान दिया ।" राजा सब कुछ अपनी आखों देख और कानों सुन रहे थे इतने अवसर में बीरवर की कन्या बीरवती अपने हत भाई के शिर को उठा छाती से लगा के चूमा लेकर यह बोली कि हा ! भाई और छाती फाड़ कर मर गई । पुत्र बलि चढ़ा, पुत्री इस प्रकार मर गयी, यह देख बीरवर की धर्म्मपत्नी धर्म्मवती हाथ जोड़ अपने पति से कहने लगी "राजा का कल्याण होही चुका, नाथ अब मुझे आज्ञा दें तो अपने मृत बच्चों को लेकर अग्नि में जल मरूं । देखें यह कन्या इतनी छोटी है कि इसे हिताहित का कुछ भी ज्ञान नहीं है सो भी अपने भाई के शोक से मर गई तो अब दोनों बच्चों के मर जाने पर मेरे जीने की क्या शोभा है ।" उसकी ऐसी विनती सुन वीरवर बोला "हे अनिन्दिते ! मैं तुम्हारे निश्चय में बाधा नहीं डालना चाहता, तुम जल मरो, अब सन्तान के शोक से पूर्ण इस संसार तुम्हें सुख कहां ! परन्तु जरा ठहरो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो मैं तुम्हारी चिता रच दूं"। इतना कह वीरवर ने भगवती के मन्दिर बनाने के लिये जो लकड़ियां वहां धरी थी उन्हीं से एक चिता चुन दी और अपने दोनों बच्चों की लोथें उसपर रख दीपक से आग लगा दी। चिता जब लहलहाने लगी तब वीरवर की भार्य्या धर्म्मवती बोली "आर्य्यपुत्र! आपके चरणों को प्रणाम करती हूं, जन्मजन्मान्तर में आपही मेरे पति हों; महाराज का कल्याण हो।" इतना कह जलजलाती चिता में कूद पड़ी जैसे कोई ठण्डी झील में कूदे। राजा विक्रमतुङ्ग छिप के यह सब कौतुक देख रहे थे सो इस चिन्ता में पड़ गये कि क्योंकर मैं इनके ऋण से छुटकारा पाऊँगा।

अब धीर वीर वीरवर सोचने लगा कि मेरे स्वामी का कार्य्य होही गया क्योंकि आकाशवाणी हुई है, मैंने जो स्वामी का अन्न खाया था सो चुकता हुआ। जिन प्यारे कुटुम्बियों का पालन पोषण करना होता है उनको तो मैं खो बैठा तो अब एक अपने पेट पोसने के लिये मैं जीकर क्या करूँगा, सो मैं अपना भी बलिदान भगवती अम्बिका को क्यों न चढ़ा दूं। इस प्रकार की चिन्ता कर धर्म्मनिष्ठ वीरवर वरदायिनी महामाया दुर्गा की स्तुति करने लगा।

दोहा।

प्रणवौं श्रीजगदम्ब तोहिँ, करत प्रणत भय छार।
पर्य्यौं जगत के पङ्क महँ, करहु मोर उद्धार॥
प्राणशक्ति सब जीव की, तुहि ते जगत चलन्त।
सृष्टिहुं ते पहिले तुमहिं, देखिउ शम्भु अनन्त॥
दुर्निरीक्ष्य निज तेज तें, कीन्हेंउ जगत प्रकास।
छितिज कोटि बालार्क सम, मातु तुम्हार उजास॥
भुजन केर चक्रवाल से, पूरित सकल दिगन्त।
खड्ग खेट को दण्ड शर, शूलादिक धारन्त॥

चौपाई।

तुम्हरो देखि प्रताप अपारा। अस्तुति कीन्ह महेश उदारा॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

छन्द ।

जय चण्डि चामुण्डे जये त्रिपुरे शिवे नारायणी ।
दुर्गे उमे कात्यायनी गायत्रि जय दाक्षायणी ॥
सिद्धे महाराज्ञी सरस्वति जयति विन्ध्यनिवासिनी ।
भद्रकाली रेवती जय शर्व्वपर्वतवासिनी ॥

दोहा ।

एकानंशे महालक्ष्मी कष्टनाशिनी उदार ।
मङ्गलकारिणि मङ्गले जय जय वारम्बार ॥

"हे देवि ! शङ्कर को इस प्रकार स्तुति करते सुन (देख) ब्रह्मा, षड़ानन और वशिष्ठादि ने भी तुम्हारी स्तुति की । भगवति ! तुम्हारी स्तुति करके अमर, ऋषि और मनुष्य अभीप्सित वर से अधिक फल पा चुके हैं और अबलों पाते भी हैं । सो हे वरदायिनि मातः ! अब तुम मुझ पर भी कृपा करो और मेरे शरीररूपी उपहार को ग्रहण जिसमें और मेरे प्रभु राजा का कल्याण हो ।"

इतना कह वह ब्राह्मण ज्यों अपना शिर काटने चला कि आकाशवाणी हुई "हे वत्स ! खबरदार ऐसा मत कर, तेरे इतनेही साहस से मैं तुझ पर प्रसन्न हो गयी सो अब जो इच्छा हो वर मांग ले । यह सुन वीरवर बोला कि हे देवि ! यदि आप सन्तुष्ट हैं तो यह वर दें कि राजा विक्रमतुङ्ग और सौ वर्ष जीवें और मेरी भार्य्या तथा बच्चे जी उठें । उसके ऐसे वर मांगने पर फिर आकाशवाणी हुई "तथास्तु" । बस उसी क्षण धर्म्मवती, वीरवती और सत्ववर तीनों अपने २ शरीर से जी के उठ बैठे मानों उन्हें कहीं चोटही नहीं लगी थी । तब देवी के प्रसाद से जीये हुए उन तीनों को अपने घर पहुँचाकर वीरवर राजा के द्वार पर फिर जा खड़ा हुआ । राजा बिक्रमतुङ्ग यह कौतुक देख अत्यन्त हर्षित और विस्मित हुए और छिपे २ जाके अपने महल पर चढ़ गये और ऊपर ही से पुकार के बोले— "सिंहद्वार पर कौन है ?" नीचे से वीरवर ने उत्तर दिया "महाबली मैं हूं, मैं उस स्त्री को देखने गया था, परन्तु कृपानाथ !, मेरे देखते ही वह देवता के समान अदृश्य हो गई" । राजा विक्रमतुङ्ग तो सब वृत्तान्त अपनी आंखों देख चुके थे,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अब ऐसा उत्तर सुन उनको अत्यन्तही आश्चर्य हुआ सो वह अकेलेही उस रात को अपने मन में बिचार करने लगे कि देखो तो यह कैसा अलौकिक पुरुष है कि ऐसी प्रशंसा का कार्य्य करके भी अब उसे प्रकाशित नहीं किया चाहता। देखो महासागर यद्यपि, गम्भीर, प्रशस्त तथा सत्त्वपूर्ण है तथापि ऐसी बड़े आंधी में पड़कर भी इस अचल बने रहे वीरवर की बराबरी नहीं कर सकता। देखो तो इसी रात में परोक्षरूप से जिसने मेरे प्राणों की खातिर अपने पुत्र और स्त्री का बलिदान कर दिया अब मैं इसका क्या प्रत्युपकार करूँ"। इस प्रकार की भावना करते २ राजा अट्टालिका से उतर अन्तःपुर में चले गये और विस्मय करते हो करते रात बीत गयी। प्रातःकाल होने पर जब कचहरी लगी सब लोग अपने २ स्थान पर बैठे थे वीरवर भी उपस्थित था उसी समय महाराज विक्रमतुङ्ग सभा में आ बिराजे। यथोचित के अनन्तर महाराज ने रात्रि में वीरवर का जो अलौकिक चरित्र देखा था सो सब आद्योपान्त कह सुनाया। यह सुन सब लोग वीरवर की प्रशंसा करने लगे। इतने में महाराज ने वीरवर और उसके पुत्र को सम्मान की पगड़ी बांधी और बहुत सा, धन दौलत, राज्य, देश, हाथी, घोड़े, रत्नादिक दिये तथा नकद दश करोड़ अशर्फियां दी और वेतन साठ गुना कर दिया। उसी क्षण से वीरवर एक राजा के समान हो गये, छत्र लगने लगा अब वह अपने कुटुम्ब के सहित कृतार्थ हो गये।

इतनी कथा सुनाय मन्त्री गोमुख राजा नरवाहनदत्त से फिर कहने लगा कि महाराज राजाओं को बड़े पुण्य से ऐसे २ वीर भृत्य मिलते हैं जो अपने प्रभु के आगे अपने शरीरादिक की ममता नहीं करते, ऐसे सत्त्ववान् वीर दोनों लोकों को जीत लेते हैं। सो हे देव! प्रलम्बबाहु नामक ब्राह्मण जो आके आपके यहां नया नौकर हुआ है वह भी वैसाही सत्त्ववान् और बड़ा गुणी मालूम होता है ऐसा भासता है कि इसकी आकृतिही में मानो भलाई स्थिर हो बैठी है।

बुद्धिमान निज मंत्रि तें, सुनि इमि-कथा नरेस।
श्रीनरवाहनदत्त हिय, पायो मोद असेस ॥



चौथा तरङ्ग।

इस प्रकार नरवाहनदत्त अपने पिता वत्सराज के गृह में अपनी अनुरागवती भार्य्या अलङ्कारवती के साथ आनन्दपूर्वक विहार करते रहने लगे, अलङ्कारवती रानी का ऐसा दृढ़ प्रेम था कि कदापि मानादि के कारण उसमें बाधा नहीं पड़ती थी, गोमुखादि सचिव उनकी सेवा बड़े स्नेह से करते थे। एक समय की बात है कि नरवाहनदत्त रथ पर चढ़ के मृगया करने जंगल में गये, गोमुख रथ पर उनके पीछे बैठे थे। वहां पहुँच के राजा अपने अनुचरों के साथ शिकार करने लगे और वह प्रलम्बबाहु विप्र वीर आगे २ चलता रहा। यद्यपि रथ के घोड़े छक्का छोड़ कनौठी चढा दौड़ते थे तथापि वह ब्राह्मण उनका वेग जीत आगेही आगे रहता। वहां नरवाहनदत्त ने अपने पैने बाणों द्वारा रथ पर से अनेक शेर व्याघ्रादि पशुओं का आखेट किया पर उस ब्राह्मण ने पैदलही एक तलवार से बहुतेरों को मार गिराया। नरवाहनदत्त जैसे २ उसका पराक्रम देखते तैसे २ अत्यन्त विस्मित हो अपने मन में कहते थे "अहो यह कैसा शूर है, इसकी जांघों में कहां का वेग समाया है"। आखेट करते २ सब को प्यास लगी, अब पानी की खोज में राजा वत्सराज के पुत्र ने अपना रथ आगे बढ़ाया, वह ब्राह्मण आगेही आगे चला, चलते २ सब लोग एक घोर जंगल में घुसे, वहां उनको एक बड़ा भारी तालाव मिला, जिसमें सुनहले कमल फूले हुए थे, तालाव ऐसा जान पड़ता था कि मानों अनेक सूर्यों से युक्त पृथ्वी पर दूसरा आकाश हो। यहां उन्होंने स्नान कर पानी पीया, अनुचरों ने भी स्नानादि क्रिया करके जलपान किया, इतने में कुछ दूर पर एक २ ओर दिव्याकार दिव्य वस्त्र और दिव्य आभरण धारण किये, उस तालाव से सुवर्ण के कमल तोड़ते चार पुरुष दिखाई पड़े। राजा नरवाहनदत्त को बड़ा कौतुक हुआ सो वह उनके पास चले गये। उन दिव्य पुरुषों ने इनसे पूछा "आप कौन हैं ?" इतना सुन उन्होंने अपना वंश, नाम और सब वृत्तान्त कह सुनाया। नरवाहनदत्त ने भी पूछा कि आप लोग कौन हैं, तब वे जो इनके दर्शन से अति प्रसन्न हो गये थे, कहने लगे—

महासागर के बीच में सौख्यसम्पन्न नारिकेल नामक एक बड़ा भारी द्वीप है. जगत् में अपनी सुन्दरता के लिये वह विख्यात है, तहां मैनाक वृषभ,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चक्र और बलाहक नामे चार पहाड़ हैं जिनकी भूमि अति प्रशस्त है, सो हम चारों व्यक्ति उन्हीं पर्वतों में रहते हैं। हम में से एक जन का नाम रूपसिद्धि है, वह बहुरूपिया हैं, दूसरे प्रमाणसिद्धि हैं, चाहे कोई चीज कितनो हो बड़ी अथवा छोटी से छोटी क्यों न हो पर वह अवश्य नाप लेंगे, तीसरे जन ज्ञानसिद्धि नामक हैं उनका यह गुण है कि भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों काल की बात जान लेते हैं, और चौथे जो हैं सो देवसिद्धि हैं, उनको सब देव सिद्ध हैं, जिस देवता को चाहें बुला लें। सो हम चारों जन यहां से हेमकमल लेके श्वेत द्वीप में भगवान् श्री कमलापति की पूजा करने जाते हैं, हमलोग उनके भक्त हैं, यह उन्हीं का प्रसाद है कि हम चारों जन अपने २ पहाड़ पर अधिकार कर ऋद्धि सिद्धि और सब सम्पत्ति से भरे पूरे हैं। सो हे सखे! यदि आपको इच्छा हो तो चलिये हमलोग आपको आकाशमार्ग से ले चलें और श्वेत द्वीप में हरि भगवान् के दर्शन आपको करा देवें। उनकी ऐसी बात सुन नरवाहनदत्त जाने पर सम्मत हुए, और अपने सङ्गी गोमुखादि को वहीं छोड़, कि फल फूल खा जल पी के दिन बितावें, आप उन देवपुत्रों के साथ आकाशमार्ग से श्वेतद्वीप को चले, उनमें से देवसिद्धि ने इन्हें अपने गोद में उठा लिया। वहां पहुँचकर आकाश से उतरे, चारों देवपुत्रों ने ले जाकर इन्हें भगवान् विष्णु के साम्हने खड़ा कर दिया। तहां नरवाहनदत्त देखते हैं कि जगदाधार भगवान् नारायण शेषनाग की शय्या पर लेटे हैं, पास में अब्धितनया भगवती लक्ष्मीजी बिराज रही हैं तथा पैताने पृथ्वीदेवी बैठी हैं, शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म भगवान् के साम्हने शरीरधारी खड़े हैं, गन्धर्व सब, नारद के साथ, भगवान् की स्तुति गाय रहे हैं, अमर, सिद्ध और विद्याधर महा प्रभु को प्रणाम कर रहे हैं, साम्हने हाथ जोड़े गरुड़ बैठे हैं, ऐसे भगवान् के दर्शन से नरवाहनदत्त कृतार्थ हो गये, सत्य कहा है "केहि न सुसंग बड़प्पन पावा"। तदुपरान्त उन देवपुत्रों के पूजा कर चुकने पर जब कश्यपादि महर्षि भगवान् का स्तवन कर चुके, तब नरवाहनदत्त भी हाथ जोड़कर महाप्रभु श्री-लक्ष्मीनारायण जी की स्तुति करने लगे—

चौपाई।

प्रणवौं भक्त कल्पतरु रूपा। अभिवाञ्छित वर देत अनूपा॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लक्ष्मी कल्पलता परिवेष्ठित। जिहिकर वपु सब समय सुशोभित ॥
संत हृदय मानसकी हंसा । नभचर जेहिकर करत प्रशंसा ॥
सर्वरूप सबकी उर बासी । गुणातीत बहुगुण्य निवासी ॥
ब्रह्मा नाभिकमल तुव राजत। मधुरध्वनि प्रभु चरित बखानत॥
जेहि ते प्रगट वेद भये चारी। सो जनु यहँ भे षटपद चारी ॥
भूमिचरण नभ प्रभु कर सीसा। रवि शशि नयन श्रवण दस दीसा॥
उदर जासु ब्रह्माण्ड समाना। अस प्रभु कह बुध वेद बखाना ॥

दोहा।

नाथ धाम निधि तुमहिं ते, सकल जीव उपजन्त ।
जिमि उज्वलित कृशानु से, छिटकत चिनगि अनन्त ॥
पुनि तुमहीं मह होत है, लीन प्रलय को पाय ।
जिमि सन्ध्या के समय में, विहँगन नौड़ उड़ाय ॥

छन्द।

उल्लसित ह्वै निज अंशतें भुवनेश्वरन कहँ रचत हैं।
जिमि सतत शुभित पयोधि महँ लहरें अनेकन उठत हैं॥
जो विश्वरूप अरूपहू जग रचत पुनि अक्रिय अहैं।
जो निराधार सुधार जगतहिं, तत्व तुमरो को लहैं॥ १ ॥

दोहा।

देवन सिधि यह लहत में, नाथ कृपा की कोरि।
कृपादृष्टि अब कीजिये, विनवौं दोउ कर जोरि॥ ३ ॥

इस प्रकार नरवाहनदत्त के स्तुति करने पर भगवान् नारायण ने उनकी ओर कृपादृष्टि से चितय नारदमुनि से कहा कि हे महामुने ! तुम इन्द्र के पास जाओ और मेरा सन्देशा कह के क्षीरसागर से निकली हुई जो उत्तम अप्सरायें मैंने उनके यहां धरोहर रक्खी हैं उन्हें उन्हीं के रथ पर बैठाय तुरत यहां ले आओ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भगवान् का ऐसा बचन सुन नारद बोले "बहुत अच्छा महाराज!" इतना कह नारदजी इन्द्र के यहां जाके, उन्होंके रथ पर उन अप्सराओं को चढ़ा के ले आये, साथ में मातलि भी आये थे। जब नारद ने भगवान् को प्रणाम कर उन अप्सराओं को लाके उनके समक्ष उपस्थित किया तब महाप्रभु ने वत्सराज के पुत्र से यों कहा "नरवाहनदत्त! तुम विद्याधरेन्द्रों के चक्रवर्त्ती होनेवाले हो, सो मैं तुम्हें इन अप्सराओं को देता हूं, तुम इनके उचित पति हो और ये तुम्हारी समुचित भार्य्यायें हैं, क्योंकि पुरारि ने तुमको साक्षात् कामदेव का अवतार बनाया है। भगवान् को ऐसा प्रसन्न देख, उनकी इस तरह की बात सुनकर अत्यन्त प्रमुदित हो नरवाहनदत्त उनके चरणों पर गिर पड़े; तदुपरान्त हरि ने मातलि से कहा कि अप्सराओं के सहित इन नरवाहनदत्त को जिधर से यह कहें उसी मार्ग से इनके घर पहुँचा दो।

भगवान् के ऐसे कहने पर नरवाहनदत्त अप्सराओं के साथ उन्हें प्रणाम कर उस रथ पर चढ़े जिसे मातलि हांकता था संग में उन देवपुत्रों को भी ले लिया जो उन्हें निमन्त्रण देके वहां ले आये थे। चलते २ सब लोग नारिकेल द्वीप में पहुँचे, वहां रूपसिद्धि प्रभृति उन चारों दिव्य पुरुषों ने मातलि सहित उनका समुचित सत्कार किया पश्चात् स्वर्गतुल्य मैनाक ऋषभादि उनके निवासाद्रि पर अप्सराओं के साथ घूम २ विहार करने लगे। मधु मास के आगमन से सब वृक्ष फूल रहे थे, सो उन उद्यानभूमियों में भ्रमण करके उन अनुपम वृक्ष और लताओं की शोभा निरखने लगे। संग में चारों देवपुत्र उन्हें दिखाते फिरते और बीच २ में उनके नामादि भी बतलाते जाते थे। वे कहते थे "देखो सखे! इन वृक्षों की मंजरियां, मानों अपने विकसित पुष्परूपी नेत्रों से आते हुए कान्त बसन्त को देख रही हैं। इधर देखो तलावों में कमल कैसे खिले हैं, ऐसा जान पड़ता है कि वे तालाब को छाया किये हुए हैं कि जिसमे उनकी जन्मभूमि को सूर्य्य की गर्मी से सन्ताप न मालूम हो। देखो उधर कर्णिकार कैसा फूला है, मधुलोभ से भौंरे वहां आते पर रस न मिलने से त्याग कर चले जाते हैं जिस प्रकार नीच धनी को अर्थी लोग त्याग देते हैं। इधर तो तनिक कान दो, कैसा अच्छा गाना हो रहा है; किन्नरियां मधुर ध्वनि से गान कर रही हैं, साथ में उन्हीं के तान में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कोयलें भी अपनी कुहूं २ स्वर मिला रही हैं, भौंरे भी झङ्कार ध्वनि से राग भर रहे हैं; मानो ऋतुराज की बधाई के उत्सव में गान हो रहा है।" इस प्रकार की बातें कह २ कर बेचारे देवपुत्र अपने उपवन की शोभा नरवाहनदत्त को दिखा रहे थे और वह वत्सराज के पुत्र भी उनके नगरों में, जहां कि बसन्त के आगमन से पुरवासी मारे आनन्द के मानों नृत्य कर रहे हैं, विहरण करते अपनी भार्य्या अप्सराओं के साथ विहार करते स्वर्गसुख लूट रहे थे। ठीक है पुण्यात्मा लोग जहां २ जाते हैं ऋद्धिसिद्धि उनके आगे २ दौड़ती हैं।

इस प्रकार तीन चार दिन सुखपूर्वक रह के नरवाहनदत्त ने अपने मित्र देवपुत्रों से कहा कि अब तो मैं अपनी नगरी में जाके अपने पिता के दर्शन किया चाहता हूं बहुत अच्छा होता यदि आप लोग भी चलते और उस नगरी को देख के कृतार्थ करते। इतना सुन वे देवपुत्र बोले कि सखे! उस नगरी के सार स्वरूप तो आपही को हमलोगों ने देख लिया अब कहना इतना ही है कि आप प्राप्तविद्य हैं, आप हमलोगों को भूलियेगा नहीं, स्मरण बनाये रहियेगा। इस प्रकार उनकी बात सुन, उनसे विदा हो नरवाहनदत्त ने मातलि से, जो कि इन्द्र का रथ लाके उपस्थित थे, कहा कि जहां दिव्य सरोवर के किनारे मेरे गोमुखादि सखा हैं, उसी मार्ग से रथ ले चलिये। इतना कह वह अप्सराओं के सहित रथ पर बैठ गये और बात की बात में रथ उस तालाब पर पहुँच गया, वहां रथ ही पर से गोमुखादिकों से यह कह के कि तुम लोग अपने मार्ग से कौशाम्बी में आओ; वहां सब वृत्तान्त सुनाऊँगा, नरवाहनदत्त इन्द्र के रथ पर चढ़े हुए अपनी नगरी में आ पहुँचे। रथ से उतर बड़े सत्कार से मातलि को बिदा कर उन अप्सराओं के साथ अपने मन्दिर में पैठे। वहां उन सभों को रख, अपने पिता के दर्शनों को चले, पिता के निकट पहुँच उनके चरणों पर गिर के उन्होंने प्रणाम किया, देखतेही उनके जनक अति हर्षित हो गये, पश्चात् अपनी माता वासवदत्ता तथा पद्मावती के पावों पर गिर के उनको भी प्रणाम किया। सभों ने आनन्दमग्न हो इनका अभिनन्दन किया सब के नेत्र इनको देख २ तृप्त नहीं होते थे। इतने में रथ पर चढ़े सारथि सहित गोमुख उस प्रलम्बबाहु ब्राह्मण के साथ आ गये। तब पिता के पूछने पर नरवाहनदत्त ने, अपने मन्त्रियों के समक्ष आद्यो-

पान्त अपना सारा अद्भुत वृत्तान्त कह सुनाया। ऐसा महा अद्भुत वृत्तान्त सुन सब लोग कहने लगे कि भगवान् जिस पुण्यात्मा पर अनुग्रह किया चाहते हैं उसे ऐसेही ऐसे उत्तम मित्रों से मिला देते हैं। लोगों की ऐसी बात सुन अति सन्तुष्ट हो राजा वत्सेश्वर ने अपने पुत्र पर अच्युत के ऐसे अनुग्रह होने के कारण बड़ा भारी उत्सव मनाये जाने की आज्ञा दी। इतने में राजा और रानी के चरणों को प्रणाम करने के लिये गोमुख उन अप्सराओं को लाये, हरिप्रसाद से मिली उन पतोहुओं को देख अति प्रमुदित हो राजा ने दासियों से उनका नाम पूछा तब विदित हुआ कि एक का नाम देवरूपा, दूसरी का देवरति, तीसरी का देवमाला तथा चौथी का नाम देवप्रिया था। उस उत्सव के समय वह नगरी चहुँओर लाल लाल पताकाओं के फहराने से ऐसी जान पड़ती थी मानों सिन्दूर छिड़क रही हो और वह (नगरी) यह कहती हुई जान पड़ती थी कि कहां मैं और कहां वे अपसरायें। अहो भाग्य!! नरवाहनदत्त से पृथ्वी पर ही मैं स्वर्ग की नगरी बना दी गयी हूं। तदुपरान्त पिता के नेत्रों को आनन्द देके नरवाहनदत्त अपनी दूसरी भार्य्याओं से भेंट करने गये जो कि बैठी २ उनकी बाट जोह रही थीं। चारही दिन का विरह उनको चार वर्ष के समान जान पड़ा, इस हेतु वे अत्यन्त कृश हो गई थीं। जब नरवाहनदत्त को देखा तो हर्ष से प्रफुल्लित हो अपनी विरहवेदना सुनाने लगीं। इस ओर गोमुख ने भी बनवास में उस प्रलम्बबाहु ने कैसे रथ के घोड़ों की रक्षा की और कैसे २ सिंहादि पशुओं का आखेट किया इत्यादि उसकी शूरता का वर्णन कर सुनाया। इस प्रकार अनेक २ तरह की बातें हो रही थीं, राजा नरवाहनदत्त, सबकी बातें सुनते जा रहे थे और बीच २ में अपनी प्रियाओं के नयनामृत रूप का वर्णन भी कर दिया करते थे, मीठी २ बातें कह के उनके प्रणयकोप को दूर करते थे, कभी २ सब लोग बीच २ में थोड़ी २ मदिरा भी पी लिया करते थे, इस प्रकार वह समय बड़े आनन्द में कट गया।

एक समय की बात है कि नरवाहनदत्त अपने मन्त्रियों के साथ अलङ्कारवती के कमरे में बैठे थे कि बाहर से ढोल और डङ्कों का शब्द सुन पड़ा सो सुन उन्होंने अपने सेनापति हरिशिख से कहा कि तनिक पता तो लगाओ यह अकस्मात् बाजों का शब्द कहां और क्यों हो रहा है। सो सुन हरिशिख बाहर गये और तुरंही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लौट आकर वत्सराज के पुत्र अपने प्रभु से कहने लगे "देव! रुद्र नाम का जो बनिया नगर में है न, वह सुवर्णद्वीप में बनिज करने गया था, बहुत सा माल असबाब, धन दौलत कमा के जहाज लदवा चला आ रहा था कि जहाज टूट जाने से सब धन लिये दिये डूब गया. वही बिचारा अकेला जीता जागता किसी प्रकार समुद्र के किनारे पहुंचा और दुःख का मारा आज छठवां दिन है कि वह अपने घर पहुँचा है। कई दिन तक बिचारा कष्ट में पड़ा था कि दैवात् उसके भाग्य से उसको खजाना मिल गया । उसके नाते रिश्ते के लोगों ने महाराज वत्सराज के कान तक यह बात पहुँचाई सो आज उस बनिये ने स्वयं आकर प्रभु के साम्हने कहा कि महाराज! चार करोड़ मोहरें और बहुत से रत्न मुझे मिले हैं सो यदि देव की आज्ञा हो तो लाके उपस्थित कर दूं। सुन यह महाराज ने कहा कि भाई समुद्र ने तुम्हारा सर्वस्व छीन लिया तुम दुःखी हो गये, सो विधाता को दया आई उन्होंने तुम्हें निधि दी, सो अब कौन ऐसा बुद्धि का आगर होगा जो तुम्हारा धन ले लेगा; तुम जाओ और अपनी भूमि से निकले धन का यथेच्छ उपभोग करो। वत्सराज महाराज की ऐसी बात सुन वह वणिक् बड़े हर्ष से भूपाल के चरणों पर गिर प्रणाम कर अब बाजे गाजे से अपने कुटुम्बियों के साथ घर जा रहा है। हरिशिख के इतना कहने पर नरवाहनदत्त अपने पिता की प्रशंसा कर अति विस्मित हो अपने मन्त्रियों से कहने लगे कि विधि जब किसी का धन हर लेते हैं तो क्या उसी समय दूसरे उपाय से दे भी देते हैं? बड़े आश्चर्य की बात है कि इस प्रकार मनुष्यों को भी कभी उन्नत कर देते और कभी गिरा देते, विधिना का यह अद्भुत चरित्र है। सो सुन गोमुख ने कहा कि महाराज विधि की गति ऐसीही है. सुनिये मैं आपको समुद्रशूर की कथा सुनाता हूं।

पूर्वकाल में राजा हर्षवर्म्मा का अति रम्य हर्षपुर नामक एक नगर था जहां राजा राज्य और प्रजा सुख करे। तहां समुद्रशूर नामक एक बड़ा महाजन रहता था, वह कुलीन, धार्मिक, धैर्य्यवान् और बहुत सी सम्पत्ति का मालिक था। एक वार सौदागरी करने के लिये उसको सुवर्ण द्वीप में जाना पड़ा सो समुद्र तट पर जाय एक जहाज पर सवार हुआ। वह समुद्र में चला जा रहा था, थोड़ाही मार्ग और रह गया था कि बड़े बेग से हवा चली, मेघ घिर आये, समुद्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लहराने लगा। पवन के झकोरे से जहाज डवांडोल हो उछलने लगा और अन्त में एक मगर का ठक्कर खाके टूट गया तब वह बणिक् कमर कस समुद्र में कूद पड़ा। कुछ दूर तक वह वीर तैरता चला पश्चात् उसे पवन के हिलकोरे से बहता हुआ बहुत काल का मरा एक मुर्दा मिला, वह उस पर चढ़ बैठा और अपने हाथों से पानी चीरता चला, हवा उसी ओर की थी इससे और भी सहारा मिला सो वह सुवर्णद्वीप में पहुँच गया। किनारे पहुँच वह मुर्दे से उतर पड़ा परन्तु उसकी कटि में एक कपड़ा दीख पड़ा जिसमें गाँठी बँधी थी। कपड़ा निकाल गाँठी खोल वह देखने लगा तो उसके भीतर रत्नों का एक कण्ठा मिला। उस अमूल्य कण्ठे को पाय वह अति प्रसन्न हुआ, तदनन्तर स्नान कर यह बिचारने लगा कि चलो ऐसा अमूल्य कण्ठा तो हाथ लगा. जो कुछ मेरा समुद्र में नष्ट हो गया इसके सामने तृणवत् है। वहां का चला २ कलशपुर में पहुँचा और हाथ में कण्ठा लिये हुए एक मन्दिर के हाते में जा, वहां छाया में बैठ गया, समुद्र से तैरने से अत्यन्त थक तो गयाही था, दैवात् बिचारे को नींद आ गई। इतने में गस्त देते २ पुलिस के सिपाही वहीं पहुँच गये और उसके हाथ में कण्ठा देख कहने लगे "राजपुत्री चक्रसेना के गले से जो कण्ठा चोरी गया था सो यही है और यह चोर भी वही है।" तब पुलिसवाले उसे जगाके राजा के पास ले गये, राजा के पूछने पर उसने जैसे २ कण्ठा पाया था सो सब कह सुनाया। राजा को उसकी बात पर विश्वास न आया। वह हाथ में कण्ठा ले अपने सभासदों को दिखाकर कहने लगे, "देखिये यही कण्ठा है, यह झूठ बोल रहा है, यही चोर है।" राजा इस प्रकार हाथ पसारे दिखाही रहे थे कि उसकी चमक से एक गीध झपटा और कण्ठा ले उड़ गया फिर उसका कहीं पता न लगा। राजा तो पहिलेही से क्रोधित थे अब तो उनका क्रोध और भड़क उठा। उन्होंने आज्ञा दी कि यह बध किया जाय, इतना सुनतेही वह बिचारा बणिक् शिव की दुहाई दे फूट २ रोने लगा, इतने में आकाशवाणी हुई "हे राजन्! इसका बध मत कराओ, यह समुद्र-शूर नामक हर्षपुर का बड़ा भलामानुष बनिया है, अब यह तुम्हारे राज्य में आया है। जो चोर कण्ठा चुरा ले गया था वह नगर के रखवालों के भय से व्याकुल हो रातही को सागर में गिर के मर गया। इस महाजन का जहाज टूट गया था सो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह उसी चोर की लोथ पाय उसपर चढ़ जलधि पार कर यहां आया है। इसने उसकी कमर में बँधे कपड़े को खोल यह कण्ठा पाया है, यह तुम्हारे घर से नहीं चुरा ले गया सो हे राजन्! यह चोर नहीं है, इस धार्मिक को छोड़ दो और बड़े आदर सम्मान से इसे बिदा करो।" इतना कह आकाशवाणी चुप हो गई। यह सुन राजा अति सन्तुष्ट हुए और उस समुद्रशूर वणिक् को बध से बचा बहुत धन दे उन्होंने उसे बिदा किया। अब वह महाजन धन पाय, बहुत से बर्त्तन खरीद भयङ्कर समुद्र में जहाज पर सवार हो अपने देश को चला।

जब समुद्र के पार पहुँचा तब लदनी लदाय, बटोहियों के स्थल पर चलने लगा, एक दिन सायंकाल में एक जङ्गल में पहुँचा वहीं रात को डेरा डाला; सब बटोही तो सो गये पर समुद्रशूर जागता रहा कि इतने में भारी डाका पड़ा। डाकू लगे बटोहियों को मारने कि इतने में अवसर पाय समुद्रशूर अपने बर्त्तनों को छोड़ झट एक बड़ के पेड़ पर चढ़ के छिप बैठा। जब चोर सब धन छीन-छान के चले गये तब वह बिचारा बड़ा दु:खित हो उसी पेड़ पर रात भर पड़ा रह गया। प्रात:काल भाग्यवश उसकी दृष्टि पेड़ के ऊपर गई तो उसे पत्तियों के बीच दीपक के समान कुछ चमकता हुआ दिखाई पड़ा; बड़े अचम्भे में वह पेड़ के और ऊपर चढ़ा तो वहां गीध का एक खोंता मिला जिसमें बहुमूल्य रत्नजटित आभरणों की ढेरी लगी थी। उसने सबको बटोर लिया, उन्हीं के बीच में वह कण्ठा भी मिला जिसे उसने स्वर्णद्वीप में पाया था और जिसे गीध छीन ले गया था। तब वह अमित धन पाय उस बड़ के पेड़ से उतरा और प्रसन्न हो चला २ कुछ दिनों में अपने नगर में पहुँचा। वह समुद्रशूर और धन की इच्छा न रख अपने कुटुम्ब के लोगों के साथ यथेच्छ सुखपूर्वक रहने लगा।

इतनी कथा सुनाय गोमुख कहने लगे कि देखिये महाराज कहां समुद्र में गिरना, फिर समस्त धन का नाश, पुन: समुद्र में तैरकर पार होना, पश्चात् कंठे का मिलना, उसी का फिर चला जाना, और क्या अकारण मृत्यु की आशा, फिर तुर्तही सन्तुष्ट राजा से धन की प्राप्ति, फिर उसी तरह समुद्र का पार करना, तदुपरान्त फिर मार्ग में चोरों से सर्वस्व अपहरण और अन्त में पेड़ पर से अमित रत्नों की प्राप्ति; सो देव! विधि की गति ऐसी विचित्र है, परन्तु जो पुण्यात्मा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होता है, चाहे कितनाइ दुःख भोगे पर अन्त में वह सुख पाता ही है। इस प्रकार गोमुख के मुख से अद्भुत कथा सुन नरवाहनदत्त ने कहा कि ठीक है विधि गति ऐसीही है, तदनन्तर सभा विसर्जन कर स्नानादि क्रिया सम्पन्न किई।

दूसरे दिन नरवाहनदत्त सभा में बैठे थे कि इतने में उनकी बाल्यावस्था के सेवक बड़े शूर समरतुङ्ग नामक राजपूत आकर कहने लगे कि हे देव! मेरे गोतिये संग्रामवर्ष ने अपने वीरजित् आदि चारों पुत्रों के साथ मेरा देश उजाड़ डाला, सो अब मैं जाके उन पांचों को पकड़े लिये आता हूं श्रीमान् को यह स्मरण रहे, इतना कह वह चले गये। "इनके पास सेना थोड़ी है और इनके शत्रुओं के पास बहुत बड़ी सेना है"। यह जान कर वत्सराज के पुत्र ने उनके पीछे जाने के लिये अपने सैन्य को आज्ञा दी परन्तु उन्होंने इनकी सेना न ली और जाकर उन पांचों शत्रुओं को अपने बाहुबल से जीत कैद कर लाये और नरवाहनदत्त के समक्ष खड़ा कर दिया। यह देख नरवाहनदत्त ने उन विजयी समरतुङ्ग का बड़ा आदर सन्मान किया और उनकी बड़ी प्रशंसा भी की, फिर कहा कि देखो तो यह कैसे आश्चर्य्य की बात है कि जिन शत्रुओं ने इनके राज्य पर आक्रमण किया था उन अति प्रबल रिपुओं को जीत इन्होंने कैसा पुरुषार्थ किया है जैसे कोई अजय पांचो इन्द्रियों को अपने वश में करके बड़ा पुरुषार्थ करे। यह सुन गोमुख बोले कि देव! चमरबाल राजा की कथा जो आपने न सुनी हो तो सुनिये—

हस्तिनापुर नामक एक नगर है, वहां कोषदुर्ग और बल से सम्पन्न चमरबाल नामक राजा रहते थे। उन्हीं के गोत्रज (गोती) समरबल इत्यादि राजाओं का सिवाना था। एक बार उन सबों ने मिल के सम्मति की कि यह चमरबाल सर्वदा एक २ करके हम सबों को बाधा दिया (जीत लिया) करता है, सो आओ हम लोग इकट्ठे मिलकर उसे हरा देवें इस प्रकार निश्चय कर उस राजा के जीतने की इच्छा से प्रस्थान करने का अभिप्राय ठान उन पांचों राजाओं ने एकान्त में एक ज्योतिषी से लग्न पूछा। ज्योतिषी ने पञ्चाङ्ग देख के कोई भी शुभ लग्न न पाया प्रत्युत सब असगुन ही मिले, तब राजाओं से कहा कि इस वर्ष में तो आप लोगों का कोई शुभ लग्न नहीं बनता, जो किसी प्रकार से आप लोग यात्रा भी करेंगे तो जय के बदले पराजय होगा, और आप लोग उनकी समृद्धि देख क्यों ऐसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करने पर उद्यत हैं; लक्ष्मी का फल सुख भोगना ही है सो आप लोगों को बहुतायत से है, यदि आप लोगों ने न सुनी हो तो मैं दो बनियों की कथा सुनाये देता हूं—

पूर्वकाल में इस देश में कौतुकपुर नामक एक नगर था, तहां जैसा नाम वैसेही राजा बहुसुवर्णक रहते थे । यशोवर्म्मा नामक एक युवा क्षत्री उनका सेवक था, राजा स्वभावतः बड़े दानी थे पर उसको कुछ न देते थे जब कभी वह बिचारा राजा से कुछ मांगता तो भूपति सूर्य्यनारायण की ओर दिखाके कहते कि भाई मैं क्या करूँ मैं तो दिया चाहता हूं पर भगवान् आदित्य नहीं देने देते कहो न अब मैं क्या कर सकता हूं ? परन्तु वह भी शान्त न हुआ. अवसर देखता रहा कि इतने में एक दिन सूर्य्यग्रहण लगा सो राजा का सदा सेवक वह यशोवर्म्मा राजा के पास गया और महिपाल को बहुत कुछ दान करते देख कहने लगा "महाराज जो सूर्य्यनारायण आपको मुझे कुछ नहीं देने देते सो आज बैरी से ग्रसे गये हैं सो अब अवसर है मुझे कुछ दे दीजिये । राजा बहुसुवर्णक बहुत दान कर चुके थे सो उन्होंने उसकी बात सुन हँसके उसे भी बहुत कुछ वस्त्र और सुवर्ण इत्यादि दिये । थोड़े दिनों में सब धन ओराय गया, राजा तो फिर कुछ देतेही नहीं थे, सो यशोवर्म्मा जैसा दुःखी था वैसाही पुनः हो गया, इतने में उस की स्त्री भी मर गई, अब तो और भी बन गया—"नार मुई घर सम्पत नासी । मूड़ मुड़ाय भये सन्यासी ।" वह अपने मन में सोचने लगा कि व्यर्थ इस देह को रखकर मैं क्या करूँगा, इस जाने से तो मरना ही अच्छा है सो अब चलके विन्ध्यबासिनी देवी के साम्हने या तो अपना शरीरही त्याग दूंगा नहीं तो अभीष्ट वरदान ही पाऊँगा । इतना सोच विचार वह यशोवर्म्मा विन्ध्य पर्वत पर गया और महामाया भगवती विन्ध्यवासिनी के समक्ष कुश के आसन पर बैठ, निराहार एकाग्र मन से कठिन तप करने लगा । भगवती ने उसे स्वप्न में दर्शन दे कहा "हे पुत्र ! मैं तुष्ट हूं कह तुझे अर्थश्री दूं कि भोगश्री * यह सुन

* अर्थश्री = धन मिले पर भोगा न जाय । भोगश्री = वह सम्पत्ति जिसका भली भांति उपभोग होवे । अर्थवर्म्मा और उपभोगवर्म्मा की कथा इसी विषय का दृष्टान्त है ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यशोवर्म्मा ने उत्तर दिया कि मातः मैं तो इन दोनों स्त्रियों का भेदही नहीं जानता कहूं क्या। उसको ऐसी बात सुन देवी ने कहा कि अच्छा अपने देश को लौट जा, वहां तेरे देश में भोगवर्म्मा और अर्थवर्म्मा नामक जो दो वणिक् हैं उनके पास जाके उनको सम्पत्ति (लक्ष्मी) देख, और जो तुझे भावे वैसीही स्त्री आकर मुझसे मांग ले। इतना सुनतेही उसकी नींद टूट गयी सो प्रातःकाल कुछ पारण कर वह अपने देश कौतुकपुर को चला गया।

पहिले वह अर्थवर्म्मा के घर गया जिसने कि व्यवहार करके असंख्य सोने के पात्र और रत्न एकट्ठे किये थे। उसकी सारी सम्पत्ति देखता हुआ वह अर्थवर्म्मा के पास पहुँचा; अर्थवर्म्मा ने यशोवर्म्मा का बड़ा आदर सत्कार किया और भोजन का न्यौता दिया। उसने अर्थवर्म्मा के पास बैठकर अतिथि के योग्य उत्तम २ पक्वान्न मांस और घी सहित भोजन किया परन्तु देखा कि अर्थवर्मा ने आधा पल घी और सत्तू खाया, और थोड़ा सा भात दाल और व्यञ्जन तथा कुछ मांस भी खाया यशोवर्मा को यह देख बड़ा आश्चर्य्य हुआ उसने अर्थवर्मा से पूछा कि आप इतना ही खाते हैं? उसने उत्तर दिया कि आज आपकी खातिरी से, मांस, भात, दाल व्यञ्जन तथा आधा पल घी और सत्तू खाया है, नहीं तो सदा कर्ष भर घी और केवल सत्तू खाता हूं। करूँ क्या मेरी अग्नि मन्द है इससे अधिक पचता ही नहीं। यह सुन यशोवर्म्मा अपने मन में उसकी सम्पत्ति की निन्दा कर कहने लगा कि जब यह दशा है तो इतने धन से क्या लाभ! रात के समय अर्थवर्मा यशोवर्मा के लिये फिर भात और दूध लाया, इसने भर पेट भोजन किया पर अर्थवर्मा ने केवल एक पल दूध पीया। खा पी के वहीं बिस्तरा बिछा दोनों सो रहे।

आधी रात के समय यशोवर्मा स्वप्न में क्या देखता है कि कई एक महा भयङ्कर पुरुष दण्ड हाथ में लिये निःशङ्क घर में घुस आये हैं और क्रोध पूर्वक अर्थवर्म्मा से बोले 'क्यों रे दुष्ट, धिक्कार है तुझको अरे तूने एक कर्ष घी आज अधिक क्यों खाया? और आज मांस भात खाया और एक पल दूध भी पीया, बता तो सही ऐसा क्यों किया, क्योंरे यह तो जितना तुझे दिया गया है उससे अधिक न है?" इतना कह वे अर्थवर्मा को पांव पकड़ घसीट के डडों से पीटने लगे और जो एक कर्ष घी मांस भात अधिक खाया था और एक पल अधिक दूध पीया था सो सब उ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

न्होंने उसके पेट से निकाल लिया। इतने में यशोवर्मा की नींद टूट गई तो वह क्या देखता है कि अर्थवर्म्मा भी जागा है, उसके पेट में पीड़ा हो रही है, मारे पीड़ा के वह चिल्ला रहा है, नौकर चाकर उसका पेट सुहरा रहे हैं इतने में ओकाई आई और अर्थवर्म्मा ने जो कुछ अधिक खाया था सो रद्द कर दिया। जब उसकी पीड़ा थम गयी तब यशोवर्म्मा अपने मन में सोचने लगा कि ऐसे धन को धिक्कार है कि जिसका उपभोग इस प्रकार का है। इस प्रकार तो आदमी का स्वास्थ्यही नहीं ठीक रहेगा तो वह धन लेकर क्या करेगा! यों चिन्ता करते २ उसकी रात बीत गयी।

अब प्रातःकाल अर्थवर्म्मा से विदा हो यशोवर्म्मा भोगवर्म्मा के घर गया. उसने भी इसका यथोचित आदर सत्कार कर भोजन करने का निमन्त्रण दिया। यहां उसको बाहरी चमक दमक तथा सम्पत्ति न देखी पर देखा क्या कि उत्तम मकान है, अच्छे २ वस्त्र और आभूषण उसके हैं। यशोवर्म्मा पास में बैठा था कि भोगवर्मा अपना जो कुछ व्यवहार (रोजगार) था सो करने लगा। एक से सौदा खरीदा और दूसरे के हाथ उसी दम बेंच दिया, अपना रुपया तो लगाया नहीं और बीचही में कई अशर्फियां कमा लीं सो उन अशर्फियों को नौकर के हाथ से अपनी भार्या के पास भेज दीं कि खाने पीने का सामान तैयार किया जाय। इतने ही में इच्छाभरण नामक एक उसका मित्र आया और उससे कहने लगा, "चलिये भोजन तैयार है, हमलोग अब भोजन करें, और सब भाई आ गये हैं अब आपही को देरी है।" यह सुन भोगवर्म्मा ने उत्तर दिया कि भाई आज मैं नहीं चल सकता क्योंकि हमारे घर यह पहुना आये हैं सो इनकी खातिरदारी करनी है। यह सुन वह मित्र फिर बोला, "क्या चिन्ता, तो यह भी चलें जैसे यह आपके पाहुने हैं वैसे क्या मेरे नहीं हैं, बस मित्र! अब झटपट उठिये"। इस प्रकार बड़े आग्रह से वह मित्र भोगवर्मा को ले गया सो भोगवर्म्मा ने यशोवर्म्मा के साथ जाके अपने मित्र के घर उत्तम २ पदार्थ भोजन किया और मद्य पिया, फिर अपने स्थानपर आके सायङ्काल में उसके साथ अपने घर में अच्छे २ स्वादिष्ट पक्वान्न खाये और मदिरा पी। जब रात हुई तो भोगवर्मा ने अपने नौकर से पूछा कि रात भर के लिये मदिरा है या नहीं? उसने उत्तर दिया कि प्रभो! इतनी तो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं है. तब भोगवर्म्मा यह कहता हुआ सोने चला गया "तो अब हमलोग पिछली रात में जल कैसे पीयेंगे"।

यशोवर्म्मा उसी के बगल में सोया और स्वप्न में क्या देखता है कि दो तीन जन भीतर आये हैं उनके पीछे कुछ और लोग भी हाथ में डंडे लिये आये हैं, जो पीछे आये थे वे पहिले आनेवालों को डंडों से क्रोधपूर्वक पीटने लगे और कहते जाते थे "अरे दुष्टो! तुम सब कहां रहे, क्यों बतलाओ न रहे कहां? क्या इस बात की चिन्ता नहीं रही कि रातके पिछले पहर भोगवर्म्मा शराब क्या पीयेगा? तब जो पीटे जा रहे थे सो बोले "क्षमा कीजिये २ यह हम लोगों का पहिला अपराध है" इतना कह वे तथा पीटनेवाले सबके सब बाहर चले गये। यह स्वप्न देख यशोवर्मा जाग पड़ा और सोचने लगा "भोगवर्म्मा की यह भोगश्री जो अनायास आ जाती है, अर्थवर्म्मा की उस सम्र्द्धि से कहीं अच्छी है जिसका कि उपभोग न होने पावे। इस तरह चिन्ता करते करते उसकी रात बीत गयी।

अब प्रातःकाल होने पर यशोवर्म्मा उस वणिग्वर भोगवर्म्मा से बिदा हो फिर भगवती विन्ध्यावासिनी के चरणों के दर्शनार्थ चला। महामाया की शरण में पहुँच तप में लीन हो गया, जगदम्बा ने उसी प्रकार स्वप्न में दर्शन दे कहा कि पुत्र मांग कौन सी श्री तू चाहता है? तब यशोवर्म्मा ने उन दोनों (बनियों की) श्रियों में से भोग श्री मांग ली। भगवती ने कहा "तथास्तु"। तदनन्तर यशोवर्म्मा अपने घर लौट गया और अनायास उसे भोग श्री मिल जाया करती और वह सुख से अपना कालयापन करने लगा।

इतनी कथा सुनाय वह ज्योतिषी उन राजाओं से कहने लगा कि जो कुछ थोड़ा बहुत धन मिले और उसका उपभोग हो तो उस बहुत धन से कहीं अच्छा है कि जिस से आराम ही नसीब न हो, सो महाराजाओं आपलोग उस मक्खीचूस चमरबाल की लक्ष्मी देख क्यों कुढ़ते हैं अपनी श्री क्यों नहीं देखते कि दान भी करते हैं और मजे में सुख से रहते हैं, इस से मैं तो यही कहूंगा कि इस समय उन पर चढ़ाई मत कीजिये; फिर यात्रा का लग्न भी तो नहीं मिल रहा है और जहां लों मैं देखता हूं विचार में भी यही आता है कि इस समय आपलोगों की जीत नहीं हो होगी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यहां ऐसा वैसा उपदेश कब काम कर सकता है यहां तो हृदय में डाह छाया हुआ है उपदेश को ठांव कहां! उन राजाओं ने ज्योतिषी महाराज की बात न मानी और चमरबाल राजा पर चढ़ाई कर ही तो दी। जब राजा चमरबाल को विदित हुआ कि वे महीपति सीमा पर आ गये तब उन्होंने युद्ध में जाने से पहिले चट स्नान कर महादेव जी की पूजा की और शिव के अड़सठों अङ्गों के नामों से उनका स्तव भी किया जिन नामों के प्रताप से सब पाप क्षीण हो जाते और समस्त कामनायें सिद्ध होती हैं। तब आकाशवाणी हुई कि राजन् डरो मत निःशङ्क हो युद्ध करो; समर में तुम शत्रुओं को जीत लोगे। यह आकाशवाणी सुन राजा चमरबाल अत्यन्त प्रसन्न हुए और सब हथियारों से सज अपनी सेना ले उन नरपालों के सम्मुख युद्ध करने के लिये आ डटे। उनके शत्रुओं के सैन्य में तीस हज़ार हाथी, तीन लाख घोड़े और एक करोड़ पैदल थे और राजा की अपनी सेना में बीस लाख पैदल, दश सहस्र हाथी और एक लाख घोड़े थे। दोनों सेनाओं में युद्ध आरम्भ हो गया तब राजा का वीर नामक प्रतीहार जो सचमुच में एक बड़ा वीर था, समर में आगे हुआ और राजा चमरबाल स्वयं समरभूमि में आये जैसे भगवान् महावराह महासागर में प्रविष्ट हुए थे। इनके पास सेना तो अल्प ही थी तथापि हिया खोल ऐसे लड़े कि बात की बात में शत्रुओं के दल में मरे हुए घोड़ों हाथियों और पैदलों की ढेरी लग गयी। इतने में राजा समरबल सामने आये सो महीपति चमरबाल ने आगे बढ़ एक भाला उन्हें मारा और खींचकर पाश से बांध लिया। उसी प्रकार दूसरे राजा समरेश्वर के हृदय में एक वाण मार उनको भी बांध लिया। तीसरे राजा समरजित् को उनका द्वारपाल वीर बांधकर उनके पास लाया। इसी प्रकार उनके सेनापति ने चौथे राजा प्रतापचन्द्र को वाण से घायल कर लाय अपने स्वामी के हवाले कर दिया। यह कौतुक देख पांचवें भूप प्रतापसेन क्रोध कर राजा चमरबाल पर दौड़े और वाणों की वृष्टि करने लगे। भूपति चमरबाल ने अपने शरों से उनके वाणों को काट डाला और नाराचों से उनका शरीर छेद उनके माथे में तीन तेज वाण मारे। पश्चात् जब वाणों की चोट से उन्हें घुमरी आ गयी तब काल के समान उनके गले में पाश डाल उन्हें कैद कर लिया। इस प्रकार जब पांचो राजा कैद हो गये तब उनके योद्धा जो बचे थे सो छि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तिर बितिर हो भाग गये । उन राजाओं के अमित रत्न और सुवर्ण महाराज चमरबाल के हाथ लगे तथा उन भूपों की रानियां भी इनको मिल गईं उन रानियों में से राजा प्रतापसेन की जो पटरानी अति सुन्दरी यशोलेखा थी सो नारियों में एक उत्तमा रमणी इनको मिली । शत्रुओं को जीत जब महाराज चमरबाल अपने नगर में आये तब उन्होंने अपने द्वारपाल वीर और सेनापति देवबल को पगड़ी बांध अनेक रत्न दे उनका मान किया । प्रतापसेन की महिषी यशोलेखा को क्षत्रधर्म्म से जीत लाये थे, अतः महीपति ने उन्हें अपनी रानी बना लिया । रानी यशोलेखा यद्यपि चञ्चल थीं पर अब कर क्या सकती थीं, वह सोचती थीं कि अब तो इन्होंने अपने भुजबल से मुझे अपने वश कर ही लिया है जो हो, सहना ही पड़ेगा, यह सोच वह उनके अधीन हो गयीं । हा ! काम और मोह में जो लोग प्रवृत्त हो जाते हैं उनकी धर्म्मवासना कैसी मलिन हो जाती है । कुछ दिनों के उपरान्त रानी यशोलेखा ने राजा चमरबाल से बड़ी प्रार्थना की कि उन पांचों नृपतियों को छोड़ दीजिये सो भूपति ने प्रतापसेन प्रभृति पांचों भूपों को छोड़ दिया कि अपने राज्य में चले जावें । वे महाराज चमरबाल को विनयपूर्वक प्रणाम कर अपने २ देश को चले गये ।

दोहा ।

तब शत्रुन कहँ जीति नृप, चमरबाल निःशङ्क ।
ऋद्धिसिद्धियुत राज निज, कियो सहित आतङ्क । १ ॥
निरखि लजैं जेहिँ अप्सरा, विजयपताका रूप ॥
रानि यशोलेखहिँ रम्यो, सानुराग सो भूप ॥ २ ॥

बसन्ततिलका ।

या भांति द्वेष परिपूरित शत्रु जो हो ।
आये न शोचि बलहू अपनो परायो ॥
होवै सुधीर नाहिं कोउ सहाय जोभी ।
तोभी अराति कुलको रण में पछारै ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा।

इहि विधि गोमुख से कथा, सुनि नरवाहनदत्त॥
लगे करन दिनकृत्य कहि, बात अहै यह सत्त॥३॥
बितयो रात अनन्द सों, करत प्रिया-सँग गान।
नभ में स्थित ह्वै सुरसती, दियो तिनहिँ वरदान॥४॥

पांचवां तरङ्ग।

अब दूसरे दिन जब नरवाहनदत्त रानी अलङ्कारवती के महल में अपने मन्त्रियों के साथ बैठे थे कि उनके अन्त:पुर के रक्षक सौविदल्ल का भाई जो कि मरुभूति का सेवक था आकर कहने लगा "महाराज! मैंने मरुभूति की दो वर्ष सेवा की, पर इन्होंने हम दोनों प्राणियों को खाना कपड़ा मात्र दिया और ऊपर से जो हर साल पचास अशर्फियों की प्रतिज्ञा की थी था सो नहीं देते और जब मैं इनसे मांगने गया तो इन्होंने लात मार के मुझे निकाल दिया; अब मैं उनके ऊपर धरना देके आपके सिंहद्वार पर बैठा हूं। यदि देव! आप इसका विचार न कर देवें तो मैं अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा, और अधिक मैं क्या कहूं, आगे श्रीमान् मालिक है।" इतना कह जब वह चुप हो गया तब मरुभूति ने कहा कि हां अवश्य इसे अशर्फियां देनी हैं परन्तु अभी मेरे पास नहीं हैं। यह सुन सब लोग हँसने लगे, तब नरवाहनदत्त ने अपने मन्त्री मरुभूति से कहा कि यह कैसी आपकी मूर्खता है, आपकी बुद्धि में भांग तो नहीं पड़ गयी है, बस उठिये और तुरत इसे सौ मोहरें दीजिये। अपने प्रभु की यह बात सुन मरुभूति अति लज्जित हुए और उसी समय सौ अशर्फियां लाके उन्होंने दे दीं। तब गोमुख ने कहा "महाराज! इसमें मरुभूति का कुछ दोष नहीं, क्योंकि विधाता की सृष्टि ही ऐसी है कि विचित्र २ प्रकार की चित्तवृत्तियां बनाई गई हैं। आप लोगों ने राजा चिरदाता और प्रसङ्ग नामक उनके सेवक की कथा तो कदाचित् न सुनी होगी, अच्छा मैं कह सुनाता हूं।"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्वकाल में चिरपुर के एक राजा चिरदाता थे. राजा तो बड़े सुजन थे पर उनके पार्श्ववर्त्ती बड़े निकम्मे थे । किसी देश से प्रसंग नामक एक व्यक्ति अपने दो मित्रों के साथ आके राजा के यहां नौकर हुआ, नौकरी करते २ उसके पांच वर्ष बीत गये पर राजा ने उसे कुछ न दिया, यहां लों कि उत्सवादि पर भी उस बिचारे को कुछ न मिलता, उसके दोनों मित्र उसे सदा उसकाया करते कि राजा से कहो, पर दर्बारियों की दुष्टता के कारण न वह अवसर पाता न राजा से अपना दुःख निवेदन करता।

अब एक समय ऐसा हुआ कि राजा का बालक पुत्र मर गया महीपति बड़े दुःखी हुए, सब नौकर चाकर सोकाम देने के लिये राजा के निकट आये उनमें वह प्रसङ्ग नौकर भी अति शोकित हो उपस्थित हुआ था, सो अवसर पाय नर पति से कहने लगा, यद्यपि उसके मित्रों ने उसे बहुत रोका तथापि वह अब क्यों चूके, वह बोला "राजन्! हम तीन जन बहुत दिनों से आपके यहां सेवकाई कर रहे हैं, परन्तु आपको ओर से हमें अद्यावधि कुछ भी न मिला, तब हमलोग यह आशा लगाये पड़े रहे कि यदि आप कुछ नहीं दे रहे हैं तो जब राजकुमार बड़े होंगे तो अवश्य हमारी सुधि लेंगे, सो दैव ने उन्हें उठा ही लिया तो अब हम-लोग यहां रह के क्या करेंगे, अब चलें।" इतना कह राजा के चरणों पर गिर प्रणाम कर प्रसङ्ग अपने दोनों मित्रों के सङ्ग चल खड़ा हुआ । "अहो ये सेवक मेरे पुत्र पर आशा रख ऐसे दृढ़ बने रहे तो मुझे भी इनका त्यागना उचित नहीं है, यह सोच राजा चिरदाता ने उन प्रसंगादि सेवकों को तुरत लौटा मँगाया और अन्न धन से ऐसा परिपूर्ण कर दिया कि फिर दारिद्र्य उनके निकट न आया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख कहने लगे कि देव इस प्रकार प्राणियों के स्वभाव विचित्र २ दीख पड़ते हैं. देखिये न, राजा ने समय पर तो उन बिचारों को कुछ न दिया और अनवसर पर बहुत धन दे अयाच्य कर दिया । तदनन्तर वत्सराज के पुत्र ने गोमुख से कहा कि कोई और कथा सुनाओ, सो सुन आख्यानपटु गोमुख फिर यह कथा सुनाने लगे—

पूर्व समय में गङ्गा के किनारे कनकपुर नामक एक बड़ा रम्य और उत्तम नगर था, वहां के लोग भागीरथी के जल से अपनी काया पवित्र करते थे, राज्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

का ऐसा सुप्रबन्ध था कि चहुँओर अमन चैन छाया हुआ था। उस राज्य में यदि कोई बन्ध (कारागार) देखा जाता था तो कागजों पर कवियों को प्रबन्ध रचना थी; यदि किसी प्रकार का भङ्ग (आज्ञाभङ्ग अथवा पराजय) था तो स्त्रियों की चोटियां का खुलना था, यदि कोई खल था तो यही कि कृषकों के खलिहान में अन्न भरे थे *।

पहिले समय में नागेन्द्र वासुकि के पुत्र प्रियदर्शन से राजपुत्री यशोधरा में जन्मे बड़े यशस्वी राजा कनकवर्ष वहां राज्य करते थे, सम्पूर्ण पृथ्वी का भार अपने ऊपर रख के भी राजा समस्त गुणों के निधान थे । महीपति लोभी तो थे पर यश के, न कि धन के, डरते भी थे पर पाप से, शत्रुओं से नहीं. भूखे भी थे किन्तु दूसरों के अपवाद में, न कि शास्त्रज्ञानशून्य मूर्ख थे, कोप में न्यूनता थी परन्तु उन महात्मा के प्रसाद में न्यूनता नहीं थी, मुट्ठी बंधती थी तो धनुष में दान में कदापि नहीं, वह सम्पूर्ण जगत् पर राज्य करते थे। राजा का रूप ऐसा था कि स्त्रियां उन्हें देखतेही कामव्यथा से व्याकुल हो जाती थीं।

एक समय की बात है कि शरत्काल में, जब कि उष्णता व्याप रही थी, हाथी मत्त हो रहे थे, राजहंस चहुँओर से कलरव कर रहे थे, आनन्द से प्रजा सब उत्सव मना रही थीं कि ऐसे सुहावने समय में राजा बिहार करने के निमित्त अपने चित्रप्रासाद में गये जहां कमल का सुगन्ध लिये शीतल पवन बह रहा था, वहां की चित्रकारी देख राजा उसकी प्रशंसा कर रहे थे कि इतने में द्वारपाल आकर कहने लगा "महाराज! विदर्भ देश से एक अपूर्व चित्रकार आया है, वह अपने को चित्रकारी खींचने में अद्वितीय बतलाता है। उसका नाम रोलदेव है, यह देखिये, यह विज्ञापन उसने लिखके सिंहद्वार पर आज लगा दिया था"। प्रतीहार की यह बात सुन राजा ने बड़े आदर से उसके लाने की आज्ञा दी। द्वारपाल तत्क्षण उस चित्रकार को लेके महीपति के समक्ष उपस्थित हुआ। चित्रकार भीतर आय क्या देखता है कि राजा कनकवर्ष उत्तमाङ्गनाओं के कुचों पर ओठँगे, अँगुलियों में पान का बीड़ा लिये मन से चित्रों को देख रहे हैं, सो वह

* यहां श्लेष है, बन्ध = कारागार और प्रबन्ध रचना, भङ्ग = आज्ञाभङ्ग, पराजय, और टूटना, खुलना, खल = दुष्ट और खलिहान।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रणाम कर बैठ गया, राजा ने उसका बड़ा आदर किया तब वह रोलदेव चित्रकार मधुर स्वर से कहने लगा "महाराज! आपके दर्शनों के निमित्त ही मैंने विज्ञापन लगाया था कुछ अपनी कारीगरी के अभिमान से नहीं, सो देव मेरा यह अपराध क्षमा किया जाय, अब आज्ञा दीजिये कि चित्रपट पर का खींचकर आपको दिखाऊँ जिससे कि हे प्रभो! इस कला के सीखने में मैंने जो परिश्रम किया है सो सफल हो जाय।" चित्रकार की इतनी बात सुन राजा बोले, "जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो खींचकर दिखाओ कि हमारी आंखें देखकर आनन्दित हों, भला तुम्हारी कारीगरी में किस बात का सन्देह हो सकता है।" महिपाल के इतना कहने पर पार्श्ववर्त्तियों ने कहा कि महाराज ही का चित्र खींचो और और विरूपों से क्या प्रयोजन? सो सुन अति प्रसन्न हो वह चित्रकार धरणीपति का चित्र खींचने लगा, वह लम्बी नाक, बड़े २ और लाल २ नेत्र, प्रशस्त ललाट घूंघरवाले भौंरे से काले २ कुन्तल, चौड़ा वक्षःस्थल जिस पर वाणादि अस्त्रों के (लगे) घावों के चिन्ह सुशोभित हैं, दिग्गज के शुण्ड के समान मनोहर दोनों भुज, कमर ऐसी पतली कि नापने से मुट्ठी भर हो मानों पराक्रम से पराजित हो केसरीन्द्रों के बच्चों ने भेंट दी हो; यौवनरूपी गज के बांधने के खम्भों के समान दोनों जङ्घायें, और अशोकपल्लव के समान मनोहर दोनों चरण। इस प्रकार ठीक २ चित्र देखकर सभासद लोग उस चित्रकार की अति प्रशंसा करने लगे, पश्चात् बोले कि हमलोग प्रभु को अकेले देखा नहीं चाहते, इस पट पर इन रानियों में से जिनको तुम उचित समझो महाराज की बगल में उनका चित्र खींच दो, तब हमलोगों की आंखें ठंढी होंगी।

यह सुन, उस चित्र को ऊपर से नीचे तक निरख चित्रकार बोला कि इतनी महारानियां हैं पर इनमें से एक भी महाराज के मुंह लायक नहीं हैं, मैं तो ऐसा जानता हूं कि पृथ्वी भर में इनकी जोड़ी की कोई रमणी हैही नहीं, पर हां एक राजपुत्री हैं सुनिये मैं उनकी कथा सुनाता हूं—

बिदर्भदेश में कुण्डिनपुर नामक एक श्रीसम्पन्न नगर है, वहां के राजा देवशक्ति हैं, अनन्तवती नाम्नी उनको प्राणों से प्यारी रानी हैं, इन्हीं रानी से राजा के एक कन्या जन्मी कि जिसका नाम मदनसुन्दरी है। अब मेरी तो शक्ति नहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि एक जीभ से राजकुमारी के रूप का वर्णन कर सकूं, परन्तु इतना तो मैं कहूंगा कि जब बिधाता ने राजपुत्री की सृष्टि की तब उनकी यह इच्छा हुई कि तद्वत् एक और मनोरमा ललना की रचना करूँ पर कई युगों में भी स्रष्टा वैसी रूपवती कामिनी न बना सकेंगे। बस पृथ्वी पर वही राजपुत्री रूप, लावण्य, विनय, वय और कुल से इन महाराज के तुल्य हैं। क्योंकि जब मैं वहां रहता था तो एक समय की बात है कि राजकुमारी ने अपनी दासी भेज के मुझे बुलवाय भेजा था; सो मैं उनके महल में गया था, वहां जाकर मैंने क्या देखा कि राजदुहिता कमल की शय्या पर पौंढ़ी हैं, सर्वाङ्ग में चन्दन लगा है, मृणाल का हार गले में पड़ा है, सखियां केले के पत्तों से वीजना कर रही हैं; रंग पीला पड़ गया है, शरीर दुर्बल हो गया है, ऐसा जान पड़ता था कि कामज्वर चढ़ा हो। राजदुलारी अपनी सखियों से कह रही हैं "आलियो! चन्दन के लेप और कदली के दल के पंखे झालने से क्या होगा; सखियो! तुम क्यों व्यर्थ परिश्रम कर रही हो, मेरे भाग्य मन्द हैं इससे ये सब शिशिर होके भी मुझे जला रहे हैं, सो रहने दो"। इस अवस्था में राजकन्या को देख मैं तर्क वितर्क करने लगा फिर प्रणाम कर उनके सन्मुख बैठ गया।

राजपुत्री ने कहा "हे दक्ष! जैसा मैं बतलाती हूं वैसा एक चित्र तो खींच दो," इतना कह कांपते हुए हाथ से भूमि पर लिख के दिखाती २ उन्होंने मुझसे एक अति सुन्दर युवा पुरुष का चित्र खिचवाया। महाराज! उस सुन्दर चित्र को खींचकर जब मैंने देखा तो मेरा यह विचार हुआ कि इन्होंने मुझसे साक्षात् कामदेवका ही चित्र उतरवाया है, परन्तु उस चित्र के हाथ में जब मैंने पुष्पधनुष नहीं देखा तब जाना कि यह मन्मथ तो नहीं हैं पर उन्हीं के तद्रूप कोई युवा है जिन्हें इन्होंने, निश्चय करके कहीं देखा है अथवा उनके विषय में सुना है, बस उन्हीं के प्रेम में फँसकर यह कामवाण से पीड़ित हैं। तब मैंने सोचा कि अब यहां ठहरना उचित नहीं है क्योंकि इनके पिता देवशक्ति दण्ड देने में बड़े उग्र हैं जो कहीं यह सुन पावेंगे तो कदापि न छोड़ेंगे। सो महाराज ऐसा बिचार, राजकन्या मदनसुन्दरी को प्रणाम कर मैं वहां से अपने घर चला आया राजकन्या ने बड़े आदर से मुझे बिदा किया। परन्तु देव! जब मैं वहां था तब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सखियां खुलाखुली यह बात कर रही थीं कि महाराज के गुणों को सुनकर राजपुत्री महाराज के ऊपर मोहित हो गयी हैं। सो हे देव! गुप्तरूप से नृपात्मजा का चित्र खींचकर मैं आपके पास लाया हूं; अब आपका आकार देखकर मेरा संशय दूर हो गया, बस श्रीमान् ही का चित्र राजदुहिता ने मुझसे उतरवाया था। दुबारा उनका चित्र नहीं खींच सकता यही समझ कि यद्यपि वह समान हैं तथापि मैं उनका चित्र बगल में नहीं उतार सकता हूं।"

रोलदेव की इतनी बात सुन राजा कनकवर्ष ने कहा "अच्छा उनका चित्र देखाओ तो।" तब मुसव्विर ने झोली से वह चित्रपट निकाल मदनसुन्दरी का चित्र महीपति को दिखा दिया। देखतेही राजा काम के बश में हो गये, उस चित्रकार को बहुत सा सोना दे, अपनी प्रिया का चित्र लिये हुए अन्तःपुर में चले गये। वहां उनके रूप और लावण्य को निरख उनकी आंखें अघाती नहीं थीं, अब सब राजपाट छोड़ उन्हीं का ध्यान लगाये बैठे रहते थे। ऐसा जान पड़ता था मानो मन्मथ उनके रूप से डाह रखते थे सो धैर्य छोड़ाय, समय पाकर अपने बाणों से राजा को बेध रहा है। महीपति को देखकर प्रमदाओं को जो पीड़ा होती थी, वही अब सौगुनी होके राजा को लगी है।

इस प्रकार विरहवेदना से थोड़ेही दिनों में नरेश अति दुर्व्वल हो गये, शरीर पीला पड़ गया, यह दशा देख मन्त्रियों ने उनसे पूछा कि महाराज आप को यह क्या दशा हुई जा रही है? सचिवों का ऐसा प्रश्न सुन राजा ने अपने मन की बात कह सुनाई, तदनन्तर उनके संग मन्त्रणा कर संगमस्वामी नामक एक अवसर और कार्य्य जाननेवाले तथा कुलीन और मधुरभाषी ब्राह्मण को मदनसुन्दरी के मांगने के लिये राजा देवशक्ति के पास दूतरूप में भेज दिया। ब्राह्मण अपने साथियों के साथ चला २ विदर्भदेश में पहुँचा और फिर कुण्डिनपुर में प्रविष्ट हुआ। राजा देवशक्ति के दर्शनान्तर सङ्गमस्वामी ने अपने स्वामी के निमित्त उनसे उनकी कन्या की प्रार्थना की। यह सुन राजा देवशक्ति सोचने लगे कि अन्त में कन्या का विवाह किसी न किसी के साथ करना ही पड़ेगा, भूप कनकवर्ष योग्य हैं, फिर हमारे समान भी हैं, और स्वयं मांग रहे हैं, सो मैं उन्हीं को अपनी कन्या व्याह देता हूं। इतना विचार राजा देवशक्ति ने संगमस्वामी को

बात स्वीकार कर ली और अपनी कन्या मदनसुन्दरी को बुलाकर उसका अद्भुत सौन्दर्य्य तथा नृत्य भी ब्राह्मण को दिखलाय दिया; पश्चात् कन्या के दर्शन से प्रसन्न उस ब्राह्मण को कन्यादान का बचन दे बड़े आदर सत्कार से विदा किया और अपनी ओर से भी एक दूत सङ्गमस्वामी के साथ कर दिया कि राजा कनकवर्ष से जाकर कहना कि आप लग्न निश्चित् कर व्याहने आइये। संगमस्वामी उस दूत के साथ अपने राजा के यहां पहुँचा और बोला "महाराज आपका कार्य्य सिद्ध हो गया, चलिये व्याह कीजिये। तब भूपति कनकवर्ष ने लग्न धराया और दूत का अति आदर सत्कार किया तथा दूत के मुख से बार २ मदनसुन्दरी की प्रीति की बात सुन २ उनके आनन्द का ठिकाना न रहा। तदुपरान्त अति पराक्रमी नरेश कनकवर्ष निःशङ्क हो अश्वीकल घोड़े पर संवार हो मदनसुन्दरी को व्याहने कुण्डिनपुर को चले। मार्ग में सिवाने के जंगलों में रहनेवाले, प्राणियों के प्राणों के ग्राहक सिंहादि हिंसक जन्तुओं को तथा शवरों को भी नाश करते हुए विदर्भ देश में पहुँचे और कुण्डिनपुर में आये, उधर से राजा देवशक्ति भी आय अगवानी कर लिवा ले चले। मार्ग में पुरवासिनी स्त्रियों के नेत्रों को आनन्द देते राजमन्दिर में पहुँचे जहां व्याह की सब तैयारियां हुई थीं। वहां राजा देवशक्ति से भली भांति आदर सत्कार पाय नरपति कनकवर्ष ने अपने सहचरवर्गों के साथ एक दिन विश्राम किया। दूसरे दिन राजा देवशक्ति ने अपनी कन्या मदनसुन्दरी उन्हें व्याह दी और दहेज में राज्य छोड़ और सर्वस्व दे दिया।

अब राजा कनकवर्ष एक सप्ताह वहां रहके, नई पत्नी के साथ अपने नगर को चले, कान्ता के संग राजा के पहुंचने पर घर २ मङ्गलाचार और उत्सव होने लगे, पुरवासी आनन्दमग्न हो गये, मानों चन्द्रिका सहित चन्द्र आये हों। यद्यपि राजा के और भी कई एक पत्नियां थीं, तथापि मदनप्रभा उन्हें प्राणों से भी अधिक प्यारी हुई जैसे भगवान् के रुक्मिणी जी थीं। दम्पती मनोहर पलकवाले, काम के वाण जैसे अपने नेत्रों से एक दूसरे के मुखमण्डल को निरखा करते थे।

कुछही कालोपरान्त केसरावलि से सुशोभित, मानिनियों के मानरूपी मातङ्ग को दलता हुआ बसन्तरूपी केसरी आ पहुँचा; आम की जो मञ्जरियां हैं वेही तो धनुष, और उन पर जो भौंर बैठे हैं वेही प्रत्यञ्चा हैं, सो कुसुमाकर ध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ा पुष्परूपी बाणों का सन्धान कर आ विराजे । उपवनों के समान कुलकामिनियों के चित्त को लहराता और काम को उत्पन्न करता मलयानिल मन्द २ बहने लगा। नदियों के पूर (बाढ़), वृक्षों के पुष्प और चन्द्र की कलायें, ये सब क्षीण होके पुनः आते हैं परन्तु देहधारियों का यौवन फिर नहीं लौटता। कोयल कुहुकुहु करके मानों लोगों से कह रही हैं कि मान और कलह का त्याग कर अपनी २ प्यारियों के साथ आनन्दपूर्वक रमण करो।

ऐसे आनन्दमय समय में राजा कनकवर्ष अपनी सब रानियों को साथ ले मधूद्यान में विहार करने के लिये गये। लाल रङ्ग के वस्त्रों से सुशोभित परिजनों के साथ चलते हुए। राजा की शोभा से अशोक वृक्ष लजाय गये थे, और रानियों के कलकण्ठ मधुर गान के सामने कोयल और भौंरे मात हो जाते थे। वहां वसन्त-बाग में और २ रानियों को साथ लिये हुए भी राजा महारानी मदनसुन्दरी के संग फूलों के तोड़ने इत्यादि नाना प्रकार के विहार करने लगे। बहुत देर तक उद्यान में इस प्रकार विहार करने के उपरान्त भूपति अपनी रानियों के साथ गोदावरी नदी में उतर जलक्रीड़ा करने लगे। रानियों के चन्द्रवदन को देख प्रस्फुटित पद्म लजाते थे, नेत्रों को निरख उत्पल नीचे हो जाते थे, घन पीन पयोधरों के समक्ष रथाङ्ग हार मानते थे, और नितम्बों के साम्हने नदी का तट तुच्छ जान पड़ता था। तत्पश्चात् राजमहिलायें तरङ्गिनी के मध्य में हिड़ोलने लगीं जिससे ऐसा जान पड़ता था कि तरङ्गों का प्रवाह जो है वही मानों उनका भ्रूभङ्ग है। अन्धाधुन्ध जलविहार करते २ सब रानियों के वस्त्र उतर गये, अङ्ग २ प्रत्यक्ष दर्शन दे राजा के मन को क्षुभित करने लगे सो महीपति कनकवर्ष का मन उनमें रमण करने लगा। इतने में एक भार्य्या के हेमकुम्भ तुल्य दोनों कुचों पर छींटा मारा; अब क्या, अब तो महा उपद्रव हुआ, यह देख महारानी मदनसुन्दरी को उसके ऊपर डाह होने से क्रोध आ गया, वह उद्वेग से बोली "कबतक सरिता में इस प्रकार हिलकोरे उठाये जावेंगे." इतना कह चमक के पानी से बाहर निकल आईं और कपड़े बदल, अपनी सखियों से प्रीतम का अपराध कहती हुई अपने महल में चली गयीं।

रङ्ग में भङ्ग हो गया, महीपति को विदित हो गया कि रानी क्रोध कर चली

गयो हैं सो वह झटपट जलक्रीड़ा छोड़ उनके वासगृह में पहुँचे, पिञ्जड़े के शुक क्रोध से उन्हें रोकते थे तथापि भूपति भीतर चले गये, वहां जाकर क्या देखते हैं कि महारानी क्रोधभरी, शिर नीचे किये, हथेली पर गाल रखे बैठी हैं, आंखों से स्वच्छ मोती सी आसुओं की बूंदें ढरक रही हैं। गद्गद कण्ठ से सिसुक २ ये दोहे पढ़ती जा रही हैं।

सुख तें त्य गहु मान मन, जौ नाहिं विरह सहाय॥
जौ पै विरह सहाय तौ, मान बढ़ावहु धाय॥ १॥
दुहि विधि सोच विचारि कै, हाडू रही दुक ओर॥
दुहूं ओर रहि मारहग, नहिं निस्तार बहारि ॥ २॥

रानी को इस अवस्था में देख कि जो कोप करने पर भी मनोरम जान पड़ती थीं, राजा भय और लज्जा से उनके पास चले गये और गोद में लेकर, अति विनय से मीठी २ बातें कह मनाने लगे, रानी मुंह मोड़े ही रहीं। सखियों ने व्यङ्गपूर्वक महारानी के कोप का कारण प्रगट कर दिया तब तो महाराज अपना अपराध मान महिषी के चरणों पर गिर पड़े। तब कोप के कारण जो आंसू बहते थे उनसे महीश को सींचती हुई महारानी प्रसन्न हो उनके गले में लिपट गईं, क्रोध के उपरान्त प्रसन्न हुई रानी के संग आमोद प्रमोद के साथ वह दिन बिताय रात्रि में उनके साथ सुखपूर्वक रमण कर महाराज आनन्द से सो रहे।

सोये २ राजा क्या स्वप्न देखते हैं कि एक विकराल स्त्री आई है और कण्ठ से एक लड़ी तथा माथे से एक कलङ्गी उतार ले चली गयी, इसके उपरान्त एक वेताल आया, जिसके अङ्ग प्रत्यङ्ग भिन्न २ जीवधारियों के बने थे, उसके साथ कुश्ती होने लगी सो महीपति उसे पृथ्वी पर पटक उसकी पीठ पर चढ़ बैठे, वह भूपाल को लिये दिये पक्षी के समान आकाश में उड़ गया, वहां से वेताल ने उन्हें समुद्र में गिरा दिया, पृथ्वीपति किसी प्रकार अम्भोधि से निकले और क्या देखते हैं कि गले में वह लड़ी और मस्तक पर कलङ्गी जैसी की तैसी विद्यमान हैं। इतने में महाराज की नींद खुल गई, प्रातःकाल पूर्वपरिचित एक क्षपणक *

* बुद्धधर्म्म का सन्यासी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनसे भेंट करने आया. सो राजा ने उससे उस स्वप्न का फल पूछा। सन्यासी ने कहा "महाराज अप्रिय (अनिष्ट) तो न कहना चाहिये, किन्तु जब कि मैं पूछा गया हूं तो क्यों सत्य न बतलाऊँ। सुनिये मैं स्वप्न का फल कहता हूं, यह जो आपने देखा कि एक लड़ी तथा कलँगी हरण कर ली गई है इसका फल तो यह है कि महाराणी और राजकुमार से आपका वियोग होगा, एक लड़ी और कँलगी पाकर जो आप समुद्र से बच निकले, इसका तो फल यह होगा कि दुःख के अन्त हो जाने पर महाराणी पुत्र सहित आपको मिल जावेंगी।" क्षपणक की ऐसी बात सुन राजा ने कुछ शोच कर कहा "महाराज मेरे तो पुत्र हैही नहीं, वह होय तो सही।" इतने में किसी आये हुये रामायणपाठी से भूपाल ने सुना कि पुत्र की प्राप्ति के लिये महाराज दशरथ ने कैसे २ कष्ट उठाये थे, उसी कथा के श्रवण से महीपति कनकवर्ष के मन में भी पुत्रप्राप्ति की चिन्ता हुई, सो सन्यासी के चले जाने पर वह दिन भर उदासही बने रहे।

रात्रि में अकेले पलङ्ग पर पड़े शोक के मारे नींद महाराज को नहीं आती थी, इतने में अकस्मात् क्या देखते हैं कि द्वार बन्द का बन्दही है और एक स्त्री भीतर चलीआई, जो देखने में विनीत और सौम्य जान पड़ती थी। देखतेही राजा ने आश्चर्य से उठके उसको प्रणाम किया, वह उन्हें आशीष देकर कहने लगी, "पुत्र! मैं नागराज वासुकि की बेटी, तुम्हारे पिता की जेठी बहिन रत्नप्रभा हूं, मैं तुम्हारी रक्षा के लिये अदृश्य रूप से सदा तुम्हारे पासही रहती हूं, आज तुमको उदास देखकर प्रत्यक्ष हुई हूं. हे वत्स! मैं तुम्हारी उदासी नहीं देख सकता सो बतलाओ तुम चिन्तित क्यों हो?" फूफू की इतनी बात सुन राजा बोले "अम्ब! मैं धन्य हूं, कि आपका मुझ पर ऐसा अनुग्रह है, मेरे निर्वेद का यही कारण है कि मेरे पुत्र नहीं है पूर्व समय में राजर्षि दशरथ इत्यादि भी स्वर्ग प्राप्ति की कामना से पुत्र की इच्छा रखते थे तो बूआ! मुझसे व्यक्ति कब न पुत्र की इच्छा करें।" अपने भतीजे कनकवर्ष नृपति का ऐसा बचन सुन वह रत्नप्रभा नागिनी बोली कि पुत्र! यदि यही बात है तो मैं एक उपाय बतलाती हूं उसे तुम करो, तुम जाके पुत्रप्राप्ति के लिये स्वामिकार्त्तिकजी की आराधना करो, विघ्न करने के लिये कुमार की जो दुःसह धारा तुम्हारे शिर पर गिरेगी, उसे मेरे प्रभाव से तुम सह लोगी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्योंकि तुम्हारे शरीर के भीतर मैं प्रविष्ट रहूंगी, तथा और २ जो विघ्न होंगे उन्हें जीत कर अन्त में अपना अभीष्ट वर पाओगे। इतना कह वह नागिनी अन्तर्धान हो गई और राजा ने बड़े हर्ष से रात बिताई।

प्रातःकाल होने पर, राजकाज का भार मन्त्रियों के ऊपर रख राजा पुत्रप्राप्ति की वाञ्छा से स्वामिकुमारजी के पास चले, वहां पहुँच महाप्रभु की आराधना में तीव्र तप करने लगे। शरीर के अभ्यन्तर वह नागिनी बैठी थी इससे उनका बल और बढ़ गया था। इतने में राजा के सिर पर स्वामिकार्तिकजी की वज्र सी वारिधारा लगातार गिरने लगी, परन्तु इनके शरीर में तो नागी थी उसी के बल से सहते गये। तब और अधिक विघ्न मचाने के निमित्त षड़ानन ने हेरम्ब को भेजा, उन्होंने वारिधारा के बीच अत्यन्त उग्र महा विषैले अजगर की वृष्टि कर दी, परन्तु राजा तब भी अटल बने रहे। तब देवों के भी अजेय विनायक स्वयं आये और राजा के उरःस्थल पर दन्ताघात करने लगे। तदनन्तर राजा कनकवर्ष उन गणाधीश को दुर्जय जानकर, उनके आघातों को सहते गये, फिर विघ्नराज की स्तुति करने लगे।

दोहा।

लम्बोदर तोहिं नमत हौं, सिधि निधि देत निहाल॥
कुम्भोपम वपु विघ्न के, ईश विभूषण व्याल॥ १॥
लोलहिं विधि-आसन कमल, कर गहि दीन्ह कँपाय॥
जयति गजानन निरखि जेहिं, चतुरानन घबराय॥ २॥
देव असुर औ मुनिन के, काज न कबों सराय॥
तीन लोक के शरण शिवप्रिय जौ तुम न सहाय॥ ३॥

श्लोक।

घटोदरः शूर्पकर्णो गणाध्यक्षो मदोत्कटः।
पाशहस्तोऽम्बरीषश्च जम्बकस्त्रिशिखायुधः॥ १॥ (१)

(१) घटोदर, शूर्पकर्ण, गणाध्यक्ष, मदोत्कट, पाशहस्त, अम्बरीष, जम्बक और त्रिशिखायुध ये आठ गणेशजी के नाम हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा।

इत्यादिक अघहारि जे, साठ आठ तुव नाम ॥
थान थ न पे नियत हैं, जपें देव सब याम ॥ ४ ॥
जे सुमिरत तुहिं स्तुवत पुनि, तिनिकर भय बिनसात ॥
रण नृपकुल तस्कर जुआ, अनल हिंस्र पशुजात (२) ॥ ५ ॥

इस प्रकार की स्तुति तथा और स्तवों से स्तवन कर राजा कनकवर्ष ने श्रीविघ्नेश्वर की पूजा किई, तब विघ्नजित् विघ्नराज बोले "राजन्! हम तुष्ट हैं, अब विघ्न न करेंगे, तुम पुत्र प्राप्त करो" इतना कह गणाधीश अन्तर्धान हो गये।

तदुपरान्त धाराके सहलनेवाले महीपति से महाप्रभु कार्त्तिकेयजी ने कहा "हे धीर! हम तुमसे सन्तुष्ट हैं; सो अभीष्ट वर मांग लेओ"। यह सुन अतिप्रसन्न हो भूपति बोले "हे देव! आपके प्रसाद से मेरे पुत्र होवे।" तब बर्हिबाहन बोले "एवमस्तु, राजन्! हमारे गण का अंग तुम्हारा पुत्र होके जन्मेगा, उसका नाम हिरण्यवर्ष होगा"। इतना कह कुछ विशेष प्रसाद करने की इच्छा से स्वामी कार्त्तिकेय जीने राजाको अपने मन्दिर के भीतर बुलाया। इतने में भूपतिके शरीर में अदृश्य रूप से जो नागिनी बसी थी सो निकल पड़ी क्योंकि शापके भयसे स्त्रियां कुमार के घरमें नहीं जातीं। तब राजा कनकवर्ष अपने मानुष तेज से पावनकारी उन देव के मन्दिर में पैठे, परन्तु नागिनी के निकल जाने से अब तो पृथ्वीनाथ का वैसा तेज न रहा जिसे देख षड़ानन देव सोचने लगे कि, हैं यह बात क्या है? पश्चात् ध्यानकर देखा तो उनको बिदित होगया कि ओहो इसके भीतर नागी थी, इसी से ऐसे विषम व्रत में यह टिका रहा; तबतो उनका कोप भड़का सो उन्होंने झट शाप दे दिया कि ऐ दुर्दान्त मानव! देख तूने बहाना कर ऐसा कार्य्य किया, इससे हम यह शाप देते हैं कि तेरे पुत्र तो होगा पर जन्मतेही तुझसे बिछुड़ जायगा और तेरी पटरानी से भी तेरा वियोग होगा। बज्रपात के समान दारुण यह शाप सुन राजा तनिक भी व्यग्र न हुए, वह स्वयं महाकबि थे, सो मोह त्याग सूक्तों से देवाधिदेव कार्त्तिकेयजीकी स्तुति करने लगे। तब राजा का सुभाषित स्तवन सुन षण्मुख बोले "राजन्! तुम्हारे शापका उद्धार भी हम बतलाये देते हैं, स्त्री और पुत्र का वियोग तुम्हे एक वर्ष रहेगा; पश्चात् तीन अकाल मृत्यु से बचके तुम फिर

(२) उत्पन्न हुआ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उन्हें पाओगे।" इतना कह षड़ानन चुप होगये। तब राजा कनकवर्ष स्वामिकार्त्तिकजी को प्रमाण कर उनदेव के प्रसादरूप। सुधा से छके अपने नगर में आये।

तदनन्तर कुछ कालोपरान्त महाराज की पटरानी मदनसुन्दरी के एक पुत्र हुआ जैसे चन्द्रमा की ज्योत्स्ना से अमृत; अब राजा और रानी पुत्र का मुख निरख २ फूले नहीं समाते थे। भूपति ने बड़ा उत्सव मनाया और इतना धन लुटाया कि पृथ्वी पर अपना नाम "कनकवर्ष" सार्थक करदिया।

इस प्रकार निर्विघ्न पांच रातें बीतगईं, छठी की रात्रि में सूतिकागृह में कठिन पहरा पड़ रहा था कि अकस्मात् मेघ घिर आये, धीरे धीरे मेघ ऐसे बढ़े कि समस्त आकाश मेघाच्छन्न होगया, जैसे असावधान नृपति के राज्य को उपेक्षित शत्रु घेर लेता है। मदकी धारा के समान पानी की धारा छोड़ता हुआ वायु रूपी मस्त मतङ्ग इधर उधर दौड़ने लगा (अर्थात् प्रचण्ड पवन बहने लगा) और मूसलधार वृष्टि भी होने लगी। इसी अवसर में सिकड़ीबंद द्वारको खोल एक भयंकर स्त्री हाथ में तलवार लिये सौरी में घुस गई, रानी उस समय बच्चे को दूध पिला रही थीं, सो वह स्त्री सौर की सब स्त्रियों को पर मोहिनी डाल, महारानी के स्तन से बच्चे को छुड़ा ले भागी। 'हाय २ मेरे लालको राक्षसी हर ले गयी" इस प्रकार कहती हुई रानी ऐसे घोर अन्धकार में भी उस स्त्री के पीछे दौड़ीं। वह स्त्री दौड़ी २ गई और बच्चे को लिये दिये एक सरोवर में डूब गयी, उसी के पीछे बालक के प्रेम से रानी भी कूद पड़ीं। इतने में मेघ विलाय गये और यामिनी भी बीत गयी। सौरी में रोना पीटना मच गया था, सो सुन राजा कनकवर्ष तुरंत वहां आये और सूतिकागृह को प्रिया और पुत्रसे शून्य देख मूर्छित होगये; पीछे चैतन्य होनेपर "हा देवि हा वत्स!" कह २ विलाप करने लगे, उन्हें स्मरण आया कि मुझे शाप मिला है और उसका अन्त एक वर्ष में होगा, सो वह कहने लगे 'भगवन् स्कन्द! आपने मुझ मन्दभाग्य को जब वर दिया तो उसके साथ शाप क्यों लगादिया, यह तो वही बात ठहरी जैसे विषमिश्रित अमृत का देना! हा! प्राणों से प्यारी देवी मदनसुन्दरी के बिना सहस्र युगों के समान यह एक वर्ष का समय मैं कैसे बिताऊंगा"। इस प्रकार कह २ राजा विलाप कर रहे थे कि सब वृत्तान्तजाननेवाले मन्त्री उन्हें समुझाने बुझाने लगे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु महीपति को धीरज न हुआ क्योंकि धैर्य्य तो महाराणी मदनसुन्दरी के साथ ही पयान कर गया था।

थोड़ेही दिनों के उपरान्त मदन के आवेग से व्याकुल हो महिपाल नगर से निकल गये और उदासीन हो घूमते घामते विन्ध्याकानन में पहुंचे, तहां मृगछौनों के नेत्र देख २ प्रियाको आंखे याद आने लगीं; चमरी के भुब्बों से प्यारी के केशों का स्मरण होता था, हथिनियों की चाल से प्राणप्यारी मदनसुन्दरी की ठवनि चेत पर चढ़ जाती थी; इस प्रकार शान्ति को कौन कहे उनकी कामाग्नि और धधक उठी। घूमते २ प्यास और धूप से व्याकुल होगये, मुंह में फेफरी पड़गयी; चलते २ बिन्ध्याचल की तराई में पहुंचे, वहां झरने का जल पी एक पेड़ की छाया तले जड़ पर बैठ विश्राम करने लगे कि इतने में लम्बी अयाल छटकाये एक सिंह विन्ध्य पर्व्वत की गुहा से अट्टहास करता हुआ निकला और घात करने को इच्छा से राजा पर झपटा; उसी चण आकाश से हाथ में तलवार लिये कोई विद्याधर उतरा, उसने झपट कर एकही बार में उस सिंह के दो टुकड़े कर दिये; फिर राजा के पास जाके उस खेचर ने पूछा 'महाराज कनकवर्ष यहां आपका आना कैसे हुआ?" यह सुन चैतन्य हो महीपति बोले "भाई मैं तो विरहानल से जला जा रहा हूं कहो तुम मुझे कैसे चीन्हते हो?" यह सुन विद्याधरने उत्तर दिया कि महाराज! पूर्व्वकाल में जब मैं मनुष्य था उस समय बन्धुमित्र नामक परिव्राजक (सन्यासी) होके आपके नगर में रहता था; मैंने बेताल के सिद्ध करने में बड़ी नम्रता से आपसे सहायता प्रार्थना की थी आप मेरे सहायक हुए थे सो वह बेताल सिद्ध होगया उसी के प्रभाव से मैं विद्याधर हुआ हूं; इसी से मैंने आपको पहिचान लिया, और आपका प्रत्युपकार करना विचारा, इसी अवसर में देखा कि यह केसरी आपको मारने लपका, सो हे देव! मैंने उसेही मारडाला और अब मेरा नाम बन्धुप्रभ हुआ है। विद्याधर की ऐसी बात सुन अति प्रसन्न हो महीपति कनकवर्ष बोले "भाई अब मुझको स्मरण हुआ, और तुमने मित्रता भी निबाही तो अब हे सुहृद यह बतलाओ कि रानी और पुत्र से मेरा मिलाप कब होगा? महीश की ऐसी बात सुन विद्याप्रभाव से जानकर विद्याधर बन्धुप्रभ ने राजा को उत्तर दिया कि राजन्! भगवती विन्ध्यवासिनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

के दर्शन कर आप अपनी पत्नी तथा पुत्र को प्राप्त करेंगे, आप अपनी सिद्धि के लिये जावें और अब मैं निजलोक को चला। इतना कहके विद्याधर के चले जाने पर पृथ्वीनाथ को कुछ धीरज हुआ तब वह उठकर महामाया अविन्ध्यवासिनी के दर्शनों को चले।

राजा चले जा रहे थे कि मार्ग में झूमता हुआ एक बनैला हाथी सूंड़ उठाया उनपर दौड़ा, उसे देख राजा गड़हा गड़ही मे होते भाग चले, हाथी ने भी उनको पिछियाया और एक गड़हे में गिर पड़ने से मर गया। चलने और परिश्रम करने से राजा थक गये किन्तु धीरे २ चलते २ थके मांदे एक सरोवर पर जा पहुँचे जो सीधे मृणालदण्ड पर फले हुए कमलों से परिपूर्ण था; स्नान कर, मृणाल खाय जल पी कर, एक वृक्ष के तले बैठ विश्राम करने लगे कि क्षणभर मे नींद आ गई। इतने मे उसी मार्ग से शिकार कर शबर लौटे आ रहे थे कि सोये हुए नृपति पर उनकी दृष्टि पड़ गई. वे लोग उन्हे सुलक्षण देख भगवती को भेंट चढ़ाने के उद्देश्य से, बान्धकर अपने अधीश्वर मुक्ताफल के पास ले गये। शबरों का अधीश उन्हे एक प्रशस्त बलि समझ बलिदान करने के लिये श्रीविन्ध्यवासिनी जी के मन्दिर मे ले गया। राजा ने महामाया जगदम्बा को देखते ही उन्हे प्रणाम किया सो जगज्जननी के अनुग्रह और स्कन्दजी के प्रसाद से उनका बन्धन खुल गया यह देख शबराधिपति को बड़ाही आश्चर्य हुआ, उसने जाना कि इनपर भगवती का यह अनुग्रह है, यह सोच राजा को बध करने से छोड़ दिया। इस प्रकार धरणीपति कनकवर्ष को यह तीसरी अपमृत्यु भी टली और शाप का वर्ष भी पूरा हो गया।

इतने में उनकी फूफी वह नागिनी रानी मदनसुन्दरी तथा राजकुमार को लेके वहां आ पहुँची और राजा से कहने लगी, "राजन्! मुझको स्वामिकार्त्तिकजी का शाप मालूम था सो मैंने किसी युक्ति से इन्हें लेजाकर अपने घर में रक्खा था, हे पुत्र कनकवर्ष! अपनी प्रिया तथा पुत्र को ग्रहण करो, और पृथ्वी का राज्य भोगो, अब तुम्हारा शाप छूट गया"। यह सुन राजा ने शिर झुका के अपनी बूआ को प्रणाम किया और वह नागिनी वहीं अन्तर्धान हो गई स्त्री और पुत्र को पाय महीपति सोचते थे कि मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तदनन्तर राजा और रानी का जो बहुत दिनों के उपरान्त संयोग हुआ इससे दोनों गले लग रोने लगे, आनन्द के मारे नेत्रों से आंसुओं की ऐसी धारा चली कि विरह का जो क्लेश था वह गल के बह गया। तब शबरेन्द्र मुक्ताफल ने पहिचाना कि यह तो हमारे पति पृथ्वीनाथ कनकवर्ष हैं, वह उनके पैरों पर गिर पड़ा और अपना अपराध क्षमा कराय उन्हें अपने नगर में ले गया। वहां शवराधीश्वर ने अपनी शक्ति के अनुसार नाना प्रकार के उपचारों से राजा रानी और राजकुमार की पहुनई की। वहीं रहकर राजा ने दूत भेज अपने श्वशुर देवशक्ति तथा अपने नगर से निज सैन्य को बुला भेजा।

इसके उपरान्त अपनी प्रिया रानी मदनसुन्दरी तथा पुत्र को, कि जिसका नाम शरजन्मा ने हिरण्यवर्ष बतलाया (रक्खा) था हथिनी पर बैठाय आगे कर पीछे ससुर सहित राजा कनकवर्ष शबराधीश के नगर से ससुर के घर को चले। कई दिनों तक चलने के उपरान्त विदर्भदेशस्थित कुण्डिनपुर में अपने ससुर के घर पहुँचे, और श्वशुर से अति सत्कार पाय रानी और पुत्र तथा सैन्य सहित कुछ दिन वहां रहे। पश्चात् वहां से भी प्रस्थान कर क्रमानुसार चलते २ अपने नगर कनकपुर में पहुँचे, तहां पुरवासिनी स्त्रियां चिरकाल से उत्सुक नेत्रों द्वारा उनके दर्शन करने लगीं। तब रानी मदनसुन्दरी और पुत्र के साथ राजा अपने महल के पैठे मानों शोभा और प्रमोद के साथ मूर्तिमान् उत्सव आया हो। तहां रानी मदनसुन्दरी के मस्तक पर मुकुट रख राजा कनकवर्ष ने उनका अभिषेक करवाया और उसे सब रानियों की शिरोमणि पटरानी बनाय इस अभ्युदय के उत्सव में समस्त प्रजा को दान मान से सन्तुष्ट किया।

बसन्ततिलक।

देवी तथा सुवन सङ्ग उमङ्ग पूर्यो,
नाहीं लख्यौ जु पुनराय वियोग-दुःखै।
निष्कण्टकै कनकवर्ष महीश एकै,
चारौं समुद्र लगि भूमहँ राज कीन्ह्यो।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा ।

श्रीनरवाहनदत्त तब, अलङ्कारवति सङ्ग ।
मंत्री गोमुख तें कथा, सुनि अति लहेउ उमङ्ग ॥

छठवां तरङ्ग ।

तदनन्तर अपनी प्रियतमा के साथ राजकुमार नरवाहनदत्त गोमुख की कही कथा सुन अति प्रसन्न हुए, परन्तु दूसरी ओर जो देखते हैं तो मरुभूति डाह के मारे उदास बैठे हैं तब वह उन्हें प्रसन्न करने के लिये बोले कि मरुभूति तुम उदास क्यों हो, तुम भी क्यों नहीं कोई कथा सुनाते। यह सुन सन्तुष्ट हो उन्होंने कहा "बहुत अच्छा, मैं कथा सुनाता हूं", इतना कह मन्त्री मरुभूति ने यों आरम्भ किया कि कहने लगे।

पूर्वकाल की बात है कि राजा कमलवर्म्मा के नगर कमलपुर में चन्द्रस्वामी नामक एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहता था, ब्राह्मण जैसा विद्वान् था वैसा ही लक्ष्मीपात्र भी था, उसकी पत्नी का नाम देवमति था वह अति विनीत और अनुकूल थी। उस पत्नी से उस ब्राह्मण को एक पुत्र जन्मा, जिसके जन्मते ही यह आकाशवाणी हुई कि हे चन्द्रस्वामी, तुम अपने पुत्र का नाम महीपाल रखना, क्योंकि यह राजा होकर बहुत दिनों तक पृथ्वी का पालन करेगा। यह दिव्य वाणी सुन चन्द्रस्वामी ने बड़ा उत्सव किया और अपने सुत का नाम महीपाल रक्खा। क्रमानुसार महीपाल बढ़ाने लगा और शस्त्र अस्त्र की शिक्षा के साथ २ उसे सब प्रकार की विद्यायें भी सिखा दी गयीं। इसी अवसर में चन्द्रस्वामी की भार्य्या देवमति एक कन्या भी जनी, वह कन्या सर्वाङ्ग सुन्दरी थी, उसका नाम चन्द्रवती पड़ा; अब महीपाल और चन्द्रवती दोनों भाई बहिन अपने पिता के घर में बढ़ने लगे।

एक समय ऐसा हुआ कि अनावृष्टि से बड़ा भारी अकाल पड़ा, अन्न के बीज जो खेतों में बोये थे सूर्य्य की गर्मी से वहीं झुलस गये। ऐसे दुर्दिन में राजा भी डाकू का काम करने लगा अर्थात् धर्म्म का मार्ग छोड़ अधर्म्म द्वारा प्रजाओं से धन खींचने लगा। इस प्रकार देश में जब हलचली पड़ गयी तब देवमति ने अपने पति चन्द्रस्वामी से कहा कि आओ हमारे नैहर चले चलो, हमलोग यह नगर छोड़ दें नहीं तो हमारे ये दोनों बच्चे यहां मर जावेंगे। यह सुन चन्द्र-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्वामी ने अपनी गृहिणी से कहा, "प्रिये! ऐसा मत कहो, क्योंकि अकाल के समय घर छोड़ कर भाग जाने से बड़ा पाप होता है, बच्चों को जो कहती हो सो मैं मानता हूं, मैं अभी उन्हें तुम्हारे पिता के घर रख आता हूं, तुम यहीं रहो मैं शीघ्रही लौट आऊँगा।" ब्राह्मणी बोली "बहुत अच्छा", तब चन्द्रस्वामी अपनी भार्य्या को घरही में रख. पुत्र महीपाल तथा कन्या चन्द्रवती को लेके अपने ससुर के घर चला, चलते २ तीन चार दिनों में एक बड़े भारी जंगल में पहुँचा जहां का बालू सूर्य्य की किरणों से तप रहा था, और जहां के बड़े २ वृक्ष सूख के काठ मात्र रह गये थे। वहां दोनों लड़कों को बड़ी जोर से प्यास लगी सो चन्द्र-स्वामी उन्हें एक जगह बैठाय पानी ढूंढ़ने के लिये बहुत दूर निकल गया। वहां अपने दलबल सहित शबरों का राजा सिंहदंष्ट्र अकस्मात् उसके आगे आ निकला, वह किसी कार्य्य से कहीं जा रहा था; तब उस भिल्ल ने ब्राह्मण को देख उससे पूछा, और जब उसे विदित हुआ कि ब्राह्मण जल की खोज करता था तब संकेत द्वारा अपने नौकरों से कहा कि इसे किसी जलाशय पर ले जाओ। यह सुन दो तीन शबर अपने स्वामी का अभिप्राय समझ उस बिचारे चन्द्रस्वामी को एक गांव में ले गये और वहां उन्होंने उसके हाथ पैर बांध दिये। चन्द्रस्वामी ने पूछा कि मेरे साथ ऐसा वर्ताव क्यों करते हो, उन्होंने उत्तर दिया कि तुम बलिदान चढ़ाये जाओगे, यह सुनतेही ब्राह्मण के होश उड़ गये, वह जंगल में पड़े अपने बच्चों की सुरत कर बिलखने लगा "हा महीपाल! हा बच्चो चन्द्रवति! क्यों मैंने तुम दोनों को निर्जन वन में छोड़ सिंह व्याघ्रों का अहेर बनाया! और चोरों से अपना घात कराया; अब कोई उपाय नहीं है कि मैं यहां से निस्तार पाऊँ"। इस प्रकार कह २ वह ब्राह्मण विलाप कर रहा था कि इतने में उसकी दृष्टि आकाश में सूर्य्य नारायण पर पड़ी, तब वह अपने मन में कहने लगा कि आह! व्यर्थ मैं रो रहा हूं, अब मोह को त्याग अपने प्रभु की शरण गहता हूं। इतना कह वह विपन्न ब्राह्मण भगवान् आदित्य की स्तुति करने लगा।

दोहा।

पर अरु अपर अकाश महँ, राजैं ज्योती धाम॥
बाहर भीतर व्यापि तम, नाशैं तिहिँ परनाम॥१॥

त्रिभुअनव्यापी विष्णु तुम, शिव आशिषदातार ॥
सुप्त विश्व बोधित करहु, तुम हौ सिरजनहार ॥ २ ॥
अप्रकाश परकाश ये, करैं वन्हि शशि दोउ ॥
यहि लगि तिन्ह मह तेज रवि, राज अलक्षित होउ ॥ ३ ॥
दस्यु होत बलहीन अरु, भागत सकल सुरारि ॥
गुणिजन पावैं मोद गति, जब तुम उवहु तमारि ॥ ४ ॥
तीन लोक के दीप इक, शरणागतहिँ उबारि ॥
दुःख रूप तम मोर यह, नाशहु दया बिचारि ॥ ५ ॥

इस प्रकार भक्ति से वह द्विजवर चन्द्रस्वामी भगवान् सूर्य्यनारायण की स्तुति कर रहा था कि आकाशवाणी हुई, "चन्द्रस्वामिन् ! हम तुमसे अति प्रसन्न हैं, यह निश्चय रक्खो कि तुम बध न किये जाओगे, और हमारे प्रसाद से तुम्हारे पुत्रादि सब फिर मिल जावेंगे"। इस प्रकार आकाशवाणी सुन वह ब्राह्मण चन्द्र स्वामी उसपर विश्वास कर वहीं पड़ा रहा और शवर लोग उसके स्नान भोजन इत्यादि का प्रबन्ध कर दिया करते थे।

उधर वह महीपाल अपनी बहिन के साथ बैठा पिता की बाट जोह रहा था जब पिता को गये बहुत विलम्ब हुआ और वह देर तक न लौटा, तब वह यह शोचकर कि पिता पर कोई विपत्ति अवश्य पड़ी है, बिलख २ रोने लगा। इतने में सार्थधर नामक एक बड़ा महाजन उसी राह से आ निकला, बच्चे को रोता देख उसने उसके रोने का कारण पूछा, सब वृत्तान्त सुन उसको दया आई, बालक को होनहार देख वह सार्थवाह उन दोनों भाई बहिनों को धीरज दे अपने देश ले गया, वह बणिक इन्हें अपने सन्तान के समान मानने लगा, और वह महीपाल बाल्यावस्थाही में हवनादि की क्रिया में नियुक्त हो सुखपूर्वक रहने लगा।

एक समय की बात है कि तारापुर के राजा ताराधर्म्म का मन्त्री द्विजोत्तम अनन्तस्वामी किसी कार्य्य से कहीं जा रहा था, मार्गही में इस वणिक् का घर पड़ा, उसका यह मित्र था सो वह ब्राह्मण अपने हाथी घोड़े और पैदलों के साथ इसके घर उतरा। उस समय महीपाल जप इत्यादि कार्य्य में लगा हुआ था,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जब अनन्तशर्म्मा कुछ बिश्राम कर चुका तब उसकी दृष्टि इस शुभाकृति बालक महीपाल पर पड़ी सो उसने इसका वृत्तान्त पूछा। अनन्तशर्म्मा निःसन्तान था, जब उसे जान पड़ा कि यह बालक हमारा सवर्ण है तब उसने महीपाल और उसकी बहिन को अपने मित्र उस महाजन से मांग लिया, वणिक् ने भी उन्हें दे दिया, सो अनन्तस्वामी उन दोनों बालकों को ले तारापुर को चला गया, मंत्री ने महीपाल को अपना पुत्र बनाय लिया सो वह महीपाल विद्या और धन से परिपूर्ण हो उस मन्त्री के घर में रहने लगा।

इधर पुत्र तो राजमन्त्री का पुत्र हो गया पर उधर पिता भिल्लों के यहां बँधा पड़ा है, अब एक दिन की बात है कि भिल्लों का अधीश्वर सिंहदंष्ट्र चन्द्रस्वामी के पास जाकर बोला "हे ब्राह्मण देवता! आज भगवान् सूर्य्यनारायण ने स्वप्न में मुझे आज्ञा दी है कि ब्राह्मण का बध मत कर किन्तु बड़े आदर मान से उसे छोड़ दे, सो अब आप उठिये और जहां आपकी इच्छा हो चले जाइये"। इतना कह उसने ब्राह्मण को छोड़ दिया और बहुत से मोती तथा कस्तूरी दे विदा किया और जंगल के बाहर तक पहुँचाने के लिये साथ में नौकर कर दिया। वह ब्राह्मण (चन्द्रस्वामी) छुटकारा पाय वहीं आया जहां बच्चों को छोड़ गया था, पर वहां कहां पता! तब अपने पुत्र महीपाल तथा उसकी छोटी बहिन चन्द्रवती को न पाय वह बिचारा उन दोनों को खोज में इधर उधर घूमने लगा, घूमते२ समुद्र के किनारे जलपुर नामक नगर में पहुँचा और एक ब्राह्मण के घर में अतिथि होके उतरा। जब खा पीकर सुचित्त हो उसने प्रसङ्गवश अपना सब वृत्तान्त कह सुनाया तो गृहस्वामी ने चन्द्रस्वामी से कहा कि कुछ दिनों की बात है कि यहां कनकवर्म्मा नामक बनिया आया था किसी जंगल में उसे (अपनी) बहिन के साथ एक ब्राह्मण का बालक मिला था, वह उन दोनों सुन्दर बच्चों को लेके यहां से नारिकेल महाद्वीप को चला गया, परन्तु उनका नाम उसने नहीं बतलाया। यह सुन चन्द्रस्वामी सोचने लगा कि हो न हो वे मेरेही दोनों लाल हैं। यह सोच उसने उस द्वीप में जाने का निश्चय किया, किसी प्रकार रात बिता सवेरा होतेही साथी खोजने लगा कि कोई उस द्वीप का जानेवाला मिले तो उसके साथ चलूं, ढूंढ़ते २ विष्णुशर्म्मा नामक एक बनिया मिलही गया, वह भी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नारिकेल द्वीप को जानेवाला था, सो उससे मेलमिलाप कर वह ब्राह्मण चन्द्र-स्वामी अपने बच्चों के स्नेह से जहाज पर सवार हो उक्त द्वीप को चला। वहां पहुँच के पता लगाने लगा. तब वहां के रहनेवाले महाजनों ने कहा कि यह बात तो ठीक है कि कनकवर्म्मा नामक वणिक् यहां आये थे और उनके साथ जंगल में मिले हुए दो सुन्दर २ ब्राह्मण के बालक भी थे, पर वह उनके साथ यहां से कटाह द्वीप को चले गये। उसी समय दानवर्म्मा नामक एक बनिया जहाज लदाय कटाह द्वीप को जाता था सो ब्राह्मण उसी के साथ सवार हो चला, वहां पहुँचने पर उसे विदित हुआ कि कनकवर्म्मा वहां से भी कर्पूर द्वीप को चला गया था। इसी प्रकार वह ब्राह्मण बनियों के साथ क्रमानुसार कर्पूर, सुवर्ण और सिंहल-द्वीपों में गया पर कहीं वह महाजन न मिला। परन्तु सिंहल द्वीप में वहां के रहनेवालों से यह पता लगा कि कनकवर्मा अपने नगर चित्रकूट को चला गया। तब कोटीश्वर नामक बनिए के साथ सवार हो चन्द्रस्वामी चित्रकूट को चला, समुद्र पार कर, उतर के नगर में पहुँचा, वहां कनकवर्मा को पाकर पुत्रों के दर्शन के लिये अत्यन्त उत्कण्ठा से उसने आद्योपान्त अपना वृत्तान्त कह सुनाया। तब कनकवर्मा ने इसका दुःख देख, जिन ब्राह्मण बालकों को जंगल से लाया था ब्राह्मण को ला दिखाया, पर हाय, चन्द्रस्वामी क्या देखता है कि ये दोनों मेरे बालक नहीं हैं ये तो किसी दूसरे के सन्तान हैं। तब वह शोक से व्याकुल हो हाय मार रोने और विलख २ कहने लगा कि हा! इतना घूमने पर भी मैंने न तो अपने पुत्रद्वों को पाया और न कन्या ही को!; हा! विधाता ने भी कैसा कुत्सित प्रभु सा आचरण किया है कि आशा देके उसे पूर्ण न किया, व्यर्थही उस दुरात्मा ने मुझे इतना भटकाया! इस प्रकार कह २ वह अति बिलाप करने लगा, यह देख कनकवर्मा ने उसे बहुत कुछ समझाया। तब शोक से चन्द्रस्वामी बोले, "पृथ्वी भर घूम-२ अपने पुत्रों को ढूंढूंगा इतने अवसर में यदि उनको न पाऊँ तो गङ्गा किनारे शरीर त्याग दूंगा।" उसकी ऐसी बात सुन वहां के किसी ज्ञानी ने उससे कहा "ब्राह्मण! जाओ, भगवती नारायणी के प्रसाद से तुम अपने बच्चों को पाओगे" सो सुन चन्द्रस्वामी अति प्रसन्न हो, बनियों से भली भांति पूजा पाय भास्कर भगवान् की कृपा स्मरण करता हुआ बिदा हुआ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब ब्राह्मणों को दिये हुए स्थानों में, गावों में और नगरों में वह ब्राह्मण अपने बच्चों को खोजता फिरा, इस प्रकार घूमता २ एक दिन सायङ्काल में किसी बन में पहुँचा जहां बड़े ऊँचे २ बहुत से वृक्ष लगे थे, अब तो रात वहीं किसी न किसी प्रकार से बितानी पड़ी; फल फूल खाय, जल पी, सिंह और बाघ इत्यादि पशुओं के भय से एक वृक्ष पर चढ़ बैठ रहा । निद्रा तो उसे आई नहीं, थी आधी रात के समय क्या देखता है कि नारायणी जिसमें मुख्य हैं ऐसा एक महान् मातृचक्र * अपने अनुरूप नाना प्रकार के उपहारों को लेके वृक्ष के नीचे आ उपस्थित हुआ है और भैरव देव के आने की प्रतीक्षा कर रहा है। जब बहुत देर हो गयी और भैरवजी नहीं आये तब सब मातायें नारायणीजी से पूछने लगीं कि आज भैरवजी बिलम्ब क्यों कर रहे हैं, यह सुन भगवती नारायणी मुस्कुरा के रह गयीं, कुछ बोलीं नहीं, तब तो सब मातायें हठ कर बार २ पूछने लगीं, तब भगवती नारायणी बोलीं कि हे सखियो ! यद्यपि यह बात लाज की है तौभी मैं कहती हूं , सुनो ।

यहां सुरपुर में सुरसेन नामक एक राजा हैं, तिनकी कन्या विद्याधरी अपने रूप और सौन्दर्य्य के कारण प्रसिद्ध है। जब कन्या समर्थ हुई तो राजा सुरसेन विचारने लगे कि किसके साथ इसका व्याह करूँ; कुछ कालोपरान्त उनके मन में यह बात आई कि राजा बिमल का पुत्र जो प्रभाकर है वह इसके समान ही है सो उसीसे इसका व्याह कर देना चाहिए । होते २ यह बात विमल के कानों में भी पड़ी कि सुरसेन अपनी पुत्री का विवाह मेरे पुत्र के साथ किया चाहते हैं और वह कन्या मेरे पुत्र के अनुरूप भी है, सो उन्होंने दूत भेजकर राजा सुरसेन से यह प्रार्थना की कि अपनी बेटी मेरे बेटे से व्याह दीजिये। राजा सुनसेन ने यह सोचा कि सम्पत्ति की कुछ घटीही नहीं है, बेटी सुख से रहेगी, सो उन्होंने विधिपूर्वक प्रभाकर के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया। बिदाबिदाई हुई, विद्याधरी अपने ससुर के गृह गई ।

दिन बीता, रात आई, अब विद्याधरी अपने पति के साथ पलङ्ग पर पौढ़ी, पर कुछ हुआही नहीं और प्रभाकर फों फों सूतने लगा, यह देख विद्याधरी को

* मातृमण्डल, षोड़श मातृकाओं का समूह ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बड़ी उत्कण्ठा हुई कि, हैं, यह बात क्या है ? इधर उधर टटोल के क्या देखती है कि वह तो नपुंसक है, तब तो उसके होश उड़ गये, बोल उठी कि हाय ! मैं मारी गई, अरे यह षण्ढ मुझे पति मिला; मेरी तो मट्टी ही खराब हो गई, इस प्रकार की चिन्ता करती २ किसी प्रकार से रात बिताई । प्रात:काल होतेही अपने पिता के पास पत्र लिखा कि बिना खोद विनोद कियेही आपने नपुंसक से मेरा ब्याह कर दिया । चिट्ठी बांचतेही राजा सुरसेन बोल उठे कि हा दुष्ट ने छल कर मुझे ठग लिया, उनको विमल के ऊपर बड़ा क्रोध हुआ, सो उन्होंने डांट कर राजा विमल को पत्र लिखा कि जैसे तूने बहाने से अपने क्लीव पुत्र से मेरी कन्या का विवाह करवाय लिया देख मैं उसका फल तुझे अभी देता हूं मैं आके तुझे मारही डालूंगा । चिट्ठी पढ़कर राजा का मुख उतर गया अपने मन्त्रियों के संग सलाह करने लगा कि राजा समरसेन तो बड़ा दुर्जय है अब कैसे क्या किया जाय ! बहुत कुछ सोच विचार हुआ पर एक भी उपाय न चला । तब पिङ्गदत्त नामक मन्त्री ने राजा बिमल से कहा कि देव ! बस एकही उपाय है, सो कीजिये भगवान् चाहेंगे तो उससे कल्याण होगा, स्थूलशिरा नामक एक यक्ष हैं उनकी आराधना का मन्त्र मुझे आता है, वह अभीष्ट वर देते हैं, सो उसी मन्त्र से यक्ष की आराधना कर उनसे पुत्र के लिये पुंसत्व मांगिये, बस झगड़ा शान्त हो जावे । मन्त्री की ऐसी बात सुन राजा ने उससे मन्त्र सीख यक्ष की आराधना कर पुत्र के लिये पुंसत्व की याचना की । उसने पुंसत्व दिया, तत्क्षण राजा का पुत्र प्रभाकर पुमान् हो गया किन्तु यक्ष नपुंसक हो गया, बिद्याधरी प्रभाकर को पुमान् देख उसके साथ रमण कर अत्यन्त आनन्द पाय यह सोचने लगी "मैं मदमाती झूठेही भ्रम में पड़ गयी थी, भला मेरे पति नपुंसक कहां हैं, यह तो खासे पुरुष हैं इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं ।" यह सोच अपनी करनी पर लजाय उसने अपने पिता के पास लिख भेजा और तब उनका मन भी शान्त हुआ ।

इतनी कथा सुनाय भगवती नारायणी मातृकाओं से फिर कहने लगीं कि जब यह वृत्तान्त भैरवजी को विदित हुआ तो बड़ा क्रोध कर उन्होंने स्थूलशिरा को बुलाय उसे यह शाप दिया कि तू अपना लिङ्ग दूसरे को देके आप षण्ढ बना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इससे आजन्म तू षण्ढही बना रह और प्रभाकर पुमान् रहै। इस प्रकार वह गुह्यक क्लीव हो जाने से बड़ा दुःखी हुआ और प्रभाकर पुरुष होके आनन्द ले रहा है। इतना कह देवी फिर बोलीं कि बस यही कारण है कि भैरवजी के आने में विलम्ब हुआ, परन्तु अब आयाही जानो। भगवती नारायणी माताओं से ऐसा कहही रही थीं कि चक्रेश्वर भैरवजी आही तो गये, माताओं ने अपनी २ लाई हुई भेंटों से उनकी पूजा की तब वह देव योगिनियों के साथ नाचने और क्रीड़ा करने लगे।

यह सब व्यापार ऊपर पेड़ पर बैठा २ चन्द्रस्वामी देख रहा था इतने में नारायणी देवी की एक दासी पर उसकी दृष्टि पड़ी, दासी ने भी उसे देख लिया चार दृष्टि होतेही दोनों दैवात् मोहित हो गये, पर यह बात देवी नारायणी ताड़ गयीं, जब मातृकाओं के सहित भैरव जी चले गये तब वह वहीं ठहर गयीं और तनिक देरी में उन्होंने चन्द्रस्वामी को पुकारा। वह उतर आया तब देवी ने उससे और अपनी दासी से पूछा कि कहो तो सही तुम दोनों के मन में प्रीति उत्पन्न हुई है कि नहीं? दोनों ने स्पष्ट २ स्वीकार कर लिया और कहा कि हां देवि बात तो ऐसीही है। इतना सुनतेही नारायणी देवी का कोप उतर गया उन्होंने चन्द्रस्वामी से कहा "तुम दोनों के सच २ कह देने से मैं अति प्रसन्न हूं इससे अब तुम दोनों को शाप नहीं देती हूं, लो चन्द्रस्वामी इस दासी को मैं तुम्हें देती हूं अब तुम दोनों अच्छी तरह अपने मन की कसक निकालो" यह सुन वह ब्राह्मण बोला कि देवि! यद्यपि मेरा मन चञ्चल हो गया है तथापि मैं उसे रोकता हूं, मैं पराई स्त्री का स्पर्श (कदापि) नहीं करता, मन का तो स्वभाव ही ऐसा है पर शारीरिक पाप तो बचा लेना चाहिये। उस धीर विप्र की ऐसी बात सुन देवी बोलीं "ब्राह्मण मैं तुमसे अति प्रसन्न हूं, यह वर देती हूं कि तुम अति शीघ्र अपने पुत्रादिकों को पाओगे, लो मैं तुम्हें यह कमल देती हूं, यह कभी न मुरझायगा और इसका प्रभाव ऐसा है कि सब प्रकार के विघ्न इससे नष्ट हो जाते हैं।" इतना कह चन्द्रस्वामी को कमल देकर श्रीभगवती नारायणी अपनी दासी सहित अन्तर्धान हो गयीं।

अब कमल पाय रात्रि बीतने पर ब्राह्मण वहां से चला और चलते २ उसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तारापुर नगर में पहुँचा जहां राजमन्त्री विप्र अनन्तस्वामी के घर में पुत्र महीपाल और कन्या दोनो रहते थे। यह सुन के कि इस नगर में अनन्तस्वामी नामक ब्राह्मण बड़ा अतिथिसेवक है भोजन की इच्छा से चन्द्रस्वामी उसके द्वार पर जाकर कुछ पढ़ने लगा, द्वारपालों ने अपने प्रभु को खबर जनायी सो सुन उसने चन्द्रस्वामी को भीतर बुलाया और विद्वान् देख उसे भोजन करने को निमन्त्रण दिया। निमन्त्रण पाने के उपरान्त उसे यह सुनाई पड़ा कि यहां अनन्तह्रद नामक एक सरोवर है जहां नहाने से सब पाप छूट जाते हैं, सो चन्द्रस्वामी वहां स्नान करने गया। नहाकर वह लौटा आ रहा था कि नगर में चहुँओर हाहाकार का शब्द सुनाई पड़ा, हाहाकार का कारण उसने पूछा तो लोग कहने लगे कि महीपाल नामक यहां एक ब्राह्मण का लड़का रहता है, सार्थधर महाजन ने उसे जंगल में पाया था, सो मन्त्री अनन्तस्वामी ने उसे सुलक्षण देख उसकी बहिन को और उसे उस वणिक् से मांग लिया, मन्त्री निस्सन्तान हैं इससे उन्होंने उसे अपना (दत्तक) पुत्र बनाया उसपर उनकी बड़ी प्रीति रहती है; यही नहीं राजा तारावर्म्मा तथा समस्त राज्य के लोग उसे बड़ा प्यार करते, सो उसे आज कृष्ण सर्प ने काट लिया इसीसे नगर भर में हाहाकार मच रहा है। यह सुन वह सोचने लगा कि बस अब यह मेराही पुत्र है ऐसा सोचता हुआ चन्द्रस्वामी अति शीघ्र मन्त्री के घर पहुँचा, और लोगों से घिरे उस महीपाल को देखतेही पहिचान गया, तब उसके हर्ष की सीमा न रही, हाथ में देवी का दिया कमल तो थाही सो उसने चट महीपाल की नाक पर लगा दिया, उसी क्षण उस पद्म के गन्ध से उसका विष उतर गया और वह उठ बैठा मानों नींद से जागा हो। नगर में आनन्द मच गया, राजा ने बड़ा भारी उत्सव मनाया। सब लोग कहने लगे कि यह चन्द्रस्वामी तो कोई देवता हैं, यह कह मन्त्री अनन्तस्वामी राजा तारावर्म्मा तथा पुरवासियों ने बहुत सा धन उस ब्राह्मण को दिया। वहां वह चन्द्रस्वामी मंत्री से पूजित हो अपने पुत्र महीपाल और कन्या चन्द्रवती को देखता हुआ सुख से रहने लगा। वे तीनों यद्यपि परस्पर पहिचानते थे तौभी चुपचाप रहते क्योंकि बुद्धिमान् लोग अपना गँव निकाल लेते हैं, अनवसर भेद नहीं खोलते।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजा तारावर्म्म महीपाल के गुणों से मन में अति सन्तुष्ट हुए थे, सो उन्होंने उससे बन्धुमती नाम्नी अपनी कन्या ब्याह दी, पहिले तो उन्होंने अपना आधा राज्य उसे दिया था, पश्चात् जब देखा कि यह भली भांति काम चलाता है तो सम्पूर्ण राज्य का भार उसी पर छोड़ दिया, क्योंकि महीपति के कोई पुत्र तो था ही नहीं। जब महीपाल पूर्ण राजा हो गया तब उसने प्रकाशित किया कि यह चन्द्रस्वामी मेरे पिता हैं, फिर अपनी अनुजा का भी एक सत्पात्र से विवाह कर दिया, इस प्रकार वह सुख से रहने लगा।

एक समय चन्द्रस्वामी ने एकान्त में अपने पुत्र महीपाल से कहा कि आओ अपने देश चल के तुम्हारी माता को ले आवें। हे सुत! एक तो वह पुत्रों के वियोग से दुःखिनी है ही, फिर जब उसे विदित होगा कि तुम राजा हुए, तो यह सोचकर कि मुझे क्यों बिसरा दिया, ऐसा न हो कि कहीं कोप कर तुमको शाप दे देवे, माता पिता के शाप से कोई सुख नहीं भोगता, सुनो इसी विषय में पूर्वकाल के एक महाजन के बेटे की कथा मैं तुम्हें सुनाता हूं—

धवलपुर में चक्र नामक एक वणिक्पुत्र रहता था, माता पिता उसे मना करतेही रहे किन्तु वह स्वर्णद्वीप में व्यापार करने चला गया। पांच वर्ष तक निरन्तर वहां रहके बहुत सा धन कमाया, पीछे उसकी इच्छा हुई कि अपने देश को चलना, सो उसने रत्नों से जहाज लदाय वहां से प्रस्थान किया, बहुत दूर निकल गया था, थोड़ाही और बाकी रहा कि बड़े वेग से आंधी उठी और पानी भी बरसने लगा इससे हहकार कर समुद्र उठा, और ऊँची २ लहरें भरने लगा, लहरों में पड़कर उसका जहाज टूट गया, मानो तरङ्गों ने यह समझा कि यह माता पिता की आज्ञा टाल यहां क्यों आया, अत्यन्त कोप से उसका जहाज तोड़ डाला। जहाज पर के कितने लोग बह बिलाये, कितनों को जलजन्तु खा गये, चक्र की आयु प्रबल थी इससे वह तरङ्गों के धक्कों से तीर पर जा लगा। थक तो गया ही था बैठे बैठे मानों स्वप्न देख रहा है कि एक महा भयङ्कर काला पुरुष हाथ में फांस लिये आया है और उसे बांध घसीट ले चला, फिर लिये २ बड़ी दूर पर एक सभा में पहुँचा, जहां सिंहासन पर एक व्यक्ति बैठा है, उसकी आज्ञा से उसी फांसवाले पुरुष ने उस युवा वणिक् को एक लोहे के घर में ले जाकर ढकेल दिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वहां चक्र क्या देखता है कि एक पुरुष पड़ा २ बिकल हो रहा है उसके माथे पर एक जलजलाता लोहे का चक्र घूम रहा है। "भाई तुम कौन हो, किस पाप से तुम्हारी ऐसी दशा हुई और तुम जीते कैसे हो?" चक्र के ऐसे प्रश्न सुन वह पीड्यमान पुरुष बोला, "भाई मैं बनिये का बेटा हूं, मेरा नाम खड्ग है मैंने अपने माता पिता का कहना नहीं माना था इससे क्रोध कर उन्होंने शाप दे दिया कि रे दुराचार! इस आज्ञालङ्घन से जैसे कि शिर पर गरम चक्र के घूमने के समान तू हमें पीड़ा दे रहा है बस अब तुझे वैसीही पीड़ा होगी। इतना कह वे चुप हो गये, तब तो मैं पुक्का फार रोने लगा यह देख वे फिर बोले कि मत रो, जा एकही मास तक तुझे ऐसी पीड़ा होगी। सो सुन मैं दिन भर शोकित रहा, रात में जब सोने गया तो मानो स्वप्न में क्या देखता हूं कि एक महाभयङ्कर पुरुष आया है, उसने बल से मुझे यहां लोहे के घर में ला पटका और यह जलजलाता घूमता चक्र मेरे मस्तक पर रख दिया। इस प्रकार यह मेरे माता पिता का शाप है, बस इसीसे मेरे प्राण नहीं निकलते, भाई आज महीना बीत भी गया तौभी मेरा छुटकारा नहीं होता है।" खड्ग की ऐसी बात सुन चक्र बड़ी करुणा से बोला कि भाई मुझे भी माता पिता परदेश जाने से रोकते थे पर मैंने उनका कहना न माना, सो उन्होंने भी शाप दे दिया कि मिला मिलाया धन तेरे हाथ से निकल जायगा, सो भाई उसी शाप से जो कुछ धन मैंने बड़ी मेहनत से कमाया था सो सबका सब समुद्र में नष्ट हो गया, मेरी भी बात वैसीही है जैसी कि तुम्हारी, अब जी कर क्या होगा, सो भाई खड्ग अब मेरे माथे पर यह चक्र रख दो, जिससे तुम्हारा शाप तो छूट जाय। वह इतनी बात कहही रहा था कि इतने में आकाशवाणी हुई "खड्ग! अब तू छूट गया, इस चक्र के मस्तक पर यह चक्र रख दे।" ऐसी आकाशवाणी सुन खड्ग ने अपने शिर का चक्र उतार के चक्र के शिर पर रख दिया और इतने में न जाने कौन अदृश्य रूप में खड्ग को उठाके उसके पिता के घर ले गया, तब से वह अपने माता पिता की एक बात भी न टालता और आनन्दपूर्वक रहने लगा।

इधर चक्र अपने माथे वह जलजलाता और घूमता हुआ चक्र रख के कहने लगा "पृथ्वी में जितने और २ पापी हों वे अपने पातकों से छूट जावें, और जब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तक मेरे पाप क्षय न हों तबतक यह चक्र मेरे शिर पर घूमता रहे।" धीर सत्त्व चक्र की ऐसी बात सुन आकाश में स्थित देवतों ने सन्तुष्ट हो फूल बर्साये और कहा, "धन्य महानुभाव चक्र! धन्य! इस करुणा से तुम्हारा पाप धुल गया. जाओ, तुम्हारा वित्त अक्षय होगा"। अमरों के इतना कहते ही चक्र के शिर पर जो वह लोहे का चक्र घूम रहा था सो तत्क्षण न जाने कहां लोप हो गया, इतने में आकाश से एक विद्याधर का कुमार उतरा, सन्तुष्ट हुए इन्द्र के दिये अनेक बहुमूल्य रत्न उसे देके चक्र को गोद में उठा उड़ चला, और उसके सहित धवल नामक नगर में पहुँचा जहां से आया था तहां चला गया। सो चक्र अपने माता पिता के पास पहुँचा इससे सब बन्धुबान्धवों को बड़ा आनन्द हुआ, फिर अपनी बीती सुनाय वह सुखपूर्वक रहने लगा पुनः कदापि धर्म्म से तनिक भी न डिगा।

इतनी कथा सुनाय चन्द्रस्वामी फिर अपने पुत्र महीपाल से कहने लगा कि पुत्र माता पिता से विरोध करने का ऐसा फल होता है, उनकी भक्ति जो है सो कामधेनु है। सुनो माता पिता की भक्ति की एक कथा सुनाता हूं—

पूर्वकाल में कोई वनचारी महातपस्वी था, एक समय की बात है कि वह पेड़ की छाया में बैठा था कि ऊपर से कुक्कुटी ने उसके ऊपर बीट कर दिया, इससे क्रोध कर ज्यों उसने ऊपर दृष्टि उठाई कि वह कुक्कुटी भस्म हो गयी। अब क्या अब तो तप के प्रभाव के अहंकार से मुनि फूल उठे। एक दिन किसी ब्राह्मण के घर में जाकर मुनि ने गृहस्वामिनी से भिक्षा मांगी, "महाराज! टुक ठहरिये, मैं अपने स्वामी की सेवा में लगी हूं" पतिव्रता गृहस्वामिनी ने ऐसा उत्तर दिया। इधर तो इतना सुनतेही क्रोध सवार हो गया, मुनि महाराज लाल लाल आंखें कर उस गृहिणी को देखने लगे, तब मुस्कुरा के वह पतिव्रता बोली, "मुनि जी मैं वह कुक्कुटी नहीं हूं, शान्त होइये।" इतना सुनतेही मुनि को चटका लगा, बिचारे शिर नीचा कर बैठ गये और बड़ा अचम्भा कर विचारने लगे कि वह बात इसने कैसे जान ली। तदनन्तर अपने पति के हवनादि क्रिया की सेवा से छुट्टी पाय वह साध्वी भिक्षा लेके मुनि के पास आयी, मुनि ने हाथ जोड़ कर कहा कि कुक्कुटी का परोक्ष वृत्तान्त आपने कैसे जान लिया ?, पहिले इसका कारण बता दीजिये तो मैं भिक्षा ग्रहण करूँ। ऋषि की ऐसी बात सुन वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पतिदेवता बोली "अपने पति की भक्ति छोड़ मैं और कोई दूसरा धर्म्म जानतीही नहीं, बस उन्हीं के प्रसाद से मेरा ऐसा विज्ञान बल है और क्या, यहां धर्म्मव्याध नामक एक मांस बेचनेवाला रहता है, जाके उसके दर्शन करो तब तुम्हारा अहंकार दूर होके कल्याण होगा।" इस प्रकार उस सर्वज्ञा पतिव्रता की बात सुन, अतिथि भाग ले प्रणाम कर मुनि वहां से चला गया।

दूसरे दिन मुनि उस धर्म्मव्याध का पता लगा उसकी दूकान पर पहुँचा तो क्या देखता है कि वह मांस बेंच रहा है। मुनि को देखतेही धर्म्मव्याध ने कहा, ब्रह्मन्! क्या पतिव्रता ने आपको यहां भेजा है? इतना सुनतेही मुनि को और भी अचम्भा हुआ, उसने धर्म्मव्याध से कहा कि भाई तुम तो मांस बेंचनेवाले हो, यह ज्ञान कहां पाया? सो सुन धर्म्मव्याध ने उत्तर दिया "महाराज! मैं अपने माता पिता का भक्त हूं, मेरे जो कुछ हैं सो वेही हैं, उनको स्नान करा के तब मैं स्नान करता हूं, उनको भोजन करा के, तब मैं भोजन करता हूं; जब वे सो जाते हैं तब मैं शयन करता हूं, बस इसीसे मेरा ज्ञान ऐसा है। और यह तो अपनी जीविका के लिये मांस बेंचता हूं, यह तो मेरा धर्म्मही है फिर मृगादि पशुओं को मारकर तो दूसरे लोग लाते हैं, जीविकानिर्वाहार्थही यह मेरा कार्य्य समझिये धन के लोभ से मैं यह काम नहीं करता हूं। महाराज! अहंकार से ज्ञान में बाधा हो जाती है इसीसे वह पतिव्रता और मैं कदापि अहङ्कार नहीं करता इसीसे हम दोनों का ज्ञान बाधाशून्य है, इसलिये आप भी अहङ्कार त्याग शुद्धि के लिये मुनियों का व्रत अवलम्बन कर अपना धर्म्म कीजिये, इसीसे अति शीघ्र परम ज्योति प्राप्त करेंगे।" धर्म्मव्याध की इतनी बात सुन मुनि उसके घर गया और उसकी परिचर्य्या देख अति सन्तुष्ट हुआ और फिर वन में चला गया। उसके उपदेश से वह मुनि भी सिद्ध हो गया। पतिव्रता और धर्म्मव्याध दोनों ने अपने २ धर्म्म के आचरण से परम सिद्धि प्राप्त की।

इतनी कथा सुनाय चन्द्रस्वामी अपने पुत्र महीपाल से फिर कहने लगा कि पुत्र! पतिभक्ति तथा मातृभक्ति और पितृभक्ति का ऐसा प्रभाव होता है, सो चलो अपनी माता को सान्त्वना देओ क्योंकि उसे तुम्हारे दर्शनों की बड़ी लालसा होगी। इस प्रकार पिता की बात सुन महीपाल माता की खातिर से अपने देश

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को जाने को तयार हुआ और अपने धर्मपिता अनन्तस्वामी से सब वृत्तान्त कह, उन्हीं पर राजपाट का समस्त भार रख पिता के साथ रात को प्रस्थान किया और चलते २ अपने देश में पहुँचा फिर अपने घर में उपस्थित हुआ, देवमति को अपने पुत्र के दर्शनों से जो आनन्द हुआ उसका ठिकाना कहां, जैसे बसन्त के आगमन से कोकिला फूली नहीं समाती वैसाही उसका आनन्द समझना। कुछ काल तक महीपाल अपने माता पिता के घर में सबसे सत्कार पाके रहा और उसका पिता जिस किसी से भेंट होती अपनी रामकहानी कह सुनाया करता।

उधर तारापुर में उसकी भार्य्या नृपसुता बन्धुमती रात बीतने पर जब जागी तो पति को कहीं न देख विरह से अति व्याकुल हो गयी, महलों में यहां से वहां ज य, बाटिकाओं में चित्त बहलावे पर कहीं भी उसे चैन न मिला। तब वह बिलख बिलख रोने लगी और आंसुओं को धारा से गले का हार मानो दोहरा प्रतीत होने लगा, सदा प्रलाप करती और मनाती कि मृत्यु हो जाय तो परम सुख मिल जावे। उसकी यह दशा देख अनन्तस्वामी मन्त्री उसे समझाकर कहने लगे कि पुत्रि! व्यर्थ शोक क्यों करती है, पुत्र तो मुझसे कह गया है कि मैं किसी आवश्यक कार्य्य से जा रहा हूं शीघ्रही लौटूंगा। इस प्रकार आशा दिलानेवाले वाक्यों से मन्त्री से आश्वासित की गई तब उसको कुछ धीरज हुआ। तब वह अपने पति के सन्देश पाने के अभिप्राय से दान करने बैठी, जो कोई ब्राह्मण आवे बड़ा आदर मान कर उन्हें बहुत सा दान देती और अपने पति का समाचार पूछती। एक दिन एक बड़ा गरीब ब्राह्मण सङ्गमदत्त भीख मांगता वहां आया सो रानी बन्धुमती ने दान देकर उसे अपने पति का नाम और रूप रंग बतला पूछा कि देवता ऐसा पुरुष कहीं तुमने देखा है? यह सुन वह ब्राह्मण बोला कि इस तरह का कोई आदमी मेरी दृष्टि में नहीं आया तौभी देवि! आप धीरज न त्यागें शुभ कर्म करते रहने से कभी न कभी प्रियजन का संयोग होता ही है, सुनिये इस विषय में जो आश्चर्य्य मैंने देखा है सो आपको कह सुनाता हूं।

तीर्थाटन करते २ मैं हिमालय के ऊपर मानसरोवर पर पहुँचा, उसमें दर्पण के समान एक मणिमय घर मुझको दीख पड़ा। इतने में विद्याधरियों के साथ हाथ में खड्ग लिये एक पुरुष उस गृह से निकला और सरोवर के किनारे आया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और वहां बगीचे में खूब मद्यपान कर मत्त हो उन स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करने लगा यह सब कौतुक मैं छिप के दूर से देख रहा था। इतने में कहीं से एक अति सुन्दर कोई दूसरा पुरुष वहीं आया और जब मुझसे भेंट हुई तब मैंने सारा हाल जो देखा था उसे कह सुनाया और दूर से उस स्त्री सहित उस पुरुष को दिखा भी दिया, सो व्यापार देख वह इस प्रकार अपना वृत्तान्त मुझे सुनाने लगा।

त्रिभुवनपुर का मैं राजा हूं, मेरा नाम भी त्रिभुवन है, वहां पर एक पाशुपत ने * बहुत दिनों तक मेरी सेवा की † । एक वार एकान्त में मैंने उससे पूछा कि तुम क्या चाहते हो, उसने उत्तर दिया "और कुछ नहीं, बस यही कि एक गुफा में एक खड्ग है, उसको मैं प्राप्त किया चाहता हूं सो आप सहायता कीजिये।" मैंने उसकी बात मान ली। तब वह पाशुपत रात के समय मुझे साथ ले एक जंगल में गया वहां होम इत्यादि से बिवर प्रगट कर मुझसे बोला "वीर! पहिले आप इस गुफा में पैठिये और जब आपको खड्ग मिल जावे बाहर आय मुझको भीतर पैठाइये, परन्तु मुझसे प्रतिज्ञा कर लीजिये कि ऐसा करेंगे।" उसकी ऐसी बात सुन, शपथ कर मैं तुरत उस गुफा में पैठा और एक रत्नमय गृह में पहुँचा, तब एक प्रधान असुरकन्या बाहर आके मुझे घर के भीतर ले गई, वहां मुझे उसने एक खड्ग दिया और कहा कि इस खड्ग से सब सिद्धियां मिलती हैं और क्या इसके प्रभाव से आकाश में भी गति होती है, सो इसको बड़े यत्न से रखियेगा।" उसकी ऐसी बात सुन मैं कुछ दिन उसके साथ वहां रहा। तब मुझको उस पाशुपत का स्मरण हुआ, सो मैं खड्ग हाथ में लिये बिल के बाहर आया और उसे लेकर विवर में पैठ उसी असुरमन्दिर में पहुँचा । मैं तो सखी सहित उस पहिली असुरकन्या के साथ तथा वह पाशुपत एक दूसरी के साथ रहने लगा। एक समय की बात है कि मैं मद्यपान में चूर था कि अवसर पाय पाशुपत ने मेरे बगल से वह खड्ग निकाल के अपने हाथ में कर लिया। खड्ग हाथ में लेतेही सब सिद्धियां उसे प्राप्त हो गईं बस उसने हाथ पकड़ मुझे विवर के बाहर निकाल फेंका । तब मैं गुफा के बाहर मुंह पर बारह वर्ष तक

* पशुपति महादेवजी का नाम है सो यह अर्थ निकलता है कि वह महादेवजी का सेवक सन्यासी रहा होगा। † दर्बार बजाया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसको ढूंढ़ता ताक में लगा रहा कि बचा को कभी तो पाऊँगा, सो वह शठ आज मेरी दृष्टि में आगया, मेरी उस असुरकन्या के साथ क्रीड़ा कर रहा है।

हे देवि! त्रिभुवन राजा मुझसे इतनी बात करही रहा था कि उधर मदिरा से मत्त हो वह पाशुपत सो गया, बस महीपति ने जाकर उसकी बगल से खड्ग निकाल लिया उसके प्रताप से राजा का फिर दिव्य प्रभाव हो गया। तब राजा ने एक लात मार उसे जगाया और जागने पर उसको बहुत बुरा भला कहा. वह शरण में आया; इस कारण महीप ने उसका बध नहीं किया। फिर राजा सखियों के सहित सिद्धिस्वरूपा अपनी उस असुरकन्या को पाय उसके साथ असुरपुर में चले गये, और सिद्धि से भ्रष्ट हो जाने से वह पाशुपत बड़ा दु:खित हुआ, ठीक है कृतघ्न चिरकाल लौं सिद्धि भोग के भी अन्त में अवश्य गिरतेही हैं।

इतनी कथा सुनाय रानी बन्धुमती से वह ब्राह्मण फिर कहने लगा कि यह मैं अपनी आंखों से देख चुका हूं, अब घूमते २ यहां आया हूं, सो हे देवि! निश्चय रक्खो कि कुछ दिनों में तुम्हारे प्रीतम अवश्य आ मिलेंगे, देखिये राजा त्रिभुवन का अन्त में सप्रिय संयोग हुआ न, ठीक है जो पुण्यात्मा होता है वह कदापि दु:खित नहीं होता। उस ब्राह्मण की बात सुन बन्धुमती को बड़ा सन्तोष हुआ, उन्होंने बहुत धन देकर ब्राह्मण को कृतार्थ कर दिया।

दूसरे दिन बहुत दूरदेश से एक अपूर्व ब्राह्मण वहां आया, रानी बन्धुमती ने उसी प्रकार नाम और लक्षण बताकर अपने पति की कुशलवार्ता उससे भी पूछी जिसे सुन ब्राह्मण ने उत्तर दिया "हे देवि! आपके पति को तो मैंने कहीं नहीं देखा है, परन्तु जब यथार्थनामा सुमन नामक मैं आपके घर आ गया तो अब आपका कुछ सौमनस्य होनेवाला है, मेरा मन ऐसा हामी भर रहा है, और क्या जो लोग बहुत दिन तक अलग रहते हैं अन्त में एक न एक दिन उनका संयोग होताही है। देवि! सुनिये इस विषय में आपको एक कथा सुनाता हूं।

पूर्वकाल में निषधदेश के अधीश्वर राजा नल थे, तिनके रूप का क्या बखान करूँ, बस यही समझ लीजिये कि कामदेव ने मानो उनके रूप से लजाय त्रिपुरारि के तृतीय नेत्र के कोपानल में अपना शरीर हवन कर दिया। उनके पत्नी नहीं थी, सो जब अपने योग्य पत्नी का पता लगा रहे थे कि उनको विदित

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हुआ कि विदर्भदेश के राजा भीम की कन्या दमयन्ती एक सदृशी भार्या है। उधर राजा भीम ने भी पृथ्वी भर ढुंढ़वाया परन्तु नल को छोड़ उनकी कन्या के लिये कोई उपयुक्त पति न ठहरा।

इतने में एक दिन की बात है कि भीमकन्या दमयन्ती अपने नगर के एक सरोवर में जलक्रीड़ा करने उतरीं, वहां उन्होंने कमल खाते हुए एक हंस को देखा और अपनी ओढ़नी फेंक उसे पकड़ लिया, तब वह दिव्य हंस स्फुट वाणी में बोला "राजपुत्रि! मैं तुम्हारा उपकार करूंगा, मुझे छोड़ दो, सुनो, निषधदेश में नल नामक एक राजा हैं, अच्छे गुणों से गुथे हार के समान जिन्हें अप्सरायें भी अपने हृदय में रखती हैं वह तुम्हारे उपयुक्त पति हैं और तुम भी उनकी सदृशी भार्य्या हो, सो इस तुल्य संयोग में मैं कामदूत होऊँगा।" यह सुन दमयन्ती ने उस दिव्य हंस को सत्यवादी समझ "एवमस्तु" कह छोड़ दिया और फिर कहा कि नल को छोड़ मैं किसी दूसरे को न वरूंगी, कानों के द्वारा प्रवेश कर उन्होंने मेरा मन हर लिया है।

अब वह हंस उड़ चला और उड़ता २ निषधदेश के उस सरोवर पर पहुँचा जहां राजा नल जलविहार कर रहे थे, राजा नल ने देखा कि राजहंस बड़ा मनोहर है, सो कौतुक से अपना दुपट्टा फेंक उसे पकड़ लिया। वह हंस बोला "राजन् मुझको छोड़ दो, क्योंकि मैं यहां तुम्हारा उपकार करने आया हूं, सुनो जो मैं कहता हूं। विदर्भदेश के राजा भीम की कन्या दमयन्ती है, पृथ्वी की तिलोत्तमा उसको समझना चाहिये जिसकी कामना अमर भी करते हैं। जब मैंने तुम्हारे गुणों का वर्णन उसके साम्हने किया तो उसका मन तुम पर मोहित हो गया, सो उसने तुम्हीं को पति चुना है, बस यही शुभ सम्बाद कहने मैं आया हूं।" उस हंस के ऐसे बचनों ने नल के ऊपर कामवाण का काम किया, वह बोले—"हे विहगोत्तम! मैं धन्य हूं कि मनोरथसिद्धि की मूर्त्ति मानों उसने मुझे वरण किया।" इतना कह राजा नल ने उस हंस को छोड़ दिया। वह राजहंस उड़ा २ दमयन्ती के पास पहुँचा और सब वृत्तान्त यथावत् सुनाकर यथाकाम उड़ गया।

दमयन्ती की उत्कण्ठा दिनों दिन बढ़ने लगी सो उन्होंने युक्ति से अपनी माता के द्वारा अपने पिता से यह प्रार्थना की कि नल की प्राप्ति के लिये स्वयंवर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किया जाय, पिता ने उनकी बात मान ली, पृथ्वी में जितने राजा थे भीम ने सभों के पास दूतों को भेजा। दूतों के द्वारा संवाद पाय सब महीपाल विदर्भदेश के लिये प्रस्थानित हुए, अत्यन्त हर्षित हो राजा नल भी रथ पर चढ़कर चले।

जब नल के ऊपर दमयन्ती के प्रेम और उनके स्वयंवर की बात नारद मुनि के द्वारा इन्द्रादि लोकपालों को विदित हुआ, तब उनमें से इन्द्र, वायु, यम, अग्नि और वरुण दमयन्ती के लिये उत्कण्ठित हो आपस में सलाह कर नल के पास गये और विदर्भदेश को जाते हुए नल से मार्ग में ही मिले, नल ने उन्हें प्रणाम किया, तब वे कहने लगे "राजन्। हमारी ओर से जाकर तुम दमयन्ती से कह दो कि हम पाचों में से किसी एक को वर लो, मर्त्य नल को वर के क्या करोगी, मर्त्य मरणशील हैं, और त्रिदश तो अमर हैं, हमारे वरदान के प्रभाव से तुम अदृश्य होके उसके पास पहुँच जाओगे।" नल ने देवों की आज्ञा माथे धरी और अदृश्य हो दमयन्ती के अन्तःपुर में जाकर अमरों की आज्ञा उनसे कह सुनाई। यह सुन साध्वी दमयन्ती ने उत्तर दिया "देवते ऐसे हों तौभी मेरे पति नल ही हैं, अमरों से मेरा काम नहीं है।" दमयन्ती का ऐसा यथार्थ वचन सुन, प्रगट हो राजा नल ने जाके इन्द्रादिकों से वैसाही कह दिया, तब अति प्रसन्न हो वे लोकपाल बोले "हे तथ्यवादिन्! हमलोग अति तुष्ट हुए, अब यह वरदान देते हैं कि हम तुम्हारे वश में हैं जहां तुम हमें स्मरण करोगे वहीं हम आ पहुँचेंगे।"

इस प्रकार वर पाय प्रसन्न हो जब राजा नल विदर्भदेश को चले गये तब इन्द्रादि लोकपालों ने दमयन्ती को छलने की इच्छा से नल का रूप धारण कर लिया। इस प्रकार मर्त्यधर्म्म का अनुसरण कर वे अमर राजा भीम की सभा में उपस्थित हुए और जब स्वयंवर होने लगा तो ये भी जाके नल के पास बैठ गये। अब दमयन्ती आईं साथ में उनके भाई राजाओं के नाम और गुण का बखान करते जाते थे, क्रमानुसार सब महीशों को छोड़ती नल के पास पहुँचीं वहां क्या देखती हैं कि छः नल विद्यमान हैं सब छाया और पलक पड़ने इत्यादि गुणों से युक्त हैं * इनको देख उनके भाई भी चकपका गये, तब व्याकुल हो दमयन्ती

* देवतों की छाया नहीं पड़ती और न आंखों के पलकही गिरें, यहां तो उन्होंने मानुष शरीर धारण किया था इससे सब मानव व्यापार होते थे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चिन्ता करने लगीं "बस यह काम उन पांच लोकपालों का है, उन्होंने मुझे छलने की माया रची है, जो हो अब समझती हूं कि यह छठवें नल हैं मैं और कहीं अब नहीं जा सकती।" इस प्रकार विचार कर नल ही में जिसका मन आसक्त हो गया है ऐसी वह दमयन्ती सूर्य्य की ओर मुख करके यों कहने लगीं, "हे लोकपालो ! यदि स्वप्न में भी मेरा मन नल से अन्यत्र न गया हो तो उस सत्य के प्रताप से आप लोग अपना २ शरीर दिखावें, जिस वर को कन्या ने पहिलेही से चुन लिया है उसके अतिरिक्त और लोग परपुरुष कहलाते हैं तथा वह कन्या औरों के पक्ष में परदारा ठहरी, सो यह कैसा मोह आप लोगों को व्यापा है।" इतना सुनतेही वे पांचो शक्र इत्यादि अपने २ रूप में हो गये और छठवें जो बच गये सो तो अपने रूप में सच्चे राजा नलही थे। तब फूले कमल के समान सुन्दर नेत्रों से राजा नल को देख दमयन्ती ने उनके गले में जयमाल डाल दी, आकाश से पुष्पवृष्टि हुई, गहगहे बाजे बजने लगे। तदुपरान्त राजा भीम ने दमयन्ती और नल का मङ्गल विवाह कर दिया। शुभ विवाह सम्पन्न हो जाने के अनन्तर महीपति भीम ने सब राजाओं तथा इन्द्रादि लोकपालों का यथोचित सम्मान कर सभों को बिदा किया, जो जहां से आये थे वे तहां चले गये।

इन्द्र इत्यादि चले जा रहे थे कि मार्ग में कलि और द्वापर मिल गये, वे भूखे प्यासे दमयन्ती के लिये विदर्भदेश की ओर चले जा रहे थे, उन्हें देख लोकपाल बोले कि अब विदर्भदेश में जाकर क्या करोगे हम तो वहीं से चले आ रहे हैं, स्वयंवर हो गया दमयन्ती ने राजा नल को वर लिया। इतना सुनतेही पापिष्ठ कलि और द्वापर क्रोध से बोले "जब आप सरीखे देवों को छोड़ उसने एक मर्त्य को वरण किया है तो हम उन दोनों का वियोग अवश्य करावेंगे।" इस प्रकार प्रतिज्ञा कर वे लौट गये। राजा नल भी अपने श्वशुर के घर सात दिन रहे पश्चात् कृतार्थ हो अपनी प्रिया दमयन्ती के साथ निषध देश को चले गये। वहां दोनों अति प्रेम से रहने लगे, दम्पती का प्रेम पार्वती और शङ्कर के प्रेम से भी बढ़ के था, क्योंकि गौरी तो महादेव के शरीर की अर्द्धाङ्गी हैं किन्तु दमयन्ती तो नल की आत्मस्वरूपा ही थी। कुछ काल में दमयन्ती के एक पुत्र हुआ, उसका नाम इन्द्रसेन रक्खा गया पुत्र की पीठ पर एक कन्या हुई तिसका नाम इन्द्रसेना हुआ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इधर अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर बना हुआ कलि घात बिचार रहा था किन्तु राजा सदा शास्त्रानुसार व्यवहार किया करते थे इससे उसे अवसर न मिलता था। एक समय की बात है कि बिना सन्ध्या किये और बिना हाथ पांव धोये राजा नल सो रहे, राजा मद्य में चूर थे इससे उन्हें कुछ स्मरण न रहा। कलि तो रात दिन ताक में लगा ही था, अब उसे अवसर मिल गया, वह राजा के शरीर में पैठ गया। देह में कलि के प्रविष्ट होतेही राजा नल के सब धर्म्माचरण छूट गये, वह मनमाना काम करने लगे, जूआ खेलते, दासियों से रमण करते, झूठ बोलते, दिन में सोते और रात्रि में जागते। अकारण कोप कर बैठते, अन्याय से धन ग्रहण करते, सज्जनों का अपमान और दुर्जनों का आदर करते थे। † जैसे नल हो गये थे वैसेही उनके छोटे भाई पुष्कर भी बन गये क्योंकि अवसर पाय द्वापर उनमें प्रविष्ट हो गया था। उनकी गति भी सब प्रतिकूलही हो गई थी।

एक दिन राजा नल अपने छोटे भाई पुष्कर के यहां गये, और उनके घर में दान्त नामक एक सुन्दर स्वेत बैल देख के लोभ में आय राजा उसे मांग बैठे, परन्तु पुष्कर ने अपने जेठे भाई को वह बैल न दिया क्योंकि द्वापर के आवेश से उनकी ज्येष्ठभक्ति तो नष्ट हो गयी थी, देवें कैसे। इतना ही नहीं किन्तु पुष्कर ने अपने अग्रज से कहा कि यदि इस बैल के लेनेही की इच्छा है तो मेरे साथ जूए में इसे जीत लो, बस अब देरी मत करो। नल पर दुर्भाग्य आरूढ़ ही था उन्होंने भाई की ललकार सुन जुआ खेलना स्वीकार कर लिया, दोनों भाई में द्यूत होने लगा। पुष्कर का दांव तो वह बैलही था, नल ने हाथियों का दाव लगाया, पुष्कर ने जीत लिया, नल हार गये, फिर घोड़ों का दांव लगा, पर नल सो भी हार गये, ऐसेही राजा नल दांव लगाते और बार २ हारते ही गये। इस प्रकार दो तीन दिनों में राजा नल अपना राजपाट सैन्य सम्पत्ति इत्यादि सब हार गये, लोग इनको बरजते रहे पर इन्होंने एक न माना, मानें क्योंकर शरीर में तो कलि घुस बैठा था। जब दमयन्ती ने देखा कि राजपाट धन धान्य सब चौपट हो गया तो एक उत्तम रथ पर अपने दोनों बच्चों को बैठाके अपने पिता के घर भेज दिया।

† ये कलिकाल के लक्षण हैं, जहां ऐसे व्यापार देखो समझ जाओ कि बस वहां कलि का डेरा है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जब राजा नल सब कुछ हार गये तब विजयी पुष्कर ने उनसे कहा कि तुम तो सब कुछ हार गये अब मेरे इस खेल के लिये जूए में दमयन्ती का दांव लगा दो । पुष्कर की इस उक्तिरूपी वायु से नल अनल के समान जल उठे परन्तु अब तो अवसर नहीं रहा इससे चुपही रहे और फिर उन्होंने कुछ भी दांव न लगाया तब पुष्कर ने कहा कि यदि अपनी भार्या को दांव पर नहीं रखते हो तो उसके साथ मेरे देश से निकल जाओ । इतना सुनतेही राजा नल दमयन्ती के संग राज्य से निकल गये, राजपुरुष उन्हें सिवाने तक पहुँचा आये ।

हा ! जब राजा नल की ऐसी दुर्गति कलि ने कर डाली तो कीट पतङ्गवत् और देहधारी हैं किस गिनती में ! धिक्कार है (ऐसे) जूए को जोकि कलि और द्वापर का जीवन और ऐसे २ राजर्षियों की विपत्तियों का घर है ।

अब भाई के द्वारा ऐश्वर्य छिन जाने पर राजा नल अपनी प्रिय भार्य्या दमयन्ती के साथ विदेश चले, चलते २ बीच जंगल में पहुँचे, भूख के मारे लथपथ हो गये थे, रानी के पांव कुश लगने से चिर गये, सो राजा उनके संग एक सरोवर के किनारे बैठकर विश्राम करने लगे कि इतने में दो हंस वहां आये, राजा ने उन्हें देख भोजन के निमित्त पकड़ने के लिये अपना दुपट्टा उनपर फेंका, दुपट्टा लिये-दिये दोनों हंस उड़ गये । इतने में उनको यह आकाशवाणी सुन पड़ी “राजन् ! वेही दोनों पासे हंसरूप में आये थे और तुम्हारा दुपट्टा ले चले गये ।” अब राजा के पास एकही वस्त्र रह गया सो वह उदास बैठे रहे और युक्ति से दमयन्ती को नैहर का मार्ग दिखाने लगे, वह बोले “प्रिये ! देखो यह मार्ग तो विदर्भ नगर में तुमारे पिता के घर जाता है, यह अङ्गदेश का रास्ता है और यह राह कोशल देश को है ।” इतना सुनतेही दमयन्ती का चित्त दहल उठा वह शङ्कित होके यह चिन्ता करने लगी कि क्या आर्य्यपुत्र मुझे त्याग किया चाहते हैं, तब न (यह) मार्ग दिखा रहे हैं । फल मूल खाय रात्रि में थके मांदे दोनों प्राणी उसी जंगल में कुश बिछाय सो रहे । रानी थक गई थीं सो लेटते ही थोड़ी देरी में उन्हें नींद आगई किन्तु राजा तो कलि से मोहित हो खसकने का अभिप्राय करते थे सो वह जागतेही रहे राजा गँव से उठे, एक वस्त्र रानी दमयन्ती को छोड़, उनका आधा वस्त्र फाड़ ओढ़ के वहां से चल खड़े हुए । रात्रि बीतने पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जब दमयन्ती जागी तब त्यागकर चले गये हुए पति को कहीं न देख क्षणेक बिचार कर पीछे बिलाप करने लगी "हा आर्य्यपुत्र ! हा महासत्व ! आपतो शत्रुओं पर भी दया करते हैं, आप तो मुझे बहुत प्यार न करते थे, सो किसने आपको मेरे ऊपर करुणारहित बना दिया ? नाथ। ऐसे जंगल में आप अकेले क्योंकर पैदल चल सकेंगे, और जब थक जावेंगे तो आपकी सेवा कर कौन थकावट दूर करेगा ! हा ! आपके जिन चरणों पर राजाओं के शिरों पर की मालाओं के पराग पड़कर रंग देते थे वे पांव अब धूलियों से कैसे कलुषित किये जावेंगे ! आपका जो शरीर हरिचन्दन के चूर्ण का लेप नहीं सह सकता था वही अब दुपहरिया की धूप कैसे सहेगा। मुझे बालक पुत्र से कुछ प्रयोजन नहीं, कन्या से भी क्या और मेरे आत्माही से क्या लाभ ? बस यदि मैं सच्ची सती होऊं तो देवता लोग एक आपही का कल्याण करें।" इस प्रकार दमयन्ती अकेली उस निर्जन वन में विलाप कर रहीं थीं, फिर शोच करती हुई उसी मार्ग से चलीं जो राजा नल ने पहिले दिखा दिया था। किसी २ प्रकार नदी, पहाड़, जंगल और मरुभूमि डांक कर पार हुईं किन्तु पति पर जो उनकी भक्ति थी वह जैसी की तैसी बनी रही। मार्ग में सांप से बचाकर एक लुब्धक उनपर मोहित हो गया पर उनके सतीतेज ने उस दुष्ट को क्षणमात्र में भस्म कर डाला। दैवात् मार्ग में बटोही बनियों का साथ मिल गया सो उन्हीं के साथ २ चलती २ रानी दमयन्ती सुबाहु नामक राजा के नगर में पहुँचीं। वहां की राजकुमारी अपनी अटारी पर खड़ी थीं, दमयन्ती पर उनकी दृष्टि पड़ी, देखतेही वह इनके सौन्दर्य्य से चकित और मोहित हो गईं, सो उन्होंने इन्हें बुला अपनी माता को सुपुर्द किया। अब दमयन्ती उन महादेवी के पास रहने लगीं, परिचय पूछने पर इतना ही उत्तर दिया कि मेरे पति मुझे छोड़कर चले गये।

इतने में जब दमयन्ती के पिता राजा भीम को नल की विपत्ति का हाल विदित हुआ तो उन्होंने उन दोनों की खोज में विश्वस्त मनुष्यों को चहुँओर भेजा उनमें से एक अर्थात् उनके मन्त्री सुषेण ब्राह्मण के वेश में घूमते २ राजा सुबाहु की राजधानी में पहुँचे। वहां राजप्रसाद में सुषेण ने दमयन्ती को देखा जो सदा आगन्तुकों को पहिचानने आया करती। दुःखित दमयन्ती ने अपने पिता के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मन्त्री को देखा देखतेही पहिचान कर दोनों रोने लगे, जब सुबाहु की रानी को यह बात विदित हुई तो उन्होंने दोनों को बुला के पूछा कि सच २ कहो तुम दोनों क्यों रोते हो ? दोनों के यथार्थ बतला देने पर उन्हें विदित हुआ कि दमयन्ती उनकी बहिन बेटी हैं, तब उन्होंने अपने पति से सब वृत्तान्त कहा तदुपरान्त बड़े आदर और प्रेम से रथ पर बैठाय रानी ने सुषेण के साथ दमयन्ती को उनके पिता के घर विदा किया और संग में अपनी सेना भी कर दी। अब दमयन्ती अपने नैहर पहुँच दोनों बच्चों को पाय रहने लगीं और अपने पिता से अपने पति की खोज करवाती थीं। उनके पिता ने नल को खोज में चहुँओर भेदियों को भेजा और बता दिया कि राजा नल उत्तम २ व्यञ्जन बनाने और रथ चलाने की विद्या में बड़े प्रवीण हैं, सो जहां कहीं तुम्हें उनकी शङ्का हो तहां यह दोहा पढ़ सुनाना –

कुमुदिनि सम, सूती तियहिँ, वन महँ क्रूर विहाइ ॥
अम्बर (१) खण्डहिं पाइकै, (२) छप्यो चन्द्र कित जाइ ॥

उधर राजा नल जब दमयन्ती को रात्रि के समय अकेली वन में छोड़, उनका आधा वस्त्र ओढ़ चले गये तब चलते २ बहुत दूर निकल जाने पर क्या देखते हैं कि जङ्गल में महाभयङ्कर अग्नि लगी है, इतने में यह शब्द सुनने में आया "हे महासत्व ! दावाग्नि बहुत निकट आ गई है, सो जब लों मैं जल नहीं जाऊँ तब लों अति शीघ्र मुझे यहां से उठा दूर कर दीजिये।" इतना शब्द सुन राजा नल टकटकी लगा देखने लगे तो क्या देखते हैं कि अग्नि के निकटही एक नाग गेरुड़ी मारे बैठा है, उसका फण ऊपर निकला हुआ है जो अग्नि की ज्योति से ऐसा चमक रहा है मानो हाथ में हथियार लिये दावाग्नि ने उसका मस्तक पकड़ लिया हो। राजा नल उसके निकट गये और उसे उठा कन्धे पर रख ले चले, बहुत दूर ले जाकर ज्योंही राजा उसे छोड़ा (फेंका) चाहते थे कि नाग बोल उठा "गिन के दश पग और ले चलिये।" तब राजा नल इस प्रकार गिनते चले; एक, दो, तीन, चार, पांच, छः, सात, सुनो हो नाग! आठ, नौ, दश; बस। इतना राजा बोलेही थे कि उन्हीं की बात के छल से कन्धे पर बैठे नाग ने उनके माथे पर डँस लिया। उसके डँसतेही राजा के दोनों भुज छोटे २ हो गये, रंग काला हो गया

(१) कपड़ा, आकाश। (२) पाइकै चन्द्रपक्ष में, लेइकै नल पक्ष में।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और वह अत्यन्त कुरूप हो गये। तब महीपति ने कन्धे से उतार उस अहि से पूछा "क्यों जी आप कौन हैं और आपने यह कैसा प्रत्युपकार किया ?"। नल की यह बात सुन उस नाग ने उत्तर दिया "राजन्! मैं कर्कोटि नामक नागराज हूं, यह जो मैंने आपको डँस दिया है सो आपके लाभ के लिये है, इसका फल आपको पीछे जान पड़ेगा, महान् लोग जब गुप्तवास किया चाहते हैं तब वैरूप्य हो से उनका कार्य सिद्ध होता है। अग्निशौच नामक यह एक जोड़ा कपड़ा मुझसे लीजिये, जब इसे ओढ़ लेंगे तो आपको अपना रूप मिल जावेगा।"

इतना कह, एक जोड़ा वस्त्र दे जब नागराज कार्कोटिक चले गये तब राजा आगे बढ़े, चलते २ उस वन को डांक के दूसरे वन में पहुँचे, इस प्रकार जङ्गलों को डांकते डूकते कोशलदेश में पहुँचे, जहां कोशलाधिपति राजा ऋतुपर्ण के यहां अपना नाम ह्रस्वबाहु बतलाय भोजन बनाने में नियुक्त हुए, नाना प्रकार के उत्तमोत्तम भोजन बनाने तथा रथ विज्ञान के कारण राजा वहां अति प्रसिद्ध हो गये।

जब राजा नल ह्रस्वबाहु के नाम से वहां रहते थे तब एक समय ऐसा हुआ कि राजा भीम के भेदियों में से एक दूत घूमता २ वहां आया जहां उसने यह सुना कि ह्रस्वबाहु जो नया सूपकार है सो व्यञ्जन बनाने तथा रथ चलाने में भी नल के तुल्य है। दूत अपने मन में सोचने लगा कि हो न हो यह नलही हों, सो जब उसको विदित हुआ कि इस समय वह रसोइयाँ राजसभा में है, तब किसी युक्ति से वहां पहुँच उसने अपने प्रभु का बतलाया हुआ यह दोहा पढ़ सुनाया -

कुमुदिनि सम, सूतो तियहिं, वनमहँ क्रूर विहाइ॥
अम्बरखण्डहिँ पाइके, छप्यो चन्द्र कित जाइ॥ १॥

यह सुनतेही सभा के लोगों ने उसको बात को पागल का प्रलाप समझा, परन्तु सूपकार के भेष में बैठे नल ने उसकी बात का यों उत्तर दिया—

हीना, अम्बरहिँ लेइकै, अन्यमण्डलहिँ जाय॥
कहा क्रूरता चन्द्र की, जो नहिँ परै लखाय॥ २॥

उनका यह उत्तर सुन दूत ने विचारा कि बस यह नलही हैं, विपत्ति में पड़ने से इनका ऐसा वैरूप्य हो गया है, यह सोच वह वहां से चला गया। विदर्भदेश में पहुँच राजा भीम और उनकी रानी तथा दमयन्ती को जो कुछ उसने देखा और सुना था सब कह सुनाया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब दमयन्ती ने अपने पिता से कहा कि निस्सन्देह वह आर्य्यपुत्रही सूपकार का भेषधर वहां ठहरे हैं, सो उनके लाने के लिये यह उपाय किया जाय कि राजा ऋतुपर्ण के पास एक दूत भेजा जाय, वह भूपति के पास पहुँचतेही यों कहे कि न जानें राजा नल कहां चले गये, अब उनका पता भी नहीं लगता है सो कल सबेरे दमयन्ती फिर स्वयंवर करेगी आजही अति शीघ्र आप विदर्भदेश में आ जावें। यह सुनतेही राजा ऋतुपर्ण रथ चलाने में चतुर आर्य्यपुत्र के साथ एक दिन में अवश्यही आजावेंगे । इस प्रकार पिता से सलाह कर दमयन्ती ने यही सन्देशा दे (कह) एक दूत को कोशलदेश में भेज दिया।

दूत ने जाके राजा ऋतुपर्ण से ज्यों का त्यों कह दिया, सो सुन अति उत्कण्ठित हो उन्होंने पास में बैठे सूदरूपी नल से बड़े प्रेमपूर्वक कहा "ह्रस्वबाहो! तुमने यह कहा था कि रथ चलाने का बहुत उत्तम ज्ञान तुम को आता है, तो आजही मुझे विदर्भदेश में पहुँचाओ तो सही।" यह सुन नल ने कहा "बहुत अच्छा, अभी पहुँचाता हूं" इतना कह अच्छे घोड़ों को जोतकर एक उत्तम रथ तैयार किया। नल अपने मन में सोचने लगे कि यह जो स्वयंवर करने की बात प्रगट की गयी है सो जान पड़ता है कि मेरी प्राप्ति की रचना रची गयी है नहीं तो दमयन्ती स्वप्न में भी ऐसा नहीं करने की, सो अब चलके देखताही हूं। इतना सोच सजाया रथ राजा ऋतुपर्ण के पास ले आये। जब राजा ऋतुपर्ण रथ पर सवार हुए तब नल ऐसे वेग से रथ हांक ले चले कि उसके वेग के आगे गरुड़ भी हार मान जावें। इतने में राजा ऋतुपर्ण का एक वस्त्र गिर पड़ा सो वह उसके पाने के हेतु रथ रुकवाया चाहते थे कि नल ने उनसे कहा "महाराज! आपका वह वस्त्र अब कहां! इतने में तो आपका रथ कई योजन चला आया।" यह सुन ऋतुपर्ण ने कहा "भाई तो रथ चलाने की यह विद्या मुझे सिखा दो और मैं तुम्हें पासों की विद्या सिखा देता हूं, इससे पासे तुम्हारे वश में हो जावेंगे और तुम हिसाब (गिनने) में भी प्रवीण हो जाओगे। देखो तुम्हारे विश्वास के लिये एक प्रत्यक्ष प्रमाण देता हूं, यह जो आगे एक वृक्ष दीख पड़ता है मैं उसके फलों और पत्तों की संख्या अभी बताता हूं तुम गिन के देख लो।" इतना कह राजा ने उस वृक्ष के जितने फल और पत्ते बताये नल ने गिन के उतने ही पाये । तदुपरान्त नल ने ऋतुपर्ण को रथज्ञान, और ऋतुपर्ण ने नल को अक्षज्ञान दे दिया । तब नल ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक दूसरे वृक्ष के पास जाकर इस विद्या की परीक्षा की तो जितनी संख्या उन्होंने गुनी थी वही उतरी, सो वह अति प्रसन्न हुए । इतने में उनके शरीर से एक काला पुरुष निकला, नल ने पूछा "तुम कौन हो ? उसने उत्तर दिया 'मैं कलि हूं, जब दमयन्ती ने तुमको वर लिया तो डाह स मैं तुम्हारे शरीर में पैठ गया था इसीसे जूए में तुम्हारी श्री भ्रष्ट (नष्ट) हो गयी, थी और जब तुम्हें वन में कर्कोटक ने डँस लिया तब तुम तो न जले परन्तु देखो मैं जो तुम्हारे भीतर था सो जल गया । जो व्यर्थही दूसरे का अपकार करता है भला उसका कल्याण कब हो सकता हैं । सो भाई अब मैं जाता हूं क्योंकि मुझको अन्यत्र भी तो रहना है" इतना कह कलि वहीं अन्तर्धान हो गया और राजा नल की मति तत्क्षण धर्म्म की ओर प्रवृत्त हुई तथा अपना तेज पाकर वह पुन: पूर्ववत् हो गये। अब रथ पर चढ़कर उन्होंने ऐसे वेग से उसे हांका कि उसी दिन राजा ऋतुपर्ण को विदर्भदेश में पहुंचा दिया। राजा ऋतुपर्ण ने राजगृह के निकट डेरा। डाला, जो आवे सोही हँस के पूछे "कहिये महाराज ! क्योंकर आना हुआ ?"

ऋतुपर्ण के आने का समाचार दमयन्ती को विदित हुआ सो रथ के अपूर्व शब्द से ही उन्होंने समझ लिया कि बस नल भी आये हैं इससे उनको बड़ा हर्ष हुआ, सो उन्होंने पता लगाने को अपनी निज की दूती भेजी, चेटी ने वहां जाकर पूछपाछ किई फिर आकर पीतम के लिये उत्सुक दमयन्तीसे कहा कि देवि! मैंने जाकर पता लगाया, यह जो कोशलेश्वर हैं सो आपके स्वयंवर का मिथ्यावाद सुन के आये हैं, उनके ह्रस्ववाहु नामक रसोइया रथ चलाने में बड़े होशियार हैं वह उन्हें रथ पर चढ़ा एक दिन में यहां लाये हैं, पाकशाला में जाकर मैंने सूपकार को देखा, काला भुजङ्ग, कुरूप हैं, परन्तु उनका प्रभाव बड़ा भारी है, बिना भरेही उनके बर्त्तनों में आपसे आप पानी भर गया, लकड़ियों में अग्नि नहीं लगाई गयी और वे जल उठीं, क्षण भर में उत्तमोत्तम भोजन तैयार हो गये, यह बड़ा आश्चर्य्य देखके मैं यहां चली आई । दूती के मुख से ऐसी बात सुनके दमयन्ती विचारने लगीं कि अग्नि और वरुण जिसके वश में हैं और जो रथविद्या के रहस्यों को जानता है ऐसा यह सूपकार आर्य्यपुत्र ही होंगे, मैं समझती हूं मेरे वियोग से उनकी आकृति ऐसी विकृत हो गई है, अच्छा फिर भी मैं परीक्षा करवाती हूं। इतना सोचकर उन्होंने उसी दासी के साथ अपने दोनों बच्चों को

दिखाने के लिये भेजा, बहुत दिनों के उपरान्त बच्चों को देख नल उन्हें गोद में बैठाय चुपचाप रोने लगे, आंखों से आंसू की धारा बह चली। उन्होंने चेटिका से कहा कि ऐसेही मेरे दो बालक अपने नाना के घर रहते हैं, उन्हीं की याद आ-गई इससे मुझे बड़ा दुःख हुआ है। दासी ने बालकों के साथ जाकर दमयन्ती से सब कह दिया, तब तो उनको और भी आशा हुई।

दूसरे दिन सवेरे उन्होंने अपनी दूती को यह आज्ञा दी कि मेरी ओर से ऋतुपर्ण के सूद से जाकर यह कह दो कि मैंने सुना है कि आपके समान कोई दूसरा सूपकार नहीं है सो आकर आप आज मेरे लिये व्यञ्जन बना देवें। "बहुत अच्छा" कह उस चेटी ने जाकर नल से निवेदन किया, सो वह ऋतुपर्ण से अनुमति ले दमयन्ती के पास आये। दमयन्ती ने कहा 'यदि आप सूपकार के रूप में नल राजा हों तो सच २ बतला देवें, मैं चिन्तासागर में डूब रही हूं सो मुझको पार पहुंचा दीजिये।" यह सुन राजा नल स्नेह, हर्ष, दुःख, और लज्जा से व्याकुल हो शिर नीचे कर अश्रु गद्गद हो दमयन्ती से समयोचित कहने लगे "सचमुच मैं वज्रहृदय वही पापी नल हूं जिसने कि तुमको सन्तप्त कर अनल का काम किया।" इतना सुन दमयन्ती ने नल से कहा कि यदि यही बात है तो आपका ऐसा कुरूप कैसे हो गया? तब नल ने कर्कोटक की मित्रता से लेकर कलि के निकल जाने तक का अपना सारा वृत्तान्त कह सुनाया, और उसी स मय कर्कोटक का दिया वह जोड़ा कपड़ा ओढ़ के अपना रूप प्राप्त किया। जब दमयन्ती ने देखा कि नल पुनः अपने मनोहर रूप में हो गये तो उनका मुखार-विन्द तुरत विकसित हो गया, नेत्रों से आंसू की धारा बह चली, जिससे दुःख-दावानल बुझ गया, अब उनको ऐसा हर्ष हुआ कि जिसका ठिकाना नहीं। बड़ी प्रसन्नता से नौकर चाकरों ने यह शुभ सम्वाद जाकर विदर्भराज को सुनाया सुन-तेही वह तुरत वहां चले आये और नल ने उन्हें प्रणाम किया तब अभिनन्दन कर उन्होंने अपने नगर भर में बड़ा उत्सव मनाया। हृदय में हँसते २ राजा भीम ने कोशलेश्वर ऋतुपर्ण का बड़ा सत्कार किया सो इस प्रकार उनसे सत्कार पाय, नल का सम्मान कर वह अपने देश को चले गये। इसके उपरान्त नल ने कलि के दौरात्म्य से जो कुछ उनपर बीता था सो सब अपना वृत्तान्त ससुर राजा भीम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को कह सुनाया और अपनी प्राणप्यारी के साथ कुछ दिन सुख से वहां निवास किया। फिर कुछ दिनों के अनन्तर वह अपने श्वशुर की सेना के साथ अपने देश निषध में पहुँचे, पहुँचतेही उन्होंने अपने भाई पुष्कर को जूआ खेलने को ललकारा, उनको तो अब अक्षज्ञान प्राप्त हो गया था सो बात की बात में पुष्कर को जीत के नीचा दिखा दिया, राजा नल तो धर्म्मात्मा थे, सो वह द्वापर से मुक्त अपने अनुज को आधा राज्य दे, दमयन्ती को पुनः प्राप्ति से अत्यन्त प्रमुदित हो सुखपूर्वक पूर्ववत् अपना राज्य करने लगे।

इतनी कथा सुनाय तारापुर में वह सुमन नामक ब्राह्मण, उस राजसुता बन्धुमती से, जिसका पति परदेश चला गया था फिर कहने लगा कि देवि! इस प्रकार से महापुरुष लोग दुःख सहकर अन्त में पुनः कल्याण भोग करते हैं, देखिये न, सूर्य्यादि अस्त होके फिर उदय होते हैं। इसी प्रकार हे अनघे! आप भी अपने पति को पावेंगी, वह परदेश से अति शीघ्र आकर आपको मिलेंगे, आप धीर धरें, शोक त्याग करें और पति के प्राप्त करने की कामना से मन को प्रफुल्लित रक्खें। ब्राह्मण की इतनी बात सुन रानी बन्धुमती को बड़ा धीरज हुआ, उन्होंने सद्गुणसम्पन्न उस सुमन विप्र को बहुत सा धन दिया फिर वह धैर्य्यपूर्वक अपने पति की प्रतीक्षा करती रहीं। थोड़ेही दिनों में उनके पति महीपाल देशान्तर से अपनी माता को लेके पिता के सहित आ पहुंचे, उनको देखतेही बन्धुमती के आनन्द का ठिकाना न रहा, जिस प्रकार पूर्णमासी के पूर्ण चन्द्र को निरख समुद्र उछलने लगता है उसी प्रकार महीपाल को देख उनका हृदय उमङ्ग से पूर्ण हो गया, घर २ उत्सव मङ्गल होने लगा, सब लोगों के नेत्र उन्हें देख कृतार्थ हुए। अब राजा महीपाल बन्धुमती के साथ उनके पिता के दिये राज्य को धारण कर धर्म्मपूर्व्वक राज्य और अनेक प्रकार के भोगों का भोग करने लगे।

या भांति मन्त्रिमरुभूतिकही विचित्रा।
आनन्ददायिनि कथा सुनिकै अनूपा॥
रामा समेत नरबाहनदत्तदेव।
वत्सेश्वरात्मज तबै अति तोष पायो॥१॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कथासरित्सागर का हिन्दी अनुवाद।

श्रीरामकृष्णवर्म्मा-लिखित।

शक्तियश नामक दसवां लम्बक।

सवैया।

श्रीगिरिजाप्रणयाचलमन्दर वासुकि बालत्रिनैबल पाई ।
शम्भुमुखार्णव ते निकसी या कथा की सुधा बसुधा महँ छाई ॥
प्रेम-समेत पियै जो कोई बलवीर भनै बलि ईस-दुहाई ।
पावहि सो जगदीस कृपा ते अनन्द अमन्द बड़ो बिबुधाई ॥

प्रथम तरङ्ग।

बार न लावत ढाहते, बिघनवृन्द को धाम ।
बारनवदन गणेश कों, बार बार परणाम ॥
पुर दाहन हित शम्भु को, बिलसत तीजो नैन ।
मङ्गल करहि सुरावरो, देहि सदा मुद चैन ॥
रक्ताकरुणार्त्तसिंह को, नख अवली अरु दीठ ।
असित अशुभ नासहिं सकल, ज्यों स्यामता मजीठ ॥

इस प्रकार वत्सेश्वर के पुत्र नरवाहनदत्त अपने मन्त्रियों के साथ भार्य्याओं के संग आनन्दपूर्वक सुख से कौशाम्बी में रहते थे। एक दिन वे अपने आस्थान में बैठे थे कि कोई वणिक् वहीं का रहनेवाला उनके पिता वत्सराज के पास कुछ निवेदन करने के लिये आया। द्वारपालों ने उस रत्नदत्त नामक बनिये के आने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

की सूचना महाराज को दी और आज्ञा पाकर उसे ला उपस्थित किया। महाराज के सन्मुख आने पर प्रणाम कर उसने यों निवेदन किया कि हे देव! इस नगरी में वसुदत्त नामक एक दरिद्री मजूरा बोझा ढोया करता था, अचानचक देखा गया कि वह अब भली प्रकार खाता पीता और कुछ दान भी किया करता है। यह देख मुझे परम कौतुक हुआ सो मैंने एक दिन उसे अपने घर पर बुला कर खूब खिलाया पिलाया, मदिरा पीकर जब वह मत्त हुआ तो मैंने उससे पूछा कि तुम्हें इतना धन कहां से मिला। उसने उत्तर दिया कि मैंने महाराज के द्वार पर पड़ा हुआ एक रत्नमय कड़ा पाया था, उसीसे एक रत्न निकाल कर मैंने हिरण्यगुप्त बनिये के हाथ एक लाख अशर्फियों पर बेच डाला, उसीसे मैं ऐसा सुखी रहता हूं। इतना कह उसने मुझे वह कड़ा दिखला दिया, मैंने जो देखा तो श्रीमान् का नाम उसपर खुदा पाया, इसलिये मैंने यह वृत्तान्त श्रीमान् के चरणकमलों में निवेदित कर दिया। इतना सुन महाराज वत्सराज ने उस भारिक को कड़े सहित तथाच उस हिरण्यगुप्त वनिये को भी बुलवा भेजा। कड़े को देखतेही महाराज ने कहा "हां हां हमें स्मरण आया यह वही कड़ा है जो नगर में जाते समय एक दिन हमारे हाथ से न जाने कहां गिर गया था।" सभासदों ने उस भारिक से पूछा कि तूने जब महाराज के नामवाला कड़ा पाया तो उसे छिपा क्यों रक्खा? उसने उत्तर दिया कि मैं मजूरा बोझा ढोनेवाला ठहरा मैं क्या जानूं कि इसमें महाराज का नाम लिखा है। मैं दरिद्री आदमी ठहरा, इसे पाकर मैंने उठा रखा। उस वनिये को जब डांटा गया तो उसने कहा कि मैंने तो इसे बाज़ार में मोल लिया, इस रत्न पर महाराज का कोई चिन्ह न था, अब यह कहा जाता है कि यह महाराज का है परन्तु उस समय मैं यह क्योंकर जान सकता था। उस वनिये का ऐसा भाषण सुन यौगन्धरायण ने जो वहीं बैठा था कहा कि हे देव! इसमें किसी का भी दोष नहीं है। इस विचारे भारवाहक को क्या कहा जाय क्योंकि इसे तो काला अक्षर भैंस बराबर है! दरिद्रता से पीड़ित होकर लोग तो चोरी करते हैं फिर पड़ी हुई वस्तु पाकर कौन छोड़ता है। इस वनिये ने मूल्य देकर इसे मोल लिया है सो इसे भी कुछ नहीं कह सकते। महामन्त्री का ऐसा बचन सुन महाराज ने कहा कि तुमारा कहना ठीक है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

फिर महाराज ने पांच सहस्र अशर्फियां अपने पास से उस बनिये को दीं जो उस भारिक ने खर्च कर दी थीं और शेष का धन उससे दिलवाकर वह रत्न बनिये से ले लिया और कड़े को उस भारबाहक से लेकर भण्डार में जमा कर उसकी छुट्टी कर दी, वह भी मुक्ति पा प्रसन्नतापूर्वक अपने घर चला गया। यद्यपि महाराज ने समझ लिया कि यह रत्नदत्त बनिया पापी और विश्वासघाती है तथापि उस समय अवसर देख उसका सत्कार किया। उनलोगों के चले जाने पर बसन्तक ने महाराज से कहा कि देव! देखिये दुर्भाग्य के मारे लोगों के हाथ में आई हुई सम्पत्ति भी चली जाती है। इस भारबाहक की दशा तो ठीक वैसीही हुई जैसी भद्र घट पानेवाले लकड़हारे की हुई थी। सुनिये मैं उसकी कथा कहता हूं।

पूर्व समय की बात है कि पाटलीपुत्र नगर में शुभदत्त नामक कोई भारवाही रहता था, वह नित्य जङ्गल से लकड़ी काट लाता और उसी बोझे को बेचकर अपने कुटुम्ब का पालन करता था। एक दिन वह लकड़ी की खोज में दूर बन में चला गया दैवात् देखता क्या है कि वहां चार यक्ष दिव्य वस्त्र और आभूषणों को पहिने बैठे हैं। इसे भयभीत देख उन लोगों ने इसका हाल पूछा और इसे दरिद्र जान उन्हें कृपा उत्पन्न हो आई सो वे यक्ष कहने लगे कि हे भद्र! तू यहीं हमलोगों के पास रहकर हमारा कामकाज किया कर और हम तेरे घर के लोगों के लिये खाने पहिरने का उत्तम प्रबन्ध कर देते हैं। उनकी यह बात स्वीकार कर शुभदत्त उन्हीं के पास रहने और उनकी स्नानादि सेवा टहल करने लगा। भोजन का समय उपस्थित होने पर यक्षों ने उससे कहा कि हे शुभदत्त इस भद्र घट में से भोजन निकालकर हमलोगों को दे। उसने देखा कि घड़ा तो खाली है सो वह कुछ सोच विचार करने लगा। यह देख उन गुह्यकों ने मुस्कुराकर कहा कि हे शुभदत्त तू इस घड़े में हाथ डाल, यह कामप्रद घड़ा है हाथ डालतेही इच्छानुसार भोजन की पूरी सामग्री इसमें आ जायगी। यह सुन ज्योंही उसने घड़े में हाथ डाला कि उसमें आहार और पानादि यथेष्ट आ गया। शुभदत्त ने सब वस्तु निकालकर उन यक्षों को भली प्रकार भोजन कराया और आज्ञा पाकर आप भी खाया पीया। इसी प्रकार कुछ तो भक्ति और कुछ भीति से उसने कुछ दिनों तक उनकी सेवा की पर कुटुम्ब की चिन्ता उसे सदा लगी रहती थी कि वे लोग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या करते होंगे और कैसे होंगे। किन्तु गुह्यकों ने स्वप्न में उसके कुटुम्बवालों को दर्शन दे धीरज बँधा दिया था जिसका हाल सुन शुभदत्त फिर प्रसन्न हो गया। योंही एक महीना बीत जाने पर यक्षों ने उससे कहा कि हे भद्र हमलोग तुम्हारी इस भक्ति से अत्यन्त प्रसन्न हैं सो तुम्हें कुछ दिया चाहते हैं कहो तुम्हारी क्या इच्छा है? यह सुन शुभदत्त ने कहा कि यदि आप लोग सत्यही मुझसे प्रसन्न हुये हैं तो इस भद्रघट को जो कभी खाली नहीं होता मुझे दे दीजिये। यक्षों ने कहा कि देने को तो हमलोग दे देंगे किन्तु तुम इसकी रक्षा न कर सकोगे। यदि यह टूट जायगा तो बेकाम हो जायगा, सो तुम कोई दूसरा बर मांगो । अनेक बार समझाने पर भी जब शुभदत्त ने दूसरा बर न चाहा तो लाचार हो उन यक्षों ने वह भद्रघट उसे दे दिया। घड़े को पा उन्हें प्रणाम कर वह बड़ी प्रसन्नता के साथ शीघ्र घर को पहुँचा और उसे आया देख उसके बन्धु बान्धव सब अत्यन्त आनन्दित हुए। वह उस घड़े में से भोजन और पान की सब सामग्री निकालता और यथार्थ भेद को छिपाने के निमित्त दूसरे पात्रों में रख लोगों के आगे परोसता और खाता पीता था। इस प्रकार वह आनन्द करने लगा और नित्य के बोझ ढोने के कष्ट से छूट गया। एक दिन मदिरा पीकर वह खूब उन्मत्त हुआ, बन्धुओं ने पूछा कि हे शुभदत्त तुम्हारे पास यह भोगसम्पत्ति कहां से आई? वह मूढ़ गर्व के मारे मुंह से तो कुछ भी न बोला पर उस कामप्रद घड़े को कन्धे पर उठा आनन्द से नाचने लगा। नशे में उन्मत्त तो था ही, घड़ा जो कन्धे से खसका सो गिरतेही चूर २ हो गया। वह घड़ा अपनी पूर्वावस्था से पुनः उन यक्षों के पास पहुँचा इधर शुभदत्त विषाद के मारे पुनः अपनी यथार्थ दशा को प्राप्त हुआ । सो आप देखते हैं कि इस प्रकार मद्य इत्यादि दुर्व्यसनों से बुद्धि के नष्ट हो जाने पर अभागी अपने पाये हुए धन को भी नहीं बचा सकते।

इस प्रकार वसन्तक से भद्र घट की मनोहर कथा सुन, वत्सेश्वर ने उठकर स्नान और आहारादिक्रिया सम्पन्न की। नरवाहनदत्त ने भी स्नान कर पिता के साथ भोजन किया उपरान्त सायङ्काल में मित्रों के साथ वह अपने भवन में चले गये। वहां पलङ्ग पर पौढ़े पर उन्हें नींद न आई, तब सब मन्त्रियों के सुनते मरुभूति ने उनसे कहा कि देव! मैं जानता हूं कि दासी से रमण करने की इच्छा से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आपने किसी रानी को नहीं बुलाया और न वह दासी ही बुलाई गयी इसीसें आपको नींद नहीं आई, सो आप जान बूझकर भी वेश्याओं में अनुराग रखते हैं, देखिये उनमें सद्भाव का लेश भी नहीं रहता, सुनिये इसी प्रकरण में मैं एक कथा सुनाता हूं—

इस देश में ऋद्धिसिद्धि से भरा चित्रकूट नामक बड़ा नगर है वहां रत्नवर्मा नामक एक बड़ा धनवान् बनिया रहता था। ईश्वर की आराधना से उसके एक पुत्र हुआ अत: उसने उसका नाम ईश्वरवर्मा रक्खा। जब पुत्र सब विद्याओं को पढ़ चुका और जवानी के लक्षण दीखने लगे तब एक पुत्रवाला वह श्रेष्ठ बनिया रत्नवर्मा सोचने लगा "ब्रह्मा ने रूपिणी वेश्या की जो सृष्टि की यह उनकी बड़ी भूल है, क्योंकि वेश्या यौवनान्ध धनाढ्यों के जीवन और धन दोनों का अपहरण कर लेती है। सो अब ऐसा करना चाहिए कि मैं अपने इस पुत्र को किसी कुटिनी के सुपुर्द कर दूं जिससे कि यह वेश्याओं की ठगविद्या सीख ले और उनके वश में न पड़े।" इतना सोच विचार वह अपने पुत्र को साथ ले यमजिह्वा नाम्नी कुटिनी के घर गया। वहां जाकर क्या देखता है कि मोटी ठुड्डी, लम्बे दांत और टेढ़ी नासिकावाली कुटिनी अपनी पुत्री को इस प्रकार कह २ सिखा रही हैं— "बेटी! धनही से सबका आदर होता है, विशेषत: रण्डी का, सो जो वेश्या प्रेम में फँस गई तो फिर धन कैसे पा सकती है इससे वेश्या को उचित है कि अनुराग छोड़ दे अर्थात् किसी के प्रेम में न फँसे। राग जो है सो वेश्या का तथा पश्चिम की सन्ध्या का अगुआ दूत है अतएव वेश्या को चाहिये कि सुशिक्षित नटी के समान मिथ्या राग (प्रेम) बहुत जनावे। इस तरह पहिले खूब प्रेम बढ़ा मनुष्य को अपने हाथ पर चढ़ा ले तब पीछे उसका धन दुहने लगे, जब उसका धन निचोड़ ले तब उसे छोड़ दे, और जब देखे कि उसके पास आजकल फिर धन हो गया है तो फिर उसे मिला लेवे। जो वेश्या, मुनि के समान, जवान, बालक, वृद्ध, कुरूप क्या सुरूप सबको एक भाव से देखती है वही परम अर्थ प्राप्त करती है।" इस प्रकार वह कुटिनी अपनी बेटी को शिक्षा दे रही थी कि रत्नवर्मा उसके पास गया और उसके आव भगत करने पर उसके बगल में बैठ गया। तदुपरान्त उसने कुटिनी से कहा कि मात:! इस मेरे पुत्र को तुम वेश्याओं की सब कला सिखा दो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जिससे कि यह चतुर हो जाय मैं इस कार्य्य के लिये एक सहस्र मुहर दूंगा। उसकी यह बात सुन वह कुटिनी राजी हो गयी तब रत्नवर्म्मा उसे एक सहस्र अशर्फी दे अपने पुत्र ईश्वरवर्म्मा को उसके हाथ में सौंप अपने घर चला गया।

अब ईश्वरवर्म्मा यमजिह्वा के घर में रहके वेश्याओं की धूर्त्तता सीखने लगा, एक बर्ष में अनेक कलायें सीखकर वह अपने पिता के घर चला गया। जब उसकी अवस्था सोलह वर्ष की हुई तब उसने पिता से बोला कि हमलोगों के धर्म्म और काम धनही से सिद्ध होते हैं, अर्थही से मान होता है और द्रव्यही से प्रसिद्धि होती है। उसकी ऐसी बात सुन रत्नवर्म्मा ने कहा कि बेटा बात तो ऐसीही है, सो उसने प्रसन्न होकर उसे पांच करोड़ रुपयों की पूंजी कर दी। ईश्वरवर्मा निज पिता से इतना द्रव्य पाय बनियों के साथ शुभ मुहूर्त्त में स्वर्णद्वीप जाने की इच्छा से चल पड़ा। चलते २ उसे मार्ग में काञ्चनपुर नाम एक नगर मिला जिसके बाहर एक बगीचे में उसने डेरा डाल दिया। स्नानोत्तर भोजन कर, अतर फुलेल लगा वह युवा नगर में पैठा और एक स्थान पर जहां कि तमाशा हो रहा था देखने गया, वहां जाकर क्या देखता है कि सुन्दरी नाम्नी एक वारवनिता तारुण्य रूपी वायु से उछलती रूपसागर की लहर की भांति नाच रही है। देखते ही इसका मन उसपर लट्टू हो गया, इस अवसर पर मानो उस कुटिनी की शिक्षा क्रोध से दूर जा बैठी। जब नाच (समाप्त) हो चुका तो इसने उसके पास अपने एक मित्र को भेज तार घाट की बात चलाई जिसे सुन उसने बड़ी नम्रता से अहोभाग्य कह उसकी बात स्वीकार कर ली। सो ईश्वरवर्मा अपने डेरे में द्रव्य की रक्षा के निमित्त चतुर रखवालों को नियुक्त कर उस सुन्दरी के घर गया, इतने में सुन्दरी की माता मकरकटी ने उसके पास आकर बड़ा आदर सत्कार किया। जब रात्रि हुई तो मकरकटी ईश्वरवर्म्मा को एक कमरे में ले गई जहां रत्नजटित चँदवा तना था और एक पलङ्ग भी बिछा था। वहां विचित्र नृत्य देखने के उपरान्त कामकला में अति विदग्ध उस सुन्दरी के साथ उसने आनन्द किया। अब तो सुन्दरी उसके पास से तनिक भी न हटती उसने ऐसा गाढ़ा प्रेम दिखाया कि दूसरे दिन भी ईश्वरवर्म्मा उसके घर से न निकल सका। इन दो दिनों में उस युवा बनिये ने पच्चीस लाख का धन सोने और रत्न से मिश्रित सुन्दरी को दे दिया। परन्तु सुन्दरी ने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चोचला कर उससे कहा कि हे प्रिय ! मैंने बहुत धन कमाया है किन्तु तुम्हारे समान प्रेमी मुझे कोई न मिला, सो जब तुम्हीं मुझे मिलगये तो अब मैं धन लेकर क्या करूँगी। इस प्रकार जब झूठी माया दिखा सुन्दरी वह द्रव्य नहीं लिया चाहती थी कि इतने में उसकी माता ने जिसकी वह एकही सन्तति थी उससे कहा "बेटी हमारा जो कुछ धन है सो अब इनका हो चुका सो उसी में मिलाके तू रख देना, ले न ले इसमें हानिही क्या है। माता की ऐसी बात सुन सुन्दरी ने अनिच्छापूर्वक वह धन ले लिया और मूर्ख ईश्वरवर्म्मा समझता था कि सचमुच यह मेरे प्रेम में दीवानी हो गयी है । इस प्रकार उसके रूप, नाच और गाने से उस बनिये का मन मोहित हो गया था सो वह दो मास वहीं डँटा रहा, इस अवसर में उसने सुन्दरी को धीरे २ करके दो करोड़ रुपये दे दिये।

एक दिन उसका मित्र अर्थदत्त आपही उसके पास जाके एकान्त में उससे कहने लगा कि हे मित्र ! बड़ा परिश्रम कर तुमने कुटिनी से जो विद्या सीखी थी सो क्या अवसर पड़ने पर जाती रही जैसे कि कातर की अस्त्रविद्या ?। वेश्या के प्रेम को जो तुम सद्भाव समझ रहे हो तो क्या कभी वह सत्य हो सकता है ? मरुभूमि में भी क्या कभी जल पाया जाता है ? सो जबलों तुम्हारा धन यहीं खप न जाय इसके पूर्व्व आओ चले चलें, यह समझ रखो कि तुम्हारे पिता के कान तक यह बात पहुँच जायगी तो बड़ा उपद्रव होगा वह कभी क्षमा न करेंगे, बड़े क्रुद्ध होंगे। मित्र की ऐसी बात सुन वह वणिक्पुत्र कहने लगा "मित्र ! बात तो तुम ठीक कहते हो कि वेश्याओं का विश्वास न करना चाहिए किन्तु सुन्दरी ऐसी नहीं है। हे सखे ! एक क्षण भी सुन्दरी मुझे बिना देखे नहीं जी सकती; सो यदि सर्वथा चलना ही निश्चय है तो जाकर उसे समझाओ।" उसकी ऐसी बात सुन अर्थदत्त ने उसी के साम्हने तथा सुन्दरी की माता मकरकटी के समक्ष सुन्दरी से कहा कि इसमें कोई सन्देह नहीं कि ईश्वरवर्मा पर तुम्हारी बड़ी प्रीति है परन्तु अब तो स्वर्णद्वीप में व्यापार करने के लिये अवश्य जाना है। सुनो सखि ! वहां से बहुत धन कमा कर लावेंगे बस फिर जीवन भर तुम्हारे साथ सुख से रहेंगे, इससे कहता हूं कि यह बात मान लो। अर्थदत्त का ऐसा कहना सुन सुन्दरी की आंखें डबडबा आईं वह ईश्वरवर्म्मा का मुख निरखने लगी, पश्चात् बड़ा विषाद कर उसने अर्थ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दत्त से कहा "आप लोग स्वयं जानते हैं, मैं क्या कहूं, भला बिना परिणाम देखे कौन किसका विश्वास करता है, मेरे भाग्य में जो लिखा होगा सो होवेहीगा।" यह सुन उसकी माता ने उससे कहा कि बेटी शोक मत कर, धीरज रख, यह तेरे प्रणयी धन कमाकर अवश्य तेरे पास आवेंगे, यह कभी तुझे न छोड़ेंगे। इस प्रकार माता ने उसे समझा बुझाके धीरज दिया पीछे उससे सलाह करके उन दोनों के जाने के मार्ग में जो कूआं पड़ता था उसमें जाल डलवा दिया। अब ईश्वरवर्म्मा का चित्त झूले के समान असमंजस में पड़ गया बिचारा विरह के शोकसागर में गोते खाने लगा, उस दिन सुन्दरी ने भी बहुत कहने सुनने से थोड़ा सा भोजन किया मानो शोक के मारे उसे कुछ सुहाता ही न था। गाने बजाने तथा नाचने में उसका मन नहीं लगता था, ईश्वरवर्म्मा ने बहुतेरी प्रेम भरी बातों से उसे समझाया बुझाया परन्तु किसी प्रकार उसे चैन न होता था।

अब मित्र के ठहराये दिन ईश्वरवर्म्मा सुन्दरी के घर से विदा हुआ, प्रस्थान समय में कुटिनी ने मङ्गलाचार किया। सुन्दरी भी अपनी माता के साथ रोती हुई उसके पीछे २ नगर के बाहर उस कूएँ तक गई जिसके भीतर पहिलेही जाल बांध दिया गया था। ज्योंही वह सुन्दरी को लौटाकर आगे बढ़ा त्योंही वह उस जाल पड़े कूएँ में धड़ाम से कूद पड़ी। "हा स्वामिनि! हा पुत्रि!" इस प्रकार नौकरानियों और सेवकों का तथा उसकी माता का हाहाकार सुनाई पड़ा इससे अपने मित्र के साथ वह वणिक्पुत्र लौट आया और जब उसे विदित हुआ कि उसकी प्यारी कूएँ में गिर पड़ी है तब तो वह शोक से बड़ाही व्याकुल हुआ। इतने में विलख २ रोती हुई मकरकटी ने अपने उन नौकरों को जिन्हें कि पहिले से सिखा पढ़ा रक्खा था उस कूएं में उतारा, रस्सी पकड़कर वे नीचे उतर गये और बोले "अरे जीती है, जीती है"; इतना कह वे सुन्दरी को ऊपर निकाल ले आये। ऊपर निकलने पर सुन्दरी मुर्दे के समान अचेत पड़ी रही पर जब उसे विदित हुआ कि बनिये का बेटा लौट आया है तो धीरे २ सिसुकने लगी। अब ईश्वरवर्म्मा अपनी प्रिया को समझा बुझाके प्रसन्न हो अपने अनुचरों के साथ उसके घर लौट गया। उसको निश्चय हो गया कि सुन्दरी का प्रेम निष्कपट है, उसकी प्राप्ति से अपना जन्म सफल मान, उसने पुनः यात्रा से मुंह मोड़ लिया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अब उसने वहां पक्की तरह डेरा डाला, सो एक दिन उसका मित्र अर्थदत्त फिर उसे समझा के कहने लगा "मित्र! यह क्या आपने अपना सर्व नाश कर डाला। मत समझो कि सुन्दरी कूएँ में गिर पड़ी थी इससे उसका स्नेह सच्चा है, देखिये, कहा है "विधिहुं न नारि-हृदयगति जानी" फिर मित्र यह तो साधारण स्त्रियों की बात कही गई है, यहां तो वेश्याओं से काम पड़ा है, कुटिनियों की कला ब्रह्मा भी नहीं जान सकते तो भला तुम मनुष्य हो किस गिन्ती में ?। जब पिता का सब धन उड़ा चुकोगे तो उन्हें क्या मुंह दिखाओगे, उनसे कहोगे क्या, कहां जाओगे ? सो यदि अपना कल्याण चाहो तो अब से भी भला है कहीं निकल चलो।" इस प्रकार मित्र का बचन उस युवा बनियें ने सुना तो सही पर उसपर कुछ ध्यान न दिया और एकही महीने में वे तीन करोड़ रुपये भी उड़ा डाले। अब तो पास में एक टका भी नहीं, और रण्डी तो पैसे की है, जब उसने देखा कि अब उसके पास कुछ न रहा तब मकरकटी कुटिनी ने उसे गर्दनिया दे सुन्दरी के घर से निकलवा दिया।

ईश्वरवर्म्मा की यह दशा देख अर्थदत्त इत्यादि झटपट अपने नगर में लौट आये और जो कुछ उस वणिक्पुत्र पर बीता था सो सब उन्होंने उसके पिता से कह सुनाया। यह सुन उसके पिता रत्नवर्मा को बड़ा शोक हुआ सो उसने यम जिह्वा कुटिनी के पास जाकर उससे कहा "भला यह कैसी बात है कि मैंने तुमको इतना धन दिया और तुमने मेरे पुत्र को ऐसी शिक्षा दी कि मकरकटि ने बात की बात में उसका सर्वस्व हरण कर लिया। इतना कह उसने अपने पुत्र की करनी आद्योपान्त कह सुनाई। यह सुन उस बूढ़ी कुटिनी ने उससे कहा "अच्छा जो हुआ सो हुआ, अब आप अपने पुत्र को यहां बुलाइये, अबकी वह पट्टी पढ़ाऊँगी कि मकरकटी का सर्वस्व वही अपहरण कर लेगा।" यमजिह्वा कुटिनी की ऐसी प्रतिज्ञा सुन रत्नवर्मा ने अपने पुत्र के हितैषी मित्र अर्थदत्त को बहुत सा धन देकर तत्क्षण विदा किया और कहा कि जाकर उसे ले आओ।

अर्थदत्त उसी कांचनपुर को लौट गया और जो कुछ सन्देशा था सो ईश्वरवर्म्मा को सुनाय उससे फिर इस प्रकार कहने लगा कि मित्र! मैं बार २ तुमको समझाता रहा पर तुमने मेरा कहा न किया अब तुमने वेश्या का सद्भाव अपनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आंखों से देख लिया न, पांच करोड़ देके भी तुमने गर्दनिया पाई, भला ऐसा कौन बुद्धि का सागर होगा जो वेश्याओं और बालू में स्नेह * पाने की इच्छा करेगा ? अथवा तुम्हारा क्या दोष कहा जाय सांसारिक पदार्थों का गुण ही ऐसा है। मनुष्य तभी तक विद्वान्, वीर और शुभकर्मों का भागी रह सकता है जबलों कि रमणी के जाल में नहीं फँसता। अच्छा जो हुआ सो हुआ अब चलकर अपने पिता का क्रोध शान्त कराओ। इस प्रकार समझा बुझाके अर्थदत्त ईश्वरवर्म्मा को उसके पिता के पास लौटा ले गया। पिता बिचारा क्या करे, पुत्र का स्नेह तो बड़ा गाढ़ होता है तिसपर जिसके एकही पुत्र हो उसका क्या पूछना, सो वही दशा रत्नवर्मा की थी, यह उसका एकमात्र पुत्र था सो वह स्नेह के मारे कुछ डांट डपेट तो कर सका ही नहीं, उलटे सान्त्वना देनी पड़ी अतः समझाकर पुनः उसे यमजिह्वा नाम्नी कुटिनी के पास ले गया। उसके पूछने पर उसने आदि से लेकर सुन्दरी के कूएँ में गिरने और अन्त में धन नष्ट होने पर्य्यन्त की सारी कथा अर्थदत्त से आद्योपान्त कह सुनवाई। यह सुन यमजिह्वा बोली "बस इसमें मेरा ही अपराध है क्योंकि सब कुछ तो सिखाया पर भूल के यह माया इसे न सिखा सकी। अब मैं समझ गयी, उस कूएँ में मकरकटी ने पहिले ही से जाल लगवा दिया था इसीसे सुन्दरी उसमें कूद के भी न मरी, अच्छा कुछ चिन्ता नहीं इसका उपाय भी मेरे हाथ में है।" इतना कह उस कुटिनी ने अपनी दासियों को बुलाया और कहा कि जरा आल नामक मेरे बन्दर को तो यहां लाना। उन सभों के समचही उसने उस बन्दर के साम्हने अपनी हजार अशर्फियां रख दीं और कहा कि इन्हें निगल जा, बानर तो खूब सिखाया पढ़ाया था वह झट उन अशर्फियों को निगल गया। तब यमजिह्वा बोली "पुत्र बीस इसे दे दो, इसे पचीस देओ, इसको साठ दे दो और एक सो इसको भी।" इस प्रकार जिस जिसको यमजिह्वा जितनी २ बतलाती थी वह कपि उन निगली हुई अशर्फियों में से उतनीही उतनी उगिलकर उसको देता गया। यों उस २ आल मर्कट का तमाशा दिखाय यमजिह्वा ने ईश्वरवर्म्मा से कहा कि बस इस बानर को तुम लेके फिर एक वार सुन्दरी के घर जाओ, पहिलेही से चुपके इसे प्रति दिन अशर्फियां निगलवा देना,

* वेश्यापक्ष में प्रेम, बालू के पक्ष में तेल।

पीछे से भिन्न २ प्रकार के व्यय के लिये इससे मांगना। जब चिन्तामणि के तुल्य इस मर्कट को सुन्दरी देखेगी तो अपना सर्वस्व देकर वह तुमसे अकेले इस बन्दर को मांग लेगी। सो जब तुम उसका सम्पूर्ण धन ले चुकना तो इसको इतनी मुहरें निगलवा देना जितनी दो दिन के लिये उपयुक्त हों और तुम चटपट वहां से कहीं दूर निकल जाना। इतना कह यमजिह्वा ने ईश्वरवर्म्मा को वह बानर दे दिया, पिता ने फिर दो करोड़ की पूंजी पुत्र को दी।

अब यह सब लेके ईश्वरवर्म्मा ने फिर कांचनपुर की यात्रा की। एक दूत तो पहिलेही शुभसम्वाद देने के लिये भेज दिया गया था, अब वणिक्पुत्र भी सुन्दरी के घर आ पहुंचा। उसके पहुँचते ही सुन्दरी ने बड़े भाव भाव से उसका स्वागत किया, उसके सब साथियों का भी बड़ा सत्कार किया पश्चात् वह ईश्वरवर्म्मा के गले में लपट कर मिली मानो अपनी अभिलाषा की पूर्णता के प्रतिरूप से लपटी हो, अब अनेक प्रकार के गुलछर्रे फिर उड़ने लगे। जब ईश्वरवर्मा ने देखा कि सुन्दरी को पूर्ण विश्वास हो गया कि मैं वैसा ही लट्टू हूं तो उसने अवसर पाय खर्च की कमी दिखाय अर्थदत्त से कहा कि जाओ उस आल (बानर) को तो लाओ। "बहुत अच्छा" कह वह चला गया और उस मर्कट को ले आया। वह बन्दर तो पहिलेही एक सहस्र दीनार लील चुका था आतेही ईश्वरवर्म्मा उससे कहने लगा "बेटा आल! देओ तो आज हमलोगों के खान पान के लिये तीन सौ अशर्फियां, ताम्बूल इत्यादि के लिये भी एक सौ देओ, एक सौ मां मकरकटी को देओ तथा एक सौ ब्राह्मणों को बांट दो और एक हजार में जो बचे सो मेरी प्यारी इस सुन्दरी को दे दो। ईश्वरवर्म्मा के कथनानुसार उस बानर ने क्रमानुसार सब अशर्फियां उगिल २ दे दीं। इस प्रकार एक पखवारे तक प्रतिदिन ईश्वरवर्म्मा उस आल से खर्च के लिये अशर्फियां दिलाता रहा, यह देख मकरकटी और सुन्दरी दोनों विचार करने लगीं कि इसके पास यह बन्दर क्या है मानो चिन्तामणि है, देखो यह प्रति दिन एक सहस्र अशर्फियां देता है, यदि यह हमें मिल जाय तो हमारा मनोरथ सिद्ध हो जावे। इस प्रकार एकान्त में माता के साथ ऐसा विचार कर एक दिन जब ईश्वरवर्म्मा भोजन कर सुख से बैठा हुआ था कि सुन्दरी उसके पास जाकर कहने लगी "प्यारे! यदि आप सचमुच मुझसे प्रसन्न हैं तो यह आल मुझे दे दीजिये।" यह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुन हँसकर उसने कहा कि वही तो मेरे पिता का सर्वस्व (धन) है सो तो नहीं दिया जा सकता। उसकी ऐसी बात सुन सुन्दरी ने फिर कहा "अच्छा पांच करोड़ ले लीजिये और इसे दे दीजिये।" यह सुन ईश्वरवर्मा ने निश्चित रूप से कह दिया कि यह क्या कहती हो, तुम अपना सर्वस्व दे दो अथवा यह काञ्चनपुर ही क्यों न दे दो तौभी यह नहीं दिया जा सकता और पांच करोड़ की बातही क्या है। यह सुन सुन्दरी ने उत्तर दिया कि अच्छा मेरा सर्वस्वही ले लीजिये और इस बन्दर को दे दीजिये नहीं तो मेरी माता मुझ पर बहुत क्रोध करेंगी, इतना कह सुन्दरी ने उसके चरण पकड़ लिये। यह देख अर्थदत्त इत्यादि बोले "अच्छा भाई दे देओ जो होगा सो देखा जायगा, तब ईश्वरवर्म्मा ने देने की प्रतिज्ञा की और वह दिवस हँसी खुशी से सुन्दरी के साथ विताया। दूसरे दिन जब सुन्दरी ने बड़ी चिरौरी से मांगा तब ईश्वरवर्म्मा ने उस मर्कट को दे दिया जिसे कि गुप्त रीति से दो सहस्र दीनार निगलवाये गये थे और उसके मूल्य में सुन्दरी का जो कुछ रहा सो सब ले लिया। सब कुछ लेने के उपरान्त झटपट वे सब स्वर्णद्वीप में वाणिज्य करने चले गये।

अब तो सुन्दरी के आनन्द का ठिकाना न रहा उसने मानो सारी दुनिया का धन पा लिया, दो दिन तक तो वह आल नामक बानर मांगने पर सहस्र सहस्र दीनार देता रहा पर तीसरे दिन क्या दे, सुन्दरी बड़ी प्रीति से पुचकार २ मागती थी पर वह दे कहां से ? तब तो क्रोध में आकर वह उसे घूंसे मारने लगी इतने में वह बानर भी कुपित हो उछला और दातों और नखों से सुन्दरी और उसके मां के मुंह नोचने और बकोटने लगा, वे दोनों पीटतीं और यह उनको नोचता खरोंचता। तब उसकी माता ने, जिसका कि मुंह लहूलोहान हो गया था, लाठियों से ऐसा पीटा कि वह आल मर्कट वहीं ठण्डा हो गया। उधर सर्वस्व नष्ट हो गया इधर वह बानर भी मर गया यह देख सुन्दरी और उसकी माता शोक से मरने पर उतारू हो गयीं। धीरे २ यह बात नगर में फैल गई तब सब लोग हँस २ कहने लगे कि जिस प्रकार मकरकटी ने जाल डाल उसका धन हर लिया था वैसेही उस चतुर ने भी आल का जाल करके इसका सर्वस्व अपहरण कर लिया। इसने दूसरे के लिये तो जाल फैलाया पर अपने आल को न पहिचाना।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब सुन्दरी और उसकी माता को आत्मीय लोग समझाने बुझाने लगे, अर्थ तो उनका नष्ट होही गया था. मुंह भी नोचनाच के थोबरा बना दिया गया, बड़ी कठिनता और बड़े कष्ट से तब मरने से वे दोनों विमुख हुईं । उधर ईश्वरवर्म्मा थोड़े ही दिनों में स्वर्णद्वीप से बहुत सा धन कमाय चित्रकूट में अपने पिता के घर आ पहुँचा ।

जब पिता रत्नवर्म्मा ने देखा कि पुत्र बहुत सा धन कमाकर आया है तो यम-जिह्वा कुटनी को धन से सन्तुष्ट कर बड़ा भारी उत्सव मनाया । अब ईश्वरवर्म्मा एक तो अनेक प्रकार की माया में प्रवीण हो गया था, दूसरे वेश्या की ओर से उसे वैराग्य हो गया सो वह विवाह कर अपने घर में सुख से रहने लगा ।

इतनी कथा सुनाय मरुभूति नरवाहनदत्त से कहने लगे कि पृथ्वीनाथ ! इस प्रकार आपने सुना न, वेश्याओं के हृदय में कपट छोड़ सत्यता का तो लेश मात्र नहीं रहता । इसलिये जो लोग अपना कल्याण चाहें वे भूलकर भी उनकी सङ्गति न करें क्योंकि उनको सङ्गति और घने जङ्गल की गति विना सार्थ नहीं होती ।

इहि विधि सुनि मरुभूति तें आल जाल परसङ्ग ।
नरवाहनदत हँसत भे गोमुखादि के सङ्ग ॥

दूसरा तरङ्ग ।

इस प्रकार वेश्याओं के असद्भाव की कथा मरुभूति जब कह चुके तब धीमान् गोमुख कुमुदिका की कथा, जोकि ठीक ऐसीही है कहने लगे —

प्रतिष्ठापुर में विक्रमसिंह नामक एक राजा थे, ब्रह्मा ने उन्हें अन्वर्थनामाही बनाया था क्योंकि वह पराक्रम में सचमुच सिंह के समानही थे । उनकी पटरानी का नाम शशिलेखा था जो उत्तमकुलप्रसूता तथा अत्यन्त भाग्यवती थीं, आभूषणों से अङ्ग की शोभा होती है पर वह देवी ऐसी सुन्दरी थीं कि उनका अङ्गही मानो आभूषणों को सुशोभित करता था । एक समय की बात है कि राजा अपने नगर में विराजमान थे कि उसी अवसर मे उनके गोत्रज महाभट, वीरबाहु सुभट तथा प्रतापादित्य प्रभृति पांच महाबलशाली महिपालों ने उनके महल में आय उन्हें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

घेर लिया। मन्त्री तो सामादि के उपाय में लग रहे थे पर राजा उनका निराकरण कर उन राजाओं से लड़ने को निकले। दोनों सैन्यों में अस्त्र शस्त्र की वृष्टि होने लगी, उस समय राजा अपने बल के दर्प से हाथी पर चढ़ स्वयं युद्ध में उपस्थित हुए। जब उन महाभटादि राजाओं ने देखा कि वह अकेले ही केवल धनुष के सहारे शत्रुसेना को दल रहे हैं तब वे पांचो एक साथ उनपर टूट पड़े। उन पांचो की सेना तो एक साथ मिल गयी थी और बहुत भी थी, किन्तु विक्रमसिंह की सेना गिनती में बराबर थी इससे टूट चली। उस समय अनन्तगुण नामक मन्त्री जो राजा विक्रमसिंह के बगलही में था बोला "महाराज! हमारी सेना छितरा गई है अब हमारी जीत नहीं हो सकती। आपने हमारी बात न मान के बलवानों से झगड़ा कर लिया सो अब भी कुछ बिगड़ा नहीं है मैं जो कहता हूं उसे कीजिये, कल्याण इसी में है। आप झटपट इस हाथी से उतरकर घोड़े पर चढ़िये और चलिये हम किसी दूसरे देश में चलें, यदि आप जीते रहेंगे तो शत्रुओं को फिर जीत लेंगे।" इस प्रकार मन्त्री की बात सुन राजा विक्रमसिंह धीरे हाथी पर से उतर पड़े और घोड़े पर चढ़ अपने सचिव के साथ अपनी सेना से निकल गये और वेष बदल उसके साथ चलते २ उज्जयिनीपुरी में पहुँचे। वहां कुमुदिका नाम्नी एक प्रसिद्ध धनवती वेश्या रहती थी, राजा अपने मन्त्री के साथ उसके घर में गये, अकस्मात् उन्हें घर में आया देख वह विलासिनी सोचने लगी "यह तो कोई महान् पुरुष मेरे घर आये हैं, अपने तेज और लक्षणों से तो ऐसे जान पड़ते हैं कि कोई महाराज हैं, यदि यह मेरे हाथ चढ़ जावें तो मेरे सब मनोरथ ही सिद्ध हो जावें।" इतना सोचकर उठके उस कुमुदिका ने राजा का स्वागत किया और बड़ी नम्रता से अभिवादन कर बड़ा भारी सत्कार किया। राजा जब कुछ सुस्ता चुके तो थोड़ी देर में उसने कहा "अहो मैं धन्य हूं, आज मेरे पूर्वजन्म का सुकृत (पुण्य) फलीभूत हुआ कि श्रीमान् ने आकर मेरा गृह पवित्र किया, इस प्रसाद से मैं आपकी मोल ली हुई दासी हूं; मेरे पास सौ हाथी, बीस हजार घोड़े तथा रत्नों से भरा जो मन्दिर है सो ये सब आपके हैं आप किसी बात की चिन्ता न करें।" इतना कह कुमुदिका ने मन्त्री के सहित राजा को स्नानादि उपचार करवाये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

राजा खिन्न तो थे ही किन्तु अब तो कुछ उपाय नहीं, सो सर्वस्व समर्पण करनेवाली उस कुमुदिका के साथ सुख से रहने लगे। उसके द्रव्यों का उपभोग करते और याचकों को उसके रुपये दान करते किन्तु वह तनिक भी विकार न दिखाती प्रत्युत अधिक सन्तुष्ट होती। राजा इसी में बड़े फूले रहते कि इसका मेरे ऊपर बड़ा अनुराग है। एक दिन उस साथ रहनेवाले अनन्तगुण नामक मन्त्री ने एकान्त में उनसे कहा "देव! वेश्याओं में सद्भाव तो कभी होताही नहीं, और कुमुदिका जो आपसे ऐसा प्रेम जना रही है तो न जानें इसमें क्या कारण है।" यह सुन राजा बोले "ऐसा मत कहिये कुमुदिका मेरे लिये अपने प्राण भी दे देगी, यदि आपको विश्वास न हो तो मैं इसका प्रमाण दिखा देता हूं।" मन्त्री से इतना कह राजा ने एक बहाना ठान लिया, आप थोड़ा सा कुछ भोजन करते थोड़ाही पीते, इस प्रकार अन्न जल त्यागने से धीरे २ उनका शरीर दुर्बल हो गया, अब एक दिन ऐसा दिखाया कि मानो मर गये, हाथ पैर सब लकड़िया गये। तब नौकर रथी पर रख राजा को श्मशान में ले गये और साथ में रोता और विलपता वह अनन्तगुण मन्त्री भी गया। शोक के मारे कुमुदिका भी सती होने चली, लोगों ने बहुत कुछ समझाया बुझाया, वह क्यों माने, झट श्मशान पर पहुँच राजा के साथ चिता पर आरूढ़ हो गयी। इसके पहिले कि आग लगाई जावे, यह जानकर कि कुमुदिका ने यहां तक मेरा साथ दिया राजा जम्हाकर उठ बैठे। सब लोग यह देख कहने लगे कि बड़े भाग्य की बात है कि हमारे महाराज जी उठे, इतना कह आनन्दपूर्वक वे उन्हें कुमुदिका के साथ घर ले गये, वहां राजा के जी जाने से बड़ा भारी उत्सव मनाया गया।

जब राजा चंगे होकर भली भांति स्वस्थ हो गये तो एक दिन एकान्त में उन्होंने अपने मन्त्री से कहा कि अब तो आपने देखा न कि कुमुदिका का मेरे ऊपर कैसा अनुराग है? यह सुन मन्त्री ने उत्तर दिया कि महाराज मैं तो अब भी विश्वास नहीं करता, आप समझ रक्खें इसमें अवश्य कुछ कारण है, अब इस-का पता लगाना चाहिये, आइये हम (लोग) अपने को प्रगट कर देवें जिससे यह अपनी सेना हमारे हवाले करे तब अपने मित्रों से भी सैन्य ले हमलोग शत्रुओं पर चढ़ाई कर उन्हें युद्ध में नष्ट कर डालें। मन्त्री इस प्रकार कहही रहा था कि वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गुप्तरूप से भेजा हुआ चार (दूत) वहां आ विराजा और पूछने पर कहने लगा "महाराज शत्रुओं ने सम्पूर्ण देश को तहस नहस कर डाला, जब देवी शशिलेखा ने लोगों से मिथ्याही यह सुना कि आप मर गये तब वह अग्नि में प्रवेश कर गईं!" दूत के मुख से इतनी बात सुनतेही राजा पर शोकरूपी वज्र गिर पड़ा, "हा देवि, हा सति" कह २ वह अति विलाप करने लगे।

निदान कुमुदिका को भी सब बातें विदित हो गईं तब वह राजा विक्रमसिंह के समीप जाकर, उन्हें समझा बुझाकर शान्ति दे कहने लगी कि महाराज पहिले ही आपने मुझसे क्यों नहीं कहा, फिर अब भी कुछ विगड़ा नहीं है मेरे सर्वस्व धन और सैन्य से आप अपने शत्रुओं का संहार करें उन दुष्टों को दण्ड देवें। इस प्रकार उसके कहने पर राजा ने उसके धन से एक बड़ी सेना खड़ी की, सब तयारी कर वह अपने मित्र एक बलवान् राजा के पास गये। उनकी सेना तथा अपनी सेना के साथ उन्होंने उन पांचो शत्रुओं पर चढ़ाई की, उन्हें मार उनके राज्य भी अपने अधीन कर लिये। तब अति प्रसन्न हो राजा ने पास में बैठी कुमुदिका से कहा 'प्रिये! मैं तुमपर बड़ा प्रसन्न हूं कहो तुम क्या चाहती हो, जो कहो सो करूं।" कुमुदिका ने उत्तर दिया कि प्रभो! यदि सचमुच आप मुझसे प्रसन्न हैं तो मेरे हृदय में बहुत दिनों का जो शल्य चुभा है उसे आप निकाल देवें। उज्जयिनी में श्रीधर नामक एक ब्राह्मणपुत्र मेरा प्यारा रहता है उसे राजा थोड़ेही अपराध में कैद कर दिया है सो आप उसे छोड़ा देवें। सुनिये, जब मैंने आपको देखा तब आपके उत्तम राजलक्षणों ही से पहिचान लिया कि यह कोई महापुरुष हैं इनसे मेरे कार्य्य की सिद्धि होगी, यही समझ, हे देव! मैंने आपकी सेवा की। जब मैंने देखा कि मेरा अभीष्ट सिद्ध नहीं हो सकता तब निराश हो मैं आपके साथ चिता में जल जाने को तयार हुई क्योंकि उस ब्राह्मणपुत्र के विना मेरा जीवन निष्फल है सो इस शरीर को रख के क्या करती"। उसकी ऐसी बात सुन राजा बोले "हे सुवदने! धैर्य्य धरो, मैं तुम्हारा यह कार्य्य कर दूंगा।" इतना उससे कहके, मन्त्री का वचन स्मरण कर राजा विचार करने लगे कि अनन्तगुण ने मुझसे जो कहा था कि वेश्याओं में सद्भाव कदापि नहीं होता, सो ठीक निकला, परन्तु अब इस विचारी की कामना तो पूर्ण करनीही चाहिये। इस प्रकार सोच

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विचार कर सेना ले वह उज्जयिनी में गये, वहां से श्रीधर को छुड़ा लाये श्रीधर को बहुत सा धन देकर उन्होंने उसे कुमुदिका से मिला दिया जिससे आनन्द के मारे वह फूली न समायी, अब अपने प्रणयी को पाय वह सुचित्त हुई । इसके उपरान्त राजा विक्रमसिंह अपने नगर में आये. अब वह अपने मन्त्री की एक बात भी न टालते और क्रमानुसार समस्त पृथ्वी का राज्य करने लगे। देखिये वेश्याओं का हृदय कैसा अगम, अगाध और अज्ञेय होता है कि कुछ पताही नहीं चलता।

इतनी कथा सुनाय गोमुख जब चुप हो गया तब नरवाहनदत्त के आगे तपन्तक इस प्रकार कहने लगा "देव! स्त्रियों का तो कभी विश्वास ही न करना, चाहे विवाहिता हो वा क्वांरी. उनका विश्वास नहीं. वे ऐसी चञ्चल होती हैं जैसी चपला, फिर वेश्याओं की क्या कहिये उनका तो विश्वास किसी अंश में नहीं हो सकता। और कहां की बात कहूं इसी नगर में जो आश्चर्य देखा है उसका वर्णन आपसे करता हूं।

इस नगर में बलवर्मा नामक एक बनिया रहता था उसकी स्त्री चन्द्रश्री नाम्नी थी। एक समय वह अपनी खिड़की में बैठी थी कि उसकी दृष्टि शीलहर नामक एक सुन्दर वणिक्पुत्र पर पड़ी, देखते ही वह मदनवाण से विद्ध हो गयी। तब अपनी सखीद्वारा उसे उसी के घर बुलवाय गुप्तरूप से उसके साथ रमण करने लगी। अब तो यह नित्य का काम हो गया प्रतिदिन वह उसे अपनी सखी के यहां बुलाती और अपनी मदनाग्नि बुझाती। पातक तो पाप का नाम ही है वह कहां छिपे, धीरे धीरे उसके सब भाई बन्धु जान गये कि यह फलाने से फँसी है परन्तु एक बलवर्मा उसका पतिही उसे पतिव्रता समझता था। ठीक है स्त्रैण लोग अपनी भार्याओं का दुःशील नहीं देखते।

कुछ दिनों के उपरान्त बलवर्म्मा को दाहज्वर ने पकड़ा, धीरे २ वह बनियां सूख चला, निजपति की ऐसी अवस्था में भी उस दुष्टा ने अपना दुष्कर्म न छोड़ा, उसी प्रकार प्रतिदिन सखी के घर बुला वह उपपति के संग प्रसंग किया करती। एक दिन की बात है कि उधर तो वह जार के साथ रात्रि में रमण करती थी कि इधर उसका पति मर गया, सबेरे जब उसे उसके पति के मर जाने का हाल लगा तब अपने प्यारे से छुट्टी ले चली गई। लगी शोक कर विलाप करने, अन्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को सती होने चली ; भाई बन्धु तो उसका चरित्र जानते थे, इसलिये वे समझाने लगे कि सती होकर क्या करोगी; परन्तु वह अपने निश्चय से न हटी अन्ततोगत्वा चिता पर आरोहण कर अपने पति के साथ जल गई । इतनी कथा सुनाय तपन्तक कहने लगा कि महाराज! स्त्रियों के चित्त की गति ऐसी गहन होती है कि उसका थाह पाना दुस्साध्य है, देखिये न, करें तो परपुरुष का प्रसंग और पति के बिना मर जावें । जब तपन्तक की कथा समाप्त हो गई तब अपनी पारी से हरिशिख कहने लगा कि देव ! देवदास का जो ऐसाही वृत्तान्त है उसे आपने नहीं सुना है क्या ? अच्छा सुनिये मैं आपको उसकी कथा सुनाता हूं।

पूर्वकाल में एक गांव में देवदास नामक एक कुटुम्बी रहता था उसकी गृहिणी का नाम दुःशीला था वह सचमुच दुःशीलाही थी । वह छिनाल थी यह बात पड़ोस के सब लोग जानते थे । एक समय की बात है कि देवदास किसी बात से राजा के यहां गया, इधर दुःशीला को भी अवसर मिल गया, वह तो उसका वध कराही चाहती थी सो झटपट उसने इसी अवसर में अपने यार को बुलाकर घर की अटारी पर छिपा दिया । जब देवदास आया तो खा पी के सो रहा, आधी रात के समय उस दुष्टा ने अपने पति का उस जार से घात करवा डाला। उपपति को विदा कर वह रात भर तो चुप रही प्रातःकाल में निकलकर चिल्ला २ रोने लगी "हाय मेरे पति को चोरों ने मार डाला'। इतने में बन्धुबान्धव बटुर आये और उसे देखकर बोले कि चोरों ने इसे तो मार डाला पर वे कुछ चुरा तो लेही न गये यह क्या बात है इतना कह उसके बालक पुत्र से पूछा,— "बच्चा तू कुछ जानता है कि तेरे पिता को किसने मारा है ?" तब वह स्पष्ट २ कहने लगा कि दिन के समय कोई एक जवान पुरुष अटारी पर चढ़के बैठ रहा था रात के समय उतरकर उसीने मेरे देखते मेरे पिता को मार डाला, जब वह मारने लगा तब पहिलेही मेरी माता मुझे लेकर पिता के पास से उठ खड़ी हुई। बालक की ऐसी बात सुन उन्होंने जाना कि बस यह काम इस दुष्टा के जार का है सो उसी समय ढूंढ़ढाढ़ के उन लोगों ने उसके जार को भी मार डाला और पुत्र को ग्रहण कर दुःशीला को निकाल दिया ।

इतनी कथा सुनाय हरिशिख कहने लगा कि देव ! सुना न आपने, स्त्री का

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मन जहां दूसरे से लगा कि वह नागिन सी भयङ्कर हो जाती हैं, फिर चोट किये बिना नहीं रहतीं, वह पति के प्राण लेही लेती हैं।

हरिशिख के इस प्रकार कहने पर गोमुख फिर कहने लगा "महाराज! और दूसरे की कौन चलावे, स्वयं वत्सेश्वर के सेवक वज्रसार की क्या दशा हुई है, उसकी बात सुनिये मैं सुनाता हूं, देखिये कैसी हँसी की यह कथा है।

उस सुन्दर शूर वज्रसार की पत्नी मलयदेश की जन्मी एक सुरूपा स्त्री थी जिसे वह अपने शरीर से अधिक प्यार करता था। एक समय उसका श्वशुर अपने पुत्र के साथ अपनी कन्या को बुलाने आया उसमें इसे भी नेवता दिया सो वज्रसार राजा से छुट्टी ले अपनी स्त्री के साथ मालवदेश को गया। एक महीना वह श्वशुर के घर में रह के यहां अपनी नौकरी पर चला आया और उसकी स्त्री वहीं रह गई। कुछ दिनों के उपरान्त वज्रसार का एक मित्र क्रोधन नामक अकस्मात् उसके पास आकर कहने लगा कि मित्र! यह तुमने क्या किया कि अपनी स्त्री को नैहर में छोड़कर अपना कुल दूषित किया, उस पापिन ने वहां परपुरुष से प्रीति कर ली है। यह बात मेरे एक परम मित्र ने आज आकर कही है सो मित्र इसे झूठ न मानना, बस अब उस दुष्टा को दण्ड दे अपना दूसरा व्याह कर लो। इतना कह जब क्रोधन चला गया तब वज्रसार क्षण भर चिन्तित हो बैठा रहा पीछे विचार करने लगा कि बात तो सच जान पड़ती है क्योंकि जब बुलावा भेजा था तो वह आई क्यों नहीं सो अब स्वयं जाकर उसे लिवा लाऊँ देखूं तो बात क्या है।

इस प्रकार सोच विचार कर वह मालव को गया और सास ससुर से विदा कराय अपनी पत्नी को ले चला। कुछ दूर निकल जाने के उपरान्त किसी छल से साथियों का संग छोड़ मार्ग भूल अपनी भार्य्या सहित वह गहन वन में पैठा। जब बीच जंगल में पहुँचा तो एक स्थान में बैठकर, जहां कोई सुन न सके, उससे पूछने लगा कि सच सच बता, मैंने अपने एक विश्वस्त मित्र से सुना है कि तू किसी दूसरे पुरुष के प्रेम में फँस गयी है, मैंने घर से बुलावा भेजा था तब भी तू नहीं आई तो अब सच सच बता बात क्या है? जो न बतावेगी तो मारते २ खाल उतार लूंगा। उसकी ऐसी बात सुन वह बोली "तो मुझसे पूछते क्या हो, जो तुम्हें रुचे सो करो।" इस प्रकार उसका अठिला के बोलना सुन वज्रसार को अ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धिक कोप हुआ सो वह उसे पेड़ में बांधकर लताओं से पीटने लगा, इस प्रकार पीटते २ उसने उसका कपड़ा उतार लिया त्योंही उसे नङ्गी देख उस मूर्ख को रमण करने की इच्छा हो गई तब उसे बँधी बँधाई बैठा के रमण की इच्छा से उसने उसे आलिङ्गन किया पर वह राजी न हुई, तब तो यह चिरौरी करने लगा यह देख वह बोली कि जिस प्रकार तुमने बांधकर मुझे लताओं से पीटा है वैसेही तुम्हें बांधके मैं पीटूं तब तो कुछ हो सकता है, नहीं तो नहीं । वह तो काम से पीड़ित था ही चट इसकी बात पर राजी हो गया सो वह वज्रसार, मनोभव से तृणसार कर दिया गया तब उस दुष्टा ने वज्रसार के हाथ पांव खूब कस के पेड़ में बांध दिये और उसी की तलवार से उसके नाक कान काट डाले पश्चात् वह पापिनी उसके कपड़े पहिन उसका खड्ग लेकर पुरुष वेष बनाय जहां मन में आया चली गई।

अब वज्रसार नाक कान कट जाने से, जिनसे कि लहू बह रहा था, लाज के मारे नीचे शिर किये वहां बँधा पड़ा रहा । इतने में औषधि लेने के लिये वहां कोई वैद्य आया सो कृपा कर वह उसे खोल (बन्धन से छुड़ा) कर अपने घर ले गया। वहां उसने उसको बहुत धीरज दे समझाया बुझाया पीछे वज्रसार वहां से चलकर अपने घर आया। उसने अपनी उस दुष्टा गृहिणी का बहुत कुछ पता लगाया पर वह न मिली। वज्रसार ने अपनी सारी कथा क्रोधन को कह सुनाई और उसने महाराज वत्सराज के समक्ष उसका वृत्तान्त कहा। यह सुन महाराज के दर्बार के सब लोग हँसकर कहने लगे कि यह कैसा कातर है कि जिसे उसकी पत्नी ने कपड़ा लत्ता छीन छान के स्त्री वेष में बना दिया, उसने उसका दण्ड तो उचित किया । इस प्रकार सब लोग उसकी हँसी करते हैं और वह वज्रसार छाती पर पत्थर धर यहीं पड़ा है ।

इतनी कथा सुनाय गोमुख फिर कहने लगा कि देव! देखिये, भला कहिये तो स्त्रियों का विश्वास क्योंकर किया जाय। गोमुख के मुख से ऐसी कथा सुन मरु-भूति फिर बोला कि बात तो ठीक है, स्त्रियों के मन की गति जानी नहीं जाती। इसी विषय में एक कथा कहता हूं सुनिये ।

पूर्व्व समय की बात है कि दक्षिण देश में सिंहबल नामक एक राजा रहते थे,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनकी भार्य्या का नाम कल्याणवती था जो मालव देश के राजा की बेटी थी। राजा सिंहबल कल्याणवती को सब पत्नियों से अधिक प्यार करते थे सो वही प्रधान पटरानी थी। राजा अपनी धर्मपत्नी के साथ राज्य का शासन करते थे। एक समय की बात है कि राजा के बलवान् गोतियों ने एकमत हो उन्हें राज्य से निकाल दिया। अब राजा अपनी भार्य्या के साथ केवल अपने अस्त्र और कुछ नौकरों को लेकर मालव देश में अपने श्वशुर के घर को चले। सब लोग चले जा रहे थे कि चलते २ एक जंगल में पहुँचे वहां एक सिंह साम्हने आ टूटा, शूर राजा ने तलवार के एकही वार से उसके दो टुकड़े कर डाले। तत्पश्चात् एक बनैला हाथी चिग्घाड़ता और मण्डल भरता उनपर दौड़ा सो महीप ने खड्ग से उसके सूंड़ और चारों पैर काट उसे मार गिराया और उसका मोती ले लिया। तदुपरान्त चोरों (डांकुओं) के दलों ने उनपर आक्रमण किया सो पृथ्वीपति ने उनको कमलनाल के समान ऐसा चकनाचूर कर डाला जैसे हाथी कोइदों को दल डाले। इस प्रकार मार्ग में अनेक विघ्नों को पार करते और अपना अद्भुत पराक्रम दिखाते राजा मालव में पहुँचे तहां सत्त्वसिन्धु उन महीपाल ने अपनी पत्नी से कहा,—"प्रिये! अपने पिता के घर में इस मार्ग की घटनाओं का वृत्तान्त किसी से न कहना, क्योंकि यह लज्जा की बात है, इसमें श्लाघा क्या है कि क्षत्रिय अपना विक्रम दिखावे।" इस प्रकार चिताय राजा अपनी पत्नी सहित ससुर के घर में गये, ससुर ने एकाएक उनको आये देख चौंककर उनसे पूछा कि कहो कैसे आये तब राजा सिंहबल ने अपनी बीती कह सुनाई। ससुर ने उनका बड़ा सत्कार किया और अनेक हाथी घोड़े दिये तब राजा अत्यन्त बलसम्पन्न महीपति गजानीक के यहां गये और रानी कल्याणवती को नैहर ही में छोड़ते गये क्योंकि उनको तो शत्रुओं को जीतना न था सो संग २ कहां २ लिये फिरते।

राजा के चले जाने पर कुछ दिन जब बीत गये तब एक दिन की बात है कि रानी कल्याणवती खिड़की पर बैठी थी कि उनकी दृष्टि एक पुरुष पर पड़ी, देखतेही वह उस पर मोहित हो गई, कामबाण से व्यथित हो सोचने लगी "यह मैं भली भांति जानती हूं कि आर्य्यपुत्र से बढ़कर सुन्दर और शूर कोई दूसरा पुरुष नहीं है तौभी खेद है कि मेरा मन इस पुरुष पर दौड़ता है, सो अब जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हो इससे मिलना तो चाहिये" ऐसी दुश्चिन्ता कर उसने अपनी एक विश्वस्त सखी से यह हाल कहा, उसी के द्वारा उसे रात में बुलवाया और उसी खिड़की की राह रस्सी लटका उसे ऊपर अन्तःपुर में चढ़ाय लिया। वह पुरुष तो चढ़ने को तो ऊपर चढ़ गया पर रानी के तेज से उसका हियाव न पड़ा कि उनके पलङ्ग पर बैठ जावे इससे अलग एक कुर्सी पर बैठ गया, सो देख रानी सोचने लगी हो न हो यह कोई नीच पुरुष है। वह इस प्रकार चिन्ता कर रही थी कि छत पर से एक सांप उतरा, उसे देखतेही वह पुरुष भय से उठ खड़ा हुआ और चट धनुष पर वाण सन्धान उसने सर्प को मार डाला और उठाकर खिड़की से बाहर फेंक दिया, उसका भय जाता रहा अब मारे हर्ष के वह कापुरुष नांचने लगा। उसको नाचते देख रानी कल्याणवती बहुत उदास हुई और अपने मनमें सोचकर अपने को धिक्कारने लगी कि हाय हाय यह मैंने क्या किया, अरे इस कातर डरपोंक से मेरा क्या होने का। रानी का मुख देखतेही सखी ताड़ गयी कि अब इन्हें ग्लानि उपजी है सो वह बाहर गई तुर्तही घबड़ाई हुई लौट आई और बोली "देवि! आपके पिता आये हैं सो यह पुरुष जिस मार्ग से आया उसीसे झटपट निकल अपने घर चला जावे नहीं तो बड़ा अनर्थ हो जायगा।" इतना सुनतेही वह डरपोक भय से कांपता हुआ रस्सी पकड़ खिड़की से उतरने लगा कि धड़ाम से गिर पड़ा, भाग्य अच्छे थे इससे मरा नहीं। उसके चले जाने पर रानी कल्याणवती अपनी सखी से कहने लगीं कि सखि! तुमने यह बहुतही अच्छा किया जो इस नीच को निकाल दिया, तुमने मेरे मन की बात जान ली, सखि मेरा चित्त अब लों दुखता है। सुनो सखि मेरे पति व्याघ्र सिंहादिकों को मार के भी लजाते हैं, यह नीच कातर एक सांप को मारकर नाचने लगा, सो ऐसे पति को छोड़ भला मैं इससे क्या प्रेम करूँ? मैं अपने को धिक्कारती हूं कि मेरी मति ऐसी कुत्सित हो गयी, अथवा स्त्री जातिमात्र को धिक्कार है, वे मच्छियों के समान हैं जो कपूर को छोड़ मैले पर भिनभिनाती रहती हैं। इस प्रकार अनुताप कर रानी रात बिताय अपने पति की पतीक्षा करती हुई पिता के घर में रही। इतने में भूपति गजानीक से सेना पाय राजा सिंहबल ने जाकर चढ़ाई की और अपने उन पांचो पापी गोतियों को मार डाला। तब पुनः राज्य प्राप्त कर उन्होंने अपनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भार्य्या रानी कल्याणवती को नैहर से बुलवा लिया और ससुर बहुत सा धन दे सन्तुष्ट कर बहुत दिनों तक पृथ्वी पर अकण्टक शासन किया।

इतनी कथा सुनाय मरुभूति फिर कहने लगा कि देव सुना न आपने, ऐसे भाग्यवान् वीर और सुन्दर तथा सज्जन पति के रहते भी विवेकवती स्त्रियों का भी मन चञ्चल हो जाता है उनका मन इधर उधर दौड़ता रहता है, शुद्ध सच्चरित्रा पतिव्रता स्त्रियां विरलीही होती हैं।

दोहा।

इहि बिधि सुनि मरुभूति तं, कथा, वत्सनृपजात।
नरवाहनदत्त सोइकै, सुख सों, बितयो रात ॥ १ ॥

तीसरा तरङ्ग।

दूसरे दिन प्रातःकाल होने पर आवश्यक कार्य्यों से छुट्टी पाय नरवाहनदत्त मन्त्रियों के साथ अपने बगीचे में विहार करने के लिये गये। वहां उन्हे पहिले तो एक प्रभा का पुञ्ज दिखाई दिया तिसके पीछे आकाश से उतरी हुई बहुतेरी विद्याधरियां दीख पड़ीं, तिन दीप्तिमती विद्याधरियों के बीच में उन्होंने एक मन-मोहिनी कन्या को देखा जैसे ताराओं के बीच चन्द्रलेखा। फूले कमल के समान जिसका मुखमण्डल, भ्रमर के समान चञ्चल नेत्र, हंस की सी ठवनि, नीलोत्पल के गन्ध सा शरीर का गन्ध, तरङ्ग की लजावनहारी त्रिवली, कमर में करधनी, काम-देव के बगीचे की बावड़ी की प्रत्यक्ष अधिष्ठात्री देवी मानों। स्मरसञ्जीवनी उस कन्या को देखकर राजपुत्र क्षुभित हो गये जिस प्रकार चन्द्र की मूर्त्ति देख समुद्र चञ्चल हो जाता है। अपने सचिवों से कहने लगे कि यह ब्रह्मा की सुन्दर रचना की कोई विचित्र सृष्टि है, इस प्रकार अपने मन्त्रियों से कहते २ वह उस कन्या के समीप गये। वह भी प्रेमभरी तिरछी चितवन से इन्हें निरखने लगी, तब इन्होंने उससे पूछा "हे कल्याणि! आप कौन हैं? और यहां आना आपका किस निमित्त हुआ है?" यह सुन वह कन्या बोली,—"सुनिये मैं आप लोगों को अपना वृत्तान्त सुनाती हूं—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हिमाचल पर काञ्चनशृङ्ग नामक एक सोने का नगर है वहां स्फटिकयश नामक विद्याधरों के राजा रहते हैं, वह बड़े धार्मिक तथा दीन दुःखियों और अनाथों के पालनहार तथा शरणागतवत्सल हैं। गौरी देवी के वरदान से उनकी हेमप्रभा नाम्नी भार्य्या से मैं जन्मी हूं, मेरा नाम शक्तियशा है। मैं अपने पांच भाइयों में सब से छोटी हूं इस हेतु पिता मुझे अपने प्राणों से अधिक प्यार करते हैं। उन्हीं के आदेश से मैंने व्रत और स्तोत्रों से भगवती पार्वती की आराधना कर उन्हें सन्तुष्ट किया तब जगदम्बा ने तुष्ट हो मुझे सब विद्यायें (सिखा) दीं और तब मुझसे यों कहा कि हे पुत्रि! तेरी विद्याशक्ति तेरे पिता से दशगुनी होगी; वत्सराज के पुत्र नरवाहनदत्त, जो कि विद्याधरों के भावी चक्रवर्त्ती हैं, तेरे पति होंगे। इतना कह शर्वपत्नी अन्तर्धान हो गयीं, उनके प्रसाद से मुझे सब विद्या आ गईं और क्रमानुसार मेरी युवावस्था भी प्राप्त हुई। आज रात में दर्शन देकर देवी ने मुझे यह आज्ञा दी "पुत्रि! कल सबेरे जाकर तू अपने पति से भेंट करना और आजही लौट आना क्योंकि एक महीने में तेरा पिता, जिसके मनमें भी यही सङ्कल्प है, तेरा विवाह कर देगा।" इतना कह देवी अन्तर्द्धान हो गयीं और यामिनी भी बीत गई। सो आर्यपुत्र! यहां मैं आपको देखने आयी हूं, और अब मैं जाती हूं। इतना कह शक्तियशा सखियों सहित आकाश में उड़कर अपने पिता के नगर में चली गई।

तदुपरान्त नरवाहनदत्त उसके साथ विवाह होने के लिये अत्यन्त उत्कण्ठित हो बड़ी कठिनता से उद्वेगपूर्वक अपने भवन में पधारे, एक महीना उनके लिये एक युग के समान हो गया। उनको उदास देख गोमुख बोला "देव! सुनिये मैं आपको एक मनोहर कथा सुनाता हूं"—

पूर्व्वकाल में काञ्चनपुरी नाम्नी एक नगरी थी तहां सुमन नामक एक बड़े यशस्वी महीपति रहते थे। राजा बड़े प्रतापी थे, बड़ी २ कठिनाइयों से पार हो सुदृढ़ अगम्य गढ़ों तथा घनी अटवियों में बसे शत्रुओं को भी उन्होंने जीत लिया, ऐसा अद्भुत उनका प्रताप था। एक समय वह सभा में बैठे थे कि द्वारपाल आकर बोला "देव! निषादराज की मुक्तालता नाम्नी कन्या पिँजड़े में सुग्गा लिये वीरप्रभ नामक अपने भाई के साथ आकर बाहर द्वार पर खड़ी है, महाराज का दर्शन किया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चाहती है ।" राजा ने कहा "आने दो," सो द्वारपाल की आज्ञा पाय वह भिल्ल-कन्या राजा के सभामण्डप में गई, सब लोग उसका अद्भुत रूप देख अपने २ मन में विचारने लगे "यह तो मानुषी नहीं जान पड़ती, निश्चय यह कोई दिव्य स्त्री है" । राजा को प्रणाम कर वह इस प्रकार कहने लगी "देव ! शास्त्रगञ्ज नामक एक सुग्गा चारो वेदों का ज्ञाता है, कवि है, सम्पूर्ण विद्याओं और कलाओं में विचक्षण है । यह महाराज के योग्य है इसीलिये मैं इसे लाई हूं, श्रीमान् ग्रहण करें ।" इतना कह उसने सुग्गा दे दिया और प्रतीहार बड़े कौतुक से राजा के निकट ले गया, राजा के आगे पहुँच शुक ने यह श्लोक पढ़ सुनाया ।

शार्दूलविक्रीडितम् ।

राजन् है यह बात सत्य यह जो, तेरे बढ़ै सर्वदा,
धूमश्यामसुखो द्विषद्विरहिणी निश्वास वायू उद्यो ।
है यह अद्भुत किन्तु जो परिभवात् वाष्पाम्बुकी धारसों,
उनको, व्याप्तिरह्यो दर्शौदिशन में साज्यः प्रतापानलः ॥

इस प्रकार श्लोक पढ़ उस सुग्गे ने उसकी व्याख्या भी कह सुनाई, फिर कहा कहिये किस शास्त्र से क्या सुनाऊँ ?" यह देख राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ, वह बड़े अचम्भित हुए । तब मन्त्री ने कहा "महाराज ! ऐसा विदित होता है कि यह कोई पूर्वजन्म का ऋषि है, किसी शाप से शुकयोनि में जन्मा है, धर्म्माचरण के कारण पूर्वजन्म की सब बातें याद है, उस जन्म में जो कुछ पढ़ा था वह अबलों भी स्मरण है ।" मन्त्री की ऐसी बात सुन राजा ने उस सुग्गे से पूछा "कहो तो भाई, अपना वृत्तान्त सुनाओ कहां तुम्हारा जन्म हुआ है, शुकशरीर में भी तुम्हें यह शास्त्रज्ञान क्योंकर ? और यह कहो कि तुम हो कौन ?" राजा की इतनी बात सुन सुग्गे के नेत्रों में आंसू भर आये, उसने धीरे से कहा "महाराज ! मेरी कथा तो बड़ी शोकमय है, कहने योग्य नहीं है, परन्तु जब आप पूछते हैं तो आपकी आज्ञा क्योंकर टाली जाय, सुनिये मैं कहता हूं —

महाराज ! हिमाचल के समीप एक रोहिणी तरु है जो कि वेदस्वरूप है, जिसकी दिग्दिगन्तव्यापिनी (१) शाखाओं में द्विज (२) आश्रय लेते हैं । उसी वृक्ष

(१) वेद की शाखा । (२) ब्राह्मण, द्विजाति ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में खोंता बनाय एक शुक अपनी शुकी के साथ रहता था, अपने दुष्कर्म के प्रताप से उसी जोड़े से मेरा जन्म हुआ। मेरे जन्मते ही मेरी माता शुकी पञ्चतत्व को प्राप्त हो गई, मेरे वृद्ध पिता मुझे पङ्खों के नीचे रखकर पोसने लगे, निकटवर्त्ती सुग्गों के खाये फलों से जो बचता उसे खाते और मुझे खिलाते इस प्रकार हमारे दिन बीतने लगे।

एक समय की बात है कि भिल्लों की एक भयङ्कर सेना सिंगे बजाती वहां शिकार करने आई जिससे सारे जंगल में खलबली मच गयी। भय के मारे कृष्णसार (मृग) इधर उधर भागने लगे, धूलि से आकाश व्याप्त हो गया, व्याकुल हो चमरी अपनी पूंछ उठा २ दौड़ने लगी। उस समय पुलिन्दों ने भयंकर पशुसंहार मचा दिया, सब जीव जन्तु, पशु पक्षी भयभीत हो भागने लगे। इस प्रकार दिन भर तो वह जंगल कृतान्त का आखेटस्थल बना रहा, तदुपरान्त शबरों को वह सेना मारे हुए जन्तुओं के भारों से लदी वहां पहुँची। उनमें से एक बूढ़े शबर को कुछ भी न मिला था, सो सायङ्काल में भूखा प्यासा जब वह वहां पहुँचा तो उस वृक्ष पर उसकी दृष्टि पड़ी, भूखा तो वह था ही, झट वृक्ष पर चढ़कर पक्षियों का संहार करने लगा, सुग्गों तथा अन्यान्य पक्षियों को खोतों से निकाल निकाल मार २ कर पृथ्वी पर फेंकने लगा। यमराज के दूत के समान उस व्याध को निकट आते देख भय के मारे व्याकुल हो मैं अपने पिता के पंख तले छिप गया, इतने में वह पापी मेरे खोते पर आ पहुँचा, आतेही उसने मेरे पिता को पकड़ के खींच लिया और गला दबाकर वृक्ष के नीचे पटक दिया, मैं तो पिता के पंख तले छिपा ही था सो मैं भी उन्हीं के साथ गिर पड़ा, भयभीत तो मैं था ही धीरे से उनके पंख से निकलकर पास में पड़े हुए तिनकों और पत्तों के बीच में धीरे से पैठ गया। तदुपरान्त वह भिल्ल पेड़ पर से उतरा और कुछ सुग्गों को तो वह आग में भूनकर खा गया खाने से जो बचे उन्हें बटोर बटार कर वह पापिष्ट अपने गांव को चला गया।

तब मेरा भय शान्त हुआ, पिता के वियोग का दुःख तो मुझे बड़ा भारी था उसी शोकसागर में डूबा था, किसी प्रकार वह रजनी बीती सवेरा हुआ, जगत् के चक्षुस्वरूप भास्कर भगवान् उदय हुए। उस समय मुझे बड़ी प्यास लगी, प्यास के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मारे मेरा गला सूखने लगा, मुझ में उड़ने की शक्ति तो थीही नहीं, सो पंखों के बल धरती पर लुढ़कता फुढ़कता चला और कुछ काल में समीपवर्ती पद्मसर के किनारे जा पहुँचा। वहां मैंने देखा कि मरीचि मुनि स्नान कर उस जलाशय की रेती में बैठे हैं, देखतेही मुझको ऐसा भासा कि मेरे पूर्वपूण्य मानो मूर्तिमान् विराजमान हों। मुनि ने मुझको देखतेही उठा लिया और मेरे मुंह में बूंद २ करके जल टपकाया जिससे मुझे कुछ आश्वासन हुआ, मुनि को मुझपर बड़ी दया आई सो वह एक दोने में मुझे रख अपने आश्रम को ले गये। वहां कुलपति पुलस्त्य मुझको देखकर हँसे, जब मुनियों ने हँसने का कारण पूछा, तब दिव्यदृष्टि वह मुनीश्वर बोले "मैं इस शुक को देख के शोक के मारे हँसा क्योंकि यह विचारा शापवश हो शुकयोनि में जन्मा है, यह सन्ध्यावन्दन की वेला है, सन्ध्यादि आह्निक कर्म से सुचित हो मैं तुम लोगों को इस शुक की कथा सुनाऊँगा, उस कथा को सुनतेही यह अपनी पूर्व जाति (जन्म) स्मरण कर लेगा।" इतना कह पुलस्त्य ऋषि आह्निक कर्म करने के लिये उठ खड़े हुए। जब महामुनि सन्ध्यावन्दनादि क्रिया से निश्चिन्त हुए तब सब मुनियों ने बड़ी नम्रता से मेरी कथा उनसे पूछी, जिसे वे इस प्रकार कहने लगे—

रत्नाकरपुर में ज्योतिष्प्रभ नामक कोई राजा रहते थे, जो अपने बल प्रताप से रत्नाकर (१) पर्य्यन्त पृथ्वी का शासन करते थे। राजा के तीव्र तप से सन्तुष्ट हो गौरीपति भगवान् शङ्कर ने उन्हें वरदान दिया, जिसके प्रभाव से राजा की महिषी हर्षवती के एक पुत्र हुआ, राजा ने अपने पुत्र का नाम सोमप्रभ रक्खा क्योंकि रानी ने स्वप्न में देखा था कि चन्द्रदेव उस बालक के मुख में पैठे थे। क्रमानुसार राजपुत्र अपने अमृतमय गुणों से प्रजाओं के नयनोत्सव को बढ़ाते हुए, बड़े हुए।

जब पिता ज्योतिष्प्रभ ने देखा कि मेरे राजकुमार अब पृथ्वी के भार सम्भालने में समर्थ हुए, शूर और युवा भी हैं, प्रजाओं का इन पर बड़ा अनुराग है, तब उन्होंने उन्हें युवराज पद पर अभिषिक्त कर दिया और अपने सचिव प्रभाकर के सद्गुणसम्पन्न पुत्र प्रियङ्कर को उनका मन्त्री ठहराय दिया। इसी अवसर में दिव्य घोड़े को लिये हुए मातलि आकाश से उतरे और सोमप्रभ के पास जाकर उनसे

(१) समुद्र।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहने लगी कि राजन् ! आप इन्द्र के मित्र एक विद्याधर हैं, अब यहां मर्त्यलोक में अवतीर्ण हुए हैं, उसी पूर्वस्नेह के निहोरे इन्द्र ने आपके पास यह आशुश्रवा नामक अश्व भेजा है, यह उच्चैःश्रवा का पुत्र है, इसमें यह गुण है कि जब लों आप इसपर चढ़े रहेंगे कोई शत्रु आपको न जीत सकेगा। इतना कह मातलि ने सोमप्रभ को वह वाजिरत्न दे दिया। तदुपरान्त राजपुत्र से समुचित पूजा पाय इन्द्र के सारथि आकाश में उड़कर चले गये।

सोमप्रभ ने उस दिन बड़ा भारी उत्सव मनाया, दूसरे दिवस उन्होंने अपने पिता राजा ज्योतिष्प्रभ से कहा "हे तात! अजिगीषुता * क्षत्रिय का धर्म्म नहीं है, सो आप अब मुझे आज्ञा दें कि मैं दिग्विजय करने जाऊँ।" पुत्र की ऐसी बात सुन राजा बड़े प्रसन्न हुए और बोले "मेरे प्यारे पुत्र! बात तो ऐसीही है, बहुत अच्छा तुम जाओ दिग्विजय कर आओ," इतना कह महीपति ने उनकी यात्रा का प्रबन्ध करा दिया। अब शुभ दिन में पिता को प्रणाम कर सोमप्रभ इन्द्र के भेजे उस आशुश्रवा घोड़े पर चढ़ अपनी सेना के साथ दिग्विजय के लिये प्रस्थानित हुए। उस अश्वरत्न के प्रभाव से अमेयपराक्रम सोमप्रभ ने सम्पूर्ण दिशाओं के नरपतियों को जीत उनके असंख्य रत्न ले लिये, उन्होंने अपने धनुष तथा शत्रुओं के शिरों को एक साथही नवा दिया, धनुष तो फिर भी सीधा हो गया किन्तु रिपुओं के शिर फिर न उठे।

दिग्विजय करके जब वह लौटे आ रहे थे तो मार्ग में हिमालय पड़ा, वहां अपने सैन्य को टिकाय आप आखेट करने के लिये जंगल में पैठे, वहां उत्तम २ रत्नों से विभूषित † एक किन्नर उनको दिखाई पड़ा, सो वह उसके पकड़ने को उसी इन्द्र के दिये हुए घोड़े पर चढ़ दौड़े। वह किन्नर तो एक गुफा में पैठ कर अन्तर्धान हो गया, किन्तु वह अश्व उनको लिये हुए बड़ी दूर निकल गया, इतने में मरीचिमाली भगवान् भास्कर अपनी प्रखर किरणों से जगत् को उद्दीप्त कर

* जीतने की अनिच्छा, दिग्विजय की इच्छा ही क्षत्रिय का परम धर्म्म है, यह भावार्थ है।

† "उत्तमोत्तम रत्नों का बना" मूलसंगत यह अर्थ है किन्तु यहां भाव यही है कि उत्तम २ रत्नों से आभूषित।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अस्ताचल पर जा विराजे । राजकुमार थक तो गयेही थे सो किसी प्रकार घोड़े को रोककर लौटे, मार्ग में एक बड़ा भारी तड़ाग दिखाई पड़ा, उसी के किनारे रात बिताने के लिये अश्व पर से उतर पड़े, घोड़े को चारा पानी दे, आप भी फल फूल खाय जल पी बैठकर विश्राम करने लगे कि इतने में एक ओर से गाने का स्वर सुनाई दिया । जिधर से गाने का शब्द आता था कौतुक से राजकुमार उसी ओर चले और थोड़ीही दूर जाकर क्या देखते हैं कि एक दिव्य कन्या शिवलिङ्ग के समक्ष गा रही है । सोमप्रभ उसका अद्भुत रूप देख विस्मित हो गये और सोचने लगे कि यह कौन है, उसने भी इनकी उदार आकृति देख आतिथ्य कर इनसे पूछा "सौम्य ! आप कौन हैं और इस दुर्गम भूमि में आपका आना अकेले क्योंकर हुआ ?" यह सुन राजपुत्र ने आत्मवृत्तान्त कह सुनाया, पश्चात् उससे पूछा कि कहो तुम कौन हो, इस वन में कैसे रहती हो ? राजकुमार के इस प्रकार प्रश्न करने पर वह दिव्य कन्या बोली "महाभाग ! यदि आप मेरी कथा सुना चाहते हैं तो सुनिये मैं कहती हूं", इतना कह वह आखों में आंसू भर अपनी कथा सुनाने लगी—

यहां हिमाचल पर काञ्चननाभ नामक एक नगर है, वहां पद्मकूट नामक विद्याधरों के अधीश्वर रहते हैं, उनकी रानी हेमप्रभा से मैं जन्मी हूं, नाम मेरा मनोरथप्रभा है । पिता मुझे अपने पुत्रों से भी अधिक प्यार करते हैं । मैं अपनी विद्या के प्रभाव से सखियों के साथ प्रतिदिन आश्रम, द्वीप, कूल, पर्वत वन और उपवनों में विहरती फिरती हूं और आहार के समय तीसरे पहर को अपने पिता के भवन में आ विराजती हूं । एक समय की बात है कि मैं विहार करती हुई यहां आ पहुँची तो क्या देखती हूं कि एक मुनिकुमार सरोवर के तट पर अपने वयस्य के साथ बैठे हुए हैं । उनके रूप की शोभा से मैं खिँच गई जैसे दूती फुसला ले जाय, सो मैं उनके पास चली गई, उन्होंने भी देखतेही बड़े आव भगत से मेरा स्वागत किया । जब मैं वहां बैठ गयी तब मेरी सखी ने हम दोनों का भाव ताड़कर उनके सङ्गी से पूछा कि महाशय ! आप कौन हैं ? उनके साथी ने उत्तर दिया "हे सखि ! यहां से थोड़ी दूर पर दीधितिमान् ऋषि आश्रम में रहते हैं, किसी समय वह ब्रह्मचारी इस सरोवर में स्नान करने आये, उसी समय श्रीदेवी

भी यहां आयीं। महामुनि का रूप निरखतेही श्रीदेवी सकामा हो गयीं, पर यह देख कि शरीर से तो यह प्रशान्त मुनि अप्राप्य हैं उन्होंने मनमें मुनि की कामना की इससे उन्हें मानसपुत्र प्राप्त हुआ। तब वह मानसजात पुत्र को लेकर दीधितिमान् मुनि के निकट आकर कहने लगीं "महाराज आपके दर्शनही से मेरे यह पुत्र उत्पन्न हुआ है सो इसे आप ग्रहण करें, इतना कह मुनि को बालक सौंप श्री अन्तर्धान हो गयीं और मुनि भी उस अनायास मिले पुत्र को पाकर अति प्रमुदित हुए। ऋषि ने उस पुत्र का नाम रश्मिमान् रक्खा और क्रमानुसार पालन पोषण कर बड़ा किया, और जनेऊ कर साथही सब विद्याएँ सिखा दीं। सो सखि यह वही मुनिकुमार श्री के पुत्र हैं, विहार करते २ मेरे साथ यहां आये हैं। इतना कह उन मुनिकुमार के मित्र ने मेरी सखी से भी पूछा सो उसने मेरा नाम और वंश उन्हें कह सुनाया, जो कि मैं आपको बतला चुकी हूं।

इस प्रकार परस्पर वंशज्ञान से हम दोनों का अनुराग और बढ़ गया, मुनिपुत्र और मैं, दोनों वहां बैठे थे कि इतने में मेरे घर से एक दूसरी सखी आई और मुझसे बोली "मुग्धे! उठो, उठो, तुम्हारे पिता भोजनागार में तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।" सखी की इतनी बात सुनकर मैंने उनसे कहा कि आप यहीं ठहरे रहें मैं अभी आती हूं, इतना कह मुनिपुत्र को वहीं बैठाय मैं भय से पिताजी के पास चली गयी। वहां चटपट कुछ खा पीके ज्योंही मैं बाहर निकली कि वह पहिली सखी घबड़ाई हुई दौड़ती मेरे पास आई और धीरे से मुझसे कहने लगी "सखि! मुनितनय के वह मित्र आये हैं और आंगन के द्वार पर खड़े हैं, वह कहते हैं "अपने पिता से पाई हुई व्योमगमन विद्या देकर रश्मिमान् ने मुझे मनोरथप्रभा के पास भेजा है, प्राणेश्वरी के बिना कामदेव ने उनकी यह दशा कर डाली है कि क्षण भर भी जीना कठिन है।" इतना सुनतेही मैं अपने महल से निकल खड़ी हुई, आगे २ वह मुनिकुमार के मित्र मार्ग दिखाते चले और पीछे २ मैं अपनी सखी के साथ चली। यहां आकर क्या देखती हूं कि मेरे विरह से मुनिकुमार शान्त हो गये हैं, उधर चन्द्र का उदय होना कि इधर उनका प्राणान्त हो गया। तब मैं उनके वियोग से अत्यन्त व्याकुल हो अपने अधम तन की निन्दा करने लगी और उनका शरीर लेकर अग्नि में प्रवेश करने चाहती ही थी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि इतने में एक तेज:पुञ्जाकृति पुरुष आकाश से उतरा और मेरे प्राणेश्वर के शरीर को लेकर उड़ता हुआ गगन में चला गया। तब मैं अकेली ही अग्नि में कूदने पर उतारू हुई कि आकाश से यह वाणी सुनाई पड़ी "मनोरथप्रभे! ऐसा मत कर, सुन, इस मुनिकुमार के साथ तेरा कभी फिर मिलना होगा।" यह आकाशवाणी सुन मैं (जल) मरने से विरत हुई, अब आशा लगाये उसी समय की प्रतीक्षा करती यहीं शिव की पूजा में तत्पर रहती हूं, और मुनिपुत्र के वह मित्र भी न जानें कहां चले गये।

उस विद्याधरी की इतनी बात सुन सोमप्रभ ने उससे पूछा "तो तुम यहां अकेली कैसे रहती हो और तुम्हारी वह सखी कहां चली गई"। इस प्रकार सोमप्रभ की बात सुन वह विद्याधरकन्यका बोली कि सिंहविक्रम नामक विद्याधरों के एक राजा हैं, मकरन्दिका नाम्नी उनकी कन्या है जिसकी जोड़ी की दूसरी कोई सुन्दरी नहीं है। वह मेरी सखी है और मुझे प्राणों से प्यारी है, वह मेरे दु:ख से सहानुभूति रखती है, उसने मेरा हालचाल पूछने के लिये अपनी सखी भेजी थी सो उसकी सखी के साथ मैंने अपनी सखी को उसके पास भेज दिया है यही कारण है कि आज इस समय मैं अकेली हूं। इस प्रकार कहही रही थी कि उसकी सखी आकाश से उतरती दिखाई दी। मनोरथप्रभा ने उसे सोमप्रभ को दिखा दिया। जब सखी आ गई तो सब वृत्तान्त सुनाय उसके द्वारा उसने राजपुत्र के लिये पत्तों का बिछौना बिछवाय दिया और उनके घोड़े को भी घास डाल दी।

रात बीती, सबेरे सब उठे, उठतेही क्या देखते हैं कि आकाश से एक विद्याधर उतर के आया है। वह देवजय नामक विद्याधर नमस्कार कर बैठ गया और मनोरथप्रभा से कहने लगा "मनोरथप्रभे! राजा सिंहविक्रम तुमसे यह कहते हैं कि मेरी पुत्री, जो मकरन्दिका तुम्हारी सखी है, जब लों तुम्हारा पति तुमको न मिल जाय तुम्हारे स्नेह से अपना विवाह नहीं किया चाहती सो तुम आकर उसे समझाओ कि वह विवाह कर ले।" यह सन्देश सुनतेही वह विद्याधरकन्यका अपनी सखी के स्नेह से चलने पर उद्यत हुई। उस समय सोमप्रभ ने उससे कहा "अनघे! मैं भी विद्याधरों का लोक देखा चाहता हूं, सो मुझे भी वहां ले चलो और घोड़े को घास देकर यहीं छोड़ चलें। सोमप्रभ की बात सुन मनोरथप्रभा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बोली "बहुत अच्छा आप भी चलिये," इतना कह वह अपनी सखी तथा (देवजय की गोद में बैठे सोमप्रभ के साथ आकाशमार्ग से उड़ चली।

थोड़ी देर में सब लोग मकरन्दिका के भवन में पहुँच गये, उसने सबका आतिथ्य कर, सोमप्रभ को देख मनोरथप्रभा से धीरे से पूछा "सखि! यह कौन हैं?" उसने उनकी कथा कह सुनाई तब तो उनको देखकर मकरन्दिका एकदम आपे से बाहर हो गयी, उसका मन सोमप्रभ पर मोहित हो गया। मकरन्दिका का अलौकिक रूप देख सोमप्रभ भी अपने मन में विचारने लगे "अहो! आज रूपवती लक्ष्मी को मानो मैं देख रहा हूं। अहा! कैसा पुण्यात्मा वह जन होगा जो इसका पाणिग्रहण करेगा।"

दोनों के मन में प्रेमाङ्कुर उग आया था कि इतने में अवसर पाय मनोरथप्रभा ने मकरन्दिका से कहा "सखि! तुम अपना विवाह क्यों नहीं किया चाहती?" यह सुन उसने उत्तर दिया "सखि तुमको तो मैं अपने प्राणों से अधिक प्यार करती हूं, तुम किसी को न वरो और मैं अपना व्याह कर लूं यह कैसे हो सकता है।" इस प्रकार मकरन्दिका का प्रेममय वचन सुन मनोरथप्रभा बोली—"हे मुग्धे! मैंने तो एक वर को चुन लिया है, उसी की बाट मैं जोह रही हूं।" उसकी ऐसी बात सुन मकरन्दिका फिर बोली कि सखि अच्छा, जो कहो सो करूँ। मनोरथप्रभा तो उसके मन की बात पहिलेही ताड़ गयी थी, सो वह बोली "सखि! यह सोमप्रभ समस्त पृथ्वी पर भ्रमण कर अब आप तुम्हारे अतिथि हुए हैं, सो हे सुन्दरि! तुमको उचित है कि भली भांति इनका अतिथिसत्कार करो।" इतना सुनतेही मकरन्दिका ने कहा कि अपने शरीर पर्य्यन्त जो कुछ मेरा है मैं इन्हें अर्पण करती हूं यदि इनकी इच्छा हो तो स्वीकार करें। उसकी ऐसी बात सुन मनोरथप्रभा ने उसकी प्रीति का हाल उसके पिता को जनाकर दोनों का विवाह निश्चय करा दिया जब व्याह की बात पक्की हो गई तब सोमप्रभ के जी में जी आया, उन्होंने मनोरथप्रभा से कहा कि अब तो मुझे तुम्हारे आश्रम को जाना चाहिये ऐसा न हो कि मेरी सेना के सहित मन्त्री मुझे ढूंढ़ते २ वहां आवें और मुझे न पाकर वे लोग अहित की आशङ्का कर लौट जायँ। सो मैं पहिले वहां जाऊँगा और सैन्य का हालचाल लेकर यहां लौट आऊँगा, तब सच २ कहता हूं कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शुभ दिन में मकरन्दिका का पाणिग्रहण करूँगा। उनकी यह बात सुन मनोरथ-प्रभा देवजय को अङ्क में आरोपित कर उन्हें फिर उसी प्रकार अपने आश्रम में ले आई।

इतने में सोमप्रभ के मन्त्री प्रियङ्कर उन्हें ढूंढ़ते २ सेना सहित वहीं आ पहुँचे, उनसे मिलकर अति प्रसन्न हो अपने मन्त्री से सोमप्रभ अपना वृत्तान्त कहही रहे थे कि उसी अवसर में उनके पिता के यहां से लिखा हुआ पत्र लिये एक दूत सन्देश लाया कि शीघ्र चले आओ । तब मन्त्री की अनुमति से पिता की आज्ञा न टालकर सोमप्रभ अपने सैन्य के साथ निज नगर को चले गये । चलती समय मनोरथप्रभा और देवजय से यह कह गये थे कि पिताजी को देखकर मैं अति शीघ्र लौट आऊँगा । इधर सोमप्रभ अपने राज्य में गये उधर देवजय मकरन्दिका के निकट गया, उससे सब वृत्तान्त सुन मकरन्दिका का विरहानल और धधक उठा। अब उसे कहीं चैन नहीं, उद्यान में जाय वहां भी मन न लगे, गीत न भावे, सखियों की संगति अच्छी न लगे, सुग्गों की प्यारी और मधुर बोली उसे विनोदित न करे, और क्या उसे खानपान कुछ भी अच्छा न लगे, भोजन त्याग दिया, तब अङ्ग के शृङ्गारादि का क्या पूछना। उसके माता पिता बहुत कुछ समझाते बुझाते पर उसका मन किसी प्रकार स्थिर न होता, धीरज न होता, कमल की शय्या त्याग वह उन्मादिनी की भांति इधर उधर घूमने लगी । ठीकही कहा है,—"कामातुराणां न भयं न लज्जा" ।

मकरन्दिका के माता पिता को उसकी यह दशा देख अत्यन्त सन्ताप हुआ, वे पुनः २ उसको समझाते और ढाढ़स दिलाते पर वह एक न मानती। इस प्रकार समझाने बुझाने पर भी जब उसका मन ठिकाने न हुआ तब माता पिता को बड़ाही क्रोध आया उन्होंने उसको यह शाप दे दिया कि जा तू इसी शरीर से कुछ काल के लिये दरिद्र निषादों के बीच रह, तेरी जाति तुझे भूल जाय ।" इस प्रकार माता पिता का शाप पाय मकरन्दिका वहां से गिरी और किसी निषाद के घर जाकर उसकी कन्या हुई । उसी के सन्ताप और शोक से सन्तप्त हो उसके पिता विद्याधरेश्वर सिंहविक्रम अपनी पत्नी के सहित पञ्चत्व को प्राप्त हो गये। वह विद्याधरेन्द्र पूर्वजन्म में सर्वशास्त्रज्ञ एक ऋषि थे, किसी पूर्व पाप के कारण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अब सुग्गा होकर उत्पन्न हुए हैं। उसी प्रकार उनकी भार्य्या भी बनसुअरी हुई है। सो यह सुग्गा अपने तपोबल से पहिले का पढ़ा सब जानता है । यही कारण है कि इसकी विचित्र कर्मगति देखकर मैं हँसा, और जब यह अपनी इस कर्म्मगति को राजसभा में सुनावेगा तब इस योनि से मुक्त हो जावेगा। और सोमप्रभ इसकी कन्या को, जो इस समय निषादी हो गयी है, विद्याधरी की योनि में अवश्य पावेगा । उसी समय मनोरथप्रभा भी अपने पति मुनिसुत रश्मिमान् को, जो सम्प्रति भूमिपाल हुआ है, प्राप्त करेगी । सोमप्रभ भी जब अपने पिता के दर्शन कर लौटा तब मनोरथप्रभा के आश्रम में अपनी प्रिया की प्राप्ति के लिये अब श्री शङ्कर की आराधना कर रहा है।

इतनी कथा सुनाय पुलस्त्य मुनि चुप रह गये और मुझे अपनी जाति स्मरण हो गयी उस समय मैं हर्ष और शोक में मग्न हो गया। तब जो मुनि कृपा कर मुझे आश्रम में ले गये थे वह मुझे लेकर पालने लगे । क्रमानुसार मेरे पंख जमे तब मैं पक्षि जाति की स्वाभाविक चञ्चलता से इधर उधर फुदक २ अपनी विद्या का आश्चर्य दिखाने लगा । पीछे मैं निषाद के हाथ में पड़ा और हे राजन्! क्रमानुसार अब आपके समीप उपस्थित हुआ हूं, अब मेरा पक्षियोनि (से) जनित पाप क्षीण हो गया।

इस प्रकार अपनी कथा सुनाय जब विचित्र वाग्मी विद्वान् शुक चुप हुआ तब राजा सुमन ऐसे प्रफुल्लित हुए कि आनन्द के मारे अपने को भूल गये।

इतने अवसर में उधर सोमप्रभ की (परिचर्य्या और) आराधना से आशुतोष भगवान् शम्भु परितुष्ट हो गये और स्वप्न में दर्शन दे उनसे कहने लगे "राजन्! उठो, सुमन महीपति के पास जाओ वहां अपनी प्रियतमा को पाओगे। (क्योंकि) मकरन्दिका अपने पिता के शाप से निषादी हुई है वहां उसका नाम मुक्तालता पड़ा है, सो इस समय वह, शुकयोनि में जन्मे अपने पिता को लेके राजा के निकट गयी है। जब वह तुम्हें देखेगी तो वह विद्याधरी अपनी जाति को स्मरण कर शाप से मुक्त हो जावेगी, उस समय परस्पर पहिचान लेने से तुम दोनों का सङ्गम बड़ा हर्ष उत्पन्न करेगा।" महीपति से इतनी बात कह भक्तवत्सल भगवान् भूतनाथ उस आश्रम में वास करनेवाली मनोरथप्रभा से भी बोले "हे मनोरथप्रभे!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रश्मिमान् नामक जो मुनिसुत तेरा अभीष्ट वर है सोही अब सुमन नामक राजा हुआ है सो हे शुभे ! तू वहां जा और उन्हें प्राप्त कर, जब वह तुझे देखेगा तो तत्क्षण अपनी जाति स्मरण करेगा ।"

इस प्रकार स्वप्न में पृथक् २ भगवान् शङ्कर की आज्ञा पाय राजकुमार सोमप्रभ तथा विद्याधर की कन्या मनोरथप्रभा दोनों महीपति सुमन की सभा में गये, मकरन्दिका ने ज्योंही अपने प्राणेश्वर सोमप्रभ को देखा उसे अपनी जाति का स्मरण हो गया, बहुत दिनों का शाप आज छूटा, उसने अपना दिव्य शरीर धारण कर उन्हें गले लगा लिया । सोमप्रभ भी गिरिजापति के प्रसाद से अपनी प्राणप्यारी विद्याधरराजपुत्री को पाय उसे कण्ठ से लगाय कृतकृत्य हो गये, ऐसे प्रसन्न और प्रमुदित हुए मानो साक्षात् दिव्य भोगों की लक्ष्मी उन्हें प्राप्त हो गयी हो । मनोरथप्रभा को देखतेही राजा सुमन को भी अपने पूर्वजन्म का स्मरण हो गया इतने में उनका पूर्व शरीर आकाश से गिरा वह उसमें पैठकर मुनीन्द्रपुत्र रश्मिमान् हो गये । चिरोत्कण्ठित वह रश्मिमान् अपनी प्रिया से मिलकर आनन्दपूर्वक उसके साथ अपने आश्रम में चले गये और राजा सोमप्रभ भी अपनी प्यारी को लेकर अपने नगर को गये । वह सुग्गा भी अपना पक्षितन त्याग अपने तप से अर्जित लोक को चला गया ।

इतनी कथा सुनाय नरवाहनदत्त से उनका मन्त्री गोमुख कहने लगा कि राजन् ! आप देखते हैं न कि बहुत दिनों के बिछुड़े लोग भी, जो बदा होता है तो फिर मिल जाते हैं ।

दोहा ।

इहि बिधि गोमुख की कही, कथा विचित्र अनूप ।
सुनि पायो सन्तोष अति, नरवाहनदत भूप ॥
यदपि रह्यो तिन्ह केर मन, सक्तियशालीलीन ।
तदपि धीर धरि सुनि कथा, धन्यवाद नृप दीन ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चौथा तरङ्ग।

इस प्रकार दोनों विद्याधरियों की कथा सुनाय मन्त्रिवर गोमुख नरवाहनदत्त से पुन: कहने लगा। "देव! कोई कोई दोनों लोक के हितैषी सामान्य लोग भी बुद्धि का अवलम्बन कर कामादि व्यसनों को सह लेते हैं। देखिये मैं आपको एक कथा सुनाता हूं—राजा कुलधर का एक सेवक शूरवर्म्मा नामक था जो अच्छे कुल में जन्मा तथा प्रसिद्ध पुरुषार्थी योद्धा था। एक समय की बात है कि वह किसी गांव को * गया, वहां से अकस्मात् लौट आकर निःशङ्क घर में पैठतेही क्या देखता है कि उसकी भार्य्या उसी के एक मित्र के साथ एकान्त में विहार कर रही है। देखतेही तो उसे बड़ा क्रोध आया पर धैर्य्य का अवलम्बन कर विचार करने लगा कि इस मित्रद्रोही पशु को मारकर क्या लाभ उठाऊँगा अथवा इस दुश्चरित्रा पापिनी स्त्री को दण्ड देकर क्या करूँगा, व्यर्थ अपने को पापभागी क्यों बनाऊँ। इतना मन में विचार कर वह उन दोनों से कहने लगा "जाओ मुंह में करिखा पोत कर मेरे घर से निकल जाओ, चेत रखना तुम दोनों में से जिस किसी को फिर कभी देख पाऊँगा तो मारही डालूंगा, देखना कभी मेरी आंखों के साम्हने न पड़ना।" इतना कह उसने दोनों को निकाल दिया, वे दोनों वहां से कहीं दूर चले गये और शूरवर्म्मा अपना दूसरा व्याह कर सुखपूर्वक रहने लगा। इस प्रकार हे देव! जो पुरुष क्रोध को जीत लेता है वह कदापि दुःखभागी नहीं होता, और जो अपनी बुद्धि को काम में लाता है वह कभी विपत्ति में नहीं पड़ता और क्या पशुओं में भी देखा गया है कि बुद्धि के द्वाराही कल्याण हुआ है पराक्रम से कदापि नहीं। सुनिये इसी विषय में सिंह और बैल तथ अन्यान्य पशुओं की कथा सुनाता हूं—

किसी नगर में एक बड़ा धनवान् वणिक्पुत्र रहता था। एक समय की बात है कि वह अपना छकड़ा लदाकर मथुरापुरी में व्यापार करने को चला, जब प्रस्रवणाचल के निकट पहुँचा तो वहां कीचड़ के कारण उसका सञ्जीवक नामक बैल फिसलकर गिर पड़ा उसके सब अङ्ग चूर २ हो गये, गाड़ी का जूआ टूट गया,

* किसी युद्ध में गया था, ऐसा भी पाठान्तर है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बनिये के बेटे ने देखा कि बैल चोटीला हो गिर के अचेत हो गया है, बहुत कुछ उसके उठाने का उद्योग किया किन्तु बैल न उठा तब वह निराश हो, उस वहीं छोड़ चला गया। दैवयोग से सञ्जीवक सँभला, धीरे २ उठा, इधर उधर चल फिर कर कोमल २ घासों को चर २ कर पहिले सा हृष्टपुष्ट हो गया, पश्चात् यमुना किनारे जाकर हरी २ घास खाने लगा और स्वच्छन्द विचरने से क्रमश: हृष्ट पुष्टाङ्ग और बलवान् हो गया। अब वह उन्नत-डीलवाला बैल, महादेव के वृषवत् अपने सींगों से बांबियें उधेड़ता हँकड़ता फिरता था।

उसी समय समीपवर्त्ती एक दूसरे वन में पिङ्गलक नामक कोई सिंह रहता था जिसने अपने विक्रम से समस्त जङ्गल अपने बश में कर रक्खा था। उस मृग-राज के मन्त्री दो सियार थे एक का नाम दमनक दूसरे का करकट। एक समय की बात है कि वह सिंह यमुना किनारे पानी पीने जा रहा था कि समीपही में उस सञ्जीवक साँड़ का हँकड़ना उसको सुनाई पड़ा। सब दिशाओं में गूंजे हुए उस अश्रुतपूर्व नाद को सुनकर वह सिंह चिन्ता करने लगा "अहो! यह नाद किस जन्तु का है, निश्चय यह कोई बड़ा सत्त्व है और समीपही में कहीं रहता है, सो कहीं ऐसा न हो कि मुझे देख पावे तो मार डाले अथवा वन से निकाल देवे" इस प्रकार सोच कर वह सिंह बिना पानी पीयेही चटपट वन में चला आया और भय के मारे व्याकुल रहता तथापि अपना भाव ऐसा छिपाये रहता कि अनु-चरों पर प्रगट न होने पाया।

तदनन्तर उसका परम चतुर मन्त्री दमनक नामक सियार एकान्त में दूसरे मन्त्री करकट से कहने लगा कि "भाई! हमारे स्वामी पानी पीने गये थे सो न जानें बिना पीयेही क्यों झटपट लौट आये, अब उनसे इसका कारण पूछना चाहिये।" यह सुन करकट बोला "मित्र! हमें इससे क्या प्रयोजन? क्या तुमने कील उखाड़नेवाले बन्दर का वृत्तान्त नहीं सुना है। सुनो मैं सुनाता हूं"—

किसी नगर में एक बनिया देवमन्दिर बनवाने लगा उसके लिये बहुत सी लकड़ियां मँगवायी गयीं। वहां के बढ़ई एक लकड़ी ऊपर से आधी चीर, बीच में कील ठोक कर अपने २ घर चले गये। दैव का मारा एक वानर वहां आया और चञ्चलता से चट उछलकर उस काठ पर जा बैठा जिसके पल्ले कील से अलग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अलग मुंह बाये हुए थे । दोनों पल्लों के बीच मानो मृत्यु के मुंह में, बैठकर स्वभावचापल्य से उसने दोनों हाथों से निष्प्रयोजनही वह कील उखाड़ ली । अब क्या था कील के उखड़ जाने से दोनों पल्ले जुट गये बीच में वह बानर दब कर मर गया ।"

इतनी कथा सुनाय करकट कहने लगा कि भाई दमनक ! इस प्रकार जो जिसका काम नहीं है सो कभी न करे, करने से ही विनाश होता है। सो मृग-राज के अभिप्राय को जानकर क्या करेंगे । करकट की इतनी बात सुन धीर दम-नक बोला, "भाई तुम्हारा कहना ठीक है पर जो बुद्धिमान् होते हैं वे स्वामी के पेट में पैठकर सब बात जान लेते हैं, सो ऐसाही करना चाहिये, और ऐसे तो अपना पेट कौन नहीं पाल लेता ।" दमनक की ऐसी बात सुन साधुस्वभाव कर-कट बोला कि भाई जो हो पर अपनी इच्छा से अधिक प्रवेश करना सेवक का धर्म्म नहीं है अर्थात् कोई पूछे वा न पूछे पर सब बातों में आगे होना सेवक को उचित नहीं । करकट का ऐसा कहना सुन दमनक ने कहा "यह तो ठीक नहीं है अपना २ मनवाञ्छित फल सभी चाहते हैं, देखो कुत्ता हड्डीही से सन्तुष्ट हो जाता है और सिंह हाथी पर धावा मारता है ।" यह सुनकरकट बोला,— "माना कि ऐसाही किया, फिर स्वामी प्रसन्न न हुए प्रत्युत कुपित हो गये तो विशेष फल कहां रहा ? भाई स्वामी और पर्वत को एक समान समझना, दोनों बड़े कर्कश और स्तब्ध होते हैं । जिस प्रकार पर्वतों में हिंस्र जन्तु भरे रहते हैं वैसेही स्वामियों के पार्श्ववर्त्ती बड़े २ गुरुघण्टाल रहते है, वे हिंसक जन्तुओं से किसी अंश में न्यून नहीं होते । फिर जैसे पहाड़ों का पार पाना कठिन है वैसेही प्रभुओं के गम्भीर हृदय का गूढ़ भाव जानना अति कठिन है, जैसे पर्वत विषम (ऊबड़ खाबड़) होते हैं वैसेही स्वामी भी विषम, झट पलट जानेवाले, टेढ़े हो जाते हैं। देखो नीति में क्या कहा है। ।

प्रायेण भूमिपतयः प्रमदा लताश्च,
यः पार्श्वतो वसति, तं परिवेष्टयन्ति * ।

* राजाओं, स्त्रियों और लताओं का यह स्वभाव होता है कि जो समीपवर्त्ती होता है उसी को लपेट लेते हैं, फिर जहां उनके वश में हुआ कि विलाते विलम्ब नहीं होता ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब दमनक फिर बोला "भाई ! बात तो ऐसीही है पर "शूचीप्रवेशे मुशल-प्रवेशः" † की कहावत तुमने नहीं सुनी है । जो बुद्धिमान् होता है वह धीरे २ प्रभु को अपने हाथ पर चढ़ा लेता है, फिर जहां स्वामी हाथ में आ गया तब क्या तब तुम्हीं तुम नज़र आओगे । करकट बोला "अच्छा ऐसाही करो" ।

करकट की आज्ञा पाय दमनक अपने स्वामी सिंह के पास गया और पिङ्गलक को प्रणाम कर बैठ गया । पिङ्गलक ने उसका बड़ा आगत स्वागत किया । तब दमनक (हाथ जोड़कर) निवेदन करने लगा "महाराज ! मैं तो आपका पुश्तैनी सेवकही हूं, और सोभी सदा आपका भलाही चाहता हूं, देखिये पराया भी क्यों न हो यदि अपना भला चाहे तो उसको ग्रहण करना उचित है और आत्मीय ही क्यों न हो पर यदि बुराई करे तो उसका त्याग करना चाहिये । देखिये न, बिल्ली बहुत उपयोगी होती है इससे लोग उसे मोल लेकर पोसते हैं और घर में उत्पन्न हुआ मूसा अहित करने से मारा जाता है । मेरा अभिप्राय यह है कि जो अपनी भलाई चाहे वह अपने हितैषी भृत्यों की बात सुन ले और उन सेवकों का भी यह कर्त्तव्य है कि स्वामी पूछे या न पूछे (कहे या न कहे) किन्तु समय पर प्रभु का भला कर देवें । सो देव ! यदि आप मेरा विश्वास करते हैं, यदि आप कुपित न होवें और न कुछ मुझसे छिपावेंही और मेरे पूछने पर उद्विग्न न हों तो मैं कुछ पूछा चाहता हूं ।

दमनक की इतनी बात सुन पिङ्गलक सिंह बोला "हां, हां, तुम मेरे विश्वास पात्र हो जो चाहो निःशङ्क कहो (पूछो)।" पिङ्गलक की ऐसी बात सुन दमनक ने कहा "देव ! आप प्यासे होकर पानी पीने गये थे तो बिना जल पीये-ही उदास हो क्यों लौट आये ?" । दमनक की यह बात सुन मृगेन्द्र विचार करने लगा "जान पड़ता है कि इसने लख लिया, यह मेरा भक्त है तो अब इससे छिपाना क्या ।" इतना सोच विचार उसने दमनक से कहा "सुनो दमनक ! तुमसे कुछ छिपा तो हैही नहीं और ऐसी कोई बात भी नहीं कि तुमसे मैं छिपाऊँ । बात

† सूई के जाने भर का अवकाश जहां हुआ कि मूशल घुसेड़ने भर का दांव लोग कर लेते हैं । इसी प्रकार भाषा में एक कहावत है "अँगुली पकड़ते पहुँचा पकड़ना ।"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह है कि जब मैं जल के समीप पहुँचा तो मुझे एक अद्भुत नाद सुनाई पड़ा, मुझे तो ऐसा भासता है कि मेरी अपेक्षा किसी अधिक बलिष्ठ जन्तु का उग्र नाद है क्योंकि जिसका जसा शब्द होता है उसी के अनुरूप प्राणी भी होगा ऐसी भावना उठती है. ब्रह्मा की यह सृष्टि बड़ी विचित्र है कि एक से बढ़कर दूसरा होता है। अब वह इस वन में पैठा है मुझे चिन्ता है कि न मेरा शरीरही बचेगा और न वन ही मेरे अधिकार में रहेगा सो भाई! मैं तो यहां से किसी दूसरे कानन में चला जाऊँगा।

इस प्रकार सिंह का कहना सुन दमनक बोला "देव! आप शूर होकर इतने ही से वन त्याग दिया चाहते हैं? देखिये जल से पुल टूट जाता है, कान में कुछ फुसफुसाने से मैत्री नष्ट हो जाती है, मन्त्र जहां प्रगट किया गया कि उसका प्रभाव चला जाता है इसी प्रकार शब्द मात्र से कातर के प्राण भयभीत हो जाते हैं। शब्द का क्या कहना यन्त्र इत्यादि के शब्द भी तो बड़े भयङ्कर होते हैं, सो जबलों परमार्थ न निश्चित हो ले, हे प्रभो!, भय करना उचित नहीं है। सुनिये मैं आप को एक सियार और नगाड़े की कथा सुनाता हूं।"

पूर्वकाल की बात है कि किसी वन में एक सियार रहता था। भोजन की खोज में इधर उधर घूमता फिरता एक स्थान में पहुँचा जहां युद्ध हो चुका था, एक ओर गम्भीर ध्वनि सुन पड़ी जिससे भयभीत हो वह उसी ओर निरखने लगा। बहुत देर तक ध्यानपूर्वक देखने से उसे एक नगाड़ा धरती पर दीख पड़ा, उसने पहिले तो कभी नगाड़ा देखाही नहीं था इससे उसे देखते ही वह अपने मन में बड़े आश्चर्य से विचारने लगा कि अहो! यह कैसा अद्भुत प्राणी है जिसका शब्द ऐसा विलक्षण है। इस प्रकार चिन्ता करता २ वह क्या देखता है कि नगाड़ा तो हिलता डोलता नहीं, तब वह उसके निकट चला गया, समीप जाकर देखने से उसे विदित हुआ कि यह तो कोई प्राणी नहीं है। वाताहत नाराचदण्ड जब इसके चमड़े पर लगता है तो उसमें से शब्द निकलता है, जब इसका निश्चय हो गया तब उसका भय जाता रहा वह यह विचार किक दाचित् इसके भीतर कुछ खाने की वस्तु हो, उसे फाड़ उसके भीतर घुस गया और खोजने पर लकड़ी तथा चमड़े के अतिरिक्त और कुछ न मिला।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतनी कथा सुनाय दमनक बोला कि देव! आपसे वीर जीव शब्दमात्र से क्यों डरें? यदि आप आज्ञा देवें तो मैं इसका पता लगाने जाऊँ । दमनक की ऐसी बात सुन सिंह बोला "भाई! यदि तुम साहस करते हो तो जाओ।" मृगराज की ऐसी आज्ञा पाय दमनक वहां से चला और यमुना किनारे पहुँचा । शब्द अकनते अकनते ज्योंही वह उस स्थान पर पहुँचा जहां से नाद आता था, तो क्या देखता है कि एक बैल चर रहा है । सो वह वृष के समीप जाकर उससे आलाप करने लगा, और बातचीत करके उसने सिंह से जाकर कह दिया कि देव! बात यह है। उसकी बात सुन पिङ्गलक सिंह ने कहा "भाई! यदि तुमने उस महोक्ष को देखा है, और उससे मैत्री भी कर ली है तो जाओ किसी युक्ति से उसे यहां ले आओ, देखूं तो सही वह कैसा जन्तु है।" इतना कह अति प्रसन्न हो पिङ्गलक ने फिर अपने मन्त्री दमनक को उस वृषभ के पास भेजा।

तब दमनक ने जाकर उस महोक्ष से कहा कि भाई हमारे स्वामी मृगराज अति प्रसन्न हो तुम्हें बुला रहे हैं सो आओ मेरे साथ चलो, पर भय के कारण वृष उसकी बात पर सम्मत न हुआ । तब दमनक वन में सिंह के पास लौट गया और बोला कि मृगेन्द्र यदि आप अभयदान दें तो उसे लिवा लाऊँ । सिंह के अभय प्रदान करने पर वह सञ्जीवक के समीप गया और बोला, "लो! भाई हमारे प्रभु तुम्हें अभय दे रहे हैं तो अब तो डर नहीं है चलो न । इस प्रकार भड़ी पट्टी देकर दमनक सञ्जीवक को केसरी के निकट ले गया । सिंह के समक्ष पहुँचकर सञ्जीवक ने सिर झुकाकर प्रणाम किया तब पिङ्गलक ने उसका बड़ा आदर कर उससे कहा "भाई कुछ डर मत करो अब तुम मेरे पास मजे में रहा करो।" वृष ने कहा "बहुत अच्छा जो आज्ञा," इतना कह वह वहीं रहने लगा। धीरे २ उसने सिंह पर ऐसा रोब जमा लिया कि मृगेन्द्र सब पशुओं से मुंह फेर उसका ही चेरा बना रहता, और सब प्रकार से वृष के अधीन हो गया ।

यह दशा देख दमनक को बड़ा खेद हुआ, उसने खिन्न हो एकान्त में करकट से कहा "देखो भाई संजीवक ने स्वामी को ऐसा अपनाय लिया है कि वह हम दोनों की ओर आंख उठा के देखते भी नहीं, अकेले ही मांस खाते हैं हम दोनों को नहीं देते। भला देखो तो सही यह हमारे प्रभु कैसे मूर्ख हैं कि बैल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इन्हें राह दिखाता है। मित्र! क्या कहूं, कुछ कहते नहीं बनता, यह मेरा ही दोष है कि मैं इस बैल को यहां लाया। अच्छा कोई चिन्ता नहीं, अब मैं ऐसा उपाय करूँगा जिससे यह बैल नष्ट हो जाय और हमारे स्वामी भी अनुचित व्यसन (कातरता) से निवृत्त होंगे।" दमनक की ऐसी बात सुन करकट बोला, "सखे! इस समय तो तुम ऐसा नहीं कर सकते।" यह सुन दमनक ने कहा कि मैं बुद्धिबल से अवश्य ऐसा कर सकूंगा, भला यह कोई बात है। जगत् में ऐसा कौन काम है जिसे वह (पुरुष) न कर सके जिसकी बुद्धि आपत्काल में भी संग नहीं छोड़ती। क्या तुमने बकघाती मकर की कहानी नहीं सुनी है? अच्छा, सुनो मैं सुनाता हूं।

पूर्वकाल में मत्स्यपूरित किसी तालाब में एक बकुला रहता था, उसके भय से उस तड़ाग के मत्स्य भूलकर भी उसके दृष्टिपथ में नहीं आते थे, देखते ही भाग जाते थे। जब उसने देखा कि एक भी मछली हाथ नहीं लगती तो उसने एक युक्ति निकाली, मछलियों से उसने कहा कि यहां एक मछुआ जाल लेकर आया है, अब वह शीघ्रही जाल डालकर तुम सभों को पकड़कर मार डालेगा, सो यदि तुम सबों का विश्वास मुझ पर हो तो जैसा मैं कहूं वैसा करो। यहा से थोड़ीही दूर पर एक एकान्त स्थान में एक स्वच्छ सरोवर है सो आओ मैं एक एक करके तुमको वहां छोड़ आऊँ। उसकी ऐसी कपटभरी बातें सुन भयभीत हो उन सब मूर्ख मत्स्यों ने कहा "हां हां ऐसाही करो, हम सब तुम्हारा विश्वास करते हैं।" तब वह धूर्त्त बक एक मछली ले जाता और एक चटान पर पटक उसे खा जाता, इस प्रकार उसने बहुतों को खा डाला।

उस तड़ाग में एक मकर रहता था, उसने देखा बकुला बहुतेरे मत्स्यों को ले जा रहा है तो उसने इससे पूछा "भाई तुम मछलियों को कहां ले जाते हो?" तब उस बकुले ने मछलियों से जो कुछ कहा था सोही उससे भी कह दिया, इससे भयत्रस्त हो झष ने उससे कहा "भाई! तो मुझको भी ले चलो।" उसके मांस की गन्धि से बकुले की बुद्धि मारी गयी, सो वह उसे उठा उसी बध्यशिला की ओर उड़ चला। बध्यशिला के निकट खाये हुए मत्स्यों की हड्डियां देख वह मकर ताड़ गया कि यह दुष्ट इसी प्रकार विश्वास देके मछलियों को लाकर यहीं खाता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है । तब ज्योंही कि बकुला उसे उस चटान पर पटके कि उसके पूर्वही धीमान् और विह्वल मकर ने उस विश्वासघाती बक का शिर कुतुर डाला (लिया), और लौटकर शेष मछलियों से उसका वृत्तान्त कह दिया, वे सब मत्स्य अति प्रसन्न हुए और उस प्राणदाता मकर को अभिनन्दन देने लगे ।

इतनी कथा सुनाय दमनक करकट से फिर कहने लगा कि मित्र ! बुद्धिही बल है, जिसको बुद्धि नहीं उसको बल कहां, सुनो मैं तुम्हें सिंह और शशक की एक दूसरी कथा सुनाता हूं ।

किसी बन में एक भयानक सिंह रहता था जोकि अकेलाही स्वच्छन्द वहां राज्य करता था, जिस जन्तु को देखता उसी को मार डालता । इस प्रकार पशु संहार देख मृगादि सब जन्तुओंने एकट्ठे हो मृगराज से अभ्यर्थना की "पशुराज ! आप हम सभीं को एकबारगी मारकर क्यों स्वार्थहानि करते हैं, इससे लाभही क्या? हम आपके भोजन के लिये प्रतिदिन एक एक पशु भेज दिया करेंगे ।" उनको ऐसी प्रार्थना सुन पञ्चानन ने कहा "बहुत अच्छा ऐसाही किया करो ।" अब वह प्रतिदिन एक जीव को खाकर रहने लगा ।

एक दिन एक खरहेकी पारी पड़ी, सब पशुओं ने उसे भेजा, सो मार्ग में चलता चलता वह अपने मनमें विचारने लगा कि "धीर वही है जो आपत्काल में भी मोह को नहीं प्राप्त होता, उस समय भी धीरज नहीं त्यागता । अब मृत्यु तो उपस्थित हैही, आओ एक युक्ति निकालूं" यों विचार वह कुछ विलम्ब कर सिंह के पास गया । उधर भोजन की बेला निकल गई । जब खरहा विलम्ब करके पहुँचा तो केसरी ने दपटकर उससे कहा "क्योंरे तूने मेरे आहार की बेला क्यों टाल दी, शठ ! मृत्यु से बढ़कर मैं तुझे और क्या दण्ड दे सकता हूं" ! सिंह की इतनी बात सुन खरहा बड़ी नम्रता से बोला "देव ! इसमें मेरा अपराध नहीं है क्योंकि मैं आज अपने वश में नहीं था, मैं परवश पड़ गया था; मार्ग में एक दूसरे सिंह ने मुझे अटका रक्खा था, बहुत देर के अनन्तर मुझे छोड़ा; कहिये फिर मेरा क्या दोष है ?" इतना सुनतेही सिंह अपनी पूंछ पटकने लगा, क्रोध के मारे उसकी आखें लाल हो गईं, वह दांत कटकटा के बोला "अरे ! वह दूसरा सिंह कौन है ? चल मुझे दिखा तो सही !" "आइये स्वामी चलकर देखिये" इतना कह खरहा उसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बड़ी दूर एक कूएँ पर ले गया और उसमें दिखाकर सिंह से कहने लगा "देखिये प्रभो! वह सिंह इसीके भीतर रहता है।" तब घोर गर्जन कर सिंह कूप में झांकने लगा, स्वच्छ जल में अपना ही प्रतिबिम्ब देख और अपने ही गर्जन की प्रतिध्वनि सुन वह मदान्ध विचारने लगा कि अवश्य यह प्रतिद्वन्द्वी है जिसका गर्जन मेरे गर्जन से भी घोरतर है, यह सोच वह मृगाधिप क्रुद्ध हो उसके बध करने के विचार से उस कूप में कूद पड़ा और मूढ़ वहीं मर गया।

इतनी कथा सुनाय दमनक फिर कहने लगा "भाई करकट देखा न तुमने, प्रज्ञा जो है वही परम बल है, पराक्रम कुछ भी नहीं है, देखो बुद्धि के बल से ही एक साधारण खरहे ने केसरी को मार डाला, सो मैं भी अब बुद्धि के द्वाराही अपना अभीष्ट साधन करता हूं। दमनक की इतनी बात सुन करकट चुप हो रहा।

तब दमनक अपने स्वामी पिङ्गलक सिंह के समीप गया और उदास बन बैठ रहा। जब सिंह ने उसकी उदासीनता का कारण पूछा तो वह बोला "देव! मैं आपको बताये देता हूं, क्योंकि जानबूझ के चुप रहना अच्छा नहीं है। सेवक का धर्म तो यह है कि जो वह अपने मालिक का भला चाहे तो विना पूछेही बतलाय दे, सो मेरा कहना अन्यथा न मानियेगा, मैं जो कहता हूं उसे सुन लीजिये। बात ऐसी है कि यह जो संजीवक बैल है, जिसे आपने मन्त्री बनाया है; सो आपको मारकर राज्य करना चाहता है, मन्त्री रहकर इसने यह निश्चय कर लिया है कि आप भीरु हैं। आपके बध करनेही के उद्देश्य से वह अपने आयुधों (दोनों सींगों) को भांजा करता है। इतनाही नहीं और भी उसकी करनी सुनिये, वन वनमें घूम घूमकर यह सब पशुओं को यह समझाया करता है कि धीरज धरो चिन्ता न करो तृणभक्षी मैं तुम्हारा राजा हुआ कि तुम लोग सुखी हुए, बस मजे में आनन्द से जीवनयात्रा निर्वाह करो, घबराओ मत अब इस मांसभोजी मृगेन्द्र को मैं माराही चाहता हूं। इस प्रकार की बातें कह २ कर वह समस्त पशुओं को उत्साहित करता है। अब आप भी चौकन्ने हो जावें इस कपटी बैल की कुछ चिन्ता कीजिये, स्मरण रखिये कि जबलों यह जीता रहेगा आपका कुशल कदापि न होगा।" दमनक की इतनी बात सुन पिङ्गलक बोला "ओः यह तृण भक्षक बिचारा बैल मेरा क्या कर सकता है; सुनो भाई मैंने उसे अभयदान दिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है तो शरणागत को कैसे मारूँ।" यह सुन दमनक ने कहा "महाराज यह आप क्या कह रहे हैं, ऐसा मत कहिये, सुनिये राजा जब किसी को अपने बराबर कर बना लेता है तो लक्ष्मी पूर्ववत् नहीं परसतीं, क्योंकि लक्ष्मीदेवी का स्वभाव चञ्चल है, जब एकही समय में दो उच्छ्रित व्यक्तियों पर अधिष्ठान करती हैं तो चिरकाल लौं दोनों पर नहीं ठहर सकतीं अवश्य एक का त्याग कर देती हैं। जो प्रभु अपने हितकारी सेवक से द्वेष करता है और अनिष्टकारी से हेलमेल रखता है, बुद्धिमान् उसे यों त्याग देते हैं जैसे दुष्ट और जिद्दी रोगी को वैद्य। जो बात पहिले अप्रिय लगे पर परिणाम में हित करे ऐसी बात के वक्ता तथा श्रोता जहां होते हैं वहीं तो श्री अचल होती हैं। जो पुरुष भलों की बात नहीं मानता और दुष्टों की राय में चलता है वह अतिशीघ्रही विपत्ति में पड़कर सन्तप्त होता है। सो देव! आप बैल का स्नेह करें इसका अर्थ क्या है? भला जो अपना बुरा चाहे उसे अभयदान देना, मैं नहीं समझता कि यह शरणागतवत्सलता कैसी है! यह बैल तो आपकी जड़ खोदे और आप शरणागतवत्सलता के फेर में पड़े रहें यह बात अच्छी नहीं है। और फिर देखिये न, यह बैल सदा आपके पास बना रहता है और यहीं गोबर और मूत करता है उनमें जो कीड़े उत्पन्न होते हैं वे कहीं आपके उन घावों में, जो कि हाथियों के दांतों की चोट से हुए हैं पैठें तब तो भली बनी, तब कहिये न यह युक्ति से बध करना हुआ कि नहीं?। दुर्जन यदि बुद्धिमान् हुआ वह स्वयं यदि कुछ दोष (अनिष्ट) न करे तो न सही पर उसके संसर्ग से जो दोष (अनिष्ट) हो जाता है वह तो अनिवार्य्य है। सुनिये इसी विषय में मैं आपको एक कथा सुनाता हूं।

किसी राजा के पलङ्ग में कहीं से मन्दविसर्पिणी नाम्नी एक यूका (१) चढ़ गयी थी वह वहां बहुत दिनों से रहती थी। अकस्मात् वायु का उड़ाया टिट्टिभ नामक एक खटमल एक दिन उसी में आ घुसा। उसको देखकर मन्दविसर्पिणी ने कहा "तू मेरे निवासस्थान में क्यों आया, जा कहीं दूसरी ठौर चला जा।" टिट्टिभ बोला "मैंने राजा का लहू कभी नहीं पीया है देखा चाहता हूं कि वह कैसा स्वादिष्ट होता है मुझ पर कृपा करो, यहां रहने दो।" उसे बहुत चिरौरी करते

(१) ढील या चीलर।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देख यूका ने कहा "अच्छा रहो किन्तु भाई असमय में राजा को मत काटना; राजा जब सो जावें वा रमण करते रहें तब धीरे से काट लेना।" यह सुन टिट्टिभ बोला "बहुत अच्छा," इतना कह वह वहीं रह गया। रात्रि में जब राजा पलंग पर लेटे कि उसने चट काट लिया, राजा झट उठ बैठे और बोले "कुछ काटता है"। उड़ीस दुष्ट तो तत्क्षण खसक गया पर सेवकों के ढूंढ़ते २ यूका मिल गई और तुरत मार डाली गयी।

इतना कह दमनक फिर बोला कि मृगेन्द्र! संसर्ग का दोष ऐसा होता है कि टिट्टिभ खटमल के सम्पर्क से मन्दविसर्पिणी यूका मारी गई, इसी प्रकार आप समझ रक्खें कि सञ्जीवक की सङ्गति से आपका भला कदापि न होगा। यदि आप मेरे कहे का विश्वास नहीं करते तो आपही देखेंगे जब वह शूल सम चोखे सींग-वाले अपने शिर को धुनता आपके साम्हने आवेगा। इस प्रकार की बातें कह कह दमनक ने पिङ्गलक का मन फेर दिया तब उस सिंह ने संजीवक का बध करना मन में ठान लिया।

जब दमनक को विदित हो गया कि अब स्वामी संजीवक का अवश्य बध करेंगे तब वह वहां से गँव से उठकर उदास मुंह बनाये सञ्जीवक के समीप पहुँचा। संजीवक ने उसे उदास देखकर पूछा कि मित्र तुम इस प्रकार विषण्ण क्यों हो? कुशल तो है न। यों इसके पूछने पर वह कपटी दमनक कहने लगा "भाई सेवक का कुशल क्या पूछना, सेवकाई करके कुशल से कोई रह सका है,? और राजाओं के समीप रहकर कोई सदा उनका प्रिय बना रहा है? और भी सुनो जो अर्थी अर्थात् मांगनेवाला है वह कब नीचा नहीं देखता तथा ऐसा कौन है जो काल के गाल में न पड़े?। सुनो भाई अर्थी होने से कैसा छोटा होना पड़ता है इस विषय में तुम्हें एक सवैया सुनाता हूं—

हे करतार हौं तोसों कहौं कबहूं जनि दीजिय काहु को टोटो।
और लिखै जनि काहु के भाग में, मांगिवे काज महीपति मोटो॥
तूहुँ तौ जानत है अपने जिय मागिवे तै कछु और न खोटो।
जो गयो मांगन तू बलि-द्वार पै याही तें ह्वै गयो वामन छोटो॥

इस प्रकार दमनक की बात सुन संजीवक ने पूछा "भाई कहो तो सही तुम

आज उद्विग्न क्यों हो, तुम्हें हुआ क्या है कुछ बतलाओ तो सही ?" तब दमनक बोला "सुनो भाई तुम पर मेरा बड़ा ही प्रेम है इससे कहे देता हूं, चेत करना आज मृगराज पिङ्गलक तुम्हारे विरुद्ध हो गये हैं, मैं क्या कहूं वह ऐसे बिमुख हो गये हैं कि मैत्री की कुछ भी चिन्ता न कर अब तुमको मारकर खा जाया चाहते हैं, और फिर उनके जितने लग्गूभग्गू हैं वे सब के सब हिंसक हैं, भाई यह उन्हीं सबका खोवा कूटा है वेही सदा इस बात की प्रेरणा किया करते हैं, यह मैं अपनी आंखों देखता हूं"। साधुस्वभाव संजीवक को तो दमनक की बात का पता पहिले मिलही चुका था इससे उसको इस बात का भी विश्वास हो गया सो वह उदास होकर बोला "धिक्कार है ऐसे स्वामी को जो आप क्षुद्र हो और जिसके पार्श्ववर्ती भी क्षुद्र होवें तथा जो सेवा करा के भी पीछे बैरी ही हो जावे। सुनो भाई इसी विषय में एक कथा सुनाता हूं—

किसी वन में मदोत्कट नामक एक सिंह रहता था। उसके चीता, कौआ और सियार तीन चाकर थे। एक समय की बात है कि उसने उस जङ्गल में आये हुए एक ऊँट को जो अपने यूथ से निकल भागा था, देखा ऐसा अद्भुत जन्तु उसकी दृष्टि तले पहिले कभी नहीं पड़ा था। मृगाधिप ने बड़े आश्चर्य से पूछा "यह कौन जीव है।" यह सुन परम चतुर कौवा बोला "पशुराज! यह ऊँट है।" तदुपरान्त सिंह ने अभयदान देकर उस उष्ट्र को बुलवा अपनी सेवा में नियुक्त किया।

एक समय की बात है कि उस सिंह का किसी गजेन्द्र के साथ महा घोर युद्ध हुआ जिसमें केसरी का शरीर क्षत विक्षत हो गया और वह बीमार होकर उपवास करने लगा। उसके अनुचरवर्ग तो सिंहही के आधार पर जीते थे सिंह शिकार करके लावे तो सब मिलके मजा उड़ावें किन्तु उधर तो वह स्वयं अशक्त पड़ा उपवास कर रहा है तो इधर भी फाके होने लगी, वे सब हृष्टपुष्ट थे पर यह किसी से न बन पड़ा कि कुछ आखेट कर लावे और अपने प्रभु को पथ्य देवें। एक दिन सिंह स्वयं अहेर की खोज में चला, दिन भर घूमा पर कुछ न मिला अन्त में निराश हो स्वस्थान को लौट आया और ऊँट को छोड़ सब अनुचरों को एकान्त में बुलाकर उनसे पूछने लगा कि कहो अब क्या किया जाय ? उन सभों ने एकमत हो उत्तर दिया "मृगराज! इस आपत्काल में हम जो कहेंगे समझ रखिये कि वह आपके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हित की ही बात होगी, भला यह तो सोचिये कि ऊँट के साथ आपकी क्या मैत्री? उसी को आप क्यों नहीं खाते। यह तृणभक्षी, हम मांसाहारियों का भक्ष्य है सो बहुतों के भोजन के लिये एक क्यों नहीं त्याग किया जाता ? यदि प्रभु कहैं कि अभयदान देके फिर उसका बध कैसे करूँ तो हम सब ऐसा उपाय कर देंगे कि वह अपना शरीर आपही प्रभु को अर्पण कर देगा, तब तो दोष नहीं रहा।" उनकी ऐसी बात सुन सिंह सम्मत हुआ तब मृगराज की आज्ञा से कौवा मन्त्रणा कर उस ऊँट के पास जाकर बोला "भाई करभ! बड़ा कठिन अवसर आगया है, देखो न हमारे स्वामी कैसी विपत्ति में पड़ गये हैं, यद्यपि भूखों मर रहे हैं तथापि हम सभों से कुछ भी नहीं कहते। ऐसी दशा में अब हमारा क्या कर्त्तव्य है ? हम अनुचरों ने तो यह स्थिर किया है कि अपना अपना शरीर दान कर उनको प्रसन्न करें, सो भाई जैसा हम कहें और करें वैसा तुम भी करना जिससे प्रभु तुम पर भी प्रसन्न रहें। धूर्त्त वायस की धूर्त्तता भला साधुस्वभाव ऊँट विचारा क्या समझे वह उसकी भड़ी पट्टी में आ गया और बोला "अच्छा भाई मैं भी ऐसाही करूँगा"। तदुपरान्त वह कौवे के साथ सिंह के पास गया।

वहां पारी पारी से सब जन्तु उठ २ कर आत्मसमर्पण करने लगे, सबसे पहले कौवा साम्हने जाकर बोला "देव! मैं स्वायत्त हूं, मुझे खाकर आप पथ्य करें"। काग की बात सुनकर सिंह बोला "तुझ स्वल्पकाय को खाकर मेरी क्या तृप्ति होगी।" मृगेन्द्र की इतनी बात सुन सियार ने साम्हने जाकर कहा "तो देव मुझे खाइये।" सिंह ने वैसीही बात कह सियार को भी दूर किया। तब चीता साम्हने जाकर बोला "अच्छा, प्रभु, तो मुझको खाइये", पर सिंह ने उसे भी न खाया। तदुपरान्त उष्ट्र ने सम्मुख जाकर कहा "मृगराज! मुझे भक्षण कीजिये"। बस अब क्या था, वहां तो केवल वचन का छल मात्र था, सिंह, कौआ तथा उसके अनुचर एकदम उस विचारे ऊँटपर टूट पड़े और टूक २ कर भकोस गये।

इतनी कथा सुनाय सञ्जीवक फिर कहने लगा "बस भाई दमनक! मैं समझता हूं यह काम किसी चुगलखोर का है कि जिसने अकारण राजा पिङ्गलक को इस ओर प्रेरणा की है, अच्छा अब तो जो भाग्य में बदा होगा वही होगा। राजा गीध हो और उसके पार्श्ववर्त्ती हंस हों तो वह अच्छा है किन्तु यदि गिद्ध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पार्श्ववर्त्ती हुए और हंस राजा हुआ तो वह अच्छा नहीं" । सञ्जीवक की इतनी बात सुन कुटिल दमनक बोला कि भाई संजीवक ! धीरज से सब कार्य्य सिद्ध होते हैं, सुनो इसी विषय में मैं तुमको एक कथा सुनाता हूं—

समुद्रतट पर कोई टिट्टिभ पक्षी अपनी भार्य्या के साथ रहता था, टिट्टिभी को जब गर्भ रहा तब उसने अपने पति से कहा "स्वामिन् ! चलिये कहीं और चले चलें, कहीं ऐसा न हो कि मैं यहां अण्डे पाऊँ और समुद्र अपनी लहरों से उन्हें बहा ले जावे ।" भार्य्या की इतनी बात सुन टिट्टिभ ने कहा, "प्रिये ! घबड़ाओ मत, समुद्र की इतनी शक्ति नहीं कि मुझसे बैर बिसाहे ।" यह सुन टिट्टिभी बोली— "प्रभो ! यह आप कैसी बात कह रहे हैं, भला समुद्र के साम्हने आप हैं किस गिन्ती में, ! सुनिये हित की बात मान लेनी चाहिये उसके विपरीत करने ही से विनाश होता है । कम्बुग्रीव की कथा सुनिये तब आपको मालूम होगा कि हितोपदेश न मानने का क्या फल होता है—" !

किसी सरोवर में कम्बुग्रीव नामक एक कछुआ रहता था. उसके सङ्कट और विकट नामक दो हंस मित्र थे । एक समय की बात है कि वृष्टि नहीं हुई, सूखा पड़ा, धीरे २ तड़ाग सूख चला । जब दोनों हंस वहां से किसी दूसरे सरोवर को जाया चाहते थे तब कूर्म्म ने उनसे कहा कि भाइयो ! तुम दोनों जहां जाया चाहते हो वहीं मुझको भी ले चलो । यह सुन दोनों हंसों ने अपने मित्र कच्छप से कहा कि भाई जिस सरोवर पर हम जाया चाहते हैं वह यहां से बहुत दूर है परन्तु हां यदि तुम्हारी इच्छा भी चलने की है तो जैसा हम कहैं वैसाही करना । हम दोनों एक छड़ी दोनों ओर से (अपनी चोंच से) पकड़ लेंगे और बीच में तुम उसे अपने दांतों से पकड़ लो, किन्तु भाई याद रक्खो कि कुछ भी बोलना मत, बोले कि मारे गये । कछुवे ने कहा अच्छा ऐसाही करूँगा । तब कछुवे ने दांतों से छड़ी पकड़ ली और दोनों हंस दोनों छोर पकड़ उड़ चले उड़ते उड़ते वे दोनों हंस उस तड़ाग के निकट पहुँचे कि नीचे से नगर के लोगों ने उन्हें देखा, देखकर लोग परस्पर एक दूसरे को दिखाने और यह कहने लगे कि अहो ! यह बड़े आश्चर्य्य की बात है कि हंस न जानें क्या उठाये लिये चले जा रहे हैं । यह कलरव उस कच्छप को सुन पड़ा, कछुवा तो स्वभावतः चञ्चल था वह हंसों से यह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूछाही चाहता था कि नीचे क्या कलरव हो रहा है कि मुंह खोलतेही नीचे गिर पड़ा और लोगोंने उसे मार डाला।

इतनी कथा सुनाय टिट्टिभी कहने लगी कि स्वामिन्! समझा न आपने कि जो व्यक्ति बुद्धि से काम नहीं लेता वह इसी प्रकार नष्ट हो जाता है जैसे कि लकड़ी छोड़कर कूर्म्म नष्ट हो गया। अपनी भार्य्या टिट्टिभी की ऐसी बात सुनकर टिट्टिभ ने उत्तर दिया कि प्रिये! तुम्हारा कहना तो ठीक है पर तुम भी तो कथा सुन लो जो मैं सुनाता हूं।

पूर्वकाल में किसी नदी के समीप एक झील में तीन मत्स्य रहते थे, एक का नाम अनागतविधाता दूसरे का प्रत्युत्पन्नमतिः और तीसरे का नाम यद्भविष्य, [१] तीनों की परम मित्रता थी। एक दिन की बात है कि उसी मार्ग से जाते हुए कतिपय मछुए आपस में यह बात करते जा रहे थे कि इस झील में बहुत मछलियां हैं, यह बात उन तीनों मत्स्यों के कान में पड़ी। इससे बुद्धिमान् अनागतविधाता तो यह आशङ्का कर कि वे मछुवे अवश्य आकर मछलियों का संहार करेंगे, वहां से अन्यत्र चला गया किन्तु प्रत्युत्पन्नमति निःशङ्क वहीं पड़ा रहा, वह यह सोचता था कि जब भय आ पहुँचेगा तो मैं उपाय निकाल लूंगा; यद्भविष्य भी यही विचार के कि जो होना होगा सो होवेहीगा, वहीं पड़ा रहा। इसके उपरान्त मछुवों ने आकर उस झील में जाल डाला, प्रत्युत्पन्नमति जाल में फँस गया, पर मृतक के समान निश्चल पड़ा रहा; धीवरों ने उसे स्वयं मरा समझ नहीं मारा सो वह अवसर पाय नदी की धारा में पड़कर झटपट कहीं चला गया। बचा यद्भविष्य सो जाल में इधर उधर छटकता रहा अन्त में धीवरों से पकड़ा जाके मारडाला गया।

इतनी कथा सुनाय टिट्टिभ कहने लगा कि प्रिये! यह मत समझना कि, समुद्र के डर से मैं कहीं भाग जाऊँगा मैं इसका प्रतिविधान करूँगा। अपनी भार्य्या से इतना कह टिट्टिभ अपने खोंते में पड़ा रहा। सागर ने भी उसका अह-

[१] अनागतविधाता = जो बात नहीं उपस्थित हुई है उसकी पूर्व चिन्ता कर पहिले ही से कार्य्य का विधान करनेवाला। प्रत्युत्पन्नमतिः = जैसा समय आ जाय उसके अनुसार झटपट बुद्धि के अवलम्ब से अपना कार्य्य साध लेनेवाला। यद्भविष्य = जो होगा सो होगा ऐसा कह भाग्य के भरोसे बैठ रहनेवाला।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ङ्कारपूर्ण वचन सुना और अपने मन में कहा कि देखूंगा न कि टिट्टिभ मेरा क्या कर लेगा, टिट्टिभी अंडे दे तो मैं दिखा दूं कि मैं क्या कर सकता हूं। जब समय पूर्ण होने पर टिट्टिभी ने अंडे दिये, तब जलधि उसके अण्डों को लहरों से बहा ले गया उसने सोचा कि अब जरा तमाशा देखना चाहिये कि टिट्टिभ क्या करता है। अब टिट्टिभी रोती और विलपती हुई अपने पति टिट्टिभ से कहने लगी,— "स्वामिन् ! देखिये मैंने जो कहा वही भया न, कैसा कष्ट हमपर आ पड़ा है।" तब धीर टिट्टिभ ने अपनी भार्य्या से कहा "प्रिये ! डरो मत. धीरज धरो, देखो न इस पापिष्ठ समुद्र का मैं क्या करता हूं"। इतना कह उसने सब पक्षियों को बुला कर अपना पराभव कह सुनाया, सभों की राय ठहरी कि चलकर प्रभु गरुड़ से यह वृत्तान्त कहना चाहिये सो सब पक्षियों के साथ जाकर टिट्टिभ ने पक्षिराज गरुड़ से अपना दुखड़ा रो सुनाया और सब खगों ने भी गरुड़ जी से कहा कि आप ऐसे नाथ रहते हम सब इस समय अण्डों के हरे जाने से अनाथवत् हो रहे हैं। सुनतेही विष्णुवाहन को बड़ा क्रोध हुआ, सो उन्होंने भगवान् हरि से सारा वृत्तान्त कह सुनाया; भगवान् विष्णु ने चट आग्नेयास्त्र से समुद्र को सुखाकर टिट्टिभ के अंडे दिलवा दिये।

इतनी कथा सुनाय दमनक सञ्जीवक से कहने लगा कि भाई इसीसे कहता हूं कि विपत्ति में धीरज रखना ही बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है परन्तु अब तो पिङ्गलक के साथ तुम्हारा युद्ध आही पड़ा है। सुनो भाई अब मैं तुम्हें एक बात बताता हूं सो करो, तुम पहिलेही से सजग रहना और ज्योंही सिंह पोंछ उठा चारों पांवों से खड़ा होकर तुम पर प्रहार करने चले त्योंही अपना शिर झुका दोनों सींग उसके उदर में भोंक धरती पर पटक देना कि उसकी आंतसांत सब निकल पड़े और वह मर जाय। संजीवक से इतना कह दमनक ने करकट के पास जाकर उससे कहा "मित्र ! काम तो साध लिया, बस अब दोनों लड़ने पर उतारू हो गये"।

तब संजीवक बैल मृगराज के समीप यह जानने के लिये धीरे २ गया कि देखूं पिङ्गलक का कैसा भाव है, आकार और चेष्टा से कुछ पता तो अवश्य लग जायगा। जातेही क्या देखता है कि सिंह लाङ्गूल उठाये तमाया लड़ने को तैयार है और सिंह ने भी देखा कि वृषभ शङ्का से अपना मस्तक उठाये खड़ा है। बस

अब क्या था दोनों में युद्ध होने लगा, सिंह अपने नखों से प्रहार करता और बैल सींगों से । उन दोनों का भयङ्कर युद्ध देखकर साधुस्वभाव करकट दमनक से कहने लगा कि भाई यह तुमने क्या किया कि अपना मतलब साधने के लिये प्रभु के ऊपर यह विपत्ति ला डाली । सुनो मित्र ! जो सम्पत्ति प्रजाओं को सताकर बटोरी जाती है, जो मैत्री छल से की जाती है और जो कामिनी पदष भाव से हर ली जाती है वह सम्पत्ति, वह मैत्री और वह कामिनी चिरस्थायिनी कदापि नहीं होती, अब बहुत हो चुका, सुनो बहुत रगड़ा करना अच्छा नहीं है; जो हित की बात न माने उससे बहुत कहनेवाले की वही दशा होती है जैसी बन्दर से सूचीमुख की हुई थी।—

पूर्वकाल में किसी जङ्गल में झुण्ड के झुण्ड बन्दर घूम रहे थे, शीतकाल में एक जुगनू को देखकर सभों ने समझा कि आग है, सो वे उसपर पत्ते रख तापने लगे, एक तो मुंह से उस खद्योत को फूंकता भी था। यह देख सूचीमुख नामक एक पक्षी ने उससे कहा कि भाई यह अग्नि नहीं है यह तो खद्योत है व्यर्थ क्लेश मत करो। उसकी ऐसी बात सुनकर भी वह बन्दर न रुका सो वह सूचीमुख वृक्ष से उतरकर उस बानर को मना करने लगा, इस हठ से उस कपि को बड़ा क्रोध आया, उसने एक पत्थर फेंककर सूचीमुख को चूर २ कर डाला।

इतना कह करकट दमनक से पुन: कहने लगा कि भाई दमनक ! समझा न, इसीसे कहता हूं कि जो हित बात न माने उसे हित उपदेश फिर न देना। भाई मैं क्यों कहूं, तुमने यह भेद कराकर एक बड़ा दोष किया, क्योंकि जो कार्य्य दुष्टबुद्धि से किया जाता है वह अच्छा नहीं होता। सुनो एक कथा और सुनाता हूं।

किसी नगर में किसी बनिये के दो बेटे थे धर्मबुद्धि और दुष्टबुद्धि, वे दोनों भाई कमाने चले, चलते २ किसी देश में निकल गये, वहां कुछ दिन रहकर दोनों ने किसी २ प्रकार दो सहस्र दीनार कमाये । कमा धमा कर दोनों उन अशर्फियों को लेकर अपने नगर को लौटे, समीप पहुँचकर उनमेंसे सौ मुहरें निकाल शेष मुहरें एक वृक्ष के नीचे पृथ्वी में गाड़कर आधा २ बांट पिता के घरमें रहने लगे। दुष्टबुद्धि ने थोड़े ही दिनों में अपनी पचास अशर्फियां उड़ा दीं सो अब एक दिन वह चुपके से उस वृक्ष के नीचे गया और सब मुहरें खोद ले आया। जब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक महीना बीत गया तो उसने धर्मबुद्धि से कहा कि चलो भाई उन अशर्फियों को खोदकर बांट लेवें क्योंकि मेरे पास अब खर्च करने को कुछ नहीं है । यह सुन धर्मबुद्धि भी सम्मत हुआ सो दोनों वहीं जाकर खोदने लगे जहां अशर्फियां गाड़ आये थे । खोदने पर जब अशर्फियां न मिलीं तब कपटी दुष्टबुद्धि धर्मबुद्धि से कहने लगा कि भाई आपही उन मुहरों को खोद ले गये हैं सो उनका आधा मुझे बांट दीजिये; उसने उत्तर दिया कि मैं क्या जानूं, मैं नहीं ले गया तू ले गया होगा । इसी प्रकार कहते सुनते दोनों में झगड़ा होने लगा; इतने में दुष्टबुद्धि ने एक पत्थर से धर्मबुद्धि को मारा और ऊपर से उसे न्यायालय में भी घसीट ले गया । वहां दोनों ने अपना २ पक्ष कह सुनाया पर यह अभियोग ऐसा पेचीला था कि राजपुरुष लोग कुछ निर्णय न कर सके अतः उन्होंने उन दोनों को हाजत में दिनभर बन्द कर रक्खा । तब दुष्टबुद्धि ने कहा कि हे धर्मावतारो ! मेरी बात सुन ली जाय, एक काम किया जाय, चलकर उस वृक्ष ही से पूछ लीजिये जिसके नीचे हम दोनों दीनार गाड़ आये थे, देखिये वह कहता है कि नहीं कि उन दीनारों को इस धर्मबुद्धि ने ले लिया है । यह सुनते ही राजाधिकारियों को बड़ा आश्चर्य हुआ उन्होंने कहा "अच्छा कल सबेरे हम चलकर उस वृक्ष से पूछेंगे," इतना कह जमानत ले उन्होंने दोनों को छोड़ दिया और वे अपने २ घर चले गये ।

दुष्टबुद्धि तो सचमुच दुष्टबुद्धि ही था, उसने अपने पिता को कुछ धन देकर एकान्त में यह समझा दिया कि बात ऐसी ऐसी है सो आप वृक्ष के खोड़रे में बैठकर साक्षी हो जावें । पिता के हां करने पर वह रातही रात उसे उस पेड़ के खोढ़रे में पहुँचा आया और घर में चुपचाप सो रहा । प्रातःकाल होने पर दोनों भाइयों ने राजा के अधिकारियों के साथ जाकर उस वृक्ष से पूछा कि कहो तो सही अशर्फियां कौन खोद ले गया ? तब खोढ़रे मेंसे उनका पिता स्पष्ट बोला "दीनारों को धर्मबुद्धि ले गया है ।" इस असम्भव बात को सुनकर राजपुरुषों को बड़ा आश्चर्य हुआ, उन्होंने कहा कि दुष्टबुद्धि ने निश्चय किसी को इस पेड़ में बैठा दिया है । ऐसा कह उन्होंने उस के खोढ़रे में धूआं कर दिया जिससे दुष्टबुद्धि का पिता व्याकुल हो निकल पड़ा और ठांवही पृथ्वी पर गिर के मर गया । यह देख राजा के न्यायकर्त्ताओं को विदित हो गया कि यथार्थता क्या है सो उन्होंने दुष्ट

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बुद्धि से धर्म्मबुद्धि को मुहरें दिलवा दीं और दुष्टबुद्धि के दोनों हाथ और जीभ कटवाकर देश से निकलवा दिया। उसका जैसा नाम था वैसाही फल भी उसको मिला और धर्म्मबुद्धि का बड़ा मान हुआ।

इतनी कथा सुनाय करकट दमनक से कहने लगा कि मित्र! इसीसे कहता हूं कि जो काम अन्याय की बुद्धि से किया जाता है उससे अशुभ ही होता है भला कदापि नहीं होता. देखो कहाही है "नहिं विष-बेलि अमिय फल फरहीं।" इसीलिये मेरा कहना है कि जो कुछ करे सो न्याययुक्त बुद्धि से करे, जैसे कि बकुले ने सांप का (से) किया; सुनो यह कथा ऐसी है।

पूर्वकाल की बात है कि किसी बक के बच्चों को एक सर्प खा जाया करता था, ज्यों बच्चे जन्में कि अवसर पाय वह सर्प आकर खा जावे। यह देख बकुले को बड़ा ही सन्ताप हुआ। वह विचारा अनेक उपाय सोचता पर कुछ बन न पड़ता, तब एक ऋष ने उसे उपदेश दिया कि भाई तुम एक उपाय करो, वह यह कि नेवले के स्थान से लेके, सांप के बिल तक मछलियों का मांस बिखेर दो। उसने वैसाही किया। अब नेवला निकला और मांस के टुकड़े खाता २ वहीं पहुँचा और बिल के भीतर जाकर उसने बालबच्चे सहित सर्प का संहार कर डाला।

इतना कह करकट फिर बोला कि मित्र! इस प्रकार उपाय ही से काम चलता है, सुनो इसी विषय में तुम्हें एक और कथा सुनाता हूं—

प्राचीनकाल में कोई वणिक्पुत्र था, पिता बहुत कुछ सम्पत्ति छोड़ गया पर उसने थोड़ेही दिनों में सारी सम्पत्ति उड़ा दी, केवल (लोहे की) एक तुला बच गयी। तब उसे बड़ी ग्लानि हुई सो परदेश जाकर धन कमाने की चिन्ता से हज़ार पल लोहे की वह तुला एक बनिये को सौंप वह परदेश चला गया। कुछ दिनों के बाद कमा के अपने घर लौटा तब उस बनिये के पास जाकर अपना तराजू मांगा। उस वणिक् ने उत्तर दिया कि भाई कहां से दूं उस तुला को तो मूसे खा गये। यह सुन मनमें हँसकर इसने कहा "क्या किया जाय. वह लोहाही ऐसा सुस्वादु था इसीसे मूसे खा गये; अस्तु, जो हुआ सो हुआ अब मुझे आज कुछ भोजन तो कराओ।" उसने उत्तर दिया कि हां, हां, इसमें क्या है यह तो तुम्हारा घर है बैठो आनन्द से भोजन करना। तब वह उस बनिये के छोटे लड़के के हाथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में आंवले का पात्र रख उसे साथ ले स्नान करने को गया स्नान कर उस बालक को एक मित्र के घर में रखकर वह धीमान् अकेलाही बनिये के घर आया। जब वणिक् ने पूछा कि बालक कहां है तो उत्तर दिया कि भाई क्या कहूं कुछ कहते नहीं बनता, एक बाज झपटा और उस बच्चे को उठा ले गया। तब तो वह बनिया बड़ा क्रुद्ध हुआ और बोला "बचा चालाकी करते हो, बालक को कहीं छिपा आये और बात बनाते हो चलो तुम्हें कचहरी ले चलता हूं", इतना कह वह उस वणिक्पुत्र को न्यायालय में ले गया, वहां भी उसने वही बात कही जो पहले कही थी। यह सुन राजसभा के लोग अचम्भित हो कहने लगे कि यह कब हो सकता है कि बालक को बाझ उठा ले जावे? तब उसने यह दोहा पढ़ सुनाया—

जहां लौहनिर्मित तुला, मूस खाहिं महिपाल।
तहँ गयन्द कहँ ले उड़ै, श्येन कहा पुनि बाल ॥१॥

यह सुनकर राजकर्म्मचारियों को और भी आश्चर्य्य हुआ, सो उनके पूछने पर उसने सब वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया। तब तो न्यायकर्त्ताओं ने उसको तुला दिलवा दी और उस वणिक्पुत्र ने बालक को लाकर उसके हवाले कर दिया।

इतनी कथा सुनाय करकट दमनक से कहने लगा कि भाई इस प्रकार बुद्धिमान् लोग उपाय से अभीष्ट सिद्ध कर लेते हैं; सुनो, एक कहावत है "गँव से गढ़ तोड़ना", सो मित्र ऐसाही करना उचित था सो न कर तुमने सहसा प्रभु को विपत्ति में ढकेल दिया। दमनक की इतनी बात सुन करकट मुस्कुराकर बोला, "मित्र! यह तुम क्या कह रहे हो, क्या बैल के साथ लड़ने में भी तुमको सिंह की जीत में सन्देह है?"

इस प्रकार इधर दोनों सियार परस्पर आलाप कर रहे थे कि उधर युद्ध में पिङ्गलक ने सञ्जीवक को मार डाला। तदुपरान्त सञ्जीवक के मारे जाने पर मंत्री के पद को पुनः प्राप्त कर दमनक अपने मित्र करकट के साथ उस पिङ्गलक सिंह के समीप आनन्द से रहने लगा।

नीतिमान गोमुख कही, बुद्धिबिभवयुत सोइ।
कथा श्रवण करि मुद लह्यउ, नरवाहनदत्त ओइ ॥ २ ॥

पांचवां तरङ्ग ।

इस प्रकार नाना कथा सुनाकर भी जब मन्त्रिप्रवर गोमुख ने देखा कि अबलौं नरवाहनदत्त का मन शक्तियशा ही में लगा है तब वह चतुर मंत्री उनके मन-बहलाव के हेतु पुनः कथा सुनाने लगा। गोमुख बोला "देव ! प्राज्ञों के विषय में आप कथा सुन चुके हैं अब मैं मूर्खों की कथा आपको सुनाता हूं।"

किसी बड़े धनवान् बनिये का बेटा मूढ़बुद्धि नामक था, एक समय वह बनिज करने के हेतु कटाह द्वीप को गया, उसके सौदों में बहुत सा अगुरु भी था। और सब सौदे तो वहां बिक गये पर अगुरु किसी ने भी न खरीदा क्योंकि वहां के निवासी यह नहीं जानते थे कि यह है क्या वस्तु। उसने देखा कि लोग लकड़िहारों से कोयले खरीद रहे हैं सो उस मूर्ख ने अपने कालागुरु को जलाकर कोयला कर डाला। उन अगुरुओं को कोयला कर कोयले के मूल्य से बेंच अपने घर लौट गया और वहां लोगों से अपनी बड़ाई करने लगा । यह सुन लोग उसका उपहास करने लगे ।

इतनी कथा सुनाय गोमुख फिर बोला "महाराज ! यह तो अगुरुदाही की कथा आपको सुनाई गयी अब तिलकर्ष की कथा सुनिये।"

कोई एक ग्रामीण कृषक था, उनने कभी भूने तिल खाये उन्हें खाकर वह सोचने लगा कि अब ऐसेही तिल बोऊँ तो बहुत सा तिल हो जायगा सो उसने भुने तिलों को बोया। वे भुने तिल भला कब उगें, वे तो खेत ही में नष्ट हो गये और उसका मनोरथ निष्फल हो गया। इसपर लोग उसकी हँसी करने लगे।

इतना कह गोमुख बोला कि देव ! यह आपने तिल के खेतिहर की कथा सुनी अब आपको जल में अग्नि फेंकनेवाले की कथा सुनाता हूं।

पूर्वकाल में एक बड़ा मूर्ख आदमी था, वह एक रात पड़ा २ यह सोच रहा था कि कल देवता की पूजा करूँगा मेरे पास स्नान और धूपादि के लिये जल और अग्नि हैंही सो उन दोनों को एकत्रही रख दूं जिससे खोज के एकत्र करने की दिक्कत न उठानी पड़े, जब चाहूंगा तुरत पा जाऊँगा । इतना सोचकर वह जल के घड़े में अग्नि डालकर सो रहा । सबेरे उठकर देखता है तो आग बुझ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गयी है और पानी भी नष्ट हो गया. कोयले से मलिन जल देखतेही उसका मुख भी वैसाही हो गया और लोग यह देखकर हँसने लगे।

अग्निक्षेपक की कथा सुनाय गोमुख नरवाहनदत्त से कहने लगा कि भद्र! अब नासिकारोपण की कथा सुनिये।

किसी स्थान में एक मूर्खचपाट रहता था, उसकी स्त्री की नाक चिपटी थी तथा गुरु की नाक उठी थी। उसने सोचा कि गुरुजी की नाक काटकर पत्नी की नाक में जोड़ दूं तो इसकी नाक अच्छी सुहावनी हो जाय। यह सोच उस मूढ़-मति ने एक दिन सोते हुए गुरु की नाक उड़ाही तो डाली और लाकर अपनी भार्य्या की चिपटी नाक काट के उसमें गुरुजी की नाक जोड़ने लगा पर वह वहां न जमी। इस प्रकार उसने स्त्री और गुरु दोनों को नाकविहीन कर दिया।

तब गोमुख फिर बोला कि वयस्य! यह कथा तो हो चुकी अब बनवासी पशुपाल की कथा सुनिये।

किसी वन में एक बड़ा धनवान् पशुपाल रहता था, वह बड़ाही गबद्द था; बहुतेरे धूर्त्त गुट्ट कर आके उसके मित्र हो गये। उन्होंने उससे कहा कि नगर में एक बड़ा धनवान् व्यक्ति रहता है, उसके एक कन्या है, सो हमलोगों ने उससे वह कन्या तुम्हारे लिये मांगी; भाई अहोभाग्य! कि पिता ने उसका देना स्वी-कार कर लिया। यह सुन वह बड़ाही प्रमुदित हुआ और अहमक ने बिना विचारे ही उन धूर्त्तों को बहुत सा धन दे दिया। कुछ दिनों के उपरान्त वे वञ्चक उसके पास फिर पहुँचे और बोले "भाई तुम्हारा विवाह हो गया।" अबकी वह और भी सन्तुष्ट हुआ और पहिले से अधिक धन उसने उनको दिया। पुनः कुछ दिन बीते उन धूर्त्तों ने उससे जाकर कहा कि भाई बधाई देते हैं, तुम्हारे पुत्र हुआ है। अब तो उस मूर्ख के आनन्द की सीमा न रही, मारे उत्साह के उसने उनको अपना सर्वस्व दे डाला और उनसे कहा कि मैं अपने पुत्र के देखने के लिये अत्यन्त उत्कण्ठित हूं।" पर देखे किसको; जब स्त्री पुत्र हों तब तो यहां तो केवल प्रवञ्चना थी। सो वह मूढ़मति दूसरे ही दिन माथे हाथ दे रोने लगा। उसके रोने पर सब लोग हँसने और यह कहने लगे कि भले धूर्त्तों के पाले पड़ा, सभों ने इसे अच्छा चेला मूड़ा, आखिर तो पशुओं के सङ्ग रहवैय्या, इसकी बुद्धि क्यों न वैसी हो।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतनी कथा सुनाय गोमुख फिर बोला "देव! पशुपाल की कथा तो सुनी अब अलङ्कारलम्बक की कथा भी सुनिये।

एक गँवार था, एक वार वह कहीं धरती खोद रहा था, खोदते २ उसको बहुत से आभूषण मिल गये, उन गहनों को राजा के यहां स चुराकर चोर वहां गाड़ गये थे, भाग्यवश वे इसके हाथ लगे। इस मूढ़ ने कभी उत्तम २ आभूषण देखे तो थेही नहीं क्या जाने कि कहां क्या पहिनाया जाता है; उन्हीं भूषणों से अपनी भार्य्या को भूषित किया। करधनी माथे पर बांध दी, और हार को कमर में; पायजेबों को हाथों में पहिना दिया और कानों में कङ्कण डाल दिये। इसकी मूर्खता देख लोग हँसने लगे और परस्पर फुसफुसाते थे; धीरे २ यह बात राजा के कानों में पहुँची सो उन्होंने उससे समस्त आभरण छीन लिये और उसे पशुवत् मूर्ख समझ छोड़ दिया।

इतना कह गोमुख ने नरवाहनदत्त से कहा कि देव! यह तो अलङ्कारवाले की कथा आपसे कही गयी अब तूलिक की कथा कहता हूं, सुनिये।

कोई मूर्ख धुनियां बाजार में रूई बेचने गया पर कोई भी उससे रूई न लेता वे कहते थे कि रूई शुद्ध नहीं है (ठीक नहीं धुनी है), उसे बड़ी चिन्ता हुई, वह विचारने लगा कि अब क्या करूँ, इतने में उसकी दृष्टि एक ओर पड़ी तो क्या देखता है कि एक सोनार ने सोने को आग में डालकर शुद्ध किया है और एक गांहक ने उसे मोल लिया है, बस उसको यह भावना हुई कि इस रूई को भी आग में डालकर शुद्ध कर लूं तो यह भी बिक जाय; यह सोच उस मूर्ख ने अग्नि दहका के उसमें रूई छोड़ दी, वह चट भस्म हो गयी, यह देख लोग उसका उपहास करने लगे।

तब गोमुख फिर बोला कि देव! यह तो आपने धुनिये की कहानी सुनी, अब खजूर काटनेवालों की कथा सुनिये।

किसी राजा के सेवकों ने कुछ ग्रामीणों को बुलाकर उन्हें यह आज्ञा दी कि जाओ खजूर बटोर लाओ, उन मूर्खों ने जाकर देखा तो एक खजूर पेड़ से टपका मिल गया, उसके लेने में कुछ प्रयास तो पड़ा नहीं सो वे यह सोचने लगे कि यदि सब पेड़ काटकर गिरा दिये जावें तो खजूर बटोरने में तनिक भी श्रम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

न पड़े, यह सोच उन गँवारों ने गांव के सब खजूर के पेड़ काट गिराये और सब खजूरों को तोड़कर पीछे उन पेड़ों को वैसेही खड़ा कर दिया, भला वे अब कैसे लग सकते हैं ? तब वे सब खजूर बटोर कर राजा के यहां ले गये, पर आदर और उपहार की बात कौन चलावे, जब राजा को यह ज्ञात हुआ कि सब पेड़ काट गिराये गये तब उन्होंने उन्हें कठिन दण्ड दिया ।

इतना सुनाय गोमुख ने कहा "देव ! यह तो आपने खजूर तोड़नेवालों की हँसी सुनी, अब उसकी कथा सुनाता हूं जो धरती का गड़ा धन बतला देता था ।

किसी राजा के राज्य में एक निधानदर्शी * रहता था, जब राजा को उसकी बात विदित हुई तो उन्होंने उसको अपने यहां पकड़वाय मँगाया और मन्त्री से पूछा कि क्या उपाय किया जाय कि यह यहां से कहीं चला न जा सके । मन्त्री भी बुद्धि का शत्रु था बोला "महाराज ! इसकी क्या चिन्ता है, इसकी दोनों आंखें निकलवा ली जावें फिर यह कैसे जा सकेगा ।" इस प्रकार उस कुमन्त्री की मन्त्रणा से राजा ने उस निधानदर्शी के नेत्र कढ़वा लिये । अब तो उसकी शक्ति रही सो तो चलीही गई वह अब क्योंकर बतलावे कि अमुक स्थान में धन है, अब उसका जाना और रहना एक सां हुआ । उसे अन्धा देख सब लोग उस मूर्ख मन्त्री का उपहास करने लगे ।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि महाराज ! यह तो आपने निधानदर्शी की कथा सुनी अब लवणाशन की कथा सुनिये ।

किसी गांव में एक बड़ा भारी जड़ मनुष्य रहता था, एक वार उसका कोई नगरवासी मित्र नेवता देकर उसे अपने घर ले गया, वहां उसने उसे उत्तमोत्तम नमकीन व्यञ्जन भोजन करवाये । ऐसे उत्तम स्वादिष्ट पदार्थ खाकर उस गबद्द ने अपने मित्र से पूछा "कहो मित्र ! इस अन्न में ऐसा स्वाद कहां से आया ?" उसके मित्र ने उत्तर दिया कि भाई निमक एक ऐसा पदार्थ है कि उससे अन्न का स्वादही कुछ और हो जाता है । यह सुन उस जड़मति ने विचारा कि तब उसी को न खाना चाहिये । इतना कह उसने एक मुट्ठी बूका निमक लेकर फांक लिया

* पृथ्वी में के गड़े हुये धन का पता बतानेवाले को निधानदर्शी कहते हैं ।

जिससे ओठ मुंह और मोंछ सर्वत्र चूर्ण भर गया और उसका मुंह सफेद २ हो गया; सब लोग हँसने लगे।

इसके उपरान्त गोमुख पुन: कहने लगा कि देव! यह तो आपने निमक-खानेवाले की कथा सुनी अब गोदोहक की कथा सुनिये—

किसी गांव में एक मनुष्य रहता था, वह बड़ा मूर्ख था; उसकी एक गौ थी, जो प्रतिदिन सौ पल दूध देती थी। उसके घर कोई उत्सव होनेवाला था सो उसने कहा कि जिस दिन उत्सव होगा उसी दिन सब दूध दूह लेऊँगा। ऐसा सोच उस मूर्ख ने एक मास पर्य्यन्त उस गौ को नहीं दूहा। जिस दिन उत्सव था उस दिन वह मूढ़ उस गौ को दूहने लगा पर अब दूध कहां! यह देख लोग हँसने लगे।

गोमुख बोला "देव! यह तो आपने गोदोहक की कथा सुनी अब सुनिये दो मूर्खों की कथा कहता हूं"—

किसी स्थान में एक गंजा रहता था, उसकी खोपड़ी ऐसी चिकनी थी जैसे तांबे का गगरा। एक समय की बात है कि वह पेड़ की जड़ पर बैठा हुआ था, उसी समय एक युवा पुरुष अत्यन्त भूखा कैथ बटोरे उसी मार्ग से आ निकला। गंजे को देखकर उसको कौतुक हुआ सो उसने एक कैथ फेंककर उसके माथे पर मारा पर वह गंजा कैथ की चोट सह गया और कुछ न बोला। तब उस दुष्ट ने एक एक करके सब कैथों से उसे मारा, यहां लों कि उस विचारे का शिर बर्रें का छत्ता हो गया और घावों से लहू की धाराएँ बह निकलीं पर वह तब भी चुपही रहा। अन्त में वह मूर्ख युवा सब कैथों को कौतुक से उस गंजे के शिर पर फेंक उसे चकनाचूर कर जैसे का तैसा भूखा ही अपना सा मुंह लिये चला गया, इधर वह खल्वाट भी, जिसके शिर से लहू बह रहा था यह कहता हुआ अपने घर गया कि भला ऐसे स्वादिष्ट कपित्थों की चोट मैं क्यों न सहूं। तब बहते हुए रक्त पर पगड़ी बांधे हुए उस मूर्खाधिराज को देखकर ऐसा कौन होगा जो न हँसेगा? जो कोई उसे देखता सोही अपनी हँसी न रोक सकता।

इस प्रकार मूर्खों की कथा सुनाय गोमुख ने नरवाहनदत्त से कहा कि देव! इसी भांति निर्बुद्धि लोग जगत् में अपनी हँसी कराते हैं और अपना कार्य्य सिद्ध भी नहीं कर पाते किन्तु जो लोग बुद्धिमान् होते हैं वे अपनी प्रतिभा के कारण सबके पूज्य होते हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार गोमुख की कही मन बहलानेवाली कहानियां सुनकर नरवाहनदत्त अति प्रसन्न हुए, और सभाविसर्जन कर सन्ध्यावन्दनादि आह्निक कर्म में प्रवृत्त हुए।

जब रात्रि में सब कामों से सुचित्त हो बैठे तो उन्होंने बड़ी उत्कण्ठा से गोमुख को आज्ञा दी "सखे! फिर कुछ सुनाओ।" नरवाहनदत्त की इतनी बात सुन गोमुख बोला "बहुत अच्छा"। इतना कह वह बुद्धिमानों की कथा उठाकर यह कहानी कहने लगा।

किसी वन में एक बड़ा भारी सेमर का पेड़ था, उसमें लघुपाती नामक एक वायस रहता था। एक समय की बात है कि वह अपने खोते में बैठा था, ज्योंही उसकी दृष्टि पेड़ के नीचे पड़ी देखता क्या है कि एक महाभयङ्कर पुरुष हाथ में जाल और डण्डा लिये आया है, वह देखता ही रहा कि इतने में वह पुरुष धरती पर जाल फैला उसपर चावल छींट चुपचाप छिपके बैठ रहा।

इसी अवसर में चित्रग्रीव नामक कबूतरों का राजा सैकड़ों कपोतों के साथ आकाश में उड़ता हुआ वहीं आ पड़ा। जाल पर चावल तो छींटे ही थे सो वह कपोतराज खाने की इच्छा से अपने परिकर को लिये उतरा और सबों के साथ जाल में फँस गया। यह दशा देख चित्रग्रीव ने अपने अनुचरों से कहा कि भाइयो अब यही उपाय करो कि सबके सब अपनी २ चोंच से जाल को पकड़ो और बड़े वेग से एकदम उड़ चलो। "बहुत अच्छा" कह वे सब कबूतर जाल लेकर बड़े वेग से आकाशमार्ग से उड़ चले। वह लुब्धक भ ै ठकर ऊपर शिर उठा कुछ दूर लों निरखता चला अन्त में निराश हो लौट गया।

अब चित्रग्रीव निर्भय हो गया और अपने अनुचरों से कहने लगा कि कुछ भय नहीं है बस चले चलो मेरे मित्र हिरण्यक नामक मूषक के पास, वह हमारे बन्धनों को काटकर हमें निर्मुक्त कर देगा।

इस प्रकार अपने अनुचरों से कह कपोतराज उड़ता २, जाल लेकर उड़ने-वाले उन कबूतरों के साथ मूसे के बिलद्वार पर पहुँचा और आकाश से उतरकर बोला "भाई हिरण्यक! बाहर आओ, मैं चित्रग्रीव आया हूं"। मूसा सौ द्वार का बिल बनाकर रहता था, वह अपने मित्र का शब्द पहिचान, बिल के द्वार पर आया देखता क्या है कि सचमुच उसका सुहृद आया है, उसे देखते ही वह चट

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाहर निकल आया और उसके पास जाकर कुशल प्रश्न पूछने लगा । जाल में अपने मित्र को अनुचर सहित फँसा देख मूषक को बड़ा आश्चर्य हुआ परन्तु उसने और कालातिपात न कर चटपट उन सभों के बन्धन काट उन्हें मुक्त कर दिया । बन्धन कट जाने पर दोनों मित्रों में परस्पर सुभाषित वार्तालाप हुआ। इसके अनन्तर चित्रग्रीव हिरण्यक से विदा हो अपने अनुचरों के साथ आकाश में उड़कर चला गया।

यह सब वृत्तान्त वह लघुपाती वायस देख रहा था क्यों क वह भी उन कबूतरों के पीछे २ उड़ता आया था। जब मूसा अपने मित्र को विदा कर बिल में पैठ गया तब वह लघुपापी कौआ उसके बिलद्वार पर जाकर पुकार के कहने लगा "सखे! हिरण्यक मैं लघुपाती नामक वायस हूं, मैंने तुम्हारा सब चरित देखा, तुम बड़े मित्रवत्सल हो और विपत्ति से उद्धार करने में समर्थ भी हो सो मैं भी तुमसे मित्रता किया चाहता हूं।" उसकी ऐसी बात सुन, भीतरही से उस कौवे को देखकर मूषक ने कहा "जाओ जाओ भक्ष्यभक्षक की प्रीति कैसी?" यह सुन काक बोला "मित्र! ऐसा न कहो, भला यदि मैं तुम्हें खा जाऊँगा तो मेरी क्षणभर की तृप्ति होगी, पर यदि तुम मित्र हो जाओगे तो सर्वदा मेरे प्राणों की रक्षा होगी।" इस प्रकार कह उस काक ने शपथ कर जब विश्वास उत्पन्न कराया तब मूसा बाहर निकला और कौवे ने उसके साथ मित्रता की । मूसा इधर उधर से मांस के टुकड़े और चावल ले आता और दोनों एक साथ खाके सुख से रहते।

एक समय उस कौवे ने अपने मित्र मूसे से कहा "मित्र! यहां से थोड़ी ही दूर पर बन के बीच एक नदी है, उसमें मन्थरक नामक एक कछुवा मेरा मित्र रहता है; मैं वहां उसी के निहोरे जाता (जाया चाहता) हूं। फिर एक बात और भी है कि वहां मांसादि खाद्य पदार्थ सुलभ हैं और यहां मुझको बड़ी कठिनता से भोजन मिलता है और सदा व्याधों का भय भी बना रहता है।" कौए की ऐसी बात सुन मूषक ने उससे कहा कि मित्र! जो मुझे भी वहीं ले चलो तो हम तीनों वहां एक साथ रहेंगे; यहां से मेरा चित्त भी ऊब गया है, इसका कारण वहीं चलकर तुमसे कहूंगा। इस प्रकार उसकी बात सुन लघुपाती उस मूसे को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अपनी चोंच में उठा उड़ चला और उड़ता २ उस बन की नदी के किनारे पहुँचा जहां कछुआ रहता था । मन्थरक ने अपने मित्र से मिलकर उसका आतिथ्य किया और वह काक अपने सखा मूसे के साथ वहां बैठ गया । कुशलप्रश्नानन्तर कथा प्रसङ्ग से लघुपाती ने अपने मित्र कछुए से अपने आने का कारण तथा हिरण्यक से किस प्रकार मैत्री हुई इत्यादि वृत्तान्त कह सुनाया । वायस से उस मूसे की कथा सुन मन्थरक ने उससे भी मित्रता कर ली और उससे पूछा कि मित्र, तुमने किस हेतु से खिन्न हो अपना देश त्यागा सो मुझे कह सुनाओ ? । मन्थरक का यह प्रश्न सुन हिरण्यक उन दोनों से अपनी कथा कहने लगा ।

नगर के समीप एक बड़े बिल में मैं रहता था, एक समय की बात है कि रात्रि में मैं राजमहल से एक हार चुरा लाया और अपने बिल में उसे रक्खा; उसके देखने से मेरी छाती दुगुनी रहती, पूर्वापेक्षा मेरा बल बहुत बढ़ गया । यह तो आप जानतेही हैं कि जब धन होता है तो खानेवाले बहुत मिल जाते हैं, बस अब क्या था बहुतेरे मूसे मुझे घेरे रहते । वे समझते थे कि यह बलवान् है, अन्न खूब बटोर लावेगा, इसीसे वे सब हरदम मेरे निकट बने रहते थे । इसी अवसर में एक साधु वहां आया और एक छोटा सा मठ * बनाकर रहने लगा, वह भिक्षा मांगकर अपना जीवन निर्वाह करता था। दिनभर भीख मांगकर ले आता और रात्रि में भोजन करता और जो कुछ बच रहता उसे उसी भिक्षापात्र में रख कर एक खूंटी पर लटका देता कि सबेरे खाऊँगा । जब वह सो जाता तब भीतर ही भीतर मैं वहां पहुँचता और एकही उछाल में उसकी सब रोटियां उठा ले आता, यह मेरा प्रति रात का काम था ।

किसी समय उसका एक मित्र दूसरा परिव्राजक आया, खा पीकर सुचित्त हो वह रात्रि में उसके साथ बातचीत करने लगा, इधर मैं भी रोटियां लेने वहां पहुँचा और उचका, त्योंही उस साधु ने एक जीर्ण फराटी से बर्त्तन को ठोंक दिया, इसी प्रकार जब मैं चेष्टा करता वह परिव्राट् भी खटखटा देता क्योंकि उसके कान तो उधरही लगे थे । उसकी ऐसी दशा देख उस आगन्तुक परिव्राट् ने पूछा कि मित्र ! तुम अस्थिरचित्त क्यों हो, मेरी बात पर ध्यान क्यों नहीं देते ? वह

---

* "गुफा या खोह" ऐसा अर्थ भी हो सकता है ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बोला "मित्र ! क्या कहूं, यहां एक मूसा मेरा शत्रु उत्पन्न हुआ है, यह सदैव उछलकर मेरा अन्न यहां से उठा ले जाता है, बस उसी के डेराने के लिये मैं इस बर्त्तन को ठोंककर हिला देता हूं।" उस परिव्राट् की ऐसी बात सुन वह दूसरा परिव्राजक बोला "मित्र ! लोभ जन्तुओं का एक भारी दोष है, सुनो इसी विषय में मैं एक कथा कहता हूं।"

एक समय की बात है कि मैं तीर्थयात्रा करता २ किसी नगर में पहुँचा, वहां एक ब्राह्मण के घर में गया कि डेरा करूँ। जब मैं बैठ गया तो उस ब्राह्मण ने अपनी भार्या से कहा कि आज पर्व है सो ब्राह्मणों के लिये खीर बनाओ। उसकी पत्नी बोली कि तुम तो निर्धन हो भला तुम्हें इतना कहां मयस्सर है कि खीर पके। ब्राह्मण बोला "प्रिये ! यह क्या कहती हो, सञ्चय करके होगा क्या, ? मैं यह नहीं कहता कि सञ्चय करना ही नहीं, पर रात दिन उसी की चिन्ता में लगे रहना उचित नहीं है, बहुत संचय करने का फल अच्छा नहीं होता। सुनो इस विषय में तुमको एक कथा सुनाता हूं।"

किसी बन में आखेटी आखेट करने गया. बहुतेरे पशुओं को मारकर, मांस बटोर वह चला तो सही पर धनुष पर वाण चढ़ायेही रहा कि कदाचित् कोई जन्तु आगे मिले तो उसे भी मार गिराऊँ। वह धनुष के छोर पर मांस लटकाये चला आता था कि अकस्मात् एक सूअर दीख पड़ा, वह सूअर के पीछे दौड़ा और उसपर भाला चलाया पर इधर भाले की मूठ धक्के से आकर उसके पेट में चुभ गयी जिस से उस व्याध कीही अँतड़ी चिथड़ गयी और वह वहीं गिरके यमपुर का पथिक हो गया। यह घटना दूर से एक सियार देख रहा था सो वह वहां पहुँचा, भूखा तो थाही और इतने मांस की ढेरी भी उसे मिली सो उसने विचारा कि यह सब मेरे लिये ही न है, भया, खाऊँगा अब पहिले इस धनुष के छोर पर का मांस खाना चाहिये, यह सोच सूअर तथा व्याध के मांस में से उसने कुछ न खाया किन्तु वह धनुष पर का मांस खाने चला। झटका लगते ही धनुष पर का वाण छूट गया जिससे उस सियार का भी शरीरान्त हो गया। इतनी कथा सुनाय ब्राह्मण फिर बोला "प्रिये! सुना न तुमने, इसीसे मैं कहता हूं कि बहुत संचय न करना चाहिये, अति सञ्चय का फल ऐसाही भयानक होता है। देखो कहा भी है "संच रख संच रख भुखला क माई। तोर मुंह मारके आन कोई खाई"।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ब्राह्मण की इतनी बात सुन उसकी पत्नी उसके कथन पर सहमत हुई, और उठकर उसने सूखने के लिये घाम में तिल पसार दिये। जब वह किसी काम से घर में गई कि एक कुत्ते ने आकर उसे जुठार दिया, इससे कोई भी उसे नहीं मोल लेता था। इतना कह वह आगन्तुक साधु बोला कि मित्र! इस प्रकार लोभ से भोग नहीं प्रत्युत क्लेशही होता है।

हिरण्यक बोला कि मित्रो! इतनी कथा सुनाय वह आगन्तुक परिव्राट् अपने मित्र से कहने लगा कि सखे! अच्छा एक फरसा हो तो मुझे देओ मैं एक ऐसा उपाय किये देता हूं कि फिर इस मूसे का उपद्रव ही न रहे। उसकी ऐसी बात सुन मठनिवासी साधु ने उसे कहीं से एक फरसा ला दिया। मैं छिपकर यह सब व्यापार देख रहा था, तदुपरान्त अपने बिल में पैठ गया। वह आगन्तुक परिव्राजक फरसा लेकर उठा और मेरा बिल खोजकर खोदने लगा। मैं आगे २ भागता जाता था और वह पीछे से खोदता चला आता था अन्त में वह वहां पहुँचा जहां वह द्वार तथा मेरा सर्वस्व था। तब उस आगन्तुक सन्यासी ने गृहस्वामी से कहा "देखा न मित्र! बस इसी हार के बल से वह चूहा, इतना उछलता था, इसीसे उसका बल ऐसा था।" उन दोनों की बात मैं सुन रहा था। तदनन्तर वे दोनों मेरा सर्वस्व ले हार को गले में पहिन प्रसन्नमन चले गये और आले में माला रख सो रहे। जब वे दोनों सो गये तो मैंने पुनः उस हार के चुरा लेने की चेष्टा की किन्तु वह स्थायी सन्यासी जाग पड़ा और उसने ताक के एक डण्डा मेरे शिर पर धरही तो जमाया। उससे मुझे तो चोट गहिरी लगी पर दैववश मरा नहीं और बिल में घुस गया तबसे मुझे ऐसी शक्ति न हुई कि पुनः अन्न चुरा लाता। ठीकही है अर्थ (धन) ही से मनुष्य युवा बने रहते हैं, धन का अभाव होना ही वार्द्धक्य है, धन के न रहनेही से मनुष्य के तेज, बल, रूप और उत्साह नष्ट हो जाते हैं। जब मेरे पार्श्ववर्त्ती मूसों ने देखा कि अब इसके पास कुछ न रहा यह तो बड़ी कठिनता से अपनी भोजनभर को अन्न ला सकता है तब वे सब मुझे छोड़कर चले गये। भला निर्धन का साथी कौन हो, जब लौं धन रहता है तब लौं बहुत लोग घेरे रहते हैं पीछे कोई बात भी नहीं पूछता। जो प्रभु वृत्ति न दे सके उसे भृत्य लोग त्याग देते हैं, जिस वृक्ष में पुष्प न हों भौंरे उसके पास नहीं जाते, जिस तड़ाग का जल सूख गया, यद्यपि हंस वहां बहुत दिन रहे हों तथापि उसे त्याग देते हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतनी कथा सुनाय हिरण्यक चूहा मन्थरक से कहने लगा कि हे कच्छपश्रेष्ठ! ऐसा तो मेरा वृत्तान्त है, इस प्रकार उद्विग्न हो मैं वहां रहता था, फिर लघुपाती से मेरी मित्रता हुई सो इनको पाकर अब मैं तुम्हारे पास आया हूं।

हिरण्यक की इतनी बात सुन मन्थरक कछुवा बोला कि भाई हिरण्यक कुछ चिन्ता नहीं यह तुम्हाराही स्थान है तुम किसी बात की चिन्ता न करो, धैर्य रक्खो। देखो जो गुणी होता है उसके लिये क्या देश क्या विदेश, दोनों एक समान हैं, और जो सन्तुष्ट रहता है उसे किसी प्रकार का असुख नहीं होता। धीर विपत्ति में भी धैर्य नहीं छोड़ता मानों उसपर विपत्ति पड़ी ही नहीं और जो व्यवसायी होता है उसे कुछ असाध्य नहीं होता।

कछुवा इस प्रकार कह ही रहा था कि चित्राङ्गद नामक मृग व्याधों का डराया हुआ बड़ी दूर से भागा २ भूखा प्यासा उसी वन में चला आया। पीछे व्याध को न आया देख कूर्म्म इत्यादिकों ने उसे आश्वासन दे उसके साथ भी मित्रता कर ली। तदुपरान्त काक कूर्म्म मृग और मूसा परस्पर मित्रभाव को प्राप्त हो एक साथ सुख से रहने लगे।

एक समय की बात है कि चित्राङ्गद कहीं चरने गया था उसके आने की बेला टल गयी और वह न आया तब लघुपाती कौवा एक वृक्ष पर चढ़कर वनमें चतुर्दिक् देखने लगा तो क्या देखता है कि नदी किनारे एक जाल में फँसा चित्राङ्गद पड़ा है। यह देख कौवे ने उतरकर मूसे और कछुवे से उसका वृत्तान्त कहा। तब मन्त्रणा कर लघुपाती हिरण्यक को अपनी चोंच में उठाकर चित्राङ्गद के पास ले गया; हिरण्यक ने उसे बहुत कुछ समझाया बुझाया कि मित्र कुछ चिन्ता मत करो मैं अभी तुम्हें छोड़ाये देता हूं। इतना कह उसने अपने पैने दातों से जाल कुतुर डाला और मृग को निर्बन्ध कर दिया। इतने ही अवसर में नदी के भीतर ही भीतर मन्थरक भी वहीं जा पहुँचा और किनारे पर उसके निकट आया। इतने में पाश फैलानेवाला वह व्याध भी कहीं से आ गया, मृग इत्यादि तो उसे देखते ही भाग गये पर कछुवा न भाग सका सो व्याध ने उसे देखकर पकड़ लिया। मृग के निकल जाने से वह लुब्धक खिन्न तो होही गया था सो कछुवे को जाल के भीतर रखकर ले चला। यह देख दूरदर्शी कौए ने चित्राङ्गद से कहा कि मित्र!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तुम कुछ आगे जाकर मृतवत् भूमि पर पड़ रहो और मैं तुम्हारी आंखोंपर बैठ झूठेही ठोर मारूँगा जिसमें इस व्याधे को निश्चय हो जाय कि वह सचमुच मृतक है। उसकी बात मान वह मृग कुछ दूर आगे जाकर ऐसा पड़ रहा मानों मरही गया है और वह कौवा उसके माथे पर बैठकर ठोर से मानों उसकी आंख निकालने लगा। उसे इस दशा में देख वह व्याधा सोचने लगा कि अब क्या यह तो मरही गया है इसे ले लूं, इस विचार से वह नदी किनारे मन्थरक को रख मृग के उठाने के लिये चला । व्याध को चला गया देखकर हिरण्यक चटपट कछुए के पास पहुँच गया और अति शीघ्र उसने उसके बन्धन काट डाले और वह चट उछलकर नदी में तरिया गया; उधर कूर्म्महीन व्याध को निकटवर्त्ती देख मृग भी उठकर भागा और कौवा वृक्ष के ऊपर चढ़ बैठा। व्याध ने जो लौटकर देखा अपने तो यहां कछुवा भी बन्धन कट जाने से भाग गया है, सो वह दोनों अहेर खोकर भाग को कोंसता घर चला गया।

तब कूर्म्मादि चारों मित्र पुनः इकट्ठे हुए और अत्यन्त प्रमुदित हो बातचीत करने लगे। उस समय अति प्रसन्न हो मृग ने उन तीन मित्रों से कहा कि अहो! मैं अति पुण्यवान् हूं कि आप लोग मुझे मित्र मिले हैं जिन्होंने अपने प्राणों की ममता त्याग मुझे मृत्यु से बचाया। इस प्रकार मृग से प्रशंसा पाय वे सब कौआ कछुआ और मूसा अति प्रसन्न हो सुख से रहने लगे।

इतनी कथा सुनाय गोमुख नरवाहनदत्त से कहने लगा कि महाराज! इस प्रकार पशुपक्षी भी बुद्धि के द्वारा अपना अभीष्ट सिद्ध कर लेते हैं और प्राण जाय तो जाय पर अपने मित्र को विपत्ति में त्यागते नहीं । देखा न आपने, आसक्ति जो है सो मित्रोंही में तो अच्छी है स्त्रियों में यदि आसक्ति हुई तो उसका फल अच्छा नहीं होता क्योंकि उससे डाह उत्पन्न होता है। सुनिये इसी विषय में मैं आपको एक कथा सुनाता हूं।

किसी नगर में एक डाही मनुष्य रहता था, उसके एक अति सुन्दरी स्त्री थी जो उसको अत्यन्त प्रिया थी। वह ऐसा सन्देही था कि अपनी पत्नी को क्षण भर भी अकेली न छोड़ता, उसको यह सन्देह सदा बना रहता कि कदाचित् कोई चित्तस्थ पुरुष उसे बहका न ले जावे। एक समय किसी आवश्यक कार्य्य से उसे परदेश

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जाना पड़ा तो वह अपनी भार्य्या को संग ले चला, मार्ग में आगे भिल्लों का जंगल पड़ता था अतः वह अपनी भार्य्या को एक गवहियां वृद्धब्राह्मण के घर में रख के आगे बढ़ा। वह स्त्री वहां रहती थी, उसी मार्ग से भिल्ल आया जाया करते थे, सो एक जवान भिल्ल से उसकी आंखें लड़ गयीं सो वह अपने ईर्षालु पति को त्याग उस भिल्ल के साथ गई, जिस प्रकार से नदी पुल तोड़कर निकल जाय, निकल गई। इतने अवसर में उसका पति भी अपना काम कर परदेश से लौट आया और उस ग्राम्य वृद्धब्राह्मण से अपनी भार्य्या को मांगने लगा, तब वह ब्राह्मण बोला "भाई! मैं नहीं जानता कि वह कहां चली गई पर हां इतना तो जानता हूं कि कुछ भिल्ल यहां आये थे, सम्भवतः वेउसे ले गये होंगे। उनका गांव यहां से निकट ही है, सो तुम वहां जाओ तो अपनी पत्नी को पाओगे, मेरी बात मानो देर न करो।" ब्राह्मण की ऐसी बात सुन वह विचारा वहां से रोता तथा अपनी बुद्धि की निन्दा करता हुआ भिल्लों के गांव में गया उसकी पत्नी वहां दीख पड़ी। वह दुष्टा स्त्री अपने पति को देखते ही डर गई, पर त्रियाचरित्र भी एक अद्भुत बात है, सो वह मुंह बनाकर अपने पति के पास जाकर कांपती हुई बोली,— "स्वामिन्! मेरा कुछ भी दोष नहीं मैं क्या करूँ भिल्ल मुझे वलपूर्वक यहां पकड़ लाया।" उसका पति तो कामान्ध था वह कब इसकी धूर्त्तता पहिचान सके। वह बोला "प्रिये! अच्छा आओ हम दोनों झटपट चले चलें, शीघ्र चलो ऐसा न हो कि कोई देख लेवे"। उसकी ऐसी बात सुन वह कुलटा बोली, "स्वामिन्! वह भिल्ल आखेट करने गया है अब उसके आने की बेला हो गयी है जो कहीं वह आ गया तो पीछा करके अवश्य पकड़कर तुमको और मुझको मार डालेगा। सो ऐसा करो, आओ अब इस गुफा में छिपकर बैठ रहो, जब वह रात्रि में सो जायगा तब उसे मारकर दोनों जने निर्द्वन्द्व भाग चलेंगे।" उस दुष्टा की बात सुनकर वह कामान्ध उसकी बातों में आ गया और गुफा में घुसकर बैठ रहा। ठीक है कामी को विवेक कहां!

जब सायङ्काल में वह भिल्ल लौटा, तो उस कुलटा ने व्यसन के मारे वहां आये हुए अपने पति को उसे दिखा दिया। एक तो भिल्ल स्वभावतः क्रूर होतेही हैं दूसरे उनके बल का क्या पूछना सो उस दुष्ट भिल्ल ने उस विचारे को गुफा से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निकालकर एक पेड़ में कसके बांध दिया कि प्रातःकाल देवी के साम्हने इसे बलि चढ़ाऊँगा। इसके उपरान्त वह दुष्ट भिल्ल खा पीके उसीके साम्हने उसकी स्त्री से आनन्दपूर्वक रमण कर सो रहा और वह विचारा टुकुर २ यह सब चरित्र देख रहा था।

जब दोनों को नींद आ गयी तब इधर वह पेड़ में बँधा हुआ डाही पुरुष अपने मन में बड़ी चिन्ता करने लगा कि हाय अब मेरा क्या होगा! हाय मैं व्यर्थ ही मारा जाऊँगा इत्यादि विविध विलाप कर अन्त में उसे ज्ञान हुआ सो वह जगदम्बा दुर्गतिनाशिनी श्रीदुर्गाजी की स्तुति करने लगा। जगज्जननी के हृदय में करुणा उठी सो उसके समक्ष आ उपस्थित हुईं और बोलीं "पुत्र! भय मत कर तेरे बन्धन अभी कट जाते हैं, इसी के खड्ग से इस दुष्ट का शिर काटकर निःशङ्क हो तू अपने घर चला जा।" भगवती महामाया की कृपा से उसके बन्धन कट गये, सो उसने उस भिल्लही के खड्ग से उसका शिर काट डाला। वह तो कामान्ध था उसे कहां सूझे कि मेरी पत्नी ऐसी दुष्टा है सो उसने उसे जगाया और कहा कि प्रिये! उठो चलो, मैंने इस पापिष्ट को मार डाला; वह कसक के उठी और उस भिल्ल का शिर छिपाकर लेके अपने पति के साथ चल पड़ी। जब प्रातःकाल एक नगर मिला तो वह व्यभिचारिणी वहीं फिसल गई और भिल्ल का शिर दिखा२ फूट २ रोने लगी और पति की ओर दिखा २ यह कहती कि इसी दुष्ट ने मेरे पति को मार डाला है। पुलिस ने झट उसे पकड़ा और उस स्त्री के साथ राजा के समक्ष उपस्थित किया। राजा के पूछने पर वह ईर्षालु आद्योपान्त सब वृत्तान्त कह गया। राजा ने अनुसन्धान लगाया तो उसकी बात पक्की ठहरी तब तो महीपति ने उस कुलटा के दोनों कान और नाक कटवा डाले और उसके पति को छोड़ दिया। वह कुवनितारूपी ग्रह से छुटकारा पा अपने घर चला गया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि देव! ईर्षापूर्वक जिस स्त्री की रखवाली की जाती है उसका फल ऐसाही होता है, फिर ईर्षाही स्त्रियों को अन्य पुरुष का प्रसङ्ग सिखलाती है, अतः बुद्धिमान् को चाहिये कि स्त्री की इस प्रकार से रक्षा करे कि उसकी यथार्थ रक्षा हो और ईर्षा भी प्रगट न हो। फिर जो पुरुष अपना कल्याण चाहे उसे उचित है कि अपना रहस्य (गुप्तभेद) स्त्री को कदापि न बतलावे, सुनिये इसी विषय में आपको एक कथा सुनाता हूं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्व समय में कोई नाग गरुड़जी के भय से भागकर मर्त्यलोक में आया और मनुष्य का रूप धारण कर एक वेश्या के घर में रहने लगा। गणिका उससे रहने का भाड़ा पांच सौ हाथी प्रतिदिन मांगती और वह नाग अपने प्रभाव से उतनेही गज उसे (ला) देता था। उस विलासिनी को यह देख बड़ा कौतुक हुआ सो उसने उस नाग से पूछा कि इतने हाथी आप प्रतिदिन कहां पाते हैं, सच सच कहिये आप कौन हैं? इस प्रकार बार २ पूछ जाने पर उस नाग ने काम से मोहित हो वेश्या को अपना भेद बतला दिया कि मैं एक नाग हूं, गरुड़ के भय से यहां आ टिका हूं, पर चेत रखना किसी से यह भेद कहना मत। पर वेश्या के पेट में यह बात कब पचे उसने कुटिनी से यह सब वृत्तान्त कह दिया।

उधर गरुड़ भी पुरुषरूप में समस्त जगत्भर ढूंढ़ते २ वहीं उसी वेश्या के घरमें आ पहुँचे और कुटनी से बोले कि मैं आज तेरी बेटी के घर रहूंगा, ले यह एक दिन का भाड़ा। कुटनी बोली "यहां एक नाग रहता है वह पांच सौ हाथी प्रति दिन देता है, मैं एक दिन के भाड़े को क्या समझती हूं।' जब गरुड़ को यह विदित हो गया कि वह नाग यहीं रहता है तब वह अतिथि बन उस वारवनिता के घर गये, ऊपर जाकर देखें तो वह नाग बैठा है, बस अपना रूप प्रगट कर उस पर लपके और उस नाग को मारकर खा गये।

इतना कह फिर गोमुख बोला "देव! देखा न आपने, इसीसे मैं कहता हूं कि स्त्रियों से अपना भेद कदापि न कहना चाहिये।" इस प्रकार बुद्धिमानों की कथा सुनाय गोमुख फिर मूर्खों की कथा सुनाने लगा।

कोई एक गंजा था, उसका शिर ऐसा चिकना था कि जैसा तांबे का घड़ा; वह मूर्ख धनवान् तो था पर सिर पर एक बाल भी न रहने से अत्यन्त लजाता था। तब एक धूर्त्त, जो दूसरों का माल खाके मोटा मूसरचण्ड बना रहता, उसके पास आया और कहने लगा "भाई यहां एक वैद्य रहते हैं, उनके पास एक ऐसी औषधि है कि जिसके लगाने से शिर में बाल निकल आते हैं।" उसकी बात सुन वह मूर्ख बोला "भाई यदि उन्हें ले आओ तो मैं तुमको बहुत सा धन दूं और वैद्य जी को भी सन्तुष्ट कर दूंगा।" इस प्रकार उस मूर्ख की बात सुन वह धूर्त्त लुपड़ी चुपड़ी बातें कह उसका धन खींचने लगा, थोड़ेही दिनों में बहुत कुछ उसका धन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गप्प कर गया तब जाकर एक रोज एक परम धूर्त्त चिकित्सक को ले आया। पहिले तो एकही था अब दो हो गये, दोनों मिलकर उस गबद्द का माल उड़ाने लगे। एक दिन की बात है कि वैद्य ने युक्ति से अपनी पगड़ी उतार अपना गंजा शिर उस मूर्ख को दिखा दिया। यह देखकर भी उस मूर्ख को ज्ञान न हुआ और वैद्य से बाल जमने की औषध मांगता ही रहा। तब वैद्य ने उससे कहा "रे मूर्ख तुझे तनिक भी ज्ञान नहीं कि मुझसे बाल जमने की औषधि मांगता है, देख मैं तो स्वयं गञ्जा हूं, मैं कैसे दूसरे के सिर में बाल जमा सकता हूं, यदि इतनाही मुझे आता तो अपनेही सिर में न केश उत्पन्न कर लेता, तुझे इससे भी चेत न हुआ, मैंने तो अपना गंजा सिर तुझे इसी हेतु दिखला दिया कि तू चेत जायगा, तौभी तुझे ज्ञान न हुआ, धिक्कार है" यों कह वह भिषक् चला गया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख ने नरवाहनदत्त से कहा कि देखा न आपने, मूर्ख लोगों के साथ धूर्त्त लोग ऐसेही ऐसे आचरण कर उनके धन से गुलछर्रे उड़ाते हैं। अच्छा यह आपने गबद्द गंजे की कथा सुनी, अब एक भुच्च तेल लानेवाले की कथा कहता हूं।

किसी भद्र मनुष्य के यहां एक बड़ाही भुच्च सेवक था। उसके स्वामी ने उसे बनिये के यहां से तेल लाने को भेजा और उसने जाकर एक बर्त्तन में तेल लिया। वह तेल लेकर चला आ रहा था कि उसके एक ठठोल मित्र ने कहा "भाई बर्तन सम्भालो, देखो नीचे तेल चूता है" सो पेंदी (में) देखने के लिये उस मूर्ख ने पात्र उलट दिया जिससे सब तेल गिर पड़ा। यह देख सब लोग हँसने लगे और उसके स्वामी ने भी उसे घर से निकाल दिया। इससे मूर्ख के पास जितनी बुद्धि हो उतनीही सही, दूसरे के कहने पर जहां उसने ध्यान दिया कि काम बिगड़ा।

इतनी कथा सुनाय गोमुख फिर बोला कि राजन्! यह कथा आपने एक भुच्च तेल लानेवाले की सुनी अब एक मूर्ख हड्डीवाले की कथा सुनिये।

किसी स्थान में एक मूर्ख रहता था, उसकी स्त्री कुलटा थी। एक समय जब उसका पति किसी कार्य्य से परदेश गया तब वह दुष्टा अपनी विश्वस्त दासी को घर के कामकाज बतलाकर आप अकेली वहां से निकली और मनमाना सुख लूटने के लिये अपने यार के घर जा पहुँची, और आनन्द से उसके साथ रहने लगी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इधर उसका पति कुछ दिनों के उपरान्त परदेश से लौटा, दासी तो सिखाई पढ़ाई थीही झूठमूठ मुंह बना आंसू बहा रोने लगी और बोली कि क्या कहूं बड़ा गजब हुआ, आपकी भार्य्या तो मर गई, आप तो यहां थेही नहीं किसी प्रकार से उसका अग्निसंस्कार करवा दिया, इतना कह वह उस मूर्ख को श्मशान पर ले गई और किसी चिता की जली बली हड्डियां दिखाके बोली देखिये येही आपकी स्त्री की हड्डियां हैं। वह मूर्ख तो महाजपाट था उन हड्डियों को बटोरकर रोने लगा फिर तीर्थस्थान में जाके उसे तिलाञ्जलि दी और उसकी हड्डियां वहीं प्रवाह कर घर आकर अपनी पत्नी का श्राद्ध करने लगा। अब श्राद्ध में कोई सद्विप्र चाहिये सो वह दुष्टा दासी उसी की पत्नी के उपपति को बुला लाई और उस मूर्ख ने उसी को श्राद्ध का ब्राह्मण बनाया। उसकी पत्नी भी बड़े सज धज से बन ठन कर उस जार के साथ आती और मासिक श्राद्ध में मिष्टान्न भोजन करती। दासी ने उस मूर्ख को समझा दिया कि प्रभो! आइये और देखिये, यह आपकी पत्नी है, सती धर्म्म का ऐसा प्रभाव है कि वह इस ब्राह्मण के साथ आती और श्राद्ध का अन्न भोजन करती है। वह जपाट दासी की बात सत्य मानता और यही समझता रहा कि सचमुच मेरी भार्य्या मर गयी है और प्रतिमास आकर श्राद्ध का अन्न खा जाया करती है।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला देव! इसी प्रकार सीधे सादे लोग कुलटाओं से ठगी जाते हैं। आपने इस मूर्ख हाड़वाले की कथा सुनी अब चाण्डाल कन्या की कथा सुनिये।

किसी चाण्डाल की कन्या बड़ी सुन्दरी थी. जैसाही उसका रूप मनोहर था वैसीही वह मूर्ख चपाट भी थी। वह कहती थी कि मैं सार्वभौम राजा से ही व्याह करूँगी। एक समय की बात है कि उस देश के राजा नगर में भ्रमण करने के लिये निकले. सो उसने कहा कि बस यही सबसे अच्छे हैं इन्हीं से मैं व्याह करूँगी इतना कह वह राजा के पीछे चली। इतने में उसी मार्ग से एक मुनि आ निकले, राजा यद्यपि हाथी पर आरूढ़ थे तथापि मुनि के चरणों की बन्दना कर अपने भवन को चले गये। यह देख चाण्डालकन्या अपने मनमें विचारने लगी कि यह कोई बड़े भारी महात्मा हैं तब न राजा ने इन्हें प्रणाम किया, ऐसा सोच

राजा को छोड़ अब वह मुनि के पीछे लगी। मुनि आगे चले चलते २ एक सूना शिवालय आगे पड़ा सो मुनि ने पृथ्वी पर घुटने टेककर शिवजी को प्रणाम किया और उठके अपनी राह ली। यह देख वह अन्त्यजा शिवजी को मुनि से भी श्रेष्ठ मान मुनि को त्याग उन्हें पति मान वहीं रह गयी। इतने में एक कुत्ता वहां आया और पिण्डिका के निकट जाय टांग उठाय उसने अपनी जाति का परिचय दिया। यह देख उस चाण्डालकन्या ने उस कुत्ते को शिवजी से भी उत्तम समझा और शिवलिङ्ग को त्याग पति बनाने की इच्छा से उस कुत्ते का पीछा किया। कुत्ता चलता २ एक चाण्डाल के घर पहुँचा और एक युवा चाण्डाल के पांव पर प्रेम से लोटने लगा क्योंकि उससे वह परचा था। यह देख वह अन्त्यजा अपने मनमें सोचने लगी कि यह तो बड़ाही उत्तम है, मेरी जातिका ही है, क्याही अच्छी बात है। इतना विचार अति प्रसन्न हो उसने उसी चाण्डाल को अपना पति बनाया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला, महाराज ! इस प्रकार जड़मति लोग मन की तान में चाहे जितनी दूर चले जावें पर अन्त में अपने पदही पर आ पड़ते हैं। अच्छा एक मूर्ख राजा की कथा संक्षेप में कहता हूं सुनिये।

कोई एक राजा थे, वह बड़ेही कृपण थे, उनका कोष (खजाना) रुपयों से खचाखच भरा था तौभी वह एक कौड़ी भी दान नहीं करते थे। एक समय उनके हितैषी मन्त्रियों ने उनसे कहा "देव ! कुछ दान भी किया कीजिये, देखिये कहा है कि "येन केन विधि दीन्हेउ दान। सङ्कट परे करै कल्यान।" परलोक में जो दुर्गति होती है वह दानही से दूर होती है, देखिये आयुष्य और धन क्षणभङ्गुर हैं इससे जितना बन पड़े दान देकर धर्म्म अर्जन कर लेना चाहिये।" मन्त्रियों की ऐसी बात सुन वह राजा बोले "मैं दान वान कुछ जानता ही नहीं, अच्छा जब मैं मरकर अपने को दुर्गति में देखूंगा तब दान देऊँगा।" महीपति की यह बात सुनकर मन्त्री लोग मन में हँसकर चुप हो रहे।

गोमुख बोला महाराज ! इस प्रकार मूढ़जन जबलों धन से हीन नहीं होते तबलों कुछ देते नहीं। देव ! आपने इस मूर्ख राजा की कथा सुनी अब दो मित्रों की कथा सुनिये।

कान्यकुब्ज देश में चन्द्रापीड़ नामक एक राजा थे, धवलमुख नामक उनका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक सेवक था. वह सदाही बाहर से खा पीके छुट्टी हो घर जाया करता था। एक दिन उसकी भार्य्या ने उससे पूछा कि आप बाहरही बाहर कहां से खा पीके घर आते हैं? भार्य्या की ऐसी बात सुन धवलमुख बोला "प्रिये। इस जगत् में कल्याणवर्म्मा और वीरबाहु मेरे दो मित्र हैं. उन्हीं के यहां से मैं नित्य भोजन कर आया करता हूं, सुन्दरि! वे ऐसे वैसे मित्र नहीं हैं; सुनो. कल्याणवर्म्मा नामक जो मेरे मित्र हैं वह तो मुझे बिना खिलाये पिलाये घर आने नहीं देते और दूसरे वीरबाहु जो हैं वह तो प्राण देकर भी मेरे उपकारक हैं। धवलमुख की इतनी बात सुन उसकी पत्नी ने उससे कहा "आर्य्यपुत्र! यदि ऐसी ही बात है तो कृपा कर उन्हें मुझको भी दिखाइये।" तब वह धवलमुख अपनी पत्नी को साथ ले पहिले कल्याणवर्म्मा के घर गया. कल्याणवर्म्मा ने बड़े आदरभाव से उसका सत्कार किया और उत्तमोत्तम भोजन कराया। दूसरे दिन वह अपनी पत्नी के साथ वीरबाहु के घर गया, उस समय वीरबाहु जूआ खेल रहा था इसलिये उसने केवल आगत स्वागत करके उसे बिदा किया।

तब धवलमुख की भार्य्या ने बड़े कौतुक से उससे कहा क स्वामिन्! कल्याणवर्म्मा ने तो आपका अच्छा सत्कार किया परन्तु वीरबाहु ने तो केवल स्वागत ही किया सो आर्य्यपुत्र! यह क्या बात है कि आप कहते हैं कि वीरबाहु प्राण देकर भी उपकारक हैं। उसकी ऐसी बात सुन धवलमुख ने कहा "प्रिये! यदि विश्वास नहीं करती हो तो जाकर उन दोनों से झूठमूठही यह कह दो कि राजा अकस्मात् हमपर कुपित हो गये हैं, तब तुम्हें आपही विदित हो जायगा कि कौन कैसा है।" पति की ऐसी बात सुन उसने पहिले कल्याणवर्म्मा से जाकर वही बात कह दी। जिसे सुन वह बोला "भद्रे! मैं बनिये का बेटा हूं, भला तुमही कहो मैं राजा का क्या कर सकता हूं।" इस प्रकार उसका उत्तर पाय वह वीरबाहु के निकट गई और उससे बोली कि राजा मेरे स्वामी के ऊपर कुपित हुए हैं। यह सुनतेही वह ढाल तलवार लेकर दौड़ा पर बीचही में धवलमुख ने उसे समझा बुझाके घर लौटा दिया कि मित्र! कुछ डर नहीं है, मन्त्रियों ने महाराज का कोप शान्त करा दिया अब चिन्ता नहीं है मित्र! घर लौट जाओ। तब धवलमुख ने अपनी भार्य्या से कहा "प्रिये! देखा न मेरे दोनों मित्रों में यही अन्तर है।" धवलमुख की ऐसी बात सुन उसकी पत्नी अति प्रसन्न हुई।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि देव ! कोई मित्र तो केवल उपचार ही जानता है पर सच्चा मित्र दूसराही होता है, देखिये स्नेह (१) दोनों में होता है पर तेल तेलही है और घी घीही है । इस प्रकार मूढ़ की कथा सुनाय गोमुख फिर भी मूर्खों ही की कथा सुनाने लगा ।

कोई मूर्ख परदेश को चला, मार्ग में उसे प्यास लगी और आगे एक जंगल पड़ा; प्यास के मारे एक पग चलना कठिन हो गया, ज्यों त्यों करता अरण्य पार हो एक नदी पर पहुंचा और पानी न पी किनारे खड़ा हो जल की ओर टक-टकी लगाय देखने लगा । उसकी यह दशा देख एक मनुष्य ने उससे पूछा "भाई तुम प्यासे तो प्रतीत होते हो, कहो तो सही नदी साम्हने बह रही है मनमाना जल क्यों नहीं पी लेते हो ?" इस प्रश्न पर उस मन्दबुद्धि ने उत्तर दिया कि भाई इतना जल मैं कैसे पी सकता हूं । वह समझ गया कि यह बड़ा मूर्ख है, तब हँस-कर बोला कि जो तुम सब जल न पी जाओगे तो क्या राजा तुम्हें दण्ड देंगे ? तिसपर भी उस मूर्ख जपाट ने जल न पीया ।

सो देव ! यह मूर्खों का स्वभाव है कि यदि कोई काम अपने से पूरा २ न हो सके तो यह न करेंगे कि जितना हो सके उतना ही सही, थोड़ा हो थोड़ाही सही, वे सदा यही चाहते हैं कि समस्त कार्य्य एक सा ही हो जाय ।

इतना कह गोमुख फिर बोला कि देव ! यह आपने उस जलभीत (पानी से डरे हुए) की कथा सुनी अब आपको पुत्रघाती की कथा सुनाता हूं ।

कोई मनुष्य था जो मूर्ख होने के सिवाय बड़ा दरिद्र भी था, उसके कईएक पुत्र थे । दैवात् उसका एक लड़का मर गया सो उस मन्दमति ने अपने एक दूसरे पुत्र को यह कहकर मार डाला कि वह बालक छोटा है, ऐसे दूर मार्ग पर कैसे अकेला चलेगा यह उसका साथी रहे तो अच्छा होगा । उस मूर्खराज की ऐसी करनी देख सब लोग उसकी निन्दा करने लगे, जहां तहां उसका उपहास होने लगा यहांलों कि सब लोगों ने एका कर उस मूढ़ को देश से निकलवा दिया । ठीक है निर्विवेक मनुष्य और पशु दोनों एक समान होते हैं ।

(१) तेल और घृत पक्ष में चिकनाहट, मित्र पक्ष में प्रेम ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गोमुख बोला महाराज ! यह तो आपने पुत्रघाती की कथा सुनी अच्छा अब भ्रातृभीत (दूसरे को भाई बनानेवाले) की कथा सुनिये।

किसी समाज में बैठा हुआ एक मूर्ख वार्तालाप कर रहा था, इसी अवसर में दूरवर्त्ती एक धनीपात्र पर उसकी दृष्टि पड़ी तो क्या कहता है कि देखो वह जो हैं सो मेरे भाई लगते हैं इससे उनके धन का मैं अधिकारी हूं, जो कुछ धन होगा मैं लेऊँगा परन्तु उनको जो कुछ ऋण है सो तो मैं अपने माथे नहीं ले सकता क्योंकि मैं तो उनका कोई नहीं लगता। उस महामूढ़ की ऐसी बात सुन पत्थर भी हँस पड़ा। यह मूर्खों की मूर्खता है, फिर यह बड़े आश्चर्य की बात है कि मूर्ख केवल मूढ़ही नहीं प्रत्युत स्वार्थान्ध भी होता है।

इसके उपरान्त गोमुख पुन: कहने लगा कि देव ! यह भ्रातृभीत की कथा आपने सुनी अब मैं ब्रह्मचारी के पुत्र की कथा आपको सुनाता हूं।

एक समय की बात है कि एक महामूर्ख जन अपने मित्रों की मण्डली में बैठा बातचीत कर रहा था, इधर उधर की बात करते २ वह अपने पिता की प्रशंसा करने लगा, और आगा पीछा बिना सोचे विचारे बोला कि मेरे पिता पूर्ण ब्रह्मचारी हैं उनके समान कोई व्यक्ति इस लोक में नहीं है। उसकी ऐसी बात सुन उसके मित्रों ने हँसकर पूछा कि भाई तुम्हारे पिता तो ब्रह्मचारी हैं तो तुम जन्मे कैसे ? तब उस मूर्ख ने उत्तर दिया कि मैं तो उनका मानस पुत्र हूं, इससे सब मित्र उस मूर्खशिरोमणि का और भी उपहास करने लगे। सो देव ! यह मूर्खों का स्वभाव है कि व्यर्थ बहुत फौंकते और सबके साम्हने अपने को सर्वश्रेष्ठ बतलाते हैं।

गोमुख ने कहा महाराज ! यह ब्रह्मचारी के बेटे की कथा है अब आपको एक ज्योतिषी की कथा सुनाता हूं।

किसी गांव में एक ब्राह्मण रहता था, लोग उसे ज्योतिषीजी कहकर पुकारते पर यथार्थ में ज्ञानशून्य था। अपने देश में जब वह भली भांति कुटुम्ब के पेट पालने भर अन्न न कमा सका तब परदेश जाने पर उतारू हुआ और पुत्र तथा भार्य्या को लेकर विदेश चला गया। वहां उसने धूर्त्तता जमाई और छल से धन कमाने का ढंग रचा। एक दिन की बात है कि वह सबके साम्हने अपने पुत्र को गले लगाय बिलख २ रोने लगा लोगों ने उसके रोने का कारण पूछा तो उस पापी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धूर्त्ताधिराज ने उत्तर दिया कि मैं भूत, वर्त्तमान और भविष्यत् तीनों काल की बात जानता हूं, मेरा यह प्यारा पुत्र आज से सातवें दिन मर जायगा बस यही सोच २ मैं रो रहा हूं। यह सुन लोगों को बड़ा विस्मय हुआ। आगे जब सातवां दिन आया तो उस निर्दय मूर्खशिरोमणि ने बड़े तड़केही अपने सोते हुए पुत्र को किसी युक्ति से मार डाला। रोना पीटना मच गया, लोग इकट्ठे हुए कि क्या व्यापार है, देखें तो ज्योतिषी जी का पुत्र सचमुच मर गया है, यह देख लोगों को अत्यन्त आश्चर्य हुआ सो वे लोग समझने लगे कि यथार्थ में यह एक बड़े भारी ज्योतिषी ही नहीं प्रत्युत एक सिद्ध पुरुष भी हैं कि जो कहते हैं सो हो जाता है। बस अब क्या था अब तो अन्न धन का ठिकाना ही नहीं कि कितना आया, चहुँ ओर उसकी कीर्त्ति फैल गई, भली भांति पूजा होने लगी, अब क्या पूछना। जब बहुत कुछ सम्पत्ति इकट्ठी हुई तब एक दिन उस मूर्खराज ने चुपचाप अपने देश का मार्ग लिया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि महाराज! इस प्रकार अपना नाम बढ़ा के धन के लोभ से मूर्ख लोग पुत्र का भी बध कर डालते हैं। हा! धनाशा ऐसी कठिन है! किन्तु देव! जो बुद्धिमान् होता है वह ऐसे २ धूर्त्तों की धूर्त्तता समझ लेता है और उनसे भूलकर भी संग नहीं करता। बुद्धिमानों को उचित है कि सदा ऐसों से बचे रहें। अच्छा, अब एक क्रोधी मूर्ख की कथा सुनिये।

किसी स्थान में बैठक के भीतर बैठे हुए दो चार जन इधर उधर की बातें कर रहे थे कि इतने में किसी व्यक्ति की प्रशंसा छिड़ गयी; भाग्यवश वह उसी क्षण वहां पहुँच गया और बाहर से ही अपनी प्रशंसा सुनने लगा। इतने में भीतर प्रशंसा करनेवाले की बात छेड़ दूसरे ने कहा कि भाई उसमें ये सब गुण हैं, वह बड़ा गुणवान् है पर उसमें दो भारी दोष भी हैं, एक तो यह कि वह बड़ाही साहसी है; दूसरे, बड़ा क्रोधी भी है। बस अब क्या वह बहिर्वर्त्ती जन जो कि अपना गुणाख्यान सुन रहा था, दोषाख्यान सुन आपे से बाहर हो गया, झटपट घर के भीतर घुस गया, और उसके गले में दुपट्टा लपेट बड़े क्रोध से तन्न हो कहने लगा "क्यों बे बतला तो सही मैंने क्या साहस (अन्धेर) किया है और मैं क्रोधी कैसे हुआ?" यह देख जितने लोग वहां थे हँस पड़े और बोले "अब भी क्या पूछना है? आप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ऐसा क्यों कह रहे हैं, यह तो प्रत्यक्ष बात है, अब इससे बढ़कर अन्धेर और क्रोध और क्या होगा ?" इस प्रकार, देव! मूर्ख लोग अपने प्रगट दोषों को भी नहीं समझ सकते ।

गोमुख ने कहा, अच्छा महाराज ! अब मैं आपको उस राजा की कथा सुनाता हूं जिसने अपनी कन्या अतिशीघ्र सयानी करानी चाही थी ।

कोई राजा थे, उनके एक कन्या हुई जो बड़ीही सुन्दर थी । राजा उसे बहुत ही प्यार करते थे और चाहते थे कि ऐसा कोई उपाय होता कि यह अति शीघ्र सयानी हो जाती, सो उन्होंने वैद्यों को बुलाकर प्रीतिपूर्वक उनसे कहा "महाशयो! आप लोगों से मेरी यह प्रार्थना है कि आप लोग कुछ ऐसी अच्छी २ औषधियां देवें कि मेरी यह कन्या अति शीघ्र सयानी हो जावे और मैं सत्पात्र वर के साथ इसका विवाह कर दूं"। वैद्यों ने सोचा कि अच्छा चण्डूल फँसा है, अब पुजाने का अच्छा अवसर आया, वे बोले "महाराज ! औषधि तो है किन्तु दूरदेश से लानी पड़ेगी इसमें कुछ दिन लगेंगे, सो हमलोग उसके लेने के लिये जाते हैं; अब आप यह विधान करिये कि जब लों हमलोग लौट न आवें तब लों आपकी कन्या एक ऐसे स्थान में रक्खी जाय जहां आपकी दृष्टि उसपर न पड़े । इतना कह राजपुत्री को एक गुप्तस्थान में रखकर वे वैद्य चले गये । जब कई वर्षों के उपरान्त राजकन्या युवती हुई तब वे धूर्त्त वैद्य उसे राजा के समक्ष ले गये और बोले "लीजिये, देखिये महाराज ! हमलोगों ने औषधादि प्रयोग से राजपुत्री को सयानी कर दिया" । राजा अपनी कन्या की वयस्था देख अति प्रसन्न हुए और उन्होंने बहुत सा धन देकर उन वैद्यों को सन्तुष्ट किया । सो देव ! इस प्रकार मूर्ख प्रभु लोग धूर्त्तों से ठगे जाते हैं ।

गोमुख बोला आपको उस मूर्ख की कथा सुनाई जाती है जो आधा पण अर्जन कर अपने को पण्डित मानने लगा ।

किसी नगर में एक मनुष्य रहता था जो अपने को पण्डित मानता था । उसके यहां एक गँवैया सेवक था; वह एक वर्ष लों सेवा करता रहा पर उसको वेतन ठीक २ नहीं मिलता था इससे वह असन्तुष्ट रहता; अन्त में काम छोड़कर (छुट्टी लेकर) अपने घर चला गया । सेवक के चले जाने पर उसने घर में जाकर अपनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भार्य्या से पूछा कि चकरवा चला गया तुमसे कुछ ले तो नहीं गया ? उसने उत्तर दिया "आधा पण तो ले गया है ।" तब वह दश पण राहखर्च लेकर चला और चलते २ नदी किनारे पहुँचा वहां वह सेवक मिला. बस यह उससे आधा पण लेकर लौट आया और लोगों के साम्हने फौंकने लगा कि मैं ही था जो उससे आधा पण ले सका पर जो सुनता वही हँसी करता। इसी प्रकार मूर्ख लोग बहुत गँवाकर थोड़ा बचाते हैं और अपने को महा बुद्धिमान् समझते हैं।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि प्रभो! अब मैं आपको अभिज्ञानकर्त्ता (१) की कथा सुनाता हूं।

कोई मूर्ख जहाज पर चढ़ा हुआ समुद्र में कहीं चला जा रहा था, अकस्मात् उसके हाथ से चांदी का एक पात्र सागर में गिर पड़ा सो उसने वहां के तरङ्गादिक पर चिन्ह कर दिया और मनमें कहने लगा कि कुछ चिन्ता नहीं उधर से लौटूंगा तो गोता मारकर निकाल लूंगा । जब समुद्र के पार पहुँचा तो वहां भी वैसेही ढंग दीख पड़े इसने समझा कि यह वही स्थान है जहां मेरा पात्र गिर पड़ा था, सो वह वहीं गोते लगाने लगा। लोगों ने जब इसका कारण पूछा तो उसने अपना वृत्तान्त कह सुनाया, यह सुन सब लोग हँसने और उसे धिक्कारने लगे।

गोमुख बोला कि अब आप उस राजा की कथा सुनिये जिसने मांस के पलटे मांस देने में अपनी मूर्खता प्रगट किई।

एक राजा थे, एक समय वह अपने प्रासाद के कोठे पर बैठे थे, क्या देखते हैं कि दो जन जा रहे हैं उनमें से एक के हाथ में रसोंई का कुछ चोराया हुआ मांस है। राजा ने चट उसे पकड़ मँगाया और उसके शरीर में से पांच पल मांस कट-वाय लिया, वह विचारा मांस कट जाने से धरती पर गिरके छटपटाने लगा; तब तो राजा को दया आई, उन्होंने प्रतीहार को आज्ञा दी कि पांच पल मांस काट लेने से इसे बहुत व्यथा हुई है अच्छा इसे पांच पल से अधिक मांस दे दो। प्रती-हार बोला "देव! यदि किसी का सिर कटवा लिया जाय और फिर उसे सैकड़ों सिर दे दिये जावें तो क्या वह जी सकता है अच्छा दे दूंगा।" इतना कह वह अपनी हँसी न रोक सका बाहर जाकर पेट भर हँसा। पश्चात् उन्होंने आश्वासन

(१) चीन्ह करनेवाला।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दे उस मांसकटे को वैद्यों के पास चिकित्सार्थ भेज दिया । इस प्रकार मूर्ख प्रभु दण्ड देना जानते हैं अनुग्रह नहीं जानते ।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला देव ! अब मैं आपको उस मूर्खा स्त्री की कथा सुनाता हूं जो एक दूसरा पुत्र चाहती थी ।

एक स्त्री के एकही पुत्र था, वह चाहती थी कि एक और पुत्र हो जाय, सो उसने एक तापसी से पूछा कि आप कुछ ऐसा उपाय कर देती कि मेरे एक पुत्र और हो जाता । वह तापसी ढोंगियल थी सो वह पाखण्डा बोली "यह जो तेरा छोटा बालक है उसे मारकर देवता को बलि चढ़ा दे तो तेरे दूसरा पुत्र हो ।" उसकी ऐसी बात सुन ज्यों वह ऐसा दुस्साहस करने चली कि एक वृद्धा स्त्री उसका हाल जान आकर एकान्त में उसे समझाने लगी कि अरी तू यह क्या करने चली है, अरे पापे ! जो पुत्र सामने है उसे मारकर अजात पुत्र की कामना करती है, भला तुझे ऐसी कुमती कैसे सूझी ? जो पुत्र न हुआ तो तू क्या करेगी तब तो यह बच्चा भी चला न जायगा । इस प्रकार समझाबुझाकर उस वृद्धा ने उस पापिनी को पाप से बचाया । इस भांति डाकिनियों की संगति से स्त्रियां कुत्सितकर्म में लगाई जाती हैं किन्तु वृद्ध के उपदेश से उनकी रक्षा होती है ।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला देव ! अब आंवला खानेवाले की कथा आप को सुनाता हूं ।

किसी गृहस्थ के यहां एक सेवक था जो बड़ाही गबद्द था । गृहस्वामी को आंवले बहुत अच्छे लगते थे उसने एक दिन उस सेवक से कहा कि जाकर उद्यान से मीठे आंवले तोड़ ला । वह मूर्ख वहां गया और एक २ आंवला तोड़ २ चीखने लगा कि मीठा है कि नहीं, इस प्रकार चीख २ बहुत से आंवले तोड़कर अपने स्वामी के पास ले गया और बोला "प्रभो ! देखिये मैं इन आंवलों को चीख कर लाया हूं ये सब मीठे हैं ।" गृहस्थ ने देखा कि आधे आंवले जूठे कर दिये गये हैं सो उसने सब आंवले फेंकवा दिये और उस मूर्ख सेवक को भी छुट्टी दे दी । इस प्रकार मूर्ख जन अपने स्वामी का काम बिगाड़ते हैं और साथही अपनी भी हानि करते हैं ।

"यह कथा तो आपने सुनी," गोमुख ने कहा, "अब आपको दो भाइयों की कथा सुनाता हूं ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाटलीपुत्र नामक नगर में दो भाई ब्राह्मण रहते थे, बड़े का नाम यज्ञसोम और छोटे का कीर्त्तिसोम था। उनके पिता के पास बहुत धन था जिसे उन दोनों ने बांट लिया था। कीर्तिसोम ने अपना भाग व्यवहार करके बढ़ाया परन्तु यज्ञसोम ने खा पी और दे देवाकर अपना हिस्सा उड़ा डाला। जब उसका सब माल नष्ट होने पर वह निर्धन हो गया तब अपनी भार्य्या से एक दिन कहने लगा "प्रिये! मैं तो धनी था अब निर्धन हो गया तो अब भाई बन्धुओं के बीच निर्धन होकर कैसे रहूं विचार होता है कि चलो कहीं परदेश चले चलें।" भार्य्या बोली कि राहखर्च भी तो है नहीं कहां चलें। पत्नी की ऐसी बात सुनकर भी जब वह अपने हठ से न टला तो उसकी भार्य्या फिर बोली कि अच्छा यदि चलना ही है तो अपने छोटे भाई कीर्तिसोम से जाकर कुछ पाथेय (राहखर्च) मांग लो। तब उसने जाकर अपने लघुभ्राता से कुछ पाथेय मांगा इसी अवसर में उसकी भाभी ने आकर अपने पति से कहा "इन्होंने तो अपना सब धन उड़ा डाला हम इन्हें कहां से दें और देवें भी तो कितना देवें, ऐसे देने लगें तो जोही दरिद्र होगा वही हमसे आकर मांगा करेगा।" यद्यपि कीर्तिसोम अपने भाई को प्यार करता था तथापि भार्य्या की ऐसी बात सुन उसने यज्ञसोम को कुछ भी न देना चाहा। हाय! स्त्री के वश में होना कैसे कष्ट की बात है। गोस्वामी तुलसीदासजी ने ठीकही कहा है "अबला विवश ज्ञान गुन गाजन।"

यज्ञसोम चुपचाप वहां से लौट और अपनी स्त्री से सब हृत्तान्त कह उसे साथ ले दैव की शरण गह कर परदेश को चला। चलते २ दोनों एक जंगल में पहुँचे; दैववश वहां एक अजगर निकला और ब्राह्मण को निगल गया, यह देख उसकी भार्य्या धरती पर गिरके रोने लगी। उसका रोना देख वह अजगर मनुष्य की बाणी में उससे बोला, "हे भद्रे! तू क्यों रो रही है?" तब ब्राह्मणी बोली "महासत्व! रोऊँ न तो करूँ क्या, दैव के मारे हम दोनों भीख मांगने खाने परदेश चले, सो तुमने मुझ दु:खिनी के भिक्षापात्र को निगल लिया अब मैं अनाथ हो गई क्या करूँ मेरे दिन कैसे पार लगेंगे।" यह सुन अजगर बोला "क्या चिन्ता है, लेओ मैं तुम्हें एक सोने का भिक्षापात्र देता हूं", इतना कह मुंह से सोने का एक बड़ा पात्र उगलकर उसने उस ब्राह्मणी को दे दिया। ब्राह्मणी फिर बोली, "महा-

भाग ! इस पात्र में मुझ अबला को कौन भिक्षा देगा, उसकी ऐसी बात सुन अजगर बोला "जिससे तुम भिक्षा मांगोगी और यदि वह न देगा, तो उसका सिर उसी क्षण टूक टूक हो जायगा सुनो मैं सच कहता हूं मेरी बात कदापि अन्यथा नहीं होगी"। अजगर की इतनी बात सुनते ही उस सती ब्राह्मणी ने कहा "यदि ऐसा ही है तो हे अजगर ! मैं तुम्हीं से भर्त्तृभिक्षा मांगती हूं बस मेरा पति मुझे मिल जाय मेरी भिक्षा यही है।" उस पतिव्रता ब्राह्मणी की इतनी बात सुन उस अजगर ने अपने मुख से उस यज्ञसोम ब्राह्मण को अक्षत (१) और जीवित उगल दिया। उसे उगलकर वह अजगर दिव्यरूपधारी पुरुष हो गया और अति सन्तुष्ट और प्रसन्न हो उस दम्पती से कहने लगा "मैं विद्याधरों का राजा काञ्चनवेग हूं, गौतममुनि के शाप से अजगर हो गया था, जब मैंने बहुत विनति की तब मुनि ने मेरे शाप का उद्धार यों कर दिया कि जब किसी साध्वी से तुम्हारी बातचीत होगी तब तुम इस योनि से छूट जाओगे, सो आज तुम्हारे प्रताप से मेरे शाप का अन्त हो गया।" इतना कह विद्याधरेन्द्र ने उस स्वर्णपात्र को रत्नों से भर दिया, पश्चात् उन दोनों से बिदा हो अत्यन्त प्रमुदित मन आकाश में उड़कर अपने लोक को चला गया और वे दोनों स्त्री पुरुष रत्नों की ढेरी पाय प्रसन्नहृदय अपने घर लौट आये। अक्षय धन पाकर यज्ञसोम अपनी भार्य्या के साथ सुखपूर्वक रहने लगा। सत्वानुरूप विधाता सबको सब कुछ देते हैं।

गोमुख बोला, "महाराज ! अब मैं आपको उस मूर्ख की कहानी सुनाता हूं जिसने राजा को सन्तुष्ट करके उनसे उनके नापित को मांगा था।"

कर्णाटक देश के राजा के यहां एक शूर था किसी समय युद्ध में उसने ऐसा पराक्रम दिखाया कि राजा अति प्रसन्न हो बोले कि जो चाहो सो मांग लो। उस क्षुद्रहृदय ने राजा के नापित को ही मांग लिया। चाहे भला हो वा बुरा, जिसको जो अच्छा लगता है वह वही मांगता है।

गोमुख ने कहा कि यह तो आपको मूर्ख नापित मांगनेवाले की कथा सुनाई अब उसकी कथा सुनिये जिसने "कुछ भी नहीं" मांगा।

एक मूर्ख कहीं चला जा रहा था, मार्ग में एक सगड़ मिला; सगड़ पर के

(१) तनिक भी चोट न लगी हो।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मनुष्य ने उससे कहा कि भाई तनिक सगड़वा तो सीधा कर देते । तब मूर्ख ने कहा कि जो सगड़ सीधा कर देऊँगा तो क्या दोगे ? उसने उत्तर दिया 'कुछ भी नहीं'। तब उस मूर्ख ने सगड़ सीधा कर दिया और सगड़वाले से बोला "कुछ भी नहीं" दीजिये। यह सुन वह हँसने लगा।

इस प्रकार मूर्खों की अनेक कथायें सुनाय गोमुख बोला "देव! मूर्ख लोग इसी भांति अपनी मूर्खता के कारण सदैव हास्यभाजन और निन्द्य होते हैं और कभी २ विपत्ति में भी पड़ जाते हैं और सज्जन लोग सदा पूजे जाते हैं।

या भांति गोमुखमुखोक्त कथा समाजा (१)
रातीं विषै (२) अकनि मंत्रिसमेत राजा।
विश्रामदायिनि जगत्त्रय की जो आही
निद्रा, गह्यो सुनरवाहनदत्त ताही ॥ १ ॥

छठवां तरङ्ग।

दूसरे दिन प्रातःकाल होने पर सब कृत्यों को कर नरवाहनदत्त अपने पिता वत्सेश्वर के दर्शन करने उनके निकट गये, वहां उसी समय पद्मावतीदेवी के भाई मगध देश के राजपुत्र सिंहवर्म्मा भी आये, उनके आने पर आगत स्वागत की बात चली और उन्हीं के सत्कार आदि में दिन बीता और रात्रि आई तब व्यालू कर नरवाहनदत्त अपने मन्दिर में शयन करने चले गये, पर मन तो इनका शक्तियशा में लगा था नींद आवे तो कैसे आवे। तब महाबुद्धिमान् गोमुख उनके मनोविनोदार्थ पुनः कथा कहने लगा। वह बोला राजन्!

किसी स्थान में एक बड़ा विशाल बड़ का वृक्ष था उसपर असंख्य पक्षी बसेरा करते थे उन पक्षियों के कोलाहल से ऐसा भासता था मानो वह पथिकों को अपनी सघनशीतल छाया में विश्राम करने के हेतु बुलाता हो। उस वृक्ष पर कौओं का राजा मेघवर्ण रहता था, उसका शत्रु उलूओं का राजा अवमर्द था। एक समय की

(१) समूह। (२) समय में।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बात है कि अवमर्द रात्रि के समय उसपर चढ़ आया और बहुत से वायसों का संहार कर विजय का डंका बजाय वहां से चला गया। प्रात:काल होतेही काकराज सभा में जा बैठा और उड्डीवी, आडीवी, संडीवी, प्रडीवी और चिरजीवी नामक अपने पांच मन्त्रियों से कहने लगा, "रात की बात तो तुम लोग जानतेही हो कि वह अवमर्दक किस प्रकार हमपर विजयी होकर चला गया; वह हमसे बलवान् तो हैही सो कदाचित् अवसर पाय दुबारा हमपर धावा करे तो क्या होगा, अब इसका कुछ प्रतीकार होना चाहिये।" वायसराज की ऐसी बात सुन उड्डीवी बोला "महाराज। शत्रु जब बलवान् हो तब दोही उपाय हैं, या तो दूसरे देश में चला जाय वा अधीनता स्वीकार कर ले।" यह सुन आडीवी बोला "यह तो सच्चा बना कुछ हैही नहीं कि वह आजही फिर चढ़ आवे शत्रु का आशय और अपनी शक्ति देखके जैसा हो सकेगा किया जायगा। तब संडीवी ने कहा कि देव! मरना वरु अच्छा है परन्तु शत्रु के समक्ष झुकना अथवा विदेश में जाकर जीवन धारण करना अच्छा नहीं। हमें उचित है कि जिसने हमारा अपमान किया उस शत्रु से अवश्य युद्ध करें; जिस राजा के सहायक होते हैं और जो शूर होता है ऐसा राजा शत्रुओं को जीत लेता है। इसके उपरान्त प्रडीवी बोला "वह बलवान् है, लड़ाई में जीता न जायगा तो अब ऐसा करना चाहिए कि इस समय तो उससे सन्धि कर ली जाय पश्चात् जब घात लगे तो उसे मार डालना।" तदनन्तर चिरजीवी बोला "क्या कहा? सन्धि। कैसी सन्धि? भला यह तो बतलाओ दूत कौन होगा? कौओं और उलुओं का बैर तो सृष्टि के आरम्भही से चला आ रहा है तो भला उनके पास जायगा कौन? हां एक बात है मन्त्र से जो कुछ हो जाय तो हो जाय क्योंकि मन्त्रही राज्य का मूल है।" चिरजीवी की ऐसी बात सुन काकराज उससे कहने लगा "भाई चिरजीविन्! तुम वृद्ध हो. यदि यह जानते हो कि कौओं और उलुओं का बैर किस हेतु से हुआ तो बताओ, इसके पीछे मन्त्र बतलाना।" काकराज का ऐसा प्रश्न सुन चिरजीवी बोला "यह वचन (बोलने) का दोष है, क्या आपने उस गदहे की कथा नहीं सुनी है, अच्छा सुनिये मैं सुनाता हूं।

किसी धोबी का गदहा बड़ा दुर्बल था, वह चाहता था कि उसका गदहा किसी प्रकार से मोटा हो जाता, उसे कहीं से बाघ की खलरी मिल गई सो उसने अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गदहे को वही खलरी ओढ़ाकर एक किसान के खेत में छोड़ दिया । अब इसी प्रकार वह गदहा जाकर खेत चरता और लोग उसे व्याघ्र समझ उसके समीप जाने से हिचकते। एक दिन कोई खेतिहर धनुही लिये उसी मार्ग से जा रहा था अकस्मात् उस गदहे पर दृष्टि पड़ी तो बाघ समझ भय से ठिठक गया और अपना कम्बल ओढ़ निहुर के धीरे २ चलने लगा । उसे देख उस गदहे ने सोचा कि यह भी गदहा है, और वह अन्न खा खा कुन्दा हो गयाही था सो मारे मोटाई के ऊँचे स्वर से रेंकने लगा। अब तो वह कृषक समझ गया कि अरे यह गदहा है सो उसने धनुष चढ़ा ऐसा बाण मारा कि गदहा मरही गया। वह गर्दभ अपनीही बोली से मारा गया।

इतनी कथा सुनाय चिरजीवी बोला "महाराज! बस इसी वाग्दोष से उलूकों के साथ हमारा वैरभाव हुआ, सुनिये इसका हेतु भी आपको सुनाता हूं।"

पूर्व समय की बात है कि पक्षियों के कोई राजा न था, उन सभों ने सभा करके यह स्थिर किया कि उलूक को राजा बनाना चाहिए, किसी ने छत्र उठाया किसी ने चामर; बस उसी के राज्याभिषेक का उपक्रम होने लगा। इसी अवसर में उड़ता २ कहीं से कौआ भी वहीं पहुँच गया, और राज्याभिषेक का समारम्भ देखकर समस्त पक्षियों से कहने लगा "अरे मूर्खो! यह तुम क्या करने चले हो? क्या हंस कोयल आदि पक्षी तुम्हारे बीच में नहीं हैं कि इस क्रूर, पापी, कुरूप उल्लू को कि जिसके दर्शन से अमङ्गल होता है, राजा बनाने चले हो; धिक् धिक् भला यह तुम क्या अनर्थ कर रहे हो। राजा तो ऐसे को बनाना जो प्रभावशाली हो जिसके नाममात्र से सब कामों में सिद्धि हो जाती है । सुनो इसी विषय में तुम्हें एक कथा सुनाता हूं।"

चन्द्रसर नामक एक बड़ा भारी तालाव है, उसके किनारे खरहों का राजा शिलीमुख रहता था। एक समय बड़ा सूखा पड़ा जिससे सब जलाशय सूख गये पर चन्द्रसर का जल न सूखा, सो चतुर्दन्त नामक गजेन्द्र अपने यूथ के साथ वहां पानी पीने आया उसके पांवों के नीचे कितने खरहे दबकर पिलुहा हो गये। शिलीमुख को इससे बड़ी चिन्ता हुई सो वह और सब खरहों के समक्ष विजय नामक शशक से कहने लगा कि अब तो गजेन्द्र को चसका पड़ गया वह बार बार यहां आया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करेगा और हमारा संहार कर डालेगा इसलिये अब कोई उपाय विचारना चाहिये। उसके पास जाओ और देखो तुम्हारा कुछ उपाय चल सकता है या नहीं क्योंकि तुम कार्य्य और उपाय दोनों जानते हो और युक्ति से बोलना भी तुमको आता है, देखो जहां जहां तुम गये वहां वहां अच्छाही हुआ । शशकराज की ऐसी बात सुन वह विजय खरहा प्रसन्न होकर धीरे २ चला, चलते २ मार्गही में उसकी करीन्द्र से भेंट हो गयी तब वह खरहा इधर उधर का विचार करने लगा कि ऐसा कोई उपाय किया जाय कि इस गजराज से समागम हो; इतना विचार वह बुद्धिमान् खरहा एक टीले पर चढ़ गया और वहां से उस गजेन्द्र को सम्बोधन कर कहने लगा "हे यूथप! मैं भगवान् शशाङ्क का दूत हूं, उनका सन्देशा लाया हूं; सुनो भगवान् कुमुदिनीनायक का यह सन्देशा है—"यह जो शीत चन्द्रसर नामक सरोवर है वहां मेरा निवास है, वहां जो शशक रहते हैं उनका मैं राजा हूं, वे खरहे मेरे अत्यन्त प्रिय हैं, इसी हेतु मैं शीतांशु कहलाता हूं, इसी कारण से मेरा नाम शशी भी पड़ा है, सो तुमने उस तड़ाग का सत्यानाश कर डाला और मेरे खरहों का संहार कर दिया; अब मैं तुम्हें चिताये देता हूं कि फिर ऐसा किया तो चेत रखना मुझसे उसका फल पाओगे । दूत के मुख से यह सन्देशा सुन गजेन्द्र भयभीत हो गया और मारे डर के कम्पित हो कहने लगा "दूत! मैं ऐसा फिर कभी न करूँगा, भगवान् शशाङ्क मेरे मान्य हैं उनकी आज्ञा शिरमाथे है।" गजराज की ऐसी बात सुन विजय सोचने लगा अब क्या अब तो इसे चेला मूड़ लिया, इतना विचार वह बोला "अच्छा मेरे साथ २ आओ चलो मैं तुम्हें भगवान् शशी के दर्शन कराये देता हूं तुम उनसे प्रार्थना करके अपना अपराध क्षमा करा लो।" इतना कह वह उस नागेन्द्र को सरोवर के किनारे ले गया और वहां उस धूर्त्त खरहे ने जल के भीतर चन्द्र का प्रतिविम्ब नागेन्द्र को दिखा कर कहा कि देखो यह हमारे राजा शशाङ्क विराजमान हैं । उन्हें देखतेही वह गजेन्द्र भय के मारे थर २ कांपने लगा और प्रणाम कर चुपचाप वन में चला गया और फिर वहां कभी नहीं आया । विजय खरहे की ऐसी प्रत्यक्ष करनी देखकर शशराज शिलीमुख अति प्रसन्न हुए और उसका बड़ा सम्मान कर सुखपूर्वक वहां निर्भय रहने लगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतनी कथा सुनाय कौआ पच्चियों से पुन: कहने लगा कि प्रभु ऐसा होना चाहिये, उसके नाम का यह प्रभाव है कि उसकी प्रजा में किसी को भी किसी प्रकार की बाधा न पहुँचे. सो यह उल्लू भला कैसे राजा हो सकता है यह तो दिन के समय स्वयं अन्धा रहता है और फिर मुट्ठीभर का जीव है । इसे राजा बना कर अपनी रचा की क्या सम्भावना की जाय यह चुद्र जन्तु तो हैही फिर इसका विश्वास क्योंकर किया जाय ? सुनो इसी विषय में तुम्हें एक कथा सुनाता हूं।

किसी समय की बात है कि कहीं एक वृच पर मैं रहता था, उस वृच के नीचे कपिञ्जल नामक एक पची नीड़ बनाकर वास करता था । एक समय वह कहीं चला गया और बहुत दिनों लों नहीं लौटा । इतने अवसर में कहीं से एक खरहा आकर उसके खोंते में बस गया । थोड़े दिनों के उपरान्त कपिञ्जल लौटा तब खरहा भीतर आनेही न दे, कहे कि यह मेरा आवास है मैं इसमें रहता हूं तुम कहां के हो चलो दूर हो; और कपिञ्जल कहे कि अरे तू कहां से आय बसा, यह नीड़ तो मेरा है, मैंने इसे बनाया है यह तेरा कैसे हुआ, निकल, भाग यहां से । इस प्रकार दोनों में झगड़ा होने लगा । दोनों ने यह कहा कि इसका निश्चय कैसे हो कि यह किसका है, कोई न्यायकर्त्ता ठहराना चाहिये जो हम दोनों का विवाद निपटाय दे । इस बात पर दोनों सम्मत हुए और न्यायकर्त्ता की खोज में चले । मुझे भी इस न्याय के देखने का बड़ा कौतुक हुआ सो मैं छिपा छिपा उनके पीछे पीछे चला । वे थोड़ेही दूर गये थे कि एक तालाव के किनारे उन्हें एक बि-ड़ाल दीख पड़ा जो कि ध्यान लगाये अपनी आंखें आधी मूंदे बैठा था और जिसने झूठही हिंसा से परे रहने का व्रत धारण कर रक्खा था । उसे देख उन दोनों ने आपस में कहा कि यह तो एक सिद्ध महात्मा हैं इन्हीं से क्यों न न्याय करा लिया जाय ? इतना कह उन दोनों ने उस बिड़ाल के पास जाकर उससे कहा "महा-राज ! आप तपस्वी और धार्मिक हैं हम दोनों का ऐसा २ झगड़ा है सो आप चुका देवैं ।" यह सुन बिड़ाल बड़े धीमे स्वर से बोला कि मैं तपस्या करते करते बड़ा दुर्बल हो गया हूं दूर की बात मुझे नहीं सुनाई पड़ती मेरे निकट आ-कर कहो तो सुनूं कि तुम दोनों क्या चाहते हो । दोनों की बात बिना भली भांति सुने मैं क्या निर्णय कर सकता हूं , सुनो यह धर्म्म की बात है. धर्म्म का

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बखेड़ा ऐसा है कि तनिक चूका कि गया; उसका यथार्थ निर्णय न होने से इह लोक और परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं । इस प्रकार की बातें कह कह उसने उन दोनों का विश्वास बढ़ाया; सो वे दोनों उसकी बात का विश्वास कर निकट चले गये और तब उस कपटी बिड़ाल ने एकही झपट्टे में दोनों शश और कपिञ्जल को पकड़कर मार डाला ।

इतनी कथा सुनाय कौआ पच्चियों से कहने लगा कि इसीसे मैं कहता हूं कि नीच काम करनेवाले दुर्जन का विश्वास कभी न करना, यह उल्लू अत्यन्तही दुर्जन है इस हेतु इसे राजा न बनाना चाहिये । वायस की इतनी बात सुन पच्चियों ने कहा कि आपका कहना बहुत ठीक है, इतना कह उल्लू के अभिषेक का उपक्रम त्याग सब पच्ची वहां से इधर उधर उड़ गये । तब उल्लू क्रोधपूर्वक उस कौवे से कहने लगा कि चेत रखना तुमने अच्छे घर बयाना दिया है बस आज से हमारे तुम्हारे बीच परम शत्रुता चली तुम हमारे और हम तुम्हारे बैरी हुए। इस प्रकार कौवे से कहकर उल्लू क्रोध दिखाता चला गया । यद्यपि कौआ सोचता था कि मैंने क्या अनुचित किया, इससे चाहे उलूक प्रसन्न हो या अप्रसन्न; परन्तु उसका मन उदास हो गया क्योंकि वचनमात्र से उसे व्यर्थ बैर बेसाहना पड़ा । ठीकही है वचनमात्र से जो बैर उत्पन्न हो जाय तो उससे भला किसे अनुताप न होगा ।

इतनी कथा सुनाय चिरजीवी कहने लगा कि सुना न आपने महाराज ! ऐसे ही ऐसे वाग्दोष से हमारे और उलूक के बीच बैर उत्पन्न होगया है। इतना कह चिरजीवी काकराज से फिर कहने लगा कि देव ! वे उल्लू सब संख्या में बहुत हैं और बलवान् भी हैं सो उनको जीतना कठिन है, सुनिये जो गिनती में अधिक होते हैं वेही जीतते हैं. आप ध्यान देकर सुनें, इसी विषय में आपको एक कथा सुनाता हूं।

कोई एक ब्राह्मण था, वह एक किसी गांव से एक बकरा मोल ले उसे अपने कन्धे पर रख ले चला; मार्ग में उसे बहुतेरे धूर्त्त मिले जो उससे वह छाग ले लिया चाहते थे। अब उन सभों ने जाल रचा और एक ने उसके पास जाकर कहा,— देवता ! यह क्या ? छिः छिः अरे आपने इस अपवित्र कुत्ते को कन्धे के ऊपर क्यों उठा रक्खा है, फेंकिये २ राम २ यह आपको क्या सूझी है।" ब्राह्मण उसकी बात पर कुछ भी विचलित न हुआ वरन उसको झिड़क कर आगे बढ़ा। इतने में दो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जन और आकर उससे उसी प्रकार कहने लगे कि भला कुत्ते को क्यों उठाये लिये जा रहे हैं, छोड़िये २, ब्राह्मण होकर आपको यह नहीं शोभता बस झटपट इसे त्याग कीजिये। उनकी बात से ब्राह्मण के हृदय में कुछ संशय हुआ तथापि उसने उस बकरे को नहीं त्यागा। वह देखता चला कि भला यह तो बकरा ही है ये दुष्ट सब इसे कुत्ता बनाते हैं। इस प्रकार सोचता हुआ वह चला जा रहा था कि उधर से तीन धूर्त्त उसे आ मिले और उसी प्रकार कहने लगे कि महाराज! जिस कन्धे पर जनेऊ उसीपर कुत्ता! भला इन दोनों का साथ कहां! बस जान गये आप व्याध हैं, ब्राह्मण नहीं, ऐसा भासता है कि इसी कुत्ते से आप पशुओं का आखेट किया करते हैं यह सुन वह ब्राह्मण अपने मनमें विचारने लगा कि मेरी दृष्टि नष्ट कर निश्चय करके किसी भूत ने मुझे भ्रमा दिया है; भला यह क्या कि मैं तो इसे छाग देखता हूं और लोग इसे कुत्ता बतलाते हैं; तो क्या ये सब झूठ बोल रहे हैं? अथवा, मेरीही दृष्टि में कुछ दोष है। इस प्रकार उस छाग को फेंक ब्राह्मण ने स्नान किया और शुद्ध हो वह विप्र अपने घर चला गया; इधर उन धूर्त्तों ने उस बकरे को लेकर मनमाना उसे खाकर आनन्द किया।

इतनी कथा सुनाय चिरजीवी उस वायसेश्वर से कहने लगा कि देव! इस प्रकार जो बहुत और बलवान् होते हैं वे जीते नहीं जा सकते। सो अब बलवन्त के विरोध में जो मैं कहता हूं सोही किया जाय; ऐसा करें कि मेरे कुछ पर नोच कर मुझे इसी पेड़ के नीचे छोड़कर आप सब चले जावें और जबलों में अपना काम कर न आ मिलूं उस पहाड़ पर ठहरे रहें। उस चिरजीवी की बात सुन काकराज ने कहा कि बहुत अच्छा, बस कुछ मिथ्या क्रोध प्रकाशित कर उसके पर नोच कर पेड़ के नीचे गिरा दिया पश्चात् काकराज ने अपने अनुचरों के साथ वहां से चले जाकर उस पहाड़ पर बसेरा किया, और इधर चिरजीवी उसी पेड़ के नीचे उसी दशा में पड़ा रहा।

इसके उपरान्त रात्रि के समय उलूकराज अवमर्द अपने अनुयायी वर्ग के साथ वहां आया तो क्या देखता है कि वृक्ष पर एक भी कौआ नहीं है। इतने में नीचे चिरजीवी धीरे धीरे कराहने लगा, यह सुन नीचे उतरकर उलूकराज ने उसे देखा और अति विस्मित हो उससे पूछा कि अरे तू कौन है तेरी दशा ऐसी क्यों हुई?

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब चिरजीवी ऐसे धीमे स्वर से बोला जैसे कोई रोगी बोले - "महाराज ! मैं वायसराज का मन्त्री चिरजीवी हूं, उनके मन्त्रियों ने उन्हें सम्मति दी कि वह आप पर चढ़ाई करें उस अवसर पर मैंने उनके मन्त्रियों को तथा अन्यान्य चाप लूसों को डांटकर वायसराज से कहा कि देव ! यदि मुझसे पूछते हैं और मेरी बात मानते हैं तो मैं यही कहूंगा कि उलूकराज से युद्ध न ठाना जाय वह बलवान् हैं हम निर्बल, निर्बल को बलवान् से न भिड़ना चाहिये, यदि आप मानें तो ऐसी अवस्था में नीति यही है कि उनसे अनुनय ही किया जाय। महाराज! इतना कहना ही मेरे लिये विष हुआ, बस मेरी बात सुनतेही उन्हें तथा उनके मित्रों को बड़ा क्रोध हुआ, उन्होंने कहा मारो इसे यह दुष्ट शत्रु से मिला है, बस महाराज! उन मूर्खों ने मारपीट कर मुझे इस दशा को पहुँचा दिया, पुनः मुझे इस वृक्ष के नीचे ढकेल काकराज अपने अनुचरों के साथ न जाने कहां चले गये, यह तो उपदेश देने का फल है।" इतना कह चिरजीवी नीचे मुंह कर लम्बी २ सांसें भरने लगा।

चिरजीवी की ऐसी बातें सुनकर उलूकराज ने अपने मन्त्रियों से पूछा कि चिरजीवी के साथ क्या (कैसा बर्त्ताव) करना चाहिये। राजा का ऐसा प्रश्न सुन दीप्तनयन नामक मन्त्री बोला "महाराज! इसकी रक्षा करनी चाहिये, देखिये चोर की रक्षा तो कोई नहीं करता है न, फिर वही चोर जो उपकारी हो तो सज्जन लोग उसकी रक्षा करते हैं। सुनिये इसी विषय में मैं आपको एक कथा सुनाता हूं"—

पूर्व समय में कोई एक वणिक् था, वह बड़ाही धनवान् था; कुछ धन देकर उसने अपनी बुढ़ौती में भी एक बनिये की कन्या से विवाह कर लिया। भला इस वृद्ध से उसका मन कब मानता, जिस प्रकार फूल के समय निकल जाने पर भौंरी उस वृक्ष की ओर कभी भूल के भी नहीं जाती उसी प्रकार वह भी सदा इससे मुंह फेरकर सोया करती। एक समय की बात है कि दोनों पलङ्ग पर सोये थे कि इसी अवसर में एक चोर घर में पैठा उसे देखतेही वह बाला भय के मारे अपने पति से लपट गई। इस अद्भुत परिवर्त्तन से उसने अपना अहोभाग्य समझा और आश्चर्य्य में आकर कारण के निर्णयार्थ इधर उधर जो दृष्टि फेरी तो कोने में

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एक चोर दबका हुआ दिखाई पड़ा। बनिया बोला "भाई चोर! तुम मेरे बड़ेही उपकारी हुए, तुम्हारेही प्रताप से आज मेरा ऐसा सौभाग्य हुआ है, अब मैं तुम्हारा प्रत्युपकार यही करता हूं कि अपने सेवकों से तुम्हें मरवा न डालूंगा।" इतना कह उसने रातभर उस चोर को रक्षित रक्खा और प्रातःकाल होने पर कुशलपूर्वक उसे अपने घर से बाहर निकाल दिया।

इतनी कथा सुनाय मन्त्री दीप्तनयन बोले कि, "देव! यह चिरजीवी हमारा उपकारक है इस हेतु मेरा तो यही सिद्धान्त है कि इसकी रक्षा की जाय।" इतना कह वह सचिव चुप हो रहा।

तब उलुओं के राजा ने वक्रनास नामक एक दूसरे मन्त्री से पूछा कि, "कहिये आपकी सम्मति क्या है?" इस विषय में क्या करना चाहिये? । वक्रनास ने उत्तर दिया कि मेरी बुद्धि में तो यह आता है कि इसकी रक्षाही की जाय क्योंकि एक तो यह हमारे शत्रुओं के मर्म्म से भली भांति विज्ञ है दूसरे अब इससे और काकराज से वैर हो गया है, सो स्वामी और मन्त्री का यह वैर हमारा कल्याणसाधक होगा। सुनिये देव! इस विषय में आपको एक कथा सुनाता हूं:—

एक ग्राम में कोई ब्राह्मण रहता था, उसे कहीं से दान में दो गायें मिलीं; उन गौओं को देखकर एक चोर का मन ललचा, सो वह उपाय सोचने लगा कि किसी प्रकार इसकी गायें चोरा लेनी चाहिये; वह इसी चिन्ता में था कि उसकी भेंट एक राक्षस से हो गई जो उस ब्राह्मण को भक्षण किया चाहता था। चलो अब एक से दो हुए, दोनों अपने २ घात पर कटिबद्ध हुए। अब रात के समय दोनों अपना २ कार्य्य एक दूसरे से कह उस ब्राह्मण के घर को चले। चोर ने राक्षस से कहा कि भाई! ऐसा करना कि पहिले मैं गौओं को चुरा लूं तब तुम ब्राह्मण को पकड़ना, नहीं तो जो तुम पहिले उसे पकड़ोगे तो कहीं वह सोते से जाग जाय तो मेरे गोहरण में बाधा पड़ जायगी सो देखना पहिले तुम उसे न ग्रसना। राक्षस बोला, "वाह तुमही बड़े चतुर हो, भला ऐसा कब होने को; उधर तुम गौओं को छोड़ने लगे और कहीं उनके खुरों की आहट से उस ब्राह्मण की नींद खुल गयी तो मेरा सब प्रयासही मट्टी में मिल गया तब तो व्यर्थही मुझे इतना परिश्रम उठाना पड़ा, सो भाई मैं तो ऐसा कभी न करने दूंगा।" ब्राह्मण की नींद टूट गयी वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जाग पड़ा और हाथ में तलवार लेकर राक्षस को नाश करने का मन्त्र जपने लगा, बस राक्षस और चोर दोनों वहां से खसक कर भाग गये।

इतनी कथा सुनाय वक्रनास बोला कि देव! इस प्रकार जैसे उन राक्षस और चोर का भेद ब्राह्मण का हितसाधक हुआ वैसेही काकेन्द्र और इस चिरजीवी के भेद से हमारा भलाही होगा।

वक्रनास की ऐसी बात सुन उलूकराज ने प्राकारकर्ण नामक अपने मन्त्री से पूछा कि इस विषय में आपकी क्या सम्मति है? वह बोला महाराज चिरजीवी विपत्ति में पड़ा है और हमारी शरण में आया है, अत: इस पर दया करनी चाहिये; शरणागत की रक्षा अवश्य करनी चाहिये; उसके त्याग करने से बड़ा पाप लगता है। देखिये राजा शिबि ने शरणागत की रक्षाही के हेतु अपना मांस काटकर दे दिया।

प्राकारकर्ण की इतनी बात सुन उलूकराज ने अपने मन्त्री क्रूरलोचन से पूछा परन्तु उसने भी वैसाही उत्तर दिया। तब उसने रक्ताक्ष नामक सचिव से ऐसाही प्रश्न किया परन्तु उसने कुछ औरही उत्तर दिया, वह तो बुद्धिमान् तथा नीतिज्ञ था अतएव उसने नीति का भी अवलम्बन किया उसने कहा, "देव! ये आपके मंत्री नीति का मर्म्म कुछ नहीं जानते; इन सभों ने तो ऐसी सम्मति दी जिससे आपका नाश हो जाय, सुनिये जो नीतिज्ञ होते हैं वे बैरी का कदापि विश्वास नहीं करते भला यह बात क्या बुद्धि में समा सकती है कि जिसकी हम अवज्ञा करें वह उसे भूल जाय और हमारा भला करे, कदापि नहीं, वह बात उसके हृदय में वाण के समान चुभती रहेगी और वह एसा अवसर ढूंढ़ता रहेगा कि कब घात लगे और पलटा चुका लूं।" सो महाराज आप चेत रखिये वैरियों का विश्वास कदापि न करना। उसको तो मूर्खाधिराज समझना चाहिये जो कि आंख से अपराध देखकर भी चापलूसी की बातें सुनकर प्रसन्न हो जाता है। सुनिये इसी विषय में आप को एक कथा सुनाता हूं।

प्राचीनकाल में एक बढ़ई था, वह अपनी स्त्री को अपने प्राणों से भी अधिक प्यार करता था। किन्तु उसकी भार्य्या व्यभिचारिणी थी। प्राय: लोग उस बढ़ई से यह कहते भी थे पर वह प्रेम के कारण ऐसा अन्धा हो गया था कि किसी की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बात का विश्वासही न करे। अन्त में बहुत कहते सुनते उसका मन कुछ फिरा सो उसने कहा कि, "अच्छा मैं अब इसका पता लगाऊँ कि बात क्या है।" सो उसने एक दिन अपनी भार्य्या से कहा कि प्रिये! राजा की आज्ञा से किसी काम के लिये मैं बहुत दूर जा रहा हूं सो सत्तू इत्यादि कुछ पाथेय * बांध देना। उसने भी चट गठरी मोटरी बांध दी और वह परदेश जाने के लिये घर से निकला। परदेश जाने का तो केवल बहाना भर था यहां तो बातही दूसरी थी, सो कुछ कालोपरान्त वह इधर उधर घूमघाम कर अपने घर लौट आया और साथ में अपने एक शिष्य को भी लेता आया, और शिष्य सहित चुपके से घर में घुसकर अपनी प्रियतमा प्राणवल्लभा के पलङ्ग के नीचे दबक कर बैठ रहा। उधर उस कुलटा ने विचारा कि अब क्या, पति तो परदेश गये, अब यार के संग आनन्द उड़ाऊँ सो उसने अपने यार को बुला भेजा। रात्रि समय दोनों निर्द्वन्द्व विहार करने लगे। उस पापिष्टा ने रमण के समय आनन्द में मग्न हो जो पांव पसारे तो उसके पति के शिर में धक्का लगा, बस वह झट ताड़ गई कि ओः! धोखा हुआ; पर थी परम धूर्त्ता, झट त्रियाचरित्र कर बात बनाय बैठी। इतने में उसे विहार से विरत देख यार ने पूछा "प्रिये! ऐसा वैराग्य क्यों हो गया? कहो तो बात क्या है? प्यारी एक बात पूछता हूं उसका उत्तर दे देओ, बतलाओ मैं तुम्हें अधिक प्यारा लगता हूं कि पति?" यह सुन वह कूटकुशला बोली, "यह तुम कैसी बात कह रहे हो, भला मेरे पति मुझे जितने प्रिय होंगे उतने तुम कब हो सकते हो; सुनो मैं अपने प्राणेश्वर को ऐसा प्यार करती हूं कि उनके लिये अपने प्राणों को न्योछावर कर देऊँ।" त्रियाचरित्र यही कहलाता है, स्त्रियों की चपलता प्रसिद्धही है; गोस्वामी तुलसीदासजी ने कहा हो है।

चौ०— विधिहु न नारि हृदयगति जानी। सकल कपट अघ अवगुन खानी॥
पुनःचौ०—नारि सुभाउ सत्य कवि कहहीं। अवगुन आठ सदा उर बसहीं॥
साहस अनृत चपलता माया। भय अविवेक अशौच अदाया॥

सो जहां प्राकृत नारियों का ऐसा बर्णन किया गया है और उनके ऐसे ऐसे प्राकृतिक दोष दर्साये गये हैं तो कुलटाओं की बातही क्या, वे तो जो न कर सकें और जो न गढ़ सकें वही परम आश्चर्य्य। किया क्या जाय स्त्रियों का स्वभावही

* पथ के लिये भोजन।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ऐसा चपल होता है, कहते हैं कि, "नाक न हो तो स्त्रियां विष्ठा खा लें।" यह कहावत एकान्त सत्य है।

वह मूढ़ बढ़ई तो अपनी भार्य्या को परम साध्वी पहिले ही से समझता था, इतना सुनना तो उसके लिये अमृत हो गया। अपनी प्राणप्रिया का (यथार्थ में कुलटा का) ऐसा कृत्रिम वचन सुनकर वह फूला न समाया; मारे आनन्द के झट पलङ्ग तले से उछल पड़ा और अपने शिष्य से कहने लगा "देखा न? देखो तुम साक्षी रहना, यह मेरी ऐसी भक्ता है; तुम सुनही चुके हो कि यह मेरे लिये अपने प्राण भी दे देने पर उतारू है; व्यर्थही लोग इस पर दोष लगाते हैं, यह तो बड़ी ही पतिव्रता है सो मैं तो इसे माथे पर उठा लूंगा।" इतना कह वह मूर्ख झपट अपनी भार्य्या का पलङ्ग, जिस पर वह दुष्टा अपने यार के साथ बैठी थी, उठाकर नाचने लगा; उस मूढ़ का शिष्य भी वैसाही जड़ था वह भी अपने गुरु के व्यापार में साझी हुआ।

इतनी कथा सुनाय मन्त्री रक्ताक्ष उलूकराज से कहने लगा कि देव! इस प्रकार प्रत्यक्ष दोष देखकर भी कपट की सान्त्वना से जो सन्तुष्ट हो जाता है वह परम मूर्ख और निर्विवेक होता है, मूढ़ और विवेकशून्य के अतिरिक्त ऐसा और कौन कर सकता है? फिर उसका परिणाम यही होता है कि लोग उस मूर्खाधिराज का उपहास करने लगते हैं। इसीसे कहता हूं कि देव! इस चिरजीवी की रक्षा कदापि नहीं करनी चाहिये, यह शत्रु की ओर का है; शत्रुपक्षी को भयङ्कर रोग समझना चाहिये, उसकी उपेक्षा हुई कि नाश हुआ। इससे देव! इस चिरजीवी का विश्वास आप न करें।

रक्ताक्ष की इतनी बात सुन उलूकराज बोला "भाई तुम जो चाहो कहो पर यह भी तो सोचो कि हमारी भलाई ही के कारण इसकी यह दशा हुई है सो इसकी रक्षा क्यों न की जाय। देखो कहाही है—"शरणागत कहँ जो तजै ताहिँ विलोकत पाप।" फिर यह भी तो एक बात विचारणीय है कि यह अकेला ही न है, अकेला क्या कर सकता है इससे तुम्हारे भय की कुछ भी सम्भावना नहीं है।" इस प्रकार की बातें कह उलूकराज ने अपने मन्त्री रक्ताक्ष के उपदेश का निराकरण किया और उस चिरजीवी वायस को विविध प्रकार से सान्त्वना दे सन्तुष्ट किया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जब उलूकराज ने इस प्रकार बहुत कुछ समझा बुझाकर चिरजीवी को आश्वासित किया तब वह अवसर पाय उस उलूकराज से कहने लगा "देव ! मैं जिस अवस्था में पड़ा हूं उससे तो मरना ही अच्छा है, मेरे जीने से क्या प्रयोजन, सो चिता चुनवा दीजिये कि मैं जलकर इस कष्ट से मुक्त हो जाऊँ । जलते समय मैं हुताशन देव से यही प्रार्थना करूँगा कि अब जो मेरा जन्म होतो इसी उलूकयोनि में हो जिससे कि मैं वायसराज से पलटा चुका लूं, जैसा उन्होंने मेरे साथ किया है उसका उनको प्रतिफल अवश्य दूंगा।" चिरजीवी की ऐसी बात सुन रक्ताक्ष मुस्कुराकर बोला "भाई चिरजीविन् ! अब तुम्हें किस बात की चिन्ता है, हमारे प्रभु तो तुमपर द्रवीभूत हैं ही फिर क्या ! तुम निश्चिन्त होकर आनन्द से रहो अग्नि में प्रवेश कर क्या करोगे अब तो तुम्हारे ही पौ बारह हैं। सुनो भाई जबलों तुम्हारी काकयोनि लिखी है तबलों तुम किसी प्रकार से उलूकयोनि में नहीं जन्म ले सकते, विधाता ने जिसको जैसा बनाय दिया है उसको वैसाही रहना पड़ता है; चाहे कारण विशेष से कुछ परिवर्त्तन हो जाय पर अन्ततोगत्वा उसे उसी में पचना पड़ता है। सुनो इस विषय में तुम्हें एक कथा सुनाता हूं।"

पूर्व समय में कोई मुनि थे, उन्होंने चील के चंगुल से छूटी हुई एक मूषिका कहीं पाई, उसे देख उनके हृदय में दया का संचार हुआ सो दयामय मुनिजी ने अपने तपोबल से उसे मूषिका से मानुषीये कन्या बना दि, वह कन्या धीरे २ बढ़ने लगो, कुछ कालोपरान्त यौवन के चिन्ह प्रगट होने लगे तब उस प्राप्तयौवना को देख मुनि के मन में यह चिन्ता हुई कि अब इसका विवाह कर देना चाहिये, परन्तु दूं किसे किसी उत्कृष्ट बलवान् के हाथ में इसका दान करना चाहिये। ऐसा विचार वह बलवन्त की चिन्ता करने लगे, अन्ततोगत्वा उन्होंने यह स्थिर किया कि भगवान् आदित्य सबसे बलिष्ट हैं अतः उन्हीं से इसका विवाह करना चाहिये सो उन्होंने अपने तपःप्रभाव से भगवान् सूर्य्यनारायण को अपने आश्रम में बुलाकर उनसे कहा कि मैं इस कन्या का उद्वाह किसी बलिष्ट से किया चाहता हूं सो तुम इस योग्य हो अब इसका पाणिग्रहण कर लो। ऋषि की ऐसी बात सुन रवि बोले "महर्षे ! यदि आपका ऐसाही सिद्धान्त है कि यह कन्या किसी बलवत्तम को दी जाय तो मैं बलवत्तम नहीं हूं क्योंकि मेरी अपेक्षा तो मेघ अधिक बलवान्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है, वह मुझसे बलवत्तर है, क्योंकि वह मुझे क्षणभर में ढांप लेता है और तब मैं छिप जाने से अपना प्रकाश नहीं फैलाय सकता, कहिये तब मैं कैसे बलवत्तम हो सकता हूं। आप इस कन्या का विवाह मेघ से कर दीजिये।" मार्त्तण्ड की इतनी बात सुन मुनि ने उनका विसर्जन कर मेघ का आह्वान किया और उससे भी वैसाही कहा। मेघ ने उत्तर दिया कि महात्मन्! यदि ऐसाही है तो इस कन्या का विवाह आप वायु से कर देवें, पवनदेव मुझसे अधिक बलिष्ट हैं देखिये उनके आगमनमात्र से मैं छितिर बितिर हो जाता हूं। मेघ की ऐसी बातें सुन महामुनि ने पवनदेव को बुलाकर उनसे भी वैसाही अपना अभीष्ट कह सुनाया। मुनि का ऐसा कथन सुन मरुत् बोले "महर्षे! मेरा कहना भी सुन लिया जाय; सुनिये, मुझसे बली तो वे न ठहरे जिन्हें मैं हिला डोला न सकूं सो अद्रि ऐसे अचल हैं कि जिन्हें मैं तनिक भी नहीं डिगा सकता। वे मुझसे बलवत्तर हैं अतः आप इस कन्या का विवाह उन्हीं में से किसी के साथ कर दीजिये" वायु की इतनी बात सुन मुनि ने शैलेन्द्र (हिमालय) को बुलाया और उसी प्रकार उस कन्या के विवाह की बात कह गये। यह सुन अद्रिराज बोले कि महाराज! मुझसे तो बलवान् मूसे होते हैं जो मुझ में भी छेद (बिल) कर डालते हैं। इस प्रकार क्रमानुसार उन ज्ञानवान् देवतों की उक्तियां सुनकर अन्त में मुनिने एक बनैले मूषक को बुलाया और उससे कहा कि इस कन्या के साथ विवाह कर लो। तब वह मूसा बोला "महाराज! आपकी आज्ञा शिरमाथे, पर मेरी विनति यह है कि कृपाकर यह बतला दिया जाय कि यह मेरे बिल में क्योंकर पैठ सकेगी।" "बहुत अच्छा, तेराही कहना सही, यह पूर्ववत् मूषिकाही हो जावे," इतना कह मुनि ने उसे पुनः मूषिका बनाकर उसका विवाह उस मूसे के साथ कर दिया।

इतनी कथा सुनाय रक्ताक्ष काम मंत्री से पुनः कहने लगा कि हे चिरजीविन्! इस प्रकार कोई कितनेही दूर क्यों न पहुँच जावे पर जो जैसा रहता है अन्त में वह वैसाही हो जाता है सो तुम कितनेही उपाय क्यों न करो पर उलूक कदापि न होओगे।

रक्ताक्ष की ऐसी ऐसी बातें सुन चिरजीवी अपने मनमें सोचने लगा कि इस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उलूकराज के यहां एक यही नीतिज्ञ है और सब तो निरे मूर्ख चपाट हैं । इस नीतिकुशल की बात उलूकराज ने जो नहीं मानी तो इससे मेरे कार्य्य की सिद्धि के लक्षण दीख पड़ते हैं । इस प्रकार चिरजीवी सोच रहा था और उलूकराज अवमर्द रक्ताक्ष की बातों की उपेक्षा कर चिरजीवी को लेकर अपने स्थान को चला गया; उलूकराज को पूरा विश्वास था कि चिरजीवी हमारा सहायक हो गया अब हमें कौओं से किसी प्रकार का भय न रहा इसी कारण से वह कुछ गर्वित भी हो गया था । अब चिरजीवी उलूकराज के दिये मांसादि भोजन कर थोड़ेही दिनों में हृष्टपुष्ट हो गया और उसके पर भी जो नोचे गये थे सब जम आये, पक्षों की शोभा से वह मयूर की भांति प्रतीयमान होने लगा । इस प्रकार वह धूर्त्त चिरजीवी उलूकराज से पोषण पाय आनन्दपूर्वक उसके साथ रहने लगा पर घात की प्रतीक्षा में सदा सचेत बना रहता था ।

एक दिन चिरजीवी ने उलूकराट् से कहा कि देव! आपकी छाया में रहते२ बहुत दिन बीत गये अब इसकी प्रतिक्रिया करनी चाहिये सो अब मैं आपसे छुट्टी मांगता हूं आप आज्ञा देवें तो जाकर उस दुष्ट काकराज को फोड़फाड़ के उसके अवस्थान में ला बसाऊँ बस रात के समय आप सब उसपर टूट पड़ें और सपरिच्छद उसका नाश कर डालें और मैं भी आपका कार्य्य कर अपने ऋण से मुक्त हो जाऊँ । आप सब एक काम करें कि उन सभों का आगमन तो दिन के समय होवेहीगा, रात में तो वे निर्बल रहतेही हैं और कहीं जा भी नहीं सकते सो जब आवेंगे दिन में ही आवेंगे और मैं भरसक आजही लेकर लौट आऊँगा सो दिन भर तो आप अपने सहचरों को बोल देवें कि सब अपने २ खोते के भीतरही घुसे रहें और आप भी नीड़ के अभ्यन्तर विराजें और नीड़ों के मुंह तिनकों से भर दिये जावें, इससे होगा क्या कि उन सभों को और भी निश्चय हो जायगा कि उल्लू सब जीव लेकर भाग गये; बस रात में आप अपना घात कर बैठियेगा सो दिन के समय आप सब भली भांति नीड़ों के भीतर रक्षित बैठे रहें । इस प्रकार समझाबुझाकर चिरजीवी ने उन उलुओं को उनके खोंतो के भीतर बैठा दिया और सभों के द्वार तिनकों और पत्तों से ढँक दिये; अब चिरजीवी अपने प्रभु काकराज के समीप चला । वहां पहुँच उसने काकराज से कहा कि स्वामिन्!

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कार्य्य सिद्ध हो गया अब चलकर शत्रुओं का संहार करना चाहिये; मैं सभों को उनके खोतों के भीतर बैठाकर उनके मुंह पर तिनके और पत्ते ठूस आया हूं अब चिनगारीमात्र की देर है सो आप अब चलें जो चले सो चिता में से एक २ लुआठी लेता चले। बस सब वायस एक २ जलती लकड़ी अपनी २ चोंच में पकड़ वायसराज के साथ २ चले। दिन में तो उल्लू स्वभावत: अन्धे रहतेही हैं तिसपर भी खोतों के द्वार बन्द; उन्हें कुछ भी न सूझा न कुछ विदितही हुआ और आतेही सब कौओं ने उनके खोतों में आग लगा दी। इस प्रकार सबके खोतों में आग लगाय २ कौओं ने राजा सहित सब उल्लुओं को जलाकर भस्म कर डाला। यों चिरजीवी की सहायता से शत्रुओं का संहार कर वायसराज अति प्रसन्न हुआ और अपने सहचरवर्ग के साथ निजावास वटवृक्ष को लौट गया। वहां पहुँच जब सभा लगी तब चिरजीवी शत्रुओं के मध्य अपने रहने का वृत्तान्त सुनाकर काकेन्द्र मेघवर्ण से कहने लगा कि देव! आपके शत्रु उस उलूकराज अवमर्द के पास रक्ताक्षही एक सज्ञान्वी था और सब तो वस्तुत: उल्लूही थे; बस उसी रक्ताक्ष का कहना उस मदान्ध उलूकराज ने न माना इसीसे मैं उनके बीच रह सका; उस शठने अकारणही अपने श्रेष्ठ मंत्री की बात न मानी इसी कारण वह मूर्ख मेरी बातों में आ गया और परिच्छद सहित नष्ट हो गया। इसी प्रकार विश्वास उत्पादन कराय एक सर्प मण्डूकों को खा जाया करता था, सुनिये मैं उस अहि की कथा आपको सुनाता हूं—!

एक सांप था जो वृद्धावस्था के कारण अति क्षीण होगया था; वह यह चाहता था कि परिश्रम न करना पड़े और सुखपूर्वक भोजन मिल जाया करे, सो वह ढोंग रचकर एक तड़ाग के किनारे चुपचाप बैठ रहा; उस तड़ाग पर मनुष्यों का आना जाना भी होता था और मेंड़क भी बहुत थे पर वह किसी से कुछ छेड़ छाड़ न करे। उस अहि का ऐसा वैराग्य देख मेंड़कों ने दूरही से उससे पूछा कि अब आपको क्या होगया है कि पूर्ववत् हम सभोंको पकड़ २ कर नहीं भखते; कहिये ऐसा वैराग्य क्यों होगया? भेकों का ऐसा प्रश्न सुन वह पन्नग बोला "सुनो भाइयो! इसमें वैराग्य की कुछ बात नहीं है यह अपना कर्म्मभोग है, सुनो एक ब्राह्मणपुत्र किसी मेंड़क के पीछे दौड़ता था, मैंने भ्रम से उसके अं-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गूठे में डंस लिया और वह पञ्चत्व को प्राप्त हो गया, सो उसके पिता ने क्रोध में आकर मुझे शाप दे दिया कि जा दुष्ट ! तूने मेरे बच्चे को डंस लिया इसका दण्ड तुझे यही मिलेगा कि आज से तू भेकों का वाहन हो जायगा; जिन्हें तू भक्षण करता था अब वेही तुझ पर सवारी करेंगे । सो हे मेढ़को ! अब तुम सभों का खाना कहां ! अब तो तुम्हीं को ढोना पड़ेगा।" इतना सुनतेही भेकराज को बड़ी उत्कण्ठा हुई कि सर्प की सवारी करूँ, सो वह निर्भय हो बड़े आनन्द से जल में से उछला और उस सांप की पीठ पर जा बैठा, भेकराज के मन्त्री भी सवार हो गये और वह सर्प उन्हें ले इधर उधर कुछ काल लों घूमता रहा। पश्चात् जब देखा कि भेकराज बड़ा प्रसन्न हो गया तो उस धूर्त्त ने अपना जाल फैलाया; थक जाने का बहाना कर मेढ़कों के राजा से बोला कि अब तो मैं आप सभों को ढोते ढोते थक गया और भूख भी लग गयी अब तो कुछ खाने को मिले नहीं तो प्राण गये; मैं यह पूछता हूं कि सेवक दिन भर काम करे तो उसको खाना दिया ही जाता है बिना भोजन पाये वह कैसे रह सकता है । तब तो भेकराज की अक्की बक्की भूल गयी अब खाने को क्या देवैं, इधर सवारी की उत्कट अभिलाषा उधर भोजन की मांग सो वह बड़े असमञ्जस में पड़ा और भेकों को छोड़ वहां कुछ भोजन भी नहीं कि दिया जाय, अन्ततोगत्वा उसने यही निश्चय किया कि मेढ़कों में से ही इसे भोजन दिया जाय, सो उसने सांप से कहा कि कुछ मेढ़कों को खाकर तुम अपनी क्षुधा शान्त करो। बस अब क्या, विलम्ब तो केवल आज्ञामात्र का था अब लगा वह अहि मनमाना मेढ़कों को खाने और वाहन के अभिमान से अन्धीभूत वह भेकराज अपना यह कुलक्षय देखकर भी कुछ न बोले ।

इतनी कथा सुनाय चिरजीवी काकराज से पुनः कहने लगा कि देव इसी प्रकार बुद्धिमान् बीच में पैठ मूर्खों को ठग लेता है सो महाराज इसी भांति मैंने आपके शत्रु उन उल्लुओं के मध्य प्रवेश पा उनका नाश कर डाला। इससे राजा को उचित है कि नीतिज्ञ और कार्य्यकुशल होकर अपनी आत्मा को वश में रक्खे । यदि राजा ऐसा न हुआ तो भृत्य लोग उस मूर्ख को चाट जाते हैं और क्या वह जड़ राजा शत्रुओं से मार डाला भी जाता है। हे देव ! यह लक्ष्मीदेवी द्यूतक्रीड़ा के समान छलपूर्ण हैं, जल की लहर की नाईं चञ्चल तथा मदिरा की भांति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उन्मत्त कर देनेवाली है, उनकी स्थिरता एक कठिन बात है पर जो राजा धीर सुमन्त्र, व्यसनहीन, विशेष विषयों का ज्ञाता तथा उत्साहयुक्त होता है उसके यहां वही लक्ष्मीदेवी इस प्रकार स्थिर हो बैठ जाती हैं मानों रस्सों से बँधी हों। सो हे राजन्! इस समय आप सावधान तथा विद्वानों के वचनानुसार कार्य्यकर्त्ता तथा शत्रुओं के नष्ट हो जाने से सुखसम्पन्न हो गये हैं अतः अब निष्कण्टक राज्य का शासन करें आपको इस समय किसी प्रकार चिन्ता न करनी चाहिये।

सन्मन्त्री चिरजीवी की इस प्रकार नीतिभरी बातें सुन काकराज मेघवर्ण अति प्रसन्न हुआ पश्चात् उस मन्त्री प्रवर का सम्यक् सत्कार कर उसी प्रकार उसके वचनानुसार राज्य करने लगा।

इस भांति नीतिपूर्ण कथा सुनाय मन्त्रीप्रवर गोमुख वत्सराज के पुत्र से पुनः कहने लगा कि देव! इस प्रकार बुद्धिबल से पशुपक्षी भी राज्य भोगते हैं, परन्तु जिनके बुद्धि नहीं होती वे सदा दुःखी होते हैं और लोग उनका उपहास भी करते हैं, सुनिये एक निर्बुद्धि की कथा आपको सुनाता हूं।

किसी महाजन का एक भृत्य बड़ाही मूर्ख था, जोही बात हो वह सभी में अभिज्ञ बनता था, ऐसा कभी न कहे कि मैं यह नहीं जानता। एक समय उसका स्वामी उससे गोड़ मिँजवा रहा था पर उस मूर्ख भृत्य को यह भी ज्ञात न था, सो उजड्डपने से मींजते २ उसने अपने स्वामी को बकोट लिया जिससे उस महाजन के कोमल अङ्ग में बड़ी जलन होने लगी, इससे क्रोध में आकर स्वामी ने उस मूर्खाधिराज को छोड़ा दिया, अब वह इधर उधर बिलबिलाने लगा।

इतना कह गोमुख फिर बोला कि देव! इससे उचित तो यही है कि जो विषय अपने को न आवे उसमें हठपूर्वक अपने को अभिज्ञ न प्रगट करे क्योंकि जो अपने को बुद्धिमान् समझ हठपूर्वक कहता है कि मैं जानता हूं वह नष्ट हो जाता है। सुनिये इसी विषय में आपको एक कथा और सुनाता हूं।

मालव देश में दो भाई ब्राह्मण रहते थे, उनका पिता जो कुछ धन छोड़ गया था सो बँटा नहीं था, दोनों एकही साथ रहते थे, पर यह व्यापार बहुत दिन न चला, अन्त उन दोनों में विच्छेद हो गया और धन सम्पत्ति का बँटवारा होने लगा। बांट बखरे में होते २ दोनों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ, एक कहे "तुमको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अधिक मिलता है मैं न्यून क्यों लूं", दूसरा कहे "भला यह कैसे होगा कि मैं कमती लेऊँ।" इस प्रकार दोनों कड़ाई के साथ विवाद करने लगे, किसी प्रकार उनका झगड़ा निपटेही नहीं । अन्त वे दोनों लड़ते झगड़ते एक वैदिक उपाध्याय के पास जाकर बोले कि आप हम दोनों का झगड़ा निपटा देवें। उपाध्याय ने उन दोनों से कहा "जाओ जो २ वस्तु तुम्हारे यहां हों उन्हें आधेआध बराबर करके बांट लेओ। इस प्रकार करने से न्यूनाधिक्य का झगड़ा न होगा।" यह सुन वे दोनों मूर्ख अपने घर लौट आये और सब पदार्थों को बराबर २ आधा २ हिस्सा करने लगे । घर द्वार, वर्त्तन भांड़ा खटिया पलंग जो कुछ रहा सबका आधा २ हिस्सा कर बांट लिया, यहांलों कि पशुओं के भी आधे २ हिस्से कर डाले। उनके यहां एक चाकरानी थी सो उन मूर्खों ने उसके भी दो टुकड़े कर बांट लिये। अन्त में यह बात राजा के यहां पहुँची सो महीपति ने उनका सर्वस्व अपहरण कर लिया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख श्रीनरवाहनदत्त से कहने लगा कि देव! इस प्रकार अज्ञजन मूर्खों के उपदेश में आय अपने दोनों लोक बिगाड़ते हैं । इससे बुद्धिमान् को उचित है कि मूर्खों का सेवन न करे किन्तु पण्डितों की सेवा तन मन धन से करे। फिर हे महाराज! सुनिये, मन में सन्तोष न हुआ तो यह भी एक बड़ा दोष समझना; इसी विषय में आपको एक कथा सुनाता हूं।

किसी स्थान में कुछ प्रव्राजक रहते थे, भिक्षा करके जो कुछ पाते उसी में सन्तुष्ट रहते और निर्द्वन्द्व खा पीकर तकड़े बने रहते। उन्हें देखकर कुछ लोगों को ईर्ष्या हुई, वे सब आपस में कहने लगे कि ये सब तो भिक्षा मांगकर पेट पोसते हैं पर तौभी ऐसे हृष्टपुष्ट बने हैं यह बड़े आश्चर्य्य की बात है । उन मित्रों में से एक बोला "अच्छा मैं अब तुम लोगों को एक कौतुक दिखाता हूं; देखना, ये सब पूर्ववत् भोजन करतेही रहेंगे पर मैं इनको दुर्ब्बल कर दूंगा ।" इतना कह उसने प्रत्येक प्रव्राजक को प्रतिदिन नेवता देकर उसे षट्रस भोजन कराना आरम्भ कर दिया, इसी प्रकार वह क्रमानुसार सभों को एक २ दिन भोजन कराता गया। अब तो उन प्रव्राजकों को उत्तमोत्तम पक्वान्न का चसका लग गया अब यही चिन्ता बनी रहती कि कोई आवे और निमन्त्रण देकर ले चले और पक्वान्न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भोजन करावे, इसी प्रत्याशा में सभों ने भिक्षा का मांगना भी छोड़ दिया, इससे धीरे २ सबके सब दुबले हो चले। जब वे परिव्राजक क्षीण हो गये तब एक दिन उस खिलानेवाले ने अपने मित्रों से कहा कि देखो भाई ये वेही परिव्राजक हैं जिनके विषय में हमलोग उस दिन बात करते थे, देखो अब इनकी कैसी दशा हो गयी है कि पेट पीठ से सट गया है। इसका कारण तुम लोगों ने कुछ समझा अच्छा सुनो, उस समय ये सब भिक्षा मांगकर उतनेही में सन्तुष्ट हो खा पी के निर्द्वन्द्व रहते थे इसीसे हट्टेकट्टे बने थे और अब इनमें असन्तोष का सञ्चार हुआ इससे दु:खित और दुर्बल हो गये। इससे जो बुद्धिमान् हैं वह सन्तोष का अवलम्ब करे, विना सन्तोष सुख होताही नहीं। सन्तोष न हुआ तो जानना कि इस व्यक्ति को दोनों लोक के सुख न मिलेंगे प्रत्युत वह सदा सर्वदा छटपटाता दु:खीही बना रहेगा।

गोमुख इतनी कथा सुनाय बोला कि देव ! इस प्रकार अपने मित्र का अनुशासन मान उन सब सुहृदों ने समस्त पापों के मूल असन्तोष का त्याग किया। ठीकही कहा है "को न सुसंग बड़प्पन पावा"।

इसके उपरान्त गोमुख फिर बोला कि राजन् ! यह तो आपको असन्तोषियों की दुर्दशा की कथा सुनायी गयी अब और सुनिये मैं एक सुवर्णमुग्ध की कथा आपको सुनाता हूं।

एक युवा पुरुष किसी तड़ाग में जल पीने के लिये गया, वहां पेड़ पर सुवर्णवर्ण एक पक्षी बैठा था, उसका प्रतिबिम्ब उसे जल में दिखाई पड़ा, वह सोचने लगा कि यह सुवर्ण है, यह विचार वह मूर्ख उस पक्षी के ग्रहणार्थ जल में उतरा जब पानी हिल जाने से वह प्रतिबिम्ब लुप्त हो गया तब वह जल से निकल आय पुन: बड़े ध्यान से देखने लगा, पानी जब स्थिर हो गया तो फिर परछाईं दीख पड़ी सो वह मूर्ख पुन: तड़ाग में हला। इसी प्रकार वह मन्दमति वार २ तलाव में घुसे और निकल आवे पर उसे कुछ सुवर्णउवर्ण मिला नहीं। इतने में उसका पिता वहां आ गया उसने इस निकल पैठ का कारण पूछा। जब उसे ज्ञात हुआ तब उस मूर्ख को उसने उस पक्षी का प्रतिबिम्ब बताया और पक्षी को उड़ाय अपने पुत्र का अज्ञान दूर किया; तदुपरान्त उसे समझाबुझाकर वह अपने घर ले गया।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि महाराज ! इस प्रकार मूर्ख लोग मिथ्या ज्ञान से मुग्ध होकर अपने और पराये के हास्यास्पद होते हैं । देव ! यह तो आप ने सुवर्णमुग्ध की कथा सुनी अब आपको महामूर्खों का एक वृत्तान्त सुनाता हूं ।

एक समय कोई बनिया ऊँट लादे कहीं चला जा रहा था, मार्ग में उसका ऊँट बोझ के मारे थसक कर बैठ गया, अब उसे बड़ी चिन्ता पड़ी सो उसने अपने भृत्यों से कहा कि देखो ऊँट की और माल की रखवाली करना मैं जाकर एक दूसरा उष्ट्र मोल ले आता हूं जिसमें इसका आधा बोझ उस पर लादकर ले चलूं । चेत रखना कि यदि पानी बरसे तो इन पेटियों में प्रवेश न करने पावे क्योंकि इनके भीतर कपड़े हैं । इतना कह वह भृत्यों को ऊँट की रखवाली में नियुक्त कर दूसरा ऊँट मोल लेने चला गया । उसके जातेही वर्षा होने लगी, तब तो सब सेवक आपस में बातचीत करने लगे कि हमारे स्वामी कह गये हैं कि जो पानी बरसे तो देखना पेटारों में न प्रवेश करने पावे सो आओ हमलोग कपड़े निकाल २ पेटियों पर लपेट दें तो उनकी रक्षा भली भांति होगी । इतनी मति ठानि उन मूर्खों ने कपड़े निकाल २ पेटारों पर लपेट दिये जिससे सब वस्त्र मट्टी में मिल गये । इतने में स्वामी भी ऊँट लेकर आ गया और देखे तो सब वस्त्र नष्ट हो गये । "ऐ पापियो ! यह तुम लोगों ने क्या कर डाला", ? उसने क्रोध से कहा "अरे ! ये तो मेरे सब वस्त्रही तुम दुष्टों ने नष्ट कर डाले ।" भृत्यों ने कहा "इसमें हमारा क्या दोष ! आपही तो कह गये थे कि ऐसा करना कि पानी पेटारों में न छू जाय, बस हमलोगों ने पेटारे बचाये ।" स्वामी ने कहा "हे महामूर्खों ! मैंने तो वस्त्रोंही की रक्षा के हेतु न तुम सभों से कहा था कि पेटारों की रक्षा करना, न कि पेटारों के लिये; तुम्हारी बुद्धि पर पत्थर पड़ गया था कि ऐसी सीधी बात भी उसमें न समायी ।" यों कह अछताय पछताय उस ऊँट पर भार लाद वह अपने घर लौट गया वहां पहुँच उन मूर्ख सेवकों से उन सब कपड़ों का मूल्य भरा लिया ।

इतना कह गोमुख बोला कि देव ! इस प्रकार मूर्ख लोग उलटापुलटा कार्य्य कर अपनी और पराये की हानि करते हैं और पूछने पर ऐसाही उत्तर देते हैं । महाराज ! अब आपको एक मूर्ख पूरी खानेवाले की कथा सुनाता हूं ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किसी बटोही ने आठ पूरियां मोल लीं, छः पूरियां वह खा गया पर उसकी तृप्ति न हुई किन्तु सातवीं खातेही उसका मन भर गया (तृप्ति हो गई)। तब वह जड़मति चिल्लाकर कहने लगा कि ओः! मैं ठगा गया हूं, यदि मैं जानता कि इसी पूरी से तृप्ति हो जायगी तो पहिले इसी का भक्षण करता और तो बच जातीं, वृथाही वे नष्ट हुईं, मेरे पैसे भी व्यर्थ गये। वह मूर्ख इस प्रकार प्रलाप करता था पर यह नहीं जानता था कि तृप्ति क्योंकर हुई। अब जोही उसकी कहनूति सुनता वही हंसे बिना न रहता, इस प्रकार वह मूढ़ दूसरों का हास्यास्पद हुआ।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला देव! यह तो आपको पूरी खानेवाले की कथा सुनाई गयी अब दूकान के रखवाले की कथा सुनिये।

एक दूकानदार ने अपने सेवक से कहा कि दूकान देखते रहना मैं तनिक घर हो आऊँ, इतना कहकर वह बनियां घर चला गया और इधर एक नट का तमाशा हो रहा था सो वह मूर्ख नौकर दूकान के तख्ते कन्धे पर रखकर तमाशा देखने चला गया। इतने में दूकानदार लौट आया तो देखता है कि वह दास नहीं है; जब वह नौकर तमाशा देखकर लौटा तो मालिक ने पूछा क्यों बे कहां चला गया था मैं तुझे दूकान न दिखा गया था, उसने उत्तर दिया कि इसीलिये तो मैं तख्ते उठाता ले गया था तिस पर भी आप कहते हैं कि ऐसा नहीं वैसा, बस इन्हीं का न भय था, सो हुआ क्या?

गोमुख बोला कि राजन्! इस प्रकार से मूर्ख लोग शब्दार्थ का ग्रहण करते हैं भावार्थ उनकी समझ में आताही नहीं। अच्छा महाराज यह तो आपने दूकान के रखवाले की कथा सुनी अब आपको मूर्ख महिषभक्षकों की कथा सुनाता हूं, यह कथा बहुतही अपूर्व है।

किसी गांव के कुछ लोग एक मनुष्य का भैंसा पकड़ ले गये और गांव के बाहर एक बाड़े में किसी बटवृक्ष के नीचे उसे मारकर बांटचोंट खा गये। महिषस्वामी ने राजद्वार में उनपर अभियोग चलाया, राजा ने उनको पकड़ मँगवाया। महिष के स्वामी ने उनके साम्हने राजा से कहा "धर्मावतार! येही लोग मेरा भैंसा पकड़ ले गये और तलाव के किनारे बड़ के नीचे उसे मारकर खा गये और मैं देखताही रह गया, मुझसे कुछ करते न बन पड़ा; अब आपके हाथ में है

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो चाहें करें।" इतना कह जब वह महिषस्वामी चुप हुआ तब उन चोरों में से एक बूढ़ा महामूर्ख बोला "दोहाई महाराज की यह झूठही दोष लगा रहा है, इस गांव में न तो तलावही है न तो कोई बड़ का पेड़ही है; झूठमूठ हमलोगों को तंग करने के लिये ढंग रच रहा है, भला कहिये तो सही हमलोगों ने इसका भैंसा कहां मार खाया। इतना सुन भैंसे के स्वामी ने कहा भया यह तुम क्या कह रहे हो तुम्हारे गांव की उत्तर ओर क्या ताल और बड़ नहीं है ? वहीं पर तुम लोगों ने भैंसे को मार खाया;—हां भले स्मरण हुआ उस दिन अष्टमी तिथि भी थी। इतना सुन वह मूर्ख वृद्ध फिर बोला कि महाराज! हमलोगों के ग्राम में न तो उत्तर दिशाही है और न अष्टमी तिथिही है। इतना सुनतेही राजा हँसने लगे और जिसमे उस जड़मति का उत्साह और बढ़ जाय इस हेतु उन्होंने प्रश्न किया "अच्छा, माना हमने कि तुम सत्यवादी हो, कभी झूठ नहीं बोलते तो सच २ कहो तुम लोगों ने इसका भैंसा खाया है कि नहीं ?" महीपति का ऐसा प्रश्न सुन वह मूर्खचपाट बोला कि महाराज! मेरे पिता के मरे जब तीन वर्ष व्यतीत हो गये तब तो मेरा जन्म हुआ, इससे मेरी शिक्षा अच्छी न हो सकी यह तो उन्हीं के सिखाने का प्रभाव है कि मैं बोलने चालने में प्रवीण हूं सो महाराज! मैं झूठ तो कदापि नहीं बोलने का, हमलोगों ने इसका भैंसा तो अवश्य खाया है पर इसके अतिरिक्त जितनी बातें यह कह गया है सब मिथ्या है। इतना सुनतेही राजा तथा समस्त सभासद अपनी हँसी न रोक सके हंसते २ सबके पेट फूल गये। तदुपरान्त राजा ने उन लोगों के ऊपर यही दण्ड किया कि उस भैंसे का मूल्य उसके स्वामी को दिला दिया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख मन्त्री बोला कि देव! मूर्खों का यही लक्षण है विश्वास दिलाने के हेतु गुह्य बात प्रगट कर देते हैं और जो छिपाने योग्य विषय नहीं होता है उसे छिपाते हैं। अच्छा अब आपको उस मूर्ख की कथा सुनाता हूं जो अपनी भार्य्या के कारण चकवा बना था।

किसी मनुष्य की स्त्री बड़ीही कोपना थी, सदा सर्वदा उसकी नाक भौंहें चढ़ीही रहतीं। एक दिन उस चण्डी ने अपने पति से कहा कि सुनो जी कल मैं नैहर जाऊँगी नेवता आया है सो तुम मेरे लिये वहां एक कमल की माला ले आना, चेत रहेगा न ? सुनो जो माला न लाये तो मैं तुम्हारी भार्य्या नहीं और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तुम मेरे भर्त्ता नहीं। अब वह विचारा क्या करे बड़े सङ्कट में पड़ा; अस्तु किसी प्रकार दिन बीता और रात आई सो रात्रि के समय वह कमल लेने के लिये राजा के तलाव में पैठा, इतने में रखवाले जाग गये और बोल उठे कौन है? "मैं चकवा हूं" ऐसा उत्तर उस मूर्ख ने दिया। इतना सुन राजपुरुषों ने उसे पकड़कर रात-भर बांध रक्खा। प्रातःकाल वे उसे राजा के साम्हने ले गये; राजा के पूछने पर वह चकवा की बोली बोलने लगा। राजा बुद्धिमान् थे समझ गये कि कुछ रहस्य है, सो उन्होंने उस मूर्ख को समझाबुझाकर फिर पूछा कि भाई सच २ बतलाओ बात क्या है? उस मूढ़मति ने यथार्थ बात कह सुनाई। इस पर राजा को दया आई सो उन्होंने उसे छोड़ दिया।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला देव! अब आपको एक और कथा सुनाता हूं, सुनिये यह एक मूर्ख वैद्य की कथा बड़ीही मनोहर है।

किसी ग्राम में एक बड़ाही मूर्ख वैद्य था, उसके पास एक दिन एक ब्राह्मण आकर कहने लगा कि महाराज मेरा लड़का कुबड़ा है, कोई ऐसा उपाय कीजिये कि उसका कूबड़ बैठ जाय। वैद्य ने कहा "सुनो भाई इस कार्य्य के लिये मैं दश पण लूंगा पर हां जो अच्छा न कर सका तो दसगुना तुमको दूंगा" ऐसी प्रतिज्ञा दोनों में ठहर गयी और वैद्यराज ने दश पण उससे ले लिये और लगे उस कुबड़े की चिकित्सा करने। वैद्यजी ने स्वेदादिक अनेक उपाय किये पर कूबड़ न अच्छा हुआ अन्त में उसे दशगुने पण देने पड़े।

गोमुख बोला महाराज! कोई कितना भी उपाय करे पर क्या कूबड़ बैठ सकता है। सो जो मूर्ख ऐसे २ विकत्थन करते हैं वे हास्य के अतिरिक्त और क्या लाभ उठा सकते हैं। अतः देव! बुद्धिमान् को चाहिये कि ऐसे २ मूर्खों से सम्पर्क न रक्खे, मूर्खों के सम्पर्क से हानिही हानि है।

एहि भांति गोमुख की कही मूढ़नकथा क्षत्रीविषय।
सुनि भूपसुत नरवाहदत पायो अमित आनँद हृदय॥
यदि रहे शक्तियशा-समुत्सुक तदपि आनँद रँग रये।
समवयस मंत्रि समेत निज शयनीय पै निद्रित भये॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सातवां तरङ्ग ।

दूसरे दिन प्रात:काल में नरवाहनदत्त उठे उनका मन तो शक्तियशा में लीन था, किसी प्रकार गोमुख की विविध कथाओं से कुछ विरहाग्नि का शमन हुआ इसी से रात्रि विशेष नींद आगई थी पर प्रात:काल होतेही ज्योंही निद्रा टूटी कि उनके हृदय में शक्तियशा छाय गयी इससे फिर वैसीही विरहवेदना से वह अत्यन्त व्याकुल हो गये । विवाह की अवधि का शेष भाग उन्हें युग सा प्रतीत होने लगा, एक दिन युग समान भासता; उनका चित्त नवीन भार्य्या के समागम की लालसा से अति उत्कण्ठित था, सदा उधरही ध्यान, कहीं दूसरी ओर मन न रमै । गोमुख के द्वारा यह बात महाराज वत्सराज के कर्णकुहर में पड़ी इससे पुत्र के स्नेह से उन्हें भी बड़ी चिन्ता हुई सो उन्होंने अपने अङ्गज के चित्तविनोदार्थ वसन्तक प्रभृति निज सचिवों को भेजा कि कदाचित् उनके साथ कथोपकथन से राजकुमार को कुछ शान्ति मिले । पिता के मन्त्रियों के आगमन से उनके गौरव के कारण वत्सेश्वरात्मज राजकुमार नरवाहनदत्त को कुछ धैर्य्य हुआ इसी अवसान में परम प्रवीण मन्त्रिप्रवर गोमुख वसन्तक से कहने लगा "आर्य वसन्तक ! आप तो अनेक विषयों के अभिज्ञ हैं, अच्छी २ कथायें भी जानते हैं सो ऐसी कोई विचित्र मनोहर और नवीन कथा कहिये कि राजकुमार का चित्तविनोद हो ।" गोमुख की ऐसी उक्ति सुन परमचतुर वसन्तक कथा कहने लगा कि—

मालवदेश में श्रीधर नामक कोई एक द्विजोत्तम रहता था उसके दो यमज पुत्र उत्पन्न हुए थे जो देखने में एक समान थे तनिक भी विभेद उनमें नहीं पाया जाता था; उनमें से बड़े का नाम यशोधर और छोटे का लक्ष्मीधर था । जब दोनों युवा अवस्था को प्राप्त हुए तब पिता की अनुमति से विद्याध्ययनार्थ विदेश चले । चलते चलते एक घोर अटवी में पहुँचे जहां न कहीं पानी मिले न कुछ भोजन, जहां ऐसे वृक्ष भी नहीं कि जिनकी छाया में बैठकर विश्राम भी किया जाय, और नीचे जलती बालू ! ऊपर से तो सूर्य्यनारायण की जलजलाती किरण नीचे प्रदीप्त बालुका; फिर मार्ग का चलना, सो विचारे पिपासा से अत्यन्त व्याकुल हो गये, मार्ग की थकावट और घोर पियास से अब उनका एक पग चलना कठिन हो गया; अन्ततोगत्वा रोते खीझते चलते २ सायङ्काल में एक वृक्ष के नीचे पहुँचे, जहां

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सघन छाया मिली और वृक्ष फलसम्पन्न भी था; जल का भी सुपास था क्योंकि उस तरु के मूलदेश में एक ओर एक झील भी थी जिसका जल शीतल और स्वच्छ तथा कमल के सुगन्ध से वासित था। दोनों भाइयों ने उसमें स्नान कर कुछ खाया और शीतल जल पान कर अपनी तृषा बुझाई तथा खाने पीने के उपरान्त दोनों एक चट्टान पर बैठ विश्राम करने लगे। जब सूर्य्यनारायण अस्ताचल पर पहुँचे तब उन दोनों सहोदरों ने सायंसन्ध्या की उपासना की और रात्रि के समय हिंस्र जन्तुओं का भय समझ यह सिद्धान्त किया कि इसी तरु पर चढ़कर रात बितानी चाहिये; ऐसा विचार दोनों उस वृक्ष पर चढ़ बैठ रहे।

रात्रि के समय वे दोनों भाई क्या देखते हैं कि नीचे उस झील के जलाभ्यन्तर से बहुतेरे पुरुष निकले हैं, उनमें से किसी ने पृथ्वी झाड़झूड़ परिष्कृत कर दी, किसी ने लीप कर ठहर लगा दिया, किसी ने वहीं ठहर में पांच वर्ण के फूल बिखेर दिये; किसी ने लाकर सोने का पलङ्ग बिछा दिया, किसी ने उसपर रूई का गुलगुल गद्दा फैला दिया तिसके ऊपर से एक चादरा डाल दिया। किसी २ ने नाना रंग के प्रसून अङ्गराग इत्यादि और उत्तमोत्तम खानपान के पदार्थ लाकर वृक्ष के नीचे एक अलंग रख दिये। सबके पीछे दिव्य आभरणों से विभूषित एक खड्गधारी पुरुष उस झील से निकला जिसके रूप के आगे साक्षात् मन्मथ भी लज्जित हो जाता। उस पुरुष के उस सुखासन पर बैठने के उपरान्त वे सब परिचारक जुटकर आये, कोई माला पहिनाने लगा, कोई सुगन्ध लगाने लगा, इस प्रकार सबके सब उसकी सेवा शुश्रूषा में लग गये। जब वे अपना २ कार्य्य सम्पन्न कर चुके तब सबके सब उसी झील में मग्न हो गये। इसके उपरान्त उस पुरुष ने अपने मुंह से एक स्त्री निकाली जिसका रूप अति मनोहर, स्वभाव अति विनीत और जो सुन्दर २ माल्याभरणों से विभूषित थी, और एक दूसरी स्त्री भी उसके मुंह से निकली, इसका रूप पहिली की अपेक्षा कहीं अद्भुत मनोरम था—अच्छे अच्छे वस्त्राभरणों से सुशोभित थी; ये दोनों उस पुरुष की भार्य्यायें थीं जिनमें से छोटी को वह बहुत प्यार करता था। तदनन्तर प्रथमा पत्नी ने अपने पति और अपनी सपत्नी के समक्ष रत्नजटित पात्रों में पक्वान्न रख उन्हें भोजन कराया और उत्तम पान भी दिया; उन दोनों के भोजन कर चुकने पर उस सती साध्वी ने भी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भोजन किया, उधर वह पुरुष अपनी प्राणवल्लभा उस द्वितीया पत्नी को लेकर पलङ्ग पर पौढ़ रहा और आनन्दपूर्वक रतिक्रीड़ा का सुख भोग निद्रित हो गया और वह सती पहिली भार्य्या अपने प्राणेश्वर के पांव दबाने लगी; पति तो निद्रित हो गया पर उसकी द्वितीया पत्नी को नींद न आई।

यह सब चरित्र पेड़ पर बैठे २ दोनों ब्राह्मणकुमार देख रहे थे, सो वे दोनों परस्पर बातचीत करने लगे कि यह तो जो कुछ हम देख रहे हैं अप्राकृत व्यापार है, यह पुरुष न जानें कौन है; कुछ समझ में नहीं आता इससे अब उतरकर इस पांव दबानेवाली से पूछा जाय तो पता लगे। इस प्रकार परामर्श कर दोनों भाई पेड़ से उतरे और उसके पास ज्यों पहुँचे कि उस दूसरी पत्नी की दृष्टि यशोधर पर पड़ी सो वह चपला अपने पति को सोता छोड़ पलङ्ग से उठ खड़ी हुई और उस रूपवान् के पास जाकर बोली "प्यारे! मुझे ग्रहण करो, मेरा ताप बुझाओ"। यशोधर ने कहा "पापे! तू पराये की स्त्री है, मैं तेरे लिये परपुरुष हूं सो यह तू क्या कह रही है", उसकी ऐसी भर्त्सना सुन वह दुराचारिणी पुनः बोली, "प्यारे तुम्हीं उलटी बात कह रहे हो, परपुरुष उरुष मैं कुछ नहीं जानती, मैं तो तुम्हारे समान सौ पुरुषों से गमन कर चुकी, तुम भय क्यों करते हो ? यदि तुम्हें विश्वास न हो तो सौ अंगूठियां देखो न, जिन २ के साथ मैंने सम्भोग किया उन उनसे ये अंगूठियां मुझे मिली हैं, लो मैं तुम्हें दिखाये देती हूं।" इतना कह उस पापिष्ठा ने अंचल से अंगूठियां खोल यशोधर को दिखा दीं। उस कुलटा की ऐसी बात सुन वह ब्रह्मचारी यशोधर बोला "अरे तू सौ सहस्र अथवा लक्षों से व्यभिचार क्यों न करे और करावे पर मैं ऐसा कदापि नहीं करने का, मैं तो परनारी को माता समझता हूं।" कुलटाओं को तो अनेक ढंग आते हैं उन्हें झटपट साहस कर बैठते सङ्कोच नहीं लगता; सो उस दुष्टा ने जब यशोधर की ऐसी डपट सुनी तब इस प्रकार तिरस्कृत होने से उसे ग्लानि तो न आई प्रत्युत्य प्रचण्डकोप ने उस पर प्रभुता जमायी सो वह झट अपने पति को जगाकर उससे कहने लगी कि देखो न यह दुष्ट न जानूं कहां से आया है, इस पापी ने बलात् मेरा धर्म्म नष्ट कर डाला। इतना सुनतेही पति जलजला उठा और खड्ग खींच उस ब्राह्मण को मारने चला, इतने में उसकी वह सती साध्वी भार्य्या उसके पांव पकड़ बड़े विनय से चिरौरी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करने लगी कि नाथ ! यह क्या करने चले हो, मेरी बात भी तो सुन लो, सुनो व्यर्थ पाप का पहाड़ माथे न उठाओ इसमें बात दूसरी ही है, प्राणनाथ ! सुनो बात यह है, दोष इस पापिनी का ही है, यह इसे देखतेही तुमको सोता छोड़ उठी और लगी इस बिचारे को बहकाने और फुसलाने, इस साधु ने इसकी अभ्य र्थना न मानी प्रत्युत "तुम मेरी माता हो" इतना कहकर इससे पिण्ड छोड़ाना चाहा; इसीसे डाह में आय इस पापिनी ने तुम्हें जगाया और इस दीन के बधार्थ तुम्हें उभाड़ा है। प्रभो ! इतनाही इसका दुश्चरित्र सुनकर तुमको सन्तुष्ट न होना चाहिये कुछ और भी सुनो; यह इसका प्रतिदिन का नियम है इसी प्रकार इसी पेड़ के नीचे इसने एक सौ बटोहियों से दुष्टाचार कर एक सौ अंगूठियां बटोर रक्खी हैं। स्वामिन् ! मैं तुमसे इस भय से नहीं कहती थी कि कौन व्यर्थ द्वेष बिसाहे, पर जब आज तुम हत्या करने चले तब मैं कैसे चुप रह सकती थी, यह बात कहने की तो नहीं है पर करूँ क्या अगत्या कहनी पड़ी। यदि तुमको मेरी बात का विश्वास न हो तो देख लो इसकी अञ्चल में वे अंगूठियां बँधी हैं; यह सती स्त्री का धर्म्म नहीं है कि अपने प्राणेश्वर से झूठ बोले। सुनो नाथ ! सतीधर्म्म बड़ा टेढ़ा है, सती स्त्रियां सब कुछ कर सकती हैं यदि मेरे सतीत्व का प्रताप देखा चाहते हो तो मैं दिखाये देती हूं। इतना कह उसने ज्योंही उस पेड़ की ओर कोपदृष्टि किई कि वह तरु जलकर भस्म हो गया और पुन: जो प्रसन्न दृष्टि से उसे देखा तो वह वृक्ष पूर्व की अपेक्षा अधिक हराभरा हो गया। उस सती का ऐसा प्रभाव देख पति ने अति प्रसन्न हो उसे छाती से लगा लिया, और उस दूसरी व्यभिचारिणी पत्नी की नाक काट उसे निकाल बाहर किया और उसकी अर्जित वे सौ अंगूठियां उसकी अञ्चल से खोल लीं।

इसके उपरान्त वह पुरुष अपने उस व्यापार से बड़ा खिन्न हुआ कि उस अध्यमनेच्छ ब्राह्मण को मारने चला था सो वह यशोधर से क्षमा की प्रार्थना कर उससे कहने लगा, "देव ! मैं इन दोनों भार्य्याओं को सदा अपने हृदय के भीतर रखता था इसी भय से कि कहीं बिगड़ न जांय, पर इस पापिनी को नहीं बचा सका; भला बिजली किसी के किये स्थिर हो सकी है और चपला स्त्री की रक्षा कोई भी कर सका है ?। ठीकही कहा है "युवती शास्त्र नृपति वश नाहीं"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ये किसी के वश नहीं हैं, पर जो स्त्री सती साध्वी पतिव्रता होती है वह अपनी रक्षा आपही करती है। वह अपनी रक्षा तो करतीही है और साथही अपने पति को भी उभय लोक से रक्षित करती है जैसा कि आप अभी देखही चुके हैं कि इस साध्वी ने, जो कि शाप और वरदान में समर्थ है, मेरी रक्षा की है। इसी के प्रसाद से आज कुलटा का संग छूटा और एक सच्चरित्र ब्राह्मण के बधरूपी पाप से भी मैं बचा।"

इस प्रकार यशोधर से कहकर उसने उसे बैठाया और उससे पूछा कि कहिये आप दोनों जन कहां से आये हैं ? और कहां जा रहे हैं ?। इस पर यशोधर ने अपना सारा वृत्तान्त कह सुनाया, पश्चात् विश्वास पाय उससे इस प्रकार के प्रश्न किये, क्योंकि उसे उनके व्यापार से बड़ा कुतूहल हुआ था और उन्हीं के वृत्तान्त जानने के हेतु वह अपने भाई सहित पेड़ से उतर वहां गया था सो उसने पूछा "महाभाग! यदि यह बात गोपनीय न हो तो बताइये तो सही कि ऐसे २ उत्तमोत्तम भोग विलास रहने पर भी आपका वास जल में क्योंकर हुआ ?" उसका ऐसा प्रश्न सुन वह जलवासी पुरुष, "सुनो कहता हूं", कह अपना वृत्तान्त इस प्रकार वर्णन करने लगा।

हिमालय के दक्षिण में कश्मीर नामक एक देश है, वह प्रान्त ऐसा रमणीय और मनोहर है कि जिससे ऐसा भासता है मानों विधि ने मर्त्यलोकवासियों के हेतु एक स्वर्गलोक रच दिया हो, जहां हरिहर, जो स्वयम्भू हैं अपने आनन्दमय आवास श्वेतद्वीप तथा कैलास को त्याग सौ स्थानों (मन्दिरों) में विराजमान हैं, जहां वितस्ता नदी अपने जल से देश को पावन करती हुई बहती हैं; जहां बड़े बड़े शूर वीर और अशेष शास्त्रपारङ्गत द्विजगण वास करते हैं और जो देश ऐसा सुरक्षित है कि शत्रु कैसेही बलसम्पन्न क्यों न हों पर उसे जीत नहीं सकते। वहीं पूर्वजन्म में एक ग्राम में ब्राह्मण के घर में मेरा जन्म हुआ, मेरा नाम भवशर्म्मा पड़ा वहां मेरा एक सामान्य जीवन था; उस जन्म में मेरे दो स्त्रियां थीं। वहां कुछ भिक्षुक (१) रहते थे उन पर मेरी समधिक श्रद्धा रहती थी, सो होते २ उनसे प्रगाढ़ मैत्री हो गई; अब उनके सम्पर्क का ऐसा प्रभाव हो गया कि उनके शा-

(१) बौद्ध संन्यासी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्त्रोक्त उपोषण नामक व्रत (नियम) का अनुष्ठान मैं करने लगा। शुभकर्म में बाधा तो अवश्य पड़तीही है; यह तो सिद्धान्त है, सो मेरे उस उपोषण में भी बाधा पड़ गयी; मेरा नियम प्रायः समाप्त हो चला था कि एक भार्य्या हठपूर्वक मेरे पलङ्ग पर आ पौढ़ गई. तब भी मैंने बहुत बचाया पर यह कब सम्भव है कि उ· द्धार हो अन्ततोगत्वा रात की चौथ प्रहर में निद्रा के व्यामोह से मुझे उस व्रत का निषेवण बिसर गया और पास में वह चम्पकवदनी सोईही थी बस खोजना क्या था मैं उस प्रिया के साथ रमण करने लगा। हा! दैव बड़ा प्रबल है। बस मेरा व्रत खण्डित हो गया. इसीसे मुझे जलपुरुष हो यहां जल में वास करने के हेतु जन्म लेना पड़ा; वे दोनों भार्य्यायें यहां भी मेरी पत्नियां हुईं, इनमें से एक वही पापिनी कुलटा हुई है, जिसने मेरा व्रत भङ्ग किया था और यह दूसरी पतिव्रता है। मेरा वह व्रत खण्डित हो गया तथापि यह उसी का प्रभाव है कि मैं अपने पूर्वजन्म की कथा स्मरण करता हूं और रात्रि के समय ऐसे २ उत्तमोत्तम भोग भोगता हूं और जो कहीं मेरा वह नियम खण्डित न हुआ होता तो मैं अब तक न जानूं क्या हो गया होता। सो व्रत का ऐसा प्रभाव होता है। इस प्रकार अपना वृत्तान्त सुनाय उस जलपुरुष ने उन दोनों अतिथियों का बड़ा सत्कार किया, उन्हें उत्तमोत्तम पक्वान्न खिलाये तथा दोनों भाइयों को दिव्य वस्त्रों से सु- शोभित किया। तदनन्तर उस जलपुरुष की वह सती साध्वी भार्य्या अपने पूर्वजन्म का वृत्तान्त सुन, घुटना टेक पृथ्वी पर बैठ गई और चन्द्रमा की ओर दृष्टि उठा इस प्रकार कहने लगी, "हे लोकपालो! यदि मैं सच्ची साध्वी और पतिव्रता हूं तो मेरे यह पति जलवास से मुक्त होकर स्वर्गलोक को चले जावें। उस साध्वी के इतना कहतेही स्वर्ग से एक विमान उतरा और दोनों पति पत्नी उसपर बैठ स्वर्ग को चले गये। ठीकही है साध्वी स्त्रियों के लिये तीनों लोक में क्या असाध्य है। वे दोनों विप्र यह चरित्र देख अति आश्चर्यान्वित हुए।

इस प्रकार वह विचित्र चरित्र देख अति विस्मित हो वे दोनों ब्राह्मणसुत यशोधर और लक्ष्मीधर शेष रात्रि वहीं बिताय प्रातःकाल होने पर वहां से आगे चले। चलते २ सायङ्काल में एक निर्जन अरण्य में पहुँचे और एक पेड़ के नीचे उतरे। वे दिन भर के थके मांदे तो थे ही, प्यास के मारे कण्ठ सूख रहा था, सो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वे जल पीने के लिये इधर उधर जलाशय निरखने लगे कि इतने में उस पेड़ पर से यह वाणी सुनाई दी "हे विप्रो ! टुक ठहरो, तुम मेरे घर आये हो, अतः मेरे अतिथि हो सो मैं स्नानान्नपानादि से तुम्हारा आतिथ्य करूँगा (किये देता हूं)।" इतना कह वह वाणी चुप हो गयी कि इतने में वहीं एक बावड़ी निकली और उसके किनारे पर विचित्र २ अन्न पान विद्यमान थे। यह देख उन दोनों द्विज पुत्रों को बड़ा आश्चर्य्य हुआ कि यह क्या बात है, अस्तु उन दोनों ने बावड़ी में स्नान कर भोजन और जलपान किया। तदुपरान्त सायंसन्ध्या की उपासना कर दोनों भाई उस वृक्ष के नीचे बैठे कि इसी अवसर में एक अति सुन्दर पुरुष उस वृक्ष से उतरा, उन ब्राह्मणों ने उसका अभिवादन किया और वह भी उनको स्वागत कर वहीं बैठ गया; ब्राह्मणों ने उससे पूछा कि आप कौन हैं ? तब वह पुरुष उनसे अपना वृत्तान्त इस प्रकार सुनाने लगा—

पूर्व समय में मैं ब्राह्मण था, मेरी दशा बड़ी हीन थी; दैवात् श्रमण (१) लोगों की मेरी संगति हो गयी; उनके उपदेश से मैं उपोषण व्रत करने लगा परन्तु व्रत समाप्त न होने पाया; किसी दुष्ट ने एक दिन सायङ्काल में बलात् मुझे भोजन करा दिया, बस मेरा व्रत खण्डित हो गया इसीसे मैं गुह्यक हुआ हूं, यदि कहीं मैं वह व्रत पूर्ण कर पाता तो स्वर्गलोक में देवता होता।

इतनी कथा सुनाय वह वृक्षवाली पुरुष बोला, "विप्रो ! यह तो मैंने अपना वृत्तान्त कह सुनाया अब यह बतलाओ तुम दोनों कहां से आते हो ? और इस मरुस्थल में क्योंकर आ पड़े हो ?" इतनी बात सुन यशोधर ने अपना वृत्तान्त आद्यन्त कह सुनाया। तब वह यक्ष उन ब्राह्मणतनुजों से कहने लगा कि यदि यही बात है तो लो मैं अपने प्रभाव से तुम्हें विद्यायें देता हूं; तुम दोनों कृतविद्य होकर घर लौट जाओ विदेशों में भ्रमण करने का कुछ प्रयोजन नहीं है। इतना कह उस यक्ष ने उन ब्राह्मणों को विद्यायें प्रदान कीं और उन द्विजातियों ने उसके प्रभावसे उन विद्याओं को ग्रहण किया; तब वह गुह्यक उनसे फिर कहने लगा, "हे ब्राह्मणपुत्रो ! अब मैं तुम्हारा गुरु हुआ, तुमने मुझसे विद्यायें सीखी हैं सो तुम्हें उचित है कि मुझे कुछ गुरुदक्षिणा दो; चिन्ता मत करो, मैं ऐसी गुरु

(१) बौद्ध संन्यासी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दक्षिणा न मांगूंगा जो तुम न दे सको; बस अब तुम मुझे यही गुरुदक्षिणा देओ कि मेरे निमित्त तुम दोनों यह उपोषण व्रत कर देना। इसका विधान यह है कि सत्य बोलना, ब्रह्मचर्य्य से रहना, देवता की प्रदक्षिणा करनी, भिक्षुओं की वेला में भोजन करना मन का संयम रखना और क्षमा करनी, इन बातों का ध्यान रख इस व्रत का अनुष्ठान करना, उचित है। सो एक रात्रि यह व्रत करना और इस का फल मुझे अर्पण कर देना जिससे कि मेरा वह खण्डित व्रत पूर्ण हो जाय और उसके पूर्ण हो जाने से मैं स्वर्ग में चला जाकर दिव्य शरीरधारी हो जाऊँ। उन ब्राह्मणों ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया कि हम ऐसाही कर देंगे, सो सिद्धार्थ हो वह यक्ष अन्तर्धान हो गया।

यक्ष से विद्यायें पाय दोनों भाई अत्यन्त हर्षित हुए और उसके चले जाने पर वे दोनों रात्रिभर वहीं रहे और जब प्रातःकाल हुआ तब वे अपने घर की ओर लौटे। जब वे दोनों सिद्धार्थ हो घर पहुँचे तब उन्होंने अपने माता पिता से अपनी विद्याप्राप्ति का सारा वृत्तान्त कह सुनाया जिससे वे सातिशय प्रमुदित हुए। इसके उपरान्त उन्होंने उस उपोषण व्रत का अनुष्ठान किया और उसका पुण्य यक्ष को अर्पण किया जिसके प्रताप से उनका गुरु वह यक्ष विमान पर आरूढ़ हो वहीं उपस्थित हुआ और उनसे कहने लगा "ऐ बच्चो! तुम्हारे प्रसाद से मैं यक्षयोनि से छूट देवत्व को प्राप्त हुआ हूं, सो अब मैं तुम दोनों को यह सम्मति देता हूं कि तुम दोनों इस व्रत का अनुष्ठान अपने लिये भी करना जिससे इस देह के अन्त होने पर तुमको भी देवत्व की प्राप्ति होवे, मेरे वरदान के प्रभाव से तुम्हें धन की न्यूनता कदापि न होगी।" इतना कह वह कामचारी विमान पर बैठा हुआ स्वर्गलोक को चला गया।

इतनी कथा सुनाय महाराज वत्सेश्वर का मन्त्री वसन्तक श्रीयुत नरवाहनदत्त से पुनः कहने लगा कि राजकुमार इस प्रकार उन दोनों यशोधर और लक्ष्मीधर ब्राह्मणों ने उस यक्ष के उपदेश से उस उपोषण व्रत का अनुष्ठान किया और उसी के प्रभाव से विद्या और धन पाकर सुख से कालयापन करने लगे। सो देव! इस प्रकार जो लोग धर्मात्मा होते हैं और विपत्काल में भी अपना शील नहीं त्यागते उनकी रक्षा देव लोग करते और उनके इष्ट का साधन करते हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार वसन्तक का कहा व्याख्यान सुन नरवाहनदत्त का कुछ मनोविनोद हुआ परन्तु शक्तियशा का ध्यान न छूटा, उसकी प्राप्ति की उत्कण्ठा वैसोही जागरूक बनी रही। इतने में भोजन का समय आ गया और महाराज वत्सराज ने उन्हें बुला भेजा सो नरवाहनदत्त अपने सचिवों के साथ उनके समीप गये और यथेष्ट भोजन कर सायङ्काल में गोमुखादि के साथ अपने मन्दिर में जा विराजे।

अब पुनः गोमुख उनके विनोद की विवेचना कर उनसे कहने लगा कि देव! अच्छा सुनिये अब आपको दूसरा कथाक्रम सुनाता हूं।

महोदधि के किनारे उदुम्बर वन में वानरों का राजा वलीमुख रहता था, वह अपने यूथ से छूट (भटक) गया था। एक समय की बात है कि वह एक उदुम्बर (गूलर) के पेड़ पर बैठा निश्चिन्त उसके फलों को खा रहा था और नीचे समुद्र में एक घड़ियाल रहता था; उस वानर के हाथ से एक गूलर छूटा सो वह घड़ियाल खाय गया, उस गूलर का स्वाद उसे बहुत अच्छा लगा इससे वह आनन्द के मारे और प्राप्ति के अर्थ बड़ा कलरव मचाने लगा। कपि समझ गया कि यह फल उसे अच्छा लगा और कि वह अधिक मांग रहा है इससे उसने और बहुत से फल फेंके। अब यह नित्य का काम हो गया कि वह वानर जब उदुम्बर खाता तब वह घड़ियाल शब्द करने लगता अतः वानर उसके लिये भी कुछ गिरा देता। इस प्रकार होते २ उन दोनों में मित्रता हो गई, वह घड़ियाल समुद्र के किनारे नित्य दिनभर उस वानर के निकट बना रहता और सयङ्काल में अपने आवासस्थान को चला जाता।

अब घड़ियाल दिनभर तो वानर के यहां बना रहता सांझ को कहीं अपने घर जाता, इससे उसकी भार्य्या को बड़ी चिन्ता हुई कि बात क्या है, सो वह इस खोज में लगी, इधर उधर से पता लगाने, पर अन्त में उसको विदित हो गया कि किसी वानर से इसकी मित्रता हो गयी है उसीके साथ यह दिनभर रहता है। वह नहीं चाहती थी कि बन्दर की मित्रता बनी रहे, सो उसके विच्छेद की चिन्ता करने लगी। एक दिन वह ढोंग कर मांदी पड़ गयी; सायङ्काल में जब घड़ियाल आया तो उसे तादृश पड़ी देख बड़ाही चिन्तित हुआ और उससे पूछने लगा कि प्रिये! कहो तो सही तुम्हें हुआ क्या है; क्या तुम्हारा जीव अच्छा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं है, अच्छा कहो यह रोग किस औषधि से शान्त होगा ? इस प्रकार वह घड़ियाल बड़ी आर्ति से बार २ पूछता पर वह कुछ उत्तर न देती; अब क्या हो वह विचारा और भी घबड़ाया, पर करे क्या वह मानिनी कुछ उत्तर ही न देती थी। अन्त में उसकी एक सखी, जो कि इस मर्म से अवगत थी; घड़ियाल से कहने लगी, "सुनो जी यह एक ऐसी बात है जो तुम न करोगे और यह तुम्हारी पत्नी भी नहीं चाहती कि तुम ऐसा करो, पर मैं तो यह मर्म जानती हूं, कैसे छिपाऊँ, और छिपाना उचित भी नहीं है। सुनो तुम्हारी भार्य्या को एक भयङ्कर रोग हो गया है, इसे असाध्यही समझना, क्योंकि इसकी औषधि भी एक अलभ्य है; सो मैं बता तो अवश्य दूंगी आगे लाना न लाना तुम्हारे हाथ में है; सुनो वानर के हृत्पद्म (१) के जूस बिना यह रोग शान्त नहीं हो सकता, सो बन्दर के हृदय का जूस इसे दिया जाय तो यह अच्छी हो।" अपनी प्रिया की सखी का ऐसा कथन सुन वह घड़ियाल सोचने लगा, "अहो ! यह बड़े कष्ट की बात है, अब मैं वानर का हृत्पद्म कहां पाऊँ ! यदि अपने मित्र उस वानर से द्रोह करूँ तो क्या ऐसा करना मुझे उचित है ! अथवा उस मित्र से ही मेरा क्या सरने का, जो मेरी प्राणाधिक भार्य्या ही न रही।" इस प्रकार विचारकर वह अपनी पत्नी से कहने लगा कि प्रिये ! दुःख न करो हृत्पद्म की क्या चिन्ता मैं तुम्हें एक समूचा बन्दर ही ला देता हूं। इस प्रकार उसे सान्त्वना देकर वह घड़ियाल उस कपि के पास चला गया, और बातचीत करने लगा, इधर उधर की गप्प लड़ाते उसने बीच में यह बात छेड़ दी कि मित्र ! इतने दिनों से मेरी और तुम्हारी मित्रता है पर आज लों तुमने न तो मेरा घरही देखा और न मेरी भार्य्याही से भेंट की, सो चलो आज मेरे ही घर विश्राम करो; जहां मित्रों का एक दूसरे के घर आना जाना, और परस्पर भोजनादिक का व्यवहार नहीं, स्त्रियों से भेंट नहीं, भला वह भी कोई मित्रता है ? इस प्रकार प्रतारण की बातों से उसने वानर को अपने वश में कर लिया और वह वानर उसकी बातों का विश्वास कर उस पेड़ पर से उतर पड़ा और घड़ियाल उसे अपनी पीठ पर उठा अपने घर की ओर चला । आज वह घड़ियाल कुछ चकित सा और घबड़ाया हुआ था, उसकी ऐसी अवस्था देख

(१) कलेजा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वानर के मन में आशङ्का हुई सो वह उससे पूछने लगा, "सखे! आज तुम्हारा भाव कुछ औरही दिखाता है, कहो तो सही क्या बात है?" इस प्रकार उसके आग्रह-पूर्वक पूछने पर वह महामूर्ख घड़ियाल अपनी मनमें सोचने लगा कि अब तो यह मेरे हाथ में है, अब जायगा कहां! इतना सोच वह बोला कि मित्र! मेरी भार्य्या आज रुग्ण है, उसकी पथ्य के लिये बन्दर का हृत्पद्म अपेक्षित है, इसी कारण आज मेरा मन उदास है। उस घड़ियाल की ऐसी बात सुन वानर सोचने लगा, "हाय हाय! इसीलिये यह दुष्ट मुझे यहां ले आया है, अहो! स्त्री के व्यसन में पड़कर यह मित्रद्रोह करने पर उद्यत हुआ है; ठीक है; क्या भूतग्रस्त अपने दांतोंही से अपना मांस नहीं नोच २ कर खाता।" इस प्रकार चिन्ता कर उस बुद्धिमान् बन्दर ने घड़ियाल से कहा "सखे! यदि ऐसाही है तो तुमने मुझसे पहिलेही क्यों न कहा, जो तुम कहते तो मैं तुम्हारी स्त्री के लिये अपनाही हृत्पद्म लेता आता, वह तो अब मेरे आवास उस गूलर के पेड़ही पर छूट गया अब क्या किया जाय, जाऊँ तो ले आऊँ।" उसकी ऐसी बात सुन वह मूर्ख घड़ियाल बड़ी चिरौरी से कहने लगा कि मित्र! तो तुम जाकर उस गूलर के पेड़ पर से उसे ले आओ, इतना कह घड़ियाल पुन: उस कपि को समुद्र तट पर ले गया। अब वह वानर मानों मृत्यु के मुंह से छूटा, सो तट पर पहुँचतेही झट उछलकर उस गूलर के पेड़ पर चढ़ गया और वहां से उस घड़ियाल से बोला, "अरे मूर्ख! दूर हो! अरे कहीं हृदय देह से पृथक् होता है! अरे यह तो मैंने किसी प्रकार तुझसे अपना पिण्ड छुड़ा लिया है, चल अब मैं न आऊँगा (जाऊँगा)। अरे मूढ़ तूने क्या उस गदहे की कथा नहीं सुनी है? अच्छा अब सुन मैं तुझको उसकी कथा सुनाता हूं"।

किसी वन में एक सिंह रहता था, उसका मन्त्री एक शृगाल था. एक समय की बात है कि जब वह जङ्गल में घूम रहा था कि उसी समय एक राजा आखेट करता हुआ वहां आ निकला, सिंह साम्हने आ पड़ा और राजा ने उस पर वाण चलाया, कई एक वाणों से वह आहत हुआ, कुशल यह हुआ कि मर्मस्थान में चोट नहीं पहुँची, पर वह घायल बहुत हुआ, किसी प्रकार भागकर बच निकला और बड़ी कठिनता से अपनी मांद में पहुँचा। अब उसमें इतनी शक्ति कहां कि निकले और पशुओं को मारकर लावे, चलो अनशन व्रत होने लगा; जब सिंहही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

की उपवास होने लगे तब औरों की कौन चलावे; मन्त्री गोमायु तो सिंह का जूठन खाय २ रहता था उसे उपवास के कारण अधिक दुःख होने लगा सो उसने सिंह से कहा कि हे प्रभो! घूम फिर के कुछ आहार नहीं लाते, आप तो भूख सहतेही हैं आपके साथ २ आपके आश्रित भी भूखों मर रहे हैं कहिये यह कैसे कष्ट की बात है; सो उठिये, निकलकर इधर उधर यथाशक्ति टोह लगाइये कुछ न कुछ मिलही जावेगा। सियार की ऐसी बात सुन सिंह ने उसे उत्तर दिया,—"सखे शृगाल! मेरे घाव ऐसे घोर हैं कि मैं तनिक टसक भी नहीं सकता घूमना फिरना तो दूर रहे; जो कहीं गदहे के कान और हृदय मुझे भक्षण करने को मिलें तो मेरे घाव अच्छे हो जावें और तब मैं अच्छा भी हो जाऊँगा, सो यदि हो सके तो जाकर किसी गर्दभ को लिवा लाओ।" सिंह का यह कथन सुन वह मंत्री सियार बोला, "महाराज! जो आज्ञा इसमें क्या, मैं अभी जाकर एक गदहे को लिवा लाता हूं", इतना कह वह वहां से चला और इतस्ततः किसी गर्दभ की खोज में घूमने लगा, इतने में किसी जलाशय के किनारे एक गदहे पर उसकी दृष्टि पड़ी सो वह धीरे से उसके पास चला गया और बड़ी प्रीति से उससे कहने लगा कि भाई! आजकल तुम इतने दुबले क्यों हो गये हो, क्या खाने पीने को भरपेट नहीं मिलता? वह बोला "भाई! क्या करूं सदा इस धोबी के बोझ ढोने पड़ते हैं, दुर्बल होऊँ न तो क्या करूँ मेरा वशही क्या है।" उस गदहे की इतनी बात सुनतेही वह जम्बुक बोला "तो भाई क्यों यहां पड़े २ कष्ट उठाते हो, चलो न हमारे वन में रहो स्वर्ग का सा सुख अच्छी २ गदहियों के साथ भोगो।" गदहा तो थाही उसे बुद्धि कहां और फिर भोगविलास की लालसा! सो वह बोल उठा, "बहुत अच्छा भाई! चलो।" इतना कह वह उस जम्बुक के साथ चल पड़ा और सिंह के समक्ष जा पहुँचा। उसको देखतेही सिंह धीरे से उठा और पीछे से उस-पर झपटा पर वह ऐसा दुर्बल था कि उसका पञ्जा कस के नहीं पड़ा और गदहा उसके देखतेही देखते वहां से निकल भागा; फिर न आया और सिंह इतनेही परिश्रम से हांफकर गिर पड़ा और कार्य्य में कृतार्थ न होने से लज्जित हो धीरे से अपनी मांद में जा बैठा। तब उसका मन्त्री धिक्कार कर उससे बोला "हे प्रभो! जब गदहे का वध आपसे करते न बना तो हरिणादि पशुओं के बध की क्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चलाई जावे" यह सुन सिंह बोला कि तुम जो समझो सोही सही, अच्छा फिर तो उसे एक वार फुसला के बुला लाओ, अबकी वार मैं सज्जित रहूंगा. देखना क्या करूँगा, अबकी उसे मारे बिना न छोड़ूंगा । इस प्रकार कहकर सिंह से भेजा गया वह सियार फिर उस गदहे के पास गया और कहने लगा कि भाई तुम भाग क्यों आये ? उसने उत्तर दिया कि किसी जन्तु ने मुझे मारा सो डरकर मैं भाग न आऊँ तो क्या प्राण दूं। यह सुन वह धूर्त्त सियार हँसकर बोला, "यह तुम क्या कह रहे हो, वहां तो कोई जन्तु वन्तु नहीं है, यदि कोई होता तो कहो मैं ऐसा छोटा जीव होके वहां कैसे सुख से रह सकता, सो तुम्हें कुछ भ्रम हुआ होगा । अच्छा अबकी चलो तो सही देखा जाय क्या है, तुम सुख से मेरे साथ २ वहां रहना ।" मूर्ख गदहा उसकी भड़ी पट्टी में आ गया और फिर उसके साथ वहां चला गया । उसे देखतेही सिंह गुहा में से निकला और अबकी उसपर ऐसा झपटा कि गदहा भाग न जाय और शृगाला ने उसे पकड़ नखों से फाड़कर टुकड़े २ कर डाला । इसके उपरान्त सिंह उस जम्बुक को उस व्यापादित खर का रखवाला नियुक्त कर स्नान करने गया कि स्नान करने से थकावट दूर हो जायगी तो खाति अच्छा बनेगा । उधर सिंह तो चला गया, इधर सियार कई दिनों का भूखा तो थाही, तिसमें वह जाति का पक्का मायावी; सो उसने अपनी तृप्ति के अर्थ उस हत गदहे के हृदय और दोनों कान खा डाले । जब सिंह नहाकर आया तो क्या देखता है कि गदहे के हृदय और कान हैंही नहीं सो उसने सियार से पूछा कि इसके हृदय और कान क्या हुए ? शृगाल ने उत्तर दिया,— "प्रभो ! इसके हृदय और कान पहिलेही से न थे. यदि यह बात न होती तो क्या यह एक वार चला जाकर पुनः यहां आता ।" सिंह ने उसकी बात सच मान ली और गदहे का मांस भक्षण किया और जो बचा खोचा उसे खाकर सियार ने अपनी आग बुझाई ।

इतनी कथा सुनाय वानर बोला; "भाई घड़ियाल ! बस अब तुम जाओ मैं अब नहीं जाने का, मैं उस गदहे के समान मूर्ख नहीं हूं कि एक वार मृत्यु के मुंह से बचकर फिर उसके वश में पड़ूं ।"

उस कपि की ऐसी बात सुन अपना सा मुंह लिये वह घड़ियाल घर को चला

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गया और अपने मनमें इस बात से बड़ा सन्तप्त होता कि पत्नी का पथ्य भी न हुआ और एक अच्छा मित्र भी हाथ से निकल गया। जब उसकी भार्य्या को यह बात विदित हो गयी कि दोनों का सख्य टूट गया तो वह स्वयं अच्छी हो गयी। उधर वह बन्दर भी समुद्रकिनारे सुखपूर्वक विचरने लगा।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि महाराज ! इस प्रकार बुद्धिमान् लोग दुर्जनों का विश्वास कदापि नहीं करते, उनका विश्वास किया कि मारा गया; दुर्जन और कृष्ण सर्प एक समान माने गये हैं. दोनों में किञ्चिन्मात्र भेद नहीं है, इनका विश्वास कर जो सुख चाहे उसके समान जगत् में कोई दूसरा मूर्खाधिराज हैही नहीं।

इसके उपरान्त नरवाहनदत्त के चित्तविनोदार्थ गोमुख ने फिर कहा कि देव! आपको क्रमानुसार फिर ऐसे २ हास्यास्पद मूढ़ों की कथा सुनाता हूं। अब पहिले उस मूर्ख की कथा सुनिये जिसने अपने मीठे वचनों सेही एक गायक को सन्तुष्ट कर समझा कि बड़ा भारी काम किया।

एक वार एक गायक किसी धनाढ्य महाजन के यहां गया और अपनी वीणा बजाकर लगा गाने, महाजन उसका गाना सुनकर सातिशय सन्तुष्ट हुआ और अपने कोशाध्यक्ष को बुलाकर उसने उसके समक्षही यह आज्ञा दी कि इस गवये को दो सहस्र पण दे देओ। "बहुत अच्छा, दिये देता हूं", इतना कह वह खजाञ्ची चला गया। तब वह गवैया खजाञ्ची के पास जाके वे पण मांगने लगा परन्तु उसने एक कौड़ी भी न दी। तब तो वीणावादक ने जाकर उस महाजन से कहा कि खजाञ्ची रुपये नहीं देता, आपने तो आज्ञा कर दी अब न जाने उसे देते क्यों मोह लगता है। सो सुन वह महाजन बोला "तू बड़ाही मूर्ख है, तू इतना भी नहीं समझता; तूने केवल वीणा सुनाकरही न मुझे प्रसन्न किया था; बस मैंने भी पण दान के वचनों से तुझे सन्तुष्ट कर दिया, सो अब तू और क्या चाहता है?" ऐसा कोरा उत्तर सुन यद्यपि वह वैणिक हताश हो गया था तथापि हँसकर वहां से चला गया। भला सूमड़ों की ऐसी कहनीती सुन पत्थर भी हँस पड़ेगा, मानव की तो बातही निराली है।

गोमुख बोला देव! यह तो आपको उस सूमड़े की कथा सुनाई गई अब एक गुरु की दो स्त्रियों की कथा सुनिए।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किसी गुरु महाशय के यहां दो शिष्य पढ़ते थे, दोनों में परस्पर बड़ाही द्वेष था; उनमेंसे एक तो गुरुदेव का दहिना पांव मींजता और धोता तथा दूसरा बांया पांव। एक दिन दहिना पांव मींजनेवाला वह शिष्य गुरु की आज्ञा से किसी काम के लिये एक गांव को गया था, और दूसरे ने रीत्यनुसार अपने हिस्से का बांयां पांव दबाया; और धोया जब दबा चुका तो गुरु ने कहा कि आज वह बाहर गया है सो तू दहिना पांव भी मींजकर धो दे। यह सुनके वह मूर्ख शिष्य बोला, "गुरु जो वह मेरे प्रतिपक्षी का पांव है, मैं तो उसे कदापि न मींजूंगा।" इसपर गुरु ने हठ किया तब उस महा मूर्ख ने विचारा कि अच्छा अवसर मिला है उससे वैर लेना चाहिये; इतना सोच उसने अपने गुरु के दक्षिण चरण पर एक भारी पत्थर दे मारा जिससे वह टूट गया। गुरु का आक्रन्दन सुन और सब शिष्य वहां बटुर आये और लगे उस शिष्य को कूटने; परन्तु गुरुदेव ने उसे छोड़ा दिया। दूसरे दिन जब वह शिष्य गांव से लौटा तब गुरु के पादभञ्जन की बात सुन क्रोध से जलजला उठा और बोला कि उस दुष्ट ने द्वेष से मेरे हिस्से का पांव तोड़ दिया है तो मैं उसके हिस्से का पांव क्यों न तोड़ डालूं, इतना कह उसने गुरु का वह दूसरा पांव भी तोड़ डाला। उसी प्रकार सब शिष्य इसे भी पीटने लगे किन्तु गुरुदेव के दोनों पांव तो अब मिलते (जुटते) नहीं, सो उन्होंने दया कर इसे भी छोड़ाय दिया। तब सब लोग उन दोनों शिष्यों का उपहास करने लगे और सब उनसे द्वेष भी करते इससे उनका रहना असाध्य हो गया सो वे दोनों वहां से अपने २ स्थान को चले गये और गुरुजी महाराज धीरे २ अच्छे हो गये, उनकी सहनशीलता और क्षमा का सौरभ चहुँदिशि छाय गया, जो सुनता वही उनकी प्रशंसा करता।

गोमुख ने कहा कि देव! इसी प्रकार मूर्ख लोग आपस में विद्वेष करके स्वामी का अर्थ तो बिगाड़तेही हैं प्रत्युत अपनी टांग में भी टांगा मारते हैं। अच्छा महाराज अब आपको दो शिरवाले सांप का वृत्तान्त सुनाता हूं।

किसी सर्प के दो शिर थे, एक तो यथास्थान आगे की ओर और दूसरा पूंछ की ओर। आगेवाला शिर तो सनेत्र था किन्तु पूंछ की ओर के शिर में आंखें न थीं परन्तु उन शिरों में प्रधानता का झगड़ा बना रहता, एक कहे मैं मुख्य हूं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दूसरा कहे मैं, इस प्रकार दोनों विवाद करते थे। सर्प अपने प्रकृत शिर के ही भरोसे चरता फिरता था, पूंछवाले शिर की कुछ चिन्ता भी न करता। एक समय की बात है कि पूंछ की ओर का शिर कहीं किसी काठ में लग गया सो बलपूर्वक वह उसी काठ में ऐसा लपट गया कि वह सांप तिल भर भी आगे न टसक सका; अब तो सांप की अक्को बक्की ही भूल गयी, उसका कुछ चलेही न, निदान उसने उसी शिर को बलवान् समझ विजयी माना। प्रथम शिर की उपेक्षा कर अब वह उस अन्ध शिर के सहारेही से चरने लगा, परिणाम यह हुआ कि दृष्टि के अभाव के कारण एक दिन धधकती आग में गिरकर भस्म हो गया।

इतनी कथा सुनाय सुप्रसिद्ध नीतिविशारद मन्त्री गोमुख बोला कि राजकुमार जो मूर्ख इस प्रकार से गुणों का तारतम्य नहीं जानते वे हीनगुण के पाले पड़ पराभवही पाते हैं। अब आप चावल फांकनेवाले एक भुच्च की कथा सुनिये।

कोई एक बड़ा भुच्च था, वह पहिले पहिल अपनी ससुराल गया। घर में आनन्दसागर उमड़ आया कि आज दामाद आये हैं, नाना प्रकार के पक्वान्नादि का समारोह होने लगा, पुराने से पुराना चावल रींधने के लिये लाया गया; इसकी दृष्टि जो ऐसे उज्ज्वल और स्वच्छ चावल पर पड़ी तो इसका जी चल गया कि एक फङ्की मार लेनी चाहिये; सो ज्यांही कि सास किसी कार्य्य के लिये वहां से हटी कि आपने एक फङ्की मार ली; उधर से सास भी तुरत आ गयी; अब यह क्या करे, न तो चावल निगलही सके और न लाज के मारे उगिलही दे, बिचारा बड़े सङ्कट में पड़ गया। मुंह में की फंकी गले में अँटक गयी थी इससे वह पूछने पर कुछ उत्तर भी न दे सकता था, गला भो कुछ फूल गया था इससे सास ने समझा कि इसके कोई रोग हो गया है सो उसने झटपट अपने पति को बुला कर उसकी दशा दिखाई। वह भी दौड़ा गया और एक वैद्य को बुला लाया; वैद्य ने आकर देखा तो सचमुच गला फूला है सो उसने समझा कि अवश्य कोई फोड़ा है; मुंह खोलकर उसे देखना चाहिये; अतः उसने मस्तक पकड़ ठुड्डी जो दबाई तो मुंह खुल गया और भरभराकर चावल गिर पड़े; यह कौतुक देख सब लोग ठहठहाकर हँसने लगे।

गोमुख बोला कि इस प्रकार मूर्ख बिना विचारे कुछ अकार्य्य कर तो बैठता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है पर यह नहीं जानता कि वह क्योंकर छिपाया जाय । अब कुछ लड़कों की कथा आपको सुनाई जाती है।

कुछ लड़कों ने कहीं दुही जाती हुई गौ को देखकर अपने मनमें यह विचारा कि इसी प्रकार सब पशु दूहे जाते हैं, सो एक दिन वे सब किसी गदहे को पकड़ कर उसी प्रकार दूहने लगे, कोई दूहता था, कोई दोहनी पकड़े हुए था; यहां लों कि उनके मध्य इस बात का विवाद भी उठ गया कि कौन पहिले पीयेगा, पहिले सभी पीने चाहते थे । उसके दूहने में यद्यपि सभों ने बड़ा परिश्रम किया पर कुछ दूध जब मिला नहीं, प्रत्युत लोग उनके खेलवाड़ पर हँसने लगे। ठीक है, व्यर्थ की बात में जो परिश्रम किया जाय वह व्यर्थ न होगा तो और क्या होगा; ऊपर से हँसी जो होती है सो मानों व्याज है।

इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला देव ! अब आपको एक और मूर्ख की कथा सुनाता हूं।

किसी ब्राह्मण का पुत्र महा मूर्ख था. एक दिन उसके पिता ने सायङ्काल में उससे कहा कि हे पुत्र ! कल प्रातःकाल तुमको उस गांव को जाना होगा।. यह सुन वह रात्रि में तो सो रहा, बिहान होतेही उस गांव को चल पड़ा, उस मूर्ख ने अपने पिता से यह भी न पूछा कि उस गांव में जाकर क्या करना धरना होगा अथवा किससे क्या कहना होगा। सो वहां जाकर दिनभर व्यर्थही बिताकर साय-ङ्काल में वह अपने घर को लौट आया और अपने पिता से कहने लगा कि ली-जिये पिता जी मैं आपकी आज्ञा से उस गांव स हो आया। पिता ने उत्तर दिया 'बच्चू ! अच्छा किया तुम्हारा जाना न जाना बराबरही है क्योंकि तुम्हारे जाने से कुछ काम तो सिद्धही न हुआ।"

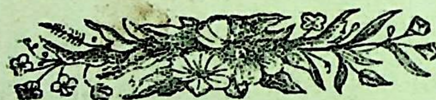
इतनी कथा सुनाय गोमुख बोला कि देव ! इसी प्रकार व्यर्थ का कष्ट मूर्ख जन उठाता है, उससे कुछ कार्य्य तो होता नहीं प्रत्युत लोगों का हास्यास्पद वह होता है। प्रायः देखा गया है कि ये मूर्ख लोग शिक्षा दियेजाने पर भी उ-पकारी और हितकर बातों को नहीं मानते, अपनी अनूठी बुद्धि के आगे वे किसी को गिनतेही नहीं और सारे संसार को तुच्छ तथा अज्ञ समझते हैं। यदि ऐसा न होता तो सज्जनों के द्वारा सदुपदेश पाकर अनेक मूर्ख सुधर जाते। जो सच पूछिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

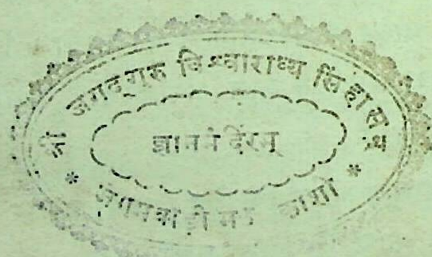
तो ये लोग ऊसरभूमि के समान हैं जिस पर सदुपदेश रूपी बीज ... नहीं जमता और न जड़ पकड़ता है।

दोहा।

मंत्री गोमुख की कही, शिक्षाभरी कहानि।
सुनि बोले वत्सेशसुत, सुनौ मीत सुखदानि॥
मन मेरो उरझ्यो उतै, शक्तियशा-दृगफंद।
कौन उबारै तेहिं अहो, बिन सहाय नँदनन्द॥
बीती रैन विशेष तब, पौढ़े राजकुमार।
ता पाछे मंत्री सबै, गवने भवन मँझार॥



८वां तरङ्ग ८वें भाग में देखो।



SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY,
Jangamwadi Math, VARANASI,
Acc. No. ... 65

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri



CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri